

PUBLISHED

THE
KASHI SANSKRIT SERIES

235

CATURVARGACINTĀMAṆI

OF
ŚRĪ HEMĀDRI

Volume II
VRATAKHAṆḌA

PART I

EDITED BY.....

PANḌITA BHARATACANDRA ŚĪROMAṆI.....



CHAUKHAMBHA SANSKRIT SANSTHAN

Publishers and Distributors of Oriental Cultural Literature

P. O. Chaukhamba, P. Box No. 1139

Jadav Bhawan, K. 37/116, Gopal Mandir Lane

VARANASI-221001 (INDIA)

© Chaukhamba Sanskrit Sansthan, Varanasi

Phone : 65889

Price : Rs. 2500-00 for the set of four volumes in seven parts

Rs. 1000-00 for Volume II (Vratakhaṇḍa Part 1, 2)

S
294.5926
H 487 e
V.2. Pt.1

Originally Published by The Asiatic

Society of Bengal in 1878

Reprinted 1985

THE ASIATIC SOCIETY
CALCUTTA 700016

Acc No. S. 506

Date. 23.3.86

Sl. no. 075795

COMPUTERISED

C 1033

Also can be had of

CHAUKHAMBHA VISVABHARATI

Post Box No. 1084

Chowk (Opposite Chitra Cinema)

VARANASI-221001

Phone : 65444

Printers—Srigokul Mudranalaya, Gopal Mandir Lane, Varanasi
and Globe Offset Press, New Delhi

॥ श्रीः ॥

काशी संस्कृत ग्रन्थमाला

२३५



चतुर्वर्गचिन्तामणिः

श्रीहेमाद्रिविरचितः

तत्र

व्रतखण्डनाम्नो

द्वितीयखण्डस्य

प्रथमो भागः

श्रीभरतचन्द्रशिरोमणिना परिशोधितः

चौरवन्मा संस्कृत संस्थान

भारतीय सांस्कृतिक साहित्य के प्रकाशक तथा विक्रेता

पो० बा० चौखम्भा, पो० बा० नं० ११३६

जहाव भवन, के. ३७/११६, गोपाल मन्दिर लेन

वाराणसी (भारत)

प्रकाशक : चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी

मूल्य : रु० २५००-००

संपूर्ण १-४ खण्ड, ७ भाग

रु० १०००-००

द्वितीय खण्ड (त्रतखण्ड भाग १ व २)

पुल रूप से आसियाटिक् सोसायिटि आफ बंगाल द्वारा प्रकाशित, १८७८

पुनर्मुद्रणम् १९८५

जन्य प्राप्तिस्थान

चौखम्भा विश्वभारती

पोस्ट बाक्स नं० १०८४

चीक, (चित्रा सिनेमा के सामने)

वाराणसी-२२१००१ (भारत)

फोन : ६४४४४

मुद्रक - श्रीगोकुलमुद्रणालय, गोपाल मन्दिर लेन, वाराणसी एवं
ग्लोब आफसेट प्रेस, नई दिल्ली

चतुर्बर्गचिन्तामणि

व्रतखण्डम् ।

श्रीहेमाद्रिणा विरचितम् ।

षोडश्याध्यायपर्यन्तं प्रथमभागालोकं ।

—000@000—

आसियाटिक्-सोसायिटिनामक समाजानुमत्या तत्साहाय्येन च

प्रचारितम् ।

—

श्रीभरतचन्द्रशिरोमणिना

परिशोधितम् ।

—

अक्षीपत्रम् ।

—000—

| श्र | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|------------------------------------|--------|-----------------------------------|--------|
| अकारप्रसङ्गस्य .. | ८ | अक्षयवेदकपं .. | १०५ |
| अक्षयसाक्षादानमन्त्रः .. | १०२ | अक्षयवेदानां ऋषिदेवतच्छब्दादि १०८ | १०८ |
| अक्षयव्रततीषात्रतं ... | ४०० | अक्षयशास्त्रकपं .. | १०८ |
| अक्षयप्रसावाग्निअक्षयव्रततीषात्रतं | ४८८ | अक्षयिद्रव्यतीषात्रतं .. | ४२९ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं ... | ११०२ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १२४ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रततीषात्रतं .. | १११८ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | २८ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं ... | ५०६ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | ८११ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १४४ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | ४२२ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १८७ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १२०० |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | ४८ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | ४६४ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | ५०६ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | ०४१ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | २०५ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १२८ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं ... | ५१ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | ८ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १८१ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | ८ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | ६४१ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १२२ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १८२ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | ११८ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | २०६ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १५८ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १२७ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | २८८ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १६२ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं ... | ००२ |
| अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं .. | १८६ | अक्षयव्रतद्वितीषात्रतं ... | १२० |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|---------------------------------|--------|-----------------------------|--------|
| अपराधिता रूपं .. | ८९ | अहमीप्रताभि .. | ८११ |
| अपराहादहमीप्रतं .. | १०८१ | अहमीरुपं .. | १५९ |
| अपूर्वादानमन्त्रः .. | १८८ | अहाङ्कभूपः .. | ५० |
| अभिन्नविनायकचतुर्थीप्रतं ... | ५२४ | अहादशपुराणाभि .. | २० |
| अभियोमनुनीयाप्रतं .. | ४३८ | अलङ्कारचं .. | १४६ |
| अभियोमहादहमीप्रतं .. | ११०७ | अलनामाभि .. | १४० |
| अभ्यङ्गसप्तमीप्रतं .. | ७४१ | अस्युवाकचं .. | ८ |
| अभ्यवरूपं .. | ११० | असीरात्ररूपं .. | १०० |
| अभिजिद्रूपं .. | १५८ | | |
| अभिजिद्रूपपुराणान्तराज्ञं .. | १८४ | आ | |
| अमीहसप्तमीप्रतं .. | ७८१ | आत्मारूपं .. | १४७ |
| अभावस्वारुपं .. | १५५ | आप्तोचरतं .. | ८५८ |
| अनुक्तमरुचसप्तमीप्रतं .. | ६९२ | आर्द्रादानमन्त्रः .. | ४७१ |
| अन्वकद्वन्द्वभूर्तिः .. | १२८ | आर्द्रारूपं .. | १५७ |
| अन्वारूपं .. | ८१ | आदित्यमन्त्रकसप्तमीप्रतं .. | ७५२ |
| अश्विका रूपं .. | ८८ | आनन्दपञ्चमीप्रतं .. | ४५७ |
| अच्युतीरूपं .. | ८९ | आनन्दमवमीप्रतं .. | ८४८ |
| अर्कसप्तमीप्रतं .. | ७८८ | आनन्दस्वरूपं .. | १५८ |
| अर्काहमीप्रतं .. | ८३५ | आर्ष्यं वटरूपं .. | १८३ |
| अज्ञकानुनीयाप्रतं .. | ४०४ | आवृत्तीरूपं .. | १६२ |
| अग्निनौकुमारभूर्तिः .. | १२७ | आगीग्यचतुर्थीप्रतं .. | ५३० |
| अग्निमीरूपं .. | १५६ | आगीग्यदशमीप्रतं .. | ८६३ |
| हस्तस्यस्यनद्वितीयप्रतप्रज्ञंसा | ३६६ | आगीग्यसप्तमीप्रतं .. | ७४७ |
| वसुधा रूपं .. | १५७ | आखेख्यपञ्चमीप्रतं .. | ५६७ |
| वसुधैवकुम्भमिपद्मं .. | १४१ | | |
| वसुधैवकुम्भमिपद्मं .. | ८६९ | इ | |
| वसुधैवकुम्भमिपद्मं .. | ८०२ | इन्दुरूपं .. | ३०३ |
| | | इन्द्ररूपं .. | १६२ |
| | | इन्द्ररूपं .. | १४४ |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|-----------------------------------|--------|------------------------------------|--------|
| ई | | ऋ | |
| ईश्वराविभवस्यरक्षणं ... | १०० | ऋषिकर्षीरूपं ... | ८१ |
| उ | | ऋषिभेदस्य ... | १४८ |
| उत्कृष्टान्निधेनुदानसम्पन्नः ... | १८८ | ऋषिमादिवरचविधिः ... | १०४ |
| उत्तरस्यसुखीरूपं ... | ११८ | ऋषिचरणं ... | ८० |
| उत्तरस्यसुखीरूपं ... | ११० | ऋषयः ... | १०८ |
| उत्तरस्यसुखीरूपं ... | १०२ | ऋषिपञ्चमीमत्तं ... | ५१८ |
| उत्तरस्यसुखीरूपं ... | ११२ | ए | |
| उत्कृष्टसप्तमीमत्तं ... | ७१६ | एकपादसप्तमूर्तिः ... | ११७ |
| उत्कृष्टसप्तमीमत्तः ... | १८१ | एकादशरुद्राः ... | ११६ |
| उत्पपुराचारिणि ... | ११ | एकादशश्रीं आश्वीतमीतमर्षीमभमवत्पूज | |
| उत्पवासप्रतापुष्पान्नसम्पन्नः ... | १००४ | मीत्यवसाहात्तं ... | ८८४ |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | १८० | एकादशरुद्रं ... | ११६ |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | १०११ | ऐ | |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | ८११ | ऐन्द्ररूपं ... | १०७ |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | ७४८ | ऐन्द्रीरूपं ... | ८१ |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | ७७८ | ऐश्वर्यप्रतृतीयाप्रतं ... | ४१८ |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | ४०१ | क | |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | १८१ | कन्यादानसम्पन्नः ... | १०३ |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | ११४ | कन्यारूपं ... | १८ |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | ८६ | कपिलदानसम्पन्नः ... | १८० |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | ८८४ | कपिलसमूर्तिः ... | १११ |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | ८८७ | कपिलस्यपञ्चमीमत्तं ... | ५७७ |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | ११४ | कनकस्यदानसम्पन्नः ... | १०२ |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | १८४ | कनकस्यसप्तमीमत्तं ... | ११० |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | १८४ | कराङ्गिणीरूपं ... | |
| उत्पान्नदानसम्पन्नः ... | १८४ | | |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|---|---------|----------------------------------|----------|
| कर्कशवर्ष | ... १८० | काशावर्ष | .. १८१ |
| कर्पूरदानमन्त्रः | ... १८१ | किल्बुजवर्ष | ... १८८ |
| कस्तुरीत्वणितकवर्षम् | ... ११२ | किलकवर्ष | .. ११६ |
| कसावर्ष | ... १८१ | कुम्भदानमन्त्रः | .. १८१ |
| कश्मिर्दादशोत्रम् | ... ११८ | कुम्भवर्ष | .. १८४ |
| कश्मिर्भूतिः | ... ११८ | कुम्भचतुर्षोत्रम् | ... ४१५ |
| कवचवर्षम् | ... १०५ | कुम्भेरमृतीयात्रम् | ... ४०८ |
| कल्याणचक्रोत्रम् | ... ६१८ | कुमारचक्रोत्रम् | .. ४८८ |
| कस्तुरीदानमन्त्रः | ... १८१ | कुम्भवर्ष | ... १८१ |
| कांक्षायामदानमन्त्रः | ... १८४ | कुम्भोत्रम् | ... ११०५ |
| कात्यायनीवर्ष | ... ८८ | कुम्भदानमन्त्रः | ... १०० |
| कान्तिद्वितीयात्रम् | ... १०० | कुम्भाष्टदानमन्त्रः | ... १८८ |
| कामदासचक्रोत्रम् | ... १८८ | कुम्भाष्टमन्त्राः | ... १०८ |
| कामभूतिः | ... ११८ | कूर्मदादशोत्रम् | ... १०११ |
| कामचक्रोत्रम् | ... ६१ | कृत्तिकावर्ष | ... १५६ |
| कामानिपञ्चमीत्रम् | ... ५०५ | कृष्णदानमन्त्रः | ... १८८ |
| कान्तिक्षेत्रचक्रोत्रम् | ... ५८१ | कृष्णदानमन्त्रः | ... १८० |
| कान्तिक्षेत्रचक्रोत्रम् भविष्यपुराणोक्तम् | ६०५ | कृष्णचतुर्षोत्रम् | ... १५४ |
| कान्तिस्नादिनासि दीपदानविधिः | ११० | कृष्णचतुर्षोत्रम् | ... ५०१ |
| काकवर्ष | ... ८८ | कृष्णचतुर्दशोत्रम् | .. १५५ |
| काकवर्षवर्ष | ... ११८ | कृष्णमृतीयावर्ष | ... १५४ |
| काकराजि वषम् | ... ८१ | कृष्णमृतीयावर्ष | ... १५५ |
| काकवर्षादि | ... १८१ | कृष्णमृतीयावर्ष | ... १५५ |
| काकादशोत्रम् | ... ८४८ | कृष्णदादशोत्रम् | ... १५५ |
| काकोवर्ष | ... ८१ | कृष्णदादशोत्रम् | ... १०१० |
| काकोरकिलदानमन्त्रः | ... १८४ | कृष्णदादशोत्रम् विष्णुधर्मोत्तरे | ११०० |
| काकदानमन्त्रः | ... १०० | कृष्णद्वितीयावर्ष | ... १५१ |

सूचीपत्रम् ।

५

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|----------------------------------|--------|-------------------------------------|--------|
| कव्यपद्योपपत्तयः | १५४ | ग | |
| कव्यपद्योपपत्तयः | १०१ | नक्षत्रपतिचतुर्शीघ्रतन् | ५१८ |
| कव्यपद्योपपत्तयः | १५४ | नक्षत्रचतुर्शीघ्रतन् | ५१० |
| कव्यप्रतिपद्वृत्तम् | १५२ | नक्षत्रप्रतिमादानसम्पन्नः | २०२ |
| कव्यपद्योपपत्तयः | १०० | नक्षत्रपद्यम् | ७६ |
| कव्यपद्योपपत्तयः | १०० | नक्षत्रप्रतन् | ५१० |
| कव्यमूर्तिः | ११८ | नक्षत्रप्रदानसम्पन्नः | २०२ |
| कव्यप्रतन्पद्यपुराणोक्तम् | ११६१ | नक्षत्रवंधपादि | १२८ |
| कव्यपद्योपपत्तयः | १५४ | नक्षत्रपद्यम् | १०४ |
| कव्यपद्योपपत्तयः | १५४ | नक्षत्रमूर्तिपात्रतन् | ४८० |
| कव्यपद्योपपत्तयः | १५४ | नक्षत्रदानसम्पन्नः | १८६ |
| कव्योपपत्तयः | ८० | नक्षत्रद्वितीयतन् | ८८२ |
| कव्योपपत्तयः | ८६ | नक्षत्रकहाद्वितीयतन् | ११०४ |
| कव्योपपत्तयः | १५४ | नक्षत्रदानसम्पन्नः | २०५ |
| कव्योपपत्तयः देवीपुराणोक्तम् | ८२२ | नक्षत्रपद्योपपत्तयः | ५०४ |
| कव्योपपत्तयः विष्णुचर्मोपपत्तयः | ८२८ | नक्षत्रोक्तसिद्धिभाष्यं चक्रविधानम् | २१५ |
| कव्योपपत्तयः भविष्यपुराणोक्तम् | ८२४ | नक्षत्रदानसम्पन्नः | २०४ |
| कव्योपपत्तयः काद्वितीयतन् | १५५ | नक्षत्रदानसम्पन्नः | २८५ |
| कव्योपपत्तयः काद्वितीयतन् | ११५० | नक्षत्रोपपत्तयः | ८३८ |
| कव्योपपत्तयः | १५१ | नक्षत्रमूर्तिः | ... |
| कव्योपपत्तयः रोहिणीतृतीयाश्रयतन् | ४५८ | नक्षत्रोपपत्तयः | ... |
| कव्योपपत्तयः | ८२ | नक्षत्रोपपत्तयः | ... |
| कव्योपपत्तयः | १८२ | नक्षत्रोपपत्तयः | ... |
| कव्योपपत्तयः | ८८ | नक्षत्रोपपत्तयः | ... |
| कव्योपपत्तयः | १११ | नक्षत्रोपपत्तयः | ... |
| कव्योपपत्तयः | १११ | नक्षत्रोपपत्तयः | ... |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|----------------------------------|--------|------------------------------------|--------|
| गौरीचतुर्धीप्रतम् ... | ५११ | वासुदेवानमन्त्रः ... | १८१ |
| गौरीरूपम् ... | ८१ | विष्णुभासुररूपम् ... | १०८ |
| गौरीप्रतम् ... | ४५० | विष्णुभासुरप्रसन्नोप्रतम् ... | ७८७ |
| गौरीयादिसागरः ... | ८४ | विष्णुरूपम् ... | १५८ |
| घण्टकण्ठःप्रसक्तिः ... | १ | शैवभाद्रमासतृतीयोप्रतम् ... | १८४ |
| घाण्डीरच्छभदेन चतुर्हंशद्रव्यादि | ४८ | शैवशुक्लप्रतिपाद्विहितं तिलकप्रतम् | १४८ |
| धीश्वररूपम् ... | १०१ | | |
| | | छ | |
| घ | | द्वयदानमन्त्रः ... | १०५ |
| घण्टाकूर्चीरूपम् ... | ८१ | द्वन्द्वीरूपम् ... | १०५ |
| घनादिसान्निध्यलम् ... | १२५ | दानदानमन्त्रः ... | १०५ |
| घृतीरूपम् ... | १४१ | | |
| | | ज | |
| घ | | जयनिरूपणम् ... | १८ |
| घण्टिकावरूपम् ... | ८० | जयकारद्रुमूर्तिः ... | ११८ |
| घण्टःपठोपनिर्णयपादि ... | ८१ | जयकारप्रतम् ... | ७८१ |
| घण्टोर्ध्वरूपम् ... | १५१ | जयनीरूपम् ... | ८१ |
| घण्टोर्ध्वप्रतानि ... | ५०१ | जयन्तीसप्तमीप्रतम् ... | ६६४ |
| घण्टुर्हंशविद्या ... | १८ | जयरूपम् ... | १११ |
| घण्टुर्हंशोवरूपम् ... | १५१ | जयापञ्चमीप्रतम् ... | ५४१ |
| घण्टुर्धूर्तिं चतुर्धीप्रतम् ... | ५०७ | जयासप्तमीप्रतम् ... | ६१० |
| घण्टुर्विश्वप्रतिभूर्तिः ... | ११४ | जलाश्रायविष्णुमूर्तिः ... | १११ |
| घण्टुर्व्यद्वरूपम् ... | १८६ | जामदग्निद्वारप्रतम् ... | १०११ |
| घण्टुर्व्यद्वदानमन्त्रः ... | १८१ | जोरकदानमन्त्रः ... | १०१ |
| घण्टुर्व्यासुरक्षेपदानमन्त्रः... | १८१ | ज्येष्ठारूपम् ... | ८५ |
| घण्टुर्व्यद्वरूपम् ... | १४८ | ज्येष्ठारूपम् ... | ८१ |
| घण्टुर्व्यासावरूपम् ... | ८८ | ज्येष्ठारूपम् ... | १५८ |
| घण्टुर्व्यासोवरूपम् ... | ८८ | ज्योतिषरूपम् ... | १०१ |
| घण्टुर्व्यासोप्रतम् ... | ५८० | ज्वरमूर्तिः ... | १११ |

सूचीपत्रम् ।

७

| त | पृष्ठा | पृष्ठा |
|---------------------------------|--------|-------------------------------------|
| | | मृत्तीयात्रनामि .. १८४ |
| तप्तुसदागमनम्: ... | १०० | मैत्रिकादपं .. १८३ |
| तपनीदपं .. | १०० | तैलदागमनम्: ... १८१ |
| तपस्यरक्षसमीत्रतं | ६१० | चबोदप्रपदार्थसमीत्रतं .. ७५६ |
| तपीत्रतं .. | ७८८ | चबोदशीदपं .. १५३ |
| तारकादपं .. | ८६ | मिन्नतिसप्तमीत्रतं .. ७३६ |
| तामसधर्मसूत्रचं .. | ११ | त्रिचिह्नसप्तमीयात्रतं तमीयं ४५६ |
| तामपाचदागमनम्: .. | १८० | त्रिचिह्नसप्तमीयात्रतं द्वितीयं ४५४ |
| ताम्बूलकददागमनम्: ... | १०१ | त्रिचिह्नसप्तमीयात्रतं प्रथमं ४५६ |
| ताम्बूलदागमनम्: .. | १०१ | |
| तारकदादशीत्रतं ... | १०८० | दक्षिणामूर्ति: ... ११५ |
| तारकदपं ... | १०८ | दक्षिणायनदपं ... १०३ |
| तारादपं ... | ८७ | दक्षिणपट्टोददपं ... १४२ |
| तासुजिहिकादपं .. | ८८ | दशाक्षचं ... ८ |
| तियिषपाधि ... | १५६ | दपसदागमनम्: .. १८० |
| निन्दुकाष्टमीत्रतं .. | ८४० | दशमहा: ... १८२ |
| निस्रदागमनम्: ... | १८६ | दशमीदपं .. १५२ |
| निस्रदाचीत्रतं .. | ११११ | दशमीत्रनामि .. ८६६ |
| निस्रदादशीत्रतं ... | ११०८ | दशाङ्गधुप: .. ५२ |
| निस्रदादशीत्रनाकरं ... | ११४८ | दशावतारत्रतं ... ११५८ |
| तुरगसप्तमीत्रतं .. | ७०७ | दाम्यत्याष्टमीत्रतं .. ८४१ |
| तुस्रवीदागमनम्: ... | १८१ | दासोदागमनम्: .. १०४ |
| तुसापुत्रपदानेष्वाग्निम्बरं ... | १०७ | द्विक्पास्रदपाधि .. १४५ |
| तुसादपं .. | १८० | द्विक्पाधि .. १४३ |
| तुष्टिप्रानिमृत्तय.त्रतं ... | ४८८ | द्विदपं .. ८२ |
| मृत्तीयादपं ... | १५४ | द्वीत्रिदपं ... ८३ |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|--------------------------------|--------|--------------------------|--------|
| दुग्धदानमन्त्रः .. | १८१ | धनद्वयतं .. | ११६१ |
| दुग्धनिर्घणं ... | १०२ | धनिष्ठावयं ... | १६० |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं ... | ८१० | धनुर्व्योद्घरणं ... | १०० |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं प्रहाराकारं | ८५६ | धनुर्वयं .. | १८१ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं ... | ८५५ | धन्यवतं .. | १५५ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | ८५६ | धन्यनारिभूतिः .. | १११ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं ... | १२० | धन्यदेवनिर्घणं .. | १६ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | १०९ | धन्यवयं ... | १०४ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | १२० | धन्यव्यवहाराणि ... | २५ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं ... | ८०९ | धन्यवतं ... | ८६० |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | ८०५ | धन्यव्यवहाराणि सङ्गता .. | १८ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | ११८ | धन्यव्यवहाराणि .. | १०६ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | ११९ | धन्यव्यवहाराणि .. | १४ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | १५६ | धन्यव्यवहाराणि .. | १० |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | ७९० | धन्योत्पत्तिः .. | ११ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | १०६ | धन्यव्यवहाराणि .. | १८८ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | ११०२ | धन्यव्यवहाराणि .. | १० |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | ४८८ | धन्यव्यवहाराणि .. | १८५ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | १५९ | धन्यव्यवहाराणि .. | ७८० |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | ११५८ | धन्यव्यवहाराणि .. | १४४ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | ११६१ | धन्यव्यवहाराणि .. | १४८ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | १५१ | धन्यव्यवहाराणि .. | १६६ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं .. | १६६ | धन्यव्यवहाराणि .. | ८८८ |
| दुग्धोत्पत्तिप्रतं ... | १२५ | धन्यव्यवहाराणि .. | |
| ध | | धन्यव्यवहाराणि .. | |
| धन्यव्यवहाराणि .. | १४६ | धन्यव्यवहाराणि .. | १११ |
| | | धन्यव्यवहाराणि .. | ७८९ |

सूचीपत्रम् ।

८

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|-------------------------------|--------|-----------------------------------|--------|
| जम्बामवलीप्रतं | ... | त्रिभुभार्कसप्तमीप्रतं प्रथमं | ६०४ |
| जम्बाकृतिः | ... | त्रिभुभार्कसप्तमीप्रतम् द्वितीयं. | ६०४ |
| जम्बासप्तमीप्रतं | ... | त्रिबन्नाकृतिः | ६०५ |
| जम्बिसूक्तिः | ... | त्रिज्यसौकादशीप्रतम् | ६०८ |
| जयनप्रदसप्तमीप्रतं | ... | त्रिसण्णैठकृतिः | ८१ |
| जरनारायणसूक्तिः | ... | श्रीराजमहादशीप्रतम् | ११८० |
| जरसिंहसूक्तिः | ... | मृत्युशालाकृतिः | १०७ |
| जरसिंहप्रतम् | ... | मृसिंहद्वारशीप्रतम् | ११८ |
| जवदुर्गाकृतिः | ... | पञ्चसन्धिप्रतं | ३५६ |
| जवनीदाकृतिः | ... | पञ्चमयं | ४४ |
| जवनीप्रतामि | ... | पञ्चपिण्डिकागौरीप्रतं | ४८५ |
| जवरानिप्रतं | ... | पञ्चभङ्गाः | ४७ |
| जवसूचार्चसू | ... | पञ्चमहापापनाशनीहादशीप्रत | १२०१ |
| जानसप्तुथीप्रतं | ... | पञ्चमहाभूतपञ्चमीप्रतम् | ५५९ |
| जामदहोदरपञ्चमीप्रतं | ... | पञ्चम्याकृतिः | १५९ |
| जामपञ्चमीप्रतं भविष्यपुराणीतं | ... | पञ्चमीप्रतामि | ५३७ |
| जामनीनोपञ्चमीप्रतं | ... | पञ्चरत्नकं | ४४ |
| जामरूपाधि | ... | पञ्चशालं | १०७ |
| जाम्बोमुञ्जामारः | ... | पञ्चाग्निवाधनरथानुनीयाप्रतम् | ४२६ |
| जामतृतीयप्रतम् | ... | पदार्थप्रतम् | ८६७ |
| जामतृतीयप्रतामरं | ... | पद्ममुद्राकथनं | १५१ |
| जामहादशीप्रतं | ... | पद्मनाभहादशीप्रतम् | १०९८ |
| जामजवलीप्रतं | ... | परशुरामसूक्तिः | ११७ |
| जामसप्तमीप्रतं | ... | पराम्बितदक्षनीपिथिः | ८६८ |
| त्रिभुभार्कसप्तमीप्रतसदृश्यं | ... | पराम्बिकाकृतिः | ११५ |
| त्रिभुभार्कसप्तमीप्रतं तृतीयं | ... | परिवाकृतिः | १०० |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|------------------------|--------|----------------------------|--------|
| परिभाषिकाः | ११० | पुराणकथं | १० |
| परिभाषा | ११ | पुण्यदानमन्त्रः | १०१ |
| परिष्कारबदेवताः | ११० | पुण्यद्वितीयादृतम् | १०२ |
| परिष्कारबदेवताकथनं | ७९ | पुण्याः | १५७ |
| पाताञ्जलं | १०० | पुण्यदानमन्त्रः | १०१ |
| पादुकादानमन्त्रः | १२१ | पूतनाः | १०१ |
| पापक्षयायाःदानमन्त्रः | १२२ | पूष्यं पञ्चम्याः | १५७ |
| पापनाशनीचमौत्रम् | ७४० | पूष्यं भाद्रपदम् | १६० |
| पापक्षयदानमन्त्रः | १२२ | पूष्यं पादाः | १५७ |
| पार्थिवः | १०८ | पृथिवीपञ्चमीवृत्तम् | ५७४ |
| पार्थिव्याः | ८७ | पृथ्वीवृत्तिः | ५४० |
| पाशुपतम् | १०७ | पौरन्दरपञ्चमीवृत्तम् | ५६७ |
| पिङ्गलाः | ११२ | पौषमासाः | १५२ |
| पिङ्गलाः | १२ | पौष्याः | १२२ |
| पिचुवन्ताः | २२ | प्रकृतिपुण्यद्वितीयादृतम् | १२१ |
| पिचुवन्ताः | १४० | प्रकृष्टोपाकथनम् | २८ |
| पिशाचाः | १२० | प्रजापतिनामबह्वराः | २०५ |
| पिशिताः | १०० | प्रजापत्याः | १०१ |
| पुष्पकथयन्त्राः | ११०४ | प्रतिपदम् | १५१ |
| पुष्पप्रतिपत्तीवृत्तम् | १२८ | प्रतिपदवृत्तं चौराभिरं | ११६ |
| पुष्पप्रतीवृत्तम् | ७१८ | प्रतिपद्वृत्तानि | १२५ |
| पुष्पप्रतीवृत्तम् | ७१४ | प्रतिपदायुग्मिन्द्रवृत्तम् | १०८ |
| पुष्यवृत्तम् | ८४४ | प्रदीपप्रतीवृत्तम् | २६७ |
| पुष्यवृत्तप्रतीवृत्तम् | ७८२ | प्रद्युम्नवृत्तिः | ११८ |
| पुन्यवृत्तानि | १५७ | प्रपञ्चिकाः | २२ |
| पुराणकथयन्त्राः | ८०५ | प्रमवाः | १०४ |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|-------------------------------|--------|------------------------------------|--------|
| प्रमथ्याकृतिः .. | १०७ | प्रथ्याखदानेच्छानिम्बरेण' .. | १०६ |
| प्रमद्वनामकस्यराकृतिः .. | १०४ | त्राक्ष्यादिमानत्राकृतिः .. | ८२ |
| प्रमादिवाक्यतिः .. | ११८ | त्रथ्याकृतिः .. | १०३ |
| प्रमानतोषर्ष' निरूपयन् | १० | भ | |
| प्रौतिकपम् .. | १६१ | भय्यादानमन्त्र' ... | १०६ |
| प्रथवङ्ग्याकृतिः ... | ११३ | भर्तृ' प्राप्तिवृत्त' ... | ११८८ |
| प्रथवङ्ग्याकृपम् प्रकारान्तरं | ११४ | भद्रकाश्याकृतिः ... | ६ |
| फ | | भद्रकाश्रीवृत्त' ... | ८६७ |
| फलतृतीयाव्रत' ... | ५०० | भद्रकाश्रीवृत्त' प्रकारान्तरं .. | ८६० |
| फलदानमन्त्रः .. | १८८ | भद्रानृतीयावृत्त' .. | ४८३ |
| फलवह्नीवृत्त' .. | ६०९ | भद्राकृतिः .. | ८१ |
| फलसप्तमीवृत्तम् .. | ७०१ | भद्राकृतिः ... | १८५ |
| फलसप्तमीवृत्त' .. | ७६१ | भद्रासप्तमीवृत्त' ... | ६०१ |
| फलसप्तमीव्रत' .. | ७४३ | भयाननाकृतिः .. | ८६ |
| ब | | भरथ्याकृतिः .. | १५६ |
| बहुवामुष्ठाकृतिः .. | ८५ | भवानीतृतीयावृत्त' .. | ४८३ |
| बसाकृतिः ... | १८५ | बाहुसप्तमीवृत्त' .. | ७५७ |
| बड्याभ्याख्यवत्सराकृतिः .. | १०७ | भावाख्यवत्सराकृतिः .. | २०६ |
| बड्यपद्वद्वृत्तिः ... | १२८ | भास्करसप्तमीवृत्त' ... | २८८ |
| बुद्धहादश्रीव्रत' ... | १०१७ | भीमहादश्रीवृत्त' प्रथपुराणीक' .. | १०४४ |
| बुद्धभूर्तिः .. | ११८ | भीमहादश्रीवृत्त' भविष्यपुराणीक' .. | १०४८ |
| बुधाकृतिः .. | १५० | भूतमायाकृतिः .. | ८२ |
| बुधाहमीव्रत' ... | ८६६ | भूदानमन्त्रः .. | ३०४ |
| ब्रह्मर्ष' सचक्षम् .. | ४३ | भैरवभूर्तिः .. | १३० |
| ब्रह्माकृतिः .. | १८८ | भैरवाकृतिः ... | ८८ |
| ब्रह्मवृत्त' .. | १७७ | | |

| | म | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|------------|-----|--------|-----------------------------------|--------|
| | | | महाकात्याकृतिः | ८७ |
| मकराकृतिः | .. | १८९ | महाजूरकृतिः | ८९ |
| महाकृतिः | .. | १५७ | महामन्त्रवैराज्याकृतिः | १८६ |
| महाकाकृतिः | .. | १४० | महाज्वालासप्तमीवृत्तम् | ६६८ |
| महाकाकृतिः | .. | ८१ | महादीपविधिः | २४३ |
| महाकाडकं | ... | ४८ | महादेवस्नाह्नमूर्तिः | १९४ |
| महाकाकृतिः | .. | ८ | महामन्त्रस्युत्सवविधिः | ८०३ |
| महाकाकृतिः | ... | ७६८ | महामन्त्रस्युत्सवविधिप्रकारान्तरं | ८१० |
| महाकाकृतिः | ... | १८८ | महापूजाविधिः | २३८ |
| महाकाकृतिः | .. | ५८ | महापूजाहाद्रीवृत्तम् | १०८ |
| महाकाकृतिः | ... | ११४ | महापूजाकृतिः | ७८ |
| महाकाकृतिः | ... | १०९१ | महापूजावृत्तम् | ८६४ |
| महाकाकृतिः | .. | ११८४ | महासप्तमीवृत्तम् | ६५८ |
| महाकाकृतिः | .. | ४१३ | महाशान्ति | २२६ |
| महाकाकृतिः | ... | २८६ | महिषीदानमन्त्रः | ३०३ |
| महाकाकृतिः | .. | ६८ | महेश्वराह्नमीवृत्तम् | ८४७ |
| महाकाकृतिः | ... | ८६ | मानुषवमीवृत्तम् | ८५१ |
| महाकाकृतिः | ... | १०७२ | मातृवृत्तम् | ८७६ |
| महाकाकृतिः | ... | ६०६ | मार्गशुक्लसप्तमीवृत्तम् | ७५४ |
| महाकाकृतिः | ... | ६५० | माषदानमन्त्रः | २८३ |
| महाकाकृतिः | ... | ११२ | मासाकृतिः | २०१ |
| महाकाकृतिः | .. | २८४ | मिथुनाकृतिः | १८० |
| महाकाकृतिः | ... | ६८६ | मीनाकृतिः | १८१ |
| महाकाकृतिः | ... | ७७५ | मीमांसाकृतिः | १०६ |
| महाकाकृतिः | ... | १११५ | मुक्तादानमन्त्रः | २८० |
| महाकाकृतिः | .. | १२० | मुक्तिद्वारसप्तमीवृत्तम् | ७८० |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|--------------------------------|--------|----------------------------------|--------|
| सुहृदात्मसम्बन्धः ... | १८५ | थाव्याकृतिः ... | ८१ |
| सुशालक्षणादि ... | १४६ | थीमनिद्राकृतिः ... | ८२ |
| सुनिष्पाधि ... | १०८ | थीमरूपाधि ... | १५१ |
| सुनिवृत्तम् .. | ७८१ | थीमेश्वरदादशीरतं ... | १०४१ |
| सूत्राकृतिः ... | १५८ | थीमेश्वर्याकृतिः ... | ८८ |
| सुगमिच्छाकृतिः ... | १५६ | र | |
| सुगमशीर्षवृत्तम् ... | ३५० | रत्नवस्त्रयुग्मदात्मसम्बन्धः ... | १८८ |
| सुसुप्तविशेषोदात्मसम्बन्धः ... | ३०६ | रत्नद्वयदात्मसम्बन्धः ... | १८० |
| सेषवादाकृतिः ... | ८८ | रत्नाव्याकृतिः ... | ८८ |
| सेषपाक्षीयतृत्तथावृत्तम् ... | ४१३ | रजतदात्मसम्बन्धः ... | १८० |
| सेषदात्मसम्बन्धः ... | ३०६ | रत्याकृतिः ... | ८१ |
| सेषदात्मसम्बन्धः ... | १८८ | रत्नदात्मसम्बन्धः ... | ३०४ |
| सेषाकृतिः .. | १८० | रथदात्मसम्बन्धः ... | ३०४ |
| य | | रथमवशीरतं ... | ८४६ |
| यस्यरूपाधि .. | ११८ | रथसप्तमीरतं ... | ६५२ |
| यजुर्वेदरूपं ... | १०५ | रथाङ्गसप्तमीरतं ... | ६५६ |
| यज्ञीयदेवताः ... | ११० | रक्षाकृतिः ... | ८० |
| यज्ञीयवीतदात्मसम्बन्धः ... | ३०२ | रसकल्याणनिर्गतनीयामतं | ४६१ |
| यमचतुर्थीरतं ... | ५२२ | रससंघास्याकृतिः ... | ८० |
| यमजिह्वारूपं ... | १०१ | रसघटकम् .. | ४७ |
| यमद्वितीयागतं ... | ३८२ | राक्षसभूतपिशाचरूपाधि ... | १३८ |
| यमरूपं ... | १४४ | राक्षसाकृतिः ... | १८७ |
| यमव्रतं ... | ८८२ | राक्षसस्याकृतिः .. | ११८ |
| यमाङ्गिकरूपं ... | १०१ | राक्षसाकृतिः ... | ८१ |
| यमदात्मसम्बन्धः ... | २८५ | राक्षसदादशीरतं ... | १०३४ |
| यमीदाकृतिः ... | ११८ | राजराजेश्वरव्रतं ... | ८६४ |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा | | |
|--------------|--------|------|-----------------|-----|------|
| राजसूयसंज्ञा | ... | ११ | सूयसंज्ञा | ... | ११२ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ४५० | सूयसंज्ञायाः | ... | ८४ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १०६० | सूयसंज्ञासंज्ञा | ... | ८२६ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ८६५ | सूयसंज्ञासंज्ञा | ... | ११२ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ८४१ | सूयसंज्ञासंज्ञा | ... | ५९८ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ११८ | सूयसंज्ञा | ... | ८४ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १८० | सूयसंज्ञा | ... | ८५ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १५१ | सूयसंज्ञा | ... | ८४ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ८५२ | सूयसंज्ञा | ... | ४१० |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ११२ | सूयसंज्ञा | ... | ८२ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १११ | सूयसंज्ञा | ... | ६१० |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ८२२ | सूयसंज्ञा | ... | १८५ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १८२ | सूयसंज्ञा | ... | २८० |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १०९ | सूयसंज्ञा | ... | ८५ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १६१ | सूयसंज्ञा | ... | ८४ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १२० | सूयसंज्ञा | ... | १०९ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ६२८ | सूयसंज्ञा | ... | ८४ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ६१८ | सूयसंज्ञा | ... | १०० |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १११९ | सूयसंज्ञा | ... | १८८ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १५६ | सूयसंज्ञा | ... | १८८ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १५९ | सूयसंज्ञा | ... | १६८ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १९० | सूयसंज्ञा | ... | १०० |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ८५ | सूयसंज्ञा | ... | ५९० |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १८८ | सूयसंज्ञा | ... | ८८ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | १८४ | सूयसंज्ञा | ... | ०९६ |
| राजसूयसंज्ञा | ... | ८ | सूयसंज्ञा | ... | १०२० |

सूचीपत्रम्

१५

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|---------------|--------|--|--------|
| वराहभूमिः | ११८ | वासुदेव द्वादशीव्रतम् | १०६८ |
| वरीवसथाकृतिः | ११९ | विकारिवसथाकृति | १०७ |
| वदथाकृतिः | १२५ | विकन्याकृतिः | १०१ |
| वदथाकृतिः | १०५ | विकन्याकृतिः | १०२ |
| वसुवर्षाकृतिः | ८६ | विज्जसाकृति | १०८ |
| वसुवर्षाकृतिः | ८६ | विज्जयनिकाकृतिः | १०२ |
| वसुवर्षाकृतिः | ११८ | विज्जयाकृतिः | १०९ |
| वसुवर्षाकृतिः | १२१ | विज्जयाद्वादशीव्रतम् | १११६ |
| वसाकृतिः | १८१ | विज्जयपञ्चमीव्रतम् | ५०६ |
| वर्षाकृतिः | १०२ | विज्जयपञ्चम | ११२ |
| वसुवर्षाकृतिः | १०२ | विज्जयाकृतिः | १८० |
| वसुवर्षाकृतिः | ११२ | विज्जयपञ्चमीव्रतम् | ७१० |
| वसुवर्षाकृतिः | १११ | विज्जयपञ्चमीव्रतान्तरं सवितुः सप्तम- | |
| वसुवर्षाकृतिः | ८४८ | नामादि | ७०५ |
| वसुवर्षाकृतिः | ७८१ | विज्जयाद्वादशीव्रतम् | ११०५ |
| वसुवर्षाकृतिः | १११ | विज्जयाद्वादशीव्रतं त्रयस्यैवर्षाकृतिः | ११३१ |
| वसुवर्षाकृतिः | १८८ | विज्जयाकृतिः | ८९ |
| वसुवर्षाकृतिः | १०१० | विज्जयारोग्यपञ्चमीव्रतम् | ७१० |
| वसुवर्षाकृतिः | ११० | विज्जयापञ्चमीव्रतम् | ६१३ |
| वसुवर्षाकृतिः | १०० | विज्जयैकादशीव्रतम् | ११४२ |
| वसुवर्षाकृतिः | ८५ | विज्जयैकादशीव्रतं त्रयस्यैवर्षाकृतिः | ११३२ |
| वसुवर्षाकृतिः | १८० | विज्जयाप्रतिपद्व्रतम् | ११८ |
| वसुवर्षाकृतिः | ८०१ | विज्जयाद्विद्येवताः | १०८ |
| वसुवर्षाकृतिः | ८० | विज्जयैकादशीव्रतम् | ११९ |
| वसुवर्षाकृतिः | ८४ | विज्जयैकादशीव्रतम् | ८८ |
| वसुवर्षाकृतिः | १११ | विज्जयाद्वादशीव्रतम् | ७८१ |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा | | |
|--------------------------|--------|------|----------------------------|-----|------|
| विषयाकृतिः | ... | ०८९ | वृद्धाकृतिः | ... | १५५ |
| विभूतिदादश्रीव्रतम् | ... | ०८९ | वृषाकृतिः | ... | १५६ |
| विषयाकृतिः | ... | ८५ | वृषभकृष्णाकृतिः | ... | १५९ |
| विक्रपावधद्रुर्भिः | ... | १२० | वैतरचीदानसम्भः | ... | १६० |
| विभवपद्मूर्तिः | ... | १२८ | वैकुण्ठाकृतिः | ... | १६६ |
| विरोधाकृतानः | ... | ११० | वृषस्यत्याकृतिः | ... | १५८ |
| विरीचकद्रूपम् | ... | ११० | वैतरचीव्रतं | ... | १११० |
| विद्यायाचीकर्म | ... | ८४ | वेदिकः सम्भः तेषांप्रबोधनं | ... | २४० |
| विजोक्तदादश्रीव्रतम् | ... | १००९ | वैभूत्याकृतिः | ... | १०८ |
| विजोक्तपडीव्रतम् | ... | ९०० | वेनायकचतुर्वीव्रतं | ... | ५२९ |
| विजोक्तत्रयीव्रतम् | ... | ०४९ | वेराजाकृतिः | ... | १८९ |
| विश्वरूपिकाकृतिः | ... | १०९ | वेम्बवीरुषं | ... | ८० |
| विक्रमाकृतिः | ... | १०४ | वज्रमदानसम्भः | ... | १८० |
| विश्वव्रतम् | ... | ११४५ | वतीपातदानसम्भः | ... | १८८ |
| विश्वरूपव्रतम् | ... | ६५ | वाकरवाकृतिः | ... | १०५ |
| विश्वरूपीकाकृतिः | ... | ११५ | वाघानाकृतिः | ... | १९० |
| विश्वरूपिकाकृतिः | ... | १०९ | वासुमूर्तिः | ... | १२९ |
| विश्वदेव संख्या | ... | १४० | वीरमुद्राकर्म | ... | १२९ |
| विषयाकृतिः | ... | १५८ | वीरपडीव्रतं | ... | ६१६ |
| विश्व व्याकृतिः | ... | १६९० | व्रतराजतृतीयव्रतं | ... | ४८४ |
| विश्व शक्तिदादश्रीव्रतम् | ... | १२०९ | व्रतसामान्यधर्मसदधिकारिनम् | ... | |
| विश्वीराकृतिः | ... | ११९ | वृद्धाकृतिः | ... | ११५ |
| विश्व व्रतं | ... | ११०० | व्रतान्धभिधियको | ... | ११५ |
| वीरवद्रुर्भिः | ... | ११९ | व्रतारण्यकाकृतिः | ... | १२४ |
| वृद्धदादश्रीव्रतं | ... | १०९० | | | |
| वृषाकृतिव्रतम् | ... | ८६६ | वृद्धाकृतिः | ... | १८५ |
| वृषावाचकर्म | ... | १०८ | वृद्धदादश्रीव्रतम् | ... | १८८ |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|--------------------------|--------|---------------------------------|--------|
| श्रीशान्तिपञ्चमीव्रतं .. | ५०५ | समीरचक्षुषं ... | १०० |
| श्रीशुक्लपञ्चमीव्रतं ... | २०५ | समुद्रक्षुषं ... | १४१ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ८८० | सम्भ्रान्तिदाद्रीव्रतं ... | १०८४ |
| श्रीव्रतं .. | ४०५ | सचिद्रूपं ... | ७२० |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | १८८ | सर्वपञ्चमीव्रतं ... | ५६० |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ६१ | सर्वविद्यापञ्चपञ्चमीव्रतं .. | ५६४ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | १८० | सर्वकामव्रतं ... | ११५१ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ६ | सर्वभिक्षुं .. | ११० |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ६१० | सर्वज्ञानक्षुषं ... | ६६ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ६१० | सर्वचारिव्रतं ... | ११० |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ५०० | सर्वभूतदमन्याकृतिः ... | ८६ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | १५१ | सर्वमङ्गलक्षुषं ... | ८१ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | १६० | सर्वशान्तिपञ्चमीव्रतं ... | ७०५ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | १११ | सर्वपञ्चमीव्रतं .. | ६८५ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | १८५ | सचिरकानिष्ठदानमन्त्रः .. | १८८ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ८४६ | साहस्रकृतिः ... | १०८ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | १८८ | साधिकावर्षं सवर्षं ... | ११ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ४८ | साधिकादिभेदेनवर्षं साधारणान्नरं | १० |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ४८ | साधारणवर्षं .. | ६ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | १५१ | साधारणवर्षक्षुषं ... | ११६ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ७८१ | साधकक्षुषं ... | १०१ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ६१० | साधनव्रतं ... | ११०१ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ७०० | सामवेदश्च विदेयतच्छान्दांसि | १०८ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ७८१ | सामवेदक्षुषं ... | १०४ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | ६०८ | सारङ्गपञ्चमीव्रतं ... | ५५१ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | १४१ | साम्भ्रान्तिव्रतं ... | ८८१ |
| श्रीविक्रमपञ्चमीव्रतं .. | १४१ | साम्भ्रान्तिव्रतं .. | ११४ |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|------------------------|--------|-----------------------------------|--------|
| धातिसङ्घं | १८१ | सूक्तपूर्णिदात्मनः | ३८३ |
| सिंहदात्मनः | १८४ | सूक्ताकृतिः | ३४८ |
| सिंहाकृतिः | १८० | सूक्तं तं दिव्युषयो नरोत्तं | ७७८ |
| चितकपं | १८१ | सूक्तं चतुर्मीमतं | ७७० |
| चितचतुर्मीमतं | ७७८ | सौषापनविद्यामतं | ३४३ |
| सिद्धासंवादिचतुर्मीमतं | ४३४ | सौषापनमारोग्यप्रतिपद्यमतं | ३४८ |
| सिद्धासंवाकृतिः | ११८ | सौषापनसाहाय्यमतं | ८०३ |
| सिद्धाकृतिः | १६४ | सौषापनसाहाय्यमतं- | |
| सिद्धाकृतिः | ८० | भविष्यपुराणोक्तं | ७७ |
| सिद्धाकृतिः | १४१ | सौषापनपट्टीमतं | ७७ |
| सिद्धिनिवाचकचतुर्मीमतं | ४२४ | सौषाद्यद्वयप्रदानमन्त्रः | २ |
| सुक्तार्ककृतिः | १६४ | सौमहितोपागतं | ३८ |
| सुक्तनवाहरीमतं | १००८ | सौममतं | ८०८ |
| सुक्तचतुर्थीमतं | ४२६ | सौमाहरीमतं | ८३८ |
| सुक्तपट्टीमतं | ६२८ | सौभाग्यतृतीयागतं | ७० |
| सुक्तनिवाहरीमतं | १०८१ | सौभाग्यतृतीयागतं | ४ |
| सुक्तमतं | ८८१ | सौभाग्यतृतीयागतं मन्त्रपुराणोक्तं | ४८ |
| सुक्तनवाहरीमतम् | ११०४ | सौभाग्यद्रव्ययुक्तादानमन्त्रः | ३०२ |
| सुक्तं नवपट्टीमतं | ६१० | सौभाग्यपञ्चमीमतं | ५७८ |
| सुक्तनवाहरीमतम् | १०६१ | सौभाग्याकृतिः | १८३ |
| सुक्तपूर्णिदात्मनः | २८० | सौभाग्यप्रथमवृतं | ७७४ |
| सुक्तपूर्णिदात्मनः | १८० | सौभाग्यस्याकृतिः | ३३६ |
| सुक्तार्ककृतिः | ८८४ | सौभाग्याष्टकं | ४८ |
| सुक्तार्ककृतिः | ८९ | सौभाग्याकृतिः | १६८ |
| सुक्तनवाहरीमतं | ११०४ | सौरचतुर्मीवृतं | ७७७ |
| सुरेश्वरचतुर्मी | ११८० | साम्प्रतिः | १२८ |
| सुरोहाकृतिः | १४३ | ज्ञानपरिभाषं | ३३५ |

| | पृष्ठा | | पृष्ठा |
|----------------------------|--------|-------------------------|--------|
| सर्वमानदानमन्त्रः .. | १०१ | हरिप्रसन्नः ... | ११०१ |
| सर्वादिनिष्ठदानमन्त्रः ... | १८० | हरिहरमूर्तिः ... | ११६ |
| सामोक्ष्यं | १९८ | सर्वकाळतिः ... | १९० |
| | | हरिहरमन्त्रिकपत्रं ... | १११ |
| | | सकारूपं ... | ११८ |
| सर्ववीथमूर्तिः .. | ११० | साधारणकृतिः ... | ८६ |
| सर्वामनाकृतिः ... | ८० | अज्ञाताकृतिः ... | ८५ |
| हरिहरमन्त्रिकपत्रं | ४८० | सैमन्ताकृतिः ... | १०१ |
| मूर्ति | ११८ | सैमन्तमन्त्राकृतिः ... | ११६ |
| कदमूर्तिः ... | १२८ | सोमविधिः ... | १०८ |
| दत्तं | ८८१ | सोमविधिः देवोपुरासोक्तं | १८ |
| विद्यादानमन्त्रः ... | १०१ | | |

ग्रन्थानां वचनसंख्या ।

—000—

| | पृष्ठा | पृष्ठा |
|---|--|--------|
| च | | |
| चमत्कर्मसंविता ८७६ । | काकीनरं ६१, ७५०, ४८८, ८६४, ८६४, ८६४ । | |
| चमत्कर्म २२७, २२२ । | कूर्मपुराणं १३, २१, २२, ३२३, ३२८, १००८, १०१०, ११५८ । | |
| चाम्निपुराणं २२७, २२२, ८८६ । | चीरसाजी ४७ । | |
| चा | | |
| चाग्नेयपुराणं ८८२ । | च | |
| चादित्यपुराणं ७७०, ८०४, ८०६, ८७७ । | चक्रपुराणं ७२, २२१, २२२, २२१, २२८ | |
| चामत्कर्म २० । | ३८६, ४६०, ४८२, ४७६, ६२०, ७७० । | |
| चापकल्पः २०, २१, २६, ७१ । | चाक्यपुराणं ७४, ८७२, ८६५, ८८२, १००८ | |
| च | मात्रं २७३, २७६ । | |
| उत्तमाद्येष्टरसैवाद्यः १२०२ । | चक्रपरिमिष्टं २२, ७०, ७१ । | |
| च | चोपचक्राण्यं ३८ । | |
| चक्राष्टकः ८८६ । | चौतसः ८८७ । | |
| च | च | |
| चात्वायनः ३५, ५५, ७६, २२२, ८८२, ८८२, १००२, १००३, १००५ । | चामत्कर्म २७ । | |
| काशिकापुराणं २२, २२७, ४२८, ७८८, ८२१ ८२२, १००२ । | चन्द्रोपचक्राण्यं २२, २६, २८, २८, ७० । | |
| | ७२, ७८, ३६०, ४८७, ६०६, २०८, ६४४, ६२०, ६४२, ६५२ । | |

| पृष्ठा | पृष्ठा |
|---|---|
| ८५७, ८८१, ८८३, १०००, १००१, १००६, १०१०, १०५६, १०८४, ११४५, ११७७, ११८०, १२००, १२०१ । | ब ब १२८ । बमपुराचं १२ । |
| भमिषोत्तरं ४८, ५३, ३३२, ३५६, ३५९, ३५४, ३८०, ३८२, ३८४, ४०० ४०२, ४०५, ४०५, ४१३, ४१६, ४१८, ४१६, ४२०, ४२५, ४२२, ४४३, ४७४, ४८६, ६००, ६०२, ६०४, ६१७, ६७१ ७५४, ८१४, ८१८, ८२७, ८७३, ८८४, ८८६, ८९०, ८९२, ८५८, ८८१, १० २१, १०८८, १०८४, १११७, १११७, १११७, ११४५, ११७१ । | बाह्यवल्गाः १५, १८, २२, २६, २७, २८, ५० द दम्बकोपः १४१ । |
| भामवर्गं ७ । भृशुः २२५ । | ल लघ्नः २४५ । लक्ष्मणसुषुप्तं ८८ । लघुपादोः २८ । लिङ्गपुराचं ४२, ६७, २२५, २२६, ३०७ । |
| म | व वराहपुराचं ११, ५७, ४६, ३२१, ३५५ ४७८, ४२४, ५५६, ६१६, ७२५, ७४८, ८७२ ८५८ ८८३, १००४, १०११, १०४४, १२०३ १२६२, १२७२, १२०४ । वराहमिषिरी २२६ । वज्रिष्ठः २०, २५, ५२ । वज्रिपुराचं २०, १०७, ११५८ । वातुसामन ४५ । वासवपुराचं २४, ३८, १४०, ८५८, १२०५ । वासुपुराचं २२८ । वासुसंज्ञिता २४० । विश्वकर्माज्ञाचं ७८, ७८, ८६, ८८, २०४, १२२, १२६, १२२, १५१, १८१, १९८, १९८, १४० । विश्वकर्मा ११८, १४० । |
| मन्त्रपुराचं १६, २१, ४८, ५३, ३८, ५८, ८८, १४८, १५०, २२२, २८७, ३०८, ३२१, ८८३, १०००, १००८, १०६०, ११८८ । मन्त्रं २२, १००८ । मयसंपन्नः १३८ । मरीचिः ४०, ७५ । मार्कण्डेयपुराचं १६, ३४, ३७, ४८, ५२, ८७, २२१, ४२२, ४४४, ५०८, १०१०, १०११ । महाभारत ७, २२, १४, १४, १६, २४, २५, ३२६, १०८१ । महायज्ञोपनिषत् ४२ । | |

| पृष्ठा | |
|------------------------------------|---|
| विश्वामित्रः १०, ६० । | व्रतवचनमुक्तिः ६८ । |
| विष्णुः ५४ । | ब्रह्मात्मनः १३, १४, १५ । |
| विष्णुमुनिः ५५, ५६ । | त्रिवचनैः ४४, ११५ । |
| विष्णुवचनैः १०१०, १०८१ । | शुद्धः ११५ । |
| विष्णुवचनैः ८, १५, ४४, ४७, ७६, ७८, | श्रीषाधारवचनैः ५८ । |
| १०३, ११०, ११५, ११८, १२०, १४०, | श्रीमन्मः १४५ । |
| , १४७, १५०, १८१, ११८, १४१, १४४, | ष |
| , १८०, १८८, १८९, १८९, ४५३, ४५४, | वद्विंशत्यतः ४८ । |
| ६, ४५७, ४८८, ४८९, ५५२, ५७४, ५७५, | ष |
| १०, ७७४ ७७७, ७७८, ७७८, ७८०, ७८०, | सत्यव्रतः १४४ । |
| ७८१, ७८२, ८११, ८४७, ८४८, ८४८, | समन्तकामप्रोक्तं ८८३, ८८४, ८८८, ८८८, |
| ८५०, ८६६, ८६८, १००८, १०६३, १११४, | ८००१ । |
| ११४७, ११४८, ११५०, ११५१, ११७५, | साधकः ६० । |
| ११८४ । | सिद्धार्थसंविता ११४ । |
| विष्णुपुराणं १८, २०, २७, ३५ । | सौरपुराणं ५१०, ८८८ । |
| विष्णुपुराणं ८८९, ८८९, १००३, १००८, | सामपुराणं १३, १४, १५, ४२, ४४, ४५, |
| १०८६, १०८७, ११०१, ११०१ । | ११७, ११८, ११८, ११८, ११४, ११४, ११८, ११८, |
| विष्णुश्रुतिः ८८४ । | ४८०, ५०१, ५१६, ५१७, ५२१, ५७७, ५८० |
| वद्वचनैः ४४ । | ६२६, ८२५, ८५५, ८८५, ८८८, १००१ । |
| वद्वचनैः ५३, १४४ । | सामपुराणीयप्रमाणसंज्ञं ११४६ । |
| वद्वचनैः ८११, ५३, १४४ । | सामः ८१० । |
| वेदवासः १३ । | श्रुतिमोक्षाया ८८७ । |
| वीरवासः १८, १८, १५ । | ष |
| वासः ११, ११६, १११ । | चरित्रमः ११७ । |
| वद्वचनैः १३, १३ । | चारीनः ४, १३, १३, १००८ । |

विज्ञापनम् ।

महामहोपाध्यायश्रीहेमाद्रिविरचितचतुर्वर्गचिन्तामणिर्नाम
ग्रन्थोऽयं यत्र व्रतखण्ड, दानखण्ड, ज्ञानखण्ड, आह्वखण्ड,
परिशेषखण्डसमाख्याकैः कल्पचिन्तते व्रतखण्ड दानखण्ड
तीर्थखण्ड मोक्षखण्ड परिशेषखण्ड समाख्याकैः पञ्चभिरवय-
वैर्बिम्बस्तोषां दानखण्डात्मकचिन्तामणिः प्रासियाटिकसोसा-
इटिसभाञ्चमहोदयानामनुमत्या मया खान्निप्रहेन्दुमित-
सम्बदाख्यसम्बत्सरे मुद्रितोऽभूत् साम्प्रतं व्रतखण्डात्मकः
प्रथमोऽपि मुद्रयते मुद्रितोऽनयोऽन्योऽवशिष्यते, चतुर्वर्गचिन्ता-
मणौ स्मृतिनिबन्धे महाशास्त्रे ब्राह्मणादीनां वर्णानां ब्रह्मचर्या-
दीनामाश्रमाणामनुलोमप्रतिलोमजातानां सङ्करजातीनाञ्च
वर्द्धिधर्मा विस्तरेण साधारणधर्माद्यासंशयं निर्णीताः सन्ति,
ग्रन्थोऽयमतिशयः सर्वसाधारणैर्विद्वत्सव्ययायाससाध्यतया-
वक्तोक्तुं बहुलतया च स्वयं लेखितु मयोग्यस्तेनास्य
विरलप्रचारतया निखिलधर्मा आचारव्यवहाराश्रयाः साधारणै-
रसंशयमवगन्तुमशक्यन्तेऽतः कथयथा सर्वजन गोचरार्थं
तन्मुखं निर्धार्य मुद्रादिकरणव्ययोपयुक्तं नतु लाभार्थं मुद्रितः
पक्ष तु मुद्राङ्गमेव पूर्वराजनामकमचरितादीनि जिज्ञा-

सूनां विभिन्नजातीनामपि महोपकारः सुसम्भाव्यते अत्राणुरपि
संशयो नास्ति साम्प्रतं विज्ञाप्यते हेमाद्रिस्तु देवगिरिस्थ
यादववंशमहाराजाधिराजमहादेवचक्रवर्तिनो नृपतेः प्राङ्गि-
वाकापरपर्यायधर्माधिकरणपण्डित आसीत् यस्य सभापण्डित-
श्रीवोपदेव आसीत् सम्भाव्यते स च पञ्चवसुधरेन्दुस्मिते शकनृपति
संवत्सरे डिवादिवत्सर न्यूनाधिक्येन समजनिष्ट, हेमाद्रिस्तु तदैव
समुदयं लेभे च, अत्रायं जनपरम्परासम्बद्ध एतदुपन्यकर्त्ता वोप-
देव इति वोपदेवस्तु महान् पण्डितः पदार्थादर्शं महाभारत भाष्य-
कोष व्याकरण काव्य भागवतभाष्य बहुविध वैद्यकग्रन्थान् स च-
विरचितवान्, वोपदेवस्तपदार्थाभिधानकग्रन्थकारिकामनभ्य-
ख्याने उल्लेख्य यथातथ्यं कारिकाव्याख्या समाधाय तत्प्रामास्य
प्रतिपादनार्थं मूलं हेमाद्रौ चिन्त्यमित्यादिभिर्निर्वच्यैः कमला-
करभट्टाद्यभिहितैरेवं प्रतीमन्, यद्यपि क्रमप्राप्तं व्रतखण्ड
मेवाद्दौ सुद्रयितुमुचितं तं प्रोज्झ्य दानखण्डस्य सुद्राङ्गने
सन्दिहानस्य जिज्ञासोर्जिज्ञासाविनिवारणवोजमिदं व्रतखण्ड-
स्यादर्शभूतमेकमात्रपुस्तकं तदा लब्धं दानखण्डस्य चत्वारि
पुस्तकानि परिप्राप्तानि अतो हेतोः क्रमप्राप्तमपि पूर्वं तत्र
सुद्रितं, एकमात्रपुस्तकादर्शदर्शनविश्लासेन सुद्राङ्गनस्यानौ-
चित्यात् अस्मिन् वर्षे व्रतखण्डस्यादर्शभूतक पुस्तकत्रयं लब्ध-
यतो व्युत्क्रमं परावर्त्य व्रतखण्डसुद्रयितुमारभ्यते, पुस्तक

त्रयन्तु श्रीयुक्तगवर्षमेष्ट संस्कृतपाठशालास्यं, पुस्तकेषु तेषु
 अनेकस्थाने पाठानैक्यमस्ति एतावत् किं ज्ञानं स्थानं
 भिन्नकर्तृकमिव प्रतिभाति, तथापि आसंयुक्तपाणि कमलाकरा
 द्विकृतग्रन्थानवशोक्त बहु विचार्य्यं पुस्तकान्तरे पाठइतिविरुध-
 पाठं संरक्ष्य संलक्ष्मीकृत्य मुद्रितः परिशोधितश्च विचार्य्यतां, व्रत-
 खण्डचिन्तामणौ व्रतविधानव्यपदेशेन सुरनरतिर्य्यगादिवार
 नक्षत्रकारणतिथीनां स्वरूपवर्णनं पिशाचभूतगन्धर्व्वकिन्नर विद्या-
 धराशरीरयक्षराक्षसादीनाञ्च स्वरूपवर्णनं नानामहर्षीणां नाना-
 देवानां हरिहरहरिहरप्लगर्भादीनाञ्च स्वरूपवर्णनं श्रीमद्गुर्गा-
 दीनां भगवतीनाञ्चकारादिवर्णनं किन्तावत् व्यास वाल्मीकि
 प्रभृतीनां सर्व्वेषां महर्षीणां वर्णरूपपरिवर्णनञ्चास्ति, तैर्नाना
 ज्ञातीयानामपि परोपकारः सम्भाव्यते च, हेमाद्रिकृतचतुर्व्वर्गं
 चिन्तामणिनामकग्रन्थस्य बहुलतया संचिप्तसंग्रहवत् शिष्यै रूप-
 शिष्यैः पाठ पाठनानामप्रचरद्रूपतया व्यवहाराभावेनेदृगवस्थाभावा
 पन्नः, तद्वस्थामपाकर्तुं सभ्यराजानामाज्ञया तत्पुरुषाणाञ्च
 चेष्टया च तदनुमत्या यद्यपि मया विशदीकर्तुमिच्छते तथापीद-
 मपि द्रष्टव्यम् ॥

महारण्येदात् परमपि कियच्छिष्टमपरं ।
 ततश्चेत्सुहोषो नहि भवति भाव्ये हि विषये ।
 वनन्यायादत्र क्षिपिदपि भवेद्दुष्टमपरं ।
 वचः क्षम्यं याचे विनति ततिपूर्व्यं हि कतिन इति ॥ १ ॥
 महाराष्ट्री जीव्याश्चिरमस्त्रिराज्याधिपतया
 तदस्या निर्विघ्नं भवतु निजराष्ट्रं प्रकृतिभिः ।
 द्विपन्तः सन्त स्त प्रकृतिगुणतः सभ्यनृपतौ
 ततः शान्तस्नान्ताः कुवत नृपकार्यं निजमिव ॥ २ ॥
 राष्ट्रः सत्पुरुषेः प्रयासबहुलै र्धन्याः समुद्धारिताः ।
 श्रीमन्नागवतावतारसदृशान् जानन्तु नो तान् बुधाः ॥
 मन्मानश्विषु वेदशास्त्रनिषयान् ते चोद्धरन्ति स भोः
 एतं ब्रह्मपुरःसराः कति कति धन्याः समुद्धारिताः ॥ ३ ॥

श्रीभरतचन्द्रशर्मणा ।



नवोद्धार नवः २

हेमाद्रिः ।



तत्र व्रतखण्डं ।



प्रथमोऽध्यायः ।

अथ यन्त्रकर्तुः प्रयत्नः ।

पादप्राग्विनिःसृत्युसरितो देवस्य सञ्जीपते,
र्व्यक्ताशोरुहसम्भवा त्रिजगतौबन्धा जयन्ति हिजाः ।
राग-हेष-मदादि-दोष-विरहादन्तस्मुरञ्ज्योतिषाम्
तेषामिव शिरोमणिविजयते विश्वाभिधानो मुनिः ॥ १ ॥
गोत्रे तस्य बभूव निर्भलगुण श्रेणीभूतामण्यौ,
र्विद्या-चार-विवेक विद्वान् निधिः श्रीवासुदेवः कृती ।
यत्कौर्त्या धवलीकृते भिभुवने श्रीकण्ठ-वैकुण्ठयोः,
कौलासाचलदुग्धसिन्धु विषये नासीन्निवासी मृष्टे ॥ २ ॥
नानादान प्रीणित प्राणिलोको

(१)

लोका-लोक-प्रान्तविश्रान्तकीर्तिः ।

तस्मादासीन्नामतः कामदेवः

पुण्याचारैर्मूर्तिमान् धर्म एव ॥ ३ ॥

विमलगुणमयीनामाकरः कामदेवा

दभवदतुलतेजा नाम हेमाद्रिसूरिः ।

सकल कलिकक्षणातङ्कपङ्कापहारी

सुरसरितश्चबोधः शार्ङ्गपाणेः पदाज्ञात् ॥ ४ ॥

पुरापि यत्पुण्यमगण्यरूपम्

त्रीकामदेवेन कृतं नु विभ्रः ।

येनादरिद्रां जगतीं विधातुम्

हेमाद्रिरप्यस्य गृहेऽवतीर्णः ॥ ५ ॥

वरितं तस्य हेमाद्रेरुत्तं केन वर्यते ।

उपैति प्रार्थितो यस्य सन्तानः कल्पवृक्षताम् ॥ ६ ॥

दृष्ट्वैव भावीनि यथासि यस्य

जगन्नयी मण्डलपण्डितानि ।

तथाविधं शिल्पमनल्पमिन्दो

षाता विधातुं शिथिलादरोऽभूत् ॥ ७ ॥

असौ विसीमा महिमा हिमाद्रिम्

हेमाद्रिसुरैरधरी करोति,

दूराद्गम्यं मृगलोचनानाम्

येनाजङ्गमानसमेव धत्ते ॥ ८ ॥

कलाकलापं सकलं विभर्ति

गवां सहस्राणि सदा ददाति ।

जगत्प्रसिद्धिजराजभाव

स्तथापि यस्तारकतां दधाति ॥ ८ ॥

विध्वस्ता खिलवैरिणः किल महादेवस्य पृथ्वीपते,

राज्यक्षीरसमुद्रवर्षनशशी हेमाद्रिसूरिः परः ।

येन श्रीकरणाधिपत्यपदवीमासाद्य विद्यामपि,

न्यस्ता श्रीय सरस्वती च विदुषां गेहेषु देहेषु च ॥ १० ॥

जिज्ञासामिह कुर्वते कतिपये धर्मस्य तेभ्यो परे

जानन्त्येव समस्तशास्त्ररचनादस्माभिरिव पुनः

निःशेषैरभिधीयते क्षतितले हेमाद्रिसुरेः परी

ज्ञातुं वा चरितुं चमोनहि पुरा भूतो न भावी पुरः ॥ ११ ॥

स सम्प्रति निरालोक लोकशङ्कापनुत्तये ।

विदधाति चतुर्वर्ग, चिन्तामणि मुदारधीः ॥ १२ ॥

यं पूर्वं चारुचिन्तामणि ममितगुणं मन्दराद्रिः समुद्रम्

निर्मथ्य प्रयशोऽयं वितरति बहुशः प्रार्थनादर्शमेव ।

सम्प्रत्यालोच्य * सर्वस्मृति-निगम-पुराणे-तिहासा-म्बुराशीन्

हेमाद्रिः स्वर्णैव प्रकटयति चतुर्वर्गचिन्तामणिं सः ॥ १३ ॥

रन्धानमन्धानि तमांसि दूरे विचिन्त्य चिन्तामणिमेतमेव ।

मनोरथानां परिपूरणाय नान्यत्र सन्तः श्रममाचरन्तु ॥ १४ ॥

अनन्यमनसा सोऽयं चिन्तामणिरुपासितः ।

विदधातु सदाऽशेषमनीषितफलानि दः ॥ १५ ॥

खण्डानि चास्मिन् व्रत-दान-तीर्थ-

मोक्षाभिधानि क्रमशो भवन्ति ।

यत् पञ्चमं तत् परिशेषखण्डं
 मखण्डितो यत्र विभाति धर्मः ॥ १६ ॥
 धर्मो जयत्वभ्युदयैकहेतु
 र्यस्य प्रकारान् बहुदाहरन्ति ।
 अवान्तरानेकविशेषयोगा
 दन्येऽपि यस्मिन् बहुषी भवन्ति ॥ १७ ॥
 असुख्य भेदानखिलान् प्रवक्तुम्
 वाचस्यते-रघ्वसमर्षभाषः ।
 महानुभावा मुनयोऽपि शास्त्रे
 तदेकदेशं प्रतिपादयन्ति ॥ १८ ॥
 तेनेह हेमाद्रिसुधीः स्वशास्त्रे
 साधारणं धर्मविशेषमाह ।
 असाभिसावानभिसावभेदात्
 काम्यञ्च नित्यञ्च यनामनन्ति ॥ १९ ॥

वदाह चारीतः ।

काम्यैरेतैः क्षिप्यमाचैस्तपोभिः
 स्वर्गा-लोकात् पुनरायान्ति जन्म-
 कामैर्मुक्ताः सत्यलोकाः स वज्रा
 स्तपोनिष्ठानक्षयान् भान्ति लोकांनिति ॥ २० ॥

अथ के ते धर्मेषु षट् प्रकाराः कतमवासावस्मिन् शास्त्रे
 प्रतिपादयिष्यमाणः साधारणाख्यो धर्मो विशेष इत्युच्यते ।

तत्र धर्म इत्यनुष्ठप्ती भविष्यत् पुराणे ।

वर्णधर्मः स्मृतस्त्वेक आश्रमाश्रामतः परम्
वर्णाश्रमस्तृतीयस्तु गौणो नैमित्तिक स्वथा ॥
वर्णत्वमेकमाश्रित्य यो धर्मः सम्प्रवर्त्तते
वर्णधर्मः स उक्तस्तु यद्योपनयनं नृप ॥
आश्रमञ्च समाश्रित्य यो धर्मः सम्प्रवर्त्तते
सखत्वाश्रमधर्मस्तु भिक्षादृच्छादिको यथा ॥
वर्णत्वमाश्रमत्वञ्च योऽधिकृत्य प्रवर्त्तते
स वर्णाश्रमधर्मस्तु स्वामीश्री मेखला * यथा ॥
यो गुणेन प्रवर्त्तते गुणधर्मः स उच्यते ।
यथामूर्खाभिषिक्तस्य प्रजानां परिपालनम् ॥
निमित्तमेक माश्रित्य यो धर्मः संप्रवर्त्तते ।
नैमित्तिकः स विज्ञेयः प्रायश्चित्तविधिर्यथा ॥

वर्णत्वमेकमाश्रित्येति एकशब्दो वक्ष्यमाणोभयनिमित्तत्वा-
वृत्तिपरः, वक्ष्यमाणधर्मस्य वर्णधर्मत्वात् अयं त्वाश्रमत्वमनपेक्ष
वर्णत्वनिमित्तकोऽतः सत्यामप्युपनयनस्याष्टवर्षत्वाद्यपेक्षायां नैक
शब्द विरोध इति । अथवा वीक्ष्यायामेकशब्दः ततश्चैकैकं वर्णत्व-
मुद्दिश्य यो विधीयते स वर्णधर्म इति अतएवाष्टवर्षादिवाक्यै-
रनेकवर्णत्वोद्देशेन विधीयमानमुपनयनं दृष्टान्तीकृतं । निमित्त-
मेकमाश्रित्येतन्न प्रायश्चित्तस्य नित्य काम्यवैधर्म्यमापेक्ष नैमि-
त्तिकत्वं न तु राहुदर्शननिमित्तज्ञानादिवदकारणजनितदोष
परिहारार्थतया निषिद्धकर्म्मकृताधर्म परिहारार्थतयैव तद्विधा-

* मौञ्जीवामेवमेति क्वचित् पाठः ।

नोपपत्तेः न च जातेष्टिवदुभयार्थत्वं, तत्र फलनिमित्तयो रुभयो
रुपात्तत्वात्कत्वित्वात् तद्येति ।

साधारणधर्मस्तु महाभारते ।

आहकर्म तपश्चैव सत्त्वमक्रोध एव च ।

स्त्रेषु दारेषु सन्तोषः शौचं नित्यानसूयिता ।

आत्मज्ञानं तितित्वा च धर्मः साधारणोऽनृत्य ॥

चातुर्वर्ण्यस्येति शेषः ।

‘तप, चान्द्रायणादि ।

यदाह देवलः ।

व्रतोपवासनियमैः शरीरोत्तापनं नृत्य ।

व्रतशब्दोऽत्र ज्ञान-दान-जप-होम-पूजोपवासादिपरः, एतेन
व्रतखण्डप्रतिपाद्यानां धर्माणामपि साधारणत्वं सूचितं, आत्म-
ज्ञानमित्यनेन मोक्षखण्डप्रतिपाद्यानामपि धर्माणां साधा-
रणत्वं, न चापि शूद्राधिकारव्यायेन शूद्राणां विद्यायासन-
धिकार इति कथं मोक्षधर्माणां साधारणत्वमिति वाच्यं । तेषां
मुपनयनाभावेनाध्ययनासम्भवाद्देवात्मविचार एवानधिकारः ।
न पुनरवैदिके आवयेत्तुरीवर्णानिति शूद्राणामपि पञ्चयज्ञादि-
वत् पुराचक्ष्मृति प्रतिपाद्यविद्योपदेशदर्शनात्, ननु तथापि
कथं वेदान्तवाक्यविचारजनितज्ञानाभावे शूद्राणां मोक्षधर्मा-
धिकार इति चेत् मैवं । मोक्षसाधनस्य ज्ञानस्य तदेकसाध्यत्व-
सिद्धेः, तथाच श्रुतिः ‘तरति शोकमात्मवित् ब्रह्मवेद् ब्रह्मैव

भवति ब्रह्मविदाप्नोति परं विद्ययासृतत्वमश्रुत इति, मोक्षस्वा-
त्मज्ञानसाध्यतां वदति । आत्मज्ञानस्य च पुराणादिवचननिश्च-
यनिवारपरिचयादप्युपपत्तेः श्रोतव्य इत्यादि वाक्यानां तु विचा-
रनियमविधित्वानङ्गीकारात् अङ्गीकारे वा, तस्य द्विजाति-
नियततयाः श्रावयेत्तुरीवर्णानित्यादिपुराणवचनविषयविधेर-
प्यध्ययनविधिवद्विचारपर्यन्ततास्तु ततश्च यथा द्रव्यसाध्यत्वा-
विशेषेऽपि क्रतूनाम्तत्तद्वर्णबिहितोपायनियमार्जितद्रव्यसाध्यत्वं एव
मात्मज्ञानसाध्यत्वाविशेषेऽपि मोक्षस्य तदुपायविशेषजनितज्ञान
साध्यत्वमिति सर्वमनवयम् ।

तथाचोक्तं भागवते ।

स्त्रीशूद्रद्विजवन्धूनां त्रयो न श्रुतिगोचरा ।

इति भारतमाख्यानं मुनिना कृपया कृतम् ॥

महाभारतेऽपि ।

मानुषाश्रित्य कौन्तेय येऽपि स्युः पापयोनयः

स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रा स्त्रेऽपि यान्ति परां गतिम् ॥

विष्णुः । क्षमा सत्यं दमः शौचं दानमिन्द्रियसंयमः

अहिंसा गुरुशुश्रूषा तीर्थानुसरणं दया ॥

आर्जवं लोभशून्यत्वं देव, ब्राह्मण, पूजनम् ।

अनभ्यसूया च तथा धर्मैः सामान्य उच्यते इति ॥

ब्रह्मवैवर्ते ।

विद्या, दया, दमः, शौचं, सत्यमस्तेवता तपः ।

जितेन्द्रियत्वमज्ञोधी क्षमा धर्म इति स्मृतः ॥

विष्णुधर्मीक्षरे ।

तस्य दाराणि यजनं तपोदानं दया क्षमा ।
 ब्रह्मचर्यं तथा सत्यं तीर्थानुसरणं शुभम् ॥
 स्वाध्यायसेवा साधूनां सहवासः सुरार्चनम् ।
 गुरुणां चैव श्रुश्रुषा ब्राह्मणानाञ्च पूजनम् ॥
 इन्द्रियाणां यमश्चैव ब्रह्मचर्यममत्सरम् ।
 गङ्गास्नानं शिवो देवो विप्रपूजात्मचिन्तनम् ।
 ध्यानं नारायणस्यैतत् संज्ञेपादुर्ध्वलक्षणम् ॥

दानमित्यनेन दानखण्डप्रतिपाद्यानाम् तीर्थानुसरणमित्य-
 नेनापि तीर्थखण्डप्रतिपाद्यानाम् देवब्राह्मणपूजनमित्यनेनापि
 परिशेषखण्डप्रतिपाद्यानाम् देवतापूजनादिधर्माणां साधार-
 णत्वं ।

बृहस्पतिः ।

दया, क्षमा, नसूया, च ग्रीवा, नायास, मङ्गलम् ।
 अकार्षण, मन्त्रहृत्वं सर्वसाधारणानि च ॥
 परे वा वन्धुवर्गे वा मित्रे हेष्टरि वा शत्रु ।
 आपके रक्षितव्यं तु द्वेषा परिकीर्त्तिता ॥
 बाह्ये बाष्पात्मिके चैव दुःखे चोत्पातिके क्वचित् ।
 न कुर्वति न वा हस्ति सा क्षमा परिकीर्त्तिता ॥
 न मुच्यन्ते मुचिनो हस्ति स्तोति मन्त्रगुणानपि ।
 नाम्बद्भिरेषु रमते सान्द्र्या प्रकीर्त्तिता ॥
 अश्वत्थपरिहारश्च संसर्गबाध्यनिन्दितैः ।

सुधर्मे च व्यवस्थानं शीघ्रमेतत् प्रकीर्तितम् ॥
 शरीरं पीडयते येन बुद्धभेनापि कर्मणा ।
 अत्यन्तं तन्न कुर्वीत जनायासः स उच्यते ॥
 प्रशस्ताचरचं नित्यमप्रशस्तनिबर्जितम् ।
 एतच्च महत्सं प्रोक्तं ऋषिभिः स्वस्वदर्शिभिः ॥
 स्त्रीकादप्युपकर्त्तव्यमदीनेमान्तरात्मना ।
 अहम्यहनि यत् किञ्चित् चकार्षस्व' हि तत् कृतम् ॥
 यद्योपपन्ने संतोषः कर्त्तव्योऽत्यस्वबहुनि ।
 परस्व चिन्तयन्तं सास्त्रं वा वरिणीर्षिता ॥

तदेवं निरूपिताः ।

षट् प्रकारा धर्माख्याः ।

अथ क्रमेण प्रतिपाद्यमुच्यते ।

प्रथमे व्रतखण्डेऽस्मिन्नादौ धर्मनिरूपणम् ।
 परिभाषा व्रतानाञ्च प्रशंसा तद्गन्तारम् ॥
 व्रतानि प्रतिपद्युस्त्वतिशोनां क्रमशस्ताया ।
 नामा तिष्ठि व्रतव्रात वार-तारा-व्रतानि च ॥
 ततश्च योग-करच-संक्रान्ति-व्रतसंग्रहः ।
 जायेषु नामाभासर्तुवत्सरेषु व्रतान्वतः ॥
 प्रकीर्षकव्रतानीह ततः शान्तिकपीष्टकमिति ॥

इति प्रतिपाद्य संग्रहः ।

अथ श्रौतं प्रवृत्ति साधनधर्मं निरूपयन् ।

तत्र भगवती श्रुतिः ।

(२)

धर्मी विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा, लोके धर्मीष्ठं प्रजा उप-
सर्पन्ति, धर्मेण पापमपनुदति धर्मी सर्वा प्रतिष्ठितम्, तस्माद्धर्मी
परमं वदन्तीति ।

भविष्यत्पुराणे ।

धर्माः श्रेयः समुद्दिष्टं श्रेयोऽभ्युदयलक्षणम् ॥

प्रथमश्रेयःशब्देनात्र श्रेयःसाधनं लक्ष्यते, श्रेयोऽभ्युदयलक्षण-
मिति श्रेयःशब्दस्याभ्युदयार्थत्वात् ।

मनुः । विद्वद्भिः वेवितः सद्भिर्नित्यमहेषरागिभिः ।

हृदयेनाभ्यनुज्ञातो यो धर्मीस्तन्निवीधत ॥

‘अहेषरागिभिः, अविहृतरागद्वेषशून्यैः ।

‘हृदयेन निर्विचिकित्सिततया अभ्यनुज्ञातः

प्रतिपन्नो हृदयाभ्यनुज्ञातः ।

आपस्तम्बः ।

न धर्माधर्मी चरत आवां स्वत इति, न देवा न गन्धर्वा न
पितर इत्याचक्षते, अयं धर्मी अयमधर्मा इति, यं त्वार्याः क्रिय
माणं प्रशंसन्ति स धर्मी यं विगर्हन्ति सोऽधर्माः ।

विष्णामित्रः ।

यद्यार्थं क्रियमाणं हि शंसन्त्यागमवेदिनः ।

स धर्मी यं विगर्हन्ति तमधर्मां प्रचक्षते ॥

शुगुः । प्रवृत्तञ्च निवृत्तञ्च द्विविधं कर्म वैदिकम् ।

स्वर्गादौ सृजता सृष्टं ब्रह्मणा वेदरूपिणा ॥

वृत्तसंज्ञको धर्मी गुणतस्त्रिविधो भवेत् ।

सात्विको राजसश्चैव तामसश्चेति भेदतः ॥
 काव्यबुद्ध्या च यत् कर्म मोक्षेऽपि फलवर्जितम् ।
 क्रियते द्विज कर्मैह तत् सात्विक मुदाहृतम् ॥
 मोक्षायेदं करोमीति सङ्कल्प्य क्रियते तु यत् ।
 तत् कर्म राजसं श्रेयं न साक्षात्प्रोचकन्नवेत् ॥
 कार्यबुद्धानपेक्षं यत् कर्मविध्वनपेक्षया ।
 क्रियते द्विजवर्यैह तत्तामसमुदाहृतम् ॥

वाराह पुराणे महातपा उवाचः ।

अधोत्पत्तिं प्रवक्ष्यामि धर्मस्य महतीं नृप ।
 माहात्म्येन समायुक्तं विस्तरेण नराधिप ॥
 पूर्वं ब्रह्माव्ययः शुद्धः परादपरसंज्ञितः ।
 स सिद्धस्तुः प्रजास्वादी पालनं तासु चिन्तयन् ॥
 तस्य चिन्तयतस्वप्नाद्वक्षिणाङ्गात् सकुण्डलः ।
 प्रादुर्भव पुण्ड्रः श्लेतमाख्यातुलेपनः ॥
 तं दृष्ट्वा च भगवांश्चतुष्पादं दृष्ट्वाकृतिम् ।
 पालयेमाः प्रजाः पुत्र त्वं ज्येष्ठो जगतो भव ॥
 द्रव्युक्तः स समुत्तम्यो चतुष्पादः कृते युगे ।
 त्रेतायां स त्रिभिः पादैर्द्वाभ्यां वै द्वापरेऽभवत् ॥
 कलावेकेन पादेन प्रजाः पालयते विभुः ।
 षड्भेदा ब्राह्मणानां स त्रेधा चत्रे व्यवस्थितः ॥
 द्वेधा वैश्वेषु शूद्रेषु त्वेकधा जगतः प्रभुः ।
 रसातलेषु सर्वेषु द्वापरेषु स्वशश्वतः ॥

चतुःशुक्लं क्षिपाद्यैव द्विशिराः सतद्वृक्षवान् ।
त्रिधैव बहो विप्राणां सुखगः पासवन् प्रजाः ॥

ब्रह्मवैवर्ते ।

गोषु विप्रेषु वेदेषु वक्रिष्ववच साधुषु ।
सुन्नतुश्च त्रीनिवासेषु तत्राचासौ विशिषतः ॥
सतीषु सत्विषु च तत्रा दानशीलेषु तिष्ठति ।
शुद्धसत्त्वमयः त्रीमान् सप्तलोकसमाश्रयः ।
अविष्यति जनुष्वेषु नातिरिक्तः कदाचन ॥

अथ फलतो धर्मनिरूपणम् ।

प्रहृतसंज्ञके धर्मे फलमभ्युद्ध्यो मतः ।
निहृतसंज्ञके धर्मे फलं-भिः त्रे वस्यन्तम् ॥

महाभारते ।

विद्या, वित्तं वपुः शौर्ध्वं कुले, जन्म विरोगिता ।
संसारोच्छिष्टिहेतुश्च धर्मादेव प्रकीर्तितः † ॥
शब्दे स्वर्गेषु रूपे च रवे गन्धेषु भारत ॥
प्रभुत्वं सभते जन्तु धर्माहेतत् फलं विदुः ॥
तत्रा । अर्धसिद्धिं परामिच्छन् धर्मनिवाहितचरेत् ।
नहि धर्मादिनैर्गर्ह्यं-कर्मसीकादि वा हतम् ॥

● जगदिनि कश्चित् पाठः ।

† प्रवर्णते इति कश्चित् पाठः ।

धर्मं चिन्तयमानोऽपि यदि प्राणैर्विमुच्यते ।
 ततः स्वर्गमवाप्नोति धर्मस्यैतत् फलं विदुः ॥
 यथाधर्म्येण ते सत्या येऽधर्म्येण धिगस्तु तान् ।
 धर्मं हि शाश्वते लोके न जह्याद्वनकाङ्क्षया ॥
 जर्षेवाहुर्विरोत्येव नच कश्चिद्दृणाति मे ।
 धर्मादर्घ्यं कामस्य स किमर्थं न वेद्यते ॥
 उक्तवादुक्तं यान्ति स्वर्गात् स्वर्गं सुखात्सुखम् ।
 अहधानाश्च यान्ताश्च धनाढ्याः शुभकारिणः ॥
 धर्मः प्रज्ञां वर्धयति क्रियमानः पुनः पुनः ।
 वृक्षप्रजास्ततोमित्यं पुण्यमारभते नरः ॥

स्कन्दपुराणे ।

धर्मात्सुखं च ज्ञानं च यस्मादुभयमाप्नुयात् ।
 तस्मात्सर्वं परित्यज्य विद्वान् धर्मं समाचरेत् ॥

कूर्म पुराणे ।

धर्मात् सञ्जायते ज्ञेया धर्मात् कामोऽभिजायते ।
 धर्मादेव परं ब्रह्म तस्माद्धर्मं समाचरेत् ॥

आह वेदव्यासः ।

कामार्थी लिखमानस्तु धर्ममेवादितश्चरेत् ।
 नहि धर्माद्दृष्टे किञ्चिद्दुःखापमिति मे मतिः ॥
 निपानमिव मण्डूका रसपूर्णमिवाण्डजाः ।
 शुभकर्माश्च मावान्ति विवशाः सर्वसम्पदः ॥

स्कन्दपुराणे ।

धर्माद्राज्यन्धनं सौख्यमधर्माद्दुःखसन्धवः ।
 तस्माद्धर्मं सुखार्थाय कुर्यात् पापञ्च वर्जयेत् ॥
 लोकद्वयेऽपि यत् सौख्यं तद्धर्मात् प्राप्यते यतः ।
 धर्ममेकमतः कुर्यात् सर्वकामार्थसिद्धये ॥
 यः कर्म धर्मसंयुक्तं मनसापि विचिन्तयेत् ।
 स वर्द्धते यथा वातः शुक्लपद्म इवोडुराट् ॥
 दीर्घकालेन तपसा जिवितेन तपोवने ।
 धर्मनिर्भूतपापानां संसिध्यन्ति मनोरथाः ॥
 धर्मवृद्धौ च वर्द्धन्ते सर्वभूतानि सर्वदा ।
 तस्मिन्नसति ह्यीयेत तस्माद्धर्मं विवर्द्धयेत् ॥
 मनुः । श्रुतिस्मृत्युद्धितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः ।
 इह कीर्त्तिमवाप्नोति प्रेत्य वानुत्तमं सुखम् ॥
 एक एव सुदृढधर्मोनिधनेष्यनुयाति यः ।
 शरीरेण समं नाशं सर्वमन्यद्दि गच्छति ॥
 तस्माद्धर्मं सहायार्थं नित्यं सच्चिनुयाच्छनैः ।
 धन्यश्च हि सहायेन तमस्तरति दुस्तरम् ॥

महाभारते ।

धर्मीमाता पिताचैव धर्मीबन्धुः सुदृढतया ।
 धर्मीभ्राता सखाचैव धर्मः स्वामी परन्तपः ॥
 नास्ति धर्मसमोबन्धुर्नास्ति धर्मसमः सुदृढत् ।
 नास्ति धर्मसमो स्वामी नास्ति धर्मसमा गतिः ॥

तस्माद्धर्मैः सहायत्वे वेवितव्यः सदा वृभिः ॥
धर्मैः सतां गतिः पुंसां धर्मैश्चैवाश्रयः सताम् ।
धर्मीलोकान्श्रयद्यातः प्रवृत्तः सचराचरम् ॥

याज्ञवल्करः ।

कर्म्मणा मनसा वाचा यस्माद्धर्मं समाचरेत् ॥
मनुः । धर्म एव हतोहन्ति धर्मो रक्षति रक्षितः ।
तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो मा नो धर्मो हतोवधीत् ॥

महाभारते ।

बाल एव चरेद्धर्ममनित्यस्त्रीवितं^{*}यतः ।
फलानामिव पक्वानां शश्वत्पतनतीभयम् ॥
न कामाक्ष्य संरम्भा श्रीहेमाद्रिमुत्सृजेत् ।
धर्म एव परे लोक इह चैवाश्रयः सताम् ॥
तथा । इदञ्च त्वामपरं ब्रवीमि पुण्यप्रदं तात महाविशिष्टं ।
न जातु कामाक्षभयाक्षलीभा धर्मैश्चञ्चाञ्जीवितस्यापि हेतोः ।
व्यासः । धर्मादपेतं यत् कर्म्म यद्यपि स्यात्सहाफलम् ।
न तत् सेवेत मेधावी षड्विः कुशतिलं यथा ॥
सुदुर्लभमिदं † प्राप्य मानुषं लोकमधुवं ।
न कुर्व्यादात्मनः श्रेय स्तेनास्मात् वञ्चितश्चिरम् ॥
दृष्टपत्राद्यगाम्यम्बुविन्दुवक्षपले यतः ।
जीवितव्या धन विप्रा स्तस्माद्धर्मं समाचरेत् ॥

* अनुजीवितमिति कश्चित् पाठः ।

† तरमिति कश्चित् पाठः ।

महाभारते ।

एकस्मिन्नप्यतिक्लान्ते ह्रियन्ते धर्मवर्जिते ।
 द्रक्षुभिः कुंपितस्त्रेव बुक्त्वाक्रान्दितुच्चिरम् ॥
 अजरामरवत् प्राज्ञो विद्यामर्षश्च चिन्तयेत् ।
 गृहीतद्रव्येऽपि नृणां धर्ममाचरेत् ॥
 यस्तत्रिवर्गभूषणैश्च दिनाभ्यायाति याति च ।
 स लोचकारभक्षेव न सन्नपि न जीवति ॥
 तस्मात् सर्वाङ्गना धर्मं नित्यमेव समाचरेत् ।
 मा धर्मविनुषः प्रेत्य तमस्त्व्यं पतिष्यति ॥
 नावसीदति चेदर्थः कपासेनापि जीवता ।
 पाठेरासीत्येव मन्तव्यं धर्मविना हि साधवः ॥

महापुराणे ।

अनित्यं जीवितं यथाहसु चातीव चञ्चलम् ।
 केशेष्विव गृहीतस्तु नृणां धर्ममाचरेत् ॥

आदिन्यपुराणे ।

मानुष्यं यः समासाद्य स्वर्गमोक्षप्रदायकम् ।
 हयोर्न साधयत्येकं स मृतस्तप्यते । चरम् ॥
 यावत्स्वास्त्वशरीरत्वन्तावदर्थं समाचरेत् ।
 अस्वास्त्वयोदितो नान्यत् किञ्चित्कर्तुं समुत्सहेत् ॥
 विष्णुः । यवैव धर्ममन्विच्छेदनित्यं जीवितं यतः ।
 कृते धर्मं भवेत् कौर्त्तिरिह प्रेत्य च वै सुखं ॥

यद्येवमुहेतीरपि वेदितं * यव
स्तृचानि वल्लीरपि च प्रविचति ।
तथा नरो धर्मपथेन सत्वरम्
ब्रह्मच कामां च वदन्ति चानुते ॥
अथ प्रमाचतो धर्मनिरूपणम् ।

तत्र मनुः । वेदोऽखिलो धर्ममूलं ऋति शीलं च तद्विदाम् ।

आचारश्चैव साधूनामात्मनस्तुष्टिरेव च ॥

विधिर्विधेयस्तर्कश्च वेदब्रह्मज्ञानि चेति ।

विधिरन्नातन्नापको वेदभागः, विधेयोमन्त्रः, तर्कामीमांसा ।

ब्रह्मज्ञानाह देवसः ।

शिक्षा-व्याकरण-निरुक्त-सङ्घः कल्प-ज्योतीषीति वेदाङ्गानि ।
शुची तु चरिते शीलमित्वाचारस्यैव शीलत्वाभिधानात् कथं
पृथगुपादानम् । न चाचार्यानुष्ठानलक्षणक्रियारूपत्वादा-
चारस्य स्वरूपविशेषत्वाच्छीलस्य व्यक्त एव भेदः । शुची तु-
चरिते शीलमिति शीलस्य चरितविशेषहेतुत्वादुपचारेण चरित-
त्वाभिधानम् । अथ शीलं कस्य धर्मतां प्रमापयति । आत्मन
एव पुरुषविशेषस्वभावोऽन्वयानुपपद्यमानः स्वस्य श्रेयःसाधनतां
वीधयति । तथा च ब्राह्मण्यतेत्यादिहारीतवचने भावप्रत्य-
यान्ततयाभिधानं शीलस्य क्रियाव्यतिरेकितया वीधयन् स्वभाव
तामेव प्रापयति यदाह हारीतः । ब्राह्मण्यता, देवपितृ-

* प्रेषितमिति ऋषिन् पाठः ।

भक्तता, सौम्यता अपरोपतापिता, अनश्लीलता*मृदुता, अपा-
रुथ, मित्रता, प्रियवादित्वम् कारुष्यं कृतज्ञता-शरण्याता प्रशान्ति
चेति त्रयोदशविधं शीलं, आचारे विवाहादौ कङ्कण-बन्धना-
द्यगुहनादात्मतुष्टिरथ धर्मसन्देहे वैदिकसंस्कारवासि-ताम्नः
करणानां साधूनामेकत्र पक्षे मनःपरितोषः ।

याज्ञवल्काः ।

श्रुतिः स्मृतिः सदाचारः स्वस्य च प्रियमात्मनः ।
सम्यक् सङ्कल्पजः कामो धर्ममूलं मिदं स्मृतम् ॥
पुराणं न्याय मीमांसा धर्मशास्त्राङ्गमिच्छिताः ।
वेदाः स्नानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश ॥

विष्णुपुराणे ।

अङ्गानि वेदा चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः ।
धर्मशास्त्रं पुराणञ्च विद्याज्ञेताचतुर्दशः ॥
आयुर्वेदो-धनुर्वेदो-गान्धर्व-चेति ते त्रयः ।
अथशास्त्रं चतुर्थञ्च विद्याम्लष्टादशैव ताः ॥

दृष्टार्थानामपि चतसृषा-क्षयिदलौकिकार्थप्रतिपादनादर्थं
प्रमाणभावः । गृहलिखितौ । स्मृतयो धर्मशास्त्राणि तेषां प्रथे-
तारोमनु-विष्णु-यम-दक्षा-गिरोत्रि-बृहस्प-त्युशन-आपस्तम्ब-वशि-
ष्ठ-कात्यायन-पराशर-व्यास-गृह--लिखित-सम्बर्त्त-गौतम-शाता-
तप-हारीत-याज्ञवल्का प्राचेतसादयः ॥

* अनसयनेति कश्चित् पाठः ।

यमः । मनुयंभोवसिष्ठोऽत्रिः दक्षो विष्णुस्तथाङ्गिराः ।
 उग्रना वाक्पति-व्यास पापस्तम्बोऽथ गौतमः ॥
 कात्यायनो नारदश्च याज्ञवल्क्यः पराशरः ।
 संवत्सैव शङ्खश्च हारीतो सिद्धितस्तथा ॥
 एतैर्यानि प्रचीतानि धर्मशास्त्राणि वै पुरा ।
 तान्येवातिप्रमाणानि न ह्यन्तव्यानि हेतुभिः ॥

आदिशब्दाश्च बुध-देवल-सोम-जमदग्नि-प्रजापति-विश्वामित्र-वृद्ध-
 शतातप-पैठोसि-पितामह-बोधायन-ह्यगलेय-जाबालि-श्वपन-
 मरीचि-काश्यपाः ।

तथाहि भविष्यपुराणे ।

अष्टादशपुराणेषु यानि वाक्यानि पुष्कल ।
 तान्यालोच्य महाबाहो तथा स्मृत्यन्तरेषु च ॥
 मन्वादिस्मृतयो याश्च षड्विंशत् परिकीर्त्तिताः ।
 तासां वाक्यानि क्रमशः समालोक्य व्रवीमि ते इति ॥

मन्वादिस्मृतीनां षड्विंशत्वमुक्तम्, तच्चानन्तरोक्ताभि-
 रेव पूर्यते । यानि पुनर्महाभारत-रामायण-विष्णुधर्म-शिवधर्म-
 प्रभृतीनि मृद्वपरिशिष्टानि च तानिच स्मृत्यन्तरेषुचैत्यनेनैवो
 क्तानि ।

तथा चोक्तं भविष्यत्पुराणे ।

अष्टादश पुराणानि रामस्य चरितं तथा ।
 विष्णुधर्मशास्त्रिः * शास्त्राणि शिवधर्मशास्त्रं भारत ॥

कार्ष्णिकं पञ्चमीवेदो यन्महाभारतं स्मृतम् ।

सीराञ्च धर्मो राजेन्द्र मानवीक्षा मञ्जीपते ॥

जयेति नाम चै तेषां प्रवदन्ति मनीषिण इति ॥

तदपि स्मृत्यन्तरेषुचैवेत्यनेनैव परिगृहीतं वेदितव्यम् एवं
यद्यान्यदप्यविगीतमहाजनपरिगृहीतं यदपि स्मृत्यन्तरेषुचैत्य
नेचैव परिगृहीतं वेदितव्यं ।

वशिष्ठः ।

श्रुति स्मृति विहितो धर्मस्तदलाभे शिष्टाचारः प्रमाणं ।

तथा । पारंपर्यागतोवेदां वेदः स परिहृण्यः ।

विशिष्टा ब्राह्मणा ज्ञेया श्रुतिप्रत्यक्षहेतवः ॥

पुराणसूक्तसुष्यते ।

मह्यं पुराणे ।

सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशीमन्वन्तराणि च ।

वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चसूक्तम् ॥

विष्णुपुराणे ।

अष्टादश पुराणानि पुराणान्नाः प्रचक्षते ।

ब्राह्मन्म्याद्यं वैष्णवञ्च शैवं भागवतं तथा ॥

तथान्यकारदीयञ्च मार्कण्डेयञ्च सप्तमम् ।

आधेयमष्टमञ्चैव भविष्यत्सप्तमं स्मृतम् ॥

दशमं ब्रह्मवैवर्तं शैब्यमेकादशं स्मृतम् ।

वाराहं * हादशञ्चैव स्कान्दञ्चैव त्रयोदशम् ॥

चतुर्दशं वामनञ्च कौर्मं पञ्चदशं स्मृतम् ।
मात्स्यञ्च गारुडैव ब्रह्माण्डञ्च ततः परम् ॥

कूर्मपुराणे ।

अन्यान्युपपुराणानि मुनिभिः कथितानि तु ।
आख्यं सनत्कुमारोक्तं नारसिंहमतः परम् ॥
द्वितीयं नान्दमुद्दिष्टं कुमारिण तु भाषितम् ।
चतुर्थं शिवधर्मशास्त्रं *साक्षान्नन्दिशभाषितम् ॥
दुर्वाससोक्तमाख्यं नारदोक्तमतः परम् ।
कापिलं मानवश्चैव[†] तथैवोशनसेरितं ॥
ब्रह्माण्डं वारुणश्चैव कालिकाह्वयमेव च ।
माहेश्वरं तथा शास्त्रं सौरं सर्वार्थसञ्चयम् ॥
पराशरोक्तं प्रथमं तत्रा भागवतहयम् ।
इदमष्टादशं प्रोक्तं पुराणं कौर्ममुत्तमम् ॥
वेदार्थवित्तमैः कार्यं यः स्मृतं मुनिभिः पुरा ।
स ज्ञेयः परमोधर्मो नान्यग्रास्त्रेषु संस्थितः ॥
या वेदवाङ्माः स्मृतयो याश्च काश्च कुदृष्टयः ।
सर्वास्ता निष्कलाः प्रेत्य तमोनिष्ठा हि ताः स्मृताः ॥

मात्स्यपुराणे ।

पान्ने पुराणे यत् प्रोक्तं नरसिंहोपवर्णनम् ।
तत्राष्टादशसाहस्रं नारसिंहं मिहोच्यते ॥

* नन्दिकेश्वर दुष्प्रसंगेति कश्चित् पाठः ।

† नारोपचैवेति कश्चित् पाठः ।

गन्दावा यत्र माहात्म्यं कार्तिकेयेन वर्ण्यते ।
 गन्दीपुराचं तत्रोक्ते गन्दाख्यमिति क्लीर्णते ॥
 यत्र-साख्यं-पुरस्कृत्य भविष्यति कश्चानकम् ।
 प्रोच्यते तत्पुनर्लोके साम्बमेव शशिप्रताः ॥
 एवमादित्यसंज्ञश्च तत्रैव परिगण्यते ॥
 अष्टादशभ्यस्तु पृथक् पुराणे यत्तु दृश्यते ।
 विजानीध्वं द्विजन्त्रे षास्तदेतेभ्यो विनिर्गतं ॥
 कालिका पुराणे ।

शैवं यहायुना प्रोक्तं वैरिचिं सौरं मेव च ।
 यदिदं कालिकाख्यं यत् मूलं भागवतं ऋतम् ॥

देवस्यः । आर्षाः पूर्ववृत्तान्ताश्रयाः प्रवृत्तिफला इतिहासः ।

मनुः । प्रत्यक्षमनुमानश्च * शाब्दश्च विविधागमं ।

त्रयं सुविदितं कार्यं धर्मशुद्धिमभीक्ष्यता ॥

मनुः । आर्षस्यर्षीपदेशश्च वेदशास्त्राविरोधिना ।

यस्तर्कोऽथ तु सत्यस्ते † स धर्मं वेद नेतरः ॥

तर्कोऽथ मौमांसादिना ।

व्यासः । धर्मशुद्धिमभीपसङ्गिनवेदादन्यद्विच्यते ।

धर्मस्य कारणं शुचं मित्रमन्यत् प्रकीर्तितम् ॥

अतः स परमोधर्मो यो वेदाद्वगम्यते ।

अवरः स तु विज्ञेयो यः पुराणादिषु संस्मितः ॥

एतेभ्योऽपि यदन्यत्मात् किञ्चिद्वर्णाभिधायकम् ।

तच्च दूरतरं विद्धि मोक्षसाध्याश्रयीमतः ॥

* शास्त्रेणैव कथितं पाठः ।

† यदर्थेऽप्यन्यत् इति कथितं पाठः ।

ग्रहसिद्धिती ।

रागहेषाब्जिदन्धानां मन्मानां विषयाश्चसि ।
चिकित्सा सर्वशास्त्राणि व्याधीनामिव भेषजम् ॥

भविष्यपुराणे ।

सुनन्तुववाच ।

ऋक्षुषेदं महावाहो भविष्यत् पञ्चलक्ष्यं ।
यत् श्रुत्वा सुच्यते राजन पुत्रसो ब्रह्महृत्सया ॥
यान्यनेकत्र वै पञ्च कीर्त्तितानि स्वयम्भूवा ।
प्रथमं कथ्यते ब्राह्मं-द्वितीयं वैश्वं त्र्युतम् ॥
तृतीय-त्वाष्ट्रं * व्याख्यातं चतुर्थं भाष्यसुच्यते ।
पञ्चमं प्रतिभाष्यञ्च सर्वलोकेषु पूजितम् ॥

हारीतः ।

अज्ञानतमसान्धानां भ्रामितानान्तु दृष्टिभिः ।
धर्मशास्त्रप्रदोऽयं धार्म्योमार्गानुदेशकः ॥

शतातपः ।

श्रुति स्मृति स्तु विप्राणां चक्षुषी हे प्रकीर्त्सिते ।
काणस्तत्रैकहीनस्तु हाभ्यामन्धः प्रकीर्त्सितः ॥

यमपुराणे । †

* तृतीयं चेति छचित् पाठः ।

† पञ्चपुराणे छचित् पाठः ।

बहुत्वादिह शास्त्राणां धर्ममूलं श्रुतिस्मृतौ ।
इतिहासपुराणानि तस्मात्सेषु मनः कथाः ॥

ग्रह लिखितौ ।

वेदा वै विप्रकीर्णत्वाद्गुह्येया धर्मसाधनम् ।
सुबोधोक्तत्वमर्था हि ब्रह्मणा विहिता श्रुतिः ॥
श्रुति स्मृत्युद्दितान् धर्मान् मानवास्तान् पृथक् पृथक् ।
कुर्वन्तः प्राप्नुयुर्धर्ममन्यथा नरके गतिः ॥
श्रीतं स्मार्त्तं क्रियावाक्यं हेतुभिर्धैर्यं विघातयेत् ।
असञ्छास्त्रं सुपात्रित्य स ज्ञेयः शिष्टनिन्दितः ॥

महाभारते ।

इतिहास पुराणाभ्यां वेदं समुपहंसयेत् ।
विभेत्यल्पश्रुताद्देवोमामयं प्रतरिष्यति * ॥
धर्मशास्त्राणि वेदाश्च घटङ्कानि नराधिप ।
त्रेयसोऽर्थं विधीयन्ते नरस्याक्तिष्टकर्म्मणः ॥
व्यासः । श्रुतिस्मृतौ द्विजातीनां पुरुषार्थप्रसाधिके ।
इतिहास पुराणश्च प्रमाणं धर्मनिश्चयः ॥

यमः । वेदाः प्रमाणं स्मृतयः प्रमाणम्
धर्मार्थयुक्तं वचनं † प्रमाणम् ।
यस्य प्रमाणं न भवेत् प्रमाणम्
कस्तस्य कुर्याच्चचनं प्रमाणम् ॥

* प्रतरिष्यतीति कश्चित्पाठः ।

† धर्मार्थयुक्तवचनं प्रमाणमिति कश्चित् पाठः ।

न यस्य वेदा न च धर्मं शास्त्रं
न ब्रह्मवाक्यञ्च भवेत् प्रमाणम् ।
स धर्मं कार्यान्निहती दुरात्मा
न सोऽपि तस्मैह भवेत् प्रमाणम् ॥

विष्णुधर्मोत्तरे ।

शास्त्रं योगं पञ्चरात्रं वेदाः पाशुपतं तथा ।
कृतान्तं पञ्चमं विद्धि ब्रह्मणः परिमार्गणे ॥
संसारक्षयदः* स्वर्गभावोपकरणेषु च ।
सेतुरावेषावाहर्मा सारमेतत् प्रकीर्तितम् ॥
एतावानेव सकलो वेदमार्ग उद्दीरितः ।
आभ्यः प्रशस्ताश्चैवान्याः शतशोऽथ सहस्रशः ॥
अथ निमित्ततो धर्मनिरूपणम् ।

शङ्खलखितौ ।

तत्र धर्मं लक्षणानि ।

देशः काल उपायो द्रव्यं अज्ञा पात्रन्याग इति । समस्तेषु
धर्मोदयः साधारणोऽन्यथा विपरीतः अज्ञापात्रसपत्नो धर्मः
कालः संक्रान्त्यादिः अज्ञा द्रव्योत्पत्तिरिति कालस्तन्मूलो देशः
देशोन्नद्धावर्त्तादिः ।

उपाय इति कर्त्तव्यता, द्रव्यं लक्षणपार्जितं-अज्ञा आस्तिक्य
बुद्धिः ।

पात्रं विद्यात्रयोसम्पन्नं, एषु साधारणधर्मोत्पत्तिः ।

* संसारक्षयचे इति कश्चित् पाठः ।

अथवा धर्मानुदयः ।

अथाद्रव्योत्पत्तिरिति काल इति अयमपि संक्रान्त्यादिव-
हानादौ धर्मकालः । तन्मूलोद्देशरिति । एवञ्च कालसंपन्नो
देशोऽपि धर्मस्य सम्पादयितेत्यर्थः ॥

अथ देशनिरूपणं तावत् प्रस्तूयते ।

तत्र मार्कण्डेय पुराणे ।

भगवन् कश्चित्स्वेष जम्बुद्वीपः समासतः ।
वदेतद्भवता प्रोक्तं कर्म नान्यत्र पुण्यदम् ॥
पापदम्बा महाराज वर्जयित्वा तु भारतम् ।
इतः स्वर्गं च मोक्षं च मध्यस्थान्तं च गम्यते ॥
न खल्वत्र मनुष्याणां भूमौ कर्म विधीयते ।
योजनानां सहस्रं वै द्वीपीऽयं दक्षिणोत्तरात् ॥
पूर्वं किराता यस्थान्ते पश्चिमे यवनाः स्मृताः ।
दक्षिणे मलयोयस्य हिमवानुत्तरे तथा ॥
तदेतद्भारतं वर्षं सर्व्ववीजं द्विजोत्तम ।
ब्रह्मत्व, ममरेण्यत्वं देवत्वमपि दुर्लभम् ॥
ऋगपञ्चोषधि चराद्योनिस्तद्दत्तोऽश्रुते ।
स्वावराणाञ्च सर्व्वेषां मतो ब्रह्मन् यथाशुभे ॥
प्रदान्ति कर्मभूर्ब्रह्मज्ञान्यलोकेषु विद्यते ।
स्वर्गं, पवर्गं, प्राप्तिञ्च पुण्यं पापञ्च च वै तथा ॥

* तत्रैव चेति कश्चित् ।

देवानामपि विप्रर्षे सदेवैष मनोरथः ।
 अपि मानुषमाप्-स्यामीदेवत्वात् प्रच्युताः क्षिती ।
 मनुष्यः कुरुते यद्यत्तत्र शक्यं सुरासुरैः ॥

विष्णुपुराणे ।

उत्तरञ्च समुद्रस्य हिमाद्रेष्वैव दक्षिणं ।
 वर्षं यज्ञारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः ॥
 अत्र जन्म सहस्राणां सहस्रै रपि सत्तम ।
 कदाचिज्जभते जन्तुर्मानुषं-पुण्यसञ्च रात् ॥

गायन्ति देवाः किल गीतकानि
 धन्यास्तु ये भारतभूमिभागे ।
 स्वर्गापवर्गास्यदमार्गभूते
 भवन्ति भूयः पुरुषः सुरत्वात् ॥
 कर्माण्यस्य संकल्पिततत् फलानि
 संन्यस्य विष्णौ परमात्मरूपे ।
 अवाप्य तां कर्म्ममही-मनन्ते
 तस्मिन् स्वयं ये त्वमलाः प्रयान्ति ॥

भविष्यत् पुराणे ।

ब्रह्मावर्त्तात् परोदेशः ऋषिदेशस्वनन्तरम् ।
 मध्यदेशस्ततोन्धून आर्यावर्त्तस्वनन्तरम् ॥
 नज ईषदर्धं अनन्तरः ईषग्रून इत्यर्धः ।
 मनुः । स्वरस्वतीदृषद्वत्तीर्देवनद्यौर्यदन्तरम् ।
 तं देव निर्भितं देशं ब्रह्मावर्त्तं प्रचक्षते ॥

क्षुरक्षत्रञ्च मस्याच्च पाञ्चालाः शूरसैनिकाः * ।

एष ब्रह्मर्षिदेशो वै ब्रह्मावर्त्तादनन्तरः ॥

मत्स्यो, विराटदेशः, पञ्चालाः कान्यकुब्जादिदेशाः, शूरसैनिका
मथुरादेशः ।

हिमवद्विन्ध्ययोर्मध्ये यत् प्राग्निनशनादपि ।

प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्त्तितः † ॥

विनशनं क्षुरक्षेत्रम् ।

आसमुद्रात्तु वै पूर्वादासमुद्रात्तु पश्चिमात् ।

तयोरेवान्तरङ्गिः शौर्यार्थावर्त्तं विदुर्व्युधाः ॥

क्षणासारस्तु चरति मृगोयं च स्वभावतः ।

स ज्ञेयो ‡ यज्ञियो देशोऽस्मिच्छदेशस्ततः परः ॥

एतान् द्विजातयो देशान् संश्रयेरन् प्रयत्नतः ।

शूद्रस्तु यस्मिन् कस्मिन् वा निवसेद्वृत्तिकर्षितः ॥

एष धर्मस्य वी योनिः समासात् कथितः किल ¶ ॥

सर्वपापहरः पुण्यः साधनं सर्वकर्मणाम् ॥

वसिष्ठः । धर्मं आर्यावर्त्तं प्रागादर्शात् प्रत्यागालोकाचलादुदक्
कुमारिकाया दक्षिणेन हिमवत, उत्तरेण विन्ध्याद्रेर्यै धर्म्यायेचा-
रास्ते सर्वे प्रत्येतव्याः नत्वन्ये प्रतिलोमकधर्माः एनमाख्यावर्त्तं
मित्याचक्षते गङ्गायमुनयोरन्तरालमप्येके यावहा क्षणमृगो
विचरति तावद्ब्रह्मवर्षसम् ।

* सुरसैनिका इति कश्चित् पाठः ।

† उदाहृत इति कश्चित् पाठः ।

‡ याज्ञिक इति कश्चित् पाठः ।

¶ समानेन प्रकीर्त्तिता सभारक्षाया सर्वस्य वर्णधर्माभिन्नेषु इति कश्चित् पाठः ।

पैठीनसिः ।

आहिमवत आकुर्मार्थाः * सिन्धुवैतरणी नदी सूर्यस्योद-
गयनं पुनः यावद्वा कृष्णमृगो विचरति तत्र धर्मश्चतुष्पादो
भवति ।

संवत्सः । स्वभावाद्यत्र चरति कृष्णसारः सदा मृगः ।

धर्मदेशः स विन्नेयी हिजानां धर्मसाधनम् ॥

व्यासः । सर्व्वे शिलीचयाः पुण्याः सागराः सरितस्तथा ।

अरण्यानि च पुण्यानि विशेषान्नैमिषन्तथा ॥

देवीपुराणे ।

देशो. नदा, गया शैल, गङ्गानर्भद, पुष्करम् ।

वाराणसो कुरुक्षेत्रं प्रयागो जम्बुकेश्वरः ।

केदारं भीमनादञ्च कुण्डकं पुष्कराङ्गयम् ।

सोमेश्वरं-महापुण्यं तथा चामरकण्ठकम् ॥

कालिञ्जरं तथा विन्ध्यं यत्र वासीशुद्धस्य च ।

सर्व्वे शिवाश्रमाः पुण्याः सर्वा नद्यः शुभप्रदाः ॥

दान-स्नानी-पवासा-वै फलदाः सततं नृणाम् ।

विष्णुः । चातुर्व्वर्ण्यं व्यवस्थानं यस्मिन् देशे न विद्यते ॥

तं न्नेच्छदेशं-जानीयादार्थावर्त्तस्ततः परम् ।

बोधायनः ।

आनर्त्तकाङ्गमगधाः सुराङ्गा दक्षिणापथः ।

तथा च सिन्धु, सौवीरा एते सङ्कीर्णयोनयः ॥

* भधुवैतरणीति क्वचित् पाठः ।

हेमाद्रिः । [प्रतयच्छं १ अध्यायः ।

मानसं कः ।

यस्मिन् देये शास्ताः † ।

तथा, पद्मां स कुर्वते पापं यः कलिङ्गान् प्रपद्यते ।

ऋषयो निष्कृतिं तस्य प्राङ्मुखैश्चानरं हविः ॥

यत्र अहानिरूपचम् ।

आह भगवती श्रुतिः ।

अहयान्मिः समिधते अहया ऋयते हविः ।

अहा भगवस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसोत्यादिः ॥

मनुः । अहा पूतं वदान्यस्य हृतमअहयेतरत् ।

अहयेष्टश्च पूतं च नित्यं कुर्यात् प्रयत्नतः ॥

वङ्गि पुराणे ।

अहा पूर्वाः सर्वधर्माः अहामध्यान्त,संस्थिताः ।

अहानिष्ठाः प्रतिष्ठाश्च धर्माः अहैव कीर्तिताः ॥

श्रुतिमात्ररसाः सूक्ष्माः प्रधानपुरुषेश्वराः ।

अहामात्रेषु शृङ्खले न करेषु न चक्षुषा ॥

कायक्लेशैर्नबहुभिर्नचेवार्थस्य राशिभिः ।

धर्मः संप्राप्यते सूक्ष्मः अहा हीनैः सुरैरपि ॥

अहा धर्मः परः सूक्ष्मः अहा ज्ञानं परन्तपः ।

अहा स्वर्गश्च मीक्षश्च अहा सर्वमिदं जगत् ॥

† यस्मिन् देये शास्ता इति कश्चित् पाठः ।

सर्वस्य स्त्रीवितं वापि दद्यादत्रयया यदि ।

नाम्नु यात् सकलं किञ्चित् अहधानस्वतो भवेत् ॥

व्यासः । अद्या वै सात्विकी देवी सूर्यस्य दुहिता वृष ।

सावित्री प्रसवित्री च विष्णुसस्त्रीवनी तथा ॥

स्कन्द पुराणे ।

अद्या मातेव जननी ज्ञानस्य सुकृतस्य च ।

तस्माच्छ्रद्धां समुत्पाद्य ज्ञानं सुकृतमर्जयेत् ॥

महाभारते ।

अद्या धर्मसुता देवी पाविनी विष्णुधारिणी ।

अद्या साध्यते धर्मो महद्भिः नार्थं राशिभिः ॥

निष्किञ्चना हि सुनयः अद्यापूता द्विवङ्गताः ।

धर्मार्थ-काम-मोक्षाद्यां अद्या परमकारणम् ।

पुसांमत्रहधानानां न धर्मो नापि तत् फलम् ॥

तद्याक्रिया अहधानीदाता प्राप्नोऽनसूयकः ।

धर्मो धर्मविशेषस्तमस्तरति दुस्तरम् ॥

कालादीनि तु दानखण्डं वक्ष्यामः ।

तेषां तपोपयुक्ततमत्वात् ।

अथ परिभाषा ।

भविष्यत् पुराणे ।

सम्यक् संसाधनं कर्म कर्तव्यं अधिकारिणा ।

निष्कामेन महावीर काम्यं कामान्वितेन च ॥

आचारयुक्तः अहावान् वेदज्ञोऽध्यात्मवित्तमः ।

कर्मेणां फलमाप्नोति न्यायार्जितधनश्च यः ॥

सम्यक् प्रथमकल्पादिना, संसाधनं यथाविहितं साधनम् ।
अधिकारिणां विधिना, समर्थेन, विदुषा च, अध्यात्मवित्तमः परलोक
फलभागिन्यात्मनि दृढप्रत्ययवान् ।

'न्यायार्जितधनः' स्वहृत्कार्जितधनः ॥

आपस्तम्बः ॥

प्रयोजयिता नुमन्ता कर्त्ताचेति स्वर्गनरकफलेषु भागिनः

यो भूय आरभते तस्मिन् फलविशेषः ।

याज्ञवल्करः ।

विधिदृष्टन्तु यत् कर्म करोत्यविधिना तु यः ।

फलं न किञ्चिदाप्नोति क्लेशमात्रं हि तस्य तत् ॥

मनुः ॥ प्रभुः प्रथमकल्पस्य योऽनुकल्पेन वर्त्तते ।

न साम्प्रदायिकं तस्य दुर्भेदे त्विद्यते फलम् ॥

कन्दोगपरिशिष्टे ।

कात्यायनः ।

अक्रिया त्रिविधा प्रोक्ता विद्वद्भिः कामचारिणाम् ।

अक्रिया च परीक्षा या तृतीया चायथाक्रिया

स्वशास्त्राशेष मुक्तृज्य परशास्त्राश्रयश्च यः

कर्त्तुमिच्छति दुर्भेदा मोघं तस्य तु यत् फलम्

यत्नात्मातं स्वशास्त्रायां पारस्वमविरोधि यत् ।

विद्वद्भिस्तदनुष्ठेयमग्निहोत्रादि कर्मवत् ।

अग्निहोत्रं, यजुर्वेदशास्त्रासु विहितं यथा ॥

हृन्दोगप्रभृतिभिरनुष्ठीयते ।

गृह्यपरिशिष्टे ।

वह्न्यं वा स्वगृह्योक्तं यस्य कर्म प्रकीर्तितम् ।
 तस्य तावति शास्त्रार्थे कृते सर्वः कृतीभवेत् ॥
 तथा । प्रवृत्तमन्यथा कुर्याद्यदि मोहात् कथञ्चन ।
 यतस्तदन्यथा भूतं तत एव समापयेत् ॥
 प्रवृत्तमारब्धम् अन्यथा भूतं क्रमाद्यन्यत्वेन यद्वैपरीत्यमाप-
 न्नम् ॥

समाप्ते यदि जानीयात्तथैतदन्यथा कृतम्* ।
 तावदेव पुनः कुर्यात् नावृत्तिः सर्वकर्मणः ॥
 एतत् कर्मसमाप्तान्वयाकरणाज्ञानविषयम् ।
 प्रधानस्या क्रिया यत्र साङ्गं तत् क्रियते पुनः ।
 तदङ्गस्याक्रियायां तु नावृत्तिर्न च तत्क्रिया ॥
 यत्र प्रधानस्य कर्मणोऽकरणं तस्माङ्गमेव पुनः कर्तव्यम्,
 तदङ्गाकरणे तु न साङ्गप्रधानावृत्तिर्नापि तावन्मात्रस्याङ्गस्य
 करणं किन्तु प्रायश्चित्तमेव कार्यम् ।

हारीतः ।

अङ्गुष्ठस्योत्तरतोरिखा ब्रह्मतीर्थं, कनिष्ठकायाः पश्चात् प्राजा-
 पत्यम्, अथमङ्गुलीनी दैवम्, अङ्गुष्ठप्रदेशिन्योरन्तरा पितृम्,
 मध्यआग्नेयं-उपस्यर्शनं ब्राह्मणेण आचमनहोमतर्थणानि प्राजा-

● अथवाहृतमिति कश्चित् पाठः ।

पत्न्येन कुर्यात्, मार्ज्जनाद्यनवसिक्तार्थभोजनानि दैवेन कुर्यात्
पितृर्षान् पित्रेऽथ, प्रतिग्रह, मान्द्येन-प्रतिगृह्णीयात् ।

हागलेयः ।

हस्तमध्ये ब्रह्मतीर्थं दक्षिणाग्रहणे तु तत् ॥

मार्कण्डेय पुराणे ॥

नाम्हीमुखानां कुर्वन्ति प्राणाः पिण्डोदकक्रियाः ।
प्राजापत्येन तीर्थेन यच्च किञ्चित् प्रजायते ॥

ब्रह्मपुराणे ।

मूलरेखासु स्नातुः मण्डपेषु मध्यमम् ।
प्राजापत्यं महातीर्थं विप्रस्तीनाचमेत्सदा ॥
धनायुर्दारेखासु सोमतीर्थं तु मध्यमम् ।
स्नात्वादिहवनं तेन कर्त्तव्यं वपनं तथा ॥

'वपनं' व्रीह्यादिनिर्व्वापः ।

भविष्यत् पुराणे ।

कमण्डलुस्पर्शनं यत् दधिप्राशनमेव च ।
सोमतीर्थेन राजेन्द्र मदा कुर्यात्तद्विचक्षणः ॥
वशिष्ठः । स्नातोऽधिकारो भवति दैवपित्रेऽथ कर्मणि ।
पवित्राणां तथा जाप्ये दाने च विधिनोदिते ॥

वायुपुराणे ।

क्रियां यः कुरुते मोहात् घनाचम्येह नास्तिकः ।

भवन्ति तु उथा तस्य क्रियाः सर्वा न संग्रयः ॥

कात्यायनः ।

दान-माचमनं ह्योमं भोजनं देवतार्चनम् ।
 प्रोढपादो न कुर्वीत स्वाध्यायं पिष्टतर्पणम् ॥
 आसनारूढपादस्तु जान्बोर्वाञ्जलयोस्तथा ।
 कृतावसकधिकीयः स्यात् प्रोढपादः स उच्यते ॥
 वसिष्ठः ।

जपहोमोपवासेषु धीतवस्त्रधरो भवेत् ।
 अलङ्कृतः शुचि-मौनी अन्नावान्निजितिन्द्रियः ॥

वौचायनः ।

काषायवासाः कुरुते जपहोमप्रतिषेहान् ।
 न तद्देवगमं भवति हृद्यं कथ्यं स्वधा हृदिः ॥
 व्यासः । आर्द्रवासास्तु यः कुर्यात् जपहोमप्रतिषेहान् ।
 सर्व्वन्तदासुरं ज्ञेयं वह्निर्जातुश्च यत् कृतम् ॥

विष्णुपुराणे ।

होमदेवार्चनाद्यास्तु क्रियास्वाचमने तथा ।
 नैकवस्त्रः प्रवर्त्तेत द्विजवाचनके जपे ॥
 द्विजवाचनके, द्विजस्त्रिवाचनादौ ।

शातातपः ।

सध्यादंश्यात्परिभ्रष्टं कटिदेशस्थिताम्बरम् ।

एकवक्त्रान्तु तद्विन्द्याद्देवे पित्रे च वर्जयेत् ॥

याज्ञवल्काः ।

परिधानाद्वह्निःकक्षा निबन्धा स्नासुरी भवेत् ।
धर्मकर्मणि विद्वद्भिर्वर्जनीया प्रयत्नतः ॥

‘वह्निःकक्षा ।’

वह्निर्निर्गतकक्षेत्यर्थः ।

छन्दोगपरिशिष्टे कात्यायनः ।

यत्रोपदिश्यते कर्म कर्त्तरङ्गं न सृष्यते ।
दक्षिणस्तत्र विज्ञेयः कर्मणां पारगः करः ॥
यत्र दिङ्नियमो नास्ति जपहोमादिकर्मसु ।
तिङ्गस्तत्र दिग्ः प्रोक्ता ऐन्द्री सौम्या पराजिताः ॥
ऐन्द्री प्राची, सौम्या उत्तरा, अपराजिता ईशानदिक्,
आसीन ऊर्ध्वः प्रह्वीवा नियमो यत्र नेदृशः ।
तदासीनेन कर्त्तव्यं न प्रह्वेष न तिष्ठता ॥

प्रह्वः प्रगतजानुकः ।

प्रह्वेष नक्षेष, तिष्ठता ऊर्ध्वेन,

भीङ्गार इत्यसु वृत्ती,

आह आपस्तम्बः ।

तस्माद्दोमित्युदाहृत्य यज्ञ-दान-तपः क्रियाः ।
वर्त्तन्ते विधानीक्याः सततं ब्रह्मवादिनाम् ॥

त्रिमात्रस्तु प्रयोक्तव्यः कर्म्मरन्ध्रेषु सर्व्वशः ।

तिस्रः सार्द्धास्तु कर्त्तव्या मात्रास्तस्वार्थचिन्तकैः ॥

देवताध्यानकाले तु भुतः कुर्यान्न संशयः ॥

कश्यपः । भूति कर्म्मान्युच्चैस्तदादीन्येव वाक्यानि स्युर्यथा पुण्याहं
सुसमृद्धमिति, भूतिकर्म्माणि सम्पत्कराणि तदानीति ।

भौकारादीनि स्वस्त्वादिवाचनादीनि ॥

यमः । पुण्याहवाचनं देवि ब्राह्मणस्य विधीयते ।

एतदेव निरोद्धारं कुर्यात् क्षत्रियवैश्ययोः ॥

मार्कण्डेय पुराणे ।

सूर्य्योदयं विना नैव ज्ञानदानादिकाः क्रियाः ।

अग्नेर्विहरणं चैव क्रत्वभावश्च लक्ष्यते ॥

सूर्य्योदयशब्देन उषः कालो गृह्यते, तेन रात्रौ न कुर्या-
दिति तात्पर्य्यं ॥

दक्षः । देवकार्याणि पूर्वाह्ने मनुष्याणाम् मध्यमे ।

पितृणा मपराह्णे च कार्याणीति विनिश्चयः ॥

अङ्गिराः । सम्ययीरुभयोर्ज्ये भोजने दन्तधावने ।

पितृकार्य्यं च दैवे च तथा मूत्रपुरीषयोः ॥

गुरुणां सन्निधौ दाने वागे ॥ चैव विशेषतः ।

एषु मौनं समातिष्ठन् स्वर्गं प्राप्नोति मानवः ॥

याज्ञवल्करः ।

यदि वाग्यमलोपः स्याज्जपादिषु कथञ्चन ।

व्याहरेद्देष्यं मन्त्र-स्मरेद्वा विष्णु मध्ययम् ॥
 अज्ञानाद्यदि वा मोहात् प्रथवेताध्वरेषु यत् ।
 स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥

तथा शतपथ श्रुतिः ॥

अथ यदाचंयमोव्याहरति तस्मादुहैष विस्वष्टी यज्ञः पराङ्-
 पर्यावर्त्तते

ततो वैष्णवीशृचं यजुर्व्वा जपेदित्यादिः ।
 सप्तः । न कुर्यात् कस्यचित् पीडां कर्मणा-मनसा-गिरा ।
 आचरन्नभिषेकान्तु कर्माण्यन्यान्यथाचरेत् ॥

वायुपुराणे ।

दानं प्रतिग्रहो ह्योमी भोजनं बलिरेव च ।
 साङ्गुष्ठेन सदा कार्यं मसुरेभ्योन्यथा भवेत् ॥

साङ्गुष्ठेन अङ्गुलीसङ्गताङ्गुष्ठेन ।

एतान्येव तु कार्याणि दानादीनि विशेषतः ।
 अन्तर्जानु विधेयानि तद्ददाचमनं नृप '।' ॥

तद्ददाचमनं स्मृतम् ।

छन्दोगपरिशिष्टे कात्यायनः ।

सदोपवीतिना भाव्यं सदा बह्विस्त्रेण तु ।
 विशिखीऽनुपवीतश्च यत् करोति न तत् कृतम् ।

निगमपरिशिष्टे ।

वामस्कन्धे यज्ञीपवीतं दैवे,

प्राचीनावीतं, इतरथा-पितृयज्ञे ताभ्यां द्विकण्ठासक्तं उत्सर्गं
निवीतम् ।

पृष्ठदेशावलम्बितं ग्राम्यधर्मेषु । ग्राम्यधर्मः स्त्रीसन्धोगः ।

बोडायनः ।

कर्मायुक्तोनाभेरधःस्पर्शं वर्जयेत् ।

याज्ञवल्काः ।

रोद्र, पित्रा, सुरा-न्मन्त्रान् तथा दैवाभिचारिकान् ।

व्याहृत्यालभ्य चात्मानं अप सृश्यान् द्वाचरेत् ॥

छन्दोगपरिशिष्टे कात्यायनः ।

पितृमन्त्रप्रवरणे आत्मात्मने ऽश्वेक्षणे ।

अधो वायु समुत्सर्गं प्रहास्ये नृतभाषणे ॥

मार्जारमूषिकस्पर्शं आकृष्टे क्रोधसन्धवे ।

निमित्तेष्वेषु सर्वत्र कर्म कुर्वन्नपः सृशेत् ।

आत्मात्मने हृदि स्पर्शं यज्ञादी विहिते ।

अश्वेक्षणमपि यज्ञादि विहितमेव याज्ञम् ॥

लघुहारोतः ।

जपे-होमे तथा दाने स्वाध्याये पितृतर्पणे ।

अशून्यं तु करं कुर्यात् सुवर्षरजतैः कुशैः ॥

* हृदय स्पर्शं इति क्वचित् पाठः ।

दर्भहौना तु या सख्या यच्च दानं विनोदकम् ।
 असंख्यातं च यज्जतं तत् सर्वं निष्प्रयोजनम् ॥
 तथा । चितौ दर्भाः पथि दर्भाः ये दर्भा यज्ञभूमिषु १ ।
 स्तरणासन-पिण्डेषु षट्कुशान् ‡ परिवर्जयेत् ॥
 पिण्डार्थं ये कृता वा दर्भा यैः कृतं पितृतर्पणम् ।
 मूर्धोच्छिद्यता ये च § तेषां त्यागो विधीयते ॥
 निवीमध्ये च ये दर्भा ब्रह्मसूत्रे च ये कृताः ।
 पवित्रां स्तान् विजानीयाद्यथा कायस्तथा कुशाः ॥ ॥

गृह्यपरिशिष्टे ।

दर्भाः कृष्णाजिनं मन्त्रा ब्राह्मणा हविरग्नयः ।
 अयातयामान्वेतानि नियोज्यानि पुनः पुनः ॥
 मरीचिः ॥

मासे नभस्यमावास्या तस्यां दर्भचयोमतः ।
 अयातयामास्तेदर्भा विनियोज्याः पुनः पुनः ॥

छन्दोगपरिशिष्टे कात्यायनः ।

हरिता यज्ञिया दर्भाः पीतकाः पञ्चमज्ञियाः ।
 समूलाः पितृदेवत्याः कल्पाद्या वैश्वदेविकाः ॥
 ऋत्वाः प्रवरणीयाःस्यःकुशादीर्घा श्वर्हिषः ।

† दर्भानिति कश्चित्पाठः ।

‡ कृतारिति कश्चित्पाठः ।

१ मूर्धोच्छिद्य प्रसंगे तु इति कश्चित्पाठः ।

§ ये कृतारिति कश्चित्पाठः ।

पञ्चयज्ञियाः पञ्चयज्ञार्थाः, प्रवरणमनुष्ठानं तदर्हाः प्रवरणीयाः

अनन्तगर्भकं * सायं कौशं हिदलमेव च ।

प्रादेशमात्रं बिभ्रेयं पवित्रं वच कुनचित् ॥

तदेव दर्भपिण्डव्या सप्तयं समुदाहृतम् ।

आज्यस्त्रीत्यवनाथं यत्तद्व्येतावदेव तु ॥

आपस्तम्बः ।

देवागारे तथा आर्चे गवाङ्गोष्ठे तथाध्वरे ।

सन्ध्ययोश्च द्वयोः साधुसङ्गमे गुरुसन्निधौ ॥

अग्न्यागारे विवाहे तु स्वाध्याये भोजने तथा ।

उद्वरेदक्षिणं पाणिं ब्राह्मणानां स्त्रियापथे ॥

दक्षिणमिति सव्याग्ने वस्त्रनिधाय दक्षिणं बाहु सुत्तरीयाद्
हेः कुर्यादित्यर्थं ।

यद्योक्तवस्त्रसम्पत्तौ† आर्च्यं तदनुकारि यत् ।

यवनामिव गोधूमा व्रीहीणामिव मालयः ॥

आर्च्यं द्रव्यमनादेशे सुहोतितु विधीयते ।

मन्त्रस्य देवतायाश्च प्रजापतिरिति स्थितिः ॥

अनादेशे अविधाने ।

मन्त्रस्य देवतायाश्च अनादेशे प्रजापति ॥

देवता ‡ तत्प्रजापत्या, मन्त्रा समस्तव्याहृतयश्च ।

* अनन्तगर्भकं इति पुलकान्तरे पाठः ।

† यद्योक्तवस्त्रसम्पत्तौ इति कृषित पाठः ।

‡ प्रजापत्यो मन्त्र इति पुलकान्तरे ।

भविष्यत् पुराणे ।

अनुक्तद्रव्यसंख्याय प्रतिमादेवता नृप ।
 सौवर्णी राजती ताम्बी वृक्षजा मार्त्तिका तथा ॥
 चित्रजा पिष्टजा ज्ञेया निजवित्तानुरूपतः ।
 आमावात्पक्षपर्यन्तं कर्त्तव्याः श्राद्धवर्जितैः ॥

पैठीनसिः ।

काण्ड-मूक-पर्ण-पुष्प-फल-प्ररोहेषु गन्धादीनां सादृश्येन
 प्रतिनिधिं कुर्यात्, सर्वास्त्राभे यवः प्रतिनिधिः भवति ।

मैत्रायणीयपरिशिष्टे ।

दक्षिणास्त्राभमूलानां लक्ष्यम् दक्षिणां ददाति ।
 न चात्र यजेत दर्भाभात्रे काशः प्रतिनिधिः ॥

अथेष्टपालाशा, श्वेत्य-खदिर-लोहित-हरितो दुम्बराणां तद-
 स्त्राभे सर्व्ववनस्पतीनाम् । विष्व-नीप, निम्ब-राजवृक्ष-शाल्म,
 लूक-कपित्थ-कोविदार-विभीतक-स्त्री-आतक-सर्व्व-कण्टकवर्जं
 वृत्तमन्यार्चं प्रतिनिधिस्तदस्त्राभे दधि-पयो वा ।

छन्दोग परिशिष्टे ।

कात्यायनः ।

पाश्चाद्दृतिर्द्वादशपर्व्वपुरिका
 रक्षादिनां चेत क्षुचिगर्तपुरिका ।
 दैवेन तीर्त्वेन च ज्ञयते इतिः

स्वङ्कारिणि स्वर्चिषि तच्च पावके ॥
 योऽनर्चिषिं जुहोत्यग््नौ व्यङ्कारिणि च मानवः ।
 मग्नाग्निरामयावी च दरिद्रश्चैव जायते ॥
 तस्मात् समिद्धे होतव्यन्नासमिद्धे कथञ्चन ।
 आरोग्यमिच्छतायुश्च त्रिय मात्यन्तिकीं तथा ॥
 जुहुवांश्च* इते चैव पाणि† पूर्यन्तु चादिभिः ।
 न कुर्याद्दग्निधमनं कुर्यात्तु व्यजनादिना ॥
 सुखेनैव धमेद्दग्निं सुखाद्दोषोभिजायते ।
 नाग्निं सुखेनेति तु यत् लौकिके योजयन्ति तत् ॥

अथ गृह्य परिशिष्टे ॥

पृषदान्ध मिति प्रोक्तं दधिषुर्पिरिति द्वयम् ।
 चीरे ऋतोष्णे दधिषु चामिचेति द्विसम्भवा ॥

स्कन्दपुराणे ।

त्वक्पत्रकेशर, लवङ्गस्तु त्रिसमं मुनिभिः स्मृतम् ॥

लिङ्गपुराणे ।

आज्यं चीरं मधु तथा मधुरत्रय मुच्यते ।

त्वक्पत्रकलवङ्गानि केशरश्च चतुःसमम् ‡ ॥

गरुड पुराणे ।

* जुहुवुरिति क्वचित् पाठः ।

† पाण्डुर्येति क्वचित् पाठः ।

‡ चमांसकमिति पुष्कलाग्रे पाठः ।

कस्तूरिकाया हो भागी चत्वारचन्दनस्य च ।
 कुङ्कुमस्य चयश्चैकः शशिनः स्वाशतुः समम् ॥
 कर्पूरं चन्दनं दर्भः कुङ्कुमश्च चतुः समम् ।
 सर्वगन्धमिति प्रोक्तं समस्तसुरवज्रभम् ॥

वृद्धमर्गः ।

कुङ्कुमं चन्दनो, शीरं सुस्ता, लामल, कोशरम् ।
 कर्पूरं त्रिसुगन्धश्च सर्वगन्धः प्रकीर्तितः ॥
 स्वगैलापचकैस्तुल्यै त्रिसुगन्धः प्रकीर्तितः ॥

गारुड पुराणे ।

कर्पूरमगुरुश्चैव कस्तूरी चन्दनं तथा ।
 कक्षीलं च भवेदेभिः पञ्चभिर्यत्सकर्ममः ॥

शिवधर्मैः ।

पञ्चासृतं दधि-शीरं सिता मधु-घृतं नृप ॥

स्कन्द पुराणे ।

ताम्बाराणाश्चेतकृष्णानीलानामाहरेत् गर्वा ।
 गोमूत्रं गोमयं शीरं दधि-सर्पीं चि च क्रमात् ॥

विष्णु धर्मोत्तरे ॥

अपः काञ्चनवर्षाया नीलायाश्च तथा घृतम् ।
 दधि वै कृष्णवर्षायाः श्वेतायाश्चैव गोमयम् ।
 गोमूत्रं ताम्रवर्षायाः पञ्चगव्ये प्रसोजयेत् ॥

स्कन्दपुराणे ।

विष्णुः । तथा वज्रीन्द्र, वायु, क, दैवत्यानि यथा क्रमम् ।
 विद्भेगतानि कुशीदक्ष पिटराजाधिदैवतम् ॥
 प्रोक्ताभावे त्वधैतानि कपिलायाः प्रकल्पयेत् ।
 गोमूत्रभागस्तस्याहं शक्यत् क्षीरस्य च त्रयम् ॥
 हयं दध्नाघृतस्यैकमेकश्च कुशवारिजः ।
 गायत्र्या चैव गोमूत्रं गन्धहारेति गोमयम् ॥
 आप्यायस्वेति च क्षीरं दधिक्राव्णेति वै दधि ।
 तेजोसिशुक्रमित्याज्यं देवस्यत्वा कुशीदकम् ॥
 एभिस्तु पञ्चभिर्युक्तं पञ्चगव्यं प्रचक्षते ।
 एतदेव महापुण्यं ब्रह्मकूर्चमिति स्मृतम् ॥

ब्रह्मकूर्चलक्षणं, ब्रह्मपुराणात् ।

व्यासः । गोमूत्रे तान्त्रवर्णायास्त्वे षमाषकसंख्यया ।
 पुण्यं वरुणदैवत्यङ्गाय चार्चाभिमन्त्रितम् ॥
 गोमयं श्वेतवर्णायास्तुर्माषकमात्रया ।
 गृह्णीया दग्निदैवत्यङ्गन्धहारेति वै शनैः ॥
 क्षीरं काञ्चनवर्णायाः सोमदैवत्यमेव च ।
 आप्यायस्वेति मन्त्रेण माष द्वादशसन्धितम् ॥
 गृह्णन्ति वायुदैवत्यं कृष्णवर्णोद्भवं दधि ।
 दशमाषकमात्रन्तु दधिक्राव्ण इति स्मरन् ॥
 घृते तु नीलवर्णायाः पञ्चमाषकसंख्यया ।
 गृह्णन्ति सूर्यदैवत्यन्ते जोसीति जपन् क्रमात् ॥

शतद्रव्यं माषमानं चत्वारिंशच्च पञ्च च ।
 कुशीदकस्य गृह्णीयाद्देवस्यत्वेति कौत्संयम् ॥
 ताम्बपान्ने पलाशे वा पात्रे मिञ्चीकृतञ्च यत् ।
 आपोहिष्टेति चालोष्य प्रणवेन पिवन्ति च ॥
 उदसुखस्त्रिराचम्य ततो गच्छेत् स तद्गृहम् ।
 तत्रापि ह्योमेप्राग्देहं कृत्वा दद्याच्चदक्षिणम् ॥
 ब्राह्मणस्य यथा शक्त्या शोभनं तु मनोहरम् ।
 गवां वर्णास्तु शुक्लाद्याः सन्ति देशेषु यत्र न ॥
 तत्र वर्णाविभागेन पञ्चगव्यानि चाहरेत् ।
 वर्णालाभात्तु दोषोऽस्ति मात्राहीनं विवर्जयेत् ॥
 त्याज्यानि दूषितानां च दधिमूत्रपर्यासि च ।
 प्रसक्तानां च शुक्लेण यत्त्व ज्ञानाच्च शोणितम् ॥
 चेलकेशास्त्रिभस्त्राणां अभश्चैः सम्युक्तां तथा ।
 रोगार्त्तानां च यूक्तान्तिसृताण्डानाममङ्गलम् ॥

मृताण्डा मृतगर्भाः ।

निष्कलत्वेन वक्ष्यानां कृतानां कृमिभि स्तथा ।
 अमानप्रतिदत्तानि सन्धिनीप्रभवानि च ॥
 शुद्धभाण्डे मनोज्ञे च भूमावपतितानि च ।
 ग्रहीतव्यानि विविधं खेदन्तासां न कारयेत् ॥
 ब्रह्मकूर्चं व्रतमिदं सर्वपापप्रणाशनम् ।
 सर्वकामप्रदं पुंसां रूपारोम्बवशः प्रदम् ॥
 महतामपि पापानां नाशनं त्रीविवर्धनम् ।

ब्रह्म पुराणे ।

अश्वत्थो-दुम्बर-प्लव-चूत-न्यग्रोध-पल्लवाः ।
पञ्चभङ्गा इति प्रोक्ताः सर्व्वकार्मसु शोभनाः ॥

आदित्य पुराणे ।

सवर्णं रजतं मुक्ता राजावर्त्तं प्रवालकम् ।
रत्नपञ्चकमाख्यातं श्रेष्ठं वस्तु त्रयीम्यहम् ॥

विष्णु धर्मोत्तरे ॥

मुक्ताफलं हिरण्यञ्च वैदूर्य्यं पद्मरागकम् ।
पुष्परागञ्च गोमदकीलं गाढकर्तं तथा ॥

प्रवालमुक्तादीन्युक्तानि ।

भविष्यत् पुराणे ।

मधुरोऽस्त्रश्च लवणं कषायस्तिक्त एव च ।
कटुकश्चेति राजेन्द्र रसघट्क मुदाहृतम् ॥

शाकलक्षणन्तु चौरस्वामिनोक्तम् ।

मूल-पत्र-करीरा-प्रफल काण्डाधिरूढकाः ।
त्वक् पुष्पं कवकश्चेति शाकं दशविधं स्मृतम् ॥
करीरः वंशानुरः, अषं पल्लवाः, काण्डं नालम्, कवकं
छत्राकम्, ।

षड्भ्रिंशन्मते च ।

यवगोधूमधान्यानि तिलाः कङ्कुस्तथैव च ।
श्यामाकं चीनकश्चैव समधान्यमुदाहृतं ॥

भविष्यत्पुराणे ।

सुवर्णं रजतं ताम्रमारकूटं तथैव च ।
लोहं चपुतथासीसं धातवः समकीर्त्तिताः ॥
अपः क्षीरं कुशापाणि दध्यक्षततिलास्तथा ।
यवाः सिद्धार्थकाश्चैव मर्घोऽष्टाङ्गः प्रकीर्त्तितः ॥

भविष्योत्तरात् ।

पुष्यं फलं यवाः क्षीरं दधि दुग्धकुशास्तिलाः ।
तण्डुलाश्च तिलैर्मित्रा मर्घोऽष्टाङ्गः स उच्यते ॥

मत्स्यपुराणे ।

तथा दग्धेषु लोकेषु भूर्भुवः स्वमंहादिषु ।
सौभाग्यं सर्वलोकानामेकस्यमभवत्तदा ॥

द्यामाप्नोति वसुधातलम् ।

उत्क्षिप्तमन्तरिक्षस्थं ब्रह्मपुत्रेण धीमता ।
दक्षेण पीतमात्रं तु रूपलावण्यकारकम् ॥
वलं तेजोहविर्जातं दक्षस्य परमेष्ठिनः ।
शेषं तदपतङ्गमावष्टधा तदजायते ॥
इक्षवस्तुराजश्च नीष्पावा यजि धान्यकं ।
विकारोयवगोक्षीरं कुसुम्भं कुङ्कुमं तथा ॥

सवणं चाष्टमन्तरं सौभाग्याष्टकं मुच्यते ।

वातुलागमः ।

ष्टतं दधि मधु चौरन्तरराजस धान्यकम् ॥

अजाजीशैव निष्वावा मङ्गलाष्टकं उच्यते ।

आदित्यपुराणे ।

मध्याङ्गः खड्गपात्रं तत् तथा नेपालकम्बलः ।

रूप्यं-दर्भा-स्तिला-गावी-दौहित्रः कुतपाष्टकम् ॥

तथा । दूर्वा यवाङ्गुराशैव वालकं चूतपल्लवाः ।

हरिद्राहय सिद्धार्थं शिखिपञ्चोरगत्वचः ।

कङ्कशोधयशैताः कौतुकाख्या नव स्मृताः ॥

हृन्दीगपरिशिष्टे ।

कुष्ठं मांसी हरिद्रे हे सुरा शैलेय, चन्दनम् ।

वचा चम्पक, मुखे च सर्वाधिदश स्मृताः ॥

मार्कण्डेयः ।

जग्मुरेतानि वीजानि ग्राम्यारण्याभिधानि च ।

श्रीषध्यः फलपाकान्ताः शतं सप्तदश स्मृताः ॥

श्रीहृयस यवाशैव गोधूमाः* कङ्कसर्षपाः ।

प्रियङ्गवः कोविदारः कोरदूषाः सचीनकाः ॥

माषा मुद्गा मसूराश्च निष्वावाः सकुलत्थकाः ।

आठव्यस्यकाश्चैव ग्राम्यारण्याश्च षोडशम् ॥

* तिष्ठ इति क्वचित् पाठः ।

इत्येता ओषधीनां तु ग्राम्याणां जातयः स्मृताः ।
 ओषधी यज्ञिया ज्ञेया ग्राम्यारण्याश्चतुर्दश ॥
 व्रीह्यश्च यवाश्चैव गोधूमाः कङ्कुसर्षपाः ।
 माषा मुद्गाः सप्तमाश्च अष्टमाश्च कुलत्थकाः ॥
 श्यामाकाश्चैव नीवारा जर्त्तिलाः सगवेधुकाः ॥
 कीविदारसमायुक्तास्तथा वेणुयवाश्च ये ।
 ग्राम्यारण्याः सताह्येता ओषधश्च चतुर्दश ॥

भविष्यत् पुराणे ।

अगुरुं चन्दनं मुस्ता सिङ्गकं वृषणं तथा ।
 समभागन्तु कर्त्तव्यं धूपोऽयममृताह्वयः ॥
 तथा । श्रीखण्डं ग्रन्थिसहितमगुरुं सिङ्गकं तथा ।
 मुस्तातथेन्दुभूतेश्च शर्कराश्च दहेत्प्राहम् ॥
 इत्येषोऽनन्तधूपश्च कथितो देवसत्तम ।
 तथा । कृष्णागुरुं सिङ्गकञ्च वालकं वृषणं तथा ॥
 चन्दनन्तगरं मुस्ता प्रबोधः शर्करान्वितः ।
 कपूरं चन्दनं कुष्ठमुशीरं सिङ्गकं तथा ॥
 ग्रन्थिकं वृषणं भीम कुङ्कुमं गृञ्जनं तथा ।
 हरीतकी तथोशीरं यच्चधूप उदाहृतः ॥
 तथा । षड्भाग कुष्ठं द्विगुणा गुडस्य
 लाक्षात्रयं पञ्चनखस्य भागाः ।
 हरीतकी सर्जरसः समासी
 भागैकमेकं त्रिलवं शिलाजम् ॥

घनस्य चत्वारि पुरस्य चैको

धूपोद्गाहः कथितो मुनीन्द्रैः ।

तथा । वृषणं सिद्धकं विप्र त्रीखण्डमगुरुं तथा ।

कपूरश्च तथा मुस्तां शर्करां सत्वचं द्विज ॥

इत्येष विजयोधूपः स्वयं देवेन निर्मितः ।

कपूरं चन्दनं मांसी त्वक् पचैलालवङ्गकम् ॥

अगुरुं सिद्धकं धूपं प्राजापत्यं प्रचक्षते ।

अथ मानकघनं ।

अथ नामानि ।

आदित्य पुराणे ।

जालान्तरगते भानो यत् सूक्ष्मं दृश्यते रजः ।

प्रथमन्तत् प्रमाणानां त्रसरेणुं प्रचक्षते ॥

त्रसरेणुश्च विज्ञेय अष्टौ तु परमाणवः ।

त्रसरेणवस्तु ते ह्यष्टौ रथरेणुस्तु सस्रतः ॥

रथरेणवस्तु ते ह्यष्टौ वालाग्रं तत् स्मृतं बुधैः ।

वालाग्राण्यष्ट लिप्ता तु यूका लिप्ताष्टकं बुधैः ॥

अष्टौ यूका यवं प्राङ्गुरङ्गुलन्तु यवाष्टकम् ।

द्वादशाङ्गुलमात्रो वै वितस्तिश्च प्रकीर्तितः ।

अङ्गुष्ठस्य प्रदेशिन्या व्यासः प्रदेश उच्यते ।

तालः स्मृतो मध्यमया गोकर्णश्चाप्यनामया ।

कनिष्ठया वितस्तिस्तु द्वादशाङ्गुलिकः स्मृतः ।

रत्नि स्वङ्गुलिपर्ष्वाणि विज्ञेयथैकविंशतिः ।

चत्वारि विंशतिश्चैव हस्तपादाङ्गुलानि तु ।
 किष्कः कृतोच्छ्रितः स्त्रिस्तः द्विचत्वारिंशद्ङ्गुलः ।
 षष्ठवत्सङ्गुलैश्चैव धनुर्दण्डः प्रकीर्तितः ॥
 धनुर्दण्डयुगलास्त्रिंशत्याङ्गोता यवाङ्गुलैः ।
 धनुषां त्रिंशता नैव माहुः संख्याविदीजनाः ।
 धनुः सहस्रे द्वे वापि गव्यूति रूपदिश्यते ॥
 अष्टौ धनुःसहस्राणि योजनन्तु प्रकीर्तितम् ।

मार्कण्डेय पुराणे ।

परमाणुः परं सूक्ष्मं त्रसरेणुर्महीरजः ।
 बालाग्रश्चैव लिखा च यूक्ताचाय यवाङ्गुलम् ।
 क्रमादष्ट गुणान् प्राहुर्व्यवासाष्ट ततोङ्गुलम् ।
 षड्ङ्गुलं पदं प्राहुर्वितस्त्रिंशद्गुणः स्मृतः ॥
 द्वौ वितस्त्री ततोहस्ती ब्रह्मतीर्षं द्विवेष्टनैः ।
 चतुर्हस्ती धनुर्दण्डो नालिका तद्युगेन तु ॥
 क्रोशोधनुःसहस्रे द्वे गव्यूतिश्च चतुर्गुणा ॥
 द्विगुणं योजनं तस्मात् प्रोक्तं संख्यानकोविदैः ।

वृहस्पतिः ॥

दशहस्तेन दण्डेन त्रिंशदण्डा निवर्त्तनम् ।
 दश तान्धेव गोचर्यं ब्राह्मणेभ्यो ददाति यः ॥

वसिष्ठः ॥

दशहस्तेन वंशेन दशवंशात्ममन्ततः ।

पञ्चचाप्यधिकान् दद्यादेतन्नोचर्षीचोच्यते ॥

विष्णुधर्मोत्तरे ।

यदुत्पन्नमद्या त्नाति नरः सम्वत्सरं द्विजाः ।

एतन्नोचर्षीमाचन्तु भुवः प्रोक्तं विचक्षणैः ॥

मत्स्यपुराणे ।

दण्डेन सप्तहस्तेन चिंशद्दण्डा निवर्त्तनम् ।

चिभागहीनं गोचर्षीमानमाह प्रजापतिः ॥

बृहवशिष्ठः ।

गवां शतं हृष्ये क्वी यत्र तिष्ठेद्यन्त्रितः ।

एतन्नोर्षीमात्रं तु प्राहुर्वेदविदीजनाः ॥

ब्रह्मपुराणे ।

धर्मशास्त्रेषु मानार्थं याः संज्ञा मुनिभिः स्मृताः ।

ताः सर्वाः व्यवहारार्थं कीदृश्याः सम्प्रदायतः ॥

अनुः । लोकसंख्यव्यवहारार्थं याः संज्ञाः प्रथिता भुवि ।

तास्य रूप्य सुवर्णानां ताः प्रवक्ष्याम्यशेषतः ॥

जालान्तरगते भानौ यत् सूक्ष्मं दृश्यते रजः ।

परमं तत् प्रमाणा नान्तरसरेणुं प्रचक्षते ॥

असरेणुषु क्वी लिप्ताश्रयेका परिमायतः ।

ता रासर्षपस्त्रिस्त्रस्ते चसौगौरसर्षपः ॥

* प्रथममिति क्वचित् पाठः ।

* अश्वमेधयोहापिति क्वचित् पाठः ।

सर्षपाः षट् योमध्वः प्रियवन्त्वेककृष्णलं ।
 पञ्चकृष्णलकोमाषस्ते सुवर्षस्तु षोडश ॥
 पलं सुवर्षाश्चत्वारः पलानि धरणं दश ।
 हे कृष्णले समष्टते विज्ञेयो रौप्यमाषकः ॥
 ते षोडशस्याह्वरणं पुराणस्यैव राजतः ।
 कार्ष्णापणस्तु विज्ञेयस्तान्त्रिकः कार्ष्णिकः पणः ॥
 धरणानि दश ज्ञेयः शतमानस्तु राजतः ।
 चतुःसौवर्णिको निष्को विज्ञेयस्तु प्रमाणतः ॥

याज्ञवल्करः ।

जालसूर्यमरीचिखं चसरेणुरजःस्मृतम् ।
 तैष्टी निष्ठा तु तास्त्रिस्तो राजसर्षप उच्यते ॥
 गौरस्तु ते त्रयः षट्ते यवा मध्यास्तु ते त्रयः ।
 कृष्णलः पञ्च ते माषस्ते सुवर्षस्तु षोडश ॥
 पलं सुवर्षाश्चत्वारः पञ्च वापि प्रकीर्तितम् ।
 हे कृष्णले रूप्यमाषो धरणं षोडशैव ते ॥
 शतमानं तु दशभिर्धरणैः पलमेव च ॥
 निष्कः सुवर्षाश्चत्वारः कार्ष्णिकस्तान्त्रिकः पणः ।

विष्णुः । जालस्थानमरीचिगतं रजस्त्रसरेणुसंज्ञकं तदष्टकं
 लिप्ता तत् त्रयं राजसर्षपः तन्नयं गौरसर्षपः ते षट् यवः
 तन्नयं कृष्णलं तत् पञ्चकं माषः तद्वादशकमकार्ष्णं स चतुर्माषकं
 सुवर्षः तच्चतुःसौवर्णिकोनिष्कः हे कृष्णले रूप्यमाषः ते षोडश
 धरणं तान्त्रिकः कार्ष्णापणः ।

कात्यायनः ।

माघोविंशतिभागस्तु ज्ञेयः कार्षापणस्य तुं ।
 काकिनी तु चतुर्भागी माषकस्य पणस्य च ॥
 पञ्चनद्याः प्रदेशे तु संज्ञेयं व्यावहारिकी ।
 कार्षापण प्रमाणन्तु तन्निवहमिहैकया ॥
 कार्षापणस्यैकाज्ञेया ताश्चतस्तु धानकः ।

अगस्ति प्रोक्तेपि ।

यवः स्यात्सर्षपैः षड्भिर्गुञ्जा च स्यान्निभिर्यवैः ।
 गुञ्जाभिः पञ्चभिश्चैको माषकः परिकीर्तितः ॥
 भवेत् षोडशभिर्माषैः सुवर्णस्तैः पुनः स्मृतः ।
 चतुर्भिः पलमेकस्य दशांशोधरणं विदुः ॥
 अष्टभिर्भवति व्यक्तैः तण्डुली गौरसर्षपैः ।
 सवैण्वीशवः प्रोक्तो गोधूमंचापरे जगुः ॥

विष्णुगुप्तः ।

पञ्चगुञ्जो भवेन्माषः सर्षपैश्च चतुर्गुणैः* ।
 कवयो^१ धरणं प्राहुर्मणिमानविशारदाः ॥
 मज्जाटिका कणजविशेषस्तौख्ये गुञ्जाद्वयं विदुः ।
 मज्जाटिकाविंशतिस्तु धरणं तद्विदां मतम् ॥
 स्थूलमध्यातिसूक्ष्माणां सूक्ष्माणां मपि स्मृतं ।

० माषस्यैवचतुर्गुणैरिति क्वचित् पाठः ।

कवयो इति क्वचित् पाठः ।

माषकैः पञ्चरागः स्वादिन्द्रनीलादिषु श्रुतः ॥
 हस्तचयं* प्रयोक्तव्यं न यस्मिन्मानमौरितम् ।
 दीनारो रौप्यकैरष्टाविंशत्या परिकीर्तितः ॥
 सुवर्णस्य सप्ततिमो भाषो रौप्यकदृश्यते ।

प्रकारान्तरमाह ।

स एव ।

सुचेत्रे यथावत् मध्यपाककाले निष्पन्ना धान्यमाषा दश
 सुवर्णं माषः पञ्चवा गुप्ताः सुवर्णमाषकः ते षोडश सुवर्णः ॥
 एवं प्रमाचसिहस्र द्वितीया संज्ञा कर्ष इति चतुः कर्षं पलं
 पलानां शतेन तुला विंशति तौलिकोभारः । अस्यैव भारस्य
 उदतौलिक इति द्वितीया संज्ञा ।

ब्रह्म प्रोक्ते ।

पलानां विंशतिर्विंशः पञ्चवीशास्तुला मता ।
 उदतौलिकः स एव स्याद्गारो विंशतितौलिकः ॥

विष्णु गुप्तः ।

रूप्यस्य सुवर्णाङ्गुलं मानमभिधीयते ।

अष्टाविंशति गौरसर्षपा रूप्यमाषकः ते षोडश धरचं नि-
 ष्पाया विंशतिर्वा रूप्यमाषकः पलञ्च दश धरचकं तत् पलानां
 शतं तुला तत् तुलाविंशतिर्भार इति । विंशत्या ब्रीहितण्डुलै
 स्तुलायां विधृतैर्विष्णुस्य रत्नस्य धरचं भवति ।

* इतरचयेति कश्चिन्पाठः ।

अष्टभिर्गौरसर्षपैस्तच्छुभं कल्पयेदिति ।

कपर्दिभाष्यकारः ।

निघण्टो ।

तथा । मानं तुला,ङ्गुलि,प्रख्यैःगुञ्जाः पञ्चाद्यमाषकः ।

ते षोडश्याचः कर्षोऽस्त्रौ पलं कर्षचतुष्टयम् ॥

सुवर्णविस्ती हेक्कीचे कुशविस्तस्तु तत्पले ।

तुला स्त्रियां पलगतं भारः स्याद्विंशतिस्तुला ॥

आचितोदय भाराः स्युः शाकटोभार आचितः ।

कार्पायणः कार्षिकःस्यात् कार्षिकं स्तान्निजः पक्षः ॥

भविष्यत् पुराणे ।

पलद्वयं तु प्रसृतिर्द्विगुणं कुडवं मतम् ।

चतुर्भिः कुड्वैः प्रख्यः प्रख्यासत्वार आठकः ॥

आठकैस्तैश्चतुर्भिश्च द्रोणस्तु कथितो बुधैः ।

कुम्भी, द्रोणद्वयं शूर्पः खारी द्रोणास्तु षोडश ॥

वाराह पुराणे ।

पलद्वयं तु प्रसृतं मुष्टिरेकं पलं स्मृतम्

अष्टमुष्टिर्भवेत् कुञ्चिः कुञ्चयोऽष्टौ तु पुष्कलम् ॥

पुष्कलानि च चत्वारि आठकः परिकीर्तितः ।

चतुराठको भवेद्द्रोण इत्ये तस्मान्न सप्तचम् ॥

चतुर्भिः सेतिकाभिस्तु प्रख्य एकः प्रकीर्तितः ।

सेतिका, कुड्वः मुष्टिर्यजमानस्वेति केचित् मुष्टिरेकं पलं
स्मृतमिति प्रोक्तम् ।

पापपलहयेन प्रसृतं त्रिगुणं कुडवं मतम् ।
 चतुर्भिः कुडवैः प्रस्यः प्रस्यैचतुर्भिराठकः ॥
 चतुराठको भवेद्गोष इत्यितद्गोणमानकम् ।

गीपद्य ब्राह्मणे ।

पञ्चकणलकीमाषस्यैचतुःषष्टिभिः पलं ।
 हात्रिशद्विः पलैः प्रस्यो मागधेषु प्रकीर्तितः ॥
 आठकस्यैचतुर्भिश्च द्वाणः स्याच्चतुराठकः ।

अथ मण्डपादि लक्षणम् ।

भविष्यत् पुराणे ॥

घनी, घीघी विराजस्य काञ्चनः काम, रामकौः ।
 सुघीघी, घर्घरी, दक्षी मण्डपा नवमा मताः ॥
 चतस्री धारिकाः कोणे हे हे द्वारेषु पार्श्वयोः ।
 विस्तारे तु यथा शीमे अपरा अपि धारिकाः ॥
 दक्षी दुम्बरिका, श्वत्था वटाः प्रागादितोरणाः ।
 पञ्चषट्सप्तहस्ताः स्युः कनीयः स्यात्ततः परम् ॥
 वस्त्रे वेदाङ्गलावृत्तिः सार्धमष्टकरं परम् ।
 शूलं नवाङ्गलं चायं विद्वात्ताङ्गुलं ततः ॥
 विस्तारं ऋङ्गयोश्चास्य प्रवेशो द्वाङ्गुलायतः ।

अत्र यदुक्तं पिङ्गस्नामते ।

दृष्टद्वयं वहिस्वक्त्रा तोरचानि निवेशयेत् ।

शूले नवाङ्गुलं दैर्घ्यं तत्तुरीयांशेन विस्तृतिः ॥
 ऋजु वै मध्यमङ्गुलं स्यात् किञ्चिद्वक्रन्तु पार्श्वयोः ।
 प्रथमं तत्समाख्यातं हाङ्गुलं रोपयेदथ ॥
 शेषाणां हागुला वृद्धिर्वैश्याङ्गुलवृद्धितः ।
 शल्यं वस्त्रङ्गुलानाहम्परं वै षोडशाङ्गुलात् ॥
 ललाटे पार्श्वयोश्चैव पृथुत्वं षड्भिरङ्गुलैः ।
 अन्यमेतत् समाख्यातं शेषेऽष्टाङ्गुलवृद्धितः ॥
 स्वस्तिकः श्रीकजाकं वा सर्व्वतोरणमिष्टदम् ।
 उच्छ्रयेण तदर्द्धार्द्धात्तोरणानां प्रविस्तरः ॥
 धारिका तोरणै स्तुल्या वेदीस्तम्भाः षडुन्नताः ।
 खातं पञ्चांशतस्तेषां भूमिभागवशेन वा ॥
 वेदी चतुष्करा मध्ये कोणे स्तम्भचतुष्टयं ।
 अष्टाङ्गुलोच्छ्रितान्येषां कराङ्गुलैकवृद्धितः ॥
 विस्तारानुच्छ्रयाद्वापि नान्तरे ग्रन्थिवन्धनम् ।
 पीता महोत्का देवी तु* लिङ्गायामद्विविस्तरा ॥
 विस्तारं नवधा कृत्वा मण्डपानां कचिन्मते ।
 मध्ये पदेन वेदी स्यात् कुण्डानां सैपविस्तरः ॥
 हस्तादूर्द्ध्वं कचिद्वेदी षट् पञ्चङ्गुलवृद्धितः ।
 वेदीपादीत्तरन्ध्रान्ना कुण्डानि नव पञ्च च ॥
 वेदास्तान्येव तानि सुर्वन्तुलान्यथवा कचित् ।

उक्तं च शीचाचारपद्धतौ ।

* पंतामचोक्तं इति कचित् पाठः ।'

द्वमाद्रिः । [व्रतखण्डं १ अध्यायः ।

शस्तानि तानि वृत्तानि चतुरस्राणि वा सदा ।
दाहायाञ्चौ भगाकारं हेमे खं दक्षिणोत्तरे ।
अस्त्रं जयाय नैर्ऋत्यां वृक्षं वायवे मतम् ॥
वृत्तं कुण्डमिह प्रोक्तं वाक्छायां शान्तिके हितम् ।
कुण्डं कुशेप्रयाकार, मुत्तरे पुष्टिवर्द्धनम् ॥
रौद्रां भयदमष्टास्त्रमिति वृद्धशिवगमः ।
ऐन्द्रां कुण्डं चतुष्कोष मुच्यते स्तम्भकर्षणि ॥

तथा प्रतिष्ठासारसंप्रदं ॥

सर्वदिक्षु चये कुण्डं वेदास्त्रं स्थापने विधौ ।
तदेव वृत्तं वा कार्यं काम्ये कस्योदितं तथा ॥
चतुरस्रं भवेत् प्राच्यां सर्वकामप्रदं शुभम् ।
प्राग्मेघ्यां बोधिपत्राभं सदासन्तानवर्द्धनम् ॥
अर्धचन्द्रनिभं कुण्डं याम्ये विद्वेषं नृणाम् ।
त्रिकोषं नैर्ऋताशयां मारणार्थं प्रकल्पयेत् ॥
नित्यमाध्यायने वृत्त पश्चिमे कुण्डमुत्तमम् ।
षट्कोषं वायुकोषस्त्रं कुण्डमुच्चाटने मतम् ॥
पञ्चाकारं भवेत् कुण्ड मुत्तरे पुष्टिसाधनम् ।
अष्टकोषमेषेशान्था मत्स्यन्तं च भयप्रदं ।
काम्य मेतत् सदा कुण्डं स्थापनादौ विवर्जयेत् ॥

स्वायम्भवे ।

चतुरस्रं भवेत् कुण्डं वृत्तं वा हस्तसम्पितम् ।

नित्ये नैमित्तिके चैव काम्यं वा कल्पं चोदितम् ॥
 चतुरस्रभवेत् प्राच्यामान्नेय्यान्तु भगाकृति ।
 याभ्यायामर्षचन्द्रं तु नैषट् त्वाष्ट्रं विकीर्णकम् ॥
 वृत्तं कुण्डन्तु वा वस्यां वायव्यां पञ्चकोणकम् ।
 पश्चात्कारन्तु सौम्यायामैशान्यामष्टकोणकम् ॥
 अस्त्राणां वा वस्यानां तु कुम्भाकारं विधीयते ॥
 वायव्यानां पताकाभं माहेन्द्राणान्तु वज्रवत् ।
 सप्तजिह्वाकृतिं प्रोक्तं मान्नेय्याङ्गु रसत्तमैः ॥
 मध्यमोत्तमवीर्याणां चतुरस्राङ्गु लप्रदम् ।
 त्रिकोणमल्पवीर्याणां स्त्रीरुपाणां भगाकृति ॥
 अर्धचन्द्रं तु रौद्राणां सौम्यानां वृत्तमेव हि ।
 पञ्चकोणं तु दूतीनां किन्नराणां तथैव च ॥
 विद्याविद्देशकरं पश्चात्कारं हितं मतम् ।
 सर्वेषां मेव मस्त्राणां वृत्तं स्यात् सार्वकामिकम् ॥
 तेन वृत्तं प्रकुर्वन्ति विधिशास्त्रविदो जनाः ।

यदुक्तं कालोत्तरे ।

अष्टमूर्त्त्याङ्गके न्यासे नव कुण्डानि कल्पयेत् ।
 पञ्चमूर्त्त्याङ्गके पञ्च वेदास्त्राण्येव कल्पयेत् ॥
 चास्तिके इत्यामात्राणि कुण्डानि परिकल्पयेत् ।
 क्रमाद्द्वयङ्गुलया वृत्तगा ततः शिषेणु षण्मुख ॥
 अष्टादिष्षष्टकुण्डानि वेदीपादीकृतानि तु ।
 नवमं कारयेत् कुण्डं वेदास्त्रं कुण्ड मध्यमम् ॥

चतुर्दश च चत्वारि पञ्चमं त्वीशकोशकं ।

तथा । अवि वेदाङ्गुलं कुण्डदिगादिस्तु यथाक्रमम् ॥
 ज्येष्ठादिकन्यसान्तानां वेदीपादाद्वह्निः कृतम् ।
 वेदयुग्माश्रितं कृत्वा अङ्गुलं भागसन्धितम् ॥
 तावन्निरङ्गुलैर्हस्तं कुण्डानां परिकल्पयेत् ।
 हस्तमात्रं खनेत्तिर्यक् ऊर्ध्वं^१ मेखलया सह ॥
 खाताद्वाग्नेङ्गुलः कण्ठः सर्वकुण्डेष्वयं विधिः ।
 मेखला त्रितयं कार्यं कीर्णैरामयमाङ्गुलैः ।
 दैर्घ्यात् सूर्याङ्गुला नाभिस्यंगीनाविस्तरेण तु ॥
 एकाङ्गुलीच्छ्रिता सा च प्रतिष्ठाभ्यन्तरे तथा ।
 कुम्भद्वयसमायुक्ता चाखत्थदलवन्मता ।
 अङ्गुष्टमेखला युक्ता मध्येत्वाज्ज * धृतिस्तथा ॥
 दक्षस्या पूर्व्वाम्ये तु जलस्था पश्चिमोत्तरे ।
 † इतरस्यापि कुण्डस्य योनिर्दक्षदलस्थिता ॥
 दिक्षु वेदाप्रवृत्तानि पञ्चमं त्वीशगोचरे ।
 तस्य नाभिदले दक्षे यदिष्टं तद्विधोयते ॥
 कुण्डानां पञ्चक्रं वाप्य कर्त्तव्यं पूर्व्वतस्थितमिति ।

तद्यथा प्रथमे च ।

कुण्डं जिनाङ्गुलं तिर्यग्ूर्ध्वं मेखलया सह ।
 परेषां द्व्यङ्गुला तद्विरङ्गजातसमन्विता ॥

* स्थितिरिति कश्चिन् पाठः ।

† नवमस्येति कश्चित् पाठः ।

‡ न तेति कश्चिन्पाठः ।

विनामानाङ्गुलादूर्ध्वं चतुर्विंशतिमांशकम् ।
 अङ्गुलान्तेन कुण्डानामङ्गजातं विधीयते ॥
 कण्ठाङ्गुलाद्वहिः कार्य्या मेखलैका षडङ्गुला ।
 चतुस्त्रिंशद्द्विङ्गुलायद्वा तिस्रः सर्व्वतशोभनाः ॥
 मेखला मध्यतोयोनिः कुण्डार्द्धांशविस्तृता ।
 अङ्गुष्ठमानोष्ठकं वा कार्य्याश्वत्थदलाकृतिः ॥
 प्राग्नियाम्यकुण्डानां प्रोक्ता योनिरुदङ्मुखी ।
 पूर्व्वान्मुखाः स्मृताः शेषायथाशोभं समन्विता ॥

देवी पुराणे ।

हस्तादि लिखिते कुण्डे समाख्यातं समीक्षते ।
 ओष्ठमेकाङ्गुलं कार्य्यं भागो द्वादशमायतः ॥
 ओष्ठं विस्तरसामान्यागजोष्ठसदृशी शुभा ।
 चतुरङ्गुलमानेन प्रथमा मेखला भवेत् ॥
 एकोनाहङ्गुलीया तु एवं कुण्डं शुभावहम् ।
 चतुरस्रं तु पूर्व्वदि अश्वत्थदल सन्धितम् ।
 ऊर्ध्वकुण्डङ्गजाकारं त्र्यक्षं पञ्चकमष्टवा ॥
 पद्माकारं प्रकर्त्तव्यं कुण्डं चेशानगोचरम् ।

यदुक्तं प्रतिष्ठासारसंग्रहे ।

प्रतिष्ठास्थापनादीनां मुख्यमास्थापनं यतः ।
 मण्डपोत्तरं मुत्सृज्य कर्त्तव्यं मण्डपद्वयं ।
 धाम्नीधामान्तरं त्यक्त्वा धामाग्रे यज्ञ मण्डपः ।
 दशद्वादशहस्तीवा द्विद्विष्टत्रया ततः क्रमात् ॥

तन्मध्ये नवधा कृत्वा मध्यभागेन वेदिका ।
 विज्ञारार्काष्टभिः कार्य्या प्राङ्गता वा नवाङ्गुलैः ।
 तद्दत्तरसुत्सृज्य दशहस्तप्रमा षतः ॥
 पूर्वभागेषवा सौम्ये कर्त्तव्यः शान्तित्रण्डपः ।
 तन्मध्ये वेदिकापद्मे कर्त्तव्यं ग्रहपूजनम् ।
 तत्रापि शान्ति होमार्थं न व कुण्डानि कल्पयेत् ॥
 यज्ञमण्डपमध्ये तु वेदीपादाद्वहिः क्रमात् ।
 सर्वदिक्षु च यत् कुण्डं वेदास्त्रं स्थापने विधी ॥
 तदेव वृत्तं वा कार्यमन्यथाकारनिर्मितम् ।
 चतुर्विंशद्भाङ्गुलादूर्ध्वं द्वाङ्गुलादिविद्वहितः ॥
 व्यासात्* खातःकारः प्रोक्तो निम्नस्तिष्यङ्गुलेनतु ।
 खाताद्वाष्ट्रेऽङ्गुलः कण्ठः तद्वाष्ट्रे मेखला क्रमात् ॥
 प्रथमाद्वाङ्गुला व्यासादुन्नतासा नवाङ्गुलैः ।
 मध्यमाद्वाङ्गुला वाष्ट्रे तृतीया तु यमाङ्गुला ॥
 मेखलाः पञ्च वा कार्य्या षट् पञ्चविं त्रिपञ्चकैः ।
 पञ्चत्रिमेखलोच्छ्रायं ज्ञात्वाशेषमधः खनेत् ॥
 खाताधिके भवेद्द्रीगी ह्येने धेनुधनक्षयः ।
 चक्रकुण्डे तु सन्तापीमरणं भिन्नमेखले ॥
 मेखलारहिते शीकोऽभ्यधिके वित्तसंक्षयः ।
 भार्याविनाशनं प्रोक्तं कुण्डं योन्या विना कृतं ।
 अपत्यध्वंसनं प्रोक्तं कुण्डं यत् कण्ठवर्जितम् ॥

स्थापने सर्वकुण्डानां ध्वजाग्रं सर्वसिद्धिदं इति ॥
 प्रतिकुण्डं पताकाद्याः प्रोक्ताः कालोत्तरे तथा* ।
 सप्तहस्ताः पताकाः स्युः सप्तमांशेन विस्तृताः ॥
 लोक्षपालाः सुवर्णेन नवमी तुहिनप्रभाः ।
 पीत, रक्तादिवर्णाश्च पञ्चहस्ता ध्वजाः स्मृताः ॥
 द्विपञ्चहस्तैर्दण्डैस्त्रैर्वंशजैः संयुता मताः ॥
 सप्तविंशतिभिः काण्डो विष्टरा बहुमात्रकाः ।
 हस्तार्धाः समिधः शस्ता इह वै चोत्तरे पुनः ॥
 पञ्चहस्ताः ध्वजाः कार्या वैपुल्येन द्विहस्ताकाः ।
 सप्तहस्ताः पताकाः स्युर्विंशत्यङ्गुलविस्तृताः ॥
 पञ्चहस्तध्वजानान्तु पञ्चमांशप्रवेशिताः ।
 दशहस्तपताकानां दण्डाः पञ्च प्रवेशिताः ॥
 सिन्दूराः कर्बुरा धूम्रा धूसरा मेघसन्निभाः ।
 हरिताः पाण्डुवर्णाश्च शुभ्राः पूर्वोदितः क्रमात् ॥
 एवं वर्णा ध्वजाः कार्याः पताकाः पाकशासन ।

कलशोत्पत्तिकलशलक्षणम् ।

देवीपुराणे ।

कलशान् सुष्टणान् कुर्यात्क्षणाणि वदामि ते ।
 उत्पत्ति-लक्षणं मानं कथयामि यथा मुने ॥
 वारकाः कलशाश्चैव येन लोके प्रकीर्त्तिताः ।
 अमृते मध्यमाने तु सर्वदैवैः समन्वितैः ॥

* कालोत्तरे यथेति क्वचित् पाठः ।

मन्वानं मन्दरं कृत्वा नेत्रं कृत्वा तु वासुकिम् ।
 उत्पन्नममृतं तत्र महावीर्यपराक्रमम् ॥
 तस्यायं धारणायैव कलशः परिकीर्तितः ।
 कलां कलां गृहीत्वा वै देवानां विश्वकर्माणां ॥
 निर्मितोऽयं सुरैर्यस्मात् कलशस्तेन कथ्यते ।
 वारयन्ति ग्रहान् यस्मात् मानवा विविधां स्तथा ॥
 दुर्द्धदश्च तथाद्योरां स्तेन ते वारकाः स्मृताः ।
 कलशस्य सुखे ब्रह्मा श्रीवायान्तु महेश्वरः ॥
 मूले तु संस्थितो विष्णुर्मध्ये मातृगणाः स्थिताः ।
 शिखासु देवताः सर्वा वेश्ठयन्ति चतुर्द्दिशम् ॥
 पृथिव्यां यानि तीर्थानि कलशे निवसन्ति हि ।
 गृहे शान्तिश्च पुष्टिश्च प्रीतिर्गौडसि रेव च ॥
 ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदस्तथैव च ।
 अथर्ववेदसहिताः सर्वे कलशसंस्थिताः ॥
 पूर्णान्मतेन तोयेन त्रितास्त्रैकान्ततो धृताः ।
 सरित्सरःखातजेन तडागेन जलेन वा ॥
 वापी-कूपोददिव्येन सामुद्रेण सुखावहाः ॥
 सर्वमङ्गलमाङ्गल्याः सर्वकिस्त्रिषणाशकाः ।
 अभिषेके सदा याज्ञाः कलशा ईदृशाः शुभाः ॥
 यात्रा, विवाह काले वा प्रतिष्ठा यज्ञकर्माणि ।
 योजनीया विशेषेण सर्वकर्माप्रसाधकाः ॥
 पञ्चाशाङ्गुलवैपुल्या उत्सेधः षोडशाङ्गुलः ।
 कलशानां प्रमाणं तु सुखमष्टाङ्गुलमभवेत् ॥

अथ ऋत्विग्वरणम् ।

तत्र ब्रह्माण्डदानमधिकृत्योक्तम् ।

पद्मपुराणे ।

बालाग्निहोत्रिणं विप्रं सुरूपञ्च गुणान्वितम् ।
 सपत्नीकञ्च सम्पूज्य भूषयित्वा विभूषणैः ॥
 पुरोहितं सुस्थतमं कृत्वान्याञ्च तथा हिजान् ।
 चतुर्विंशद्भूषोपेतान् सपत्नीकान् निमन्त्रितान् ॥
 अहृताम्बरसञ्चक्रान् स्त्रग्विणस्तु विभूषितान् ।
 अङ्गुलीयकानि तथा कर्णवेष्टाञ्च दापयेत् ॥
 एवं विश्वाप्त्य सम्पूज्य तेषामधे स्वयं स्थितः ।
 अष्टाङ्गप्रक्षिपातेन प्रक्षय्य च पुनः पुनः ॥
 पुरोहिताय पुनः कृत्वा कृत्वा वै करसम्पुटम् ।
 यूयञ्चै ब्राह्मणा धान्ना मैत्रत्वे चानुष्ठङ्गता ॥
 सौमुख्येनेह भवतां भवेत्पूतो नरः स्वयम् ।
 भवतां प्रीतियोगेन स्वयं प्रीतः पितामहः ॥

तुला पुरुषमधिकृत्योक्तं ।

लिङ्गपुराणे ।

शतनिष्काधिकं श्रेष्ठं तदर्द्धं मध्यमं स्मृतम् ।
 तस्याप्यर्द्धं कनिष्ठं स्वान्निविधं तत्र कल्पितम् ॥
 वस्त्रयुग्ममयोष्ठीषं कुण्डलं कण्ठभूषणम् ।
 अङ्गुलीभूषणञ्चैव मणिवन्यस्य भूषणम् ॥

एतानि चैव सर्वाणि प्रारभ्य सर्वकर्माणि ।
 पुरोहिताय दस्वाद्य ऋत्विग्भ्यः सम्प्रदापयेत् ॥
 पूर्वोक्तं भूषणं सर्वं सोष्णीषं यस्त्रसंयुतम् ।
 दद्यादेतत् प्रयोक्तृभ्य आच्छादनपटं बुधः ॥

अन्यासतुविंश ऋत्विजः ।

कृत्वेतिवचनात्पञ्चविंशतिर्ब्राह्मणा निमग्नणीयाः । ते च
 प्रतिष्ठामधिकृत्य मत्स्यपुराणे भेदेनोक्ताः ।

शुभास्तत्राष्ट होतारो द्वारपालास्तश्चाष्ट वै ।
 अष्टौ तु जापकाः कार्य्याः ब्राह्मणा वेदपारगाः ॥
 सर्वं लक्षणसम्पन्ना * मन्त्रवन्तो जितेन्द्रियाः ।
 कुल,शील समायुक्ताः जापकाःस्युर्हिजोत्तमाः ॥
 हेमालङ्कारिणः कार्य्याः पञ्चविंशतिर्ऋत्विजः ।
 दीक्षयेच्च समं सर्वानाचार्य्यो द्विगुणं लभेदिति ॥

निष्कादीनारभ्य शतं पञ्चविंशतिर्वा वस्त्रालङ्कारमूच्यम् ।
 एतत् प्रयोक्तृभ्यो वरणवाक्यम्, ॐ अद्य असुकयज्ञेनाहं यण्ये
 यदङ्गभूतमसुककर्म्मार्थमसुकगोत्रमसुकशर्म्माणमसुकवेदाध्यायिन-
 मसुकं, त्वामहं हृणीमि, हतोष्मीति प्रतिवचनम् ।

कर्म्मभेदोक्तो मत्स्यपुराणे ।

गन्धपुष्परत्नहृत्य द्वारपालान् समन्ततः ।
 पठध्वमिति तान् ब्रूयादाचार्य्यं त्वभिपूजयेत् ॥

* लक्ष्मणसम्पन्ना इति क्वचित् पाठः ।

यजध्वमिति तान् ब्रूयाद्योढकान् पुर एव तु ।
 उत्कृष्टमन्त्रजाप्येन तिष्ठध्वमिति जापकानिति ॥
 प्रारभ्ये सर्वकर्म्मणीति लिङ्गपुराणे वचनादस्य सम्ब
 व्रतादीनां ऋत्विक्-साध्यधर्म्मसाधारणम् ।

अथ मधुपर्कः ।

आह जावालिः ।

ब्राह्मणमृत्विजं चैव त्रीत्रियं गृहमागतम् ।
 अश्वयेन्मधुपर्केण ज्ञातकं प्रियमेव च ॥

विश्वामित्रः ।

सम्यज्य मधुपर्केण ऋत्विजः कर्म्म कारयेत् ।
 अपज्य कारयन् कर्म्म किल्बिषेणैव युज्यते ॥

अथ होमविधिः ।

देवीपुराणे ।

परिसमुद्धी पलिप्योल्लिख्योद्दृत्याग्निमुपसमाधाय दक्षिणतो
 ब्रह्मासनमास्तीर्य प्रणीय परिस्तीर्यार्थवदासाद्य पवित्रे कृत्वा-
 प्रोक्षणीञ्च संस्तुत्यार्थवत् प्रोक्षणीनिरूप्याज्वाषधित्रित्यपथ्याग्निं
 कुर्यात् सुवं प्रतप्य दग्धं संस्तुत्याभ्युक्ष्य पुनः प्रतप्याभ्युक्ष्यदध्या-
 दाज्य मुदास्योत्थाप्य उत्पूयावेक्ष्य प्रोक्षणीञ्च पूर्व्ववदुपयमन्
 कुशानादाय समिधीप्याधाय पर्युक्ष्य जहुयात् । एष एव विधि-
 र्यत्र क्वचिद्वीमतः, परिसमूहनं मानस्तोकैत्युपलेपनम् ।

त्वां वृतेच्छिद्रमिति उल्लिख्य, व्रज ऋच्छेत्युद्धृत्य देवस्यत्वेत्य-
भ्युक्ष्य अग्निमूर्धेति अग्निसुपसमाधाय समिधाग्निं देवस्यत्वेति
समिधमादध्यात्, अपि गृह्णामीत्यग्नेरभ्युक्षणं कृत्वाहिरण्यं गर्भं
दक्षिणतो ब्रह्मा आपोच्छिष्टेति उत्तरतः प्रणीता कथानक्षत्र इति
प्रणीताप्रस्तारणम् । पवित्रस्थो वैष्णव्यो सवित्रे हेष्टृनित्याज्य
निरूपणं । ज्ञातारमिति सूचम् प्रतप्य अनिग्रितोसि स पञ्चशि-
दिति सन्मार्जनं । प्रत्युष्टरक्षः इति प्रतपनं । सवितुर्धः प्रसव
उत्पन्नामीति पुनः प्रतपनं । तदेवाग्निरित्युत्पवनं । धूसरोसीति
पर्युक्षणम् । प्रजापतये स्वाहा मूलहोमाहुतयः एवं वैदिकीऽग्निः
संस्कृता भवति ।

एवं लक्षणसंयुक्तं सर्व्वयज्ञेषु याज्ञिकम् ।

विधानं विहितं तत्र ब्रह्मणा मिततेजसा ॥

अन्यथा ये प्रकुर्व्वन्ति सूत्रमाश्रित्य केषुचम् ।

निराग्रास्तत्र गच्छन्ति सर्व्वे देवा न संग्रयः ॥

अथातः परिस्तरणदेवताः कथ्यन्ते ।

परिस्रमूर्धने करपयः, उपलेपने विश्वेदेवाः, उल्लेखने मित्रा-
वरुचौ, उद्धरणे पृथिवी, अभ्युक्षणे गन्धर्वाः, अम्बासादने सर्व्वः,
दक्षिणासादने ब्रह्मा, उत्तरतः प्रणीतायां सागरः, अर्धावसादने
शतक्रतुः, पवित्रबन्धने पितरः, प्रीक्षणीसंस्कारे मातरः, लुडु
सुकृत्सुवे* तथा ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः, प्राण्यतापने वसवः,

* अथवा वेदुपि इति पाठान्तरं ।

अधिश्चयणे वैवस्वतः, पर्यग्निकरणे मरुतः, उदासने स्कन्दः,
उत्पवने प्रत्युत्पवने च चन्द्रादित्यो, आग्नावेक्षणे दिशः सर्वाः
पवित्राधाने, प्रणीतायासुमा देवी, इधो लक्ष्मीः, विष्णस्य भूतानि ।

पूर्वाक्तानां तु वङ्गीनामेकमादाय पावकम् ।
होमकर्म्मप्रकर्त्तव्यं विधिं ज्ञात्वा महा मुने ॥
एता वै देवताः प्रीक्ता ब्राह्मणानां हिताय वै ।
यज्ञेषु पशुवन्धेषु तथा सर्वक्रियासु च ॥

ब्रह्मीवाच ।

वङ्गे र्विधानं परमं सर्वकर्म्मसुखावहम् ।
कथयामि नृपन्ने उ नामभेदक्रियादिभिः ॥
अग्नेः परिपहः कार्यैः सर्वशास्त्रार्थवेदकैः ।
वामदक्षिणसिद्धान्ते स्वगृह्यपारगैस्तथा ॥
कार्यैः परिग्रहोवङ्गेः सर्वसम्पत्तिविद्भिः ।
अन्यथा अन्तरायास्ते भवन्ति धनप्राप्तयोः ॥
नित्यव्याधिरधन्योवा सर्वलोकतिरस्कृतः ।
अविदित्वा यथावच्च तज्ज्ञः सर्वसुखायते ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन अन्याधेये क्रिया मता ।
कुण्डाष्टकं समाख्यातं त्रिभेदन्तु मया तव ॥
बहुविधिविधानन्तु एकस्मै वोपचारतः ।
स्त्री-वाल्-शूद्रैस्तु हीतव्यं हीतव्यं प्रत्ययं यथा ॥
सभ्ये महानसे वापि न कुण्डे च कदाचन ।
संस्तृतैर्नामभेदैस्तु रक्षयित्वा हुताशनम् ॥

महाविद्याद्यकुशलेर्हीतव्यं कर्मकांक्षिभिः ।
 श्रूयते च पुरा वक्ष्ये षविदित्वा च तत् सुत ॥
 संस्कृतवहुमानस्तु राख्यभंशमवाप्नुयात् ।
 तद्या वारचिह्नीता च चिरामृत्युमवामवान् ॥
 तस्मादस्त्रिरवज्ञो तु न हीतव्यमवेदिना ।
 वेदमं ते प्रवक्ष्यामि येन सिद्धिः प्रजायते ॥
 चतुष्कोषोत्थकुण्डे च मण्डले मधुसूदन ।
 धनुषाकृतिके बद्धः सर्वदेवनमस्कृतः ॥
 चतुरस्रे भवेदग्निर्मण्डले तु ह्युताग्रनः ।
 पर्वचन्द्रेऽनसो ह्यग्निरग्निरेवं प्रतिष्ठितः ॥
 द्विजानां देवताः सप्त आचार्यो योगदैवतः ।
 उदको वरुणो देवी दर्भेण च महीरगाः ॥
 सुवायान्तु महादेवी स्तुषी देवस्त्रिलोचनः ।
 तत्संयोगे परः सर्वः सर्वदेवनमस्कृतः ॥
 प्रचीता वृद्धिवी ज्ञेया स्वाधिकारे महामखाः ।
 पुष्पेण ज्ञातवो विधिं यात्रेषु च महीदधिः ॥
 वेदीमध्ये तु नाबत्री सामस्कृत्युत्तरे स्थितः ।
 रन्ध्रे नक्षिभद्रस्तु शिखावन्धरस्तथा ॥
 होतारस्तु विजानीवात् चमसादिषु पर्वतान् ।
 जषायां देवता ब्रह्मस्तासहस्रे च वाचवः ॥
 मन्त्रेषु चरणे सर्वे भस्त्रभूषीणि शङ्कर ।
 शीकपासस्तु कीचेषु षोडशारे सर्वदेवताः ॥
 ज्ञातरो हीमभागे तु पुतनादिस्तुसिद्धिदाः ।

आदित्योऽधिष्ठितस्तोत्रो सत्ये देवः परः शिवः ।
 प्रातर्होमस्तु देवानां प्रहरार्हेन भूतिदः ॥
 मध्याह्ने तु मनुष्याणां मोक्षहेतोस्त्रियामिकः ।
 अपराह्ने पितृणाञ्च सन्ध्यायाञ्चाङ्गभोतिका ॥
 रात्रौ पापविनाशार्थं दिवासिद्धिप्रसाधने ।
 प्रहरार्हे तु होतव्यमर्षरात्रे तथागुदम् ॥
 प्रत्युषे पुत्रदम्बस्तु गुदाय सर्वकामिकम् ।
 क्षणादौ सर्वकार्येषु सर्वप्रतिप्रदायकम् ॥
 क्षणादिदेवता देया प्रथमात्रावराहुतिः ।
 अन्यथा विफलं विप्र भवते हवनस्तादा ॥
 वार्षादृषमद्यतां प्रीत्यै गौर्यै होमो नृपुङ्गव ।
 दशधा पुण्यहृदिषु हवनस्नानभोजनैः ॥
 देवाकैः शूलपद्माङ्कैः शङ्खचक्रशुभाननैः ।
 छतचीररसादीनि गृह्णीयात्तानि बुद्धिमान् ॥
 देव्याः स्नापनयज्ञीयो वसोधारैः प्रभाषितैः ।
 द्रव्यैर्होमः प्रकर्त्तव्यो अन्यथा ह्यविधानतः ॥
 आत्मवेलासु ते ढसिं पुष्टं यच्छन्ति देवताः ।
 वेलात्मगणानाञ्च अस्तिदैवतगे फलं ॥
 एतत्ते कथितं वत्स सर्वलोकसुखावहम् ।
 होता चेन्मन्महीनस्तु अशुचिर्भवने सदा ॥
 तस्मान्मु संस्कृते वज्रौ स्वहोतव्यमवैदिकैः ।
 मन्माकदकहोतारो ह्यजायजन्ति देवताः ॥
 अवैदिकास्तु होतारो नैव प्रीचन्ति वै सुरान् ।

होमात्सर्व्वफलावाप्तिः सर्व्वेषामपि जायते ॥
 तस्मात् मन्त्रविधानेन प्रातरेव शुभप्रदः ।
 पूर्व्वेग्निर्देवता विष्णुर्दक्षिणेन हरः स्मृतः ॥
 पश्चिमेन स्थितो ब्रह्मा एता वै अग्निदेवताः ।
 रुद्रन्तेजसे जानीयात् जलार्थावापि चर्चिका ॥
 क्रियायुगे तु विप्राणां लक्ष्मीस्तात्राधिदेवता ।
 एवं प्रतिष्ठिते होमे अग्नयश्च त्रयस्तथा ॥
 त्रयोदेवाः स्रयः कालास्त्रिरग्निश्चिगुणस्थिताः ।
 गार्हपत्यो दक्षिणाग्नि राहवनीयश्च ते त्रयः ॥
 एकस्यैव समुत्पन्नो बहुभेदा द्विजोत्तम ।
 गार्हपत्यस्तः श्रीपर्णश्चिचैकहृती तथा ॥
 खादिराशनविष्वाद्यैस्तु चोहस्तादिदीर्घतः ।
 अङ्गुष्ठपरिषाह्वाटाङ्गुण्डं कुम्भकभूषितम् ॥
 पुष्करं पुष्करो हौतु मध्यरेखास्थितौ किल ।
 कुम्भगार्धक्रिया कार्या दण्डवत्त सुशोभनम् ॥
 षडङ्गुल परीषाहं भूमियन्त्रविनिर्मितम् ।
 इत्रङ्गुलं मूलदेशे तु कुम्भपुष्कर मूलगम् ॥
 गुठिकान्तद्विजानीयात् त्रिभागेन तु पुष्करम् ।
 वेदी सप्ताङ्गुला कार्या पञ्चवर्षं प्रकल्पयेत् ॥
 त्रिनिश्चातं समं कार्य्यं षषं कुमात् षडङ्गुलम् ।
 गोकर्षाक्षतिशोभाङ्गुलं कनिष्ठाङ्गुलिरभ्युगम् ॥

छतनिःक्रमणं कार्यं यवत्रयसुरेवितं ।
 एवं सुवं सुचं कृत्वा ताभ्यां होमः सुखावहः ॥
 शमीगर्भीऽरुची कार्या देव्याहस्तप्रमाणतः ।
 वितस्तिपाणिनाह्लाढया मध्यं वै षोडशाङ्गुलम् ॥
 वृत्तङ्करहयोपेतं दशाङ्गुलसुवृत्तिदम् ।
 आपीडं सुसमं कार्यं मध्यमायसवेधनम् ॥
 घटिकाङ्कुरयागार्धं वालरज्जा प्रमा शमा ।
 सुदृढां वक्रिमन्त्रेण पूजयित्वा तु पातयेत् ॥
 अभावे सूर्यकान्तैर्वा तदभावे करीषजा ।
 सामान्यायतनागारे आनयेत्ताम्रभाजने ॥
 शरावे मृषमये पात्रे कुण्डे पूजान्विते भ्यसेत् ।
 अग्निचक्रं विधाने तु सर्व्यकर्म्मणि कारयेत् ॥
 हेमराजतताम्राणि काष्ठ,शैल,मृदोपि वा ।
 रत्नादीनि च पात्राणि शुभवेदाङ्गितानि च ॥
 अर्घ,नैवेद्यपूजार्थं बलिदानञ्च कल्पयेत् ।
 पद्यादेव विधानेन होमं कुर्याद्यथाविधि ॥

मरीचिः ।

प्रायथाः क्षमिषी धाङ्गाः अक्षर्वाचीह्यपाटिताः ।
 काम्बेषु वज्रकर्म्मदादी विपरीता जिघांसतः ॥
 विभीर्षी बिहस्ता दूत्वा वक्रा वहुशिरःकृशाः ।
 दौर्षाः क्लृप्ता घुणैर्जुष्टाः कर्म्मसिचिविनाशकाः ॥

समिदित्स्वमुत्तौ मङ्गपुराणे :

शमी, पलाश, न्यषोध, मूष, वैकट्यतोडवाः ।
 अश्वत्थो, दुन्दुवी, विस्रः चन्दनः-सरलस्तथा ।
 ग्रासक देवदाहक खदिरचेति यात्रिकाः ॥

हृन्दोगपरिशिष्टे कात्यायनः ।

नाहु उादधिका कार्या समित्खूलतया कश्चित् ।
 नविमुक्तत्वचा चैव न सकीटा न पाटिता ॥
 प्रादेशान्नाधिका न्यूना न तथा स्यात् द्विग्राहिका ।
 न सपर्चा समित् कार्या हीमकर्णसु जानता ॥

हृन्दोगपरिशिष्टे कात्यायनः ।

पाश्याहुतिर्द्वाद्दशपञ्चपुरिका ।

स्वङ्गारिणि स्वर्चि षि तच्च पावके ॥

योमर्चिषि जुहोत्वन्मौ व्यङ्गारिषि च मानवः ।
 मन्दाग्निरामयावी च दरिद्रश्चैव जायते ॥
 तस्मात् समिधे ह्योतव्यं न समिधे कथञ्चन ।
 आरोम्बमिच्छतायुश्च त्रियमात्यन्तिकीं तथा ॥
 सुडुवांश्च हुते चैव पाणिमूर्पसुवादिभिः ।
 अथ वस्त्रमाणेषु तिष्याद्विब्रतेषु देवतानूर्त्तीनां पूज्यत्वात्
 देवतानूर्त्तबलचक्षते ।

विष्णुधर्मीन्तरे ।

धिनायकस्तु, कर्णो गजवक्त्रचतुर्भुजः ।

स्वस्तकक्षाचमाला च तस्य दक्षिणहस्तयोः ॥
 पात्रघोदकपूर्वञ्च परशुचैव वामतः ।
 दन्तबास्य न कर्त्तव्यो वामे रिपुनिघ्नम् ॥
 पादपीठगतः पाद एक आसनगो भवेत् ।
 पूर्वे षोडशपात्रे च कराग्रन्तस्य कारयेत् ॥
 लम्बीद्गर स्तथाकार्यं स्तत्र कर्त्तव्यं यादव
 व्याघ्रचर्माम्बरधरः सर्पयज्ञोपवीतवान् ॥

स्वस्तकं, गजदन्ताकारं ।

गणेशस्य ।

देवी सरस्वती कार्य्या सर्वाभरणभूषिताः ।
 चतुर्भुजा सा कर्त्तव्या तथैव च समुत्थिता ॥

समुत्थिता, ऊर्ध्वा ।

पुस्तकक्षाचमाला च तस्या दक्षिणहस्तयोः ।
 वामयो च तथा कार्य्या वैश्वी च कमण्डलुः ॥

वैश्वी, वीणा ।

समपाद प्रतिष्ठा च कार्य्या सौम्यमुखी तथा ।
 सरस्वती ।

हरेः समीपे कर्त्तव्या लक्ष्मीस्तु द्विभुजा नृप ।
 दिव्यरुपाम्बरधरा सर्वाभरणभूषिता ॥

गौरी शुक्लाम्बरा देवी रूपेणाप्रतिमा भुवि* ।
 पृथक् चतुर्भुजा कार्या देवी सिंहासना शुभा ॥
 सिंहासनस्या कक्षं व्यं कमलञ्चासकर्णिकम् ।
 अष्टपत्रं महाभाग कर्णिकायान्तु सा स्थिता ॥
 विनायकवदासीना देवी कार्या महाभुजा ।
 वृहन्नल-ङ्करे कार्यं तस्यास्य कमलं शुभम् ॥
 दक्षिणे यादवश्रेष्ठ केयूरं प्रान्तसंस्थितम् ।
 वामेऽमृतघटः कार्यस्तथा राजन् मनोहरः ॥
 तस्यास्य हो करौ कार्यौ विस्वशङ्करौ द्विज ।
 आवर्जितघटं कार्यं तत् पृष्ठेकुञ्जरद्वयं ॥
 देव्यास्य मस्तके पद्मं तद्या कार्यं मनोहरम् ।

लक्ष्मीः ।

पयसङ्गहे ।

पद्मस्या पद्महस्ता च गजोच्चिमघटभ्रुता ।
 श्रीः पद्ममालिनी चैवकालिकाकान्तिरेव ॥

श्रीः ।

विश्वकर्षशास्त्रे ।

चेत्त्रे कोला पुरादन्धे महालक्ष्मीर्यदीच्यते ।
 लक्ष्मीवत् सा तदा कार्या रूपाभरचभूषिता ॥
 दक्षिणाधः करे पाचमूर्धे कोमोदकी ततः ।

वामीर्षे खेटकं धत्ते श्रीफलन्तदधः करे ॥
विभ्रती मस्तके लिङ्गं पूजनीया विभ्रतये ।

महालक्ष्मीः ।

विष्णुधर्मोत्तरे ।

अष्टादश भुजा कार्या भद्रकाली मनोहरा ।
भालीढस्त्रासनस्था च चतुःसिंहे रथे स्थिता ॥
अक्षमाला विशूलश्च खड्गश्चन्द्रश्च यादव ।
वाणबाणे च कर्त्तव्ये शङ्खपद्मी तथैव च ॥
स्रुक् सुवो च तथा कार्यौ तयोदककमण्डलू ।
दण्डशक्ती च कर्त्तव्ये कृष्णाजिन-हुताशनौ ॥
हस्तानां भद्रकात्यास्तु भवेत् कान्तिकारः करः ।
एकैव महाभाग रत्नपात्रधरो भवेत् ॥

भद्रकाली ।

विश्वकर्म्मशास्त्रात् ।

निगद्यते ह्यथो चण्डी हेमाभा सा सुरुपिणी ।
त्रिनेत्रा यौवनस्था च क्रुद्धा चोर्ध्वस्थिता मता ॥
कृष्णमध्या विशालाक्षी चारुपीनपयोधरा ।
एकवक्त्रा तु सुग्रीवा वाहुर्विश्रतिसंयुता ॥
शूलासि शङ्खचक्राणि बाण शक्तिपवीनपि* ।
अभयच्छमरश्चैव हृषिकां दक्षिणे करे ॥
जर्घादि क्रमयोगेन विभ्रती सा सदा शुभा ।

* वाचशङ्खपवीनपीति हृषित् पाठः ।

नागपाशन्तथा खेटं कुठाराक्षुशकार्मुकम् ॥
 घण्टा, ध्वज, गदा, दर्श, मुहरं वाम एव च ।
 तद्धोमह्विषम्बिचमूर्त्वा पतितमस्तकः ॥
 शस्त्रोद्यतकरस्तब्धः तद्भीवासम्भवः पुमान् ।
 शूलभिन्नी वमद्भ्रतारक्त भ्रूमूर्द्धजेक्षयः ॥
 सिंहेन खाद्यमानस्य पाशवहो गले भ्रमम्
 याम्याङ्गुगाम्नासिंहाश्च सव्याङ्गुगालोठगासुर ॥
 चण्डीचोद्यतशस्त्रेयश्चाशेषरिपुनाशिनी ।

पवि, र्व्यम् ।

असुरे, महिषे ।

चण्डिका ।

शक्तिं वाणं तद्या शूलं खड्गचक्रञ्च दक्षिणे ।
 चन्द्रविम्बमधो वामे खेटमूर्त्वं कपालकम् ॥
 शूलं चक्रञ्च* विभ्राणा सिंहाकृटा च दिग्भुजा ।
 एषा देवी समुद्दिष्टा दुर्गा दुर्गापहारिणी ॥

दिग्भुजा, दशभुजा ॥

दुर्गा । नम्या भगवती देवी भारद्वाजाभिनन्दजा ।
 वर-पाशा-ङ्गुशा-जानि विभ्रती च चतुर्भुजा ॥

गौरवर्षा गजस्था* वा कङ्क-खेट-वराभया ।
 नन्दा । अम्बा कुमुदवर्षाभा पाशाङ्गाभीतिपात्रिणी ॥
 भ्रम्बा । चतुर्वाहुः प्रकर्षाया सिंहास्था सर्वमङ्गला ।
 अथ सूर्यं कजं दक्षे शूलकुण्डीधरोत्तरे ॥
 सर्वमङ्गला ।

एकवीणा जया कर्षपूरा नन्दा खरक्षिता ।
 वज्रोत्था कर्षिकाकर्षी तैसाभ्यङ्गयरीरिणी ॥
 वामपादे लसन्नोदकत्वकण्ठकभूषणा ।
 वर्धयन्पूर्वजाकृष्टा काक्षरात्रिर्भवङ्करी ॥
 काल रात्रिः ।

शङ्खमूर्धकरादर्शं विभ्रती वामपार्श्वतः ।
 याम्ये फलाङ्गनीहस्ता ललितोर्वा सुभूषणा ॥
 ललिता ।

तुङ्गनासा च लम्बोष्ठी लम्बमानस्तनीदरी ।
 आलोहिता स्मृता ज्येष्ठा लक्ष्मीरिति त्रिये ॥
 उत्पलाभयहस्तैर्यं द्विभुजा वीरवन्दिता† ।
 ज्येष्ठा । रत्नज्येष्ठा च नीला च भूतलन्वितपादिका ॥
 भूतलं स्मृत्यते दीर्घ्यां द्विभुजा वीरवन्दिता ।
 नीलज्येष्ठा ।

गौरी कुमारिका रूपा ध्यायमाना महेश्वरैः ।

* कजस्थेति कश्चित् पाठः ।

† च भवेत्तरेति कश्चित् पाठः ।

वरदाभयहस्ता सा द्विभुजा त्रैयसे सदा ॥
 अक्षसूत्रा भये पद्मं तस्याधश्च कमण्डलुः ।
 गौर्या मूर्त्तिश्चतुर्बाहुः कर्त्तव्या कमलासना ॥
 जीरी । श्यामवर्णा विशालाक्षी क्षीराक्षणिभानना* ।
 द्विभुजा विभ्रती लिङ्गं चर्म्म शस्त्रन्तु दक्षिणे ॥
 सिंहासनोपविष्टेयं सुक्ताभरत्समूहजा ।
 भूत प्रेत, पिशाचाद्यैः सेविता तु विशेषतः ॥
 इन्द्ररक्षैश्च गन्धर्वैः सिद्धविद्याधरादिभिः ।
 अक्षत्थस्त्राप्यधो देवी भूतमातेति विन्धुता ॥

भूतमाता ।

सुरभिर्गोमुखा देवी† सुरूपाः सर्वभूषणा ।
 घासमुष्टिं तथा कुण्डी विम्बाणा भूतिपुष्टिदा ॥
 सुरभिः ।

निद्रा तु शयनाकृता सुसौम्या मुकुलेक्षणा ।
 पानपात्रधरा चैयं द्विभुजा परिकीर्तिता ॥

योगनिद्रा ।

अघातः सम्भवस्वामि माद्वरूपाणि ते जय ।
 तत्र ब्राह्मी चतुर्वक्त्रा षड्भुजा वृंससंस्थिता ॥
 पिङ्गला भूषणीपेता सृगचर्म्भीसरौयका ।

* जिभां शब्देति क्वचित् पाठः ।

† गौरीति क्वचित् पाठः ।

‡ कीरुपेति क्वचित् पाठः ।

वरं सुखं सुखं धत्ते दक्षवाहुषये क्रमात् ॥
 वामे तु पुस्तकं कुण्डलीं विभ्रती चाभयप्रदा ।
 माहेन्द्री वृषावृषा पञ्चवक्त्रा त्रिलोचना ॥
 शुक्रेन्दुभ्रूजटाजूटा शुक्रेण सर्वसुखप्रदा ।
 षट् भुजा वरदा दक्षे सूर्यं उमरुक्तं तथा ॥
 शूल-वष्टा-भयं वामे सैव धत्ते महा भुजा ।
 कौमारी रक्तवर्णा स्नाम् षड्वक्त्रा सार्कलोचना ॥
 रक्षिवाहुर्मयूरस्त्रा वरदा शक्तिधारिणी ।
 पताकां विभ्रती दण्डश्चापम्याथं च दक्षिणे ॥
 वामे चापमयो घण्टां कमलं कुङ्कुटं त्वधः ।
 परशुं विभ्रती तीक्ष्णं तदधस्त्वभयान्विता ॥
 वैष्णवी तार्क्ष्यां ग्यामा षड्भुजा वनमालिनी ।
 वरदा गदिनी दक्षे विभ्रती चाम्बुजस्रजम् ॥
 शङ्खचक्राभया वामे साधेयं विलसद्भुजा ।
 शङ्खवर्णा तु वाराहो शूकरास्या महोदरी ॥
 वरदा दक्षिणी खड्गं विभ्रती दक्षिणे सदा ।
 खेटपाशाभया वामे सैव चापि लसद्भुजा ॥
 ऐन्द्री सहस्रदृक् सोम्या हेमाभा गजसंस्थिता ।
 वरदा सूचिनी वज्रं विभ्रत्यूर्ध्वम् दक्षिणे ॥
 वामे तु कवचं पाचं त्वभयं तदधः करे ।
 चासुक्ता प्रेतगा रक्ता विलतास्याहिभूषणा ॥
 दंष्ट्राया चीरदेहा च गर्त्ताची भीमरूपिणी ।
 दिम्बाहुः चामकुक्षिच्च मुगलं कवचं शरम् ॥

अङ्गुशं विभ्रती खड्गं दक्षिणेत्यद्य वामतः ।
 खेटं पाशम्भनुर्दण्डं कुठारं चेति विभ्रती ॥
 चण्डीका श्वेतवर्णा स्यात् श्वारूढा* च वरभुजा ।
 जटिला वर्तुलस्रग्धा वरदा शूलधारिणी ॥
 कर्षिकां विभ्रती दक्षे पानपात्राभयान्वतः ॥
 इत्येवं मातरः प्रोक्ता रूपभेदव्यवस्थया ।

इति ब्राह्मणादिमातरूपं ।

गौर्यादि मातरस्तु भविष्यत् पुराणे निरूपिताः ।
 गौरी पद्मा-शची-मेधा सावित्री विजया जया ।
 देवमाता स्वधा स्वाहा तथान्या लोकमातृकाः ॥
 धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मदेवतया सह ।
 पूज्या चित्रेऽथवाचार्द्यां वरदा भयपाणयः ॥

नान्दीमुखमातरः ॥

नवपद्मान्विते स्थाने पूज्या दुर्गास्वमूर्त्तिः ।
 आदौ मध्ये तथेन्द्रादौ † नवतत्वाक्षरैः क्रमात् ॥
 अष्टादश भुजैका तु पीनवक्षीरहोरुका ।
 सर्व्वालङ्कारसंयुक्ता सर्व्वसिद्धिप्रदायिनी ॥
 मूर्ध्जं ‡ खेटकं चण्डां आदर्शं तर्जनीधनुः ।
 ध्वजं उमरुकं पाशं विभ्रती वामपाणिभिः ॥
 शक्ति, सुहृत्-शूलानि वज्रं शङ्खमथाङ्गुशम् ।

● त्रिवारूपेति कश्चित् पाठः ।

† रत्नगादाविति कश्चित् पाठः ।

‡ पूर्व्वजनिनि कश्चित् पाठः ।

शलाकां मार्गणं चक्रं दधाना दक्षिणैः करैः ॥
जयमिच्छन्निरित्येताः पूजनीया महात्मभिः ।
शेषाः षोडशहस्ताश्च शलाका मार्गणं विना ॥
रुद्रचण्डा* प्रचण्डा च चण्डोषा चण्डनायिका ।
चण्डा चण्डवती चैव चण्डरूपातिचण्डिका ॥
नवमी षोडशहस्ता च मध्यस्था वक्रिसन्निभा ।
रोचना वारुणा कृष्णा नीला शक्ता च धूम्रिका ॥
पीता च पाण्डुरा श्रेया चानीठस्ता हरिस्थिता ।
महिषस्था सगम्भीका दैत्यमूर्धजमुष्टिका ॥
पद्माकृती रथस्याप्या इत्युक्तं स्कन्दयामले ।

इति नवदुर्गायाः ।

सप्तस्था† जटिला चण्डा ‡ वक्रिज्वालासमप्रभा ।
कपालाभयहस्ताया वामा वामफलप्रदा ॥
द्विवाहुरेकवक्त्रा या विधातव्या विपश्चिता ।
वामा । पाटलाभा भवेदष्टाकपालवरधारिणी ॥
उषा महाब्रला भूत्यै शतघ्नी शेषपूर्वजा ।
ज्येष्ठा । रक्तवस्त्रा तथा रौद्री कपालचमरीकरा ॥
शेषपूर्वा तु विज्ञेया कृष्णवक्त्रा सुभीषणा ।
रौद्री । घनश्यामा ततः काली ताम्बररक्तनिभानना ॥
कपाल कर्णिका हस्ता विज्ञेया भयनाग्निनी ।

* उपचण्डेति क्वचित् पाठः ।

† व्रतखण्डेति क्वचित्पाठः ।

‡ प्रोक्तेति क्वचित् पाठः ।

काली । नीलशुभ्रा महादेवी विकर्षी कल्पपूर्विका ।

कपालशक्तिहस्तेयं भयङ्करं सुभप्रदा ॥

कलविकर्षी ।

वभ्रुवर्णा विशालाक्षी कपालजपमालिका ।

विभ्राणा शान्तिदा भूत्यै बलपूर्णा विकर्षिका ।

बलविकर्षिका ।

ताम्राभा श्वेतवर्णा स्यात् बलप्रमथनी शुभा ।

कपालपाशिनी चैयं सर्वशत्रुक्षयहारी ॥

बल प्रमथनी ।

जया कुसुमवर्णाभा दंष्ट्रिणी च महोदरी ।

कपालवज्रिणी भूतदमनी सर्वपूर्विका ॥

सर्वभूतदमनी ।

नीलताम्रावणाभासा पृथुवक्त्रा मनोमनी ।

कपालखड्गिनी भूत्यै शत्रूणां भयवर्षिणी ॥

मनोमनी ।

विश्वकर्षीयास्त्रात् ।

अक्षसूत्रं च कुण्डलीं च हृदयाग्रे पुटान्जलिं ।

पश्चाग्निकुण्डमध्यस्था कृष्णान्तामनुधारयेत् ॥

कृष्णा । अक्षसूत्रं च कमलं दर्पणं च कमण्डलुं ।

उमा विभक्तिं हस्ते तु पूजिता त्रिदशैरपि ॥

उमा । अक्षसूत्रं शिवं देवगणाध्यक्षं कमण्डलुं ।

अग्निकुण्डद्वयं पार्श्वं पार्ष्वती पर्वतीर्वा ॥

पार्ष्वती ।

मार्कण्डेय पुराणे ।

सा भिन्नाञ्जनसङ्काशा दंष्ट्राङ्घ्रितवरानना ।
विशाललोचना नारी बभूव तनुमध्वमा ॥
खड्ग, पात्र-शिरः खेटैरलङ्कृत्य चतुर्भुजा ।
कवचहारशिरसा विभ्राणां हि शिरःस्रजम् ॥

महाकाली ।

सैव शिवरात्रिः ।

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

लम्बोदरौ तु कर्त्तव्या रक्ताम्बरपयोधरा ।
शूलहस्ता महाभागा भुजप्रहरणा तथा ॥
कार्पासकलुषा देवी वारुणी चातिसुन्दरी ।
दृष्टवस्त्रा च कर्त्तव्या बहुवाहुस्तथैव च ॥
चामुण्डा कथिता चैव सर्व्वसत्ववशङ्करी ।

वारुणीचामुण्डा ।

तथैवार्त्तमुखी शुष्का शुष्ककाया विशेषतः ।
बहुवाहुयुता देवी भुजगैः परिवेष्टिता ॥
कपालमालिनी भीमा तथा खट्वाङ्गधारिणी ।

शिवदूती तु कर्त्तव्या शृगालवदना शुभा ॥
 आलीढासनसंस्थाना तथा राजंघतुर्भुजा ।
 अस्रक्पात्रधरा देवी खड्ग,शूल,धरा तथा ॥
 चतुर्थस्तु करस्तस्या स्तथाकार्यस्तु मामिपः ।

शिवदूती मत्स्यपुराणे ।

कात्यायन्याः प्रवक्ष्यामि रूपं दशभुजं तथा ।
 त्रयाणामपि देवानामनुकारानुकारिणीं ॥
 जटाजूटसमायुक्ता मर्द्धन्दुकतलक्षणां* ।
 लोचनत्रयसंयुक्ता पूर्णन्दुसदृशाननां ॥
 अतसीपुष्पसङ्काशां सुप्रतिष्ठां सुलोचनां ।
 नवयौवनसम्पन्नां सर्वाभरणभूषिताम् ॥
 सुचारुदर्शनां,† तप्तोनीन्नतपयोधराम् ।
 त्रिभागस्थानसंस्थानां मङ्गिषासुरमर्द्दिनीं ॥
 तिशूलं दक्षिणे दध्यात् खड्गञ्चक्रं तथैव च ।
 तीक्ष्णस्वाणं तथा शक्तिर्वामतो विनिवीधत ॥
 खेटकं पूर्णपात्रञ्च पाशमद्भुशमेव च ।
 घण्टाञ्च परशुञ्चापि चामरं सन्निवेशयेत् ॥
 अधस्यान्महिषं विन्द्याद्विशिरस्कं प्रदर्शयेत् ।
 गिरञ्छेदोद्भवं तद्वहानवं खड्गपाणिनम् ॥
 हृदिशूलेन निर्भिन्नं तिर्यग्गृह्णति विभूषणम् ‡ ।

* छतमेधराभिति क्वचित् पाठः ।

† सुचारुदर्शनाभिति क्वचित् पाठः ।

‡ तिर्यग्गृह्णतिभूषितभिति क्वचित् पाठः ।

रक्तरक्तीकताङ्गश्च रक्तविस्तारितेक्षणम् ॥
 वेष्टितं नागपाशेन भृकुटीभीषणाननम् ।
 वमद्गुधिरवक्त्रश्च देव्याः सिंहं प्रदर्शयेत् ॥

इति कात्यायन्याः ।

मयद्वीपिकायां ।

सिंहाकूटाश्विका त्राक्षा भूषिता दर्पणोदङ्गा ।
 वामभुजे दर्पणोदङ्गा दक्षिण वरयुक्ता । यदङ्गम् ।
 निम्ना युद्धे करे प्रोक्तोवरः साधारणः सदा ॥

अभवञ्चेति ।

खड्गः खेटधरा हाभ्यां कर्त्तव्या च चतुर्भुजा ।

अश्विकायाः ।

लक्षणसमुच्चये ।

दशबाहुस्त्रिनेत्रा च शस्त्र-शक्त्य-सि-डामरम् ।
 विश्वती दक्षिणे हस्ते वामे घण्टाश्च खेटकम् ।
 खट्वाङ्गश्च त्रिशूलश्च देवी योगेश्वरी मता ॥

योगेश्वर्याः ।

एवंरूपा भवेदन्या पाशाङ्गु शयुताहणा ।
 भैरव्याख्या यदीष्टा तु भुजैर्द्वादशभिर्युता ॥

भैरव्याः ।

विश्वकर्षायास्तात् ।

कमण्डल्वक्षसूत्रे च विभ्रती वज्रमङ्कुशम् ।
गजासनस्थिता रश्मा सुरूपा सर्वकामदा ॥

रश्मायाः ।

देवीपुराणे ।

शिवा वृषासना कार्या त्रिनेत्रा वरपाणिका ।
हमरुरगधारी च त्रिशूलाःभयदायिका ॥

शिवायाः ।

सुमध्याङ्गारयेत् कीर्त्तिं नीलोत्पलव्यवस्थिताम् ।
सर्वाभरणभूषाङ्गीं कलशोत्पलधारिणी ।
मदिरोदनगन्धा या महार्घमणिभूषणा ॥ तुष्टिः ।
सिद्धिर्देवी प्रकर्त्तव्या सिद्धार्थकवरप्रदा ।
सितचन्दनगन्धा या सितपङ्कजभूषिता ॥
सितासनस्थिता देवी प्रतिहारोपशोभिता । सिद्धिः ।
सुन्दरीङ्गारयेदृष्टिं पर्यङ्कासनसंस्थितां ॥
दर्पणालोकसुमनां तिलकालकभूषिताम् ।
माला, चामरशोभाढां वेषुवीणासदाप्रियां ॥ ऋद्धिः ।
श्रमा तु सुसुखी कार्या योगपटोत्तरीयका ।
पद्मासनकृताधारा वरदीप्ततपाणिका ।
शूलमेखलसंयुक्ता प्रशान्ता योगसंस्थिता ॥ श्रमा ।
सुसिद्धा वैष्णवी कार्या खड्गचक्रगदाम्बुजा ।
वनमालाकृतापीडा पीतवस्त्रा सुशोभिता ॥

वैष्णवी ।

ऐन्द्री सुरवराध्या गजराजोपरिस्थिता ।
 वज्राङ्गुधरा देवी हारकोयूरभूषिता ॥ ऐन्द्री ।
 वैवस्वती प्रकत्तव्या दुर्धरा महिषोपरि ।
 शूकरास्या कपासेऽसृक्पिवन्ती दण्डधारिणी ॥ याम्या ।
 तेजोधिका प्रकत्तव्या दीप्तिचन्द्रासनस्थिता । दीप्तिः ।
 कमनीया रतिः कार्या वसन्तोज्वलभूषणा ॥
 नृत्यमाना शुभा देवी समस्ताभरणैर्युता ।
 वीणावादनशीला च मदकर्पूरचर्चिता ।
 दण्डाच्च सूत्रधरा च व्रतस्यायोगसं स्थिता । रतिः ।
 खेता पूर्णेन्दुसदृशा खेतपङ्कजसंस्थिता ॥ खेता ।
 भद्रा सुभद्रा कर्तव्या भद्रासनव्यवस्थिता ।
 नीलीत्पलफलहस्ता शूलसूत्राच्चधारिणी ॥ भद्रा ।
 सिंहासनस्थिता देवी जटामुकुटमण्डिता ।
 शूलाच्चसूत्रधरा च वरदा भयचापधृक् ॥
 दर्पणं शरखेटञ्च खड्गचन्द्रधरा शिवा ।
 सुरूपा लक्ष्णोपेता सुस्तनी चारुभाषिणी ।
 सर्वभरणभूषाङ्गी सर्वशीभासमन्विता ॥

मङ्गला ।

जयाञ्च विजया दुर्यात् शूलपद्माच्चधारिणी ।
 वरोद्याताञ्च सिंहस्थां सर्वकर्म्मप्रसाधिनीं ॥

विजया ।

काली करालरूपा च चण्डपाशोद्याता भवेत् ।

काली । घण्टाकर्णी प्रकर्त्तव्या घण्टानिशूलधारिणी ।

घण्टाकर्णी ।

जयन्ती सुन्दरी कार्या कुन्तशलासिधारिणी ।

खेटकव्यग्रहस्ता च पूजनीया सुभान्वितैः ॥

जयन्ती ।

दितिर्देव्यनुता देवी यदा पूज्या महामुने ।

दग्धासनस्थिता भद्रा सर्वाभरणभूषिता ॥

फलनीलोत्पलकरा चोत्सङ्गशिशुभूषिता । दितिः ।

अक्रोधा हन्वती देवी सितवस्त्रा व्रतस्थिता ॥

पञ्चपुष्पोदककरा चन्दनेन सुचर्षिता ।

अहन्वती ।

अपराजिता च कर्त्तव्या सिंहारूढा महाबला ।

पिनाकेषुकराचेव* खड्गखेटकधारिणी ॥

त्रिनेत्रेन्दुजटाभारा कृतवासुकिकङ्कणा ।

अपराजिता ।

कौमारो चेव कर्त्तव्या मयूरासनशक्तिभृत् ।

त्रिदण्डी कालरूपा च रक्तमाल्या सकुक्कुटा ॥

कौमारी ।

मयदौषिकायां ।

चतुःषष्टियोगिनीरूपाणि ।

* पिनाकद्वारकाचेति कश्चित् पाठः ।

वज्रस्थाभयभृद्यास्ये कारयेत् खेटकभृत्ततः ॥
हेमभूषणभूषा स्यादक्षीभ्या करिसंस्थिता ।

अक्षीभ्या ॥ १ ॥

अक्षकर्णी तु गौराङ्गी कम्बुवाणाभयावहा ।
धनुःकपालभृत्सौम्ये ऋक्षस्था तर्जनोस्थिता ॥

ऋक्षकर्णी ॥ २ ॥

राक्षसी हेमवर्णा स्याच्चारुगात्री वृषस्थिता ।
कुठाराग्रनिभृद्यास्ये वामे पाशाङ्कशान्विता ॥

राक्षसी ॥ ३ ॥

क्षपणा चम्पकच्छाया दक्षिणे मुद्गराङ्गुगा ।
कपालञ्च फलं सव्ये धत्ते कुञ्जास्थिसंस्थिता* ।

क्षपणा ॥ ४ ॥

क्षया कूर्मस्थिता गौरी जपस्था सा घटान्विता ।
वामे कपालपिण्डाभृत्सर्वीलङ्कारभूषिता ॥ ५ ॥

पिङ्गाक्षीस्याद्भ्रुवर्णा चिनेत्रा च हयस्थिता ।
कौशेयपाशभृद्यास्ये वामेवाङ्कुशखेटिनौ ।

पिङ्गाक्षी ॥ ६ ॥

अक्षया हेमवर्णा स्याच्चारुगात्री वृषस्थिता ॥
कुठारखण्डगभृद्यास्ये वामेपाशाङ्कशान्विता ।

अक्षया ॥ ७ ॥

क्षया तु श्वगा पीता शक्तिभिन्दिधनुःकरा ।
याम्ये डमरुशूलेषु वस्तभृत् मृगसंस्थिता ॥

क्षया ॥ ८ ॥

शक्ति खड्गधरा चाक्षा खेटपाशकपालिनी ।
रक्ता वह्निःस्थिता वाला क्रीडन्ती दहनैः सह ॥

वाला ॥ ९ ॥

लीला लीलावती रक्ता दक्षपाणिजयान्विता ।
विभ्राणा पट्टिशम्याशं वामे मस्तार्धमम्बुजम् ॥

लीला ॥ १० ॥

वृषारूढा जया रक्ता याम्ये दण्डासिधारिणी ।
कर्त्तरीकाक्षिभृदामे तर्जन्यासक्तसिक्थका* ॥

लया ॥ ११ ॥

कर्त्तरी मार्जनी याम्ये सौम्ये पिडनकङ्करे ।
शूनं रुरुयुतं हाभ्यां धत्ते लोलातु सारदा ॥

लीला ॥ १२ ॥

वामे लुलापसुगृहञ्च तत् पिवन्व्यष्टकर्त्तिका ।
लङ्के शीरस्थिता लङ्का खादन्ती पिशितङ्गनम् ॥

* तर्जन्यासक्तसिक्थिका इति कश्चिन् पाठः ।

लङ्का ॥ १३ ॥

त्रिफला शकखोटादामोदकाशी च दक्षिणे* ।

शोणालङ्केश्वरी कुम्भे डिम्भाभूर्वोस्तु विभ्रती ॥

लङ्केश्वरी ॥ १४ ॥

दक्षिणे बरदं चक्रे वामे कङ्कणकङ्करे ।

विभ्राण कौलगा रक्ता लालासृग्लालसा मता ॥

लालसा ॥ १५ ॥

हीपिस्था विमला रक्ता चक्षालङ्कारभूषिता ।

कर्त्तरीकुम्भभृश्याम्ये वामे पाशकपालिनी ॥

विमला ॥ १६ ॥

रुग्णा हुताशनाजस्था ज्वालिनी दक्षिणे शुभा ।

वामे त्वभयहस्ता स्याद्विष्टराज्यघटान्विता ॥

हुताशना ॥ १७ ॥

शूकरास्या विगलाक्षी त्रिसन्धस्थापिततरा ।

घण्टावाद्यकरा सौम्ये याम्ये कर्त्तरिकाभया ॥

विगलाक्षी ॥ १८ ॥

हुङ्गारा मीनवक्त्रास्तात् मीनगा साचमालिनी ।

मुगलं विभ्रती वामे सौम्ये तु फलपल्लवी ॥

हुङ्गारा ॥ १९ ॥

अङ्गाभ्यां विभ्रती वालौ पर्यङ्के वडवामुखी ।

* त्रिफलाशकखोटेन्य मोदकाशिवदक्षिणे इति कश्चित् पाठः ।

समत्स्यकूर्मभृद्याम्ये कृष्णा नीलधरान्वतः ॥

वड्वामुखो ॥ २० ॥

तर्जन्यभयभृत्सीम्ये याम्ये दण्डकपालिनी ।

कृष्णा हाहारवा क्रूरा रासभस्या खरस्थिता ॥

हाहारवा ॥ २१ ॥

लुलापास्या लुलापस्था महाक्रूरा सितेतरा ।

वामेऽस्याः पाशमेलान्नं दक्षिणे दण्डलेखनी ॥

महाक्रूरा ॥ २२ ॥

असिता क्रोधना याम्ये खादन्ती मांसमण्डकम् ।

वामे विद्युज्जिह्वा क्रूरा सव्ये सीरकपालिनी ।

चक्रस्था कर्णमदिरं विभ्रती जम्बुकस्थिता ॥

क्रोधना ॥ २३ ॥

कृष्णा भयानना गृध्री दंष्ट्रोग्रास्थिविभूषणा ।

याम्ये स्यात् शिखरं शूलं घर्घरं लेलिहान्वतः ॥

भयानना ॥ २४ ॥

त्रिशूलपृष्ठभृहामे मुण्डं डमरुकं शवम् ।

विभ्राणा भाजनं हाभ्यां सर्वज्ञा प्रेतगा सिता ॥

सर्वज्ञा ॥ २५ ॥

जानुक्षिप्तो करौ कृत्वा उद्यस्ती तरलायते ।

शलडमरुहस्ता च गोधाङ्गा तरला सिता ॥

तरला ॥ २६ ॥

तारा तारगुणैर्युक्ता कौशिकस्था सितेतरा ।
भक्ते शवाक्षके सौम्ये गूलमुहुरमन्यतः ॥

तारा ॥ २७ ॥

कृष्णा पद्मस्थिता दक्षे ज्ञानमुद्राक्षमालिनी ।
ऋग्वेदं वामतो धत्ते पुस्तकञ्च कमण्डलुम् ॥

कृष्णा ॥ २८ ॥

रौद्रा कृष्णा* तुरङ्गास्या कवचस्था हयानना ।
मुण्डशूर्पधरा याम्ये सौम्ये संहारिकाङ्गभृत् † ॥

हयानना ॥ २९ ॥

क्रिमहस्ता शवाकृष्टा सारा ब्यूला जटाधरा ।
खट्वाङ्गं डमरुं सौम्ये शूलौष्के विभ्रती ततः ॥
शवस्था रससंघाही नृत्यन्ती जटिला सिता ।
कुशूलान् चक्रकङ्कालान् ‡ विभ्रती चर्मवासिनी ॥

रससङ्घाही ॥ ३० ॥

सवेदकहिजासक्ता कनिष्ठा शवरालिभा ।
वामे करोपधानासिधरा उल्काधरान्यतः ॥

* रौद्राकृष्टेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† संहारिकाङ्गभृदिति पुस्तकान्तरे ।

‡ कुशूलचक्रकङ्कालानिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

शबरा ॥ ३१ ॥

स्फटिकाभा गंढमस्था सुकान्ता तालुजिह्विका ।
शङ्खेटकहस्ताया याम्ये स्वस्तिकखड्गभृत् ॥

तालुजिह्विका ॥ ३२ ॥

रक्ताची वाहनारूढा रक्तपाणा शशिप्रभा ।
गदाखड्गधरा याम्ये वामि पाशकपालभृत् ॥

रक्ताची ॥ ३३ ॥

विद्युज्जिह्वा सिता क्रूरा सव्ये सीरकपालिनी ।
चक्रस्वरचक्रकर्त्तरि धारिणी दक्षिणे करे ॥

विद्युज्जिह्वा ॥ ३४ ॥

याहस्था चामरच्छत्रभृदृतिद्वयसंयुता ।
कुम्भ-पाश-धरा श्लेता क्रोधपुत्रा करङ्किनी ॥

करङ्किनी ॥ ३५ ॥

मेघनादा तु चन्द्राभा खड्गखेटक-धारिणी ।
जालैर्वृता घनारूढा तङ्गिन्मण्डलसन्निभा ॥

मेघनादा ॥ ३६ ॥

प्रचण्डीया तु नक्तस्था याम्ये स्याः कर्त्तरीफलम् ।
कपालं मुखमन्यत्र शत्रुघ्ना स्फटिकप्रभा ॥

प्रचण्डीया ॥ ३७ ॥

शुक्लवृषासना रौद्रा विभक्त्यजाक्षसृषकम् ।

कालकर्षी जगत्स्थिता* कर्षि कालविभूषणा ॥

कालकर्षी ॥ ३८ ॥

कर्त्तरीमभयं याम्ये धत्ते खेता वरप्रदा ।

वृषदंशसमारूढा पूर्णपात्रधरान्वतः ॥

वरदा ॥ ३९ ॥

चन्द्रहासा स्थिता गौरी वेदास्यां दीर्घयोः क्रमात् ।

कमण्डल्वहुशय्या मन्त्रमाला शुचान्विता ॥

चन्द्रहासा ॥ ४० ॥

चन्द्रावली तु हेमाभा हेमसिंहासनस्थिता ।

याम्ये ऽक्षमाला मालाभृत् शेषेऽल-ध्वजधारिणी ॥

चन्द्रावली ॥ ४१ ॥

फलस्रगन्विता याम्ये कुन्त-कुण्डीधरान्वतः ।

रौक्ममाला प्रपञ्चास्या गौरी विश्वप्रपञ्चिका ॥ ४२ ॥

मकटस्या प्रशाखाख्या विभ्रतीं करयोर्हयोः ।

खादक्याम्बफलं वृष्टा गौराङ्गी वानरानना ॥

प्रपञ्चिका ॥ ४३ ॥

पितृवक्त्रा नृगव्याली पिङ्गाक्षी याम्यसीम्ययोः ।

भिन्दिपालकखेटाभ्यां† पाशा-सिभ्याञ्च संयुता ॥

* अटास्थानेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

पिचुवक्त्रा ॥ ४४ ॥

काकास्या खेनगा गौरी पिशाची रक्तमण्डिता ।
कङ्काल-कर्त्तरी खड्गं विभ्रती याम्यसौम्ययोः ॥

पिशाचो ॥ ४५ ॥

फल-तूल धरा वामे सौम्ये-शस्त्रासि-धारिणी ।
खड्गस्या बभ्रुवर्णा स्यात् पिशिताशतिदुर्वला ॥

पिशिताशा ॥ ४६ ॥

नृत्यन्ती लोलुपा पीना खरस्या याम्यसौम्ययोः ।
खड्गगडमरुकर्त्तरीः पाशश्चैव तु विभ्रती ॥

लोलुपा ॥ ४७ ॥

वमनी पुष्यकस्या स्यात् गौरी यक्षगणान्विता ।
गदापट्टिश-भृक्षीम्ये खूलतोमरिणी ततः ॥

वमनी ॥ ४८ ॥

तपनी सर्पगा गौरी वराङ्गो पन्नगानना ।
स्रकर्णयानयोर्भागे न्यस्तस्रस्तोयरुपिणी ॥

तपनी ॥ ४९ ॥

पीता महाखुगा या स्यात् वामनी विभ्रती करे ।
कुठारं खगुडं वामेऽक्षमासां पनसन्ततः ॥

वामनी ॥ ५० ॥

शूलभिन्नललापास्या सिंहाकृष्टशरीरिणी ।
जिह्वे ह्ये विभ्रती चैव चतुर्षा विक्रतानना ॥ ५१ ॥
शङ्खपूरणिका हाभ्यां वृकाभयधरा हयोः ।
द्विसिंहरथसंस्था स्यात्तालाभा वायुवेगिका ॥ ५२ ॥
भासस्थिता वृहत्कुक्षिः सौम्ये मुखकपालभृत् ।
गौरी महातनुः शौर्ये कर्त्तरीपट्टिकादनी ॥

वृहत् कुक्षिः ॥ ५३ ॥

उद्वृथा विक्रता गौरी भयकृद्विक्रतानना ।
तूष्णश्च उमश्च याम्ये सौम्ये खड्गाङ्गमस्तकम् ॥

विक्रता ॥ ५४ ॥

खेटकं खड्गभृद्दामि* गदा-चक्रा-सिभृततः ।
वनमालावती पीता तार्क्ष्यस्या विश्वरूपिका ॥

विश्वरूपिका ॥ ५५ ॥

सुशलं सुन्नरं याम्ये परशुम्वन्धनं ततः ।
विभ्रती यमजिह्वा स्यात् कराला महिषस्थिता ॥

यमजिह्वा ॥ ५६ ॥

नृत्यन्ती खरगा श्वेता याम्ये उमहतूलभृत् ॥
सदैत्यैस्ते मुखीभा जयन्ती वामहस्तयोः ॥

* चेदमहाकृष्णदामिनि पुस्तकान्तरे ।

जयन्ती ॥ ५७ ॥

श्वारूढा दुर्जया श्वेता रौद्री भूतगणावृता ।
खड्गकुम्भोद्यतकरा दुर्गकाननवासिनी ॥

दुर्जया ॥ ५८ ॥

असक्तत् खेटिनीदीर्घां चतुर्थोत्थाम्यसौम्ययोः ।
शूलबाणधरा याम्ये धनुःशक्तिकरोन्वतः ॥

यमाङ्किका ॥ ५९ ॥

शकटस्थातिघोरास्या चीरवर्णा यमान्तिका ।
मार्जारस्या विडाली च विडालाक्षी भवेत् सिता ॥

विडाली ॥ ६० ॥

वामे तूष्ण खट्वाङ्गं शूलं च विभ्रती ।
क्षया पिशाचवक्रोया कपालस्या च रेवती ॥

रेवती ॥ ६१ ॥

कुशूलयष्टिभृदामे भिन्दिमालाकपालभृत् ।
कुण्डाभा पूतना त्र्यक्षा विक्रतास्या श्वस्थिता ॥

पूतना ॥ ६२ ॥

कर्त्तरीशूलभृद्याम्ये वामे मुण्डकपालिनी ।
श्वे तवर्णा वृषारूढा विजया विजयप्रदा ॥

विजयन्तिका ॥ ६४ ॥

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

ब्रह्माणं कारयेद्विद्वान् देवं सौम्यं चतुर्भुजम् ।
 बह्वपद्मासनन्तुष्टं तथा कृष्णाजिनाम्बरम् ॥
 जटाधरं चतुर्बाहुं सप्तहंसरथस्थितं ।
 वामे न्यस्तेतरकरन्तस्यैकन्दोर्युगं भवेत् ॥
 एतस्मिन् दक्षिणे पाशावक्षमाला तथा शुभा ।
 कमण्डलुं द्वितीये च सर्वाभरणधारिणम् ॥
 सर्वलक्षणयुक्तास्यं शान्तिरूपस्य पार्श्वेव ।
 पद्मपत्रदलाग्राभं ध्यानसंमौचितेक्षणम् ।
 अर्चायाङ्कारयेद्देवं चित्रे वा वास्तुकर्षणि ॥

ब्रह्मा ।

पद्मपत्रासनस्थस्य ब्रह्मा कार्य्यचतुर्मुखः ।
 सावित्री तस्य कर्त्तव्या वामोक्षङ्गता तथा ॥

आदित्यपुराणे ।

आदित्यवर्णा धर्मज्ञा साक्षमालकरा तथा ।
 रूपं पूर्वोदितं कार्य्यं रूपमन्यज्जागत्यतेः ॥

प्रजापतिः ।

हंसयाने न कर्त्तव्यो न कार्य्यस्य चतुर्मुखः ।
 ब्रह्माख्यमपरं रूपं सर्वं कार्य्यं प्रजापतेः ॥
 अक्षत्त्रं पुस्तकञ्च धत्ते पद्मं कमण्डलुम् ।
 चतुर्वर्णा तु सावित्री त्रीत्रियाणां गृहे हिता ॥

लोकपाल ब्रह्मा ।

विश्वकर्मा तु कर्त्तव्यः सुररूपधरः प्रभुः ।
सन्दंशपाणिर्हि भुजस्तोजोमूर्त्तिधरोमहान् ॥

विश्वकर्मा ।

चतुर्वक्त्रयतुष्पादयतुर्बाहुः सिताम्बरः ।
सर्वाभरणवान् खेतो धर्मः कार्यो विज्ञानता ॥
दक्षिणे अक्षमाला च तस्य वामे च पुस्तकम् ।
मूर्त्तिमान् व्यवसायस्तु कार्यो दक्षिणभागतः ॥
वामभागे ततः कार्यो ह्येषः परमरूपवान् ।
कार्यो पद्मकरो मूर्द्धि विन्यस्तौ तु तथा तयोः ॥

धर्मः ।

विश्वकर्माशास्त्रात् ।

ऋग्वेदः श्वेतवर्कः स्यात् द्विभुजो रासभाननः ।
अक्षमालामयः सौम्यः प्रीतश्चाध्ययनेद्यतः ॥

ऋग्वेदः ।

नीलोत्पलदलाभासः सामवेदी ह्ययाननः ।
अक्षमालान्वितो दक्षे वामे कम्बुधरः स्मृतः ॥

सामवेदः ।

अजास्यः पीतवर्णः स्यात् यजुर्वेदीऽक्षसूत्रधृक् ।

वामे कृत्विम पाणिस्तु भूतिदो मङ्गलप्रदः ॥

यज्ञुर्वेदः ।

अथर्वशाभिधो वेदो धवलो मर्कटाननः ।

अथसूत्रश्च खटाङ्गं विभ्राणोयं जयप्रियः ॥

अथर्ववेदः ।

शिक्षा शुभ्राभयकरा ज्ञानमुद्रान्विता शुभा ।

अथसूत्रा सकुण्डलीका द्विभुजा दण्डपङ्कजा ॥

शिक्षा ।

कल्पस्तु कुमुदाभासो वायसाख्यो महोदरः ।

दण्डी कुण्डलीधरोऽनख्यो मेखलाकुण्डलान्वितः ॥

कल्पः ।

सितं व्याकरणं ज्ञेयं मयूराख्यं कटोदरम् ।

वीणाकजान्वितं दिव्यं दिव्यवस्त्रविभूषितम् ॥

व्याकरणम् ।

इन्दुवनिर्मलं शान्तं वक्रवक्त्रं जगोदरम् ।

पाशपङ्कजहस्तं स्याच्चाक्षसूत्रं सपुस्तकम् ।

निरुक्तमिति निर्णीतं ऋन्दोनिर्णीयतेऽधुना ॥

निरुक्तम् ।

जवाकुसुमसंकाशं ऋन्दो ज्ञेयं विपश्चिता* ।

* विषयश्च इति पाठान्तरम् ।

चकोरास्यस्यपाकान्तुः शक्तिं विश्वच्छिखान्वितम् ।
सोऽङ्कुलसकोपेतं प्रवासकृतकुच्छकम् ॥

छन्दः ।

ज्योतिषं तु विङ्गालास्यमिन्द्रगोपनिभं शुभम् ।
अक्षसूत्रं कजं विश्वद्वस्तयोर्दक्षवामयोः ॥

ज्योतिषम् ।

सोमकान्तिसमाभासं मीमांसाशास्त्रमुत्तमम् ।
अक्षसूत्रं दधद्वेषे सुधापूर्णाघटं करे ॥

मीमांसा ।

पतस्रीपुष्यसहायो न्यायो ज्ञेयो विपश्चिता ।
सिंहास्यो दक्षिणे सूत्रं ध्वजं वामकरे दधत् ॥

न्यायः ।

धर्मशास्त्रं सितं शान्तं चाववक्तं कजासनम् ।
मुक्ताजपाङ्कद्वेषे तुलाद्वस्तान्तु वामतः ॥

धर्मशास्त्रम् ।

पुराणं चम्पकाभासं शकवक्तं चतुर्दलम् ।
अक्षसूत्रघटे ज्ञेयं नानाभरतभूषितम् ॥
इतिहासः कजाभासः शूकरास्यो मञ्जीदरः ।
अक्षसूत्रं घटं विष्णत् पद्मजाभरतान्वितः ॥

इतिहासः ।

पौतवर्णो धनुर्वेदः पितृवक्त्रो महातनुः ।
रत्नमालावलिं धत्ते मन्त्रके भूषिता जटाः ॥

धनुर्वेदः ।

आयुर्वेदो हरिद्राभो वानराख्यो विशालदृक् ।
अक्षसूत्रं सुधाकुम्भं विश्वदारोग्यदो भृशं ॥

आयुर्वेदः ।

मृत्युशास्त्रं सितं रम्यं मृगवक्त्रं जटाधरम् ।
अक्षसूत्रं त्रिशूलश्च विभ्राणश्च त्रिलोचनम् ॥

मृत्युशास्त्रम् ।

पञ्चशास्त्राभिधं शास्त्रं धवलं हृषभाननम् ।
अक्षसूत्रं हंसं धत्ते वनमालाविभूषितम् ॥

पञ्चशास्त्रम् ।

शास्त्रं पाशुपतं शम्भं व्यासवक्त्रं क्षयोदरम् ।
सूत्रपाशधरं भीमं व्याभ्रवर्षाव्यसृष्टतम् ॥

पाशुपतम् ।

पातञ्जलाभिधं रत्नं सर्पवक्त्रं सुतेजसम् ।
अक्षसूत्रं पृदाकुश्च धारयन् कुण्डलान्वितं ॥

‘घृदाकुः, सर्पः ।

पातञ्जलम् ।

साङ्गं तत् कपिलं बभ्रु वक्रसुखलतुन्दिलम् ।
जाप्यदण्डधरं दीर्घं नखलीमजटाधरम् ॥

साङ्गम् ।

अर्थशास्त्रं भवेद्द्वीरं सारिकाचन्दनं शुभम् ।
अक्षसूत्रं फलं विभ्रदवहारं कमण्डलुं ॥

अर्थशास्त्रम् ।

विद्या ॥ ३३ ॥

विष्णुधर्मीतरात् ।

ऋग्वेदस्तु स्मृतौ ब्रह्मा यजुर्वेदस्तु वासवः ।
सामवेदस्तथाविष्णुः शम्भुश्चाथर्वण्यो भवेत् ॥
शिखा प्रजापतिर्ज्ञेयः कल्पो ब्रह्मा प्रकृतिर्नितः ।
सरस्वती व्याकरणं निरुक्तं वरुणः प्रभुः ॥
छन्दो विष्णुस्तथैवान्निर्ज्योतिषं भगवान् रविः ।
मीमांसा भगवान् सोमो न्यायमार्गी समीरणः ॥
धर्मस्य धर्मशास्त्राणि पुराणञ्च तथा मनुः ।
इतिहासः प्रजाध्यक्षो धनुर्वेदः शतक्रतुः ॥
आयुर्वेदस्तथा साक्षाद्देवो धन्वन्तरिः प्रभुः ।
कलावेदं मही देवी नृत्यशास्त्रं महेश्वरः ॥
सङ्घर्षणः पञ्चरात्रं रुद्रः पाशुपतं तथा ।
पातञ्जलमनन्तश्च साङ्गश्च कपिलो मुनिः ॥

अर्थशास्त्राणि सर्वाणि धनाध्यक्षः प्रकीर्तितः ।
 कलाशास्त्राणि सर्वाणि कामदेवो जगद्गुरुः ॥
 अन्यानि यानि शास्त्राणि यत् कर्त्तव्याणि प्रचक्षते ।
 स एव देवता तस्य शास्त्रं कार्य्यं च देववत् ॥

अधिदेवता ।

अथ मुनिरूपाणि नय संग्रहे ।

उदासीनाः सोपवीताः कमण्डल्वक्षसूचिणः ।
 जटिलाः श्मश्रुलाः शान्ताः आसीना ध्यानतत्पराः ।
 सप्तर्षयो वसिष्ठश्च कार्य्यो भार्यासमन्वितः ॥
 गौतमश्च भरहाजो विश्वामित्रश्च कश्यपः ।
 जमदग्निर्वसिष्ठोऽपिः सप्त वैवस्वतेऽन्तरे ॥

ऋषयः ।

मरीचि-रश्मिङ्गिरसौ पुलस्त्यः पुलहः क्रतुः ।
 प्रचेताश्च वसिष्ठश्च भृगुर्नारद एव च ॥
 जटिलाः श्मश्रुलाः शान्ताः कृशा भ्रमनिसन्तताः ।
 कुसुभाक्षधराः कार्य्या मुनयो द्विभुजा दश ॥
 नारदी देवगन्धर्वः साक्षसूचकमण्डलुः ।
 वेद्यो वै वीणया वामभुजमूलोपगूढया ॥

नारदस्य ।

मुनयो भविष्योत्तरात् ।

अगस्त्यः ।

प्रकृत्या काश्चनं कारयित्वा शतधा तु शीभितम् ।

पुरुषाकृतिं प्रशान्तञ्च जटामञ्च लघारिषम् ॥
 कमण्डलुकरं शिष्यैश्च गैश्च परिवारितम् ।
 मृत्युधुन्विषहन्तारं दर्भहस्तं वरं मुनिम् ॥

अगस्त्यस्य ।

कर्त्तव्याः शक्ररूपेण भृगवो नाम देवताः ।
 भुवनो भावनश्चैव सुजन्यः सुजनस्तथा ॥
 क्रतुः सुवः स्वसुर्गाम व्यजस्य ष्यमुनस्तथा ॥
 प्रसवश्चाव्ययश्चैव दक्षो द्वादशकस्तथा ।
 भृगवो नामनिर्दिष्टा देवा द्वादश यज्ञियाः ॥

भृगवः ।

जीवरूपेण कर्त्तव्या देवाद्याङ्गिरस्तथा ।
 आत्माङ्गायुर्मनो दक्षः पदप्राणस्तथैव च ॥
 हविष्यश्च गविष्ठश्च ऋतः सत्यश्च तेजसः ।

आङ्गिरसः ।

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

देवदेवं तथा विष्णुं कारयेद्ब्रह्मस्मितम् ।
 कौस्तुभोद्भासितोरस्त्रं सर्वाभरणधारिणम् ॥
 सजलाभ्रुद् सञ्चार्यं पीतदिव्याम्बरं तथा ।
 सुखाच्च कार्याश्चत्वारो वाहवो त्रिगुणास्तथा ॥
 सौम्ये न्द्वन्द्वं पूर्णं नारसिंहन्तु दक्षिणम् ।
 कपिलं पश्चिमं वक्त्रं तथा वाराहसुतमम् ॥

• अपुनश्चेति क्वचित्पाठः ।

तस्य दक्षिणहस्तेषु बालार्कमुद्यत्नाभयाः ।
चर्मसौरवराविन्दु वामे च वनमाश्लिनः ॥
कार्याणि विष्णोर्हर्मन्त्र वामहस्तेष्वनुक्रमात् ।

शर्कः, चक्रं 'इन्दुः' ग्रहः ।

विष्णुः ।

एकवक्त्रो द्विवाहुश्च गदाशक्रधरः प्रभुः ।

लोकपालविष्णुः ।

एकवक्त्रयतुर्बाहुः सौम्यरूपः सुदर्शनः ।
पीताम्बरश्च मेघाभः सर्वाभरणभूषितः ॥
कण्ठेन शुभदेशेन कम्बुतुल्येन राजता ।
वराभरणयुक्तेन कुण्डलोत्तरभूषिणा ॥
अङ्गदौ बहकेयूरी वनमाश्लाविभूषणः ।
उरसा कौस्तुभम्बिभ्रत् किरीटं शिरसा तथा ॥
शिरः पद्मःस्तथैवास्त्र कर्णस्थित्वाशुकर्षिकः ।
पुष्टिस्त्रिष्टायतभुजस्तनुस्ताम्बनच्छाङ्गुलिः ॥
मध्येन त्रिवलीभङ्गशोभितेन सुषारुणा ।
स्त्रोरूपधारिणी चौर्यौ कार्या तत्पादमध्यगा ॥
तत् करस्याङ्घ्रियुगलो देवः कार्य्यौ जनाह्ननः ।
तालान्तरपदन्यासः किञ्चिन्निष्क्रान्तदक्षिणः ॥
अनुदृश्या महौ कार्या देवदर्शितविस्मिता ।
देवश्च कटिवासेन कार्य्यौ जान्मवसंविना ॥

* चापेवेति क्वचित् पाठः ।

वनमासा च कर्त्तव्या देवजान्मवलम्बिनी ।
 यन्नोपवीतं कर्त्तव्यं नाभिदेशसुपागतम् ॥
 उत्फुल्लकमलं पाणौ कुर्याद्देवस्य दक्षिणे ।
 वामपाणिगतं शङ्खं शङ्खाकारन्तु कारयेत् ॥
 दक्षिणे तु गदा देवौ तनुमध्या सुलोचना ।
 स्त्रीरूपधारिणी मुग्धा सर्वाभरणभूषिता ॥
 पश्यन्ती देवदेवेशं कार्या चामरधारिणी ।
 कार्यन्तन्मूर्द्ध्नि विन्ध्यस्तं देवहस्तान्तु दक्षिणं ॥
 वामभागगतचक्रः कार्यो लम्बोद्गस्तथा ।
 सर्वाभरणसंयुक्ती वृत्तविष्कारितेक्षणः ॥
 कर्त्तव्यश्चामरकरो देववीक्षणतत्परः ।
 कार्यं देवकरं रामं विन्ध्यस्तं तस्यमूर्धनि ॥

वसुदेवः ।

वासुदेवस्वरूपेण कार्यः सङ्कर्षणः प्रभुः ।
 स तु शृङ्गावपुःकार्यो नीलवासा यदूत्तमः ॥
 गदास्थाने च मुगलश्चक्रस्थाने च साङ्गलम् ।
 कर्त्तव्यौ तनुमधौ तु नृरूपौ रूपसंयुतौ ॥

सङ्कर्षणः ।

वासुदेवस्वरूपेण प्रद्युम्नश्च तथा भवेत् ।
 स तु दूर्वाङ्गु रश्मामः सितवासा विधीयते ॥
 चक्रस्थाने भवेत्चाप गदास्थाने तथा शरम् ।

तथाविधौ तीर्त्तव्यौ यथा सुग्रसखाङ्गौ ॥

प्रद्युम्नः ।

एतदेव तथा रूपमनिहृदस्य कारयेत् ।
 पद्मपत्राभ-वपुषो रत्नाम्बरधरस्य तु ॥
 चक्रस्थाने भवेत्तूर्ध्वं गदास्थानेऽसिरेव च ।
 चर्मं स्याच्चक्ररूपेण प्राग्दुः खड्गो विधीयते ॥
 चक्रादीनां स्वरूपाणि किञ्चित्पूर्व्वं सुदर्शयेत् ।
 रम्याण्यायुध-रूपाणि चक्रादीन्धैव यादव ॥
 वामपार्श्वगताः कार्या देवानां प्रवराध्वजाः ।
 सप्तताकायुता राजन् यष्टिस्त्रास्ते यथेरितम् ॥

अनिहृदः ।

विष्णुकर्मशास्त्रात् ।

लक्ष्मीनारायणौ कार्यौ संयुक्तौ दिव्यरूपिणौ ।
 दक्षिणस्या विभोमूर्त्तिर्लक्ष्मीमूर्त्तिस्तु वामतः ॥
 दक्षिणः कण्ठलम्बोऽस्या वामो हस्तः सरोजभृत् ।
 विभोर्वामकरो लक्ष्म्याः कुचिभागस्थितः सदा ॥
 सर्वावयवसम्पूर्णा सर्वास्त्रहारभूषिता ।
 सुष्ठुनेत्र कपोलास्त्रा रूपयौवनसंयुता ॥
 सिद्धिः कार्या समीपस्था चामरपाद्विधौ शुभा ।
 कर्त्तव्यं वाहनं सद्ये देवाधीभागगं सदा ॥
 यद्द्वचक्रधरो तस्य द्वौ कार्यौ पुरुषौ पुरः ।
 वामनो हार, केयूर, कीरीट, मणिभूषणौ ॥

उपासको समीपस्थो प्रभोर्ब्रह्मशिवात्मको ।
रसनां योगपट्टञ्च शिखामञ्जलिमास्थितौ ॥

लक्ष्मीनारायणौ ।

पद्मासनसमासीनः क्षिप्रिणीक्षितलीचनः ।
घोषाये दत्तवृत्तिश्च श्वेतपद्मोपरिस्थितः ॥
वामदक्षिणगौ हस्तौ उत्तानावेकभागगौ* ।
तत्करत्रयपार्श्वस्थे पङ्केद्वहमहागदे ॥
ऊर्ध्वं करद्वये तस्य पाञ्चजन्यः सुदर्शनः ।
योगस्वामी स विज्ञेयः पूज्यो मोक्षार्थिणीभिः ॥

योगेश्वरः ।

सिंहार्थसंहितायां ।

वासुदेवो गदा-शङ्ख-चक्र-पद्मधरो मतः ।
पद्मं शङ्खं गदां चक्रं धत्ते नारायणः क्रमात् ॥
गदां चक्रं तथा शङ्खं पद्मं वहति माधवः ।
चक्रं पद्मं तथा शङ्खं गदाञ्च पुरुषोत्तमः ॥
पद्मं कौमोदकीं-शङ्खं चक्रं धत्ते त्वधीचक्रः ।
सङ्कर्षणो गदा, शङ्ख, पद्म, चक्र, धरः स्मृतः ॥
चक्रं गदां पद्मशङ्खौ गोविन्दो धरते भुजैः ।
गदां पद्मं तथा शङ्खं चक्रं विष्णुर्विभर्ति यः ॥
चक्रं शङ्खं तथा पद्मं गदां च मधुसूदनः ।
गदां सरोजं चक्रञ्च शङ्खन्धत्तेऽच्युतः सदा ॥

* वामभागगौ इति पुरुषाकारं ।

पद्मं कौमोदकीं चक्रमुपेन्द्रः शङ्खमुद्वहेत् ।
 चक्रं, शङ्खं, गदां, पद्मं, धरः प्रद्युम्न उच्यते ॥
 पद्मं कौमोदकीं शङ्खचक्रान्धत्ते त्रिविक्रमः ।
 शङ्खचक्रं गदां पद्मं वामनो वहते सदा ॥
 पद्मचक्रं गदां शङ्खं श्रीधरो धरते भुजैः ।
 चक्रं पद्मं तथा शङ्खं नरसिंहो विभर्ति यः ॥
 पद्मं सुदर्शनं शङ्खं गदां धत्ते जनार्दनः ।
 अनिरुद्धचक्र-गदा-शङ्ख-पद्म-सप्तभुजः ॥
 हृषीकेशो गदाचक्रं पद्मं शङ्खं धारयेत् ।
 पद्मनाभो वहेच्छङ्खं पद्मं चक्रं गदां तथा ॥
 पद्मचक्रं गदां शङ्खं धत्ते दामोदरस्तथा ।
 शङ्खचक्रं सरोजस्य गदां वहति यो हरिः ॥
 शङ्खं कौमोदकीं पद्मं चक्रं विष्णुर्विभर्ति यः ।
 एतावन्मूर्तयो ज्ञेया इच्छिन्नाः करकमात् ॥
 वासुदेवादिवर्षाः स्युः षट्षड्भे ते तदाश्रयाः ।

चतुर्विंशतिमूर्त्तीनां ।

विष्णुधर्मोत्तरे ।

इंसोमस्यस्तथा कूर्मः कार्यास्तद्रूपधारिणः ।

शङ्खोमस्यस्तु कर्त्तव्यो देवदेवो जनार्दनः ॥

मत्स्यकूर्मौ ।

ऐश्वर्यमनिरुद्धस्य वराहो भगवान् हरिः ।

ऐश्वर्यशक्त्या दंष्ट्रापससुहृत्तवसुम्बरः ॥

नृवराहोऽथवा कार्यः शेषोपरिगतः प्रभुः ।
 शेषश्चतुर्भुजः कार्यः चारुदण्डफणान्वितः ॥
 आश्रयोत्फुल्लनयनो देववीक्षणतत्परः ।
 कर्त्तव्यो सौरमुशलो करयोस्तस्य यादव ॥
 सर्पभीगश्च कर्त्तव्यस्तथैव रचिताञ्जलिः ।
 भालीढस्थानसंस्थान स्तत् पृष्ठे भगवान् भवेत् ॥
 वामारम्भिगता तस्य योषिद्रूपा वसुन्धरा ।
 नमस्कारपरा तस्य कर्त्तव्या द्विभुजा शुभा ॥
 यस्मिन् भुजे धरा देवो तत्र शङ्ककरो भवेत् ।
 अन्ये तस्य कराः कार्य्याः पद्मचक्रगदाधराः ॥
 हिरण्याक्षगिरिन्देवक्रोद्धृतकरोऽथवा ।
 ऋतोद्धृतहिरण्याक्षः सुमुखो भगवान् भवेत् ॥
 मूर्त्तिमन्तमनैः हिरण्याक्षं विदुर्बुधाः ।
 ऐश्वर्येणाविनाशेन स निरस्तोरिमहानः ॥
 नृवराहोऽथवा कार्यो ध्याने कपिलवत् स्थितः ।
 द्विभुजस्त्वथवा कार्यः पिण्डनिर्व्वपनोद्यतः ॥
 समप्रक्रोडरूपेण बहुदानवमध्यगः ।
 नृवराहोवराहश्च कर्त्तव्यः स्नाविदारणः ॥

वराहस्य ।

य एवं भगवान्निष्णुर्नरसिंहवपुर्द्वरः ।
 ध्यानविधिः स एवोक्तः परमज्ञानवर्द्धनः ॥
 पीनस्तन्धकटिध्रौवः क्षत्रमध्यः क्षयोद्दरः ।

सिंहाननो वृद्धेह्य नीलवासाः प्रभान्वितः ।
 भालीठखानसंखानः सर्वाभरचभूषितः ।
 ज्वालामालाकुलमुखो ज्वालाकेसरमण्डलः ॥
 हिरण्यकशिपीर्वक्षः पाटो यन्त्रखरैः खरैः ।
 नीलोत्पलाभः* कर्त्तव्यो देवजानुगत स्तथा ॥
 हिरण्यकशिपुर्देव्यस्तमज्ञानं विदुर्बुधाः ।

नरसिंहः ।

कर्त्तव्यो वामनो देवः शङ्कटैर्गात्रपर्वभिः ।
 पीनगात्रश्च कर्त्तव्यो दण्डी बाध्यनीचतः ।
 दूर्वाश्यामश्च कर्त्तव्यः कृष्णाजिनधरस्तथा ॥

वामनस्य ।

सजलाम्बुदसङ्काश-स्तथाकार्यस्त्रिविक्रमः ।
 दण्डपाशधरः कार्यः शङ्खचक्रगदाधरः ॥
 शङ्खचक्रगदापद्माः कार्यास्तस्य सुरुषिणः ।
 निर्हेहास्ते न कर्त्तव्या शेषं कार्यन्तु पूर्वतः ॥
 एकोर्षवदनः कार्यो देवो विरकारितेक्षणः ॥

त्रिविक्रमः ।

कार्यस्तु भार्गवो रामो जटामण्डलदुहंशः ।
 हस्तोऽस्य परशुः कार्यः कृष्णाजिनधरस्य तु ॥

परशुरामः ।

* नीलोत्पलाश्च इति पुस्तकान्तरेपाठः ।

रामो दायरविः कार्यो राजसचचपासितः* ।
 भरतो सचचचैव यत्तुन्नय महायथाः ।
 तथैव सर्वे कर्त्तव्याः किन्तु भौलिविवर्जिताः ॥

रामादयः ।

सचचचक्रधरः कार्यो नीलोत्पलदसचविः ।
 इन्द्रीवरधरा, कार्यो तस्य साक्षाच्च रुक्मिणी ॥

सचचः ।

सौरपाचिर्बलः कार्यो मुगली चैव कुण्डली ।
 श्वेतोऽतिनीलवसनो मद्रादक्षितलोचनः ॥

वलभद्रः ।

चापवाचधरः कार्यः प्रद्युम्नश्च सुदर्शनः ।
 राजसिन्द्रमणिश्शामः † श्वेतवासा मदीत्कटः ॥

प्रद्युम्नः ।

कामदेवस्तु कर्त्तव्यो रूपेशाप्रतिभो भुवि ।
 अष्टबाहुः प्रकर्त्तव्यः शङ्खपद्मविभूषणः ॥
 चापवाचकरश्चैव मद्रादक्षितलोचनः ।
 रतिः प्रीतिस्तथा शक्तिर्मदशक्तिस्तथीज्वला ॥
 चतस्रस्तस्य कर्त्तव्याः पद्मगो रूपमनीश्वराः ।
 चत्वारश्च शरास्तस्य कार्या भार्यास्तनीपगाः ॥

* राजसचचचविश्च रति पाठान्तरं ।

† इन्द्रीवरधराश्च रति पाठान्तरं ।

केतुश्च मकरः कार्यः पञ्चवाचसुखोमहान् * ।
कामः ।

कर्त्तव्यवानिद्वयोऽपि खड्गचर्मधरः प्रभुः ।
साम्यः कार्यो गदाहस्तः सुरूपश्च विशेषतः ।
साय्वाग्निद्वयो कर्त्तव्यो पद्माभौ रत्नवाससौ ।
अनिद्वय साम्बयोः ।

पद्मपत्रापगौराभा कर्त्तव्या देवकी तथा ।
देवकी ।

मधुकपुष्पमच्छाया यशोदापि सदा भवेत् ।
यशोदा ।

गोपालप्रतिमां कुर्यात् वेष्टवादनतत्पराम् ।
वर्जापीडां घनश्यामां द्विभुजामूर्धसंश्रिताम् ॥
गोपालस्य ।

काशायकसम्बीतः स्तम्भसंसक्तपीवरः ।
पद्मासनस्यो द्विभुजो ध्यायी बुधः प्रकीर्तितः ॥
बुधः ।

खड्गोद्यतकरः क्रुद्धो हयारूढो महाबलः ।
केष्टोच्छेदकरः कस्की द्विभुजः परिकीर्तितः ॥
कस्की ।

दूर्वाश्लामो नरः कार्यो द्विभुजश्च महाबलः ।

* खड्गचर्मधरः कार्यः पञ्चवाचधरोवचामिति पुस्तकाकारे ।

नारायणसत्तुर्बाहुर्नीलोत्पलदलच्छविः ॥
 तयोर्मध्ये तु वदरी कार्या फलविभूषणा ।
 वदर्यामवनो कार्यावचमालाधरावुभौ ॥
 अष्टचक्रे स्थितो यामेभूतयुक्ते मनोरमे ।
 कृष्णाजिनधरो दान्तो जटामण्डलधारिणौ ॥
 पादेन चैकेन रथस्थितेन
 पादेन चैकेन च जानुनेन ।
 कार्यो हरिश्चात्र नरेण तुल्यः
 कृष्णोपि नारायणतुल्यमूर्तिः ।

नरनारायण, हरि, कृष्णाः ।

मूर्तिमान् पृथिवीहस्तन्यस्तपादः सितच्छविः ।
 नीलाम्बरधरः कार्यो देवो हयशिरोधरः ॥
 विन्ध्यात् सङ्घर्षांशेन देवो हयशिरोधरः ॥
 कर्त्तव्योऽष्टभुजो देवः तत्करेषु चतुर्थतः ॥
 शङ्खं चक्रं गदां पद्मं स्वाकारङ्गारयेदुधः ।
 चत्वारश्च कराः कार्या वेदानां देहधारिणः ।
 देवेन मूर्द्ध्नि विन्ध्यस्ताः सर्वाभरणधारिणः ॥

हयश्रीवः ।

प्रद्युम्नं विद्धि वैराग्यात् कापिलं तनुम् मास्थितः ।
 मध्ये तु करकः कार्यस्तस्योत्सङ्गगतः परः ॥

* कापिलां विद्धिमिति पाठान्तर ।

दीर्घुर्गं चापरं तस्य यज्ञचक्राधरं भवेत् ।
 पद्मासनोपविष्टश्च ध्यानसंभोक्षितेक्षणः ॥
 कर्त्तव्यः कपिलो देवो जटामण्डलमन्त्रितः* ।
 वायुसंरोधपीनासः पद्माङ्कचरणद्वयः ॥
 मृगाजिनधरो राजन् श्मश्रुयज्ञोपवीतवान् ।
 विभ्रुर्मन्त्रमहापद्मकलिकासंस्थितः प्रभुः ॥
 वैराग्यभावेन महानुभावो
 ध्यानस्थितः स्वप्नरमं पदन्तत् ।
 ध्यायंस्दायास्ते भुवनस्य गोप्ता
 साङ्गप्रवक्ता पुरुषः पुराणः ॥

कपिलः ।

ज्ञयः ज्ञाणतनुर्व्यासः पिङ्गलोऽतिजटाधरः ।
 सुमन्तुर्जैमिनिः पैलो वैशम्पायन एव च ।
 तस्य शिष्याश्च कर्त्तव्याश्चत्वारः पारिपाश्चिकाः ॥

व्यासः ।

गौरस्तु कार्ष्णी वाल्मीकिस्तेजोमण्डलदुर्दृशः ।
 तपस्यभिरतः शान्तो न ज्ञयो न च पीवरः ॥

वाल्मीकिः ।

वाल्मीकिरूपं सकलं दत्तात्रेयस्य धारयेत् ।
 धन्वन्तरिः सुकर्त्तव्यः सुरूपः प्रियदर्शनः ॥
 कारद्वयगतचास्य साधृतः कलशो भवेत् ।

* जटामण्डलदुर्दृश इति बुद्धकानरे पाठः ।

धन्वन्तरिः ।

जलमध्यगतः कार्यः* शिवपद्मदर्शनः ।
 कथापुष्पमहारत्नदुर्निरौक्तशिरोधरः ॥
 देवदेवस्तु कर्त्तव्यस्तत्र गुप्तस्तुर्भुजः ।
 तथापरस्य कर्त्तव्यः शिवभोगाङ्गसंस्थितः ॥
 एकपादोऽस्यकर्त्तव्यो लक्ष्म्युत्सङ्गगतः प्रभोः ।
 तथापरस्य कर्त्तव्यस्तत्र जानौ प्रसाधितः ॥
 कर्त्तव्यो नामिदेशस्त्रस्तघातस्त्रापारः करः ।
 तथैवान्यः करः कार्यो देवस्य तु शिरोधरः ॥
 सन्तानमन्त्ररीधारी तथैवास्त्रापरो भवेत् ।
 नाभिसरसिसम्भूते कमले तस्य यादव ॥
 सर्वपृथ्वीमथो देवः प्राम्बत्कार्यः पितामहः ।
 नासलक्ष्मौ च कर्त्तव्यौ पद्मस्य मधुकौटभौ ॥

नृरूपधारीषि भुजङ्गमस्य
 कार्यान्यथास्त्राणि तथा समीपे ।
 एतत्तवापे यदुपुङ्गवाग्रं
 देवस्य रूपं परमस्य तस्य ॥

जलशायिनः ।

तार्क्ष्यो मरकतप्रख्यः कौशिकीकारनासिकः ।
 चतुर्भुजस्तु कर्त्तव्यो वृत्तनेत्रमुखस्तथा ॥
 वृद्धोदजानुचरस्यः पद्मद्वयविभूषितः ।

* जलमध्यगतः कार्यः इति पाठान्तरम् ।

प्रभासंखानसौवर्षकलापेन विराजितः ॥
 ह्यन्तु पूषं कुम्भन्तु करयोस्तस्य कारयेत् ।
 करद्वयन्तु कर्त्तव्यं तत्रा विरचितास्तसि ॥
 यदास्य भगवान् पृष्ठे हतकुम्भधरौ करौ ।
 न कर्त्तव्यौ तु कर्त्तव्यौ देवपादधरौ ह्यभौ ॥
 किञ्चिन्नन्वीदरः कार्यः सर्वाभरणभूषितः ।

गवङ्कः ।

विष्णुधर्मीत्तरात् ।

देवदेवं महादेवं वृषारूढन्तु कारयेत् ।
 तस्य वक्त्राणि कार्याणि पञ्च यादवनन्दन ॥
 सर्वाणि सोम्यरूपाणि दक्षिणं विकटं मुकुटम् ।
 कपालमालिनं भीमं जगत्संस्कारकारकम् ॥
 त्रिनेत्राणि तु सर्वाणि वदनं तूत्तरं विना ।
 जटाकलापे महति तस्य चन्द्रकला भवेत् ॥
 तस्योपरिष्टाद्ददनं पञ्चमन्तु विधीयते ।
 यज्ञोपवीतं च तत्रा वासुकिं तस्य कारयेत् ॥
 दशबाहुस्तत्रा कार्या देवदेवो महेष्वरः ।
 पञ्चमालात्रिमूलं च चर्मा दण्डमयोत्पलम् ॥
 तस्य दक्षिणहस्तेषु कर्त्तव्यानि महाभुज ।
 वामे च मातुलाङ्गुलं चापादर्शं कमण्डलुम् ॥
 तथा चर्मा च कर्त्तव्यं देवदेवस्य शूलिनः ।
 वचंस्तथास्य कर्त्तव्यं चन्द्राङ्गुलसदृशप्रभः ॥

रुद्रः ।

ईशस्तत्पुरुषा घोरा वामजातक्रमेण तु ।
सितपीतकण्ठरक्ताशतुर्वर्णाः प्रकीर्त्तिताः ॥
पञ्चवक्त्राः स्मृताः सर्वे दशदोर्दृष्टभूषिताः ।
खड्ग, खेट, धनु, बाण, कमण्डल्वस्त्रसूचिणः ॥
वराभयकरोपेताः शूलपङ्कजपाणयः ।

वामो, वामदेवः ।

जातः, सद्योजातः ईशानादि पञ्चमूर्त्तयः ।
सर्वो भीमो महादेवः रुद्रः पशुपतिर्भवः ।
उग्र ईशान इत्यष्टौ मूर्त्तयः शिवसन्निभा ॥
मृगाङ्गशूद्रामणयो जटामण्डलमण्डिताः ।
चिनेत्रा वरखट्वाङ्गचिशूलवरपाणयः ॥

मूर्त्तियाष्टकम् ।

अर्धं देवस्य नारी तु कर्त्तव्या शुभलक्षणा ।
अर्धं तु पुरुषः कार्यः सर्वलक्षणभूषितः ॥
ईश्वरार्धे जटाजूटं कर्त्तव्यं चन्द्रभूषितम् ।
उमार्धे तिलकं कार्यं त्रीमन्तमलकं तथा ॥
भस्मोद्बलितमर्धं तु अर्धं कुङ्कुमभूषितम् ।
नागोपवीतिनं चार्धमर्धं हारविभूषितं ॥
वामार्धे तु स्नानं कुर्यात् घनं पीनं सुवस्तु लम् ।
उमार्धे तु प्रकर्त्तव्यं सुवस्त्रेण च वेष्टितम् ॥

मेषकां द्वापवेत्तत्र वज्रवैदूर्यभूषिताम् ।
 जर्दलिकां महेशार्धं सर्पमेखकमण्डितम् ॥
 पादेषु देवदेवस्य समपत्नीपरिस्थितम् ।
 सालक्तकं स्मृतं राममञ्जनेन विभूषितं ॥
 त्रिशूलमक्षसूत्रञ्च भुजयोः सव्ययोः स्मृतम् ।
 दर्पणस्त्रीत्यलं कार्य्यं भुजयोरपसव्ययोः ॥

अर्धनारीश्वरः ।

एवमेव दिक्पालेशानः ।

दक्षेण सुद्रां प्रतिपादयन्तं
 सिताक्षसूत्रं च तद्योर्ध्वभागे ।
 वामे च पुस्तामखिलागमाद्यां
 विभ्राणमूर्ध्वेन सुधाधरं च ॥
 सिताम्बुजस्थं सितवर्णमीशं
 सिताम्बरालेपनमिन्दुमौलिम् ।
 ज्ञानं सुनिभ्यः प्रतिपादयन्तं
 तं दक्षिणामूर्त्तिसुदाहरन्तं ॥

दक्षिणामूर्त्तिः ।

युग्मं स्त्रीपुरुषं कार्य्यं लमेशौ दिव्यरूपिणौ ।
 अष्टवक्रं तु देवेशं जटाचन्द्रार्धभूषितम् ॥
 द्विपाणिं द्विभुजां देवीं सुमध्यां सुपयोधराम् ।
 वामपाणिन्तु देवस्य देव्याः स्वस्थे नियोजयेत् ॥
 दक्षिणन्तु चरं शश्रीहत्यलेन विभूषितम् ।

देव्यास्तु दक्षिणं पाणिं स्नान्ये देवस्य कल्पयेत् ।
वामपाशो तथा देव्या दर्पणं दापयेद्भूमम् ॥

इति उमामहेश्वरी ।

कार्यं हरिहरस्यापि दक्षिणाङ्गं सदाशिवः ।
वाममर्धं हृषीकेशः श्वेतनीलाकृतिः क्रमात् ॥
वरं त्रिशूलं चक्राजधारिणो बाहवः क्रमात् ।
दक्षिणे वृषभः पार्श्वे वामभागे विश्वङ्गराडिति ॥

हरिहरमूर्तिः ।

दिव्यर्था जटिलाः चण्डाः पुर त्रिशूलधारिणः ।
पुटाञ्जलिकाराः सर्व्वं विश्वे शाश्वक वक्रकाः ॥
अनन्तश्च त्रिमूर्तिश्च सूक्ष्मः श्रीकण्ठ एवच ।
शिवः शिखण्डेकनेत्र एकरुद्रश्च ते क्रमात् ॥

विश्वेश्वराः ।

विश्वकर्म्म शास्त्रात् ।

अथ रुद्रान् प्रवक्ष्यामि वाहुषीकृशकाम्बितान् ।
अजो नामा महाबद्धी धन्ने शूलमथाहुशम् ॥
कपालं उमरुं सर्पं मुद्गरश्च सुदर्शनम् ।
अक्षसूत्रमयो दक्षे तथा वामे कराष्टके ॥
तर्जनी मूर्द्धतस्तत्र खट्वाङ्गनादधः करे ।
गदां च पट्टिशं घण्टां शक्तिं परशुकुण्डिकाः ॥

अजेकपदः ॥ १ ॥

एकपादाभिधो विभक्त द्वादशाक्षरिः शरम् ।
 चक्रं उमरुकां शूलं मुद्गरं तदधोवरम् ॥
 अक्षसूत्रमधो वामे खट्वाङ्गस्योर्ध्वं हस्तके ।
 धनुर्घण्टां कपालञ्च कौमुदीं तर्जनीघटम् ॥
 परशुञ्च क्रमावृत्ते धत्ते वाङ्मङ्गकेत्यति ॥
 अनेकभोगसम्पत्तिं क्लृवते यजनात् सदा ॥

एकपादः ॥ २ ॥

अहिर्बुध्नो गदां चक्रं चण्डी उमरुमुद्गरी ।
 शूलाङ्गुशाचमालाञ्च दक्षीर्णाधःकरः क्रमात् ॥
 तोमरं पश्चिमं चर्मं कपालं तर्जनीघटम् ।
 शक्तिः परशुकं वामे दक्षवह्णारयत्यसौ ॥

अहिर्बुध्नः ॥ ३ ॥

विरूपाक्षस्ततः खड्गं शूलं उमरुकाङ्कुशम् ।
 सर्पं चक्रं गदामक्षसूत्रं विभृत् कराष्टके ॥
 खेटं खट्वाङ्गकं शक्तिं परशुं तर्जनीघटं ।
 घण्टाकपोलकौ चेति वाग्नाडीदिकराष्टके ॥

विरूपाक्षः ॥ ४ ॥

रेवतो दक्षिणे चापं खड्गशूलं गदां मर्ही ।

चक्राङ्कुशाक्षमालास्तु धारयन्पूर्वमादितः ॥
 धनुः खेटञ्च खट्वाङ्गं घण्टातर्ज्जानिकांततः ।
 परशुं पट्टिशं पात्रं वामवाहकोऽर्कवत् ॥
 सर्वसंस्तत्करोत्येष आयते वाचं नान्नृशम् ।

रेवतः ॥ ५ ॥

हराख्ये सुहरश्चैव डमरुं शूलमङ्कुशम् ।
 गदासर्पाक्षसुत्राणि धारयन् दक्षिणोद्धतः ॥
 पट्टिशन्तोमरं शक्तिं परशुं तर्जनीघटम् ।
 खट्वाङ्गं पात्रकश्चेति वामोर्षादिक्रमेण तु ॥

हरः ॥ ६ ॥

बहुरूपोदधश्चे डमरुश्च सुदर्शनम् ।
 सूर्पशूलाङ्कुशेयस्तु कौमुदीं जपमालिकाम् ॥
 घण्टाकपालखट्वाङ्गं तर्जनीं कुण्डिकां धनुः ।
 परशुं पट्टिशं चैव वामोर्षादि करारष्टके ॥

बहुरूपः ॥ ७ ॥

अम्बकोपि दधश्चक्रं डमरुं सुहरं शरम् ।
 शूलाङ्कुशाहिजाप्यश्च दक्षोर्षादिक्रमेण हि ॥
 गदा-खट्वाङ्ग-पात्राणि कार्मुकं तर्जनीं घटी ।
 परशुं पट्टिशं चेति वामोर्षादिकराष्टके ॥

अम्बकः ॥ ८ ॥

सुरेश्वरं हि-डमरुं चक्रं शूलाङ्कुशावपि ।
 शरश्च सुहरं चापं दक्षवाहकैस्त्विति ॥

पङ्कजं परशुं घण्टां पट्टिमं तर्जनीं धनुः ।
खट्वाङ्गं कारयेत्यात्रं वामेऽष्टकरपङ्कजे ॥

सुरेश्वरः ॥ ८ ॥

जयन्ती दशमी रुद्रोप्यङ्गुशं चक्र-मुद्गरम् ।
शूला-हि डमरुं वाणमजसूत्रं यमेत्विति ॥
गदा-खट्वाङ्ग-परशुं कपालं शक्ति-तर्जनीं ।
धनुः कुण्डी-सुचीर्द्वादि वामबाह्वष्टके दधत् ॥

जयन्तः ॥ १० ॥

अथापराजितो दधे तोमरं खड्गमङ्गुशम् ।
शूला-हि-चक्र-डमरु-मद्यमालां दधत् क्रमात् ॥
शक्तिं खेटं गदां पात्रं तर्जनीं पट्टिमपङ्कजं ।
घण्टामुत्तरतश्चाथ धारयन्मूर्धमादितः ॥

अपराजितः ॥ ११ ॥

अजैकपादहिर्गन्धः विरूपाक्षश्च रैवतः ।
हरश्च बहुरूपश्च त्राम्बकश्च सुरेश्वरः ॥
रुद्रा एकादश प्रोक्ता जयन्तश्चापराजितः ॥

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

कुमारः षण्मुखः कार्य्यः शिखण्डिकविभूषणः ।
रक्ताम्बरधरः कार्य्यो मयूरवरवाहनः ॥
कुङ्कुटश्च तथा घण्टा तस्य दक्षिणहस्तयोः ।
पताका वैजयन्ती च शक्तिः कार्य्या च वामयोः ॥

स्नान्दः ।

अथातो रूपनिर्माणं वक्ष्येऽहं भैरवस्य तु ।
 लम्बोदरन्तु कर्त्तव्यं वृत्तपिङ्गललोचनं ॥
 दंष्ट्राकरालवदनं फुल्लनासापुटन्तथा ।
 कपालमालिनं रौद्रं सर्व्वतः सर्पभूषणम् ॥
 व्यालेन द्वासयन्तश्च देवीं पर्व्वतनन्दिनीं ।
 सजलाम्बुदसङ्काशं गजचर्मोत्तरच्छदम् ॥
 बहुभिर्बाहुभिर्व्याप्तं सर्वायुधविभूषणम् ।
 वृहत्शालप्रतीकाशैस्तथा तीक्ष्णनखैः शुभैः ।
 साचीकृतमिदं रूपं भैरवस्य प्रकीर्त्तितम् ॥

भैरवः ।

महाकालस्य कथितमितहै भैरवं सुखम् * ।
 देवीत्रासनकषास्य करे कार्य्यश्च पन्नगः ।
 नचास्य पुरतः कार्या देवी पर्व्वतनन्दिनी ॥
 शुक्ला न कार्यास्य तथा नरक्ता
 समीपतो माहृगणप्रधाने ।
 कार्य्यं तथा या परिवर्द्धमस्य
 गणाश्च कार्य्या बहुरूपरूपकाः ॥

महाकालः ।

नन्दी कार्य्यस्तिनेनस्तु चतुर्व्वाहुर्ग्रीहामुजः ।

* भैरवस्य चरणसुखमिति पुलकान्तरे पाठः ।

सिन्दूरारुचसङ्काशी व्याघ्रचर्मपरिच्छदः ॥
 त्रिशूलभिन्दिपाले च करयोस्तस्य कारयेत् ।
 शिरीगतं तृतीयन्तु तर्ज्यन्तं तत्रापरम् ॥
 आलोकयानं कर्त्तव्यं दूरादागमिकासनम् ।

नन्दी ।

अनेनैव तु रूपेण वीरभद्रं विदुर्बुधाः ।

वीरभद्रः ।

ज्वरस्त्रिपादः कर्त्तव्यस्त्रिनेत्रैर्वदनैस्त्रिभिः * ।
 भस्मप्रहरणो वृद्धस्त्रिवाहुर्व्याकुलेचक्षुः ॥

ज्वरः ।

विश्वकर्म्मशास्त्रात् ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि वसुरुपाणि ते जय ।
 पद्माक्ष-मालिके तस्य दक्षनामकरदये ॥
 सौर-शक्ती दधानोऽयं धराख्यो वसुरादिमः ।
 मालां पुष्करवीजोत्थां चक्रं शक्तिं कमण्डलुम् ॥
 दक्षाधरादिसव्येन यस्य स्युः स भुवो मतेः ।
 सुक्ताफलकृतामाला पद्भजं शक्तिरङ्गुशः ॥
 स वसुः कौर्त्तिती वत्स सोमनामिति वै बुधैः ।
 सव्यवामोर्द्धगी यस्य करौ स्तः शक्तिसंयुतौ ॥
 सौरा-ङ्गुशान्वितौ चाधः स भवेदापसंज्ञकः ।

* ज्वरस्त्रिपादस्त्रिभिः; वृद्धभुजो नवकोचन इति पाठान्तरं ।

अक्षमालोपवीत्यूर्ध्वं शृण्वि शक्तिकारावधः ॥
 यस्य स्तः सोऽनिलाख्यः स्वाच्छुभदः पञ्चमो वसुः ।
 सुवाचमालिको दक्षे वामे शक्ति कपालभृत् ॥
 सव्योर्द्वादिक्तमाद्योसौ नलाख्यस्तु वसुः स्मृतः ।
 खट्वाङ्गु शधरः सव्ये शक्ति-खेटकरोन्वितः ॥
 प्रत्यूषाख्यो वसुधायं सप्तमः परिकीर्तितः ।
 सव्ये दण्डकपालोसौ वामे तु शृण्वि-शक्तिकः ॥
 शुभदः कीर्तितश्चायं प्रभासो-वसुरष्टमः ।
 एते सर्व्ये समाख्याता नवकाञ्चनसन्निभाः ॥
 धरोद्भुवश्च सोमः स्यादापञ्चैवा निलीनलः ।
 प्रत्यूषश्च प्रभासश्च* वसवोष्टौ प्रकीर्तिताः ॥

इति वसुरूपनिर्घोषम् ।

शृणु वक्ष प्रवक्ष्यामि सूर्य्यभेदांस्तु ते जय ।
 यावत् प्रकाशकः सूर्य्यो जायते मूर्त्तिभिर्यथा ॥
 दक्षिणे पौष्करी माला करे वामे कमण्डलुः ।
 पद्माभ्यां शोभितकरा सा धात्री प्रथमा स्मृता ॥
 शूलं वामकरे चास्याः दक्षिणे सोम एव च ।
 मित्रा नाम चिनयना कुशेशयविभूषिता ॥
 प्रथमे तु करे चक्रं† तथा वामे च कौसुदी ।
 मूर्त्तिर्भणिमयी ज्ञेया सपद्मैः पाणिपद्मवैः ॥

* प्रभासश्चेति पाठान्तरं ।

† वज्रमिति पुस्तकान्तरे ।

अक्षमाला करे सव्ये चक्रं वामे प्रतिष्ठितम् ।
 सा मूर्त्तिं रौद्रीं ज्ञातव्या प्रधानापन्नभूषिता ॥
 चक्रं तु दक्षिणे यस्या वामे पाशः सुशोभनः ।
 सा वारुणी भवेन्मूर्त्तिः पद्मव्ययकरहया ॥
 कमण्डलुर्दक्षिणतोऽमालाचाक्षमयी भवेत् ।
 सा भवेत् सन्मता सूर्यमूर्त्तिः पद्मविभूषिता ॥
 यस्या दक्षिणतः शूलं वामहस्ते सुदर्शनः ।
 भगमूर्त्तिः समाख्याता पद्महस्ता शुभा जय ॥
 अथ वामकरे माला त्रिशूलं दक्षिणे कृतम् ।
 विवस्वन्मूर्त्तिरेवास्याः पद्मलाञ्छनलक्षिता ॥
 पूषाख्यस्य भवेन्मूर्त्तिं द्विभुजा पद्मलाञ्छिता ।
 सर्वपापहरा ज्ञेया सर्वलक्षणलक्षिता ॥
 दक्षिणे तु गदा यस्या वामे चैव सुदर्शनः ।
 पद्मव्यया तु सावित्री मूर्त्तिः सर्वार्थसाधनी ॥
 स्रुचं च दक्षिणे हस्ते वामे होमजकीलकं ।
 मूर्त्तिं स्वाद्री भवेदस्य पद्मरुडकरहया ॥
 सुदर्शनकरा सव्ये पद्महस्ता तु राभतः ।
 एषा स्यात् हाद्री मूर्त्तिं विष्णोरमिततेजसः ॥
 धाता, मित्रो, र्थमारुद्रो वरुणः सूर्य एव च ।
 भगो विवस्वान् पूषा च सविता दशमः स्मृतः † ॥

* ऽक्षमालाचैवामन इति पाठान्तरं ।

† धातार्थमालाचक्रमथ वरुणोऽशोभनलक्षणा ।

इत्यो विवस्वान् पूषा च पर्याप्तो दशमः स्मृतः ।

नमस्वाहा तथा विष्णुरजयन्तो जयन्वजः इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

एकादशस्था त्वष्टा विशुद्धाद्दशस्यते ।

इति द्वादशादित्यरूपनिर्घाणम् ।

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि रूपाणि मरुतां तव ।
 अक्षमालाम्बुजे दक्षे वामे कुण्डोर्ध्वजान्वितः ॥
 अक्षनाख्यो भवेदेवं साधकानां सुसिद्धिदः ।
 अक्षाक्ष मालिका पात्र ध्वजयुक् स्पर्शनाभिधः ॥
 कपाल ध्वजपाशाङ्ग-धारको वायुनामकः ।
 मातरिश्वा कपाला-ङ्ग-ध्वज-पात्र-करो मतः ॥
 ध्वजाक्षसूत्र-पाशाङ्गं विभ्राणः स्यात्प्रदागतिः ।
 ध्वजा-सि-खेट-पाशाणि धारयंस्तु महाबलः ॥
 ध्वज-पाश-कपाला-ङ्ग-संयुतो बलवर्द्धनः ।
 पाशा-क्षसूत्र पाशा-ङ्ग-धारकः पूषदम्बकः ॥
 अक्षसूत्र-गदा-कम्ब-ध्वजी-गन्धवहाभिधः ।
 कपाल-ध्वज-पाशा-ङ्ग-हस्ताको गन्धवाहकः ॥
 शान मुद्राक्ष सूषाङ्ग ध्वजहस्तो निलो मतः ।
 अक्षमाला-सुनीला ङ्ग-ध्वज-कम्बु धराशुगः ॥
 ध्वज-वाण-धनुः कुण्डो-कारयुक् सुमुखी* भवेत् ।
 ध्वजा-ङ्ग-पात्र-सूत्राणि धारयेत् ककाराभिधः ॥
 अक्षा-क्षमालिका-पात्र-ध्वज-हस्तः समीरणः ।
 ध्वजपाशघनाङ्गानि विभ्राणस्तु समीरकः ॥
 अक्ष सूत्र ध्वजा,ङ्गानि सुखं विभ्रत्यनुत्तमः ।

* सुख इति पाठान्तरं

अक्षमाला-ध्वजा-जानि धारयन्नाहताभिधः ॥

कं गिरः ।

पथ्य-ससूच-पाशा-ज-संयुतो नागयोनिजः ।

ध्वज-मुण्डा-सपाची-स्याज्जगत्प्राणाभिधः स्मृतः ॥

ध्वज सूत्र सपाशा-ज-संयुतः पावनाभिधः ।

खट्वाङ्ग-ध्वज-खेटानि विभ्राणो वातसंज्ञकः ॥

ध्वजा-सज्जतपाशाणि धारयन्स्तु प्रभञ्जनः ।

अक्षसूत्र ध्वजा-जा-हि-पाणियुक्त्वनामकः ॥

शूला-ज-ध्वज-पात्राणि नभस्वानिति धारयन् ।

ध्वजा-कुशा-स-मुण्डानि विभ्राणोऽतिबलो मतः ॥

सध्वजा-स्य ज-पात्राङ्गस्तरस्त्रीनाम कीर्तितः ।

दण्ड मुण्ड ध्वजा-जानि धारयन् द्वादशो मतः ॥

ध्वजा-स-तर्जनी-पात्र पाणि युग् देवयज्ञकः ।

अक्षमाला कुठारा-ज-ध्वज युग्माञ्जलकः* ॥

घण्टा-स-ध्वज-मुण्डानि धारयन्सधराभिधः ।

वोधिपङ्कव-सूचा-ज-ध्वज-हस्तः सदीर्घदृक् ॥

अक्ष सूत्र-ध्वजा-शोकपात्र-युक्त्वमतिरोधनः ।

पाणिको नाम विज्ञेयो वलाक्षध्वज मुण्डयुक् ॥

ध्वजास घटपात्राणि धारयन् साधकोमतः ।

बीजपूरध्वजाजाससंयुतो विश्वपूरकः ॥

घण्टा-सध्वज-मालाभिः संयुतो जगदाश्रयः ।

* रात्रदाचक इति पाठान्तरं ।

विष्णातिरिक्तको नाम ध्वजलाभ्यन् पाश युक् ॥
 पञ्चमालाकजे धण्टाध्वजौ विभ्रत् कजागरः ।
 विश्वोदरो भवेदेष शङ्ख, शूल घट, ध्वजौ ॥
 अयगो नाम विभ्रे यो यच्चवाणधनुर्धटी ।
 त्रीफला-ज्जा-क्षपात्राणि धारयंस्तीव्रको मतः ॥
 शक्ति सुख-ध्वज पाशौ सुवहोऽयं प्रकीर्तितः ।
 पञ्च सूत्र ध्वज पाश पात्र युक् वीजवर्द्धनः ॥
 ध्वज पाश-कपालाभैर्युतो भद्रजवो मतः ।
 टङ्क-पाश-ध्वजा-ज्जानि धारयन् पुष्करोद्भवः ॥
 पलाशपत्र-पाशा-ज्ज-ध्वज-हस्तोऽजिनो पतिः ।
 जम्बुवीज-ध्वजा-ज्जाक्षपाणियुग्बद्धमूर्त्तिमान् ॥
 परिषाक्षध्वजाज्जानि धारयन् विश्वगो मतः ।
 सर्व्वं चतुर्भुजा ज्ञेया युवानः कुटिलभ्रुवः ॥
 सव्योर्ध्वाद्युत्तरोर्ध्वान्तक्रमेणायुधधारिणः ।
 रक्ताक्षश्च महावीर्याः सर्व्वं भूषणभूषिताः ॥
 धूम्रवर्णा मृगारूढाः सर्व्वे ते शवलांशुकाः ।
 इति तेऽत्र समाख्याता शुभदास्तु मरुत्तयाः ॥
 संख्यैकोनपञ्चाशत् सर्व्वरोगापनुत्तये ।

एकोनपञ्चाशत्तरुता ।

स्कान्दे ।

साध्याः पद्मासनगताः कमण्डल्वश्च सूत्रिणः ।

धर्म पुत्रामहाज्जानो द्वादशामरपूजिताः ॥

ब्रह्माण्ड पुराणे ।

मनो, सुमन्ता प्राणश्च नरयानश्च वीर्यवान् ।
वित्ति, हँर्यी, नयश्चैव हंसो, नारायणस्तथा ।
प्रभवो, विष्णु, विंशत्य साध्या द्वादश जन्मिरे ॥

साध्यानां ।

विष्णुधर्मोत्तरे ।

पद्मपत्रसवर्णाभौ पद्मपत्रसमाम्बरी ।
द्विभुजौ देवभिषजौ कर्त्तव्यौ देहसंयुतौ ॥
सर्वाभरणसम्पन्नौ विशेषाश्चाहसोचनौ ।
तयोरीषधयः कार्य्या दिव्या दक्षिणहस्तायोः ॥
वामयोः पुस्तके कार्य्यं दर्शनीये तथा द्विज ।
एकस्य दक्षिणे पार्श्वे वामे वान्यस्य यादव ॥
नारीयुगं प्रकर्त्तव्यं सुरूपञ्चारदर्शनम् ।
तयोश्च नामनी प्रीक्ते रूपसम्पत्तद्याकृतिः ॥
मधूकपुष्पसङ्काशा रूपसम्पत् प्रकीर्त्तिता ।
आकृतिः कथिता लोके धरकाण्डनिभा तथा ।
रत्नभाण्डकरे कार्य्यं चन्द्रशक्ताम्बरे तथा ॥

अश्विनौ ।

दृष्टस्यः सूर्यवत् कार्य्यो देवन्तश्च तथा प्रभुः ।

देवन्तस्य ।

मय संग्रहे ।

यत्नरूपाणि ।

तुन्दिला हिभुजाः कार्या निधिहस्ता मदीत्कटाः ।
 गद्दी वैश्रवणः प्रेष्ठो नृपालस्वष्टमो वरः ॥
 सिद्धार्थी मणिभद्रश्च सुमना नन्दनो यथाः ।
 कण्ठूतिः पाञ्चकः शङ्खो मणिमान् पद्म, रामकौ ॥
 सर्वभोजी पिङ्गाक्षस्तुरो मन्दराश्रयः ।
 शम्भुश्चन्द्रप्रद्योतमेघवर्णजयावहाः ॥
 द्युतिमान् केतुमान् खेतोमौलिमान् विजयाकृतिः ।
 पद्मवर्ण महाघास पुष्पदन्ताः सुदर्शनाः ॥
 पूर्णमास, हिरण्णाक्ष, शतजिह्व, बलाहकाः ।
 वलाक, विपुलौ पद्मनाभः कुमुद, वीरकौ ॥
 सुगन्धद्वयमी यक्षास्तेषां राजा धनाधिपः ।

यत्नरूपनिर्माणं ।

राक्षसरूपं मयदीपिकायां ॥

रत्नवस्त्रधराः कृष्णा नखदीर्घाः सदंष्ट्रिकाः ।
 कार्त्वी-खट्वाङ्ग-हस्ताश्च राक्षसा घोररूपिणः ॥
 हेति प्रहेति यत्नश्च शङ्ख, च सनवन्धनाः ।
 विद्युत्, सर्ज, मनुष्याद्, पौरुषेय सुकोशिनः ॥
 उग्रमास्तीत्यमी प्रोक्ताः प्रधाना राक्षसाः किल ।
 भूतास्तथैव दानाश्च दीर्घवक्त्राः पिशाचकाः ॥

इति राक्षस भूत पिशाच रूपनिर्घाषम् ।

वरदो भक्तलोकानां किरीटी कुण्डली गद्दी ॥
कार्ष्ण्यस्य रूपी गन्धर्वी वीचावाद्यरतस्तथा ।

गन्धर्वाः ।

नागरूपास्त्राह विम्बकर्णा ॥

भगन्तो रत्नकायस्य शितपङ्कजमालिकः ।
श्रतसाहस्रभोगोऽङ्घ्रिः शिरःकुवलयान्वितः ॥

वासुकिः ।

श्वेतदेहस्य कर्त्तव्यः स्फुरन्धौक्तिकसन्निभः ।
रत्नाङ्गः स्वस्तिकोपेतः सुतेजास्तचको महान् ॥
छाण्यः कर्कोटकः कण्ठे शुक्लरेखात्रयान्वितः ।
रत्नपद्मनिभः पद्म शिराः शुक्लेषुविद्रुमान् ॥
शङ्खवर्णो महापद्मो मस्तके छाण्यशूलधृक् ।
हेमाभः शङ्खपालः स्वात् सितरेखाधरो गले ॥
कुलिको रत्नदेहस्तु चन्द्रार्धकृतमस्तकः ।
द्विजिह्वो बाहवः सप्त फणामणिसमन्वितः ॥
अक्षसूत्रधराः सर्व्वे कुण्डिकापुच्छसंयुताः ॥
एकभोगा स्त्रिभोगावा ह्येतज्जायासुतादयः ।

इति नागरूपनिर्घाषम् ।

आह मयः* ॥

* यम इति कश्चिन् पाठः ।

कुम्भपद्म, विष्टरक्षाः पितरः पिण्डपात्रिणः ।

विष्णुधर्मोत्तरे ।

प्रभाकरा बर्हिषदो अग्निष्वात्तास्तथैव च ।

क्रव्यादा खीपद्मताश्च भ्राज्यपाश्च सुकालिनः * ॥

पितरः ।

वायु पुराणात् ।

ऋतु दंष्ट्रो वसुः सत्यः कालको धुरिलोचनौ ।

पुरूरवा माद्रवाश्च विश्वे देवा दश स्मृताः ॥

विदेहास्तु प्रकर्त्तव्या दक्षिणे वाणपाणयः ।

कर्त्तव्या वामभागे तु शरासनपरायणाः † ॥

विश्वे देवाः ।

विश्वकर्मा ।

षड्त्रिंशद्भुले खड्ग शक्ती तालाधिकौ मतौ ।

शूलपाशौ पद्मशङ्खौ तालमाशौ प्रकीर्त्तितौ ॥

गदा हितालपाशश्च गोलकाष्ठप्रमाणतः ।

बाणो हितालको दण्डो द्विगुणो द्वादशाङ्गुलः ॥

कपालं पद्मजं चर्म पाशखड्गाङ्गुली मतः‡ ॥

* अग्निष्वात्ता कथाशैल्या बर्हिषकसप्तयोरुपाम् सुकालिनोवर्हिषद आभ्यां
व्यापं संपद्ये तत इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† कुशासन परायणा इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ कपालं पद्मजं तद्वत् र्पणोटाङ्गुलीमन इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

उमरुं सुखना घण्टा हुरिका षोडशाङ्गला ॥
 वज्रं तत् पुरुषखूलं कर्कशोऽतिदृढो वलौ ।
 शक्तिस्तु योषिताकारा लोहिताङ्गी वृकान्त्रिता ॥
 दण्डोऽपि पुरुषः क्षणो घोरो लोहितलोचनः ।
 खड्गश्च पुरुषः श्यामशरीरः क्रुद्धलोचनः ॥
 पाशः सप्तफणः सर्पपुरुषः पुच्छसंयुतः ।
 ध्वजस्तु पुरुषः पीतो व्यावृतास्यो महाबलः ॥
 गदा पीतप्रभा कन्या सुपीनजघनख्यला ।
 त्रिशूलं-पुरुषो दिव्यः सुभ्रूः श्यामकलेवरः ॥
 शङ्खोऽपि पुरुषो दिव्यः शक्ताङ्गः शुभलोचनः ।
 हेतिर्व्यङ्गितीर्थी शास्त्रे भीमः श्यामतनुः पुमान् ॥
 शरः स्यात् पुरुषो दिव्यो रक्ताङ्गो दिव्यलोचनः ।
 धनुः स्त्री पद्मरक्ताभा मूर्द्धि पूरितचापभृत् ॥
 एव मस्त्राणि पूतानि जानीयात् परमेश्वरे ।
 उक्तानां चैव सर्वेषां मूर्द्धिं स्वायुधलाञ्छनम् ॥
 भुजो ह्ये तु प्रकर्त्तव्या स्कन्धलम्बो सदा वधैः ।

इत्यस्त्रनामप्रक्रमः ।

धर्मं ज्ञानं च वैराग्यमैश्वर्यं च तथैव हि ॥
 सितरक्तपीतकृष्णसिंहरूपाः प्रकीर्त्तिताः ।

धर्मं, ज्ञानं, वैराग्यं, श्रद्धाणि ।

शक्तवर्णा मही कार्या दिव्याभरणभूषिता ।
 चतुर्भुजा सौम्यवपुश्चन्द्रांसदृशाम्बराः ॥

रत्नपात्रं सस्त्रपात्रं पात्रमौषधिसंयुतम् ।
 पद्मं करे च कर्त्तव्यं भुषो यादवनन्दन ॥
 दिग्गजानां चतुर्णां चार्थ्यां पृष्ठगता तथा ।
 सर्वौषधियुता देवी शृङ्गवर्षा ततः क्लृता ॥

पृथ्वी ।

लवणोदः प्रकर्त्तव्यो द्विभुजः सर्वसिद्धये ।
 धत्ते जमास्तिकां दक्षे वामे पात्रं तु रत्नभृत् ॥
 सोत्तरीयोपवीती च पाटलाभः सुवस्त्रधृक् ।
 बहिःपवित्रपाणिस्तु लाभदो भूतिमण्डितः ॥

लवणोदः ।

क्षीरोदः श्वेतवर्षस्तु द्विभुजो रत्नकुण्डलः ।
 मकरस्थोऽम्बुजन्दने वामे तु कलशं दधत् ॥

क्षीरोदः ।

दधिमण्डोद एवात्र विष्णो यो वारिजासनः ।
 दण्डं गङ्गं च विभ्राणो द्विभुजोऽसौ जटायुतः ॥

दधिमण्डोदः ।

हृत्तोदः कपिलो ज्ञेयः कुक्षीरस्थो जटाधरः ।
 काशेरुपीतं पात्रञ्च घटं विभ्रत्तु दीर्घये * ॥

हृत्तोदः ।

रघूदीन प्रकर्त्तव्यो गोमूत्रसदृशच्छविः ।

* दिग्गजपिनिति वा पाठः ।

दुर्मुखो घटं दण्डं विभाषो नीलकुण्डलः ॥

दुर्बुधः ।

सुरोदो गण्डकान्तको ज्येष्ठी गोमेदसन्निभः ।

सुन्नरं कृष्टिकां विभक्तं विभुजो भूतिवर्धनः ॥

सुरोदः ।

स्वादुदो मौक्तिकाभासो दुर्मुखो सुवेशधृक् ।

मुक्तासुवार्धपात्रे च धारयन् सर्पभूषणः ॥

वैश्वर्यसदृशः सर्वं विभुजाः कल्पयन्विताः ।

पद्मजम्बुः प्रकर्षण्यः देवताकल्पनाय तु ॥

ससुद्रः ।

क्षीप,वर्ध,नगाः सर्वं कामरूपधरा यतः ।

प्रेषायुधान्विताः कार्य्याः स्र स्र चिह्न धरानराः ॥

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

पूर्वा गजगता वासा रक्तवर्षा तु दिग् भवेत् ।

पद्मजम्बु प्रतिप्रेया करेण्डकतद्वत्सका ॥

वृहद्वज्रा वृहत्काया पद्माभा पूर्वदक्षिणा ।

रथस्था दक्षिणा पीता तथा स्वात् प्राप्तयौवना ॥

उष्ट्रगा कृष्णपीता च तद्वशी याव्यपश्चिमा ।

यौवनाद्विष्णुता कृष्णा पश्चिमा तुरगास्त्रिता ॥

आसन्नपक्षिता नीला वृषगा तदनन्तरा * ।

* वनपूर्वावाचनकारनि पुस्तकान्तरे पाठः ।

श्वेता नरपत्नी हृद्गा च तथा भवति चाक्षरा ॥
 अतिहृद्गा हृषस्या च शुक्ला पूर्वोत्तरा भवेत् ।
 अधस्तात् पृथिवी तुष्या चीर्णा गगनसंस्थिताः ॥
 चतुर्हन्ते गजे शक्तः श्वेतः कार्य्यः सुरेश्वरः ।
 वामोत्सङ्गता कार्य्या तस्य भार्य्या शची नृप ॥
 नीलवस्त्रा सुवर्णाभः सर्वाभरणवांस्तथा ।
 तिर्यग् ललाटके तार्क्ष्यः कर्त्तव्यश्च विभूषितः ॥
 शक्तश्चतुर्भुजः कार्य्यो द्विभुजा च तथा शची ।
 पद्माङ्गुली च कर्त्तव्यौ वामदक्षिणहस्तयोः ॥
 वामं शचीपृष्ठगतं द्वितीयं वज्रसंयुतम् ।
 वामे श्व्याः करे कार्य्या रथ्याः सन्तानमञ्जरी ॥
 दक्षिणं पृष्ठविन्ध्यस्तं देवराजस्य कारयेत् ।

इन्द्रः ।

रक्तं जटाधरं वज्रं कारयेद्ब्रह्मवाससम् ।
 ज्वालामालाकुलं सौम्यं चिनेत्रं श्लशुधारिणं ॥
 चतुर्बाहुं चतुर्दंष्ट्रं देवेशं वायुसारथिम् ।
 चतुर्भिश्च शुकैर्युक्ते धूर्माचक्ररथे स्थितम् ॥
 वामोत्सङ्गता स्वाहा शक्तस्यैव शची भवेत् ।
 रत्नपात्रकरा देवी वज्रेर्दक्षिणहस्तयोः ॥
 ज्वाल त्रिशूले कर्त्तव्ये त्वक्षमामात्यश्च वामके ।

अग्निः ।

सजलाम्बुदसञ्छायः तप्तचामीकराम्बरः ।

महिषस्थश्च कर्त्तव्यः सर्वाभरणवान् यमः ॥
 नीलोत्पलाभां धूम्रोर्णां वामोत्कृष्टं च कारयेत् ।
 धूम्रोर्णां द्विभुजा कार्य्या यमः कार्य्यं चतुर्भुजः ॥
 दण्डखड्गवावुभौ कार्य्यो यमदक्षिणहस्तयोः ।
 ज्वाला त्रिशूला कर्त्तव्या त्वक्षमाला च वामके ॥
 दण्डोपरि मुखं कार्य्यं ज्वालामालाविभूषणम् ।
 धूम्रोर्णां दक्षिणे हस्ते यमपृष्ठगतो भवेत् ॥
 वामे तस्याः करे कार्य्यं मातुलाङ्गं सुदर्शनः ।
 पार्श्वे तु दक्षिणे तस्य चित्रगुप्तं तु कारयेत् ॥
 उदीच्यावेधं स्वाकारं द्विभुजं सौम्यदर्शनं ।
 दक्षिणे लेखनी तस्य वामे पत्रं तु कारयेत् ॥
 वामे पाशधरः कार्य्यः कालो विकटदर्शनः ।

यमः ।

विरूपाक्षो विहृत्तास्यः प्रांशुदंष्ट्रो ज्वलाननः ।
 ऊर्ध्वकोशो हरितश्मश्रुः द्विबाहुर्भीषणाननः ॥
 वर्षेन कृष्णरत्नाङ्गः कृष्णाम्बरधरस्तथा ।
 सर्वाभरणवानुष्टुदण्डरश्मिकरस्तथा ॥
 भार्यासतस्तः कर्त्तव्या देवी च निर्ऋतिस्तथा ।
 कृष्णाङ्गो कृष्णवदना पाशहस्ता तु वामतः ॥

निर्ऋतिः ।

सप्तहंसे रथे कार्य्यीं वरुणी यादसाम्प्रतिः ।
 खिन्धवैदर्य्यं संकाशः श्रेताम्बरधरस्तथा ॥

(१८)

किञ्चित्प्रलम्बजठरो सुक्ताहारविभूषितः ।
 सर्वाभरणवान् राजन् महादेवसतुर्भुजः ॥
 वामभागगतं केतुं मकरं तस्य कारयेत् ।
 छत्रं तु सुशितं मूर्ध्नि भार्या सर्वाङ्गसुन्दरी ॥
 वामोत्सङ्गगता कार्या मध्ये तु हिभुजा नृप ।
 उत्पलं कारयेत् वामे दक्षिणं देवपृष्ठगम् ॥
 पद्मपाशौ करे कार्या देवदक्षिणहस्तयोः ।
 शङ्खश्च रत्नपाशश्च वामयोस्तस्य कारयेत् ॥
 भागे तु दक्षिणे नङ्गा मकरस्या सचामरा ।
 देवी पद्मकरा कार्या चन्द्रगौरी वरानना ॥
 वामे तु यमुना कार्या कूर्मसंस्था सचामरा ।
 नीलोत्पलकरा सौम्या नीलनीरजसन्निभा ॥

वरुचः ।

वायुरम्बरवर्षस्तु तदाकाराम्बरी भवेत् ।
 कोष्ठपूरितचक्रस्तु हिभुजो रूपसंस्थितः ॥
 गमनेच्छा शिवा भार्या तस्य कार्या च वामतः ।
 कार्या गृहीतवक्त्रान्तःकराभ्यां पवनो विजः ॥
 तत्रैव देवी कर्त्तव्या शिवा परमसुन्दरी ।
 व्यावृतास्त्रस्तथा कार्या देवीव्याकुल मूर्धनः ॥

वायुः ।

कर्त्तव्यः पद्मपत्राभो वरदो नरवाहनः ।
 चामोकराभो वरदः सर्वाभरणभूषितः ॥

लम्बोदरसतुर्वाहुर्व्यामपिङ्गललोचनः ।
 उदीच्यवेषः कवची हारभारार्दितो हरः ॥
 हे च दंष्ट्रे मुखे तस्य कर्त्तव्ये म्लशुधारिणः ।
 वामेन विभवा* कार्या मौलिस्तस्यारिमर्द्दन ॥
 वामोक्त्वागता कार्या बुद्धिर्वी वरप्रदा ।
 देवपृष्ठगतं पार्श्विर्हभुजायास्तु दक्षिणम् ॥
 रत्नपात्रधरं कार्यं वामं रिपुनिसूदन ।
 गदा-शक्ती च कर्त्तव्ये तस्य दक्षिणहस्तायोः ॥
 सिंहाकलक्षणं केतुं शिविकामपि पादयोः ।
 शङ्ख-पद्मनिधौ कार्यौ सुरूपो निधिसंस्थितौ ।
 शङ्ख-पद्माञ्जलिकान्तं वदनं तस्य पार्श्वयोः ॥

धनदः ।

विष्णुधर्मोत्तरात् ॥

नीलोत्पलाभं गगनं तद्वर्णावरधारि च ।
 चन्द्रार्कहस्तं कर्त्तव्यं द्विभुजं सौम्य दर्शनः ॥

आकाशम् ।

चतुरस्रं भवेन्मूलं ततो वृत्तं मन्दाभुज ।
 तत्सुखचतुरस्रञ्च मेरुवत् संस्थितं शुभम् ॥
 भद्रपीठमथः प्रोक्तो व्योमभागस्त्रितीयकः ।
 सश्वसत्तुरस्रं च मध्यभागः प्रकीर्तितः ॥

भद्रपीठवदन्यच्च तत्र पद्मं न्यवेदयेत् ।
शुभाष्टपत्रं तन्मध्ये कर्णिकायां दिवाकरः ॥
पद्माष्टके न्यसेत्तस्य दिक्पालान् सर्व्वतोदिशः ।

थीम ।

विष्णुरूपधरः कार्य्यो भ्रुवो यज्ञगणेश्वरः ।
चक्ररश्मिकरः त्रीमान् द्विभुजः सौम्यदर्शनः ॥

ध्रुवः ।

रविः कार्य्यः शुभश्मश्रूः सिन्दूराक्षसुप्रभः ।
उदौच्यवेधः स्वाकारः सर्वाभरणभूषितः ॥
चतुर्वीहूर्ध्वहातिजा कवचेनाभिसंहृतः ।
कर्त्तव्या रसना चास्य पातीयाङ्गितिसंज्ञिताः * ॥
रश्मयस्तस्य कर्त्तव्या वामदक्षिणहस्तयोः ।
जर्द्धं स्रग्दामसंखाना सर्व्वपुष्पचिता शुभा ॥
स्वरूपरूपः स्वाकारी दण्डः कार्य्योस्य वामतः ।
दक्षिणे पिङ्गले भागे कर्त्तव्याश्चातिपिङ्गलः ॥
उदौच्यवेधो कर्त्तव्यो तावुभावपि यादव ।
तयो सुर्द्धिं च विन्यस्तौ करौ कार्य्यो विभावसोः ॥
लेखनी पत्रकौ कार्य्यो पिङ्गलश्चातिपिङ्गलः ।
चर्म-शूल-धरो देवस्तथा यज्ञाद्विधीयते ॥
सिंहो ध्वजश्च कर्त्तव्यस्तथा सूर्य्यस्य वामतः ।

* बावोर्ध्वाङ्गे निचञ्जिता इति पाठान्तरं ।

† पत्रकरश्च कार्य्यो भवतीति पाठान्तरं ।

चत्वारणास्य कर्त्तव्यास्तनया तस्य पार्श्वयो ॥
 रेवन्तश्च यमश्चैव मनुहितयमेव च ।
 पद्मराजो रविः कार्य्या ग्रहैर्ष्या परिवारितः ॥
 राक्षी सवर्णा छाया च तथा देवी सुवर्चसा ।
 चतस्रणास्य कर्त्तव्या पद्माश्च परिपार्श्वयोः ॥
 एकचक्रे च समाश्लेषणश्चैवा रथोत्तरे ।
 उपविष्टस्तु कर्त्तव्यो देवो ह्यारण्यसारथिः ॥

मत्स्यपुराणात् ।

पद्मामनः पद्मकरः पद्मगर्भदलद्युतिः ।
 समाश्लेषणसंस्थश्च द्विभुजश्च सदागतिः ॥

सूर्यः ।

चन्द्रः श्वेतवपुः कार्य्याः श्वेताम्बरधरः प्रभुः ।
 चतुर्बाहुर्धृष्टातेजाः सर्वाभरणभूषितः ॥
 कुमुदी च सितौ कार्य्या तस्य देवस्य हस्तयोः ।
 कान्तिर्भूतिर्मती कार्य्या तस्य पार्श्वे तु दक्षिणे ॥
 वामे शोभा तथा कार्य्या रूपेणाप्रतिमा भुवि ।
 चिह्नं तथास्य सिंहाङ्कं वामपार्श्वेऽकीवद्भवेत् ॥
 दशाश्लेषे च रथे कार्य्या ई चक्रे वरसारथी ।

मत्स्यपुराणे ।

श्वेतः श्वेताम्बरधरः श्वेताश्वः श्वेतभूषणः ।

गदापाणिर्द्विवाहुश्च कर्त्तव्यो वरदः शशी ॥

चन्द्रः ।

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

भौमोऽग्नि तुष्यः कर्त्तव्यस्त्वष्टास्त्रे काञ्चने रथे ।

मत्स्यपुराणात् ।

रत्नमाख्याम्बरधरः शक्तिशूलगदाधरः ।

चतुर्भुजो मेघगमो वरदः स्थावरसुतः ॥

भौमः ।

विष्णुधर्मोत्तरात् ॥

विष्णुतुष्यो वधः कार्यो भौमतुष्ये तथा रथे ॥

वुधः ।

तप्तजाम्बूनदाकारो द्विभुजश्च वृद्धस्यतिः ।

पुस्तकं चाक्षमालाञ्च करयोस्तस्य कारयेत् ।

सर्वाभरणयुक्ताश्च तथा पीताम्बरो गुरुः ॥

गुरुः ।

अष्टाश्वे काञ्चने दिव्ये रथे वृद्धिमनोरमे ।

शुक्रः श्वे तवपुः कार्यः श्वे ताम्बरधरस्तथा ॥

श्वी कारो कथितो तस्य निधिपुस्तकसंयुतो ।

दयाश्वे च रथेः कार्यो राजते भृगुनन्दनः ॥

शुक्रः ।

लक्षणासास्तथा लक्ष्यः शनिः कार्य्यः शिताजनः ।
दण्डाक्षमालासंयुक्तः करद्वितयभूषणः ॥
कार्पायसे रथे कार्य्यस्तथैवाष्टतुरङ्गभिः ।

शनिः ।

रौप्ये रथे तथाष्टाश्ले राहुः कार्य्यो विचक्षणैः ।
कम्बलं पुस्तकं कार्य्यं भुजेनैकेन संयुतं ।
करमेकन्तु कर्त्तव्यं शस्त्रं शून्यन्तुदक्षिणं ॥

राहुः ।

भीमवच्च तथा रूपं केतोः कार्य्यं विजानता ।
केवलं चास्य कर्त्तव्याः दशराजंस्तुरङ्गमाः ॥

केतुः ।

विश्वकर्म्मयाज्ञान् ।

तिथयोद्भङ्गुनीच्यन्ते प्रतिपद्भिर्भुजावृणा ।
मेघगा शक्तिपात्रा सा सितपद्मादिमा मता ॥

प्रतिपद्ः ।

द्वितीया हंसगा शुभ्रा पात्रपुस्तकधारिणी ॥

द्वितीयायाः ।

तृतीया ह्रस्वगा गौरी भूषणपात्रधरा मता ॥

द्वतीयायाः ।

नीलोत्पलदलाभासा चतुर्थी मूषकस्थिता ।
परशुं विभ्रती पात्रं पीतवस्त्रा-श्चिसंयुता ॥

चतुर्थ्याः ।

पङ्कजस्था प्रबालाभा फणामस्तकमूषणा ।
शङ्खं मुद्रां तथा पाशं विभ्राणा पञ्चमी मता ॥

पञ्चम्याः ।

मयूरगारुणा षष्ठी पात्र कुङ्कुटधारिणी ॥

षष्ठ्याः ।

ताम्रवर्णाङ्गपात्रा सा हयस्था सप्तमी मता ।

सप्तम्याः ।

घण्टापात्रधरा गोस्था गोक्षीर धवलाष्टमी ॥

अष्टम्याः ।

नवमी सिंहगा युक्ता पाश पात्र-धराशुभा ॥

नवम्याः ।

कृष्णवर्णा लुलापस्था दशमी दण्डपात्रिणी ॥

‘लुलापो, मङ्घ्रिषः ।

दशम्याः ।

एकादशी शृगालस्था तुला-कर्करिकायुता ।
सिंहाननाऽरुणगला-तुन्दिला* सासिनी परा ॥

एकादश्याः ।

द्वादशी गरुडारूढा मेघवर्णारपात्रिणी ॥

अरं, चक्रम् ।

द्वादश्याः ।

त्रयोदशी चाप-वाण-धरा गौरी मकरस्था त्रयोदशी ।

त्रयोदश्याः ।

अजस्था पाटलाभा सा पलपात्रसुरा भृता † ।
नीलकण्ठेन्द्रगोपाभलीचनेयं चतुर्दशी ॥

चतुर्दश्याः ।

अश्रमा पोषिमा शुभ्रा मौक्तिकाभरणान्विता ।
सुधापूर्णघटा धीर वामदक्षिणवाहुका ‡

पोषमास्याः ।

धूसरा कृष्णपद्माद्या मारसंस्था चतुर्मुखा ।
अक्षसूतं सुवं पुस्तीपात्रं धत्ते चतुर्भुजा ॥

कृष्णप्रतिपदः ।

द्वितीया कुसुदाभासा वृक्षस्थाऽऽ साक्षकुण्डिकाः ।

* तुन्दिलीति पुलकनये पाठः ।

† सुराभृतेति क्वचित् पाठः ।

‡ वृक्षेति क्वचित् पाठः ।

कृष्णद्वितीयायाः ।

द्वितीया तार्क्ष्या नीला शङ्खपात्रधरा द्विदोः ।

कृष्णद्वितीयायाः ।

चतुर्थी कज्जलाभा सा महिषस्था चतुर्भुजा ।
धत्ते क्षमालिकां दण्डं पाशं पात्रञ्च दंष्ट्रिणी ॥

कृष्णचतुर्थ्याः ।

ग्राह्या चन्द्रगौराभा पञ्चमी सा चक्रुण्डिका ।

कृष्णपञ्चम्याः ।

त्रयसा मयूरगा रक्ता शक्ति कुक्कुट धारिणी ।
एकास्या द्विभुजा षष्ठी रक्तवस्त्रा सुभूषणा ॥
नीलकुन्तलकण्ठा सा जटाखण्डेन्दुभूषिता ।

कृष्णषष्ठाः ।

इभस्था सप्तमी गौरा द्विभुजा वज्रपात्रिणी ।

कृष्णसप्तम्याः ।

प्रेतगा वाष्टमी रक्ता कृष्णपीवा शितांशुका ।
अक्षं खड्गं तथा खेटं पात्रं धत्ते चतुर्भुजा ॥

कृष्णाष्टम्याः ।

सर्पगा नवमी नीला दंष्ट्रिणी पात्रतर्जनी ।

कृष्ण नवम्याः ।

सिंहासनस्थिता शुभ्रा दशमी पीतकुण्डला ।
ज्ञानमद्राक्षपात्रेयं पीतवस्त्राञ्जमालिनी ॥

कृष्णदशम्याः ।

एकादशी वृषस्याजनीलशुभ्रारगूलिनौ * ।

कृष्णैकादश्याः ।

ताम्रवर्णा रघारूढा पात्र-खेटा-सि पङ्कजा ।
द्वादशी शुभ्रवस्त्रेयं नीलकुण्डलभूषिता ॥

कृष्णद्वादश्याः ।

अशोककलिका वाण-चाप-पात्रा त्रयोदशी ।
मेचकाजासना श्यामा हरिद्वस्त्रा मदालसा ॥
गदा-पात्रधरा गौरा निधिस्या वा त्रयोदशी ।

कृष्णत्रयोदश्याः ।

द्विभुजा तुरगारूढा कृष्णवर्णा चतुर्दशी ।
खड्गभक्षधरा नीलकुण्डला शुक्रभूषणा † ॥

कृष्णचतुर्दश्याः ।

* नीलवृषभा चिह्नं जिनोति क्वचित् पाठः ।

† शुक्रभूषणेति क्वचित् पाठः ।

अमावास्या विधातव्या हिदीर्भरकतप्रभा ।
दर्भासनस्थिता चैयं दर्भपिण्डधरा कृशा ॥

अमावास्यायाः ॥

अथ नक्षत्ररूपाणि कथयामि समासतः ।
तत्रादावश्विनी ज्ञेया पद्मपत्रनिभा शुभा ॥
अश्वक्लाम्बुजारूढा द्विभुजा च सिताम्बरा ।
दक्षे दिव्यौषधीपात्रं विभ्रती पुस्तकं करे ॥

अश्विन्याः ।

भरणी महिषारूढा गजवक्त्राङ्गनप्रभा ।
दण्डपाशधरालुग्रा रक्तदृक् परिकीर्त्तिता ॥

भरण्याः ।

छागस्या छागवक्त्रास्या पिङ्गभ्रूकेशलोचना ।
सूत्रं शक्तिश्च विभाषा पीनाङ्गजठराक्षया ॥
कीर्त्तिका कीर्त्तिता चैयं स्वर्णमालाविभूषणा ।

छत्तिका ।

रोहिणी तुष्टिनाभासा सर्पवक्त्रा तु हंसगा ।
सूत्र-कुण्डीधरा देवी कीर्त्तिता हारभूषणा ॥

रोहिण्याः ।

सृगामना हयास्या वा नागवक्त्रायहायिणी ।

दृध्नस्या चन्द्रगौराभ कुण्डिका जयमालिनी ॥

मृगशीर्षायाः ।

श्वमुखी क्षणवर्षा तु रक्ताद्रा शूलपाणिनी ।
नीलवस्त्रा वृषारूढा वास्थिमाला विभूषणा ॥

आर्द्रायाः ।

शूकरास्यो विडालस्यो गौरवर्णः पुनर्वसुः ।
सूत्र-वज्रा-कुशा-भीतीर्बिभ्राणः परिकीर्त्तितः ॥

पुनर्वसोः ।

छागारूढश्च मेघाभः पुथ्यं मधुपिङ्गभाक् ।
अक्षचण्डासनी कुण्डी दधानोत्र चतुर्भुजः ॥

पुथ्यस्य ।

कोकास्या वा विडालास्या रक्ताश्लेषा चतुर्भुजा ।
अक्ष-कुण्डीधरा हाभ्यां सर्पलिङ्गनकारिणी ॥

अश्लेषायाः ॥

कपिवक्त्रा मघा श्यामा क्षयाङ्गी च महीदरा ।
दर्भ-पिण्डधराजस्या दिभुजेयमुदीरिता ॥

मघायाः ।

पूर्वा हस्तिमुखा स्फुट्या शुकहस्ताद्वयावशा ।

स्तः, चक्रम् ।

पूर्वायाः ।

व्याघ्राननीत्तरा गोखा शुभ्रवर्षा चतुर्भुजा ।
 हासिणी सूत्र-खट्वाङ्ग-धारिणी परिकीर्तिता ॥
 उत्तरायाः ।

गौराक्षी सुखापाखी हस्तनामा ह्यस्त्रितः ।
 अक्षवच्चभुजहन्त्री भूतिदः परिकीर्तिताः ॥
 हस्तस्य ।

व्याघ्रास्या महिषारूढा चित्रा गौरा चतुर्भुजा ।
 अक्षकुण्डी सपुत्री च सुधापूर्वघटान्विता ॥
 चित्रायाः ।

महिषस्त्रा मृगारूढा* गौरा श्यामाक्षवा मता ।
 पीना चतुर्भुजा स्वात्स्यक्ष-कुश-ध्वज-पात्रिणी ॥
 स्वात्याः ।

हर्यक्षवदना रक्ता नाभिपादान्तशेमभा ।
 मेघ-च्छागस्त्रिता सेयं विशाखाद्गुण वज्रिणी ॥
 वामे शक्तिमधः पात्रं विश्वाद्या शेमभूषणा ।

विशाखायाः ।

* मृगारूढेति कश्चित् पाठः ।

हरिणा च विद्यासाया द्विभुजाभुजवज्रिणी ।
मूर्धादिनाभि-पादान्तश्यामगौरा क्रमेष तु ॥
अनुराधा परिश्रेया पद्मरागविभूषणा ।

अनुराधायाः ।

पीतवर्णा गजाकृता भक्ताया वा मृगानना ।
अक्षसूत्रं पवित्र्यते वामे ज्येष्ठाङ्गुलं शये ॥

ज्येष्ठायाः ।

मूलरूपं विधातव्यं श्यामं कुक्षपवाहनम् ।
खड्गखेटधरं शीघ्रं द्विभुजस्य वृकाननम् ॥

मूलस्य ।

कुम्भीरवदना नीला मर्कटस्या चतुर्भुजा ।
अक्षसूत्रं कजं पाशं वाचं या विभ्रती सदा ॥
पूर्वाषाढा समुद्दिष्टा पीतवस्त्राजभूषणा ।

पूर्वाषाढायाः ।

सर्पगा शीतराषाढा गोरवर्णा सुरपिपी ।
नागवन्धजटाजूट-सर्पकुच्छ-भूषिता ॥
अक्षनागधरा दक्षे वामे पुस्तौ सकुण्डिका ।

उत्तराषाढायाः ।

अभिहित् कुमुदाभा सा नक्रवक्त्रा तु हंसगा ।

वरशुक-पुस्तका-भीति-संयुतेयं चतुर्भुजा ॥

अभिजितः ।

नीलरुक् तुरगारूढा श्वणो मर्कटाननः ।
शङ्ख-चक्र-गदा-जानि विभ्राणः स्वर्णमूषणः ॥

श्वणस्य ।

तप्तचामीकराभा सा निधिस्था पङ्कजासना ।
पक्कविम्बाधरा तन्वी पीनोन्नतपयोधरा ॥
दीर्घवेणो सपुष्पा सा मौक्तिकाभरणान्विता ।
चारुनेत्रा सुवेषाठगा द्विभुजा वसनारुणा ॥
वरालयान्विता सौम्या धनिष्ठा परिकीर्तिता ।

धनिष्ठायाः ।

शुभ्रा मकरगाऽश्वास्या द्विभुजा पाशपात्रिणी ।
पाटला वस्त्रसंयुक्ता कीर्तिता शततारका ॥

शतताराः ।

पूर्वा भाद्रपदा शुभ्र गोवत्सा ह्यागगामिनी ।
मेषशीर्षधरा सेयं सौधुपात्रञ्च बिभ्रती ॥

पूर्वभाद्रपदायाः ।

गर्धभास्या वृषारूढा सिता भाद्रपदेत्तरा ।
पात्रञ्च डमरुन्धते द्विभुजेयमदीरिता ॥

उत्तरभाद्रपदायाः ।

रेवती करभास्यास्या द्विभुजा हस्तिगामिनी ।
कमलं कुण्डिकाश्वत्थे श्वेतवर्णा महास्रना ॥

रेवत्याः ।

अथ योगानां ।

विष्कम्भः प्रथमो ज्ञेयः पीतवर्णस्तु षड्भुजः ।
रक्तास्यो नीलकण्ठस्तु वृत्तनेत्रः सुभोग्णः ॥
विशालभालो दीर्घाङ्गस्तङ्गनासो जटाधरः ।
लघ्वकर्णैर्द्विनीलोत्थस्र्णरत्नजकुण्डलः ॥
शुभ्रनीलेन्द्रगोपाभवसनः स्वर्णभूषणः ।
सुह्ररं प्रथमे दक्षे द्वितीये कर्त्तरीमिह ॥
तृतीये कुलिशं पाणी वामाद्ये टङ्गमेव च ।
श्वेनपुच्छं द्वितीये च तृतीये चामृतं घटं ॥
विभ्राणः पूजनीयैः पीतपुष्पैः सुगन्धिभिः ।
कार्यनिष्पत्तये नूनमन्यथा विभ्रदायकः ॥

विष्कम्भस्य ।

प्रीतिनामा द्वितीयस्तु जवाकुसुमसन्निभः ।
श्वेतवक्त्रो विशालाक्षो लघ्वकर्णैर्द्विकुण्डलः ॥
भालालितिलकोपेतः सौम्यो मुक्ताविभूषणः ।
श्वेतवस्त्रो जटामौलिरष्टवाहुर्ह्रकोदरः ॥
बभ्रुष्याङ्गजीवीत्थमल्लिकामादिमे यमे ।

(२१)

द्वितीये मे दकं पाणौ तृतीये कदलोफलं ॥
 चतुर्थे पङ्कजञ्चैव वामाद्ये चासृतं घटं ।
 द्वितीये चात्र वै पात्रं सोमपूर्णं मनोहरं ॥
 तृतीये कुलिशं हस्ते चतुर्थे चात्र वै ध्वजां ।
 दधानो भूतये प्रीत्यै सर्व्वतापनिवृत्तये ॥

प्रीतेः ।

आयुष्मांस्तु तृतीयोऽयं मौक्तिकाभोऽरुणीदरः ।
 क्षीमवस्त्रान्वितश्चैव गुक्तासौवर्णभूषणः ॥
 द्विभुजः प्रथमे दक्षे चाक्षसूत्रञ्च मौक्तिकं ।
 दूर्वामच्च द्वितीये वै तृतीये चूतपल्लवं ॥
 चतुर्थे पङ्कजञ्चैव पञ्चमे चातपत्रकं ।
 सुधाकुम्भन्तु वामाद्ये वीजपूरपिधानकम् ॥
 पात्रं दध्यक्षतोपेतं द्वितीये करपल्लवे ।
 तृतीये श्रीफलं हस्ते चतुर्थे पविमेव च ॥
 पञ्चमे चामरं हस्ते स्वर्णदण्डं सितं शुभम् ।
 धारयन्नेष वै पूज्यो भोगायुष्यविबुद्धये ॥

आयुष्मतः ।

सौभाग्याख्ययतुर्थीञ्च रफाटिकाभिस्त्रिलीचनः
 स्कन्धारुणा महासत्वः सुन्दरः कुमुदाम्बरः ॥
 दशबाहुरयञ्चार्कं प्रथमे श्रीफलं करे ।
 अक्षसूत्रं प्रवालोत्थं द्वितीये करपल्लवे ॥
 तृतीये कमलं हस्ते चतुर्थे वारवाणकं ।

पञ्चमे शक्तिमचैव वामाद्ये पात्रमेव च ॥
द्वितीये चासृतं कुम्भं तृतीये तु प्रकीर्णकं ।
चतुर्थं दर्पणं हस्ते वेणुदण्डश्च पञ्चमे ॥
विभ्राणः सौम्यः सौभाग्यो वृद्धये चायुषे त्रिये ।

सौभाग्यस्य ।

शोभनः पञ्चमी योगः श्वेतवक्त्रो वशी वली* ।
शेषोरुणकशशाङ्कः प्रवालकृतकुण्डलः ॥
श्रीणशुक्लास्वरथैव सुक्ताविद्रुमभूषणः ।
अक्षसूत्रं सहेमोत्थं प्रथमे दक्षिणे करे ॥
द्वितीये पङ्कजं हस्ते तृतीये श्रीफलं त्रये ।
तुर्ये शक्तिं कराभ्यो जे वामाद्ये वै कमण्डलुम् ॥
द्वितीये स्वर्णजं पात्रं तृतीये चैव दर्पणम् ।
चतुर्थं चामरं पाणौ धारयन्नष्टदीरिति ॥
पूजनीयो महाभक्त्या सौख्य-सौभाग्य-वृद्धये ।

शोभनस्य ।

अतिगण्डाभिधक्षाद्य षष्ठी योगः प्रतीयते ।
गण्डारुणसितः क्रूरः कृष्णवक्त्रोर्कभूषणः ॥
स्थूलो वृद्धश्रुतिस्तुङ्गनासिकोऽरुणभूषणः ।
पिङ्गश्रमश्रुजटामौलिः षड्भुजः कटिसूत्रवान् ॥
अक्षसूत्रं यमादिस्थे लोहजं करपद्मवे ।
एषं सृगं द्वितीये च तृतीये चैव वारिजम् ॥

पात्रं वामादिमे पाणौ द्वितीये शक्तिमेव च ।
 पताकान्तु तृतीये वै दधानः कृष्णलोहितैः ॥
 पूजनीयो महाभक्त्या दुष्टभीतिनिवृत्तये ।

अतिगण्डस्य ।

चतुर्भुजः सुकर्मा वै श्ये तवाङ्गदरश्रुतिः ।
 नीलशुभ्रांशुक्रोपेतः स्वर्णनीलविभूषणः ॥
 रुद्राक्षमालिकामर्कैः प्रथमे करपङ्कजे ।
 द्वितीये कमलं पाणौ वामादौ दण्डमेव च ॥
 पताकामत्र वै हस्ते द्वितीये सुमनोहरे ।
 विभ्रत्सुदृश्ये तृष्णां कर्मारम्भशुभप्रदः ॥

सुकर्मणः ।

धृत्याख्यसाष्टमो योगः कथ्यते वसुवाहुकः ।
 भालारुणस्तु सर्वाङ्गे श्ये तवर्णारुणाम्बरः ॥
 स्वर्णमुक्तेन्द्रनीलाढ्यो विद्रुमान्वितभूषणः ।
 मुक्ताक्षमालिकां दक्षे प्रथमे रत्नमुद्रिके ॥
 द्वितीये श्रीफलं पाणौ तृतीयेऽशोकपङ्कवम् ।
 चतुर्थे हेमजं दण्डं वामाद्ये वै कमण्डलुम् ॥
 द्वितीये चामृतं पात्रं तृतीये चाम्बुजं करे ।
 पताकामत्र वै तुर्ये विभ्राणः श्रीषिवृद्धये ॥

धृतेः ।

नवमः शूलनामाद्य कथ्यते व्यक्तभागतः ।

ताम्भारुणगलस्यैव श्वेतवर्णः कृशोदरः ॥
 भालरेखात्रयस्यैव चित्रटो नीलकुन्तलः ।
 अर्कहस्ते यमादिस्थे त्रिभ्रूवं चाति भौषणम् ॥
 द्वितीये सुन्नरं पाषी तृतीये चाक्षसूत्रकम् ।
 चतुर्थे गृह्णामत्र पञ्चमे दंष्ट्रमेव च ॥
 षष्ठे चैवाश्रुजं पाषी कपालं चोन्नरादिमे ।
 टङ्कं द्वितीयके चैव तृतीये वै कमण्डलुं ॥
 सन्दंशन्तु करे तुर्यं पञ्चमे चैव दर्पणम् ।
 पताकामत्र वै षष्ठे धारयन्नेष पूजितः ॥
 भवेदनिष्टनाशाय वैरिविध्वस्तये नृणाम् ।

शूलस्य ।

गण्डाख्यः कथ्यते धीगो दशमः सोऽयमत्र हि ।
 गण्डः शुभ्राक्षणाङ्गस्तु षड् भुजो मेचकाम्बरः ॥
 हरिश्मणिविभूषाढो नीलविद्रुमकुण्डलः ।
 अक्षसूत्रं यमादिस्थे द्वितीये चन्द्रहासकम् ॥
 तृतीये वारिजं नीलं वामाद्ये वै कमण्डलुं ।
 द्वितीये खेटकं हस्ते पताकाश्च तृतीयके ॥
 दधानो यज्वनस्तुष्टैः रोगानिष्टनिवृत्तये ।

गण्डस्य ।

एकादशस्तु हृद्गाख्यः कथ्यते रसचन्द्रदीः ।
 पादाक्षणापरस्त्रे तो भालविस्तीर्णमण्डलः ॥
 विचित्र वसनोपेतो मुक्ता-सौवर्णभूषणः ।

अक्षसूत्रं यमादिस्ये द्वितीये चामृतं घटं ॥
 तृतीये नन्दकं पाणौ चतुर्थे वाणमिव च ।
 पञ्चमे सुन्नरश्चैव षष्ठे सन्दंशमेव च ॥
 सप्तमे कम्बुमचैव पङ्कजञ्जाष्टमे शये ।
 कुण्डिकामादिमे वामे द्वितीये पात्रमेव च ॥
 तृतीये खेटकं हस्ते चतुर्थे चैव कार्मुकं ।
 पञ्चमे टङ्कमत्रैव षष्ठे वैशं विषाणकं ॥
 सप्तमे चापमचैव पताकामष्टमे करे ।
 विभ्राणः त्रैयसो वृद्धौ चायुर्गोचधनस्य च ॥

वृद्धेः ।

द्वादशो ध्रुवनामा वै योगञ्जात्रैव कथ्यते ।
 दक्षल्लाक्षणश्चैव श्वेतसर्वाङ्गपय च ॥
 माञ्जिष्ठवसनीपेती हेम-सुक्ताविभूषणः ।
 चतुर्दशभुजोपेती दक्षिणाद्ये चसूत्रकं ॥
 द्वितीये तु कजं खड्गं तृतीये चैव सुन्नरं ।
 चतुर्थे सायकं हस्ते पञ्चमे चैव पङ्कजं ॥
 षष्ठे मनोहरं शङ्खं सप्तमे चामरं शये ।
 पात्रं सौम्यादिमे पाणौ द्वितीये चैव खेटकं ॥
 टङ्कं तृतीयके हस्ते चतुर्थे चैव कार्मुकं ।
 पताकामत्र वै हस्ते पञ्चमे वरसक्षणे ॥
 षष्ठे मनोहरादर्शी सप्तमे च क्रमाद्दधत् ।
 पूजनीयो महाभक्त्या लक्ष्मी-स्वीर्थादिहेतवे ॥

ध्रुवस्य ।

कथ्यते चाधुना योगी व्याघाताख्यस्त्रयोदशः ।
 नाभ्युर्ध्वं लोहितशायं श्वेततूर्णं खेत एव च ॥
 अन्तःश्वे तारुणप्रान्तवसनः सूर्यकुण्डलः ।
 गले स्फटिकमालीसौ शेषरुद्राक्षभूषणः ॥
 मणिबन्धालिवर्षस्तु घटभुजः कुटिलाननः ।
 पङ्कजं प्रथमे दक्षे द्वितीये परशुं शये ॥
 तृतीये चाक्ष वै पाशं वामे पात्रमिहादिमे ।
 द्वितीये चाश्रुतं कुम्भं तृतीये चाङ्गुशं शये ॥
 विभ्राणोयं महापूज्यः कार्यभंगनिवृत्तये ।

व्याघातस्य ।

अधुना कथ्यते योगी हर्षशाख्यचतुर्दशः ।
 जानूर्ध्वं लोहितशायं तत्पूर्व्वं खेत एव च ॥
 पाटलाभांशुकोपेतो मुक्ता-वैदूर्यभूषणः ।
 भुजद्वादशकोपेतो लम्बकर्णी विशालदृक् ॥
 कौस्तुभं प्रथमे दक्षे द्वितीये चाक्षसूचकं ।
 तृतीये पङ्कजं हस्ते चतुर्थे बाणमेव च ॥
 पञ्चमे शङ्खमत्रैव षष्ठे पाशं कराम्बुजे ।
 वामादिमे करे पात्रं द्वितीये चाश्रुतं घटं ॥
 तृतीये परशुं हस्ते चतुर्थे चैव कार्मुकं ।
 पञ्चमे तु करे चक्रं षष्ठे चैवाङ्गुशं शये ॥
 विभ्राणः त्रैयसे भूत्यै मानोक्त्यै सुखाय च ।

हर्षणस्य ।

अथ पञ्चदशी योगः कथ्यते यज्जसंज्ञकः ।
 खे ताहिकाशीं विभ्राणः* कृष्णश्रीवारणाननः ।
 रोचनायसनोपेतो विश्वकर्षस्त्रिलोचनः ॥
 वज्रवैदूर्यभूषाढ्यः कटिसूत्रसमन्वितः ।
 जटां त्रिवलयं विभ्रत् दिग्भुजः परितो बली ॥
 अक्षसूत्रं यमादिस्थे द्वितीये बाणमेव च ।
 तृतीये पद्भजं हस्ते चतुर्थे कुलिशं ग्रथे ।
 पञ्चमे परशुं पाणौ वामाग्रे चासृतं घटम् ॥
 द्वितीये कार्मुकं चैव तृतीये पात्रमुत्तमम् ।
 चतुर्थे कुलिशं चैव पञ्चमे पाशमेव च ॥
 विभ्रद्विजय-सौस्त्राय-लक्ष्मी-सन्तानवृद्धये ।

वज्रस्य ।

कथ्यते चाधुना योगः सिद्धिनामा तु षोडशः ।
 पादजङ्घारुणयोर्द्वे चैतवर्षः शुभाननः ॥
 दिग्भुजो लोहितश्रीवो लोहितानिहिताम्बरः ।
 मुक्ताहारमस्त्रकर्णभूषणः सोमकुण्डलः ॥
 त्र्योफलं प्रथमे दक्षे द्वितीये चैव पद्भुजम् ।
 तृतीये पुस्तकं हस्ते चतुर्थे वाणमेव च ॥
 पञ्चमे तु ध्वजं हस्ते वामे पात्रमिहादिमे ।
 द्वितीये चासृतं कुम्भं तृतीये चैव चाभरम् ॥
 चतुर्थे चैव कौदण्डं पताकामिह पञ्चमे ।

* खे ताहिका वसानोपमिति पाठान्तरं ।

दधानः सिचये वृषा वाञ्छितार्जस सिचिद् ॥

सिचे ।

अतीपाताभिधसैव योगः सप्तदशसिचद् ।
 कण्ठेन लोहितचायं खेतयोवोऽलिभाननः ॥
 शुभ्रमाञ्जिष्टवसनी नीलस्वर्जभूषणः ।
 अष्टादशभुजो देवी भुक्तुटीकुटिलाननः ॥
 दाचमर्कादिमे हस्ते द्वितीये लोष्ठभेदनं ।
 अक्षसूत्रं तृतीये तु तुर्ध्वं वाणं मनोहरम् ॥
 पञ्चमे मृङ्गलां लोहीं षष्ठे कवचमेव च ।
 सप्तमे सुहरं हस्ते पङ्कजं चाष्टमे करे ॥
 कुहालं नवमे हस्ते मृङ्गिकामादिमीक्षरे ।
 पाचं द्वितीये चैव स्वर्णकुम्भं तृतीये ॥
 चतुर्थे कार्मुकं पाथौ पञ्चमे कर्त्तिका मिह ।
 सुशसन्तु करे षष्ठे सप्तमे टङ्गमेव च ॥
 अष्टमे च ध्वजं हस्ते नवमे प्राङ्गुलं शये ।
 दधानो वैरिवर्गस्य ध्वस्तये चैव मृत्यवे ॥
 यज्वनः पुत्रसन्तत्यै लक्ष्मीभोगसुखाय च ।

अतीपातस्य ।

अष्टादशो वरीयांस कथ्यते योग उत्तमः ।
 आकण्ठशुभ्रवर्षस्तु लोहितयोव एव च ॥
 खेतवज्जो विशालाक्षी लम्बकर्षोऽर्ककुण्डलः ।

(२२)

स्वर्णभरणभूषाढी लक्षणानेकसंयुतः ॥
 सिताम्बरीऽरुणप्रान्ती हाचिंशद्भुजसंयुतः ।
 अक्षसूत्रं यमादिस्थे द्वितीये बीजपूरकं ॥
 चन्द्रहासं तृतीये तु तुर्ये वाणं कराब्जुजे ।
 पञ्चमे शङ्खमत्रैव षष्ठे परशुमेव च ॥
 सप्तमे मुद्गरं हस्ते चाष्टमे दातमेव च ।
 नवमे चात्र वै शृङ्गं दशमे कमलङ्करे ॥
 एकादशे पवित्रात्र द्वादशे हलमेव च ।
 दण्डं त्रयोदशे हस्ते शक्तिमस्तं चतुर्दशे ॥
 कजम्पञ्चदशे हस्ते षोडशेऽथ त्रिशूलकम् ।
 घठं वामादिमे पाणौ पात्रमत्र द्वितीयके ॥
 तृतीये खेटकश्चैव तुर्ये कार्मुकमेव च ।
 चक्रान्तु पञ्चमे हस्ते षष्ठे चैव कुठारकम् ॥
 सप्तमे टङ्कमत्रैव चामरश्चाष्टमे शये ।
 नवमे डमरुश्चैव दशमे चात्र वल्लकीं ॥
 एकादशे शृणुश्चैव द्वादशे मुशलं शये ।
 त्रयोदशे तु वै पाशं गदामत्र चतुर्दशे ॥
 दर्पणान्तिथिजे हस्ते ध्वजमत्रैव षोडशे ।
 दधानः त्रे यसे भूत्यै सर्वभोगसुखाय च ॥

वरीयसः ।

एकोनविंशकषात्र कथ्यते परिघासनः * ।

* परिघासनेति ह्यपित् पाठः ।

पादजाम्बन्तशुभ्रोऽसौशेत्वक्नी जटाधरः ॥
 मध्याशुधरे नीलरेखासंयुतएव च ।
 नीलाम्बरो महासत्वी हेमरत्नकुण्डलः ॥
 सुवर्णभूषणोपेतो षड्भुजः क्रूरदर्शनः ।
 गदामर्कादिभे हस्ते द्वितीये परिघं शये ॥
 तृतीये कमलं पाणौ वामाद्ये पात्रमेव च ।
 द्वितीये पट्टिशं हस्ते तृतीये चात्र वै ध्वजं ॥
 विभ्राणः शत्रुनाशाय दुष्टभीतिनिवृत्तये ॥

परिचक्ष ।

अथ त्रिंशत्तमो योगः शिवाख्ययात्र कथ्यते ।
 शुभ्रवर्णस्त्रिनेत्रस्तु मौक्तिकाभरणान्वितः ॥
 दक्षिणे प्रथमे हस्ते वीजपूरं मनोहरं ।
 अक्षसूत्रं द्वितीये च तृतीये कम्बुमेव च ॥
 चतुर्थे सायकं हस्ते पञ्चमे चन्द्रहासकम् ।
 मुहरश्च करे षष्ठे सप्तमे परशुं शये ॥
 कुहालमष्टमे पाणौ नवमे दाशमेव च ।
 दशमे चात्र वै शूङ्गं पवित्रेकादशे त्विह ॥
 द्वादशे पञ्चशाखां वै लोष्टभेदनमेव च ।
 त्रयोदशे हलश्चैव शक्तिमखं चतुर्दशे ॥
 करे पञ्चदशे दण्डं षोडशे चाम्बुजनिवह ।
 त्रिंशत्तं मुनिचन्द्रे च वसुचन्द्रे च तीमरम् ॥
 वामादिभे शये पात्रं द्वितीये चास्यतं षटं ।

तृतीये चक्रमत्रैव चतुर्थे वै शरासनम् ॥
 पञ्चमे खेटकं हस्ते षष्ठे टङ्कं कराम्बुजे ।
 कुठारं सप्तमे पाशौ प्राङ्मुट्टाष्टमे त्विह ॥
 नवमे चामरं द्दशमे दमरुत्सिह ।
 शृण्णिकादशे हस्ते द्वादशे चैव दर्पणं ॥
 त्रयोदशे शये कुन्तं विभ्राणः शान्तिवृद्धये

शोभनस्य ।

एकविंशोऽधुना योगः सिद्धिनामाभ धीयते ।
 जवाकुसुमसङ्काशः शुभ्ररेखात्रयोदरः ॥
 जटाभिरष्टभिस्तस्य मुकुटः खण्डचन्द्रयुक् ।
 शोणशुभ्रांशुकोपेतः स्फाटिकाभरणान्वितः ॥
 वसुपञ्चभुजः सौम्यस्तुन्दिलः सर्वलक्षणः ।
 तोमरश्चादिमे दक्षे द्वितीयेत्र त्रिशूलकं ॥
 तृतीये पङ्कजं पाशौ तुर्ये दण्डं सुवर्णजम् ।
 पञ्चमे तु करे शक्तिं षष्ठे वै साङ्गलं शये ॥
 सप्तमे कुलिशं हस्ते शङ्खमत्रैव चाष्टमे ।
 नवमे दात्रमत्रैव दशमे तु परस्त्रधं ॥
 मुहुरं तद्रहस्ते वै द्वादशे चन्द्रहासकम् ।
 त्रयोदशे शये वाणं शङ्खमत्र चतुर्दशे ॥

कुम्भमिन्द्रादिमे हस्ते द्वितीये डमरु' शये ।
 पात्रन्तु नवमे हस्ते दशमे वै कुठारकम् ॥
 टङ्कमेकादशे हस्ते द्वादशे चैव खेटकम् ।
 त्रयोदशे शये चापं चक्रमत चतुर्दशे ॥
 धारयन् पूजनीयोऽनी भोग-सौख्य-त्रिये जये ।

सिद्धेः ।

साधो द्वाविंशकश्चैव कथ्यते योग एव सः ।
 शुभ्रवर्षो विशालाक्षो वक्रिरेखागलाननः ॥
 कौसुम्भबसनोपेतो वज्रवैदूर्यकुण्डलः ।
 वेदवक्रभुजीपेती मेखलानेकरत्नयुक् ॥
 अक्षसूत्रं यमादिस्थे द्वितीये वीजपूरकम् ।
 तृतीये शक्तिमन्त्रैव तुर्ये चैव त्रिशूलकं ॥
 पञ्चमे सायकं हस्ते षष्ठे वज्रं कराब्जुजे ।
 सप्तमे पङ्कजं पाणौ दण्ड* मन्त्रैव चाष्टमे ॥
 नवमे तोमरं पाणौ दशमे शक्तिमेव च ।
 एकादशे हलं हस्ते द्वादशे ऋक्मेव च ॥
 त्रयोदशे शये खड्गं परशन्तु चतुर्दशे ।
 करे पञ्चदशे रम्ये सुन्नरं कठिनाङ्गुली ॥
 षोडशे दान मन्त्रैव शङ्खं सप्तदशे त्रिविह ।
 वामादिमे करे कुण्डलीं द्वितीये पात्र मेव च ॥
 तृतीये चाभयं हस्ते तुर्ये डमरुमेव च ।

* कुम्भमिति पुस्तकाकरे ।

पञ्चमे कार्मुकं पाणौ षष्ठे चैवाङ्गुशं शय ॥
 सप्तमे तु ध्वजं दिव्यमष्टमे पाशमेव च ।
 नवमे कुन्तमचैव दशमे तु गदामिह ॥
 मशलं षड्र हस्ते वै द्वादशे चैव चामरम् ।
 त्रयोदशे करे खेटं कुठारन्तु चतुर्दशे ॥
 टङ्कं पञ्चदशे पाणौ षोडशे चैव दर्पणं ।
 चक्रं सप्तदशे हस्ते दधानः त्रीविवृद्धये ॥

साध्यस्य ।

शुभनामा त्रयोविंशो योगशाचैव कथ्यते ।
 नीलकालिकशोणस्तु मौक्तिकाभस्त्रिलोचनः ॥
 शोणरेखाङ्कितधीवः शोणशुभांशुकावृतः ।
 मुक्ताविद्रुममाणिक्यभूषणः स्वर्णकुण्डलः ॥
 दार्चिंशहाडुसंयुक्तो जटाकपिलमण्डलः ।
 वरं यमादिमे पाणौ द्वितीये चाक्षमूत्रकम् ॥
 तृतीये च त्रिशूलं वै तुर्ये वाणं कराम्बुजे ।
 पञ्चमे पङ्कजं चैव षष्ठे कुलिशमेव च ॥
 सप्तमे शक्तिमत्रैव दण्डं वै चाष्टमे करे ।
 नवमे तोमरं हस्ते दशमे शृङ्गकामिह ॥
 हलमेकादशे चैव द्वादशे खड्ग मचिह ।
 द्वात्रं त्रयो दशे हस्ते सुहरं च चतुर्दशे ॥
 शङ्खं पञ्चदशे पाणौ षोडशे तु परस्वधम् ।
 अमयं चादिमे वामे द्वितीये वै कमण्डलुं ।

तृतीये पात्रमथैव तुर्ये कार्मुकमेव च ।
 पञ्चमे डमरं पाणौ षष्ठे चाद्दुग्धमेव च ॥
 सप्तमे बीजपूरं वै ध्वजं वै चाष्टमे करे ।
 नवमे पानपात्रञ्च दशमे कुन्तमेव च ॥
 गदामिकादशे हस्ते द्वादशे चैव खेटकम् ।
 चामरं मन्मथे पाणौ टङ्कमत्र चतुर्दशे ॥
 चक्रं पञ्चदशे चैव षोडशे तु कुठारकम् ।
 विभ्राणो भुक्तये* पूज्यः सौन्दर्याय सुखाय च ॥

शुभस्य ।

चतुर्विंशतिमयात्र शुक्ताख्यः† कथ्यतेऽधुना ।
 चिबुके लोहितशायं चन्द्रगौर स्त्रिलोचनः ॥
 जटामुकुटखण्डेन्दु नीलरेखा सुधाधरः ।
 सिन्दरवदनोपेतो भालालितिलकाङ्कितः ॥
 प्रवालमौक्तिक-स्वर्ण-भूषणः कण्ठकौस्तुभः ।
 खड्गवाहुसंयुक्तो रत्नमुद्रासमन्वितः ॥
 शूर्पाक्षमालिकां याम्ये प्रथमे करपङ्कवे ।
 द्वितीये च त्रिशूलं वै तृतीये बाणमेव च ॥
 परस्वधं करे तुर्य्ये पञ्चमे शङ्खमेव च ।
 मुद्गरं चात्र वै षष्ठे सप्तमे दात्रमेव च ॥
 अष्टमे तु करे खड्गं नवमे चैव लाङ्गलम् ।
 दशमे शृङ्गमथैव तोमरं द्वादशस्थिते ॥

* भुक्तये इति कश्चित्पाठः ।

† शुक्ताख्या इति कश्चित् पाठः ।

द्वादशे तु करे दण्डं शक्तिमथ त्रयोदशे ।
 चतुर्दशे शये वज्रं करे पञ्च दशे कजम् ॥
 वीजपूरन्तु वामाद्ये द्वितीये पाचमेव च ।
 तृतीये कार्मुकं पाणौ तुर्थ्यं चैव कुठारकम् ॥
 पञ्चमे चक्रमथैव षष्ठे टङ्गं कराम्बुजे ।
 सप्तमे चामरं पाणौ खेटकं चाष्टमे शये ॥
 नवमे तु गदाभ्रत्र दशमे वा ऽमृतं घटम् ।
 कुन्तमेकादशे हस्ते द्वादशे पात्र मेव च ॥
 त्रयोदशे शृणिं चैव दर्पणञ्च चतुर्दशे ।
 ध्वजं पञ्चदशे हस्ते दधानस्तु महायच ॥

शकलस्य ।

पञ्चविंशतिभो योगो ब्रह्मनामा प्रतीयते ।
 शोणोरुपाण्डु राशेषी चन्द्रगौरस्त्रिलोचनः ॥
 नीलकालिकशोणस्तु श्रीवासर्षस्त्रिरेखिकः ।
 जटात्रयप्रलम्बीऽसौ सौम्यः प्रहसिताननः ॥
 ताम्रवर्णांशुकोपितः कण्ठरुद्राक्षमालिकः ।
 मुक्तामाणिक्यहेमोत्थभूषणः सोमकुण्डलः ॥
 विद्यहाणभुजोपितः किङ्किणीजालमेखलः ।
 सौम्याक्षमालिकां दक्षे प्रथमे तलशोभने ॥
 द्वितीये तु वरं पाणौ खड्गमथ त्रयोदशे ।
 हलं चतुर्दशे हस्ते शृङ्गं पञ्चदशे त्विह ।
 षोडशे चैव लोहासिं मुनिरभ्यु च तीमरम् ॥

अष्टादशे शये दृष्टं* शक्तिमेकीनविंशके ।
 करे विंशतिमे चक्रं त्वेकविंशे शये कजं ॥
 द्वाविंशे चमसं हस्ते त्रयोविंशे शयेऽर्जुन्दम् ।
 चतुर्विंशतिमे पाथौ सुदृष्टं लोहमेदनम्† ॥
 पञ्चविंशे तु रक्षास्त्रं वामाग्रे वै कमण्डलुम् ।
 द्वितीये चाभयं हस्ते तृतीये चात्र वै भ्रुवम् ॥
 तुर्ये खट्वाङ्गं मेवेह कुद्दालं‡ चैव पञ्चमे ।
 षष्ठे शरासनं पाथौ सप्तमे कवचं शये ॥
 अष्टमे पट्टिशं हस्ते नवमे वे सुदर्शनम् ।
 दशमे बीजपूरं वै पाशमेकादशे करे ॥
 द्वादशे चात्र वै टङ्कं खेटमत्र त्रयोदशे ।
 चतुर्दशे कुठारास्त्रं डमरुन्तिधिसंज्ञिते ॥
 षोडशे चाभरं हस्ते कुम्भं सप्तदशे त्विह ।
 अष्टादशे गदामत्र सुग्रलं नन्दचन्द्रजे ॥
 अङ्गुष्ठविंशके हस्ते पाशश्चैकविंशके ।
 द्वाविंशके ध्वजं शुभ्रं वीरभद्रन्निपञ्चजे ॥
 जिने सुनिर्मलादर्शं पञ्च विंशेऽजिनं शये ।
 दधानो यज्वनी शीत-परमायुर्विबुधये ॥

ब्रह्मणः ।

ऐन्द्रः षड्विंशकस्यात्र कथ्यते तव साम्प्रतम् ।

● यजुर्मिति क्वचित् पाठः ।

† सुदृष्टं लोहमेदनमि क्वचित् पाठः ।

‡ तुष्येवामावृतं पाठमिति क्वचित् पाठः ॥

हस्तपादाक्षयसायं शेषः शुभ्रायतेक्षयः ॥
 धर्मिणमङ्गिकामाख्यचन्दनाद्यनुलेपनः ।
 भालालितिलकश्चैव कर्णकुण्डलमेचकः ॥
 सुक्ताहारोज्वलीरक्तः सर्व्वरत्नविभूषणः ।
 शुभ्रशोचेन्द्रनीलाभवसनः सर्व्वलक्षणः ॥
 शुग्मबाणभुजोपेतो मनागरणलीचनः ।
 शक्तिमर्कादिमे हस्ते द्वितीये मौक्तिकस्रजम् ॥
 तृतीये कमलं पाणौ चतुर्थे शुक्तिकामिह ।
 क्लृप्तानु पञ्चमे पाणौ षष्ठे चात्र त्रिशूलकम् ॥
 सप्तमे चैव योधासिं* कुहलं चाष्टमे करे ।
 नवमे पञ्चिकाश्चैव दशमे चन्द्रहासकम् ॥
 एकादशे हलं हस्ते द्वादशे शृङ्गमेव च ।
 तोमरं मन्त्रधे पाणौ दण्डं चैव चतुर्दशे ॥
 करे पञ्चदशे शक्तिं षोडशे कुलियं शये ।
 चक्रञ्च मुनिचन्द्रार्कं वसुचन्द्रे परस्वधम् ॥
 एकीनविंशके कन्दुं विंशके पुस्तकं त्विह ।
 विष्टरं त्रिकविंशे वै द्वाविंशे चैव मुद्गरम् ॥
 चमसन्तु त्रयोविंशे चतुर्विंशे त्विहार्बुदम् ।
 पञ्चविंशतिमे हस्ते लोष्टभेदनमेव च ॥
 षड्विंशे च तुल्यकास्त्रं† वामाद्ये वाभयं शये ।
 द्वितीये कुण्डिकामत्र तृतीये वीजपूरकं ॥

* बोधा धिमिति क्वचित् पाठः ।

† षड्विंशत्येवपञ्चास्यमिति पुस्तकारे पाठः ।

तुर्थ्येवामि हृतं* पात्रं पञ्चमे सुवमेवहि ।
 षष्ठे खट्वाङ्गमेवैह सप्तमे उमरं ग्रये ॥
 अष्टमे प्राङ्गुटं† पाशौ नवमे चैव कार्मुकम् ।
 दशमे खेटकं हस्ते वद्रे चैव कुठारकम् ॥
 द्वादशे चामरं हस्ते कुन्तमत्र त्रयोदशे ।
 गदा चतुर्दशे चैव सुयसन्तिधिसंमिते ॥
 अङ्गुयं षोडशे हस्ते पाशं सप्तदशे करे ।
 पष्टिमं वसुचन्द्रार्कं चक्रन्त्येकोनविंशके ॥
 कवचं विंशके चैव दासश्चैकविंशके ।
 चाविंशके तु वै टङ्कं त्रयोविंशे ध्वजस्त्रिंशत् ॥
 वीरभद्रं चतुर्विंशे पञ्चविंशे तु दर्पणं ।
 षड्जिनं चात्र षड्विंशे विभ्राणः त्रीविंशत्ये ॥

दिन्द्रस्य ।

वैद्यत्वाख्यस्तु वै योगः सप्तविंशतिमस्त्रिंशत् ।
 शश्ववर्षी महारौद्री श्रीवाशोचः सिताननः ॥
 जटापञ्च प्रसन्नस्तु मेघकाशचक्रुष्णः ।
 नीलशोचसुवर्षीत्सभूषणी मेघकाश्वरः ॥
 वेदवाचभुजोपेतो वृहत्कुक्षिसुमन्वरः ।
 अक्षसूचं यमादिस्त्रिं द्वितीये वरमेव च ॥
 तृतीये चैव सन्द्यं तुर्थ्ये शक्तिं ससुद्रजा ।

* तुर्थेवामिभूतमिति च पुस्तकान्तरे पाठः ।

+ प्राग्भूतमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

पञ्चमे पङ्कजं पाथौ षष्ठे चाप शुवन्तथा ॥
 सप्तमे सायकं पाथौ ज्ञानं खड्गमिहाष्टमे ।
 नवमे चैव कुहासं दशमे च त्रिशूलकम् ॥
 शृङ्गमेकादशे हस्ते द्वादशे हलमेव च ।
 त्रयोदशे तु वै खड्गं तीमरन्तु चतुर्दशे ॥
 करे पञ्चदशे दण्डं षोडशे शक्तिमेव च ।
 वज्रं सप्तदशे पाथौ कवचं वसुचन्द्रजे ॥
 परशुं नन्दचन्द्रोत्थे विंशके चार्ध्बुद्धं करे ।
 एकविंशे शये चैव लोष्टभेदन मेव च ॥
 द्वाविंशे वै तुरष्कास्त्रं त्रयोविंशे तु गङ्गाकम् ।
 पुस्तकन्तु चतुर्विंशे पञ्चविंशे तु विष्टरम् ॥
 षड्विंशे सुह्वरं पाथौ चमसं सप्तविंशके ।
 वामादिमे करे कुण्ठीमभयन्तु द्वितीयके ॥
 मीनं तृतीयके हस्ते चतुर्थे बीजपूरकं ।
 पञ्चमे पात्रमथैव षष्ठे चैव शुवह्वरे ॥
 सप्तमे कार्ध्बुकं पाथौ डमरुं चाष्टमे करे ।
 नवमे प्राहुटं हस्ते खट्वाङ्गश्चैव दिक्करे ॥
 चामरं रुद्रजे चैव द्वादशेऽत्र कुठारकम् ।
 खेटं त्रयोदशे चैव कुन्तमत्र चतुर्दशे ॥
 गदां पञ्चदशे पाथौ षोडशे मुशलन्तुह ।
 शृणिं सप्तदशे हस्ते पाशमष्टादशे करे ॥
 पट्टिशं नन्दचन्द्रोत्थे वीरभद्रन्तु विंशके ।
 एकविंशे शये टङ्गं द्वाविंशे चाजिनह्वरे ॥

त्रयोविंशे तु वै चक्रं कवचं जिनहस्तके ।
 पञ्चविंशे तु वैपालं षड्विंशे दर्पणं शुभं ॥
 सप्तविंशे ध्वजं हस्ते धारयन् दुष्टघातकत् ।

वैधृतेः ।

इति योगातां रूपाणि ।

करणानामथो वक्षे रूपसम्बन्धिलक्षणं ।
 ववाभिधन्तु वै पीतं जटिलं रत्नकुण्डलम् ॥
 नीलवस्त्रन्तु रुद्राक्षभूषणं कण्ठपाण्डुरं ।
 चतुर्दशभुजोपेतं पिङ्गभ्रू लोचन त्रयं* ॥
 वरं यमादिमे हस्ते द्वितीये वाणमेव च ।
 तृतीये कुलिशं पाणौ चतुर्थे चैव पङ्कजम् ॥
 मुहुरं पञ्चमे चैव षष्ठे सन्दंशमेव च ।
 सप्तमे वाङ्मुखं दिव्यं पञ्चशास्त्रे महोदरे ॥
 प्रथमे वाभयं वामे द्वितीये तु शरासनं ।
 तृतीये पुस्तकं हस्ते चतुर्थे मुकुटं शये ॥
 टङ्कन्तु पञ्चमे पाणौ षष्ठे कर्त्तरिकामिह ।
 करे तु सप्तमे चात्र नागपाशं दध्नुःक्रिये ॥

ववस्य ।

वालवाख्यन्तु वै रत्नं नीलश्रीवं महोदरं ।

* तुङ्गभुजोचन त्रयमिति कश्चित् पाठः ।

श्वेतवस्त्रं जटाभारं* पिङ्गकं तुङ्गनासिकम् ॥
 काण्ठरुद्राक्षमालान्तङ्गुतिमत्कालपाण्डुरं ।
 रस-चन्द्रकरोपेतं कक्षासम्भारणकम् ॥
 प्रथमे मोदकं हस्ते दक्षिणे सुमनोहरे ।
 द्वितीये केतकीपत्रं तृतीये शक्तिमेव च ॥
 चतुर्थे पङ्कजं पाणौ पञ्चमे वै सुदर्शनम् ।
 षष्ठे सर्वायसम्भाषणं सप्तमे कुलिशं करे ॥
 सन्दंशमष्टमे हस्ते पात्रं वामादिभेद्विह ।
 द्वितीये कुण्डिकामत्र तृतीये चैव पट्टिशं ॥
 बीजपूरं करे तुर्ये पञ्चमे शङ्खमेव च ।
 कोदण्डमत्र वै षष्ठे सप्तमे कुलिशहरे † ॥
 अष्टमे पुस्तकं विभ्रहश्यायविजयाय च ।

वालवस्य ।

श्वेताक्षकणिकाभासं तृतीयं कौलवाभिधम् ।
 रत्नकाण्ठं पिक्वास्यं वै नीलश्वे तारुणाश्वरम् ॥
 मुक्तारुद्राक्षसौवर्णभूषणं चेन्द्रनीलकम् ।
 अष्टादशभुजोपेतं किङ्किणी कटिसूत्रकम् ॥
 वरं यमादिमे हस्ते द्वितीये चाक्षसूत्रकम् ।
 तृतीये स्वर्णजं दण्डं चतुर्थे चैव पुस्तकम् ॥
 पञ्चमे मोदकं हस्ते षष्ठे सन्दंशमेव च ।
 सप्तमे डमरुं पाणौ वज्र मत्रैव चाष्टमे ॥

* जटाधारमिति पुस्तकान्तरे ।

† षष्ठमे चाक्षं इह मिति ह्यचित्पाठः ।

नवमे शृङ्गिकामच शीघ्रगुप्ताद्यनामिमां ॥
 अथयं चादिमे वामे द्वितीये वै कमण्डलुम् ।
 तृतीये वासवं पाचं तुर्ये चाञ्जीवसुप्तमम् ।
 पञ्चमे चामरं शुभ्रं षष्ठे दाचं कराम्बुजे ॥
 सप्तमे वल्लकीमच शृण्णिं चैवाष्टमे करे ।
 नवमे कदलीपचं दधत्सम्पद् सुखाय च ॥

कौसवस्य ।

चतुर्थं तैतिलं नाम श्यामवर्णं कृशीदरम् ।
 शीणवस्त्रं जवापुष्पमालिकं तैत्तिराननम् ॥
 विद्यत्पद्मभुजीपेतं घण्टावहनितम्बकम् ।
 प्रथमे दक्षिणे हस्ते श्रीफलं सुमनीहरम् ॥
 खड्गमच द्वितीये वै तृतीये चैव पुस्तकम् ।
 अक्षसूचं करे तुर्ये पञ्चमे वाणमेव च ॥
 षष्ठे सुदर्शनं दिव्यं सप्तमे कुलिशं त्विह ।
 अष्टमे तु सूवं पाणौ नवमे चैव सुहरम् ॥
 दशमे चाङ्गुलं हस्ते पात्रं वामादिमे करे ।
 द्वितीये खेटकं चैव तृतीये वारिजं शुभम् ॥
 चतुर्थे कुण्डिकामच पञ्चमे चैव कार्मुकम् ।
 षष्ठे मनोहरं शङ्खं सप्तमे चामरं सितम् ॥
 स्तुवं चैवाष्टमे हस्ते नवमे टङ्गमच हि ।
 दशमे तु करे पायं विभ्वाचं बज्ज्वनः त्रिये ॥

तैतिलस्य ।

पञ्चमं चात्र विज्ञेयं करवन्तु गरामिधं ।
 गोमुखं चिञ्चितधीवं धूमरं लोहिताम्बरम् ॥
 पञ्चपञ्चमजीपेतं कृतपञ्चाक्षभूषणम् ।
 आदिमेदक्षिणे शक्तिं द्वितीये चक्रमेव च ॥
 तृतीये त्रीफलं हस्ते चतुर्थे चैव पङ्कजम् ।
 पञ्चमे पुस्तकं रम्यं षष्ठे वाणं मनोहरम् ॥
 सप्तमे गोवृषं शृङ्गं कुलिशं चाष्टमे करे ।
 नवमे वल्लकीमत्र दशमे वीरभद्रकम् ॥
 एकादशे तु सन्द्यं पञ्चशाखे मनोहरे ।
 अभीति मुत्तरादिस्थे द्वितीये शङ्खमत्र हि ॥
 पात्रमत्र तृतीये वै चतुर्थे चैव चामरम् ।
 पञ्चमे डमरुं हस्ते षष्ठे चैव शरासनं ॥
 सप्तमे कुण्डिकामत्र चाष्टमे दशचक्रकम् ।
 नवमे तु करे वंशं दशमे चैव दर्पणम् ॥
 एकादशे तु बद्रास्त्रं विभ्रत् कौर्त्ति-सुख-त्रिये ।

गरस्य ।

वानरास्यं वणिकं धूम्रं पीतवस्त्रं वृषासनम् * ।
 युगबाहुयुतं चेदं षष्ठं कनकभूषणम् ॥
 वरमर्कादिमे हस्ते द्वितीये चात्र सूत्रकम् ।
 तृतीये शक्तिक्वामत्र मोदकन्तु चतुर्थके ॥

† वृषासनमिति क्वचित् पाठः ।

पञ्चमे कुलिशं हस्ते षष्ठे शक्तिं काराम्बुजे ।
 सप्तमे वैश्वं दण्डं खड्गमत्रैव चाष्टमे ॥
 नवमे पाशमत्रैव दशमे चैव वै ध्वजम् ।
 एकादशे तुरुष्कास्त्रं द्वादशे वै सुदर्शनम् ॥
 सौम्यादिमे करेऽभीतिं द्वितीये वै कमण्डलुम् ।
 वीजपूरं तृतीयेऽत्र पानपात्रं चतुर्थके ॥
 पञ्चमे पञ्चवक्त्राख्यं षष्ठे चैव तु पट्टिशं ।
 सप्तमे चामरं हस्ते खेटकं चाष्टमे शये ॥
 नवमे चाहुशं पाणौ दशमे हलमेव च ।
 एकादशे करे रम्यं दर्पणं चातिनिर्मलम् ॥
 द्वादशे धारयन् शङ्खं लक्ष्मीसौभाग्यं वृषये ।

वशिजः ।

व्याघ्रचर्मस्त्ररा भद्रा खेताभा गर्हभानना ।
 सप्तवाहुसमोपेता त्रिपदा लोहभूषणा ॥
 कर्त्तिकामादिमे दक्षे द्वितीये तु गदामिह ।
 तृतीये सायकं हस्ते चतुर्थे चन्द्रहासकम् ॥
 खेटमूर्धकरे वामे तदधश्चैव कार्मुकम् ।
 पात्रमस्त्रादधो वामे धारयन्ती रिपोर्भये * ॥

भद्रायाः ।

अष्टमं शकुनिप्रख्यं करणं हरितप्रभम् ।

* पात्रमस्त्रादधो वामे धारयन्ती रिपोर्भये इति कश्चित् पाठः ।

प्रवालभूषणोपेतं शक्योपनिभाम्बरं ॥
 रसपक्षमुजोपितमेषवक्त्रं वृकोदरम्* ।
 आदिमे रविजे चक्रं द्वितीये वरमेव च ॥
 अक्षसूत्रं तृतीये तु तुर्ये चैव तु पङ्कजम् ।
 पञ्चमे मीदकं हस्ते षष्ठे वक्त्रं काराम्बुजे ॥
 सप्तमे तोमरं पाशौ शक्तिमर्चैव चाष्टमे ।
 नवमे हस्तिजन्तुं दशमे चन्द्रहासकम् ॥
 एकादशे करे वाचं द्वादशे वाङ्मुखं शये ।
 त्रयोदशे गदामत्र शङ्खं वामादिमे करे ॥
 अश्वत्थं द्वितीयेऽथ तृतीये वै कमण्डलुं ।
 बीजपूरं करेतुर्ये पञ्चमे पात्र मेव च ॥
 षष्ठे काराम्बुजे शङ्खं सप्तमे कुन्तमेव च ।
 परिधं वाष्टमे हस्ते दण्डन्तु नवमे करे ॥
 श्लेष्मकं दशमे पाशौ धनुरेकादशे शये ।
 द्वादशे पात्र मन्त्रैव त्रिगुणन्तु त्रयोदशे ॥
 दधानः त्रेयसे भूस्त्रै विजवाय सुखाय च † ।
 तापाय चैव शत्रूणां विघ्नेषु समर्चितम् ॥

शकुनिः ।

चतुष्पदाभिधं चात्र नवमं कथ्यते जय ।

* वृकोदरमिति पुष्पकान्तरे ।

† विमवाय सुखाय च इति कश्चित् वाक्यः ।

छण्डवर्षं चतुष्पादं चतुरास्यं जटान्वितम् ॥
 मनुष्यास्यन्तु वै पूर्वं दक्षिणं चैव गोसुखम् ।
 अजास्यं पश्चिमन्तस्य चोत्तरं शूकराननम् ॥
 मनुष्याकारवत्सर्वं त्रिकण्डविनिर्गतम् ।
 पीतवस्त्रं बृहत्कुक्षि नीलमुक्ताविभूषणम् ॥
 वसुपद्मभुजोपेतं दीर्घनादं महाजवं ।
 दक्षिणाये करे शक्तिं द्वितीये चाक्षसूत्रकम् ॥
 सुदर्शनं तृतीये तु चतुर्थे चैव पङ्कजम् ।
 पञ्चमे सुह्रं चैव षष्ठे मोदकमेव च ॥
 सप्तमे तु गदां पाशावष्टमे वाङ्मुखं शय्ये ।
 नवमे तु करे बाणं दशमे खड्गमेव च ॥
 एकादशे करे दन्तं द्वादशे शक्तिमत्र हि ।
 त्रयोदशे शय्ये चात्र तोमरं सुहृदं शुभम् ॥
 चतुर्दशे तु वै वज्रं वामाख्ये भीतिमेव च ।
 कामण्डलुं द्वितीये वै तृतीये शङ्ख मेव च ॥
 चतुर्थे बीजपूरं वै पञ्चमे टङ्कमेव च ।
 षष्ठे पात्रं सुधापूर्णं सप्तमे च त्रिशूलकम् ॥
 अष्टमे पात्र मचैव नवमे धनुरेव च ।
 दशमे खेटकं हस्ति दण्डमेकादशे करे ॥
 द्वादशे पट्टिशं पाणौ कुन्तमत्र त्रयोदशे ।
 ऋद्धं चतुर्दशे विभ्रज्जीवहृद्यैः सुपूजितः ॥

चतुष्पदस्य ।

* कर्मसामान्यमिति पुष्पाकारे पाठः ।

नागाख्यं दशमं रक्तं नीलवस्त्रं जटाधरम् ।
 मनुष्याकारमेवैतन्मस्तकं न्यस्ततत्फलम्* ॥
 विद्यद्गुण भुजीपितं सुक्ताचद्राक्षभूषणं ।
 प्रथमे मोदकं दत्ते द्वितीये चैव पञ्चजं ॥
 अक्षसूत्रं तृतीयेऽत्र वरन्तुष्ये^१ कराम्बुजे ।
 पञ्चमे तु करे चक्रं षष्ठे वक्ष्यन्तु वैशये ॥
 सप्तमे तोमरं पाणौ शक्तिमत्रैव चाष्टमे ।
 नवमे सोज्वलं दत्तं दशमे चन्द्रहासकं ॥
 वाणमेकादशे हस्ते द्वादशे चाङ्गुशं शये ।
 त्रयोदशे गदामत्र तुल्यकास्त्रं चतुर्दशे ॥
 करे पञ्चदशे दानं^१ वामे पात्रन्तु चादिमे ।
 बीजपूरं द्वितीयेऽत्र तृतीये वै कमण्डलुं ॥
 चतुर्थे चाभयं हस्ते पञ्चमे शङ्खमेव च ।
 षष्ठे कराम्बुजे शृङ्गं सप्तमे कुन्तमुत्तमं ॥
 पट्टियं चाष्टमे हस्ते नवमे दण्डमत्र हि ।
 दशमे खेटकश्चैव धनुरेकादशे करे ॥
 द्वादशे पाशमत्रैव त्रिशूलश्च त्रयोदशे ।
 चतुर्दशे दशास्त्रं वै करे पञ्चदशेऽर्जुदं ॥
 दधानं विजयारीख्यं कुर्वीताभयदं दृष्यां ।

नागस्य ।

एकादशन्तु किन्तुन्नं करणं कथ्यतेऽधुना ।

* मनुष्याकारमेवैतन्मस्तकं न्यस्ततत्फलमिति पाठान्तरम् ।

† पात्रमिति क्वचित् पाठः ।

गोक्षीरधवलं चैतत्पीतवस्त्रं हयाननम् ॥
 सर्वाभरणसंयुक्तं हात्रिशहाङ्गसंयुतम् ।
 वरक्षैवादिमे दक्षे द्वितीये चाक्षसूत्रकम् ॥
 तृतीये सोऽङ्गलं चक्रं तुर्य्यं चाङ्गं कराम्बुजे ।
 पञ्चमे मीदकं हस्ते षष्ठे त्रै कुलिशं शये ॥
 सप्तमे तीमरं पाणौ शक्तिमचैव चाष्टमे ।
 नवमे गजदन्तश्च दशमे खड्गमुत्तमम् ॥
 एकादशे तु वै वाणं द्वादशे शृण्णिवेव च ।
 त्रयोदशे गदामत्र उभरुश्च चतुर्दशे ॥
 करे पञ्चदशे पुस्त्रीं परशुश्चैव षोडशे ।
 अश्विश्चादिमे वामे द्वितीये वै कमण्डलुम् ॥
 शङ्खमत्र तृतीये वै चतुर्थे बीजपूरकम् ।
 पञ्चमे चासवं पात्रं षष्ठे शृङ्गं मनोहरम् ॥
 सप्तमे कुन्तमचैव चाष्टमे पट्टिशं शये ।
 नवमे वैणवं दण्डं दशमे खेटमेव च ॥
 चापमेकादशे पाणौ द्वादशे पात्रं च हि ।
 त्रयोदशे त्रिशूलं वै टङ्कमत्र चतुर्दशे ॥
 वीणामिषिन्दुहस्ते च ध्वजश्चैव तु षोडशे ।
 धारयद्द्वैरिणां ध्वज्यै पूजनीयं विपश्चिता ॥
 विद्या-साहाय-स-न्तुष्टि-विजयादि-सुखार्थिना ।

किन्तुप्लस्य ।

इति करण रूपाणि ।

षष्ठ राशिरूपाधि ।

मेघवल्ली नरो रत्नो द्विभुजः पङ्कजासनः ।

ज्ञानसुद्राङ्करः पोतवसनः कनकाङ्गदी ॥

मेघस्य ।

वृषाननो नरः शुभ्रो रत्नवस्त्रासक्तुण्डिकः ।

वृषस्य ।

पुमान् गदी सवीणा वा योषिश्च मिथुनं सितं ।

मिथुनस्य ।

ककटः कपिलोऽम्बास्यः कूर्मसुद्राधरो नरः ।

ककटस्य ।

सिंहवल्लीऽरुचोऽजस्यो द्विभुजोऽभयपात्रयुक् ।

सिंहस्य ।

शुक्लासिभृत् सिता कन्या द्विभुजा पङ्कजासना ।

कन्यायाः ।

तुलाधरो नरो गौरः पिङ्गनेत्रकजासनः ।

तूलस्य ।

वृश्चिकस्यो नरः पिङ्गो द्विभुजो मर्कटाननः* ।

दक्षे वृश्चिकमासाष्टक्षामे पात्रं सुरायुतम् ॥

* मर्कटासन इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

वृश्चिकस्य ।

अश्ववक्त्रो नरचापी व्याल्लष्टकरदक्षिणः ।

धनुः ।

अश्वकुण्डीधरो नीलो मृगवक्त्रो नरो हि सः ।

मकरस्य ।

मकरास्यो सितोऽलस्यो रिक्तकुण्डी नरो घटः ।

कुम्भस्य ।

मत्स्ययुग्मस्थितः श्यामो मत्स्यहृत्सो वृश्चिदरः ।

मत्स्यवक्त्रो नरो मीनो हरिन्मण्डिविभ्रुवचः ॥

मीनस्य ।

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

कालः करालवदनो नित्यगञ्ज विभीषणः ।

पाशहस्ताश्च कर्त्तव्यः सर्पवृश्चिकरोभवान् ॥

काशस्य ।

विश्वकर्म्मशास्त्रात् ।

निमेषसु भवेदत्र मेचकाभोर्द्विनीलदृक् ।

अश्वसूत्रं करे दक्षे ज्ञानमुद्रामघोत्तरे ॥

दधानो योगसंसिद्धैः पूजनीवो विपश्चिता ।

निमेवस्य ।

नीलवर्णा भवेत् काष्ठा पीतवस्त्रा त्रिलोचना ।
अष्टादशभुजोपेता ज्ञानपुस्त्रीसमन्विता ॥

काष्ठायाः ।

शुक्लवर्णा कला ज्ञेया नीलवस्त्रा त्रिलोचना ।
व्योमवस्त्राङ्गरुद्राक्षकण्ठवम्बितमालिका ॥
मुक्ताक्षमालिकार्का सा वामपङ्कजसंयुता ।
पूजनौया विशेषेण ज्ञानविज्ञानहेतवे ॥

कलायाः ।

अथाभिधो भवेत् पीता मुनिपक्षसुमौक्तिकः ।
जटात्रिमौक्तिकोपेतबन्दनालिकपाण्डुरः ॥
मुक्तासूत्रार्कहस्तोयं वामे स्वर्णकामण्डलुः ।

अथस्य ।

सुहृत्तानधुनावश्मि नामलक्षप्रथकफलैः ।
तत्रादिमस्तु रौद्राक्षः श्यामश्वेतारुणह्रविः ॥
श्वेतवस्त्रो महातुङ्गा दक्षिणे सर्पमादधत् ।
वामे पात्रं सुधापूर्णं क्षुद्रकर्णप्रसिद्धये ॥

रौद्रस्य ।

सिताभिधी द्वितीयस्तु श्वेतवर्णी बहीद्वयः ।

श्वेतशीषाभवस्त्रोऽयं श्वेतसुक्ताभिभूषणः ।
दक्षिणे पङ्कजं शुभ्रं वामे चैव कमण्डलुम् ।
दधानस्तु त्रियै पूज्यो योगहृद्यै सुखाय च ॥

सितम् ।

द्वितीयोषाजपाख्यस्तु कृष्णः शुभ्रो महातनुः ।
दक्षिणे पङ्कजं नीलं वामे सर्पं महाफणम् ।
विभ्रह्मिपुलभोगाय पूजनौयो महाभिया ॥

पञ्चपद्म ।

तुर्थस्वार्थभटाख्यस्तु नीलः शुभ्रो महीदरः ।
दक्षिणे पुस्तकं हस्ते वामे चैव त्रिशूलकम् ।
दधानः त्रयसु भूष्यै विजयाय सुखाय च ॥

चार्यभटस्य ।

अधुना चैव सावित्रः पञ्चमः कथ्यते जय ।
श्वेतवर्णोऽश्वक्लस्तु मेचकावसनान्वितः ॥
पुस्तकं दक्षिणे हस्ते वामे कुण्डन्तु निर्गणम् ।
दधद्रोगविनाशाय पूजनौयोप्यहर्निशम् ॥

सावित्रस्य ।

वैराजद्यान वै षष्ठः श्यामवर्णो जटाधरः ।
दक्षिणे तु करे दण्डं वामे चैव सुवं करे ॥
विभ्रहृद्यै च सौख्याय पूजनौयोऽतिभक्तितः ।

(२५)

वैराजस्य ।

सप्तमस्याथ गन्धर्वस्ताम्नवर्षः क्षयोद्दरः ।
दक्षिणे वल्लवीं पाशौ वामे शक्तिश्च धारयेत् ।
सोख्यह्रदै यशोह्रदै पूजनीयो विपश्चिता ॥

गन्धर्वस्य ।

अधुना चाभिजित्नाम कथ्यते द्वादशमः शुभः ।
पीतवर्षोऽतिद्वन्द्वस्तु ताम्रवर्षो महीद्दरः ।
तूलाहस्ताद्वयीपेतः पूजनीयः सुखाप्तये ॥

अभिजितः ।

स एव कुतपो नाम विद्वातस्थो मनीषिभिः ।
पिटृणां सुप्रियश्चैव पिच्छहस्तोऽथचाप्ययम् ॥

कुतपस्य ।

नवमो रौहिणेयास्थो मुद्गरः कथ्यते जय ।
शुभ्रवर्षो विशालाक्षो नीलावस्त्रोऽभ्रकुण्डलः ॥
दक्षिणे पङ्कजं पाशौ वामे मोदकमेव च ।
दधानः सुखसम्पत्स्यै विजयारीम्यह्रदये ॥

रौहिणेयस्य ।

अधुना कथ्यते वक्र दशमस्तु वलाभिधः ।
गौरवर्षोऽथषष्ठे तवसनः स्वर्णकुण्डलः ॥
दक्षिणे तु करे शङ्खं वामे पङ्कजमादधत् ।

बलस्य ।

हेमवर्षो वृहन्नाभः क्षण्यन्नेतारुणांशुकः ।
 अक्षस्रं करे दक्षे वामे चैव कमण्डलुं ॥
 दधत् प्रजासुखात्यर्थं पूजनीयो विपश्चिता ।
 एकादशोऽधुना ज्ञेयो मुहूर्त्तो विजयाभिधः ॥

विजयस्य ।

नैर्ऋताख्योऽधुना ज्ञेयो द्वादशस्य, मुहूर्त्तकः ।
 नीलवर्णोत्पलमौलिः पीतवस्त्रो महाबलः ।
 दक्षिणे तु करे चक्रं वामे चाभयमादधत् ॥

नैर्ऋतस्य ।

त्रयोदशो भवेद्द्रव रक्तः सतमसाभिधः ।
 ताम्रवस्त्रो महीजस्त्रो* रत्नहेमजकुण्डलः ।
 शीणपद्मजदक्षस्य वामकुण्डलसमन्वितः ॥

सतमसस्य ।

मुहूर्त्तः कथ्यते चात्र वरुणाख्यचतुर्दशः ।
 मुक्ताफलनिभश्चैव मुक्ताहारविभूषणः ।
 धनुर्बाणधरश्चैव पूजनीयः सुखामये ॥

वरुणस्य

अथ पञ्चदशो ज्ञेयः सुभगस्तु हरितप्रभः ।

* महीजस्त्र इति क्वचित् पाठः ।

सुभगस्य ।

अथो निग्राचरान् ब्रूमी सुहृत्तान् त्रिदिसंख्यानान् ।
 तत्रादिनोऽतिरीद्रास्यः कृष्णवर्षोऽरुषांशुकः ॥
 चतुर्भुजोमहाक्रूरः सास्त्रिसङ्घटकेवलः ।
 आदिमे दक्षिणे विभ्रत् कौशिकश्चातिभीषणं ॥
 द्वितीये तु करे सर्पं वामोर्द्ध्वे त्वघ वै करे ।
 सन्दंशं तदधः पापं विभ्राणः सर्व्वविघ्नहा ॥

अतिरीद्रस्य ।

महागन्धर्व्वराजास्थो द्वितीयस्तत्र चै व द्वि ।
 कृष्णशुभ्रावणपीवो नीलवस्त्रो महाबलः ॥
 चतुर्भुजो विद्यालाघो गौरवर्षो जटाधरः ।
 आदिमे दक्षिणे शङ्खं द्वितीये चैव पङ्कजं ॥
 वामोर्ध्वे करे वीणां तदधस्ये तु पापकम् ।
 धारयन्निष्टसम्पत्स्यै पूजनीयो विचक्षसैः ॥

महागन्धर्व्वराजस्य ।

द्वितीयः कथ्यते चाद्य राषिजो द्रविणाभिधः ।
 तप्तचामीकराभासः कृष्णनीलावुषांशुकः ॥
 दक्षिणे प्रथमे पङ्कं हेमजञ्जातिश्रीभनम् ।
 द्वितीये तु करे वीणां वामोर्द्ध्वे वीजपूरकम् ।
 दधानः सर्व्वसम्पत्ति सुखायुः श्रीविविष्टव्ये ॥

द्रविणस्य ।

श्रावणाख्यस्ततस्तुर्थो नीलवर्षोऽर्ककुण्डलः ।
नीलारुणांशुकोपेतः कण्ठनीलाजमालिकः ॥
दक्षिणायामे करे खड्गं द्वितीये चैव पङ्कजम् ।
वल्ग्वकीर्णध्वजे वामे पात्रमस्त्रादधस्थिते ।
दधानः पूजनयोऽयं ज्ञानविज्ञानसिद्धये ॥

श्रावणस्य ।

सुहृत्तः कथ्यते चाद्यो वायुसंज्ञस्तु पञ्चमः ।
हरिद्वर्षो जवाकर्णः क्षेतवस्त्रो महावलः ॥
कीरमर्कादिभे हस्ते द्वितीये तु ध्वजं शशे ।
वामोर्ध्वगे करे सौरं द्वितीये पात्रमादधत् ॥

वायोः ।

अग्निसंज्ञस्ततः षष्ठो जवाकुसुमसन्निभः ।
लक्ष्मीनीलांशुकोपेतः शिखाबद्धाक्षसंयुतः ॥
दक्षिणायामे करे पात्रं द्वितीये शक्तिमेव च ।
वामादिभे करे कीरं द्वितीये सौरमेव च ।
दधानः कीर्त्तये भुक्त्यै विजयायुःप्रवृत्तये ॥

अग्नेः ।

अधुना कथ्यते वल्ग्व राक्षसाख्यस्तु सप्तमः ।
नीलवर्षोऽयदंष्ट्रस्तु नीलशुभ्रारुणांशुकः ॥

दक्षिणाद्ये करे पद्मं द्वितीये तु विशूलकम् ।
 खट्वाङ्गमुत्तरे वामे पाचमस्त्रादधःस्थिते ।
 दधद्द्वैरविघाताय पूजनीयस्तु साधकैः ॥

राजसस्य ।

धाता चैवाष्टमः पीत वरुणः पाटलभाण्डकः ।
 कर्णस्फटिकसौवर्णकुण्डलः कम्बुकम्बरः ॥
 पुस्त्रीमर्कादिभे हस्ते द्वितीये चैव विष्टरम् ।
 वामादिभे करे पिण्डं द्वितीये स्वर्णकुण्डलं* ।
 दधानः प्रीतये भुक्त्यै विजयाय सुखाय च ॥

धातुः ।

नवमः सौम्यनामाद्य शुभ्ववर्षो विशालदक् ।
 पीतवस्त्रो महातेजा मुक्तासर्व्वाङ्गभूषणः ॥
 आदिभे दक्षिणे शङ्खं द्वितीये चैव पङ्कजम् ।
 वामादिभे करे पाचं द्वितीये सीरमेव च ।
 दधानस्तुष्टये भुक्त्यै पूजनीयस्तु सुक्तिदः ॥

सौम्यस्य ।

दशमस्याच विप्रेथो सुहृत्तो ब्रह्मसंज्ञकः ।
 पीतवरुणः शूलवस्त्रो जटासुकुटसंयुतः ॥
 कण्ठवज्राचमालीऽयं भालपाण्डुरचन्दनः ।
 सुवर्णकुण्डलीपितः कटिसूणीत्तरीयवान् ॥

* सर्वस्वाङ्गनिमित्तं पुष्पकान्तरे ॥

अक्षसूत्रं यमादिस्थे द्वितीये चैव पङ्कजम् ॥
वामोर्ध्वं तु स्रुवं हस्ते पुस्तकान्तदधःकरे ।
दधत् सोवर्णसुक्तालाभाय विजयाय च ॥

ब्रह्मणः ।

एकादशोऽधुना ज्ञेयो वाक्पतिर्नामनामतः ।
सुवर्णवर्णं एवायं कृष्णशुभ्रांशुकान्वितः ॥
कुण्डली मर्कादिहस्ते तु द्वितीये सौर मेव च ।
वामादिमे करे कीरं द्वितीये नीरजं दधत् ।
प्रजालाभकरश्चैव कार्यनिष्पत्तिसाधकः ॥

वाक्पतिः ।

हादशघात्र विज्ञेयो पौष्णनामा सुलोहितः ।
पीतवस्त्रो जटामौलिर्मुनिपुष्पकृतश्रुतिः ॥
तुन्दिलः सोपवीती च नीलकीलकपाण्डुरः ।
अर्कादिमे करे वीजपूरकं शुभ्रवर्णकम् ॥
द्वितीये वारिजं पाथी पात्रं वामादिमे करे ।
सन्दंशन्तु द्वितीयेऽयं धारयन् वैरिता पद ॥

पौष्णस्य ।

जयाधुनात्र वैकथ्यो वैकुण्ठाख्यस्त्रयोदशः ।
पादजान्वन्तशुभ्रीऽयं कण्ठान्तारुणवर्णकः ॥
अलिवर्णस्तु केशान्त कुण्डलानेकरत्नजः ।
दक्षिणाद्ये करे पुस्त्रीमम्बुजन्तु द्वितीयके ॥

केकीपिच्छन्तु वामाद्ये द्वितीये चातपत्रकं ।
दधानः कौत्स्ये भुक्त्यौ पूजनीयः सिताम्बुजैः ।

वैकुण्ठस्य ।

चतुर्दशोऽधुना ज्ञेयो नामतस्तु समीरणः ।
जलनीलनिभश्चैव शुभमारकतद्युतिः ॥
सितनीलारुणप्रान्तवसनः स्निग्धलोचनः ।
तालपत्रं यमादिस्थे द्वितीये नीलनीरजम् ॥
वामादिमे करे पात्रं द्वितीये नीलरत्नजम् ।
दधानो यज्वनो भूत्स्यै वासवश्चैव सुखाय च ॥

समीरणस्य ।

अथ पञ्चदशो ज्ञेयो सुहृत्तो नैर्ऋतोऽरुणः ।
मेघकाभस्त्रिनेत्रस्तु दंष्ट्रावान् वसनारुणः ॥
स्वर्णन्दनीलभूषाढाः शोषालितिलकान्वितः ।
आदिमे दक्षिणे वाणं द्वितीये कमलं करे ।
वामादिमे धनुर्हस्ते द्वितीये चैव वारिजं ।
दधच्छान्तो सुभोगाय बलाय विजयाय च ।

नैर्ऋतसुहृत्तस्य ।

एते निशाचरा ख्याता सुहृत्ताः सकलास्तव ।
अहोरात्राभिधन्वात्र जण्ड्यौवादिमूर्धजः ।
कण्ठपादान्तशुभ्रोऽयं द्विभुजो दीर्घगोधिकः ।
सामचन्द्रजटामौलिः पिङ्गलश्मश्रुलोचनः ॥

मृमुष्णमाशिकोपेतः कृष्णशुभ्राशुक्रान्वितः ।
 अर्कमर्कं दधानोऽयं वामे चैव विधुन्तुदं ।
 इष्टापूर्त्तं प्रसिद्धार्थं पूजनीयो मनोविभिः ॥

अहोरात्रस्य ।

शुक्लपक्षो नरः शुक्लो जटामुकुटसंयुतः ।
 शोणवस्त्रो विशालाक्षी भालालितिलकान्वितः ॥
 सूर्यमर्कं दधानोयस्वामे चन्द्रजविम्बकम् ।
 पूजनीयो महाभक्त्या प्रतिपक्षं सिते सिते ॥
 अस्य द्वादश भेदाः स्युर्विज्ञेया वर्षभेदतः ।
 पूजनीयोबलात्यर्थं-प्रतिमासन्तु भेदतः ॥

शुक्लपक्षस्य ।

श्यामाभः कृष्णपक्षस्तु सितशीष्णाम्बरी बली ।
 सूर्यविम्बं यमे विम्बहामे द्वीपं समुज्ज्वलम् ॥
 पूजनीयो बलात्यर्थं प्रतिमासन्तु भेदतः ।
 इत्यस्वार्कप्रभेदाः स्युर्भपक्षादिजनामतः ॥

कृष्णपक्षस्य ।

स्वनामतस्तु मासः स्यात् द्विवर्षस्तु द्विदोरिति ।
 नाभ्युद्गाधःश्वेतकृष्णः पिङ्गलोचनमूर्धजः ॥
 सूर्यचन्द्रान्वितः सोऽयं प्रतिमासन्तु पूज्यते ।
 स्वनामपूर्वकैर्मन्त्रैर्हीमपूजावसानकैः ॥

(२६)

मासस्य ।

ऋतुषट्कमथो ब्रूमोलक्ष्मणाम् पृथक्फलैः ।
हेमन्ताख्यस्तु तत्रायः कपिलः पिङ्गकुण्डलः ।
पीतवस्त्रसमोपेतस्त्रिजटः कृष्णगोधिकः ॥

गोधिलंलाटं ।

धान्यमञ्जरिकाख्यस्तु वामपान्त्रपिधानकः ।
पूजनीयोविभूत्यर्थं धान्यसम्पत्तिवृद्धये ॥

हेमन्तस्य ।

शिशिराख्यो द्वितीयस्तु हरित्पीतनिभारुणः ।
पीतकुण्डलकणंस्तु कण्ठविद्रुममालिकः ॥
मधुद्रुमप्रसूनाङ्गपात्रमर्कं कराम्बुजे ।
वामे धान्यशरावन्तु धारयन्निष्टवृद्धये ॥

शिशिरस्य ।

विष्णुप्रकारशोक्लस्तु श्वातव्योऽत्र वसन्तकः ॥

वसन्तस्य ।

श्रीष्वाभिधयतुर्थस्तु धूसरो रुक्मगात्रकः ।
अक्षसूत्रार्कहस्तस्तु वामे शुभ्रातपत्रयुक् ।
रोगसन्तापनाशाय पूजनीयोऽरिपक्षहा ॥

श्रीषस्य ।

पञ्चमस्तोदरुंस्तु हरिद्वर्णोऽरुणेक्षयः ।

ताम्रवर्णाशुकोपेतः कृष्णविद्रुमकुण्डलः ॥
मीनमर्कं दधानीयं तीयपूर्वघटं परे ।
मेघमालाहतचैव विद्युद्दहनदीप्तिमान् ।
हरितासिदलैः पूज्या पुष्टिसन्तुष्टिद्वये ।

वर्षायाः ।

शरदृतुरथो षष्ठश्चन्द्रगौरः सुलोचनः ।
कण्ठमौक्तिकमालस्तु कर्णचन्द्रजकुण्डली ॥
चन्द्रविम्बंकरे दक्षे वामे चामृतजंघटं ।
दधानः पूजनीयोऽयमाशुर्वै सुखाय च ॥

शरदः ।

दक्षिणायनसंज्ञोऽथ श्यामः सोमेन्द्रलोचनः ।
पीतवस्त्रो हृत्पुण्डः कर्षिकारदलन्नुतिः ॥
बीजाङ्गुरशरावार्कः खनिचोत्तरहस्तकः ।
पूजितः सिद्धये नित्यं धनधान्यसमृद्धये ॥

दक्षिणायनस्य ।

उत्तरायणसंज्ञोऽथ शुभ्रवर्णो विशालदृक् ।
माञ्जिष्ठवसनीपेतः स्वर्णमुक्ताविभूषणः ॥
पुस्तकं दक्षिणे हस्ते वामे तु रविविम्बकम् ।
दधद्भूतये मुदे चैव पूजनीयस्तु कीर्त्तये ॥

उत्तरायणस्य ।

अथ संवत्सरान् ब्रूमो नाम लक्षफलादितः ।
 प्रभवास्थोभवेदाद्यः पीतवर्षो महोदरः ॥
 नीलवस्त्रसमीपेती दक्षकाञ्चनकुण्डलः ।
 वामे स्फाटिकवर्षस्तु पृष्ठलम्बिजटात्रयः ॥
 दक्षिणे प्रथमे शक्तिं पङ्कजन्तु द्वितीयके ।
 वामादिमे शरावन्तु बीजपूर्णं कराम्बुजे ।
 द्वितीये चैव सन्दंशं दधानः पुष्टिद्वये ॥

प्रभवस्य ।

विभवास्थो द्वितीयस्तु नीलपीतारुणच्छविः ।
 पीतशुभ्रान्तवस्त्रोऽयं कण्ठे पद्माक्षमालिकः ॥
 दक्षिणाद्ये शरं पाशौ द्वितीये नीलपङ्कजम् ।
 सन्दंशसुत्तराक्ष्ये द्वितीये चैव कार्मुकम् ॥
 दधद्विभूतये नित्यं पूजनीयो विपश्चिता ।

विभवस्य ।

शुक्लनामा तृतीयस्तु श्वे तपिङ्गल सन्निभः ।
 कण्ठपद्माक्षमालीयं शुभ्रप्रान्तालिवस्त्रपृक् ॥
 दक्षिणाद्ये शरावन्तु द्वितीये वाचमेव च ।
 दपञ्चोत्तरादित्ये द्वितीये चैव कार्मुकम् ।
 दधानो भूतये मर्त्यैः पूजनीयः क्षतात्मभिः ॥

शुक्लस्य ।

प्रमोदास्यश्चतुर्थस्तु नीलग्रीवो महोदरः ।

श्वेतवस्त्रोऽजसङ्काशो योगपट्टोत्तरीयवान् ॥
दक्षिणाद्ये तु सन्दंशं द्वितीये सौरमेव च ।
वामादिमे शरावन्तु द्वितीये नीलपङ्कजम् ।
दधत् सोख्याय भोगाय विजयाय महाय च ॥

प्रमोदस्य ।

प्रजापत्याख्य एवाच पञ्चमः स्वर्णसन्निभः ।
शोणभूषणवस्त्राढास्तुन्दिलो गौरपाण्डुरः ॥
अक्षसूत्रं यमादिस्थे द्वितीये परशुं करे ।
शरावसुत्तरादिस्थे द्वितीये पुस्तकं दधत् ॥
प्रजावृक्षैः विभूत्यै च पूजनीयोविजानता ।

प्रजापतेः ।

अङ्गिराख्यस्ततः षष्ठो वर्णशुभ्रोऽतिलोमयः ।
ताम्रवस्त्रो महातेजा द्वादशाङ्गः सचन्दनः ॥
पवित्रदर्भपाणिस्तु जटामण्डितमस्तकः ।
ज्ञानखड्गन्तु दक्षाद्ये द्वितीये समिधहरे ॥
वामादिमे शरावन्तु ब्रह्मदण्डं द्वितीयके ।
दधन्तुपूजितो भूत्यै श्रेयसे च सुखाय च ॥

अङ्गिरसः ।

सप्तमः श्रीसुखाख्यस्तु पीतवर्णो विशालदृक् ।
पाटलावसनोपेतो दीर्घ कर्णालकारुणः ॥
सुवर्णरत्नभूषाढाः सर्वानर्घविघातकृत् ।

श्रीफलं दक्षिणादिस्थे द्वितीये चैव पङ्कजम् ।
 पुस्तकक्षीर्षगे वामे तदधस्तु शरावकम् ।
 दधानः पुष्टये लक्ष्मी चन्दनादिभिरर्चितः ॥

श्रीमुखस्य ।

भावाभिधोऽष्टमस्तत्र नीलशुभ्राणकृषिः ।
 पीतकृष्णारुणप्रान्त वसनश्चित्तकुण्डलः ॥
 मुक्ता विद्रुम मालोऽयं जटापिङ्गाक्षएवच ।
 दक्षिणे प्रथमे पुस्तमंशकन्तु द्वितीयके ॥
 वामोर्ध्वगे करे शूलं तदधःपात्रमासवं ।
 विभ्रत्संपूजनीयस्तु धान्यलाभाय वै त्रिये ॥

भावस्य ।

नवमोऽत्र युवाख्यस्तु पाटलाभोरुणेक्षणः ।
 नीलवस्त्रजटोत्तुङ्गी रत्नमेचककुण्डलः ॥
 दक्षिणे प्रथमं शङ्खं द्वितीये तु सुदर्शनम् ।
 वामादिमे करे पात्रं द्वितीये नीलपङ्कजम् ।
 विभ्राणः कान्तये पूज्या लक्ष्मीसौभाग्यवृद्धये ॥

युवाख्यस्य ।

धाताचैव प्रविज्ञेयो दशमः पिङ्गलीचनः ।
 हस्तशुभ्राणप्रान्तवसनः श्वेतकुण्डलः ॥
 शरावमादिमे दक्षे द्वितीये बीजपूरकम् ।
 वामोर्ध्वगे करे पुस्तौ नीलमिन्दीवरत्नधः ॥

जयाय पुत्रसम्पत्तौ पुजनीयः सुभक्तितः ॥

धात्राख्यस्य ।

ईश्वराभिधएवात्र ज्ञेय एकादशोप्यमौ ।
 कैरवाभस्त्रिनेत्रस्तु जटाखण्डेन्दुमौलिकः ॥
 सुतास्काटिकरौद्राचभूषणस्तुङ्गनासिकः ।
 त्रिशूलमादिमे दक्षे द्वितीये सीरमेवच ॥
 शरावमादिमे वामे द्वितीये चैव पुस्तकम् ।
 विभ्रत् सौख्याय पूष्योऽसौ योगवृद्धौ सुताप्तये ॥

ईश्वरस्य ।

द्वादशो बहुधान्याख्यः पीतनीलारुणच्छविः ।
 पीतवस्त्रो विशालाक्षस्तुन्दिलोदीर्घगोधिकाः ॥
 जवाकुसुममालोयङ्गवर्षी गजकुण्डलः ।
 दक्षिणाद्ये करे कुम्भं सौवर्णं सर्वधान्यकम् ॥
 बौरपूरपिधानन्तत् खचितानेकरत्नकम् ।
 द्वितीये डमरुं पाणौ चोर्ध्वं नीलजनौरजम् ॥
 द्वितीये तु करे सीरं दधानः सर्वधान्यकम् ।
 सिद्धये पूजितो नित्यं स्नानामाद्यैस्तु संस्कृतः* ॥

बहुधान्यस्य ।

प्रमाथिसंघकक्षाद्यः शुक्लवर्षी महाभुजः ।
 जटाचितयसंयुक्तो दीर्घभारोऽर्ककुण्डलः ॥

* स्नानास्त्राद्यैः संस्कृतमिति पुस्तकाकरे ।

शोणनीलाम्बरोपितः काञ्चनानेकमुद्रिकः ।
 पिकमर्कादिमे हस्ते द्वितीये कम्बुमेवच ॥
 पाशं वामोर्ध्वे हस्ते तदधस्ताम्बुपात्रकम् ।
 दधानो वैरिघाताय स्ववर्गस्यैव पुष्टये ॥

प्रमाद्यिनः ।

विक्रमाख्यो द्वितीयस्तु, नीलशुभ्रो मञ्जीदरः ।
 पीतवस्त्रो वृष्टद्वालः कण्ठभौक्तिक मालिकः ॥
 आदिमे दक्षिणे शङ्ख' द्वितीये चैव पङ्कजम् ।
 वामादिमे करे पात्रं पाशमत्र द्वितीयके ॥
 दधानोऽपि बलात्यर्थं पूजनीयस्तु यत्नतः ।

विक्रमस्य ।

वृषाभिधस्तृतीयस्तु श्वेतगौरो विशालदृक् ।
 ख्यूलरोमातिसंहृष्टः केतकीदलकर्णयुक् ॥
 पीतप्रान्ताशुपेतवसनः कटिघण्टिकः ।
 आदिमे दक्षिणे पाशं द्वितीये शङ्खमेवच ॥
 वामादिमे करे पात्रं द्वितीये मृगमेवच ।
 धनधान्यप्रवृत्तार्थं पूजनीयोऽतिसादरम् ।

वृषस्य ।

चतुर्थद्वित्रभान्वाख्यद्वित्रप्रोवीऽरुणांशुकः ।
 मुक्तागर्भनिभस्यैव वरदः स्वर्णकुण्डलः ॥
 मुक्तास्त्रजन्तु दक्षायै द्वितीये चैव पाशकम् ।

वामादिमे करे कम्बुं द्वितीये पङ्कजं शुभम् ।
विभ्रदानन्दसम्पत्तौ प्रतापार्थविहङ्गये ॥

चिचभानोः ।

पञ्चमस्तु शुभान्वाख्यः शुभश्रीशरणिः शुभः ।
कण्ठद्विरेखश्रीशस्तु जटाकाञ्चनसन्निभः ॥
आदिमे दक्षिणे पद्मं द्वितीये शङ्खसुखलम् ।
वामोर्ध्वं तु करे पाशं तदधःस्ये शयेऽङ्गुशं ।
विभ्राणः सुखदः शान्त्यै रिपुपञ्चययाय च ॥

सुभानोः ।

अत्र संवत्सरः षष्ठस्तारणाख्यः सिताम्बरः ।
श्वेतनीलारुणशैव स्वर्णकुण्डलभूषणः ॥
प्रथमे दक्षिणे कुम्भं द्वितीये चैव पङ्कजम् ।
उत्तराद्ये करे पाशं द्वितीये शङ्खमादधत् ।
दुर्गत्यनेकनाशाय भूतये विजयाय च ॥

तारणस्य ।

सप्तमः पार्थिवाख्यस्तु तप्तकाञ्चनसन्निभः ।
पीतश्रीणाम्बरशैव कृष्णश्रीवोऽतिसुन्दरः ॥
सर्व्वरत्नविभूषाढाः केतकीदलमस्तकः ।
आदिमे दक्षिणे बाणं द्वितीये चैव पङ्कजम् ॥
कार्मुकञ्चोत्तरादिस्थे द्वितीये शङ्खमेव च ।
दधद्राज्यादिलाभाय पूजननीयः प्रयत्नतः ॥

(२७)

पार्थिवस्य ।

अध्यायस्योऽष्टमश्चाप कैरवारुणसन्निभः ।
 कृष्णनीलाङ्गश्वेतवसंनधित्रकुण्डलः ॥
 कौरमर्कादिमे हस्ते द्वितीये सौरमेव च ।
 ग्रहं वामादिमे हस्ते द्वितीये पाशमादधत् ।
 यज्वनोभूतये नित्यं वृषभे चायुषे त्रिभे ॥

अध्यायस्य ।

सर्वजिह्ववमोऽप्यत्र श्वेतनीलोऽसितप्रभः ।
 नीलवस्त्रजटोत्कृष्टः कृष्णनीरजकुण्डलः ॥
 अर्कादिमे करे बाणं द्वितीये चैव पुस्तकम् ।
 वामादिमे करे पात्रं द्वितीये पात्रमेव च ।
 दधानः पूजनीयोऽयं विजयाय सुखाय च ॥

सर्वजितः ।

अधुना कथ्यते वक्ष्ये दशमः सर्वधारकः ।
 कङ्कपत्रनिभश्चैव पाटलावसनान्वितः ॥
 नीलपङ्कजवर्षस्तु सुक्लाहारविभूषणः ।
 पाशमर्कादिमे हस्ते द्वितीये केतकीदलम् ॥
 ग्रहश्चैवोत्तरादिश्चे द्वितीये चैव पुस्तकम् ।
 दधानो विजयारोग्यवृषभे चैव यज्वनः ॥

सर्वधारिणः ।

एकादशीऽधुना ज्ञेयो विरोधिर्नाम वक्षरः ।

कृष्णपाण्डुरदेहस्तु वरदो नीलकुण्डलः ॥
 कृष्णप्रान्ताक्षयैव वसनप्रान्तभूषणः ।
 बिम्बीफलन्तु चार्काद्ये द्वितीयं श्वेतपङ्कजम् ॥
 यामादिमे करे सर्पं द्वितीये पाशमादधत् ॥
 पूजनीयोऽरिघाताय बलवृद्धौ च यज्वनः ॥

विरोधिनः ।

ह्लादशो विक्रताख्यस्तु धूमरः पिङ्गलोचनः ।
 नीलशुभ्रांशुकोपितो मेषशृङ्गकुण्डलः ॥
 दक्षिणाद्ये करे पाश द्वितीये मेषशृङ्गकम् ।
 वामोर्ध्वे करे शङ्खं पाशमस्मादधःकरे ।
 दधानो रोगनाशाय दृष्टशत्रुविधानकृत् ॥

विक्रतेः ॥

खराभिधानस्तत्राद्यो रक्तवर्णो वृहोदरः ।
 नीलवस्त्रो वृहद्बालो घनवर्वरमूर्ध्वजः ॥
 दक्षिणाद्ये करे शक्तिं द्वितीये खड्गमेव च ।
 वामादिमे करे पात्रं द्वितीये चामरन्दधत् ।
 शत्रुतापाय पूज्योऽसौ विजयायैव यज्वनः ॥

खरस्य ।

नन्दनाख्यो द्वितीयस्तु पीतशीणाननो बली ।
 शुभवस्त्रो जटालम्बो दीर्घकर्णः कजासनः ॥
 पङ्कजन्तु यमादिस्थे द्वितीये शक्तिमेव च ।

वज्रमिन्द्रादिभे पाशौ द्वितीयेचाहुयं श्रये ।
दधानः त्रैयसे भूत्वे पूजनयीमहोदयः ॥

नन्दनस्य ।

विजयाख्यस्तृतीयस्तु श्वेतपीतारुणच्छविः ।
कण्ठावस्त्रः कशोत्तङ्गजटारुद्राक्षमालिकः *
अक्षसूत्रं यमादिस्थे द्वितीये कुलियङ्करे ।
शक्तिं वामादिभे हस्ते द्वितीये चैव पङ्कजम् ।
दधानो विजया रोम्य वृहद्ये चैव पूजितः ॥

विजयस्य ।

जयाभिधत्तुर्थोऽत्र पीतशोचः सुचिः सुखी ।
पीतवस्त्रो जटैकस्तु पीतरक्तचर्चवेष्टितः ॥
पुस्तकं प्रथमे दक्षे द्वितीये नीलपङ्कजम् ।
वामादिभे करे वज्रं द्वितीये शक्ति मेव च ।
दधानः शुभमाङ्गल्यवृहद्ये चैव पूजितः ॥

जयस्य ।

पञ्चमी मन्मथाख्यस्तु नीलशोणशुचिः शुभः ।
स्वर्णकुण्डलसंयुक्तः कौरपञ्चनिर्भांशुकः ॥
मङ्गिकाधन्ववायस्तु मूर्ध्वापुष्पजमालिकः* ।
दण्डान्तु दक्षिणे हस्ते द्वितीये चैव पङ्कजम् ॥
वामादिभे करे पुस्तकं द्वितीये शक्ति मेव च ।
दधानः सिद्धये भूत्वे योषिद्वर्गवशीकृतौ ॥

* गोवापुष्पजमालिक इति पुस्तकाकरे ।

मन्त्रवस्त्र ।

वृष्टश्चैवात्र विज्ञेयो वम्बरो दुर्भ्रंखाभिधः ।
 शुकश्चक्षुनिभश्चैव नीलकुण्डलसम्बरः ॥
 दक्षिणाद्ये करे शक्तिं द्वितीये वस्त्रमेव च ।
 शुकं वामादिमे पाणौ द्वितीये सर्पमादधत् ॥
 पूजनीयो विधानेन भ्रुकुटीकुटिलाननः ।
 दुष्टशत्रुविनाशाय सम्बरो गोपशान्तये ॥

दुर्भ्रंखस्य ।

सप्तमो हेमलम्बाख्यो रक्तपीतनिभह्रविः ।
 वृद्धपक्षांशुकश्चैव रत्नकुण्डलभूषणः ॥
 हेमजं पङ्कजं दक्षे प्रथमे करपङ्कजे ।
 द्वितीये कुलिशं पाणौ वामाद्ये पात्रं सुत्तमम् ।
 द्वितीये तु करे शक्तिं दधानो भुक्तये जय ॥

हेमलम्बस्य ।

अष्टमस्तु विलम्बाख्यः पाटलाभः कृशोदरः ।
 पीतवस्त्रो वृहद्भालीजटाखण्डेन्दुमण्डनः ॥
 प्रथमे दक्षिणे सर्पं द्वितीये शक्तिमेव च ।
 वामादिमे करे पात्रं द्वितीये चैव पङ्कजम् ।
 दधानः शत्रुघाताय पूजनीयो विशेषतः ॥

विलम्बस्य ।

विक्रारी नवमस्याथ कृष्णनीलाक्षह्रविः ।

ताम्रकुण्डलवस्त्राढ्यः कण्ठशोणत्रिरेखिकः ॥
 दक्षिणाद्ये करे वाणं द्वितीये चैव पुस्तकम् ।
 वामादिमे धनुर्हस्ते द्वितीये शक्तिमादधत् ।
 पूजनीयोविशेषेण सर्वरोगोपशान्तये ॥

विकारिणः ।

दशमः शार्करिप्रव्यः कृष्णशुभ्राकृष्णविः ।
 शोणवस्त्रोऽतिदीर्घाङ्गः स्थूलवर्बरमूर्धजः ॥
 दक्षिणाद्ये करे सर्पं द्वितीये शाल्मालीदलम् ।
 कौशिकञ्चोत्तरादिस्थे द्वितीये शक्तिमेव च ।
 दधानः कौत्सये पुष्ट्यै शत्रुभङ्गाय पूजितः ॥

शार्करिणः ।

एकादशः भ्रुवाख्यस्तु शशकर्णनिभच्छविः ।
 दर्दुराभास्वरोपेतो लोहकुण्डलसंयुतः ॥
 आदिमे दक्षिणे हस्ते दर्दुरं मणिसंयुतम् ।
 द्वितीये तु करे शक्तिं पात्रं वामादिमे करे ।
 द्वितीये पङ्कजं विभ्रत् पूजनीयोप्यमिचहा ॥

भ्रुवस्य ।

शुभक्तत् हादशोप्यत्र नागजाभः सुलोचनः ।
 पाटलावसनीपेतः कृष्णकुण्डलभूषणः ॥
 दक्षिणे भौषणां शक्तिं प्रथमे करपङ्कवे ।
 द्वितीये हेमजं पद्मं वामाद्ये चैव दर्पणम् ॥

द्वितीये कुलिशं हस्ते दधत्सौख्याय सम्पदे ॥

शुभकृतः ।

श्रीभक्तत् पीतधूमस्तु प्रथमी नीलजाम्बरः ।

नीलभूषणसंयुक्तो रत्नसुद्राकराङ्गुलिः ॥

घटमर्कादिमे हस्ते द्वितीये चैव पुस्तकम् ।

वामादिमे करे पात्रं द्वितीये ध्वजमेव च ॥

दधानः श्रेयसे पुष्ट्यै पूजनयोग्ययाय च ।

श्रीभक्ततः ।

क्रोधिसंज्ञो द्वितीयस्तु नीलशुभ्रः कृशोदरः ।

मेचकाम्बरसंयुक्तस्तुङ्गनासालिपाण्डुरः ॥

पद्ममर्कादिमे हस्ते द्वितीये ध्वजमेव च ।

वामादिमे कजं पाणौ द्वितीये सीरमेव च ।

दधानो वैरिनाशाय कृष्णद्रव्यैः संपूजितः ॥

क्रोधिनः ।

विश्रावसुस्तृतीयस्तु कृष्णायीवः सुलीलट्टकः ।

कृष्णशुभ्राक्षयप्रान्तवसनसिचकुण्डलः ॥

ध्वजमर्कादिमे पाणौ द्वितीये कुलिशं शये ।

दधानो भुक्तये प्रीत्यै नानाभोगफलाप्तये ॥

विश्रावसोः ।

पराभवस्तुर्धस्तु धूसरोऽक्षयजाम्बरः ।

नीलोत्पलानुतिश्चैव शुद्धषष्टिकमेखलः ॥
 नीलोत्पलानु दक्षार्धे द्वितीये ध्वजमेव च ।
 वामादिमे करे पाचं सन्दंशन्तु द्वितीयके ।
 धारयन्नरिघाताय पूजनौयो विपश्चिता ॥

पराभवस्य ।

पञ्चमस्तु ग्भवङ्गास्थो हरिश्चाजिनसन्निभः ।
 मेषोदराभवस्त्रोयं संयुतकृष्णकन्धरः ॥
 दक्षिणाद्ये ध्वजं पाणौ द्वितीये मेषशृङ्गकम् ।
 वामादिमे करे पाचं द्वितीये पाशमेव च ।
 दधानो भूतये भूक्त्यै पूजनौयः सदा नृभिः ॥

गुणवङ्गस्य ।

किलकास्थस्ततः षष्ठः कृष्णवर्णोऽतिदीर्घयुक् ।
 नीलवस्त्रो जटाभारः कृष्णकुण्डलभूषणः ॥
 नीलकं दक्षिणादिस्थे द्वितीये ध्वजमेव च ।
 वामादिमे करे पाचं सन्दंशन्तु द्वितीयके ।
 दधानो विजया, रोग्य, वृषये चैव पूजितः ॥

किलकस्य ।

सप्तमः सौम्यनामाद्य कौर्त्यते वस्त्ररः शुभः ।
 नीलपीत जटायुत्तोरश्मादलनिर्भाशुकः ॥
 स्वर्णपत्रानुतिश्चैव कण्ठपङ्कजमालिकः ।
 चन्द्रमर्कादिमे हस्ते द्वितीये केतकीदलम् ॥

वामादिमे ध्वजं हस्ते द्वितीये नीरजं शुभं ।
विभ्रक्तौभाग्ययोगाय पूजनीयः सुभक्तितः ॥

सौम्यस्य ।

साधारणोऽष्टमो ज्ञेयो नील गौरारुणच्छविः ।
पीतश्रीषान्तवस्त्रीयं स्वर्णं कुण्डल रत्नयुक् ॥
चन्द्रहासं यमादिस्थे द्वितीये चैव कौलकम् ।
वामादिमे ध्वजं पाणौ सन्दंशस्रोतरे दधत् ।
धनद्वेषे सुखात्यर्थं पूजनीयः सिताम्बुजैः ॥

साधारणस्य ।

विरोधकश्च विज्ञेयो नवमी वत्सरो जय ।
पिक्वाभः शुक्लवस्त्रोऽयं पिङ्गश्मश्रुजटेक्षणः ॥
दक्षिणार्थे करे शङ्खं द्वितीये चैव वै ध्वजम् ।
चन्द्रहासन्तु वामार्थे द्वितीये परशुं शये ।
बिभ्राणो रोगनाशाय शत्रुसन्तापकत् जय ॥

विरोधकत् ।

परिधात्री तु विज्ञेयो दशमश्च व वत्सरः ।
इन्दीवरारुणश्चेतः कृष्णपीतनिर्भाशुकः ॥
ब्रह्मप्रसवकर्णस्तु कण्ठपङ्कजमालिकः ।
पिकमर्कादिमे हस्ते द्वितीये ध्वजमेव च ॥
घण्टां वामादिमे पाणौ द्वितीये चैव सुहरम् ।
दधालो हृदये चैव त्रेयो-भूति-सुखा-युषाम् ॥

(२८)

परिधाविनः ।

प्रमादी चापि विज्ञे यो रुद्रसंख्योऽपि वत्सरः ।
 अतसोपुष्यसङ्काशो हरिनीलारुणाम्बरः ।
 मद्घूर्णितनेत्रस्तु तन्द्रीभूत इवालसः ।
 दण्डमर्कादिमे हस्ते द्वितीये दण्डमेव च ॥
 वामादिमे करे पात्रं द्वितीये विसिनीदलम् ।
 दधानो रोगविच्छिन्नये शत्रुभङ्गाय यज्वनः ॥

प्रमादिनः ।

आनन्दाख्यः सितः पीतवसनो द्वादशोऽत्र हि ।
 मुक्तेन्द्रनीलमोवर्णभूषणो नीलकुण्डलः ॥
 पङ्कजं दक्षिणादिस्थे द्वितीये केतकीदलम् ।
 वामोर्ध्वन्तु ध्वजं पाणौ तदधःस्थे तु मोदकम् ।
 योषिदृश्याय स पूज्या गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥

आनन्दस्य ।

तामसानां भवेदाद्यो राक्षसो नाम वत्सरः ।
 इन्द्रीवरदलाभासो हेमवस्त्रोऽर्कभूषणः ॥
 अर्कमर्कादिमे हस्ते द्वितीये शृणुमेव च ।
 नीलोत्पलन्तु वामाद्ये द्वितीये कुलिगं शये ॥
 दृषट्टोगादिनाशाय पूज्यः स्थाणुभिरेव सः ।

राक्षसस्य ।

घनजाख्यो द्वितीयस्त नीलशुभ्रारुणच्छविः ।

पीतप्रान्ताखिवस्त्रस्तु वज्रकुण्डलभूषणः ॥
 चन्द्रहासं यमादिस्थे द्वितीये चार्ककङ्करे ।
 पिशितस्योत्तरादिस्थे परे चैव परस्त्रधम् ।
 दधत् सुसम्पदेऽरीणां विजयायैव यज्वनः ॥

अनलस्य ।

पिङ्गलाख्य स्तृतीयोऽत्र कुमुदारुणसन्निभः ।
 श्वेतप्रान्तारुणानीलवसनः स्वर्णभूषणः ॥
 आदिमे पिशितं याम्ये द्वितीये सौर मेव च ।
 कुलिशञ्चैव वामाद्ये सन्दंशन्तु द्वितीयके ।
 विभ्राणो विजया-रीग्य-दृष्टये चैव पूजितः ॥

पिङ्गलस्य ।

कालयुक्ताभिधस्तुर्यो नीलकण्ठी हकीदरः ।
 पीतारुणांशुकोपेतो नील स्वर्णजभूषणः ॥
 यमादिमे करे सर्पं द्वितीये सौर मेव च ।
 सीधूपात्रन्तु* वामाद्ये द्वितीये कीलमेव च ।
 पूजनौयो विशेषेण यज्वनो वैरिमृत्यवे ॥

कालयुक्तस्य ।

अधुना कीर्त्यते वक्र सिद्धार्थो नाम पञ्चमः ।
 तप्तकाञ्चनसङ्काशो नीलशुभ्राख्यांशुकः ॥
 नीलकुण्डलसंयुक्तो मुक्ताविद्रुम भूषणः ।

* सीधूपात्रन्तु इति पुस्तकान्तरे ।

सोवर्षं कलशं शान्तिं प्रथमे करपङ्कवे ॥
 इन्दीवरं परे चैव कुक्षिशङ्खोत्तरोर्ध्वने ।
 वीजपूरमधस्तात्साहधानः त्रैयवे सुदे ॥

सिद्धार्थस्य ।

रौद्राभिधस्ततः षष्ठः पिङ्गलः क्षणालोहितः ।
 पाटलावसनोपेतो ब्रह्मवर्च्यंरमूर्ध्वजः ॥
 कीर* मर्कादिमे हस्ते द्वितीये हस्तमादधत् ।
 कुण्डलीमिथादिमे† पाणौ परे कुण्डलिनं शये ।
 रोगनाशाय संभुक्त्यै पूज्योऽयं परिपन्थिषु ॥

रौद्रस्य ।

सप्तमः कथ्यते चायं मेघकाभः सुदुर्भतिः ।
 शङ्खमर्कादिमे हस्ते स्वर्णमेखलरत्नजम् ॥
 सर्पमत्र द्वितीये वै कुण्डलीमिन्द्रादिमे शये ।
 द्वितीये पुस्तकं पाणौ दधद्दिहेषकद्रिषीः ॥

दुर्भतेः ।

षष्ठमे दुन्दुभिप्रस्थो नोलशीवी विशालदृक् ।
 सोमवर्षः सिताम्बोजवसनः क्षणगोधिकः ॥
 जटा मुकुट भालेऽयं‡ स्वर्णं पचद्युतिः शुभः ।
 कदलीफलमर्काद्ये द्वितीये शङ्खं मेव च ॥

* कीलमिति पुस्तकान्तरे ।

† मिं हादिमे इति पुस्तकान्तरे ।

‡ जटामुकुट शान्तिमिति पुस्तकान्तरे ।

बीजपूरणु वामाद्ये द्वितीये सस्यमञ्जरीं ।
विभ्राणो धनधान्याय पूजनीयः सदा नृभिः* ॥

दुन्दुभेः ।

नवमो रुधिरोग्गारी नीलशोणालिदेवयुक् ।
क्षणप्रान्तावृणश्चेत वसनो नीलभूषणः ॥
लोहिताक्षो जटापिङ्गः शोणचन्दनचर्चितः ।
रक्तोत्पलं यमादिस्थे द्वितीये कुलिशं शये ॥
पिणितञ्जीशरादिस्थे द्वितीये चाङ्गुशं दधत् ।
वैरिभङ्गाय वै पूज्यो बालवृद्धैश्च हि यम्बनः ॥

रुधिरोग्गारिणः ।

दशमश्चैव रक्ताक्षी नीलकण्ठः कृशोदरः ।
पीतनीलतनुश्चैव नील शोणालिकाम्बरः ॥
शरमर्कादिमे पाणौ द्वितीये चैव पङ्कजम् ।
सौरमिन्द्रादिमे हस्ते द्वितीये चैव कर्त्तरीं ।
दधहैरिविघाताय पूजनीयः प्रयत्नतः ॥

रक्ताक्षी ।

एकादशोधुना वल्ल क्रोधनाख्यो निगद्यते ।
सजलाम्बुदसङ्काशः पीतशोणाम्बरान्वितः ॥
लोहभूषणसंयुक्तः केशमध्यगपङ्कजः ।
दक्षिणाद्ये करे शूलं पलशुष्काप्रसंयुतः ॥

* सदाकान्तिरिति पुस्तकाकारे पाठः ।

द्वितीये कर्त्तरीमत्र वामाद्ये पात्रमामवम् ।
सन्दंशन्तु द्वितीये वै दधानो वैरिमृत्यवे ॥

क्रोधनस्य ।

क्षयाभिधौ भवेदत्र हादशो वत्सरो जय ।
कृष्णश्रीवः सुनीलाङ्गो रत्ननेत्रो जटाधरः ॥
मेचकारुणवस्त्रस्तु नीलकारुणगोधिकः ।
आदिमे दक्षिणे सर्पं द्वितीये चैव पाशकम् ॥
विषकुम्भन्तु वामाद्ये द्वितीये चैव कैतवम् ।
कृष्णप्रसूनकं विभ्रदमित्राणां विघातकृत् ॥

क्षयस्य ।

इति देवता मूर्त्तयः ।

अथ ग्रहस्थापनविधिः ।

मत्स्यपुराणे ।

मध्ये तु भास्करं विद्याल्लोहितं दक्षिणेन तु ।
उत्तरेण गुरुं विद्यात्सोमं दक्षिणपूर्वकम् ॥
पश्चिमे तु शनिं विद्याद्राहुं दक्षिणपश्चिमे ।
पश्चिमोत्तरतः केतूं स्थापयेत् शुकृतण्डुलैः ॥

स्कान्दपुराणे ।

सूर्यस्य चोत्तरे शशुमुमां सोमस्य दक्षिणे ।
स्कान्दमङ्गारकस्यैव दक्षिणस्यां निवेशयेत् ॥

सौम्यपश्चिमतो विष्णुं ब्रह्माणं जीवपूर्वतः ।
 इन्द्रमैन्द्रां मिताहिहि मन्दागिरयतीयमम् ॥
 राहोः पूर्वात्तरे कालं सर्वभूतभयावहम् ।
 केतोर्नैर्ऋतदिग्भागे चित्रगुप्तं निधापयेत् ॥
 उत्तरे शनिमूर्त्याभ्यां गुरुकेत्वोश्च दक्षिणे ।
 गणाधिपं प्रतिष्ठाप्य सर्वदेवनमस्कृतम् ॥
 स्थानाधिदेवतानाञ्च स्थाप्य प्रत्यधिदेवताः ।
 विनायकादिदुर्गाद्या नान्तरे ग्रहदेवयोः ॥

स्मृत्यन्तरे ।

इन्द्रं पूर्वे तु संस्थाप्य प्रेतेशं दक्षिणे तथा ।
 वरुणं पश्चिमे भागे कुबेरं चोत्तरे तथा ॥
 अग्न्यादिलोकपालांश्च कोणभागेषु विन्यसेत् ।
 इन्द्रस्य दक्षिणे पाश्वर्कं वसूनावाहयेद्बुधः ॥
 देवेशेशानयोर्मध्ये आदित्यानां तथायनम् ।
 अग्नेः पश्चिमभागे तु रुद्राणामयनं विदुः ॥
 प्रेतेशरक्षोमध्ये तु मातृस्थानं प्रकल्पयेत् ।
 नैऋतेरुत्तरेभागे गणेशायतनम्बिदुः ॥

कुबेर मरुतां स्थान मुच्यते ।

अथ कलशोत्पत्तिस्तप्तकणश्च ।

देवी पुराणे ।

कलशान् सुदृढान् कुर्यात्तप्तकणानि वदामि ते ।

उत्पत्तिं लक्षणं मानं कथयामि यथा मुने ॥
 वारिकाः कलशाश्चैव येन लोके प्रकीर्त्तिताः ।
 अमृते मथ्यमाने तु पानार्थं सर्वदैवतैः ॥
 मन्वानं मन्दरकृत्वा नेत्रं कृत्वा तु वासुकिम् ।
 उत्पन्नममृतं तत्र महावीर्यपराक्रमम् ॥
 तस्यार्थं धारणाद्यैश्च कलशः परिकीर्त्तितः ।
 कलां कलां गृहीत्वा वै देवानां विश्वकर्मा ॥
 निर्मितोऽयं सुरैर्यस्मात् कलशस्तेन कथ्यते ।
 वारयन्ति ग्रहान् यस्मात् मातरो विविधांस्तथा ।
 दुरितांश्च तथाघोरां स्तेन ते वारकाः स्मृताः ॥
 कलशस्य मुखे ब्रह्मा श्रीवायान् तु महेश्वरः ।
 मूले तु संस्थितो विष्णुर्मध्ये मातृगणाः स्थिताः ॥
 शाखासु देवताः सर्वा वेष्टयन्ति चतुर्दिशम् ।
 पृथिव्यां यानि तीर्थानि कलशे निविशन्ति ह ॥
 गृहे शान्तिश्च पुष्टिश्च प्रीतिर्गोत्रिभिरेव च ।
 ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदस्तथैव च ॥
 अथर्ववेद सञ्चिताः सर्वे कलश संस्थिताः ।
 पूर्णामृतेन तोयेन सितास्ते काञ्चनोज्ज्वलाः ॥
 सरित्स्वरः खातजेन तडागादिजलेन वा ।
 वापीकूपोददिव्येन सामुद्रेण सुखावहाः ॥
 सर्वं मङ्गलं माङ्गल्याः सर्वं क्लिष्टनाशनाः ।
 अभिषेके सदा याज्याः कलशा ईदृशाः शुभाः ॥
 यात्राविवाह काले वा प्रतिष्ठा यज्ञकर्म्मणि ।

योजनीया विशेषेण सर्वकर्मप्रसाधकाः ।
पञ्चाशाहुलवैपुल्यसुखेभ्यो षोडशाहुलः ।
कलशानां प्रमाणं हि सुखमष्टाहुलं भवेत् ॥

नारदीय वृत्सिंहखण्डात् ।

भृगुवाच ।

तुङ्गा भद्रा च भगिनी हेनयो सद्यसम्भवे ।
तयोर्भद्रा तटेवत्स त्वं प्रतिष्ठाप्य केशवम् ॥
तमाराध्य जगन्नाथं गन्धपुष्पादिभिः क्रमात् ।
हृदि क्लृप्तेन्द्रियघामं मनः संयम्य यत्नतः ॥
हृत्पुण्डरीके देवेशं शङ्खचक्रगदाधरम् ।
ध्यायन्नेकमनावत्स द्वादशाक्षरमभ्यसेत् ॥

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय ।

इमं मन्त्रं हि जपतो देवदेवस्य शार्ङ्गिणः ।
प्रीतो भवति विश्वात्मा सृत्यन्तेनोपशाम्यति ॥

इति द्वादशाक्षरः ।

नारदीय वृत्सिंहखण्डात् ।

शुक उवाच ।

किं जपन् मुच्यते तात सततं विष्णुतत्परः ।
संसारदुःखात्मर्षिणां हिताय वद मे पितः ॥

व्यास उवाच ।

अष्टाक्षरं प्रवक्ष्यामि मन्त्राणां मन्त्रसुत्तमम् ।
 यज्ञपन् मुच्यते जन्तुर्जन्मसंसारबन्धनात् ॥
 हृत्पुण्डरीकमध्यस्थं शङ्खचक्रगदाधरम् ।
 एकाग्रमनसा ध्यात्वा विष्णोः कुर्याज्जपन्नरः ॥
 एकाग्रे विजने स्थाने विष्णुधे वा जलान्तिके ।
 जपेदष्टाक्षरं मन्त्रं चित्ते विष्णुं निधाय च ।
 अष्टाक्षरस्य मन्त्रस्य ऋषिर्नारायणः स्मृतः ॥
 कन्दोऽस्य देवी गायत्री परमात्मा च देवता ।
 शुक्लवर्णस्तु श्रीङ्कारो नकारो रक्त उच्यते ॥
 मीकारो वर्णतः कृष्णो नाकारो रक्त एव च ।
 राकारः कुङ्कुमाभासो यकारः पीत उच्यते ॥
 णाकारो मञ्जनाभस्तु यकारो बहुवर्णकः ।
 ॐ नमो नारायणायेति मन्त्रः सर्वार्थसाधकः ॥

ब्रह्म पुराणे ।

ब्रह्मादिस्तम्बपथ्यन्तं सर्वं नारायणात्मकम् ।
 नारायणान्तरं किञ्चिन्नेह पश्यामि हे हिज ॥
 तेन व्याप्तमिदं सर्वं दृश्यादृश्यं चराचरम् ।
 स्मरेन्नारायणं ध्यायेदस्ते काये च विन्यसेत् ॥
 श्रेष्ठे हस्त तलं यावत्सर्ज्यादितयोर्न्यसेत् ।
 ॐकारं वामपादे तु नकारं दक्षिणे न्यसेत् ।
 मीमारं वामकटग्रान्तु नाकारं दक्षिणे तथा ॥

राकारं नाभिदेशे तु यकारं वामबाहुके ॥
 षाकारं दक्षिणे पाथौ यकारं मूर्ध्नि विन्यसेत् ।
 अधसोर्ध्वं च विग्रये पार्श्वतः पृष्ठतोऽप्यतः ॥
 ध्यात्वा नारायणं देवं विदध्यात् कवचं पुनः ।
 पूर्व्वं मां पातु गोविन्दो दक्षिणे मधुसूदनः ॥
 पश्चिमे त्रीधरो देवः केशवश्च तत्रोत्तरे ।
 पातु विष्णु स्तथापे वै नैर्ऋत्ये माधवीऽव्ययः ॥
 व्यायव्ये तु ह्यवीकेशस्तथेशाने च वामनः ।
 भूतसे पातु वाराहस्तत्रोर्ध्वे तु शिविक्रमः ॥
 क्लृप्तैव कवचं पश्चादात्मानं चिन्तयेत्तरः ।
 अहं नारायणो देवः शङ्खचक्रगदाधरः ।
 एवं ध्यात्वा तदात्मानमिमं मन्त्र सुदीरयेत् ॥

इति नारायणष्टाक्षरः ॥

अग्निपुराणे ।

मुक्तिहेतु ह्यरः साक्षात् सर्वज्ञो ज्ञानभावकः ।
 अस्याभिधानमन्त्रोऽयमभिधेयश्च सङ्कृतः ॥
 अभिधानाभिधेयत्वात् मन्त्रात् सिद्धिप्रदो ह्यरः ।
 तस्मात् वेदे मुनिश्रेष्ठ मन्त्रः ऋष्यक्षरः परः ॥
 किं तस्य बहुभिर्मन्त्रैः शास्त्रैर्वा बहुविस्तृतैः ।
 यस्य नमो ह्यरायेति मन्त्रोऽयं ह्यद्भि संश्रितः ।
 तनाधीतं श्रुतं तेन तेन सर्वमनुष्ठितम् ॥
 धर्मस्नानानि वाचन्ति विधिस्नानानि यानि च ।

षडक्षरस्य मन्त्रस्य भाष्यन्तानि समासतः ॥

इति षडक्षरः ।

शैवी पञ्चाक्षरी विद्या ।

वायुसंहितायाम् ।

अथो परमविद्यायाः स्वरूपं मधुनोष्यते ।
 आदौ नमः प्रबोक्तव्यः शिवाय च ततः परं ॥
 शैवीयञ्चाक्षरी विद्या षष्ठं श्रुतिशिरोगता ।
 शब्दजातस्य सर्वस्य बीजभूता समासतः ॥
 प्रथमं मन्त्रस्त्रीर्षीर्षा समासेनात्मवाचिकाः ।
 तप्तचामीकरप्रख्या पीनोन्नतपयोधरा ॥
 चतुर्भुजा चिनयना वालेन्दुकृतशेखरा ।
 पद्मोत्पलधरा सौम्या वरदाभयपाणिका ॥
 सर्वलक्षणसम्पन्ना सर्वाभरणभूषिता ।
 सितपद्मासनासीना नीलकुञ्चितमूर्धजा ॥
 अस्याः पञ्चविधा वर्णाः प्रस्फुरद्द्रुशिमण्डला ।
 पीतः कृष्णस्तथा धूम्रवर्णतीरक्तएव च ॥
 पृथक् प्रयुक्ताः पञ्चैते विन्दुनादविभूषिताः ।
 अर्धचन्द्राकृतिर्विन्दुर्नादो दीपशिखाकृतिः ॥
 बीजं द्वितीयं बीजेषु मन्त्रस्यास्य वरानने ।
 दीर्घं पूर्वं तुरीयस्य पञ्चमं शक्तिमादिशेत् ॥
 वामदेवो नाम ऋषिः पंक्तिः छन्द उदाहृतं ।
 देवता शिवएवाहं मन्त्रस्यास्य वरानने ॥

गीतमोऽचिर्वरारोहे विष्णामिषस्तथाङ्गराः ।
 भरहाजस्य वर्षानां क्रमशो ऋषयः ज्ञताः ॥
 षावत्रातुष्टुप् पिष्टुप् ष्ट्वांसि वृद्धती विराट् ।
 इन्द्रो वृद्धो हरिर्ब्रह्मा स्वान्दस्येषां च देवताः ॥
 मम पञ्चमुखाब्बाहुः स्वानं तेषां वरानने ।
 पूर्वार्द्धिर्षोर्षं पर्यन्तं नकारादि वथा क्रमं ॥
 उदासः प्रथमो वर्णचतुर्ष्वं द्वितीयकः ।
 पञ्चमः स्वरितश्चैव मध्यमो निवृतः ज्ञतः ॥
 मूलं विष्णो शिवः शैवं सूचं पञ्चाक्षरं विना ।
 सामान्यस्यापि जानीयाच्छैवं मे हृदयं मतम् ॥
 नकारः शिव उच्येत मकारस्तु त्रिंशोच्यते ।
 शिंकारः कवचं तद्वहाकारोनेत्र उच्यते ॥
 यकारोस्त्रं नमः स्वाहा वषट् वीषडितिभ्रुत ।
 फडिति पञ्चवर्णानां मन्त्राङ्गत्वं यदा यदा ॥
 तदापि मूलमन्त्रीयं किञ्चिद्देसमन्वयात् ।
 अत्रास्य पञ्चमो वर्णो द्वादशस्वरभूषितः ॥
 तस्मादनेन मन्त्रेण मनोवाङ्मयभेदतः ।
 आवयोरश्चनं कुर्याज्जपहोमादिकैस्तथा ॥

इति शिवपञ्चाक्षरः ।

अथ सौरषडक्षरः ।

भविष्यपुराणे ।

सनत् कुमार उवाच ।

अथार्चना विधिं वचिम मन्त्रोच्चारं निबोध मे ।
सर्वपापहरं पुण्यं सर्वरोग विनाशनं ॥

ॐ खखीरुक्ताय नमः ।

मूलमन्त्रः ।

ॐ विठिठिठठःशिरः ॥

ॐ ज्वलज्वलठठश्रिष्ठा ॥

ॐ सहस्र सौठठः कवचं ॥

ॐ सर्वानेजोधिपतये ठठ अक्षं ॥

ॐ सहस्र किरचोज्वलाय ठठ उर्ध्ववन्धः ॥

वृषिन्धे भूभाविन्धे ठठ भूतवन्धः ॥

ज्वलने प्रज्वल ठठ अग्निप्रकारः ॥

आदित्याय विद्महे विद्मभावनाय धीमहि ।

तन्नः सूर्यः प्रचीदयात् ॥

गायत्री ।

सहस्रीकरचमिदं ।

ॐ धर्मात्मने नमः पूर्वतः ।

यमाय नमो दक्षिणतः ।

दक्षिणायाय नमः पश्चिमतः ।

रैवताय नमः उत्तरतः ॥

ॐ श्याम पिङ्गलायनमः ईशान्याम् ॥

ॐ दीक्षिताय नमः ॐ लक्ष्मी बन्धर विश्वजये नमो
नैऋत्ये ।

ॐ आदित्याय भूर्भुवः स्वर्गमः वायव्याम् ।

चन्द्राय चन्द्राधिपतये नमः पूर्वतः ॥

ॐ कारकाय क्षितिस्तुतायनमः आग्नेय्यां ॥

ॐ बुधाय सोम पुत्रावनमः दक्षिणे ॥

ॐ बृहस्पतये अङ्गिरःस्तुताय नमः नैऋत्यां ॥

ॐ शुक्राय महर्षये भृगुस्तुताय नमः पश्चिमतः ॥

ॐ ग्रनैश्वराय रविस्तुताय नमः वायव्याम् ।

राहवे नमः पश्चिमतः यमाय नमो दक्षिणतः ॥

ॐ भगवन्नपरिमितमबूक्षमासिन् सकलजगत्पते समाश्र-
वाहन् चतुर्भुज परमसिद्धिप्रद विश्वलिङ्ग भानो पाहि
पाहि इममर्घ्यं मम शिरसि गतं नृहाच तेजोयरुपानन्त
ज्वल ठठः ॥

इत्यर्घ्यावाहनमन्त्रः ।

ॐ नमो भगवते आदित्याय सहस्रकिरणाय गच्छ गच्छ
शरवरपुरं पुनरागमनाय ।

विसर्जनमन्त्रः ।

नृबुधाहो विधिं कर्तुं प्रवक्ष्याम्यनुपूर्वतः ।

इति सौरः षडक्षरः ॥

अथ देवताभेदेन गायत्र्याः ।

तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि

तन्नो ब्रह्मः प्रचोदयात् ॥

मरुतान्मरुतायै विद्महे कर्मसिद्धौ धीमहि

तन्नोगौरी प्रचोदयात् ॥

तत् पुरुषाय विद्महे वक्रिवक्राय धीमहि ।

तन्नः स्रग्दः प्रचोदयात् ॥

तत् पुरुषाय विद्महे वक्रतुण्डाय धीमहि

तन्नोदन्ती प्रचोदयात् ॥

हंससेनाय विद्महे वक्रिवक्राय धीमहि

तन्नः स्रग्दः प्रचोदयात् ॥

तौत्सुनूत्राय विद्महे वक्रिवादाय धीमहि

तन्नो वृषः प्रचोदयात् ॥

हरिवक्राय विद्महे वृषवक्राय धीमहि

तन्नोमन्दी प्रचोदयात् ॥

नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि

* वक्रतुण्डायैति पुरुषाकारे ।

तन्नी विष्णुः प्रचोदयात् ।

महात्मिकायै विष्णवे कर्मसिद्धौ धीमहि

तन्नी लक्ष्मी प्रचोदयात् ।

समुद्रतायै विष्णवे विष्णुनेकेन धीमहि

तन्नी धरायै प्रचोदयात् ।

वैनतेयाय विष्णवे सृष्टिपञ्चाय धीमहि

तन्नी गरुडः प्रचोदयात् ।

पद्मोद्भवाय विष्णवे देववक्त्राय धीमहि

तन्नः स्रष्टा प्रचोदयात् ।

ब्रह्मात्मजायै विष्णवे शिवात्मजायै धीमहि

तन्नीवाचः प्रचोदयात् ।

देवराजाय विष्णवे ब्रह्महस्ताय धीमहि

तन्नः शक्रः प्रचोदयात् ।

वैश्वानराय विष्णवे ज्वाललीलाय धीमहि

तन्नी अग्निः प्रचोदयात् ।

वैवस्वताय विष्णवे दक्षहस्ताय धीमहि

तन्नी यमः प्रचोदयात् ।

निष्पाचराय विष्णवे सङ्ग्रहस्ताय धीमहि

तन्नो निर्वृतिः प्रचोदयात् ।

शुक्लहस्ताय विद्महे पाशहस्ताय धीमहि

तन्नो वरुचः प्रचोदयात् ।

सर्व्वप्राणाय विद्महे सृष्टिहस्ताय धीमहि

तन्नो वायुः प्रचोदयात् ।

यज्ञेश्वराय विद्महे गदाहस्ताय धीमहि

तन्नो हस्तः प्रचोदयात् ।

सर्व्वेश्वराय विद्महे शूलहस्ताय धीमहि

तन्नो वृद्धः प्रचोदयात् ।

कात्यायन्यै विद्महे कन्याकुमार्य्यै धीमहि

तन्नो दुर्गिः प्रचोदयात् ।

सुभगायै विद्महे काममालिन्यै धीमहि

तन्नो गौरी प्रचोदयात् ।

वेदान्तकाय विद्महे हिरण्यवर्भाय धीमहि

तन्नः षण्मूखः प्रचोदयात् ।

भास्कराय विद्महे सहस्ररश्मिन् धीमहि

तन्नः सूर्य्यः प्रचोदयात् ।

वृद्ध हस्ताय विद्महे शक्तिहस्ताय धीमहि

तन्नोदेवी प्रबोदयात् ।

एवं प्रभिव्य गायत्रीन्तत्तद्देवानुरूपतः ।
पूजयेत् स्थापयेत्तेषामासनं प्रणवं स्मृतमिति ॥

इति लैङ्गे गायत्रीभेदाः ।

शिवधर्मम् ।

कल्पकोटिसहस्रैस्तु यत्पापं समुपाज्जितम् ।
घृतस्नानेन तत्सर्वं दहत्यग्निरिविन्धनम् ॥
अयुतं योगवां दद्याद्दोग्ध्रीणां वेदपारगे ।
वस्त्रं हेमादियुक्तानां शीरस्नानस्य तत्फलम् ॥
दध्ना तु स्नापयेत्सिद्धं सकृद्भक्त्या तु यो नरः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते ॥
मधुना स्नापयित्वा तु सकृद्भक्त्या तु यो नरः ।
पापकञ्चुकमुत्सृज्य वज्रलोके महीयते ॥
स्नानमिन्दुरसेनापि योलिङ्गे सकृदाचरेत् ।
लभेद्विद्याधरं लोकं सर्वकामसमन्वितम् ॥
पयो, दधि, घृत, चीद्र, शर्कराद्यै, रजुक्रमात् ।
इशादिमन्त्रैः संस्त्राय्य शिवलोकमवाप्नुयात् ॥
यः पुमांस्तिलतैलेन करयन्तोद्भवेन च ।
गिवाभिषेकं कुरुते स शैवं पदमाप्नुयात् ॥

परिमाणन्तु तत्रैवीकृतम् ।

स्नानं पलशतं त्रयमभ्यङ्गः पञ्चविंशतिः ।

पलानां हे सहस्रे तु महाज्ञानं प्रकीर्तितम् ॥

लिङ्गपुराणात् ।

महाज्ञानञ्च यः कुर्यात् छृतेन मधुना ततः ।
 स याति मम सायुज्यं स्वानेष्वेतेषु सुव्रत ॥
 ज्ञानं पलशतं ज्ञेयं मन्त्रैः पञ्चविंशतिः ।
 पलानां हे सहस्रे तु महाज्ञानं प्रकीर्तितम् ॥
 ज्ञाप्य लिङ्गं मदीयञ्च गच्छेन्नैव छृतेन वा ।
 विशोध्य सर्वद्रव्यैस्तु तोयेनाप्यभिषेचयन् ॥
 महाज्ञाने प्रसक्ते तु ज्ञानमष्टगुणं स्मृतम् ।
 जलेन केशलेनैव गन्धतोयेन भङ्गितः ॥
 अनुनिम्बैश्च तक्ष्णैश्च पञ्चविंशत्पलेन वै ।
 शमीपत्रञ्च विधिना विस्वपत्रञ्च चम्पकम् ।
 अथान्यानि च पत्राणि विस्वपत्रं न संत्यजेत् ॥
 दशद्रोणैस्तु नैवेद्यमष्टद्रोणैरथापि वा ।
 शतद्रोणसमं पुष्पमाठकेन विधीयते ॥
 विसृष्टीनस्य मर्त्यस्य नात्र कार्या विचारणा ।
 भेरी, मृदङ्ग, मुरज, करताल, पटहादिभिः ॥
 वादिष्वैर्विधिष्वान्यै रान्दोलैर्विधिष्वेताद्याः ।
 जागरं कारयेत्तत्र प्रार्थयेच्च यथाक्रमम् ॥
 स्वभृत्य, पुत्र, दारैश्च तथा सम्बन्धिबान्धवैः ।
 सार्धं प्रदक्षिणं कृत्वा प्रार्थयेत्सिद्धिमेव च ॥
 इत्युक्त्वा चैव दद्रुञ्च त्वरितं शान्तिमेव च ।

मन्त्रइति महाबीजं तथा पञ्चाक्षरस्य वै इति ॥

इति महा ज्ञानम् ।

कालिका पुराणात् ।

कार्तिकायामथ वैशाख्या मयनादिषु पर्वसु ।
दत्त्वा दीपान् समुद्बोधे देवस्याग्रे बलिन्ततः ॥
भूतानां देवदेवस्य ब्रह्मादिषु भवेत् सुधीः ।
स व्रती देवमामन्त्रा स्वपेङ्गमौ हृरिं स्मरन् ॥
उपलिप्य गृहं गत्वा निराहारो निशि स्वपेत् ।
अपरेऽहनि पूर्वाङ्गे गत्वा तत्रैव मन्दिरे ।
कारयेत्तु महाज्ञानं हराय विधिना शृणु ॥
पञ्चविंशत्पलेनैव अभ्यङ्गं कारयेद्यथ ।
शिवस्य सर्पिषा ज्ञानं प्रोक्तं पलशतेन वै ॥
फलानां द्विसहस्रेण महाज्ञानं विधीयते ।
तावता मधुनाचैव दद्यात्ततः पुनः ॥
तावतैव हि क्षीरेण गव्येनैव भवेत्ततः ।
भूयः सार्धसहस्रेण फलानामैश्वरेण तु ॥
रसेन कारयेत् ज्ञानं भक्त्याचेत्स्वप्नुना ततः ।
पुनः शीताम्बुना दत्त्वा वस्त्रपूतेन मन्त्रवित् ॥
ज्ञापयेत् भक्तितो भूमौ गन्धपात्रस्थितेन तु ।
विधिना ज्ञाप्य वाखेन गोरोचन-याद्यालिपेत् ॥
कण्ठकुङ्कुम कर्पूर चन्दनागुरुयुक्तया ।

कृष्णाकसूरो ।

लेपयित्वा ततो लिङ्गमापीडान्तं घनं शुभम् ।
 नीलोत्पलसहस्रेण मालाखध्वा प्रपूजयेत् ॥
 अलाभास्तु सहस्राणामर्वाच्चैवैव पूजयेत् ।
 उत्पलानामलाभे तु पत्रैश्च श्रीतरोर्थजेत् ॥
 पद्मेर्वा चम्पकैर्वापि जात्यापाटलयापि वा ।
 पुन्नागैः कर्णिकारैर्वा श्वेतमन्दारजैरपि ॥
 मदनैर्मरुपुष्पैर्वा शमीशुक्लार्कनागरैः ।
 यथालाभश्च पत्रैर्वा निर्गन्धैरमलोर्जितैः ॥
 प्रपूज्य कारयेद्गन्ध्या सुगन्धपुष्पमण्डपम् ।
 गुग्गुलुञ्जाज्यसंयुक्तमगुरुं वामितं दहेत् ॥
 संपूज्य गौरीभर्तारं गौत,वादित्र,मङ्गलैः ।
 शालिपिष्टीद्भवैः सिद्धैर्घृतपूणैः समुज्ज्वलैः ॥
 ततो नीराजनं दीपैः षड्विंशत्या तु कारयेत् ।
 सर्षपैर्दधियुक्तैश्च दूर्वागोरोचनाद्यतैः ॥
 गन्धपुष्पोदकं दद्यात् धूपार्घ्यञ्चिन्त्य शङ्करम् ।
 श्रातकुम्भं ततः पद्ममष्टपत्रं सकर्णिकम् ॥
 ध्यात्वा निवेदयेत् मूर्ध्नि लिङ्गस्य कुसुमैः सह ।
 सूक्ष्मवस्त्रयुगङ्गीतं श्वेतं वा पद्मसन्निभम् ॥
 चामरं दर्षणञ्चैव दीपवर्त्तिं प्रदापयेत् ।
 धूपसञ्चारणञ्चैव सङ्घटं पूज्यमेव च ॥
 वितानकध्वजौ दद्यात् किङ्किणीरवकान्वितौ ।

अथाष्टभिः क्षितिः पीडाया अङ्गैर्भक्त्या तु दण्डवत् ॥
 तत उच्चैः पठेत् स्तात्रं शाङ्करश्च शिवप्रियम् ।
 प्रदक्षिणं ततो गच्छेच्छूनैर्निर्माख्यवर्जितः ॥
 प्रणम्य च पुनः पञ्चान्नैवेद्यश्च निवेदयेत् ।
 दीनान्धक्तृपणाञ्चैव आगतान् शिवदीक्षितान् ॥
 तर्पयेदन्नपानेन सर्वास्तानुक्तगौरवात् ।
 कुर्यादेतन्महाज्ञानं विधिनानेन धर्मवित् ॥
 कारयेद्यः शिवेभक्त्या तस्य पुण्यफलं नृणु ।
 समुद्धृत्य शतं सार्द्धं कुलानां पापवर्जितम् ॥
 भुवनं ब्रह्मलोकान्तं भुक्त्वा भोगानशेषतः ।
 ब्रजेत् क्रीडायते तस्मिन् विमानस्थोऽमरैर्युतः ॥
 भोगान् यधेप्सितान् भुक्त्वा शिवसा पुण्यतां ब्रजेत् ।
 मायाञ्च तां समुत्सृज्य अन्ते योग मवाप्नुयात् ॥
 केवलेनाश्र वाज्येन दध्ना गव्येन चैव वा ।
 पयसा पञ्चगव्येन मधुनेक्षुरसेनवा ॥
 यः कारयेन्महाज्ञानं विधिनानेन मन्वतः ।
 सोपि तेनैव मार्गेण गमिष्यति परम्यदम् ॥
 अन्तरा स्त्रियते यस्तु अपूर्णो नियमेन वा ।
 सोपि गच्छेत्पदन्तस्तु शिवभक्त्या ह्यतन्द्रितः ॥
 विधिनानेन निःस्त्रोयः ज्ञानं तोयेन कारयेत् ।
 नराणां विंशतिं यावत्स यास्यति परम्यदम् ॥
 एवमेव हि शूद्रस्य स्पर्शमन्त्रविवर्जितम् ।
 मन्त्रशुक्त्वाच्चैर्यस्यस्तु ततः पुण्याधिको भवेत् ॥

इति महा पूजा विधिः ।

वास्तु संहितायाम् ।

पूजनीयो महादेवो लिङ्गमूर्तिः सनातनः ।
 पद्ममण्डलं हेमं नवरत्नैरलङ्कृतं ॥
 कार्णिकामेकरोपेतमामनं परिकल्पयेत् ।
 राजतन्त्रादभावे तु रत्नसितमयापि वा ॥
 पद्मं तस्मात्प्रभावे तु केवलं भावनामयम् ।
 तत्पद्मकार्णिका मध्ये कृत्वा लिङ्गद्वनीयसम् ।
 अथ वा स्नाटिकोपेतं पूजयेद्विस्तृतक्रमात् ।
 प्रतिष्ठाप्य विधानेन तस्मिन् कृतशोधनम् ॥
 परिकल्पनासनं मूर्त्तौ पञ्चवक्त्रप्रकारतः ।
 पञ्चगव्यादिभिः पुण्यैर्यथाविभवसंश्रितैः ॥
 ज्ञापयेत् कलशैः पूर्णैः सहस्राद्यैस्तु ग्रन्थवे ।
 गन्धद्रव्यैः स कर्पूरैश्चन्दनाद्यैः स कुण्डुमैः ॥
 सवेदिकं समालिप्य लिङ्गं भूषणभूषितम् ।
 विश्वपत्रैश्च पद्मैश्च रत्नैः श्लेतेस्तद्योत्पलैः ॥
 नीलोत्पलैस्तथान्यैश्च पुण्यैस्तैस्तैः सुगन्धिभिः ।
 पुण्यैः प्रशस्तैश्चिचैश्च पत्रैर्दूर्वाक्षतादिभिः ॥
 समभ्यर्च्य यथा लाभं महा पूजा विधानतः ।
 धूपं दीपं तथा दद्यात्त्रिवेद्याश्च विशेषतः ॥
 निवेदयित्वा विभवं कल्याणञ्च समाचरेत् ।
 इष्टानि च विमिश्रानि न्यायेनोपार्जितानि च ॥

सर्व्वद्रव्याणि देयानि व्रते तस्मिन् विशेषतः ।
 श्रीपत्नीत्यादिफलन्तत्प्रमाणं बिल्बपत्रके ॥
 पुष्यान्तरेण नियमो यच्चालाभं निवेदयेत् ।
 अष्टाङ्गमर्घमुद्दिष्टं धूपदीपौ विशेषतः ॥
 कृष्णागुरुरघोराख्ये वक्त्रे सव्ये मनःशिला ।
 चन्दनं वामदेवाख्ये मुखे कृष्णागुरुं पुनः ॥
 पीरुषे गुग्गुलुं सव्ये सौम्ये सौगन्धिकं मुखे ।
 ईशानेऽपि त्विशानीं वा दद्याद्द्वयं विशेषतः ॥
 अगुरुमिन्द्रं गुग्गुलुं प्रदर्श्यात् घृतसंयुतम् ।
 चन्दनागुरुकुष्ठाद्यं सामान्यन्तु प्रचक्षते ॥
 कर्पूरवर्त्तिना देयो दीपोष्टतबलिस्ततः ।
 अर्घ-माचमनं देयं प्रतिवक्त्रमतःपरम् ॥
 प्रथमावरणे पुञ्जौ क्रमाच्च हरषण्मुखौ ।
 ब्रह्माङ्गानि तिलांशैव प्रथमावरणेऽर्चिताः ।
 द्वितीयावरणे पूज्या विद्येशाशक्तवर्त्तिनः ॥
 तृतीयावरणे पश्चादष्टमूर्त्तिर्महेश्वरः ।
 महादेयादयस्तत्र तथैकादशमूर्त्तयः ॥
 चतुर्थावरणे पूज्याः सर्व्वेऽपि गणेश्वराः ।
 बहिरैव तु पद्मस्य पञ्चमावरणक्रमात् ॥
 दशदिक्पतयः पूज्याः शास्त्रात्मानुचरास्तथा ।
 ब्रह्मणो मानसाः पुत्राः सर्व्वेऽपि ज्योतिषाङ्गणाः ॥
 सर्व्वे देवाश्च देव्यश्च सर्वाः सर्व्वेऽपि खेचराः ।
 पातालवासिनश्चान्ये सर्व्वे मुनिगणा अपि ॥

योगिनी मरुतः पञ्च पञ्चगोमातरस्तथा ।
 चेत्रपालाश्च सगणाः सर्वैश्चैव चराचरम् ॥
 अथावरणपूजान्ते संपूज्य परमेश्वरं ।
 साज्यं सव्यञ्जनं ह्यद्यं हरेर्भक्तं निवेदयेत् ॥
 मुखवासादिकं दत्त्वा ताम्बूलं सोपदंशकम् ।
 अलङ्कृत्य च भूयोऽपि नानापुष्पविभूषणैः ॥
 नीराजनान्तं विस्तार्य पूजाशेषं समापयेत् ।
 वराङ्गं सोपहारञ्च शयनञ्च समीरयेत् ॥
 यद्वत् पाचितं ह्यद्यं तत्सर्वमनुपूर्वशः ।
 कृत्वा च कारयित्वा च हुत्वाचैव प्रपूजनम् ॥
 स्तीर्णं व्यामोहनं जम्बा विदां पञ्चाक्षरीं जपेत् ।
 दत्त्वाद्यमष्टौ पुष्पाणि देवमुद्रासलिङ्गतः ॥

ताम्बूलमुखवासयोर्लक्षणं मुक्तं

रत्नकोशे ।

महापिप्पलपत्राणि क्रमकस्य फलानि च ।
 शक्तिक्षारेण संयुक्तं ताम्बूलमिति संज्ञितं ॥
 श्वेतपत्रञ्च पूर्णञ्च क्रमकस्य फलानि च ।
 नारिकेलफलीपितं मातुलाङ्गसमायुतम् ।
 एलाकक्रीलकपूर्वरैर्मुखवासं प्रचक्षते ॥
 एतेषामप्यलाभे तु तत्तद्ग्रथं क्षरेद्बुधः ।
 तत्तद्ग्रथन्तु सङ्कल्प्य पुण्यैर्व्यापि समर्पयेदिति ॥

इति प्रकारान्तरेण महापूजाविधिः ।

विष्णुधर्मोत्तरात् ।

महावर्तिः सदा देया भूमिपाल महाफला ।
कृष्णपक्षे विशेषेण तत्रापि च विशेषतः ॥
अमावास्या च निर्द्दिष्टा द्वादशी च महाफला ।
आश्वयुज्यामतीतायां कृष्णपक्षस्य या भवेत् ॥
अमावास्या महापुण्या द्वादशी च विशेषतः ।
देवस्य दक्षिणे पार्श्वे देया तैलतुला नृप ॥
पलाष्टकयुतां राजन् वर्तिं तत्र प्रकल्पयेत् ।
महारजनरक्तेन समश्रेण तु वाससा ॥
वामपार्श्वे तु देवस्य देया घृततुला नृप ।
पलाष्टकयुतां पुण्यां शुक्लां वर्तिं च दापयेत् ॥
वाससा तु समश्रेण सोपवासो जितेन्द्रियः ।
एवं वर्तिं हयमिदं सकृद्दत्त्वा महीपते ॥
स्वर्गलोकश्चिरं भुक्त्वा जायते भूतले यदा ।
तदा भवति लक्ष्मीवान् रूपसौभाग्यसंयुतः ॥
राष्ट्रे च जायते तस्मिन् देशे च नगरे तथा ।
कुले च राजशाहूल तत्रस्याहीपवत्प्रभा ॥
अत्युज्ज्वलश्च भवति युष्मेषु कलहेषु च ।
ख्यातिं याति सदा लोके सज्जनानाञ्च सङ्गुणः ॥
एकामप्यथ वा दद्याद्भीष्टामनयोर्द्दयोः ।
मानुष्ये सर्वमाप्नोति यदुक्तं मयानघ ॥
सामान्यस्य तु दीपस्य राजन् दानं महाफलम् ।
किं पुनर्महत्तस्तस्य फलस्याक्तो न विद्यते ॥
दीपदानं महापुण्यमन्यदेवस्य च ध्रुवम् ।

किं पुनर्देवदेवस्य भगवन्तस्य महात्मनः ॥
 गिरिशृङ्गेषु दातव्या नदीनां पुलिनेषु च ।
 चतुष्पथेषु रथ्यासु ब्राह्मणानाञ्च वैश्वसु ॥
 वृक्षमूलेषु गोष्ठेषु कान्तारगहनेषु च ।
 दीपदानं महामन्त्रं महत्फलमुपाश्रुते ॥

इति महादीपविधिः ।

अथ व्रतारम्भकालः ।

तत्र सत्यव्रतः ।

उदयस्या तिस्रिर्व्याहृि न भवेद्दिनमध्यभाक् ।
 सा खण्डा न व्रतानां स्यादारम्भे च समापने इति ॥

एतद्वातिरिक्तायामखण्डायां

प्रारम्भमाह वृक्षवशिष्ठः ।

खण्डव्यापिमार्श्वं यद्यखण्डा भवेत्तद्विधिः ।

व्रतप्रारम्भणन्तस्यामनष्टगुरुशुक्रयुगिति ॥

तिस्रिर्वदनष्टगुरुशुक्रयुक् अनस्तमितगुरुशुक्रयुक्ता तस्यां व्रत-
 मारम्भणीयमित्यर्थः, इदमुपलक्ष्यं । गुरुशुक्रयोर्वाख्ये वाह-
 न्नेऽपि व्रतकारम्भणीयमित्यर्थः ।

तथाच वृक्षमनुवृक्षस्यती ।

अन्याधानं प्रतिष्ठाञ्च यज्ञदानव्रतानि च ।

वेदव्रत-वृषीर्गर्ग-चूडाकरण-निखला ।

माङ्गल्यमभिषेकञ्च मलमासे विवर्जयेत् ॥

वास्ये वा यदि वा वृक्षे शुक्ले वास्तुव्रते गुरौ ।

मलमासद्वैतानि वर्जयेद्देवदर्शनमिति ॥

गार्थ्याऽपि ।

नामा-त्रप्रागन-ञ्चोड़ं विवाहं मौञ्चिवन्धनम् ।

निष्कमञ्जातकर्मापि काम्यं ह्यविसर्जनम् ॥

अस्तगे च गुरौ शुक्रे वाले ह्ये मलिक्नुचे

उद्यापनमुपारम्भं व्रतानां नैव कारयेदिति ॥

लक्षः ।

नीचस्थे वक्रसंस्थे प्यभिचरणगते बालहृद्वास्तगे वा

सन्ध्यासो देवयात्रा व्रतचरणविधिः कर्णवेधस्तु दीक्षा ।

मौञ्चोवन्धोऽथ चूडा परिणयनविधिर्वास्तुदेवप्रतिष्ठा

वर्ज्याः सङ्गिः प्रयत्नात् त्रिदशपतिगुरौ सिंहराशिस्थिते चेति ॥

नीचलक्षणान् ज्योतिःशास्त्रे ।

सूर्यादिषूक्ष्मजगोमकराः क्रमात् स्युः ।

स्तो कर्कि-मौन-वणिजोस्तगमश्च नीचमिति ॥

उच्चस्थानात्सप्तमं नीचमित्यर्थः ।

तथाच नीचस्थे गुरौ मकरगते इत्यर्थः ।

शौनकः ।

कीर्त्यागारविवाह याग गमनं* क्षीराद्यकर्णव्यधं

विद्या-देवविलोकनो-पनयनं दीक्षा-परौक्षा व्रतं ।

ज्ञानं तीर्थगमं रथं पुर महादान प्रतिष्ठापनं

* शौनकममिति पुलकामरे पाठः ।

सिंहस्यै विवधार्चिते न शुभदं कर्तुंस्तथा सूर्यगे ॥

अस्तलक्षणन्तु ब्रह्मसिद्धान्ते ।

रविणासत्तिरग्येषां ग्रहाणामस्तलभ्यते ।

ततोर्वाक् वार्षिकं विद्यादूर्ध्वं वास्यं प्रकीर्त्तितमिति ॥

एतयो रवधिः ज्योतिःशास्त्रे ऽनेकधादर्शितः ।

बालः शुक्रो दिवसदशकं पञ्चकश्चैव वृद्धः

पञ्चादङ्गस्त्रितयमुदितः पञ्चमौढयः क्रमेण ।

जीवो वृद्धः शिशुरपि सदा पञ्चमन्यैः शिशू तो

वृद्धो प्रोक्तौ दिवसदशकश्चापरैः सप्तरात्रमिति ॥

एतेषां पञ्चाणां व्यवस्था देशान्तरविषया आपद्विषया वा ।

तथाच गार्ग्यः ।

शुक्रो गुरुः प्राक्पराक्च बालो

विश्वेय दशावन्तिषु सप्तरात्रं ।

वज्रेषु ऋणेषु च षट्च पञ्च

शेषेच देशे त्रिदिनं वदन्तीति ॥

वराहमिहिरोऽपि ।

बहवो दर्शिताः काला ये बाल्ये वार्षिकेऽपि च ।

ग्राम्यास्तत्राधिकाः शेषा देशभेदादुतापदीति ॥

अथमुद्रालक्षणानि ।

संमुखीकृत्य हस्तौ द्वौ किञ्चिदङ्गुलिताङ्गुली ।

मुकुली तु समाख्याता पञ्चजप्रसूतेव सा ॥

मुकुलीपङ्कजमुद्रयोः ।

पूर्वाच मुकुली या च प्रदेशे निरुताङ्गुलिः ।
व्याकीर्यमुद्रा मुकुला पद्ममुद्रां प्रदर्शयेत् ॥

पद्ममुद्रायाः ।

अङ्गुष्ठो कुञ्चितो हो तु स्वकीयाङ्गुलिवेष्टितो ।
उभौ चाभिमुखौ हस्तौ योजयित्वा तु निहुरा ॥

निष्ठुरायाः ।

तर्जन्यौ कुञ्चितौ कृत्वा तथैव च कनीयसी ।
अधोमुखा दृष्टनखा स्थिता मध्ये करस्य तु ॥
चतस्रसोच्छ्रिताः पृष्ठे अङ्गुष्ठावेकतः कुरु ।
नालं व्यवस्थितौ हो तु व्योममुद्रा प्रकीर्त्तिता ॥

व्योममुद्रायाः ।

अथ वैदिकमन्त्राणामृषि दैवत छन्दसि ।

तत् प्रयोजनमाह याज्ञवल्काः ।

आर्षं छन्दो दैवतञ्च विनियोगस्तथैव च ।
वेदितव्यं प्रयत्नेन ब्राह्मणेन विशेषतः ॥
अविदित्वा तु यः कुर्याद्याजनाध्ययनं जपम् ।
होममन्तर्जले, दानं तस्य चाल्पफलं लभेत् ॥

तथा ।

यो विजानाति मन्त्राणामर्षं छन्दश्च दैवतम् ।
विनियोगं ब्राह्मणञ्च मन्त्रार्थं ज्ञानकर्षं च ॥

एकैकस्य ऋषेः सोऽपि वन्द्यो ह्यतिथिवद्भवेत् ।
 देवता याश्च सायुज्यं गच्छत्यत्र न संग्रयः ॥
 पूर्वोक्तेन प्रकारेण ऋष्यादीन् वेत्ति यो हिजः ।
 अधिकारो भवेत्तस्य रहस्यादिषु कर्मसु ॥
 येन यदृषिणादृष्टं सिद्धिः प्राप्ता च येन वै ।
 मन्त्रेण यस्य यत्प्रोक्तमृषेर्भावस्तदार्षकम् ॥
 छन्दनात् छन्द उद्दिष्टं वाससा इव चाकृतिः ।
 आत्मा सञ्ज्ञादितो देवैर्मृत्योर्भीतैस्तु वै पुरा ॥
 आदित्वैर्वसुभीरुद्रे स्तेन छन्दांसि तानि वै ।
 यस्य यस्य तु मन्त्रस्य उद्दिष्टा देवता तु या ।
 तदाकारं भवेत्तस्य देवत्वं देवतोच्यते ॥
 पुरा देवैः समूत्पन्ना मन्त्राः कर्मार्थमेव च ।
 अनेन चेदं कर्त्तव्यं विनियोगः स उच्यते ॥
 नैरुक्त्यं यष्य मन्त्रस्य विनियोगप्रयोजनं ।
 प्रतीष्ठानं स्तुतिश्चैव ब्राह्मणं तदिहोच्यते ॥
 एवं पञ्चविधं योगं जपकाले ह्यनुस्मरेत् ।
 होमे चान्तर्जले योगे स्वाध्याये याजने तथेति ॥

तत्रादौ ऋग्वेदमन्त्राः ।

अग्निमीलेति सूक्तस्य मधुक्कन्दो विष्णामित्रोऽग्निर्गायत्री ।

वायवायाह्वीति सप्तानां मधुक्कन्दाः ।

आद्यानातिदृष्टां वायुः अनन्तराणामिन्द्रवायू । सप्तमा-
 यामित्रावरुषी । सप्तानां गायत्री ।

सदस्यमितिमितिमन्त्रस्य काण्वोमेधातिथिः सदस्यतिर्गायत्री ।

अभ्ययोर्यं त्वध्वमित्यस्य काण्वोमेधातिथिरापोगायत्री ।

यस्त्रिद्विसत्वसोमपा इति आजौगर्सः शुनःशेफः इन्द्रः ।

आद्यानां समानां पंक्तिर्नवानां गायत्री ।

युवाना मेधातिथिः काण्व ऋभयो गायत्री ।

स्योनापृथिवी मेधातिथिः काण्वः पृथ्वी गायत्री ।

अतोदेवेतिद्वयोर्मेधातिथिर्देवोविष्णुर्गायत्री ।

कस्यनूनमिति षष्ठदशर्षस्य आजौगर्सिर्वैश्वामिनी ।

वा शुनःशेफः ऋषिः प्रथमायाः कः प्रजापतिस्त्रिष्टुप् ।

द्वितीयाया अग्निस्त्रिष्टुप् ।

अभिलेति तिसृषु सविता ।

भगस्येत्यस्यां भगोवा गायत्री ।

नहितइत्याद्या दश वारुण्यस्त्रिष्टुभः ।

त्वमग्नेप्रथमोङ्गिरा इत्यष्टादशर्षस्य ।

आङ्गिरस हिरण्यसूपः अग्निर्जगती ।

अष्टमीषोडशष्टादशस्त्रिष्टुभः ।

एतेति षष्ठदशर्षस्य आङ्गिरस हिरण्यसूप इन्द्रस्त्रिष्टुप् ।

कदुद्गोयेति नव घोरःकाण्वो इन्द्रः ।

द्वितीयायां इन्द्रो मित्रावरुणौ सप्तम्यादिष्विषु सोमः

गायत्री ।

यास्तइत्यन्ता अनुष्टुप् ।

(३२)

उदुत्यञ्जातवेदसमितिचयोदश, अन्वयास्त्रिष्टुप् प्रस्तावः ।

सूर्यः आद्या, नव गायत्रः ।

दशम्यादिचतस्रोऽशुष्टुभः अन्वयवृषो रोगघ्नः ।

अन्वयोध्यर्चः शलुघ्नः । पञ्चानं दशर्चस्य शाक्तयः

पाराशरोऽग्निर्द्विपदा विराट् ।

श्रीनकमतेपञ्च पङ्क्तिः विराट् ।

रपिर्नत्रिचादशर्चं शाक्तयः पाराशरोऽग्निर्द्विपदा विराट् ।

श्रीनकमते पञ्च पङ्क्तिः विराट् । वनेषुजायुर्दश श्रीनक

मते पञ्च । त्रीचकपदश श्रीनकमते पञ्च । वनेमपूर्व्वी एकाद-

शर्चं श्रीनकमते षट् । उपप्रजित्वन् दशर्चस्य शाक्तयः पाराश-

रोऽग्निस्त्रिष्टुप् ।

निकाव्यावेधसः । दश [शाक्तयः । पाराशरोऽग्निस्त्रिष्टुप् ।

रपिर्नयः पितृवित्तः दशर्चस्य ।

पाराशरोऽग्निस्त्रिष्टुप् ।

उपप्रयन्तो नव राहुगणो गीतमोऽग्निर्गायत्री ।

द्विरण्यकेशो रजसो द्वादशर्चस्य गीतमोऽग्निः आद्यास्त्रिस्त

स्त्रिष्टुभः ।

तासु मध्यस्थानो वा शुद्धोवाऽग्निः चतुर्धाद्यास्त्रिस्त उष्णिहः ।

ततः षट् गायत्रः ।

त्वं सोम प्रचिकेतोमनीषेतित्रयोविंशत्युच्यते ।

गीतमः सोमः आद्यचतसृषां त्रिष्टुप् ।

ततो द्वादशानां गायत्री ।

सप्तस्युष्णिक् । ततः षष्ठां त्रिष्टुप् ।

प्रपन्दिने एकादशर्षस्य । आङ्गिरसः कुक्षः मन्वन्तानिन्द्रः ।

आद्याः सप्त जगत्सुः आद्या गर्भस्त्राविषी उपनिषत् ।

ततश्चतस्रस्त्रिष्टुभः ।

इमा वद्रायतपसे इत्येकादशर्षस्य ।

कुक्षो वद्रः नवानां जगती ।

दशम्येकादशोस्त्रिष्टुप् ।

उभेपुनामीति सप्तर्षस्य । पारुचेप इन्द्रः आद्या त्रिष्टुप् ।

द्वितीयाद्यास्त्रिस्तोऽनुष्टुभः पञ्चमी गायत्री षष्ठी धृतिः सप्त
म्युष्णिक् । येदेवासः पारुचेप विश्वेदेवास्त्रिष्टुप् ।

पितृनुस्तोत्रं एकादशर्षं* अगस्तोत्रं* प्रथमा अनुष्टुप् ।

गर्भोष्णिक् । द्वितीयचतुर्थीर्गायत्री तृतीया अनुष्टुप् ।

पञ्चम्यादितिस्तोऽनुष्टुभः ततस्त्रिस्तोर्गायत्रीः अन्ता इहत्वनुष्टुभः

अग्नेनयेत्यष्टर्षं* । अगस्त्योऽग्निस्त्रिष्टुप् ।

अनर्क्षाणं वृषभमित्यष्टर्षं* । अगस्त्यो वृहस्पतिस्त्रिष्टुप्

उपेभस्रश्चीति पञ्चदशर्षं* । गृक्षद् अपीनता । त्रैष्टुभम् ।

करिक्तद्वानुषमिति चतुर्षस्य गृक्षमदः शकुन्त इन्द्रस्त्रिष्टुप् ।

इन्द्रापर्वता चतुर्विंशत्तुर्षं* । आद्यायां इन्द्रपर्वती । तत-
श्चतुर्दशोपर्वन्तानामिन्द्रः ।

ततो इषोः सप्तपर्वीवाक् । सप्तदश्यादिचतस्रसु रथाङ्गानि
इन्द्रश्च । अन्तगानां चतस्र्षामिन्द्रः ।

* अगस्त्योऽग्निमिति पुत्रकानरे पाठः ।

आद्या नव चिष्टुभः दशमी जगती । एकादशी चिष्टुप् ।
 द्वादशनुष्टुप् । त्रयोदशी गायत्री । ततो द्वे चिष्टुमौ । शोडशी
 जगती । सप्तदशी चिष्टुप् । अष्टादशी बृहती । एकोन-
 विंशी चिष्टुप् । विंशी द्वाविंशी चानुष्टुप । एकविंशी त्रयोविंशी
 चतुर्विंशी च त्रिष्टुप् ।

अग्निनेन्द्रे षेति चतुर्विंशदृचस्य सूक्तस्य
 श्यावाश्व आत्रेयः अश्विनौ उपरिष्टान्द्योतिषं ।
 द्वाविंशी चतुर्विंशौ पंक्ती त्रयोविंशी महाबृहती ।
 अवितासीति सप्तर्चस्य श्यावाश्व इन्द्रः शक्वरी ।
 अन्त्या महापंक्तिः ।

अग्रिमस्तोषीति दशर्चस्य । नाभाकः । काण्वोन्मिर्महां
 पङ्क्तिः ।

इमेविप्रस्येति । त्रयस्त्रिंशदृचस्य सूक्तस्य आङ्गिरसो
 विरूपान्निर्गायत्री ।

समिधान्निमिति त्रिंशदृचस्य विरूपान्निर्गायत्री ।

आद्यायेति । द्विचत्वारिंशदृचस्य सूक्तस्य । त्रिशोकः काण्व
 इन्द्रो गायत्री ।

महिवः । अष्टादशर्चस्य । त्रितथास्यः आदित्यो देवता ।

अन्त्याः पञ्च उपस्यः महापंक्तिः दुःस्वप्नम् ।

प्रतिते । पञ्चर्चं । पृषन्न काण्वः ऐन्द्रं गायत्रं आन्नि सौरी-
 अन्त्या पंक्तिः ।

प्रोचक्षौ द्वादशः प्रगाथकाण्वः ऐन्द्रम् पंक्तिम् ।

* उपस्येति द्विचत्वारिंशदृचः ।

सप्तम्यष्टमीनवम्यो वृहत्स्यः त्वान्नचचियान् ।

एक विंशत्तस्य । मत्स्यः सान्नादः अगस्त्यः ।

वह्वीजालवहा मत्स्याश्च ऋषयः आदित्यो देवता दशम्ये-
कादशौ हादशौश्वा दितिः । गायत्रीच्छन्दः ।

यो राजा पञ्चदशर्चं । पुरुहन्ता आङ्गिरसः ऐन्द्रं
वाहृतम् ।

द्वितीया चतुर्थी षष्ठाः सतोवृहत्स्यः त्रयोदश्युष्णिक् ।

चतुर्दश्यनुष्टुप् । पञ्चदशौ पुरउष्णिक् ।

त्वन्नो अग्ने महीभिरिति पञ्चदशर्चस्य सूक्तस्य ।

सुदीति पुरमौडावन्यतरो वा ।

अग्निः गायत्री दशम्याद्याः समा वृहत्स्यः एकादशाद्याः
विषमाः सती वृहत्स्यः । कन्याऽवाः सप्तर्चस्य आत्रेय इन्द्रोऽनु-
ष्टुप् आद्ये द्वे पंक्ती । उद्देदभि । चतुस्त्रिंशत् । सूक्त इन्द्रो
गायत्री ऐन्द्राभवी अन्त्या ।

आपोहिष्टेति नवर्चस्य । आम्बरीषः सिन्धुहीप आपो-
गायत्री

पञ्चमो वर्षमाना सप्तमी प्रतिष्ठा अन्त्ये द्वे अनुष्टुभौ ।
परेपिवांसमिति षोडशर्चस्य ।

यमो वैवस्वतो यमः षष्ठी लिङ्गोक्तदेवता । सप्तम्या-
दितिस्रः पित्रा वा याम्या वा ।

दशम्यादितिस्रषु श्वाणो त्रिष्टुप्च्छन्दः त्रयोदशौ चतुर्दशी
च अनुष्टुप् । पञ्चदशौ वृहत्तो । परसत्याविति चतुर्दशर्चस्य

सङ्गुक्तोयामः आद्यानां चतसृषां मृत्युः । पञ्चम्याधाता ।
 षष्ठां त्वष्टा । पराः पिङ्गयज्ञदेवत्वः अन्वा प्राजापत्या वा ऋष्टुप् ।
 एकादशौ प्रस्तारपङ्क्तिः त्रयोदशौ जगती । अन्वाऽनुष्टुप् ।
 भद्रश्चरति दशर्षस्य । ऐन्द्रोविमदः प्राजापत्योवा वसुक्तहा
 सुक्तः अग्निर्गायत्री । आद्यैकपदा ग्राम्यर्षा द्वितीयानुऽष्टुप्
 नवमी विराट् । अन्वास्त्रिष्टुभः । प्रदेवत्रेति पञ्चदशर्षस्य षड्लूषः
 कववः आपोवा आपोनतीवा ऋष्टुप् । प्रावेपामामिति चतुर्ह-
 शर्षं । मौजवानश्चः कवयोवा । आद्या सप्तमी नवमीषु
 ऋषिस्तुतिः हादश्यामचस्तुतिः शेषाञ्चर्निन्दा । षैष्टुभं अन्व-
 त्रिमिति चतुर्हशर्षस्य धानाकोलूषो विश्वेदेवा जगती अन्व्ये द्वे
 ऋष्टुभौ । नमोमिचस्येति हादशर्षस्य । सौर्योभितयाः सूर्यो-
 जगती दशमी ऋष्टुप् । दिवस्परिहादशर्षस्य । वक्षप्रिरग्नि
 स्त्रिष्टुप् अन्व्येऽध्यर्षलिङ्गोक्ता देवता । माप्रगामेति षड्दशर्षस्य ।
 बभ्रुसुवभ्रुसुतबभ्रुविप्रबभ्रव इन्द्रोगायत्री । यत्सेयममिति
 हादशर्षस्य बभ्रुदशद्वत्वार ऋषयो यमादयो मनभावर्षनम-
 नुष्टुप् । इदमित्या इति सप्तविंशत्त्रयस्य । नाभानेदिष्टोमा-
 मवो विश्वे देवास्त्रिष्टुप् बृहस्पतेइत्येकादशर्षस्य बृहस्पत-
 इत्याङ्गिरसः परमात्मा त्रिष्टुप् नवमी जगती यस्ते मन्यो इति
 सप्तर्षस्य । मनुस्तापसोमन्वस्त्रिष्टुप् । प्रथमा जगती । रक्षो-
 ह्वयमिति पञ्चविंशत्त्रयस्य ॥ वायुर्भरहाजोऽग्निस्त्रिष्टुप् ।

अन्वाद्यतस्त्रोऽनुष्टुभः । इविष्यान्तमित्येकौनविंशत्यृचस्य
 आङ्गिरसो वा वामदेव्यो वा सुधन्वान् सूर्यो वैष्णानर-
 स्त्रिष्टुप् । सहस्रयीर्षाषोडशर्षस्य नारायणः परमात्मा ऋष्टुप् ।

प्रतयच्छ' १ अध्यायः ।] हेमाद्रिः ।

२५५

वा श्रीवधीरिति त्रयोविंशद्वयस्य । आद्यर्वशीभिषगोवधीरनु-
ष्टुप् । इहस्यतेप्रतिमइति द्वादशर्चस्य । देवापि राष्ट्रिणो ।
उष्टिकामो विश्वे देवास्त्रिष्टुप् ।

कथानच्चित्रं द्वादशर्चस्य । वैखानसी चन्द्र इन्द्रस्त्रिष्टुप् ।
आद्यःशिशान इति त्रयोदशर्चस्य । ऐन्द्रोऽप्रतिरथ इन्द्र-
स्त्रिष्टुप् ।

चतुर्थीं वार्हसत्या उपान्या भारती चत्वार्य च माहृत्य-
नुष्टुप् ।

वैश्याऽग्निमिति सप्तर्चस्य । क्रमेण सप्तर्चां जूति वीतजूति-
र्विप्रजूतिर्वृषणकः ।

करिकृतः ऐतयः ऋष्यशृङ्गः ऋषयः केयी देवता अनु-
ष्टुप् ।

उतदेवा इति सप्तर्चस्य । भरहाज-कश्यप-गीतमा-त्रि-विष्वा-
मिष-जमदग्नि-वशिष्ठाः क्रमेण ऋषयो विश्वे देवाऽनुष्टुप् ।

अग्नेऽष्टवर्चस्य तापसोऽग्नि विश्वे देवाऽनुष्टुप् ।

इमां खनामीति षडर्चस्य इन्द्रापी ऋषिका ।

उनिषद्द्रविष्वादेवता सपत्नी बाधनमनुष्टुवत्या पंक्तिः ।

शासः पञ्चर्चस्य भरहाजः शास इन्द्रोऽनुष्टुप् । मुञ्चामि
पञ्चर्चस्य यक्षप्रनाशनः प्रजापति इन्द्रम्नी इन्द्रोवा
चिष्टुप् । अत्या इहती वा ब्रह्मणाम्निःसंविदानः षडर्चस्य
रक्षोहा ब्राह्मो । गर्भसमाधानोऽग्निरनुष्टुप् । अपेहिपञ्चर्चस्य
आङ्गिरसः प्रचेतो विश्वे देवाऽनुष्टुप् तृतीया चिष्टुप् । अत्या-
पंक्तिर्दुःखप्रह्न । देवाःऋषीतः पञ्चर्चस्य नैऋतः कपोतो

विश्वे देवास्त्रिष्टुप् कपोतो पद्याते प्रायश्चित्तम् । मयो-
भूः चतुष्कस्य । काक्षीवतः शबरो गौस्त्रिष्टुप् । पतङ्गमिति ऋच-
स्य । प्राजापत्यः पतङ्गोमायभेद स्त्रिष्टुप् । अपश्यन्वेति ऋचस्य ।
प्रजापत्यः प्रजावां स्त्रिष्टुप् । विष्णुर्योनिमिति ऋचस्य गर्भ-
कर्ता त्वष्टा प्राजापत्योविष्णुर्वा विश्वे देवाऽनुष्टुप् ।

कस्यश्चित्कते विष्णुर्योनिमिति पञ्चर्षम् ।

मन्दित्रीशामिति ऋचस्य वारुणिः सत्यष्टति गायत्री ।

आयङ्गौस्त्रिष्टुप् सार्वराज्ञी आत्मा सूर्योवा गायत्री ।

संसमित् चतूरिचस्य सम्बनन आङ्गिरसः संप्रानमनु-
ष्टुप् षतौयात्रिष्टुप् ।

वास्तोष्यते ऋचस्य मैत्रावरुणौ वशिष्ठोवास्तोष्यति स्त्रिष्टुप् ।

तत्सवितुर्नवर्षस्य श्यावाश्वः सविता गायत्री प्रथमाऽनुष्टुप् ।

माताकृद्वाणामिति मन्त्रस्य जमदग्निर्भागवो गावस्त्रिष्टुप् ।

शन्नो देवीसूक्तस्य वशिष्ठो विश्वे देवास्त्रिष्टुप् ।

युवंस्त्राणि सप्तर्षस्य दीर्घतमा मित्रावरुणौ चिष्टुप् ।

समुद्रादूर्मिरित्येकादशर्षस्य वामदेवऋषिः अग्निः ।

सूर्यः गावो षटं वा देवताः अन्त्यास्त्रिष्टुप् ।

उपान्था जगती ।

स्वस्तिदाविशस्यतिः शासो भरहाज इन्द्रोऽनुष्टुप् ।

सुदेवइत्यस्य प्रियमीष इन्द्रोऽनुष्टुप् ।

वायोएते एकाविंशत्यृचस्य गृत्समदः आद्ययोर्वायुः षतीयाया
इन्द्रावायू ।

ततस्त्रिष्टुषां मित्रावरुणौ ततस्त्रिष्टुषां मित्रावरुणौ ।

दशम्ये-कादशी-द्वादशीनामिन्द्रः ।

ततस्त्वृचस्य विष्णुदेवास्ततस्त्रिष्टुषां सरस्वती ।

एकोनविंश्याः द्यावापृथिव्यौ हविर्धानो वा ।

द्वितीयपादेभिर्वा । अन्ययोर्द्वयोर्द्यावापृथिव्यौ हविर्धानो वा ।

गायत्रीछन्दः सर्वासां । आदित्यानामिति चतुश्चस्य षष्ठिष्ठ आ-
दित्यस्त्रिष्टुप् ।

आदित्यास इत्यृचस्य तद्वत् । यो यजाति मनुः आशिष अत्र-
इत्यास्तुतिहारा यजमानः प्रशंस्यः । पञ्चम्यां दम्पती । शिष्टाद-
म्यत्याशिषः गायत्री ।

चतुर्दशनुष्टुप् । पञ्चदश्याद्याः पंक्तयः ।

प्रवोदेवा सप्तर्षस्य वैश्वामिनी ऋषभोऽग्निरनुष्टुप् ।

क्रावाशिषुरित्यृचस्य । चितः सोमोऽनुष्णिक ।

पिवासोममिति पञ्चदशर्षस्य भरहाज इन्द्रस्त्रिष्टुप् ।

अन्या द्विपदा । एषोत्तमाः पञ्चदशर्षस्य प्रस्तववाग्निनी गायत्री ।

अग्निर्हुतमिति द्वादशर्षस्य काषवो मेधातिथिरग्निर्गायत्री ।

अग्निनेति पादे निर्मन्त्राहवनीयावग्नी ।

विष्णोर्नुकमिति षडर्षस्य दीर्घतमा विष्णुस्त्रिष्टुप् ।

तवन्त्रियेति मन्त्रस्य वसुस्ततो विष्णु देवा स्त्रिष्टुप् ।

द्यौर्यः पितेत्यस्य अगस्त्यो विष्णु देवाः अनुष्टुप् ।

आवीराजानमिति षोडशर्षस्य वामदेव—

आद्या रौद्री द्वितीयाद्विषमिस्त्रिष्टुप् ।

उत्तानपर्णसुभग इत्यस्येन्द्रास्युपनिषद्वियानुष्टुप् ।

मिचोजनानमिति नवर्षस्य विश्वामिनी मित्रः ।

आद्याः पञ्च त्रिष्टुभः सतस्रतस्त्रो गायत्रयः ।

अमन्दांस्तोमानिति सप्तर्षस्य कक्षीवान् स्वमयनस्तुतिस्त्रि-
ष्टुप् ।

अन्ये हेऽनुष्टुभौ । आवारयो अश्विनाइत्येकादशर्षस्य कक्षी-
वानश्विनौ त्रिष्टुप् । स्वादिष्टयेति दशर्षस्य ।

मधुच्छन्दा विश्वामित्रः सोमो गायत्री । पवस्वदेववीति ।

दशर्षस्य मेधातिथिः काश्वः सोमो गायत्री ।

एषदेवः दशर्षस्य श्वनःशेफः सोमो गायत्री ।

सनाचेति दशर्षस्य हिरण्यस्तूपः सोमो गायत्री ।

समिद्धः एकादशर्षस्य । कश्यपः असितः देवलोवा
ऋषिः ।

ऋक्त्रयेण समिद्धीन्नि-तनूनपात् ईलः बर्हिः देव्योद्धारः
उषासानक्काई देव्यो होतारौ तिस्रोदेवीः त्वष्टा वनस्पतिः
त्वाहाकृतयः गायत्रीच्छन्दः अन्यास्रतस्त्रोऽनुष्टुभः ।

मन्द्रयेति नवर्षस्य असितो वा देवलो वा सोमो गायत्री ।
असृष्टमिति नवर्षस्य देवलः काश्यपो वा सोमो गायत्री ।
एते सोमा इति नवर्षस्य अतो वा देवलो वा सोमो
गायत्री । परिप्रियादिवः नवर्षस्य प्रस्नानासः इति नवर्षं ।
उपास्त्रैर्नवर्षं । सोमा असृष्टं नवर्षं । सोमः पुनानौ अर्षति
नवर्षम् ।

परिप्रासिष्यदशर्षं । एषधिया अष्टर्षं । एते सेतारः
अष्टर्षं । प्रनिस्त्रेनेवाष्टर्षां पेरिसुवानः सप्तर्षं ।

यत्सोमसप्तर्षं । प्रकविः सप्तर्षं । एते धावन्ति सप्तर्षं ।

एते सोमासः सप्तर्चं । सोमा असृष्टं सप्तर्चं । प्रसोमासः
सप्तर्चं

एतेसोमा इति वत्सर्वाणीमानि । एवं षड्रचस्य ।

दृढच्युत आगस्त्यः सोमोगायत्री । तमसृचन्त ।

षड्रचस्य दाढीच्यतेधवाहः सोमोगायत्री । एष कविः षष्ठां ।

नृमेध आङ्गिरसः सोमोगायत्री । एषवाजीनां ।

प्रियमेध आङ्गिरसः सोमोगायत्री ।

प्रास्यधावाः षष्ठां मामधमाङ्गिरः सोमोगायत्री । प्रास्य-
धाराः ॥

षष्ठां नृमेध आङ्गिरसः सोमो गायत्री ।

प्रधाराः । अस्य षष्ठां विन्दुराङ्गिरसः सोमो गायत्री ।

प्रसोमासः ॥ षष्ठां गौतमीराहुगणः सोमो गायत्री ।

प्रसोमासः ॥ षष्ठां श्यावाश्व आग्नेयः सोमो गायत्री ।

प्रसोमासः ॥ षष्ठान्त्रितप्रास्यः सोमो गायत्री ।

प्रसुवानः ॥ षष्ठाङ्गौतमीराहुगणः सोमोगायत्री ।

त्रित आनःपवस्य ॥ षष्ठां प्रभवसुः । असर्जिरथ्यः ॥ ३७ ॥

षष्ठां प्रभूवसुः । सससुतः ॥ षष्ठां राहुगणः । एष उख्यः ॥

षष्ठां राहुगणः । आसुरर्षः ॥ षष्ठां आङ्गिरसो बृहस्पतिः

पुनानः ॥ षष्ठां बृहस्पतिः । प्रयेगावः ॥

षष्ठां । जनयन् ॥ षष्ठां । यो अत्य इव ॥

षष्ठाञ्च । मेधातिथिः सोमोदेवता । गायत्रीच्छन्दः

प्रया इन्दो इति षष्णामपास्यः । सयवस्यः षणां मयास्य
आङ्गिरसः । अस्य मितिषणामयास्यः । अयासोमः पञ्चानां
भागवः कविः ।

तत्वानृग्याञ्चि पञ्चानां । पवस्य स्वष्टिमिति पञ्चानाञ्च
कविः ।

उत्तेष्टुआसःपञ्चानां । उतथ्य आङ्गिरसः अश्वर्योपञ्चानां ।

परिद्युञ्चः पञ्चानाञ्च उतथ्यः । उत्ते इतिचतुर्णां ॥

अस्यप्रज्ञामिति चतुर्णां ।

वयं वयं चतुर्णाञ्च अवत्सारः परिसीमः ।

चतुर्णामवत्सारः काश्यपः ।

प्रतेधराः चतुर्णां । तरत्तमन्दीचतुर्णां । पवस्यः ॥ ६० ॥

चतुर्णाञ्च अवत्सारः । सोमो देवता गायत्रीच्छन्दः
सव्यत्र ।

प्रगायत्रेषु चतुर्णामवत्सारः सोमो गायत्री द्वितीयापुर
उष्णिक् ॥

अयावीती ॥ त्रिंशदृचस्य अमहीयुः सोमोगायत्री ।

एते अस्यन्त्रिंशदृचस्य ॥ भागवोज्जमदग्निः सोमो गायत्री ।

आपवस्य त्रिंशदृचस्य निभ्रुविः काश्यपः सोमोगायत्री ।

पवस्य विश्वचर्मणे त्रिंशदृचस्य ।

शत । वैश्वानसाः सोमः एकोनविंशत्यास्तिस्र आग्नेयः
गायत्री षष्ठादभ्यनुष्टुप् ।

अचस्त्रादिष्टयेति सूक्तमारभ्य द्विज्जवन्तीति सूक्तपथ्यन्तपव-
मानगुचविशिष्टएव सोमो देवता । त्वं सोमासीति द्वात्रिंशदृचस्य

आदृक्स्थे भरहाजः चतुर्थादितिसृष्ट्यां कश्यपः सप्तम्यादिति-
सृष्ट्यां गौतमः ।

दशम्यादिभितिसृष्ट्यामत्रिः । त्रयोदश्यादितिसृष्ट्यां विश्वा
मित्तः ।

षोडश्यादितिसृष्ट्यां जमदग्निः । एकोनविंश्यादितिसृष्ट्यां
वशिष्ठः ।

पञ्चविंश्यादितिसृष्ट्यां सप्तविंश्यादिति पञ्चानां सप्तर्षयः ।

सोमोद्देवता । दशम्यादितिसृष्ट्यां पूषा वा सोमो वा अग्न-
भोवा । चशोविंशौचतुर्विंशोरग्निः पञ्चविंशो सावित्री ।

षड्विंश्यग्निसावित्री सप्तविंशो वैश्वदेवो । शेषेषु

सोमः । गायत्रीच्छन्दः । सप्तविंश्यनुष्टुप् । द्वादश्यादितिसृष्ट्यां
द्विपदा गायत्र्यः त्रिंशोपुरउष्णिक् ।

अग्न्यौऽनुष्टुभौ । त्रिरग्ने सप्तधेनवः दशस्यार्चरेणुर्वैश्वामित्रः ।

सोमो जगती अन्त्या त्रिष्टुप् ।

आदक्षिणा नवर्चस्य ऋषभो वैश्वामित्रः सोमो जगती
अन्त्या त्रिष्टुप् ।

हरिसृजन्ति नवर्चस्य हरिमन्त आङ्गिरसः । सोमो जगती ।

स्रक्तेनवर्चस्य यवित्त आङ्गिरसः सोमो जगती ।

स्त्रिशुर्नवर्चस्य वक्षोवानो शिजः सोमो जगती अष्टमौ त्रिष्टुप् ।

अभिप्रियाणि पञ्चर्चस्य भार्गवः कविः सोमो जगती । धर्ता-
दिवः पञ्चर्चस्य ।

एष प्रपञ्चर्चस्य । प्रराजापञ्चर्चस्य । अक्षोदसोनः पञ्चर्चस्य च
कविः सोमो जगती ।

सोमस्यधारा पञ्चर्चस्य भारद्वाजी वसुः सोमो जगती ।

प्रसोमस्य पञ्चर्चस्य वसुः सोमो जगती अग्न्या
त्रिष्टुप् ।

असो विसोमः पञ्चर्चस्य वसुः सोमो जगती अग्न्या त्रिष्टुप् ।

पवित्रन्ते पञ्चर्चस्य आङ्गिरसः पवित्रः सोमो जगती ।

पवत्तदेवमादनः पञ्चर्चस्य । वाण्यः प्रजापतिः सोमो
जगती ।

इन्द्राय सोम द्वादशर्चस्य भार्गवोवेनः सोमो जगती ।

अग्न्ये हे त्रिष्टुभौ ।

प्रतन्नाश्रवः अष्टाचत्वारिंशद्वचस्य सूक्तस्य । आद्यासु
दशसु अल्लष्टाभाषाः एकादश्यादिदशसु सिकता निवावर्षः ।
एकविंश्यादिदशसु पृथ्वियोजाः । एकत्रिंश्यादिदशसु आग्नेयः
एकचत्वारिंश्यादिपञ्चसु अग्निः ।

अग्न्यासु त्रिष्टुषु गृह्यमदः सोमो जगती सर्वासां ।

प्रतुद्रवर्चस्य उग्रना सोम स्त्रिष्टुप् ।

अयं सोम इन्द्रा अष्टर्चस्य उग्रना सोम स्त्रिष्टुप् ।

ग्रीस्यवङ्गिः सप्तर्चस्य उग्रना सोमस्त्रिष्टुप् ।

प्रद्विन्वानः षडर्चस्य वशिष्ठः सोमस्त्रिष्टुप् ।

असर्जिवक्त्रा षडर्चस्य कश्यपः सोम स्त्रिष्टुप् ।

परिसुवानः षडर्चस्य कश्यपः सोमस्त्रिष्टुप् ।

साकसुचः पञ्चर्चस्य नोधा गौतमः सोम स्त्रिष्टुप् ।

अभियत् पञ्चर्चस्य कठव आङ्गिरसो धीरः सोम स्त्रिष्टुप् ।

कनिन्नन्ति पञ्चर्चस्य च स्तवः सोमस्त्रिष्टुप् ।

प्रसेनाषीञ्जुर्विश्रुत्वाचस्य देवोदासिः प्रतर्दनः सोमः चिष्टुप् ।
इति सूक्तानि ।

अथ मन्त्राः । वायवाया ॥ १ ॥ २ ॥ १ ॥

मेधा तिथिः गायत्री । सदसम्प्रति ॥ १ ॥ ३५ ॥ १ ॥

मेधा तिथिकाश्वः सदसम्प्रतिर्गायत्री । युवाना । २४१ ।

मेधातिथिः काश्व ऋभवो गायत्री स्याना पृथिवी ॥ २ ॥

६ ॥ ५ ॥

मेधा तिथिः काश्वः पृथिवो गायत्री ।

आनोदेवा ॥ २ ॥ ७ ॥ १ ॥

मेधातिथिः काश्वो विष्णुर्गायत्री ।

इदं विष्णुः ॥ २ ॥ ७ ॥ २ ॥

मेधातिथिः काश्वो विष्णुर्गायत्री ।

तद्विष्णोः ॥ २ ॥ ७ ॥ ५ ॥

तद्वत् । वरुणः ॥ २ ॥ १५ ॥ १ ॥

मेधातिथिः कश्वो मित्रावरुणौ गायत्री ।

तत्त्वामिन्द्र ॥ २ ॥ १५ ॥ १ ॥

शुनः श्रेफो अजीगर्तिर्वरुण स्त्रिष्टुप् ।

उदुत्तम ॥ २ ॥ १५ ॥ ५ ॥

शुनः श्रेफोऽजीगर्तिर्वरुण स्त्रिष्टुप् ।

इममेवरुण ॥ २ ॥ १८ ॥ ४ ॥ शुनः श्रेफोऽजीगर्तिर्वरुणौ
गायत्री ।

कद्रद्राय ॥ ३ ॥ २६ ॥ १ ॥ कश्वो घोरो रुद्रो गायत्री ।

आमण्येन ॥ ३ ॥ ३ ॥ २ ॥ शिरष्वास्तूपः सविता चिष्टुप् ।

उदुत्यम् ॥ ४ ॥ ७ ॥ १ ॥ प्रस्मणवः सूर्यी गायत्री ।

एषोत्षा ॥ ३ ॥ ३३ ॥ १ ॥ प्रस्मणवोश्चिनौ गायत्री ।

शुक्रःशु ॥ ५ ॥ १३ ॥ १ ॥ पराशरः शुक्रो द्वैपदं वैराजम् । इम-
मिन्द्रा ॥ ६ ॥ ५ ॥ ४ ॥ राहुगणो गौतम इन्द्र अनुष्टुप् । कोद्य
युक्त ॥ ६ ॥ ८ ॥ १ ॥ गौतमोराहुगण इन्द्रस्त्रिष्टुप् ।

आनोभद्रा ॥ ६ ॥ १५ ॥ १ ॥ गौतमो राहुगणो विश्वे देवा
स्त्रिष्टुप् ।

अदित्यीः ॥ ६ ॥ १६ ॥ ५ ॥ तद्वत् ।

क्रदुनीति ॥ ६ ॥ १७ ॥ १ ॥ गौतमोराहुगणो विश्वे देवा
गायत्री ।

मधुवाता ॥ ६ ॥ १८ ॥ १ ॥ गौतमोराहुगणो विश्वे देवा
गायत्री ।

आप्यायन्व ॥ ६ ॥ २२ ॥ ३ ॥ गौतमः सोमोगायत्री सन्तेप-
यादस गौतमो राहुगणः सोमस्त्रिष्टुप् ।

सोमोधेनुम् ॥ ६ ॥ २२ ॥ ५ ॥ तद्वत् । तच्छंयोः ॥ ० ॥

शंयुर्विश्वे देवाः शक्ररीरीम । जातवेदसे ॥ ७ ॥ ७ ॥ १ ॥

कश्यपोजातवेदान्निस्त्रिष्टुप् ।

इमारुद्राय ॥ ८ ॥ ५ ॥ ११ ॥ कुक्षीरुद्रोजंगत्यते त्रिष्टुभौ ।

मानस्तीके ॥ ८ ॥ ६ ॥ ३ ॥ तद्वत् ।

चित्तं देवानां ॥ ८ ॥ ७ ॥ १ ॥ कुक्षः सूर्यस्त्रिष्टुप् ।

गृहं गृहं ॥ ८ ॥ ३ ॥ ४ ॥ कक्षीवानुषस्त्रिष्टुप् ।

ये देवासो ॥ १० ॥ ४ ॥ ६ ॥ पारुक्षेयो विश्वे देवास्त्रिष्टुप् ।

युवं वस्त्राणि ॥ १० ॥ २२ ॥ १ ॥ दीर्घतमोमित्रावरुणौ त्रिष्टुप् ।

विष्णोर्नुकम् ॥ १० ॥ २४ ॥ १ ॥ दीर्घतमाविष्णुः त्रिष्टुप् ।
तत्रिष्णोः ॥ १० ॥ २४ ॥ २ ॥ तद्वत् । प्रविष्णवे ॥ २४ ॥ १० ॥

२४ ॥ ३ ॥ तद्वत् ।

यदक्रन्द ॥ ११ ॥ ११ ॥ १ ॥ दीर्घतमाषष्णुष्टुप् ।
सप्तयुष्मन्ति ॥ ११ ॥ १४ ॥ २ ॥ दीर्घतमाषष्णुष्टुप् ।
सिंक्ष्वती ॥ ११ ॥ १८ ॥ ३ ॥ दीर्घतमाविष्णो देवास्त्रिष्टुप् ।
सूयवसा ॥ ११ ॥ २१ ॥ ३ ॥ तद्वत् ।

गौरीमिमाय ॥ ११ ॥ २२ ॥ १ ॥ दीर्घतमाविष्णो देवाजग-
ती ॥ १० ॥

पितृगुस्तीषं ॥ १३ ॥ ६ ॥ १ ॥ अगन्धोत्रपितरस्त्रिष्टुप् ।

अग्नेगय ॥ १३ ॥ १० ॥ १ ॥ अगस्त्रिरग्नि स्त्रिष्टुप् ।

त्वमग्ने बद्ध ॥ १३ ॥ १८ ॥ १ ॥ ऋत्समदोऽग्निर्जगती ।

दृत्तं मिमिचे ॥ १३ ॥ २६ ॥ ६ ॥ ऋत्समदोऽग्निः स्वाहान्त
स्त्रिष्टुप् ॥ १३ ॥

गवानां त्वा ॥ १४ ॥ २८ ॥ १ ॥ ऋत्समदो गवाधिपति-
र्जगती ।

त्वन्नोगीपा ॥ १४ ॥ ३० ॥ १ ॥ ऋत्समदोऽहस्यतिर्जगती ।

हस्यते ॥ १४ ॥ ३१ ॥ ५ ॥ ऋत्समदोऽहस्यतिस्त्रिष्टुप् ।

ब्रह्मण्यते ॥ १४ ॥ ३२ ॥ ४ ॥ ऋत्समदोऽब्रह्मण्यति स्त्रि-
ष्टुप् ॥ १४ ॥

स्तुतिस्तुतम् ॥ ५ ॥ १८ ॥ १ ॥ ऋत्समदोऽबद्धी-
जगती ॥ १५ ॥

कनिकादत् ॥ १६ ॥ ११ ॥ १ ॥ गृह्णामदः शकुन्तस्त्रिष्टुप् ।
 युवासुवासाः ॥ १७ ॥ ३ ॥ ५ ॥ विश्वामित्रोऽग्निस्त्रिष्टुप् ।
 वनस्यते ॥ १७ ॥ ४ ॥ ६ ॥ विश्वामित्रोऽग्निस्त्रिष्टुप् ।
 इन्द्राग्नी ॥ १७ ॥ १७ ॥ १२ ॥ विश्वामित्र इन्द्राग्नी गायत्री ।
 अभितष्टे ॥ १८ ॥ २४ ॥ त्रिष्टुप् । विश्वामित्र इन्द्रस्त्रिष्टुप् ।
 सद्योऽह्वाइन्द्रः ॥ १८ ॥ ११ ॥ २ ॥ विश्वामित्र इन्द्रस्त्रि-
 ष्टुप् ।

त्वन्वो अग्ने ॥ २० ॥ १२ ॥ ५ ॥ विश्वामित्रोऽग्निस्त्रिष्टुप् ।
 तेमन्वत् ॥ २० ॥ १५ ॥ १ वामदेवोऽग्निस्त्रिष्टुप् ।
 आवीराजा ॥ २० ॥ २० ॥ १ ॥ तद्वत् ।
 कयानः ॥ २२ ॥ २४ ॥ १ ॥ वामदेवइन्द्रोऽग्नी ।
 दधिक्राग्णो ॥ १३ ॥ १३ ॥ ५ ॥ वामदेवोऽधिक्राग्णो-
 अनुष्टुप् । इंसः ऋषिषत् ॥ २३ ॥ १४ ॥ ५ ॥ वामदेवः सूर्यो
 जगती ॥

वायोः शतं ॥ २३ ॥ ५ ॥ ३ ॥ सदस्यूर्वायुरनुष्टुप् । चेतस्य
 पतिना ॥ २४ ॥ ८ ॥ १ ॥ पुरुमिन्द्राच्चेत्त्राधिपतिरनुष्टुप् ।
 यस्वाह्नदा ॥ २४ ॥ १८ ॥ ५ ॥ वसुश्रुतोऽग्निस्त्रिष्टुप् ॥
 अग्निस्तुवित्र ॥ २५ ॥ १० ॥ ४ ॥ वसुयवोऽग्निरनुष्टुप् ।
 वीति ऋषिः ॥ २५ ॥ १८ ॥ ३ ॥ वसुयवोऽग्निर्गायत्री ॥
 छ ॥ २५ ॥ २ ॥ १ ॥ अश्वनामा मित्रावरुणा-
 वनुष्टुप् ॥

हिरण्यवर्णा ॥ २८ ॥ ३ ॥ ८ ॥ १ ॥ आनन्दकव्वनसि-
 क्तीतन्द्राखञ्जीरनुष्टुप् ।

मूर्धानम् ॥ २८ ॥ ८ ॥ १ ॥ भरद्वाजोविश्वानरस्त्रिष्टुप् ।
 युगेयुगे ॥ २८ ॥ १० ॥ ५ ॥ भरद्वाजोविश्वे देवा जगती ।
 अन्नभ्रायाश्चि ॥ २८ ॥ २२ ॥ भरद्वाजोऽग्निर्गायत्री । पिवासीम ।
 ३० ॥ १ ॥ १ ॥ भरद्वाज इन्द्र स्त्रिष्टुप् । आत्वावहन्तु ॥ ३० ॥
 १ ॥ ८ ॥ मेधा त्रिधिरिन्द्रो गायत्री । मर्हा इन्द्रो ॥ ३० ॥ ७ ॥
 १ ॥ भरद्वाज इन्द्र स्त्रिष्टुप् । आगावः ॥ ३० ॥ २५ ॥ १ ॥
 वीतहृद्योगीस्त्रिष्टुप् । त्वां वृत्रेषु ॥ ३१ ॥ १७ ॥ १ ॥ ग्रंथुरिन्द्रो
 वृहती । त्वामिधि ॥ ३१ ॥ २७ ॥ १ ॥ ग्रंथुर्वाहस्य इन्द्रो
 वृहती । आतारमिन्द्रा ॥ ३१ ॥ ३३ ॥ १ ॥ गर्गइन्द्रस्त्रिष्टुप् ।
 इन्द्रः सुत्रा ॥ ३१ ॥ ३३ ॥ २ ॥ तहत् । विश्वे देवाः ॥ ३२ ॥
 १६ ॥ ६ ॥ सुहोत्रादयो विश्वे देवा भरद्वाजो विश्वे देवा स्त्रिष्टुप् ।
 सरस्वती ॥ ३२ ॥ ३२ ॥ ४ ॥ कुर्मात्मामदः सरस्वती त्रिष्टुप् ।
 धन्वनागा ॥ ३३ ॥ १८ ॥ २ ॥ पायुर्धनुस्त्रिष्टुप् । इन्द्रो नरो ॥
 ३५ ॥ ११ ॥ १ ॥ वसिष्ठोऽग्नि स्त्रिष्टुप् । अभित्वास्तर ॥ ३५ ॥ २१ ॥
 २ ॥ वशिष्ठ इन्द्रो वृहती ।

शन्न इन्द्राग्नी ॥ ३५ ॥ २८ ॥ १ ॥ वसिष्ठो विश्वे देवा-
 स्त्रिष्टुप् ।

अहिर्बुध्नः ॥ ३६ ॥ ५ ॥ ५ ॥ वशिष्ठः सविता त्रिष्टुप् ।
 इमारुद्राय ॥ ३६ ॥ १३ ॥ १ ॥ कुक्कोरुद्रो जगती ।
 समुद्र ऋषेठा ॥ ३६ ॥ १६ ॥ १ ॥ वशिष्ठ आपस्त्रिष्टुप् ।
 वास्तीष्यते ॥ ३६ ॥ २१ ॥ १ ॥ वशिष्ठवास्तीष्यति स्त्रिष्टुप् ।
 अम्बकम् ॥ ३६ ॥ ३० ॥ ६ ॥ वशिष्ठोरुद्रोऽनुष्टुप् ।
 तन्ननुः ॥ ३७ ॥ ११ ॥ १ ॥ वशिष्ठः सूर्योऽपर उष्णिक ।

कुविद्वक्त्रं ॥ ३८ ॥ १३ ॥ १ ॥ वशिष्ठो वायुस्त्रिष्टुप् ।
 आवायो ॥ ३८ ॥ १४ ॥ १ ॥ तद्वत् ।
 नतेविष्णो ॥ ३८ ॥ २४ ॥ २ ॥ वशिष्ठो विष्णुस्त्रिष्टुप् ।
 इरावती ॥ ३८ ॥ २४ ॥ ३ ॥ तद्वत् ।
 आदित्प्रत्वस्व ॥ ४० ॥ १४ ॥ ५ ॥ वज्र इन्द्रो गायत्री ।
 उग्रना ॥ ४० ॥ २३ ॥ ५ ॥ वज्रोमरुत्रायत्री ।
 शमन्निः ॥ ४१ ॥ २६ ॥ ४ ॥ इरिम्बिटिरम्बिरम्बिक् ।
 मित्रावरुणवन्ता ॥ ४३ ॥ १६ ॥ १ ॥ तद्वत् ।
 समिधाम्निं ॥ ४३ ॥ ३६ ॥ १ ॥ विरूपोन्निर्गायत्री ।
 अग्निर्मूर्धा ॥ ४३ ॥ ३८ ॥ १ ॥ विरूपोन्निर्गायत्री ।
 अग्निः शुचिः ॥ ४३ ॥ ३८ ॥ १ ॥ विरूपोन्निर्गायत्री ।
 तदन्नाया ॥ ४४ ॥ १० ॥ ३ ॥ हविर्दानाम्निस्त्रिष्टुप् ।
 त्वमिक्षप्रथ ॥ ४४ ॥ १४ ॥ ५ ॥ भर्गोन्निर्हृती ।
 यत इन्द्र भयामहे ॥ ४४ ॥ २० ॥ ३ ॥ भर्ग इन्द्रः प्रगाथम्
 अश्वैरुद्रा ॥ ४४ ॥ २५ ॥ ६ ॥ प्रगाथ इन्द्र स्त्रिष्टुप् ।
 त्यात्रुक्षत्रियात्र ॥ ४४ ॥ ३३ ॥ १ ॥ मत्स्यस्वामिद आदित्या
 गायत्री ।
 सुदेवो असि ॥ ४५ ॥ ७ ॥ २ ॥ पृथुमेधावरुणोऽनुष्टुप् ।
 आतून इन्द्रा ॥ ४५ ॥ ३१ ॥ १ ॥ कुसीदीकाणवः । इन्द्रे
 गायत्री ।
 आनोविष्णासुहृद्व्यः ॥ ४६ ॥ १३ ॥ १ ॥ सुकाच इन्द्रो गायत्री ।
 त्वन्दाता ॥ ४६ ॥ १३ ॥ २ ॥ सुकर्ष इन्द्रो गायत्री ।
 योविष्णा ॥ ४७ ॥ १४ ॥ १ ॥ सौभरिरम्बिर्हृती ।

योजिनाति । ४८ । १२ । ४ । अथत्सारः सोमः पवमानो
गायत्री ।

तरत् समन्दी । ४८ । १४ । १ । अयास्यः सोमो गायत्री ।

यन्मै गर्भे । ४८ । १३ । १ । भृगुः सोमस्त्रिष्टुप् ।

उच्चातेजातं । ४८ । १८ । ५ । अमहीयः सोमः पवमानो
गायत्री ।

अग्नआयूषी । ५० । १० । ४ । वैखानसोग्निर्गायत्री ।

अग्नेजातः ॥ ५२ ॥ ४ ॥ ४ ॥ कण्वः सोमः पवमानस्त्रिष्टुप् ।

इन्द्रायेन्दी ॥ ५२ ॥ ७ ॥ ३ ॥ कश्यपः सोमः पवमानो गायत्री ।

क्रावाशिष्टः । ५३ ॥ ४ । १ । छनु इन्द्र उष्णिक् ।

पुनानः सोमधारया ॥ ५१ ॥ १२ ॥ ४ ॥ सप्तर्षयः सोमः पव-
मानो वृहती ।

आपोहिष्ठा । ५४ ॥ ५ । १ । सिन्धु हीप आपो गायत्री ।

शन्नोदेवी । ५४ ॥ ५ । ४ । तद्वत् ।

इदमापः । ५४ ॥ ८ । सिन्धुहीप आपोनुष्टुप् ।

यमस्यमायम्या । ५४ ॥ ७ । २ । यमोयमः पंक्ती ।

यमायसोमं । ५४ ॥ १६ ॥ ३ । यमोयमोऽनुष्टुप् ।

यमायमधु । ५४ ॥ १६ ॥ ५ । तद्वत् ।

आपो अस्मान् । ५४ ॥ २५ ॥ ५ । देवत्वा । आपस्त्रिष्टुप् ।

आनिवर्त्तनिवर्त्तय ॥ ५७ ॥ १ ॥ ६ ॥ पवमानो भार्गवः सोम

आस्तारः पंक्तिः ।

आम । ५७ ॥ २६ ॥ ५ ॥ गर्ग इन्द्रास्त्रिष्टुप् ।

सर्वे नन्दन्ति ॥ ५८ ॥ २४ ॥ ५ ॥ वृहत्स्यतिर्ज्ञानं त्रिष्टुप् ।

वसूनां ॥ ५८ ॥ ५ ॥ १ ॥ गौरवीतिरिन्द्रस्त्रिष्टुप् ।
 इमं मे गङ्गे ॥ ५९ ॥ ६ ॥ ५ ॥ पृथमिधानयो जगती ।
 विश्वतश्चक्षुः ॥ ५९ ॥ १६ ॥ ३ ॥ विश्वकर्मा त्रिष्टुप् ।
 नवोनवो ॥ ५९ ॥ २३ ॥ ४ ॥ विप्रचितौ चन्द्रमा स्त्रिष्टुप् ।
 पुनःपत्नी ॥ ५९ ॥ २७ ॥ ४ ॥ सूर्यात्मा अनुष्टुप् ।
 इहैवस्तं ॥ ५९ ॥ २९ ॥ २ ॥ सावित्री सूर्योनुष्टुप् ।
 इमान्त्वां ॥ ५९ ॥ ३० ॥ ५ ॥ सावित्री आत्मानुष्टुप् ।
 रक्षोहणं ॥ ६० ॥ ५ ॥ १ ॥ पायुरग्नि स्त्रिष्टुप् ।
 चतस्त्रीप्रत्य अनुष्टुभः । सम्बाहुभ्यां ॥ ६० ॥ १६ ॥ ३ ॥
 विश्वकर्मा त्रिष्टुप् ।
 सहस्रशीर्षा ॥ ६१ ॥ ७ ॥ १ ॥ नारायणः पुरुषोनुष्टुप्
 अन्या त्रिष्टुप् ।
 या श्रीषधी ॥ ६१ ॥ ८ ॥ १ ॥ अथर्वणोभिषगोषधयोऽनुष्टुप् ।
 अश्वत्थे वो ॥ ६१ ॥ ८ ॥ ५ ॥ तद्वत् ।
 उद्ध्यध्वं ॥ ६१ ॥ १७ ॥ १ ॥ बुधोबुध स्त्रिष्टुप् ।
 आयुः शिशानो ॥ ६१ ॥ २० ॥ १ ॥ ऐन्द्रो प्रतिरथ इन्द्र
 स्त्रिष्टुप् ।
 वृहस्पते गृत्समदो ॥ ६५ ॥ २२ ॥ ४ ॥ वृहस्पतिर्जगती ।
 इन्द्र आसां ॥ ६१ ॥ २३ ॥ ५ ॥ अप्रतिरथं इन्द्र स्त्रिष्टुप् ।
 अस्माकं ॥ ६१ ॥ २४ ॥ ५ ॥ तद्वत् ।
 अद्वादिन्द्रा ॥ ६२ ॥ २१ ॥ ३ ॥ काश्यप इन्द्र स्त्रिष्टुप् ।
 हिरण्य गर्भं ॥ ६३ ॥ ३ ॥ १ ॥ प्रजापतिरिन्द्रस्त्रिष्टुप् ।
 नाके सुपर्णं ॥ ६१ ॥ ८ ॥ १ ॥ वेनीवेन स्त्रिष्टुप् ।

राक्षी व्यस्यदा ॥ ६३ ॥ १४ ॥ १ ॥ कुशिकी राक्षीर्गायत्री ।
 ममाग्नेवर्चः ॥ ६३ ॥ १५ ॥ १ ॥ विहृष्यो वैश्वदेवस्त्रिष्टुप् ।
 पायन्तां ॥ ६३ ॥ २५ ॥ ५ ॥ वशिष्ठो विश्वेदेवा स्त्रिष्टुप् ।
 सवोरीजानं ॥ ६३ ॥ २८ ॥ ८ ॥ अग्निस्तापसाविश्वेदेवा

अनुष्टुप् ।

उत्तानपर्षो ॥ ६४ ॥ ३ ॥ २ ॥ इन्द्राणो उपनिषदनुष्टुप् ।
 त्वस्तिदाविश्रस्यति ॥ ६४ ॥ १८ ॥ २ ॥ शास इन्द्रोनुष्टुप् ।
 सहस्राक्षेण ॥ ६४ ॥ १८ ॥ ३ ॥ यत्प्रनाश इन्द्रस्त्रिष्टुप् ।
 शतं जीव ॥ ६४ ॥ १८ ॥ ४ ॥ तद्वत् ।

अक्षिभ्यां ॥ ६४ ॥ २१ ॥ ११ ॥ कश्यपो यत्प्रानुष्टुप् ।

अङ्गादङ्गात् ॥ ६४ ॥ २१ ॥ ६ ॥ तद्वत् ।

देवाः कपोतः ॥ ६४ ॥ २३ ॥ १ ॥ कपोतइन्द्रस्त्रिष्टुप् ।

विभ्राट् ॥ ६४ ॥ २८ ॥ १ ॥ भार्गवः सूर्यो जगती ।

अन्वाहार्षं ॥ ६४ ॥ ३१ ॥ १ ॥ प्र्वा राजानुष्टुप् ।

ध्रुवाद्योः ॥ ६४ ॥ ३१ ॥ ४ ॥ तद्वत् ।

अभावर्त्तन ॥ ६४ ॥ ३२ ॥ ५ ॥ श्रुतिदत्तं इन्द्रोनुष्टुप् ।

आपङ्क्तोः ॥ ६४ ॥ ४८ ॥ १ ॥ सर्पि रग्निः सर्पागायत्री ।

नमो ब्रह्मणे ॥ ६४ ॥ ४८ ॥ ० ॥ वामदेवो लिङ्गोक्तास्त्रिष्टुप् ।

अथ यजुर्वेदमन्त्राणाम् ।

इषेत्वा ॥ १ ॥ १ ॥ प्रजापतिः शाखानुष्टुप् ।

कुक्कुटोसि प्रजापतिर्ष्वीक ।

भूरसि ॥ १ ॥ ३ ॥ ४ ॥ प्रजापतिर्ष्वीक ।

अत्युष्टं रक्षः ॥ १० ॥ १ ॥ प्रजापती रक्षः ।
 अतिश्रितोसि ॥ १ ॥ १० ॥ १० ॥ प्रजापतिः श्रुवः ।
 सवितुर्वः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ प्रजापति रायः ।
 कुर्विष्णो ॥ २ ॥ ६ ॥ ८ ॥ वृहती विष्णुः ।
 चित्रावसोः ॥ ३ ॥ ३ ॥ १० ॥ ऋषयो रात्रिः ।
 एष ते रुद्रभागः ॥ १ ॥ ८ ॥ १ ॥ प्रजापती रुद्रः ।
 इमाश्चापः ॥ ४ ॥ १ ॥ २ ॥ प्रजापतिरापः ।
 अमित्यं देवं ॥ ४ ॥ ८ ॥ ३ ॥ प्रजापतिः सविता ।
 वरुणस्योत्तमनमसि ॥ ४ ॥ १० ॥ ८ ॥ प्रजापतिर्वरुणः ।
 विष्णोरराटं ॥ ५ ॥ ५ ॥ ८ ॥ प्रजापति विष्णुः ।
 उद्दिवंस्तः ॥ ५ ॥ ७ ॥ २ ॥ प्रजापति रौद्रम्बरी ।
 अपन्नो अग्निः ॥ ५ ॥ ८ ॥ ३ ॥ प्रजापतिरग्निस्त्रिष्टुप् ।
 देवस्वत्वा ॥ ६ ॥ १ ॥ १ ॥ प्रजापतिः लिङ्गोक्ता ।
 सुमित्रान ॥ ३ ॥ ५ ॥ ४ ॥ प्रजापतिरापः ।
 कार्ष्णिर्दि ॥ ६ ॥ ७ ॥ ६ ॥ प्रजापतिष्णोऽनुष्टुप् ।
 नमोस्तुसर्पेभ्यः ॥ १४ ॥ १ ॥ ६ ॥ अश्विनौ नरुक्त्वाकृतिः ।
 ब्रह्मयज्ञानं ॥ १४ ॥ १ ॥ २ ॥ अश्विनावादित्य स्त्रिष्टुप् ।
 शुक्योतिः ॥ १८ ॥ ७ ॥ १ ॥ परमेष्ठी भरतगुणिक् ।
 सूर्यस्या । परमेष्ठी प्रजापतिः सूर्यः । व्याहृतीनां पर-
 मेष्ठी प्रजापतिः । अग्नि वायुः सूर्य प्रजापतयः । उपप्रयन्तो
 वृहदेवाग्निर्गायत्री । तनूया अग्ने वृहदेवाग्निर्गायत्री । एष ते
 रुद्रभाग इति द्वयोर्व्यजुषोः प्रजापती रुद्रः प्रथमस्य वृहती साम
 पंक्तिर्व्या । द्वितीयस्य यजुर्वृहती । अदस्तेनत्वा परमेष्ठी प्रजा-

पति राज्यं । भेषजमसि प्रजापती । रुद्रः ककुप् । अम्बक-
मिति इयोः प्रथमायाः वशिष्ठः द्वितीयायाः प्रजापतिरुभयोः
रुद्रोऽनुष्टुप् । आकूत्यै, प्रयुजे, मेधायै । दीक्षायै, स्वरस्वत्यै ।
इत्येतेषां चतुर्णां मौढभणानां प्रजापतिरग्निरासुरात्रिष्टुप् ।
यजुः पंक्तिर्व्या । चिदसि मनासोस्वप्रजापतिः सोमक्रयणी
गौः ब्राह्मी पंक्तिरतिगङ्गरी वा । अग्नेस्तनुपपरमेष्ठी प्रजा-
पतिर्हविः । देवो वा विष्णुः प्रजापतिर्विष्णुरनुष्टुप् । विष्णो-
र्नुक्तं । दिवो वा । प्रतद्विष्णुः । इतितिसृणां प्रजापतिर्विष्णु
स्त्रिष्टुप् । आद्ये यजुरन्ते । विष्णोरराटमिति पञ्चयजुषां प्रजा-
पतिर्विष्णुराद्यस्यदेवी जगती । ततश्चतुर्णां देवी पंक्तिः । अग्ने-
व्रतपा प्रजापतिरग्निर्वृद्धा त्रिष्टुप् । अयन्नः प्रजापतिरग्नि-
र्यजुस्त्रिष्टुप् । इदमापः प्रजापतिरापोमहापंक्तिस्त्रिष्टुबव-
साना पावमानद्यान्त्यः पादः । देवास्त्वशुकपा । देवास्त्वा
मन्यिपा, इत्यनयोः प्रजापतिः क्रमेण शुकमन्यिनौ हविर्धानोऽग्नि
र्यजुःपंक्ती । आदिव्ययाकुवत्तयै । मनुः सतो वृद्धतो । युक्ष्वा
हिकेशिनेति मधुच्छन्दा इन्द्रोऽनुष्टुप् । अग्नेपवस्व वैखानसोऽ-
ग्निर्गायत्री । उदुत्यञ्जातवेदसमिति देवाः सूर्योर्गायत्री ।
उदुत्यम्बस्त्ववः सूर्योर्गायत्री । चित्रन्देवानां कुल आङ्गि-
रसः सूर्यस्त्रिष्टुप् । चत्वारि शुक्लापरमेष्ठी यक्षपुरुषस्त्रिष्टुप्
देवावन्नं प्रजापतिः सरस्वत्यः लिङ्गीक्तानुष्टुप् । पिद्वथ्यः प्रजा-
पत्यः सरस्वत्यः पितरः । वसेन क्रतुना प्रजापतिः सरस्वती
लिङ्गीक्तानुष्टुप् । सेना प्रजापतिरनुष्टुप् । अग्नेयेशेसपतयेः

● अक्षपतये इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

दक्षिणाम्बिरासुरीपंक्तिः अग्नेयसोऽक्षमिष्यस्य प्रजापतिर-
 म्निर्गायत्री । सुपर्णोसि गरुडान्मिष्यस्य प्रजापतिर्गरुडान्
 कृतिः । द्रुपदादिवेति* । कौकिलोराजपुत्रोवा द्रुपदो वा आपो
 अनुष्टुप् । शतवन्तः आथर्वणश्रीषधीरनुष्टुप् । याश्रीषधीरित्या-
 यानां योअश्रैभिदासतीत्यन्तानां सप्तविंशतीनां आथर्वणपुत्रोभि-
 षगोषधीरापोऽनुष्टुप् । अश्रावतीर्गौमतीः वशिष्ठउषाचिष्टुप् ।
 सीरा युञ्जन्तिभ्यः प्रजापतिः सार्पिरग्निः प्रजापतिरनुष्टुप् । कृष्ण-
 पञ्चपाजइतिपञ्चानां देवा वामदेवोऽग्निस्त्रिष्टुप् । काण्डात्
 काण्डादिति हयोरग्निरिष्टिका अनुष्टुप् । अपाङ्गश्वन् प्रजापति-
 र्वरुणः पंक्तिः । इमं माहिर्गं सीरितिपञ्चर्चा† प्रजापतिरग्निस्त्रि-
 ष्टुप् । अपात्वा श्रीषधीरापोम्निरनुष्टुप् । नमस्तेरुद्रमन्ववइति
 रुद्राभ्यायस्य प्रजापतिर्वामदेवा वा ऋषयः ॥ आद्योऽनुवाकः
 षोडशर्चारुद्रदेवतः । प्रथमा गायत्री । ततोयातेरुद्र इत्याद्यास्ति
 स्त्रोऽनुष्टुभः । असौयस्मान्मइत्याद्यास्तिस्त्रः पंक्तयः । नमोस्तु-
 नीक्षश्रीवायेत्याद्याः सप्तानुष्टुभः । तत इति हे जगती । मनोमन्त्रं
 मानस्तोके इतिहयोः कुत्सोऽन्यत्पूर्ववत् । द्रापेअन्वसस्यत
 इत्यन्तानुवाके सप्तऋचः । तत्राद्या उपरिष्टाद्गृहती द्वितीयाया
 कुत्सर्षिं दृष्टा जगती । तृतीयाऽनुष्टुप् । परितोरुद्रस्य । मौढष्ट
 नेति हे त्रिष्टुभो । ततोहेअनुष्टुभो असङ्गाताः सहस्राण्ये-
 त्याद्याः य एतावन्तइत्यन्ताः द्वावतानसंज्ञका मन्त्राः बहुरुद्र
 देवत्याः अनुष्टुपृच्छन्दस्ताः । ततोऽन्याभिनमोस्तुरुद्रेभ्योयेद्वी

* इमं माहिर्षीरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† इपदादिविः पुस्तकान्तरे पाठः ।

ति त्रीष्विजुं वि प्रत्नवरीहसंभ्रकानि बहुबद्रदैवतानि वृति
 च्छन्दस्तानि। आद्यान्वानुवाकयोर्मध्ये। नमोहिरण्यवाहव
 इत्यादीनि नमभानिर्हतेभ्य इत्यन्तानि सर्वांश्च यजूं वि।
 तेषां सर्वैवान्तिस्त्रोयीतयो देवताः। तेषां मध्ये। नमो हिर-
 ण्यवाहवेवेनास्त्रे दिग्वाच पतये नम इत्यादि। नमः एभ्यः
 च पतिभ्यश्च यो नम इत्यन्ता मन्त्राः उभयतो नमस्ताराः। नमो
 भवावेत्यादयो नम आशिदते च प्रशिदतेचेत्यन्ताः अन्तरतो
 नमस्ताराः। नमः सभाभ्य इत्यादयो जातसंभ्रकाः सद्राः। नमो-
 वः किरिकेभ्य इत्याद्याचतस्त्रोभ्याहृतिसंभ्रकाः बहुबद्रदैवता
 अग्नि, वायु सूर्य, इदवभूताः। आद्युग्मिमान इति पञ्चानां देवा
 वैश्वानरोऽग्निर्जगती। अपांकेन। प्रजापतिः सरस्वतोऽग्निर्गायत्री
 अग्निश्च पृथिवी च आदित्योऽग्निः। ब्रह्मजन्मानं प्रजापतिरादित्त्व
 स्त्रिष्टुप् अयानश्चिचावामदेव इन्द्रो जगती। संवत्सरोसि प्रजा
 पतिः प्रजापतिर्गायत्री। अहिरिवभोगैः प्रजापतिर्हविस्त्रि-
 ष्टुप्। बह्वीनां प्रजापतिर्सिद्धीक्ता त्रिष्टुप्। युष्मन्तिब्रह्मं
 मधुहन्ता आदित्यो गायत्री। यमेन दत्तं भार्गवो जमदग्नि-
 दीर्घतमाश्चस्त्रिष्टुप्। आह्वयोन हिरण्यस्तूपः। सविता
 त्रिष्टुप्। आनोमिषावरुणा गृह्णमदो मिषावरुषो गायत्री।
 यज्जाप्रत इति पञ्चानां षष्ठां। शिवसङ्कल्पमनस्त्रिष्टुप्।
 पञ्चमथः गृह्णमदो मिषावरुषो गायत्री। उभापिबन्तः
 प्रस्त्रववाशिनो गायत्री। यदाबभ्रदसोहिरण्यं त्रिष्टुप्।
 इमं देवेभ्यः सद्गुग्मिको गृह्णुस्त्रिष्टुप्। पनीमो भरद्वाजः विदि-
 क्षिरिन्द्रस्त्रिष्टुप्। ब्रह्मोमिषः दध्युजावर्षो सिद्धीक्ताऽनु-

ष्टुप् । मनसः कामं दध्यङ्गाधर्वणः श्रीरनुष्टुप् । गवाना-
 न्त्वेति चतुर्था यजुषां प्रजापतिर्ब्रह्मीक्षाऽनुष्टुप् । समाख्या
 अग्निरग्निरनुष्टुप् । शचीदेवी दध्यङ्गाधर्वण आपो गायत्री ।
 एकाचमे । देवाअग्निर्जगती । उदुत्तमं शुनःश्रीको वरुण
 स्त्रिष्टुप् । वनस्यते वीष्टुकोप्रजापतिर्वनस्यतिस्त्रिष्टुप् ।
 भद्रं कर्णेभिस्त्रिष्टुषां गौतमो विश्वे देवास्त्रिष्टुप् । शची
 शचीमिचः दीर्घतमा इन्द्राग्निस्त्रिष्टुप् । देवकृतस्येति षष्ठां
 प्रजापतिरग्निस्त्रिष्टुप् । मानसोक्तेसङ्घुश्रीको रुद्रीजगती ।
 तद्विष्णोः मेधातिथिर्विष्णुर्गायत्री । काते । प्रजापतिः काम
 स्त्रिष्टुप् । नमः सन्धवायेत्यादीनां नमो वाकिरेभ्य इत्यन्तानां
 ऋचां* परमेष्ठी रुद्रस्त्रिष्टुप् । आनो नियुञ्जि स्वृचां† रुद्र
 स्त्रिष्टुप् । चातारमिन्द्रं प्रजापतिरिन्द्रस्त्रिष्टुप् । वृहस्यते
 अप्रतिरुद्रइन्द्रस्त्रिष्टुप् । वर्यसोमबन्धुः सोमोगायत्री ।
 तमोमानं गौतमो विश्वे देवा गायत्री । स्योनापृथिवी मेधा
 तिथिः पृथिवी गायत्री । वरुणस्योत्तभनमसि प्रजापतिर्व-
 षणः । समुद्रायत्वा । दध्यङ्गाधर्वणोवाताः । पुनन्तुमा-
 न्देवाः प्रजापतिः । अदितिर्धौः गौतमो विश्वे देवा स्त्रिष्टुप् ।
 पितृभ्युस्तोषं । अगन्धोत्रउष्णिक् । स नःपितेव । विश्वामिचो
 मधुच्छन्दोनिर्गायत्री । विश्वे देवा स आगतः । गृह्णमद्दे
 विश्वे देवा गायत्री । विश्वतश्चतुर्विंशकर्मो भौवनो विश्वकर्मा
 त्रिष्टुप् । यवोऽसि । प्रजापतिर्यवः । सोमउष्णिक् । तेजोसि पर-

* प्राणामिति पुरुषाकारे पाठः ।

† शिव्या इति च्छित् पाठः ।

मेष्टी प्रजापतिः । देवा वा । प्रजापतिर्वा आत्वं वापि देवा
सोममोत्राताः वाक्यानां पानो आयुषं वर्षस्वमिति तिसृषां
दक्षो हिरण्यं क्रमेणोष्णं शक्रस्त्रिष्टुप् । तं यज्ञं नारायणः
पुरुषः पुरुषोऽनुष्टुप् । सप्तऋषय इत्यध्यात्मवादिनी जगती ।
उपवहरेगिरीषां* वक्षोऽग्निर्गायत्री । शक्रइन्द्राग्नी दध्यङ्गा
धर्वं बलिङ्गोक्ता त्रिष्टुप् । इन्द्रोविशामधुच्छन्दा इन्द्रोऽनुष्टुप् ।
अभित्यन्देवं प्रजापतिः सविता अष्ठिरग्निर्गायत्री । भुवास्ति
प्रजापतिरौदुम्बरी । अग्निन्दतं विरूपोऽग्निर्गायत्री । ऋषं
वाचं दध्यङ्गाधर्वणः लिङ्गोक्ता । इशावास्त्रन्दध्यङ्गाधर्वणः
आत्मा अनुष्टुप् । सप्तते अग्ने सप्तर्षिऽग्निस्त्रिष्टुप् । यदक्रन्द
इति त्रयोदशानां भागवोजमदग्निरशस्त्रिष्टुप् । आब्रह्मन्
प्रजापतिर्ब्राह्मा यजुः । सजोषसा इन्द्र विशामिन् इन्द्रस्त्रिष्टुप् ।
कार्ष्णिर्सि अथर्वा ज्योतिरनुष्टुप् । चिन्वावसोः स्वस्तितेति
ऋषयो रात्रिः । उद्विवं प्रजापतिरौदुम्बरी । शंभुर्वाहृत
इन्द्रोऽनुष्टुप् । आयङ्गोः सग्विरपिः परापररूपेण सर्पा गायत्री ।
सुमिन्त्रियानः प्रजापतिरापः । उर्मिन्त्रियानस्तथा । पृथिवी देव
यजनं परमेष्ठी प्रजापतिः देवा वा प्रजापतिर्वा । वेदिर्विश्व-
कर्मा विमनाविश्वकर्मा त्रिष्टुप् । सुत्रामाणङ्गयस्तात
अदितिः त्रिष्टुप् । अहं पिदृन् शङ्खः पितरस्त्रिष्टुप् ।
नमोस्तु नीलध्रीवाय परमेष्ठी रुद्रोऽनुष्टुप् । परितोः रुद्रस्य
परमेष्ठी रुद्रस्त्रिष्टुप् । विकिरिद्विलोहितः परमेष्ठी रुद्रो-

* उपवहरे गीर्वाणि कश्चित् पाठः ।

† परिषो रुद्रस्येति कश्चित् पाठः ।

ऽनुष्टुप् । उपप्रागाद्दीर्घतमाशस्त्रिष्टुप् । इन्द्रः सुभामाः
 प्राजापत्याग्निसरस्वतीरुद्रोजगती युष्मत्स्वस्वस्वस्वस्व । श्लावा-
 श्वः सावित्री वायुर्जगती । इदं विष्णुर्मेधातिथिर्मेधावी ।
 गायत्री । इरावती वाग्निष्ठो विष्णुस्त्रिष्टुप् । देव सुतावश
 धरो प्राचीस्वस्वोऽमत्र हविःस्थाने । विष्णोर्गुणमिति तिस्रो
 वैष्णवस्त्रिष्टुभः ।

अथ कुष्माण्डमन्त्राः ।

यद्देवास्त्रि,यदि दिवा । यदिजाग्रदिति तिसृषां प्रजा-
 पतिर्ऋषिः क्रमेषाम्निर्वायु सूर्यादेवताः सर्वासामनुष्टुप् ।
 यद्गामे इत्येतद्यजुर्लिङ्गोक्तदैवतं समुद्रेते द्विपदा विराड्दैवी ।
 द्रुपदादिव । प्रजापतिरापोनुष्टुप् । उद्वयन्तमिति प्रस्त्ववः
 सूर्योऽनुष्टुप् । आपो अद्यन्नचारिवमिति प्रजापतिरग्निः
 पंक्तिः । एधोसि । समिदसीत्येते । शमिदैवते यजुषी ।
 समाववर्त्तीत्यस्याः अग्निरभिरुक्ता गायत्री । वैश्वानर ऋषि-
 रिति वैश्वानरं यजुः । अभ्यादधामोतिचृपचस्य । आश्वतरा-
 श्विरग्निरनुष्टुप् । अंशुना । इत्यस्याः सूर्योऽनुष्टुप् । सिञ्चति
 परिषिञ्चतीत्यस्याः सूर्य इन्द्रोवा अनुष्टुप् । धानावन्तमि-
 त्यस्या विश्वामित्र इन्द्रो गायत्री । इन्द्रदिन्द्राय वृमेध पुत्र-
 मेधसाविन्द्रो वृहती । नये मायावक्त्रानः सरस्वतीत्यस्य
 चृपचस्य मधुच्छन्दाः सरस्वतीर्गायत्री । आमन्द्रोर्विश्वामित्र
 इन्द्रो वृहती । आनी विशासुहृद्यं श्लावाश्व इन्द्रो वृहती ।
 प्रवेनानीः सजुग्रस्त्वन्धः स्तान्दस्त्रिष्टुप् । पवित्रन्तइति इयो-
 रकंपृष्ठस्त्वन्धो जगती । एषा स्तान्धसंहिता नाम । यद्वा

उपविशति अगस्त्योन्मिर्गायत्री । सनादन्ने श्रुतिर्यातुधानी गायत्री
 अक्षयमीमदन्तः यम इन्द्रः पञ्चपदा पंक्तिः । अविष्टुष्टःशंयु
 वंरुष स्त्रिष्टुप् अक्रात् समुद्रः वैखानसः सोमस्त्रिष्टुप् । कनि-
 क्रान्त इति द्वयोः सोमः स्वधा त्रिष्टुप् । एषामित्रया नाम
 संहिता । ये ते पत्न्या अजितस्य जित्यन्ता गायत्री । एतो-
 न्मिन्द्रशुचिय इन्द्रो विराट् । शुक्रान्ते अन्यत् । पूषाम्नि-
 स्त्रिष्टुप् महतस्सोमा वशिष्ठः पवमानस्त्रिष्टुप् । अग्निस्त्रि-
 अग्निनेति वामदेवाम्निर्गायत्री । परितोषिञ्चता सुतमच्छिद्रः
 सोमो बृहती पवस्वसोमेति धर्म इन्द्रोक्षरपंक्तिः । अक्रं
 यदस्य भारद्वाज इन्द्रो बृहती । छतवतीति वरुणो व्यावा
 ष्टिभ्यावविर्जगती । अद्यानो देवसवितः सउच्च सविता
 गायत्री । त्वातारमिन्द्रं मैत्रिन्द्रो बृहती । महित्रीणां पछोह
 इन्द्रो गायत्री । विश्वामित्रस्य बृहदिन्द्राय बृहती । यो
 भूतानामित्यस्याः नारायणीयकौण्डिन्य ऋषिः षट्पदास्य अंशो
 देयता पंक्तिः छन्द आत्माप्रवादरूपेयं प्राणायामे । अग्नि
 क्तस्तेति द्वे अनुष्टुप् परास्ताबृहत्यो लिङ्गोक्तदेवत्ये । समिष
 इन्द्र इत्येकादशानामाग्री संप्रकानामाङ्गिरसऋषिः क्रमेण ।
 इत्यास्तनूपात् । नारायंसीईडो बर्हिर्हार्उषसानक्ता देव्या
 रातिस्त्रो देवोस्वष्टा वनस्पतिः स्वाहा क्तय इत्येता देवताः
 अथ उरूपथाः प्रथमानं व्यूहः । सुवीरावीरं द्वादशकः ।
 अष्टिन्नं द्वादशकः ।

इति यजुर्विधानं ।

अथ साक्षां ऋषि देवत छन्दसि ।

इदं विष्णुः पृच्छकस्य विष्णोः प्रकाव्य सुशनेव भूवाषा इति
 बागद्वभं पुरुष व्रतेषैषा वैष्णवी नाम । तत्र इदं विष्णुः प्रजा-
 पतिर्गायत्री । वृक्षस्य विष्णो विष्णुर्विष्णुर्जगती । प्रकाव्यसुश-
 नेव भूवाषाः वरोहे विष्णुस्त्रिष्टुप् । पुरुष व्रते पुरुषौ नारा-
 यणोऽनुष्टुप् । इदं ओं ह्यत्वोजसेति प्रथमे तेन यो मधुच्छन्दा
 इन्द्रो गायत्री । सप्तव्योमघोनां मधुच्छन्दाः विमेदेवा अनुष्टुप्
 पुरासिन्धुर्नुवा कवि दुःमरुत इन्द्रोऽनुष्टुप् । उपक्षेम मधुमती
 क्षिपन्तः मधुच्छन्दा इन्द्रे द्विपदा विराट् । तवस्त सोमं ।
 मधुच्छन्दाः पवमानस्त्रिष्टुप् । सुरूपकलु मधुच्छन्दा गायत्री ।
 उदुत्तमं वरुणपाशमिति गीतमो वरुणोऽनुष्टुप् । शुक्रं चन्द्रो
 शुक्रचन्द्रमाः गायत्री । शुक्लाशुक्ला शुद्धोय इन्द्रोऽनुष्टुप् । वृत्
 सूक्तञ्चः अग्निः श्येनस्त्रिष्टुप् । इन्द्रस्त्रिधातु इन्द्रे इन्द्रो
 वृहती । विशा घृतना त्रिशाक इन्द्रो जगती । सोमं राजानं
 वृहस्पतिरन्ना, दित्य वरुण विष्णवः । चरुषणो घृतं वार्हृणः
 सर्षं प्रसर्षं उत्सर्षां जगती । समिन्यायन्ति जनिधानं अयां गभं
 आपस्त्रिष्टुप् । इन्द्राहो वृषमग्निर्गायत्री । सन्ते पयांसि सोम
 व्रते सोमः सोमस्त्रिष्टुप् । सोमव्रतेऽपि दैवव्रते ऋषिव्रते रुद्रः ।
 वृतीये विश्वेदेवा । यज्ञपदिन्द्रोऽनयदने नेति पूषा पूषा गायत्री ।
 भगो न चिचेति सान्त्तिक अग्निर्विराट् । सामहयेऽपि ।
 इममिन्द्रे ति वर्गहयस्य वशिष्ठ इन्द्रोऽनुष्टुप् । परिप्रिया कवि-
 रिति । अर्षापवः कविर्गायत्री । रथन्तरे वशिष्ठः । ईशान
 इन्द्रो वृहती । वामदैव्ये वामदेवः सर्वदेवा गायत्री । यज्ञः
 समेति । यथा इन्द्रोवृहती । इन्द्रमिहासिनः कपवइन्द्रोवृहती ।

रघन्तरं पूर्ववत् गीर्वाणा पाहि नः सुत मिति । हरिः त्रीं निर्धनं इन्द्रो गायत्री । अथाविशन्निन्दवः आशित इन्द्रो गायत्री इन्द्रोहिमत् सिन्धवः पूषा इन्द्रो गायत्री । चायन्तीह त्रायन्ति ये इन्द्रोवृहती । गव्येषु गीहये श्यावाश्च इन्द्रो गायत्री । इदं भोग्निविति मधुच्छन्दा इन्द्रो गायत्री । भद्रानो अग्निराहुत इति । गौतमो भग इन्द्रो गायत्री । वैरूप्याष्टके विरूप इन्द्रोवृहती । अत्राष्टके क्रमादृषयः । आद्ययोः शिखण्डी । तदुत्तरयोरत्रिः । तदुत्तरयोः महास्त्रवेतसः । तदुत्तरयोः शिरीषः । सर्वत्रेन्द्रोदेवता जगतीच्छन्दः । अग्ने विवस्वदुषसः इक्षिमाण्डव्यो जातवेदाऽनुष्टुप् । एवस्यते सोम इन्द्रस्त्रिष्टुप् । त्रिरश्मैमरुता धन्वन्नेनवो जगतीस्वात्वाहित्वेति ॐसहस्र इति इन्द्रो यजुः । धानावन्तं करयन्निविति अभिषव इन्द्रो गायत्री वास्तोष्पते इति प्रजापति वास्तुयजुः । अभ्रातुव्य इति अभ्रातुव्य इति अभ्रातुव्य इन्द्रः ककुप् । वातआवातुभेषजं काशिनो वायुर्गायत्री पञ्च निधानं वामदेव्यो वामदेव्यः । राहुर्गायत्री । असित्वा पूर्वपौतय इति । वषट्कारः प्रजापतिरिन्द्रे वृहती । अभित्वाशूरनीनुमरहस्येन हिशब्देन अजिति इन्द्रो वृहती । इन्द्रमिद्देवतातये क्रसुव इन्द्रो वृहती । गवाव्रते प्रजापतिर्गावस्त्रिष्टुप् । पुरुष व्रते पुरुषोनारायणोऽनुष्टुप् । रात्रे व्रते प्रजापतिरात्रिरनुष्टुप् । इन्द्र सानसिरोहितकुलाय इन्द्रो गायत्री । भारुण्डसामनि भारुण्डी व्रातवेदाम्निः जगती । गायत्रं सापौष्कलमाम्नेयगायत्री । रेवत कुम्भवरेवत इन्द्रो गायत्री । त्रिसुपर्णं त्रिसुपर्णः सूर्यो गायत्री । महावैश्वानरव्रते वैश्वानरोऽग्नि

स्त्रिष्टुप् । धानिगेति धानिचङ्गः इन्द्रः गानाहन्दांसि । उष्टम्
 सामनि भारवाज इन्द्रो वृद्धतो ।

इति सामविधानं ।

अथ अन्नस्यमन्त्राणां ऋषिः देवतहन्दांसि ॥

शान्तातीयगचस्य शान्तातीषाम् इन्द्रः सर्वांसि हन्दांसि ॥

भैरव्यगचस्य भैरव्यं आयुष्षिक् ।

रीरुगचस्य, ब्रह्मारीरुः सर्वांसि हन्दांसि ।

अथ द्यगचः ।

शान्तिगचस्य ब्रह्मा सोमोऽनुष्टुप् ।

कृत्यादूषचगचस्य ।

शुक्रः कृत्यादूषचः सर्वांसि हन्दांसि ।

धातनगचस्य धातागचोऽग्निः सर्वांसि हन्दांसि ।

मातृनामगचस्य मातृनामा ऋषिः मातृनामदेवता
 उष्टिक्हन्द्ः ।

वास्तोष्पतिगचस्य ।

ब्रह्माऋषिर्वास्तोष्पतिर्देवता सर्वांसि हन्दांसि ।

पापन गचस्य ॥

ब्रह्मा ऋषिः पापना देवता ।

गायत्रुषिक् । ककुद्दनुष्टुप् ।

वक्षनाशनगणस्य, मातृनामाऋषिः * वक्षनाशनो देवता
सर्वाधि हन्दासि ।

दुःसप्रनाशनगणस्य ।

यमऋषिः दुःसप्रनाशनो देवता सर्वाधि हन्दासि ।

आयुष्यगणस्य, ब्रह्मा आयुर्गायत्रादि सप्तहन्दासि ।

सर्वस्यगणस्य, अथर्वा ऋषिः वृहस्पति देवता ।

अनुष्टुप् वृहती पंक्तिरनुष्टुप् ।

षष्ठादश गणानां अथर्वाऋग्माः सर्वाधि हन्दासि ।

यसो देवीसूक्तस्य सिन्धुद्वीप आपोगायत्री । शिरस्त्रयर्षीः

शुचयः अथर्वाभ्युक्तस्त्रिष्टुप् ।

अथर्वाणानुवाकादीनां अथर्वाऋग्मः सर्वाधि हन्दासि ।

याचीमधीः, ब्रह्मा वृहस्पतिरनुष्टुप् ।

मसान्नेवर्ष इत्यादीनां चतुर्दशानां कुबेरस्त्रिष्टुप् ।

नदीपं त्वष्टरीबादरायत्रीर्षरोजगती ।

सोदक्तामन्नादेवानां अपरिब्रत इन्द्रोतिष्कन्दाः ॥

सुपर्षीसि सोपर्षीगवज्जाननुष्टुप् ।

इन्द्रजीववेति हृदयसूक्तस्य ब्रह्मा इन्द्रो गायत्री ।

यत्संमृत्पुरभ्यत्स वृहस्पतिः मृत्पुरनुष्टुप् ।

मातृनामगणः सुपर्षस्वागवज्जाननुष्टुप् ।

यथेदंशून्यभयोतिसूक्तम् ।

अथर्वाभूमिः पंक्तिः पृथिव्यामन्ने, अग्निः पृथिव्यन्तरिक्षं

श्रीशुक्रमसौ देवताः पङ्क्तयतिजगतीश्वरः । उत्तमोऽसीति
मन्त्रस्य प्रतिसर इन्द्रो विष्णुः । सविताशुक्रो अग्निः प्रजापति
देवता आद्या पङ्क्तिः तदुत्तराणां सप्तानामनुष्टुप् ।

उदुम्बरेति, मणिनेति, सूक्तम् ।

ब्रह्मा कुवेरः पञ्चमादीनां त्रयाणां त्रिष्टुप् ।

श्रीषाणां त्रयोदशानामनुष्टुप् ।

योनस्वइति ब्रह्मा ईश्वर अनुष्टुप् ।

इन्द्रेण वृत्तमिति ।

वरुण इन्द्रस्त्रिष्टुप् । द्विरण्यवर्णाः शुचयः पावकाः ब्रह्मा
आपस्त्रिष्टुप् ॥

इयं वेदिरिति ब्रह्मा इन्द्रस्त्रिष्टुप् ।

अभितव्यमे तातस्य अथर्वा आपः पङ्क्तिः ।

सरस्वतीव्रतेपुते इति सूक्तम् ।

ब्रह्मासरस्वती अनुष्टुप् ।

सौरसामानि विषासहि सहमानमित्यादीनित्रायव्यञ्ज
आदित्याजगती ।

पियाचक्षयो गमशियातनः पिशाचक्षयो गायत्री ।

यमस्य लोकादध्या, ब्रह्मा यमस्त्रिष्टुप् ।

अग्निवेशनायदवाय अग्निरिन्द्रस्त्रिष्टुप् ।

जर्धी भवेत् अग्निं कृत्या प्रतिहरणीऽनुष्टुप् ।

इन्द्र वय वाणिजं अथर्वा ईशानस्त्रिष्टुप् ।

कमोमेराजन्विति, ब्रह्मा, कामस्त्रिष्टुप् ।
 भद्रायकर्णभद्रव्येति कौशिकाश्विनावनुष्टुप् ।
 तुभ्यमेव जनिमन्वितिशंयुर्जरिमा त्रिष्टुप् ।
 आयातु मित्र इति ।

मित्रावरुणावापोऽन्नय स्त्रिष्टुप् । आशानामाशापालेभ्यः,
 वाचस्वितिराशापाला अनुष्टुप् । इदंस्त्रनासो विदथ ब्रह्मा
 द्यावापृथिव्यावनुष्टुप् । अग्नेगोभिरित्येतत् ब्रह्मा अग्नि
 स्त्रिष्टुप् । यान्ता द्यौरितिसूक्तस्य ब्रह्मा पृथिव्यन्तरिक्षं दिवो-
 ऽनुष्टुप् । अयन्तेयोनिर्ऋत्यिजः अथर्वाग्निरनुष्टुप् । विवि-
 धानश्चेति अथर्वाग्नि स्त्रिष्टुप् । भ्रवंध्रुवेणेति अथर्वा सोमर्न
 अनुष्टुप् । अधुते राजन्निति, चतसृणां अथर्वा एक स्त्रिष्टुप् ।
 ययो देवीष्विति ब्रह्मा शास्त्रानुष्टुप् युनक्तिसीरा वियुगा ।
 अथर्वा सीता त्रिष्टुप् । सुयवसादिति अथर्वा ब्रह्मा त्रिष्टुप् ।
 यदाग्रइति वाक्देवता एकवर्च अग्निरनुष्टुप् । अर्हते भग
 इत्येतत् अथर्वा सीता* त्रिष्टुप् । ऐते पत्याः पत्यां पत्या
 अतिजगती । अवितस्तइति । ब्रह्मा उन्मोचनः पंक्तिः । यो
 नस्वो अरणो अथर्वा ईश्वरस्त्रिष्टुप् । अहवहंभिति षड्च
 इन्द्र स्त्रिष्टुप् । त्वमुत्तममिति अथर्वा सोमोऽनुष्टुप् । यथा
 यशश्चन्द्रमसि । वरुणश्चन्द्रमा जगती । आनोअग्निइति
 पतिवेदनः सोमस्त्रिष्टुप् । येन देहीति अयमपामर्थ्यमा अथर्वा
 अर्थ्यमानुष्टुप् । यत्पृथिव्यामनाहृत्तं । कल्पमन्त्र । कुन्दर्षि
 देवता नाह । शिवःशिवेभिरित्येतत् ब्रह्मा शिवस्त्रिष्टुप् । कृत्या

* अर्थ्य इति पुस्तकाकारे पाठः ।

दूषणे । ब्रह्मा ज्ञत्वा दूषणोऽनुष्टुप् । ब्रह्मस्यते नः परिपातु-
 मिहेति ब्रह्मस्यति स्त्रिष्टुप् । मामानो विन्दन्तीति सूक्तं, ब्रह्मा
 ईश्वरोऽनुष्टुप् । अयसो अन्निरध्वसः कौशिकोऽन्निरनुष्टुप् ।
 पूषाषितसीति तिसृषां षुक्ती देवता । प्रथमायाः पंक्तिः तदु-
 त्तरयोरनुष्टुप् । अन्वा गायत्री । प्रगीनयइति सूक्तानि
 षोषि प्राणेः सव्वरनुष्टुप् । देवा मावतइति, ब्रह्मा मवत
 स्त्रिष्टुप् । नुचामि त्वाइति सूक्तस्य, यक्षनाशन इन्द्राग्नि-
 स्त्रिष्टुप् । अघव्यशिरांसि । अन्निरिति भस्मवायुरिति भस्म
 जलमिति भस्मस्त्वलमिति भस्म सर्व्वं हवा भस्मेति ।

इत्यध्वर्षो विधानम् ।

अधोहारस्य छन्दर्षिदेवतानि । याजुषसर्व्वानुक्रमे । ॐ मिति
 परमाक्षरस्य योगिनामालम्बभूतस्य परस्य ब्रह्मणः प्रथवा-
 ख्यस्य खूलादिगुणयुक्तस्य ब्रह्मा ऋषिः छन्दो गायत्रं परमात्मा
 देवता ब्रह्मरश्मे विरामे च यागहोमादिषु शान्तिषु कर्मषु
 चान्ये अपि कर्मसु निश्चयनैमित्तिकादिषु सर्व्वेषु विनियोगस्येति ।
 तथा च शाट्टायनः । दान यज्ञ तपः स्वाध्याय जपाध्यानसन्धो-
 पासन प्राणायाम होम देव, पित्रामन्वोच्चारणब्रह्मरश्मादिति
 प्रणवेषु धार्थ्यं । प्रवर्त्तयेदिति मन्वाणां छन्दर्षिदेवता ज्ञाना-
 वशकत्वमुक्तं । याजुषसर्व्वानुक्रमे ऋषिदेवतछन्दसां स्वरूप
 मुक्ता एतान्यविदित्वा योऽधीतेऽनुब्रूते जपते जुहोति यजते
 याजयते तस्य ब्रह्मचरं न चिरं यातयामं भवति स्वायुं
 वर्द्धति प्रदूयते वा पापीयान् भवतीति छन्दोगब्राह्मणे षोड

व्रतच्छब्दं १ अर्थावः ।] चेमाद्रिः ।

२८७

वा भविदितार्थेयनाङ्गणेन मन्त्रेण याजयति वाध्यापयति वा
स्त्राचुर्वर्द्धति गर्भं वा यजते प्रच्छामीयते पापीयान् भवति
यातयामान्यस्य हन्दासि भवन्ति तस्मादेतानि मन्त्रे मन्त्रे विद्या-
दिति ।

अथ नानाद्रव्यदानमन्त्राः ।

तत्र नवग्रहदक्षिणा दान मन्त्राः ।

मास्ये ।

कपिले सर्वभूतानां पूजनीयासि रोहिणि ।

सर्वतीर्थमयी यस्मादतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

कपिलायाः ।

पुष्यस्य ग्रहपुष्यानां मङ्गलानाम्च मङ्गलं ।

विष्णुना विष्टतो नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

गङ्गस्य ।

धर्मस्वर्गं हव रूपेण जगदानन्दकारकः ।

अष्ट मूर्तेरधिष्ठानमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

रत्नहवस्य ।

द्विरण्यगर्भगर्भस्य हेमबीजं विभावसोः ।

अनन्तपुष्पफलाद् मतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

सुवर्णस्य ।

पीतवक्रयुग्मं यस्माद्वासुदेवस्य वक्रभं ।

प्रदानात्तस्य मे शेषरतः शान्तिं प्रयच्छतु ॥

पीतवक्रयुग्मस्य ।

यस्मा विष्णु स्वरूपेण यस्मादस्यतसम्भवः ।

चन्द्राकवाहनं नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

श्वे ताश्वस्य ।

यस्मात्त्वं पृथिवीसर्वाधेनुः केशवसन्निभाः ।

सर्वपापहरा नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

क्षणवर्षगोः ।

यस्मादायसकर्षाणि त्वद्धीनानि सर्वदा ।

लाङ्गलाद्यायुधादीनि ततः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

लोहस्य ।

यस्मात्त्वं छागयज्ञाना मङ्गलेन व्यवस्थितः ।

यानं विभावसो नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

छागस्य ।

शरण्यं सर्वलोकानां लज्जाया रक्षणं परं ।

सुवेशधारि त्वं यस्माद्दासः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

श्वे तवस्त्रस्य ।

रक्तवस्त्रयुगं यस्मादादित्यस्य प्रियं सदा ।

प्रदानादस्य मे सूर्यो ह्यतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

रक्तवस्त्रयुग्मस्य ।

धर्मराजेन विधृतं क्षणवस्त्रं सुशोभनं ।

सर्वं क्लेशविनाशाय क्षणवस्त्रं ददाम्यहं ॥

क्षणवस्त्रस्य ।

अन्नमेव यतो लक्ष्मीरन्नमेव जनार्दनः ।

अन्नं ब्रह्माखिलं चाण मद्गु मे जन्मजन्मनि ॥

अन्नस्य ।

चन्द्रमण्डलमध्यस्थं चन्द्राम्बुजसमपभं ।
दध्यन्नं तस्य दानेन प्रीयतां वामनो मम ॥
दध्यन्नं सोपदंशश्च ब्रह्म विष्णु शिवात्मकं ।
प्रीयतां धर्म्मराजोहि तद्दानान्मम सर्वदा ।

सोपदंशदध्यन्नस्य ।

पानीयसहितश्चैतत् सदध्नीदनपाचकं ।
समर्चितं तत् सफलं सदक्षिणं गृह्णाण दध्योदनपाचकं मम ।

सपानीय दध्यन्नस्य ॥

सर्वात्मा सर्वलोकेशः सर्वव्यापी सनातनः ।
नारायणः प्रसन्नःस्वात् कृपरात्रप्रदानतः ॥

कृपरात्रस्य ।

पायसं परमान्नञ्च सर्वदानोत्तमोत्तमम् ।
सर्वदेवतयोग्यञ्च त्रैयःपुष्टिं प्रयच्छतु ॥

पायसान्नस्य ।

आदित्यतेजसा भक्तं जातित्रैष्ठिकरं परं ।
तदन्नं मम विप्र त्वं प्रतीच्छ पूपमुत्तमं ॥

अपूपान्नस्य ।

प्राजापत्या यतः प्रोक्ताः शक्तवो यज्ञकर्म्मणि ।
तस्मात् शक्तून् प्रयच्छामि प्रीयतां मे प्रजापतिः ॥

(३०)

सङ्गुना ।

असुरेषु समुद्रतं रजतं पिष्टवत्तमं ।
तस्मादस्य प्रदानेन रुद्रः सम्प्रीयतां मम ॥

रजतस्य ।

परापवादपेशून्यादंभस्यस्य च भक्षणात् ।
तत्प्रजातश्च वत् पापं ताम्रपात्रं प्रशास्यतु ॥

ताम्रपात्रस्य ।

यानि पापानि काम्यानि कामोत्थानि कृतानि च ।
कांस्यपात्रप्रदानेन तानि नश्यन्तु मे सदा ॥

कांस्यपात्रस्य ।

देव देव जगन्नाथ वाञ्छितार्थफलप्रदः ।
तिलपात्रं प्रदास्यामि तवाङ्घ्रि संस्मितेरहं ॥

स्रर्षादितिलपात्रस्य ।

दर्शनेन त्वमादर्शं नृणां मङ्गलदायकः ।
श्रीर्थ-सौभाग्य, सत्कीर्तिं, निर्मलज्ञानदी भव ॥

दर्पणस्य ॥

ताम्रपर्ष्यर्णवोत्पन्ना वर्षाद्या कल्पवर्षिताः ।
मुक्ताः शङ्खमुद्रवाः सन्तु भुक्तिमुक्ति प्रदा मम ॥

मुक्तानां ।

त्वदुद्भवो जगत्स्रष्टुर्वधसो हेमपङ्कजः ।
पद्मवासहस्रेर्नाभिजातं मां पाहि सर्वदा ॥

सुवर्णपद्मस्य ।

काम्दारवनदुर्गेषु चौरव्याला, कुले पथि ।
हिंसकास्तु न हिंसन्तु सिंहदानप्रभावतः ।

सिंहस्य ।

हिरण्यगर्भं सम्भूतं सौवर्णमङ्गुलीयकं ।
धर्मप्रदं प्रयच्छामि प्रीयतां कमलापतिः ॥

अङ्गुलीयकस्य ।

काञ्चनं हस्तवलयं रूपकान्तिसुखप्रदं ।
विभूषणं प्रदास्यामि विभूषयति मां सदा ॥

वलयस्य ।

नीरोदमथने पूर्वमुद्गतं कुण्डलद्वयं ।
नियया सह यदुद्गतं ददे श्रीः प्रीयतां मम ॥

कुण्डलद्वयस्य ।

मणिकाञ्चन पुष्पाणि मणिमुक्तामयानि च ।
तुलसीपत्रदानस्य कलां नार्हन्ति षोडशीं ।
तुलसीपत्रदानाद्वा ब्रह्मण्यः कायसम्भवम् ।
पापप्रशमनं यातु सर्व्वे सन्तु मनोरथाः ॥

तुलसीदानमन्त्रः ।

अलक्ष्मीहरणं नित्यं नित्यं सौभाग्यवर्द्धनम् ।
श्रीरं मङ्गलमायुष्यं ततः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

दुग्धस्य ।

कामधेनीः समुद्गतं विष्णोस्तुष्टिकरं परं ।

नवनीतं प्रदास्यामि बलं पुष्टिञ्च देहि मे ॥

नवनीतस्य ।

कामधेनुसमुद्भूतं देवानामुत्तमं हविः ।

आयुर्विवर्धनं दातूराज्यं पातु सदैव मां ॥

आन्यस्य ।

तैलं पुष्टिकरं निखमायुष्यं पापनाशनम् ।

अमाङ्गल्यहरं पुण्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

तैलस्य ।

कण्टकोच्छिष्ट, पाषाण, वृश्चिकादि, निवारणे ।

पादुके सम्प्रदास्यामि विप्र प्रीत्या प्रष्टद्भ्यतान् ॥

पादुकामन्त्रः ।

शशाङ्ककरसङ्काशं हिमशिण्डीरपाण्डुरम् ।

प्रोक्षारयाञ्च दुरितं चामरामरवह्नभं ॥

चामरस्य ।

चन्दनावासमन्दारसखे हृन्दारकाञ्चितं ।

चन्दन त्वत्प्रसादात्मे सान्द्रानन्दप्रदो भव ॥

चन्दनखण्डस्य ।

श्रीखण्डकाण्डकर्पूरकस्तुरी कुङ्कुमान्वितम् ।

विलेपनं प्रयच्छामि सौख्यमस्तु सदा मम ॥

चन्दनाद्यनुलेपनस्य ।

समस्तेभ्योऽपि वस्तुभ्यः संस्तुतासि सुरासुरैः ।
विन्द्यस्ताङ्गेषु कस्तूरी सुखदास्तु सदा मम ॥

कस्तूर्याः ।

कन्दर्पदर्पदी यस्मात् कर्पूरं प्राणतर्पणम् ।
यादमतै भवन्तापस्वहानादपसर्पतु ॥

कर्पूरस्य ।

यदभूदङ्गसंलग्नं कुङ्कुमादिविलिपनम् ।
जलक्रीडासु गोपीनां हारवत्यां जलापितं ॥
गोपीचन्दनमित्युक्तं सुनीन्द्रैः किस्त्रिषापहं ।
तस्मादस्य प्रदानेन विष्णुर्हिशतु वाञ्छितम् ।

गोपीचन्दनस्य ।

त्वया सुराणाममृतं विधाय
हालाहलं संवृतमेव यस्मात् ।
तथा सुराणां त्रिपुरञ्च दग्ध
मेकेषुणा लोकहितार्थमीश ॥
त्वत्प्रदानादहमप्यदोषी
दोषैर्विर्मुक्तस्तु गणान् प्रपद्ये ।
तथा कुरु त्वं शरणं प्रपद्ये
मयि प्रभो देव वर प्रसीद ॥

शिवप्रतिमायाः ।

प्रसीदतु भवोनित्यं कृत्तिवास महेश्वरः ।

पार्वत्या सहितो देवो जगदुत्पत्तिकारकः ॥

उमामहेश्वरयोः ।

शिवशक्त्यात्मकं यस्यात् जगदेतच्चराचरं ।
तस्माद्नेन सर्वमेकरोतु भगवन् शिवं ॥
कैलासवासी गौरौशी भगवान् भगनेतमिन् ॥
चराचरात्मको लिङ्गरूपो दिशतु वाञ्छितम् ।

लिङ्गस्य ।

इदं मरकतं लिङ्गं रौप्यपीठसमन्वितं ।
धान्यैर्हादशभिर्युक्तमेकादशफलान्वितम् ॥
सम्बद्धाद्दिधानेन यथोक्तं फलमस्तु मे ॥

मरकतलिङ्गस्य ।

काश्मीरलिङ्गपत्रे तु इन्द्रकाश्मीरजं वदेत् ।

काश्मीरलिङ्गस्य ।

सर्वभूताश्रया भूमिर्वराहेण समुद्धृता ।
अनन्तसस्यफलदा अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

सस्यभूमेः ।

ऊर्णामेषसमुत्पन्ना शीतवातभयापहा ।
यस्मान्तुषारहारीस्यादतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

ऊर्णायाः ।

श्रीर्षपदमनुष्येयं स्वर्णबीजं तव प्रभो ।

दत्तं गृहाण देविग पापं संहर सत्वरम् ॥

कर्षापदस्य ।

धान्यं करोषि दातारमिह लोके परत्र च ।
तस्मात् प्रदीयतां धान्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

धान्यस्य ।

यस्माद्दत्तमयोजन्व्यूषीषो गोधूमसन्धवः ।
गन्धर्वसौख्यधनदः शतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

गोधूमानाम् ।

मुहवीजानि वै यस्मात् प्रियाणि परमेष्ठिनः ।
तस्माद्देवां प्रदानेन प्रीतिः सिद्धयतु मे सदा ॥

मुहानां ।

पुरा गोवर्धनोद्धारसंमये हरिभक्षिताः ।
चणकाः सर्वपापघ्ना शतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

भाषाणाम् ।

रसानामग्रजं श्रेष्ठं सवचं वसवर्धनं ।
ब्रह्मणा निर्भितं साक्षाद्दत्तः शान्तिं प्रयच्छतु ॥

सवचस्य ।

धान्यराजाश्च भाङ्गस्वा हिजप्रीतिकरा यथाः ।
तस्माद्देवां प्रदानेन ममास्वभिमत्तं फलम् ॥

यवानां ।

तिलाः पापहरा नित्यं विष्णोर्द्वैहसमुद्भवाः ।
तिलदानेन सर्वं मे पापं नाशय केशव ॥

तिलानां ।

अमृतस्य कुलोत्पन्नाः इक्षुधारातिशर्व्वरी ।
सूर्य्यप्रोतिकरा नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

शर्करायाः ।

मनोभवधनुर्मध्यादुद्भूता शर्कराइति ।
तस्मादस्य प्रदानेन मम सन्तु मनोरथाः ॥

खण्डस्य ।

प्रणवः सर्व्वमन्त्राणां नारीणां पार्व्वती सदा ।
तथा रसानां प्रवरः सदैवे चतुरसीमतः ।
मम तस्मात् त्वरां लक्ष्मीं-ददस्व गुडं सर्व्वदा ।

गुडस्य ।

यस्मात्पितृवृणां आद्वे त्वं पीतं मध्वमृतोद्भवं ।
तस्मात्तवप्रदानेन रक्ष मां दुःखसागरात् ॥

मधनः ।

वारिपूर्णघटोपेतं देवत्रयमयं यतः ।
प्रीयतां धर्म्मराजोऽस्तु दानेनानेन पुण्यद ॥

उदकुम्भस्य ।

उपानहौ प्रदास्यामि कण्टकादिनिवारणे ।
सर्वस्थानेषु सुखदा वतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

उपानहोः ।

पत्रिका सर्वजन्तूनां शैत्यानन्दकरी शुभा ।
पिटृणां हृत्तिदा नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

व्यजनस्य ।

महाकीशनिवासेन चक्राद्यैकपशोभितम् ।
अस्य देवप्रदानात्तु मम सन्तु मनोरथाः ॥

शालग्रामस्य ।

महाकीशनिवास त्वं महादेवो महेश्वरः ।
प्रीयतां तव दानेन अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

शिवनाभस्य ।

यमदारे महाघोरे या सा वैतरणी नदी ।
तामर्त्तुकामोयच्छामि उत्तारय सुखेन मां ॥

वैतरण्याः ।

यन्मात्वं पृथिवी सर्वाधि नृ वैश्वामनिभा ।
सर्वपापहरा नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

सुखधेनोः ।

मृत्युः क्लान्तीं प्रहृतस्य सुखक्लान्तिविवृद्धये ।
तुभ्यं सन्मददे नास्मा गां समुत्क्लान्तिसंश्रितां ॥

उत्क्लान्तिधेनोः ।

वाचनः, काय,जनितं यत् किञ्चिन्मम दुष्कृतम् ।
तत् सर्वं विलयं यातु त्वहानेनोपसेवितम् ॥

मेधाः ।

भगवन् शूलहस्तेषु दद्यात्परिविनाशन ।
तवायुधप्रदानेन शूलं नश्यतु मे सदा ॥

शूलस्य ।

यानि पापान्यनेकानि मया कामकृतानि च ।
सौहृत्पात्रप्रदानेन तानि नश्यन्तु सर्वदा ॥

सौहृत्पात्रस्य ।

अगभ्यागमनं चैव परदारभिमर्षनम् ।
रौप्यपात्रप्रदानेन तानि नश्यन्तु मे सदा ॥

रौप्यपात्रस्य ।

तिलाः सर्वा समायुक्ता दुरितक्षयकारकाः ।
विष्णुप्रीतिकरा नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छन्ति मे ॥

सहिरण्यतिलदानानां ।

तिलाः पुण्याः पवित्राश्च सर्वकामकराः शुभाः ।

शुक्लाच्चैव तत्रा कृष्णा विष्णुगात्रसमुद्भवाः ॥
 यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यासमानि च ।
 तिलपात्रप्रदानेन तानि नश्यन्तु मे सदा ॥

सहिरण्यतिलपात्रस्य ।

ब्रह्महत्यादिपापघ्नं ब्रह्मणा निर्भितं पुरा ।
 कुष्माण्डबहुबीजात्ममतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
 कुष्माण्डस्य ।

इदं फलं मया विप्र प्रभूतं पुरतस्तव ।
 तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥

फलस्य ।

आहित्यतेजसीत्यन्नाः सर्व्वमङ्गलकारकाः ।
 मण्डकाः सर्व्व पापघ्नो अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

मण्डकानां

जन्मान्तरमहस्त्रेषु यत् कृतं दुरितं मया ।
 स्वर्णपात्रप्रदानेन शान्तिः किञ्चिदिहास्तु मे ॥

व्यतीपातस्य ।

यायालक्ष्मीयदङ्गे न सर्व्वगात्रे व्यवस्थितं ।
 तत् सर्व्वं शमयाञ्च त्वं लक्ष्मीं पुष्टिं च वर्द्धय ॥

आरीग्यार्थाञ्चस्य ।

पान्थं तेजः समद्दिशमाञ्च पापहरं स्मृतम् ।

आज्यं सुराणामाहार आज्ये देवाः प्रतिष्ठिताः ॥

पापक्षयार्थान्यस्य ।

त्वं देवानां मनुष्याणां रक्षमामायुधो ह्यसि ।
यस्मात् सर्वप्रयत्नेन शान्तिर्भवतु सर्व्वदा ॥

आयुधस्य ।

केशवप्रीतिदा भक्त्या शश्व ब्रह्मा, कर्त्तुष्टिदा ।
पृथग्विधापूपकायाः यच्छन्तु वल्लभोरसम् ॥

भक्ष्याणां ।

सोमोद्भवानि दारुणि जातवेदः प्रियाणि च ।
तस्माद्देषां प्रदानेन त्रियं देहि विभावसोः ॥

काष्ठानां ।

अग्निवर्णोद्भवा नाम वल्लकीर्त्तिप्रवर्धनाः ।
कुलरथः सर्व्वपापघ्न अतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

कुलरथानां ।

मदारोहति वीजानि काले कृष्टे महीतले ।
तव प्रदानात्सकला मम सन्तु मनोरथाः ॥

कृष्णक्षेत्रस्य ।

सर्व्वग्रहर्त्तारेण सर्व्वेषु त्वं हि भास्कर ।
संक्रान्तिशूलदोषघ्ने निवारय दिवाकर ॥

संक्रान्तिशूलस्य ।

सर्वविद्या, अम, जान. करणं ललिताक्षरं ।
पुस्तकं सम्यगच्छामि प्रिया भवति भारती ॥

पुस्तकस्य ।

अनेन जायते विश्वप्राणिनां प्राणरक्षणं ।
तन्दुला वैश्वदेयत्याः पाकेनात्रे भवन्ति ये ॥
पावनाः सर्व्यश्रेषु प्रशस्ता हीमकर्म्मणि ।
तस्मात्तन्दुलदानेन प्रीयतां विश्वदेवताः ॥

तण्डुलानां ।

आययन्ति मनो बन्धात् तस्मात् समनसः स्मृताः ।
दत्ता ददतु मे नित्यमत्वाच्चादं सतीं त्रियम् ॥

पुष्पाणां ।

जीरानो जायते यस्मान्मण्डलं शुभकर्म्मसु ।
तस्माज्जीरकदानेन प्रीयतां गिरिजा भम ॥

जीरकस्य ।

ताम्बूलं श्रीकरं भद्रं ब्रह्म, विष्णु, शिवत्रात्मकम् ।
अस्य प्रदानात् ब्रह्माद्याः शिवन्ददन्तु पुष्कलम् ॥

ताम्बूलस्य ।

पूरितं पूरपूरेण नारायणीदण्डाश्रितम् ।

पूर्णेन चूर्णपात्रेषु कर्पूरपूरकेण च ॥
 सपूगखण्डनं दिव्यं गन्धर्व्याप्सरसां प्रियं ।
 कण्टकं त्वं निरासकत्वत् प्रसादात् कुर्व चमाम् ॥

ताम्बूलकरस्य ।

लक्ष्मीप्रिया या लक्ष्मीदा लक्ष्मीव वसनप्रिया ।
 सौभाग्यलक्षरस्त्रीणां हरिद्रा श्रीमदस्तु मे ॥

हरिद्रायाः ।

कञ्चुकीवस्त्रयुग्मैश्च तथा कर्णावतंसकैः ।
 कण्टकस्रैश्च भूषाभिः प्रीयतां निमिनन्दिनी ॥

सौभाग्य द्रव्ययुग्मस्य ।

रामपत्नि महाभागे पुण्यमूर्त्ते निरामये ।
 गृहाणेमामि शूर्पाणि मया दत्तानि जानकि ॥

शूर्पस्य ।

कमण्डलुजलैः पूर्णैः स्वर्णगर्भैः सुलक्षणैः ।
 अर्पितस्तु महासेन प्रसन्नश्च सदा भव ॥

कमण्डलोः ।

ब्रह्मसूत्रं महादिव्यं मया यत्नेन निर्मितम् ।
 ब्राह्म जन्मास्तु मे देव ब्रह्मसूत्रसमर्पणात् ॥

यज्ञोपवीतस्य ।

अष्टाविंशतिसंख्याकैरद्राजैर्योजिता मया ।
अर्पिता तव हस्ते च गृहाण सुरसैन्यकः ॥

अक्षमालायाः ।

विधुन्तुद् नमस्तुभ्यं सिंहिकानन्दनोऽव्यय ।
दानेनानेन नागस्य रक्ष मां विधजात्ययात् ॥

स्वर्णनागस्य ।

इक्षुदण्डं महापुण्यं रसालं सर्वकामदम् ।
तुभ्यन्दास्यामि तेनाशु प्रीयतां परमेश्वरः ॥

इक्षुदण्डस्य ।

कर्पूरः कदलीभूतो देव देव प्रियः सदा ।
भाग्योत्तमो नृपाणाञ्च तद्दानात् सुखमश्नुते ॥
जरामांस्तुभवं देवी मण्येनाभि समुद्भवाम्* ।
भक्त्याहं सदादास्यामि मम सन्तु मनोरथाः ।

गन्धद्रव्यस्य ।

ददाति भानुर्भयते सर्वापस्करसंयुतम् ।
मनोभिलषितावामिं करोतु मम भास्करः ॥

सूर्यमूर्त्तः ।

यमाननन्ति विश्वेशं विश्वनाथसुमासुतम् ।
विघ्नेश्वरं क्षिप्रचर तुभ्यन्दास्याम्यभीष्टदं ॥

* सुरामांशु भवं देवं मृगनाभि समुद्भवामि मिति पुलकान्तरे पाठः ।

गणेश प्रतिमायाः ।

गवामङ्गेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्ह्रशः ।
यस्मात् तस्माच्छिवं मे स्वादिह लोके परत्र च ॥

गोदानमन्त्रः ।

यस्माद्गन्धं शयनं केशवस्य शिवस्य च ।
शय्या ममाप्यशून्यास्तु तस्माज्जन्मनि जन्मनि ॥
यथा रत्नेषु सर्वेषु सर्वे देवा व्यवस्थिताः ।
तथा शान्तिं प्रयच्छन्तु रत्नदानेन मे सुराः ॥

रत्नमन्त्रः ।

यथा भूमि प्रदानस्य कलां नार्हन्ति षोडशी ।
दानान्यन्यानि मे शान्ति भूमिदानाद्भवत्विह ॥

भूदानमन्त्रः ।

इयं दासी मया तुभ्यं श्रीवत्स प्रतिपादिता ।
तदा कर्मकरो भोग्या यथेष्टं भद्रमस्तु मे ॥

दासीमन्त्रः ।

रथाय रथनाथाय नमस्ते विश्वकर्माणे ।
विश्वभूताय नाथाय अरुणाय नमोनमः ॥

रघस्य ।

इहामुलोभयचापं कुरु केशव मे प्रभो ।
कनकवत्प्रीतये दत्तं ब्राह्मणाय मया शुभम् ॥

छत्रमन्त्रः ।

देवदेव जगन्नाथ विश्वात्मन् दत्तयानया ।
प्रभो शिविकया देव प्रीतो भव जनार्दन ॥

शिविकामन्त्रः ।

इदं गृहं गृहाण त्वं सर्वोपस्करसंयुतम् ।
तव विप्र प्रसादेन ममास्वभिमतं फलम् ॥

गृहमन्त्रः ।

समाश्रयं प्रयच्छामि प्रीत्यर्थं मे जगद्विधिः ।

आश्रयमन्त्रः ।

गौरी कन्यामिसमं विप्र यथाशक्ति विभूषितां ।
गोत्राय शर्माणे तुभ्यं विप्र त्वं तां समाश्रय ॥

कन्यामन्त्रः ।

चन्द्रादिलोकपालानां या राजमहिषी शुभा ।
महिषीदानमाहात्म्यमस्तु मे सर्वकामदं ॥
धर्मराजस्य साहाय्ये यस्याः पुत्रः प्रतिष्ठितः ।
महिषासुरस्य जननी सा स्तु मे सर्वकामदा ॥

(३६)

महिष्याः ।

महिषीं वत्ससंयुक्तां-सुशीलाञ्च पयस्विनीं ।
रत्नवस्त्रेषु पुष्पेषु दत्त्वा ऋत्युष्णयेवरः ॥

ऋत्युमहिष्याः ।

शागत्वङ्मांसमज्जाद्यैः सर्वोपकरणैः शुभा ।
जगतः सम्मदत्तासि त्वामतः प्रार्थये शिवम् ॥

मेघस्य ।

देवानां यीमुखं हृद्यवाहनः सर्वपूजितः ।
तस्य त्वं वाहनं पूज्यं देवैः सेन्द्रैर्महर्षिभिः ॥
अग्निमाद्यं पूर्वकर्म्मविपाकीत्थन्तु यन्मया ।
तत्सर्वं नाशय त्तिप्रं जठरान्निं विवर्द्धय ॥
स्वं पूर्वं ब्रह्मणा सृष्टाः पवित्रा भवती परा ।
त्वत्प्रसूतीत्थिता यज्ञा तस्माच्छान्तिकरी भवः ।

अजामन्तः ।

अथ ऋत्विगादिवरणविधिः ।

तत्र ब्रह्माण्डदानमधिमन्त्रत्योक्तं ।

पद्मपुराणे ।

वालान्निहोत्रिणं विप्रं सुरूपञ्च गुणान्वितं ।
सपत्नीकञ्च सम्पूज्य भूषयित्वा च भूषणैः ॥

पुरोहितं मुख्यतमं कृत्वान्यांश्च तथर्त्विजः ।
 चतुर्विंशद्गुणोपेतान् सपत्नीकान्निमित्तितान् ॥
 ग्रहताम्बरसंहरान् स्रग्विणः शुचिभूषितान् ।
 अङ्गुलीयकानि तथा कर्णवेष्टान् प्रदापयेत् ॥
 एवं विधांश्च सम्पूज्य तेषामग्रे स्वयं स्थितः ।
 अष्टाङ्गप्रणिपातेन प्रणम्य च पुनः पुनः ॥
 पुरोहिताय पुरतः कृत्वा वै करसम्पूटम् ।
 यूयं वै त्राह्मणा धात्रा मितत्वेनानुगृह्यता ॥
 सौमुख्येनेह भवतां भवेत् पूतो नरः स्वयम् ।
 भवताम्प्रीतियोगेन स्वयं प्रीतः पितामहः ॥

तुला पुरुषमधिकृत्योक्त' ।

लिङ्ग पुराणे ।

शतनिष्काधिकं श्रेष्ठन्तद्वर्द्धं मध्यमं स्मृतम् ।
 तस्याप्यर्द्धं कनिष्ठं स्यात्त्रिविधं तत्र कल्पितम् ॥
 वस्त्रयुग्ममशोणीषं कुण्डले कण्ठभूषणम् ।
 अङ्गुलीभूषणं चैव मणिवन्धस्य भूषणम् ॥
 एतानि चैव सर्वाणि प्रारभ्य सर्वकर्माणां ।
 पुरोहिताय दत्त्वार्द्धं ऋत्विग्भ्यः सम्प्रदापयेत् ॥
 पूर्वींशभूषणं सर्वं सोणीषं वस्त्रसंयुतम् ।
 दद्यादेतत्प्रयोक्तृभ्य आच्छादनपटं तथा ।

तत्र अन्यांश्चतुर्विंशदृत्विजः कृत्वेत्यत्र च विंशति त्राह्मणा

ते च प्रतिष्ठामधिकृत्य ।

मत्स्यपुराणे भेदेनीताः ।

शुभास्तथाष्ट होतारोद्धारपालास्तथाष्ट वै ।

अष्टौ तु जापकाः कार्य्याः ब्राह्मणा वेदपारगाः ॥

सर्वलक्षणसम्पूर्णाः मन्त्रवन्तो जितेन्द्रियाः ।

कुलहयसमायुक्ताः स्थापकाः स्युर्ह्युजोत्तमाः ॥

हेमालङ्कारिणः कार्य्याः पञ्चविंशतिर्हृत्विजः ।

दक्षयेश्च समं सर्वानाचार्यीं द्विगुणं भवेत् ॥

निष्कादीनामत्र शतं पञ्चाशतः पञ्चविंशति र्वा मूल्यं ज्ञेयं
शस्त्रालङ्काराणां एतत्प्रयोक्तृभ्यः सदस्येभ्यः । वरणवाक्यन्तु अ-
शामुकयज्ञेनाहं यज्ञे तदङ्गभूतमसुककर्त्तार्यमसुकगोत्रमसुकश-
र्माणमसुकवेदाध्यायिनमसुकं त्वामहं वृषोमीति हृतोऽस्मीति
शतिवचनम् ।

कर्म्मभेदज्ञोक्तो मत्स्यपुराणे ।

गन्धपुष्पैरलङ्कृत्य दारपालान् समन्ततः ।

यजध्वमितितान् ब्रूयादाचार्यस्वभिपूजयेत् ॥

यजध्वमितितान् ब्रूयादोत्तकान् पूज्य एव तु ।

सत्सृष्टं मन्त्रजप्येन तिष्ठध्वमिति जापकान् ॥

प्रारम्भेधर्मकर्मणामिति वचनादस्य सर्वगतदानपूजा
होमादि ऋत्विस्त्राध्यै धर्मकर्मणि साधारण्यं ज्ञेयम् ॥

अथ हृतानां मधुपर्कमाह जाबालः ।

वैवाङ्मत्विजं चैव त्रिचिवं गृहमागतम् ।
अर्हयेत्प्रथमं तत्र स्नातकं प्रियमेव च ॥

विश्वामित्रः ।

सम्पूज्य मधुपर्केण ऋत्विजः कर्म कारयेत् ।
अपूज्य कारयन् कर्म किस्विषणैव युज्यते ॥

अथ होमविधिः ।

देवौपुराणे ।

परिसमुद्धोपलिप्योत्तिष्ठोद्धृत्वाभ्युक्ष्वाग्निमुपसमाधाय दक्षि-
णतो ब्रह्मासनमास्तौर्ध्वं प्रथीय परिस्तीर्यार्धवदासाय पवित्रे
कृत्वा प्रोक्षणी संस्त्रात्वार्यवत् प्रोक्ष्य निरूप्यान्वमधिश्रित्य पर्यङ्गी
कृत्वात् । सुवं प्रतप्य संस्त्रात्वार्यवत् पुनः प्रतप्य निदध्यादाव्य
मुहास्योत्पूयावेक्ष्य प्रोक्षणीं च पूर्ववदुपयमनकुशानादाय समि-
धोभ्याधाय पर्यङ्कं जुहुयात् । एष एव विधिर्यं च क्षत्रियोमिद-
परीसमूहनादिषु देवताप्रविभागमन्वान् व्याख्यास्वामः ॥

यद्देवादेवहेडनमिति परिसमूहनम् । मानस्तीकेत्यनुलेप-
नम् । त्वां हृत्रैरिन्द्र सत्यतिमित्युत्तिष्ठ्य । ब्रजं गच्छेत्पुत्र्य ।
देवस्त्रलेत्यभ्युक्ष्य । अग्निर्भूत्वेत्यग्निमुपसमाधाय । समिधा-
ग्निं दुवस्तेति समिधमादध्यात् ॥

अपि गृह्णामीत्यग्नेरखुचणं कृत्वा

द्विरस्त्रगर्भेति दक्षिणतो ब्रह्मा ।

आपोद्विष्टेत्युत्तरतः प्रथीताः

कथानघिन इति प्रणीताप्रस्तरणम् ॥

पवित्रे स्थीवैष्णव्ये इति पवित्रे

ईषेत्वेत्याज्यनिरूपणम् ।

चातारभिन्द्रमिति सूत्रं प्रतप्य

अतिशिनोसि सपत्नीनिति मार्जनम् ॥

प्रत्युत्तरश्च इति पुनः प्रतपनं

सशिशुर्वः प्रसव उत्पुनामीत्युत्पवनम् ।

तदेवाग्निरित्युदिङ्गनं भूरसीति पथ्युक्षणं

प्रजापतये स्वाहा इन्द्राय स्वाहा । अग्नये स्वाहा । अन्त-
रिन्द्राय स्वाहा । ॐ भूः स्वाहा । ॐ भुवः स्वाहा । ॐ स्वः
स्वाहा । मूलहोमाहुतयः । एवं दैदिकीह्यग्निः संस्कृती भवति ॥

एवं लक्षणसंयुक्तं सर्वहोमेषु याज्ञिकम् ।

विधानं विहितं तत्र ब्रह्मणामिततेजसा ॥

अन्यथा वै प्रकुर्वन्ति सूत्रमाश्रित्य केवलम् ।

निराशास्तत्र गच्छन्ति सर्वे देवा न संशयः ॥

अघातः परिस्तरणदेवताः कथ्यन्ते ।

परिसमूहने काश्यपः, उपलोपने विश्वेदेवाः । उल्लिखने
मित्रावरुणौ । उदरणे पृथ्वी । अभ्युक्षणे गन्धर्वाः । अग्न्या-
सादने सर्वः । दक्षिणासाधने ब्रह्मा । उत्तरतः प्रणीते
आपराः । अर्धवदासादने शतक्रतुः । पवित्रबन्धने पितरः ।
प्रोक्षणीसंस्कारणे मातरः । जुहुस्सुवे सुवायां च ब्रह्मविष्णुमहे-
श्वराः । आज्यस्थापने वसवः । अभिप्रयणे वैवस्वतः । पथ्य-

ग्निऋणे मरुतः । उद्वासने स्कन्दः । उत्पवने प्रत्युत्पवने चम्पा-
दित्यौ । आञ्ज्यावेक्षणे दिशः । सर्वाः पवित्राधाने प्रथीताना-
मुमादेवी । इष्टे लक्ष्मीः । विश्वस्य विश्वाभूतानि ॥

पूर्वींज्ञानां सुवङ्गोनामेकमादाय पावकम् ।
होमकर्त्रे प्रकर्त्तव्यं विधिं ज्ञात्वा महासुने ॥
एता वै देवताः प्रोक्ता ब्राह्मणानां हिताय वै ।
यज्ञेषु पशुबन्धेषु सर्वैर्ऋत्विज्यसु च ॥

ब्रह्मीवाच ।

वङ्गेविधानं परमं सर्वैर्ऋत्विज्यप्रसाधनम् ।
कथयामि नृपयेष्ट नाम,भेद, क्रियादिभिः ॥
अग्नेः परिग्रहः कार्यः सर्वगास्त्रार्थवेदकैः ।
वामदक्षिणमिडान्त वेदान्त गृह्यपारगैः ॥
कार्यः परिग्रहो यज्ञैः सर्व सम्पत्तिवेदिभिः ।
अन्यथा अन्तरायास्तु भवन्ति धनआयुषे ॥
नित्यव्याधिरधन्योवा सर्वलोकतिरस्कृतः ।
अविदित्वा यथा वच्च ज्ञात्वा सर्वसुखाय च ॥
तस्मान् सर्वप्रयत्नेन वङ्गाधेयक्रिया मताः ।
कुण्डाष्टकं समाख्यातं चिभेदन्तु मया तव ॥
बहुवङ्गविधानञ्च एकस्यै वीपचारतः ।
स्त्री,वाल,शूद्र, मूर्खैस्तु हीतव्यं प्रत्यहं यथा ॥
महानमे तथा वापि न कुम्भे तु कदाचन ।
संस्कृतेर्नामभेदैश्च रक्षयित्वा हुताशनम् ॥

महाविद्यार्धकुशलै हीतव्यं फलकाङ्क्षिभिः ।
 श्रूयते च पुरा वक्ष्ये अविदित्वा वसोः सुताः ॥
 संस्कृते हवमानास्तु राज्यञ्चमवाप्नुवन् ।
 तथा हवयि होता च अचिरात्पृथुमामवान् ॥
 तस्मादस्त्रिरवक्रौ तु न होतव्यं न वेदिना ।
 वेदनं ते प्रवक्ष्यामि येन सिद्धिः प्रजायते ॥
 चतुष्कोणेऽग्नहृद्गुण्डे कुण्डले मधुसूदनः ।
 धनुराकृतिके रुद्रः सर्वदेवनमस्कृतः ॥
 चतुरस्रे भवेदग्निर्गण्डले तु हुताशनः ।
 अर्धचन्द्रे नक्षोऽग्निरग्निरेवं प्रतिष्ठितः ॥
 द्विजानां देवता सत्यमाचार्य्योगिदैवतः ।
 उदके वरुणो देवोर्ध्वेषु च महोरगाः ॥
 स्रुवायाञ्च महादेवो स्रुवे देवस्त्रिलीलनः ।
 तत् संयोगे परो देवः सर्वदेवनमस्कृतः ॥
 प्रणीता पृथिवी त्रेया स्वाहाकारे महामखाः ।
 पुष्येषु क्रतवो विद्धि पात्रेषु च महोदधिः ॥
 वेदीमध्ये तु गायत्री सोमस्वभ्युत्तरे स्थितः ।
 रन्ध्रने मणिमद्रस्तु शिखां वज्रधरस्तथा ॥
 हीतारस्तु विजानीयाञ्चमसादिषु पर्वतान् ।
 उषार्यां देवतारुद्रस्तालवृन्ते च वायवः ॥
 मन्त्रेषु च गणाः सर्वे भस्म भूयेपि शङ्करः ।
 लोकपालास्तु सर्वेषु कोणेषु सर्वदेवताः ॥
 मातरो ह्यमभागेषु पूतनादिस्फुलिङ्गकाः ।

आदित्योऽधिष्ठितस्त्रेणे सवे देवः परः शिवः ॥
 देवानां प्रातर्होमस्तु प्रहरार्हेन भूतिदः ।
 मध्याह्ने तु मनुष्याणां मोक्षहेतोस्त्रियामिकः ॥
 अपराह्ने पिष्टृणाञ्च सन्ध्यायां गुह्यभौतिकम् ।
 रात्रौ-पापविनाशार्थं दिवासिद्धिप्रसाधने ॥
 प्रहरार्हे तु होतव्यमर्षरात्रे तदायुषम्* ।
 प्रत्युषे पुत्रदं वक्ष उदये सार्वकामिकम् ॥
 चषादौ सर्वकार्येषु सर्वप्राप्तिप्रदायकम् ।
 चषाधिदेवता देया प्रथमा च चराश्रुतिः ॥
 अन्यथा विफलं विप्र भवते हवनं तव ।
 वार्चनान्यतान्मोत्थैरीर्यैर्होममण्युद्भवैः ॥
 दशधा पुण्यद्विस्तु हवनज्ञानभोजनैः ।
 देवाङ्गैः शूलपद्माङ्गैः शङ्खचक्रशुभाननैः ॥
 घृत-क्षीर-रसादीनि गृह्णीयात्तानि बुद्धिमान् ।
 देवान् स्थाप्य तु यज्ञीयैर्वसोर्धाराप्रतापितैः ।
 द्रव्यैर्होमः प्रकर्त्तव्यो अन्यथा वा विधानतः ॥
 आत्मवेलासु सन्तृप्तिं पुष्टिं यच्छन्ति देवताः ।
 विलामन्वगणानाञ्च अधिदैवतजं फलम् ॥
 एतत्ते कथितं वक्ष सर्वलोक सुखावहम् ।
 हीताचेन्मन्त्रहीनः स्यादशुचिर्भवते सदा ॥
 तस्मात्त्वसंस्कृते वक्रौ न होतव्यमवैदिकैः ।
 मन्त्रवैदिकहोतारः आप्यादयन्ति देवताः ॥

तदायुषमिति क्वचित् पाठः ।

अवेदिकास्तु होतारो नैव प्रीणन्ति वै सुरान् ।
 होमान् सर्वफलावाप्तिः सर्वेषामपि जायते ॥
 तस्मान्मन्त्रविधानघ्नः प्रातरेव शुभप्रदः ।
 पूर्वेऽग्निदेवता विष्णुर्दक्षिणेन हरःस्थितः ॥
 पश्चिमेन स्थितो ब्रह्मा एता वै अग्निदेवताः ।
 तेजे रुद्रं विजानीयाञ्ज्वालार्था वापि चर्चिका ॥
 त्रियायुषे च विप्राणां लक्ष्मीस्ताधिदेवता ।
 एवं प्रतिष्ठिते हीम अग्नयश्च त्रयः स्थिताः ॥
 अथो देवास्त्रयो लोकास्त्रिरग्निस्त्रिगुणाः स्थिताः ।
 गार्हपत्योदक्षिणाम्नि राहवनीयश्च ते त्रयः ॥
 एकस्यैव समुत्पन्ना बहुभेदा द्विजोत्तमा ।
 इस्तादिलक्षिते कुण्डे समखाते समीकृते ॥
 ओष्ठमेकाङ्गुलं कार्यं नाभी द्वादश वा यता ।
 ओष्ठविस्तारसामान्या गजोष्ठसदृशा शुभा ॥
 चतुरङ्गुलमानेन प्रथमा मेखला भवेत् ।
 एकोर्ध्वीना द्विद्वितीया एवं कुण्डं शुभावहं ॥
 चतुरस्रश्च पूर्वादि अश्वत्थदलसन्निभं ।
 अर्धन्तु कुक्कुटाकारं वृत्तपञ्चकमष्ट वा ॥
 पद्माकारं प्रकर्त्तव्यं कुण्डेष्वेवानगोचरे ।
 शाखाश्वत्थास्त्रयीपर्णीसुषिर्वैकङ्कती तथा ॥
 खादिरासनबिस्वाद्यैः सुबोहस्तादिदैर्घतः ।
 अङ्गुलपरिणाहाठं दण्डं कुम्भकभूषितं ॥
 पुष्करं पुष्करो होतु मध्यरेषाच्छ्रिताहितः ।

सुकच-साईकरा कार्या दण्डं वृत्तं सुशोभनं ।
 घडङ्गुल परिणाहं भूमियन्त्रविनिर्गतं ॥
 द्यङ्गुलं मूलदेशे तु कुम्भं पुष्करमूलगम् ।
 गण्डिकान्तद्वज्जानीया द्विभागे तु च पुष्करां ॥
 वेदी समाङ्गुला कार्या पञ्चवृत्तां प्रकल्पयेत् ।
 त्रीणि खातं समङ्कार्यमथ कुर्यात् घडङ्गुलं ॥
 गोकर्णाकृतिशोभाढ्यं कन्यसाङ्गुलिरभ्युक्तं ।
 घृतनिःक्रमणं कार्यं यत्रयसुरेखितं ॥
 एवं सुवच्च कृत्वा वै ताभ्यां होमः सुखावहः ।
 शमीगर्भारणी कार्या दैर्घ्याहस्तप्रमाणिता ॥
 वितस्तिपरिणाहा सा मध्ये वै षोडशाङ्गुलं ।

गोकर्णा कृतिशोभाढ्यम् ।

वृत्तद्वरद्वयोपेतं दशाङ्गुल सुवृत्तिगं ॥
 आपीडसुसमङ्कार्यं मध्यमायसबन्धनं ।
 अटिकाङ्गरहोमार्थं बालरज्वाप्रमाणकम् ॥
 सुदृष्टं वज्रिमन्त्रेण पूजयित्वा तु पातयेत् ।
 अभावे सूर्यकान्ति वा तदभावे करीषजा ॥
 सामान्यायतनागारे आनयेत्तान्त्र भाजने ।
 अपुजे मृन्मये पात्रे कुण्डे पूजान्विते न्यसेत् ॥
 अग्निचक्रविधानेन सर्वकर्माणि कारयेत् ।
 हेम-राजत-तान्त्राणि-काष्ठग्रैसपदोपिवा ॥

रत्नानि चैव पात्राणि श्चभदेवाहितानि च ।
 अर्घ-नैवेद्य पूजार्घं बलिदानञ्च कल्पयेत् ॥
 पसादेवं विधानेन शोभं कुर्याद्यथाविधि ॥

इति श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहादेवस्य समस्तकर-
 याधीश्वरश्रीशेमाद्रि विरचिते चतुर्वर्गशिल्पा-
 मथौ व्रतकाण्डे * परिभाषा प्रकरणम् ।

* व्रतकाण्डे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

अथ द्वितीयोऽध्यायः ॥



अथ व्रत प्रशंसा ।

तत्र भविष्यत्पुराणे ।

अनन्यस्तु ये विप्रास्तेषां श्रेयो विधीयते ।
व्रतोपवासनियमैर्नानादानैस्तथा नृप ॥
देवादयो भवन्त्वेवं तेषां प्रीता न संशयः ।

महाभारते ।

नास्ति वेदात्परं शास्त्रं नास्ति मातृसमी गुरुः ।
न धर्मात्परमस्तीह* तपोनीपोषणात्परम् ॥

अथार्थं व्रातपथी श्रुतिः ।

एतद् सर्वं तपो यदनाशक्त इति ।

पद्मपुराणेऽपि ।

ब्राह्मणेभ्यः परं नास्ति पावनं दिवि चेह च ।
उपवासैस्तथा तुल्यं तपः कर्म न विद्यते ॥
दिव्यं वर्षसहस्रन्तु विश्वामित्रेण धीमता ।
तपसाक्नान्तमेकेन भक्तेनसच विप्रत्वमागतः ॥

परमोऽथो इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

उपोष्य विधिवद्देवांस्त्रिदिवं प्रतिपेदिरे ।
 ऋषयश्च परां सिद्धिमुपवासैरवाप्नुयुः ॥
 सुहृन्मैसंज्ञान् प्राण्याश्च प्रदत्तैर्द्वैतैर्मैव च ।
 यो दुर्जयांस्तान् जयति स्वर्गस्तेन जितो भवेत् ॥
 तथा । नाग्निष्विन्नरकं याति सत्युचो नच सइती ।
 नास्ति मेधादियाजी च गोसहस्रप्रदो न च ॥
 ये कुर्वन्त्युपवासांश्च विधानेन शुभान्विताः ।
 न यान्ति ते मुनिश्रेष्ठ नरकान् भीमदाहणान् ।

विष्णुधर्मोत्तरे ।

व्रतोपवासैर्वैश्विणुर्नान्यजन्मनि तोषितः ।
 ते नरा मुनिशार्दूल ग्रहरोगादिबाधिनः ॥

स्कन्दपुराणे ।

न पूजितो भूतपतिः पुरा ये
 व्रतं न चीर्णं न च सत्यमुक्तम् ।
 दारिद्र्यग्रीका-मय-दुःख-दग्धाः
 प्रायोऽनु शोचन्ति त एव मर्त्याः ॥
 गो-भू-गृह-चेत्र-कलत्र-भृत्य-
 पुत्रार्थसम्पन्नमताभितप्ताः ।
 लोभग्रह-ग्रस्तधियोऽत्र मर्त्या
 भजन्ति देवं न च सद्गतानि ॥
 त्यक्त्वा च तस्माद्योपभोगान्
 विषोपमान्भोहकराननित्थान् ।

प्रध्वस्तकामो विमदश्च धीरः
 सेवेत् स्वधर्मश्च शिवं व्रतञ्च ॥
 स्ववर्णधर्माभिरतश्च भीतः
 शिवव्रती चाम्बकपूजकश्च ।
 प्राप्नोत्यवश्यं परमं पदन्त
 चिरामयं यत् प्रवदन्ति सन्तः ॥
 राज्यं त्रियं जगति साधुजनोपभोग्य
 माप्नोति चापि शिवलोकमथामृतत्वम् ।
 नावाप्यमस्ति भुवनेषु दृढव्रतानां
 तस्मात्सदा व्रतपरेण नरेण भाव्यम् ॥
 ये सर्वदा व्रतपराश्च शिवं स्मरन्ति
 तेषां न दृष्टिपथमप्युपयान्ति दूताः ।
 याम्या महाभयकृतोऽपि च पाशहस्ताः
 दंष्ट्राकरालवदना विकटोपवेवा इति ॥

तथा स्कन्दपुराणे ।

शिवं प्रति पार्ष्वतीवाक्यं ।

यदि तेऽहमनुयाह्या यदि ते मयि सौहृदं ।
 यत्पृच्छामि महादेव तन्मे ब्रूहि यथातथम् ॥
 यांच वै नियमान् कुर्युर्नाह्याः क्षत्रिया विप्रः ।
 ये चान्ये नियमाः केचित्तेषां वै ब्रूहि यत् फलम् ॥
 नियमोव्रतम् ।

नियमानां हि दृश्यन्ते समृद्धाः फलसिद्धयः ।

यथा विनिमयानाञ्च घीरा व्यापत्तयोऽनघ ॥

ईश्वर उवाच ।

एष एषैव नियमो नियमस्यैः सुलोचने ।
 बहुधा क्रियते पुष्पिः कायलोचकरः परः ॥
 नियमस्तत्र कर्त्तव्यो यद्यद्वै यस्मि रोचते ।
 दुष्करं देवि क्लृप्त्वाः सहस्रफलमश्नुते ॥
 अनित्ये सुखवित्ते हि मातुषं बहुदीपमं ।
 तेन वैचित्यमापन्नोभिनति नियमं बुधः ॥
 दुष्करो नियमः कर्त्तुं मनुष्येषु विशेषतः ।
 रागलोभाभिभूतानरा धर्माभिग्रहिनः ॥
 वर्त्तमानसुखासक्ता अधर्मावचयोऽवुषाः ।
 सद्यमाद्यश्च नियमं करोत्यतिमना नरः ॥
 स तु वर्षसहस्राणि बद्धसं फलमश्नुते ।
 असिधारान्नतं यद्दत्तद्विचियमशीसनं ॥
 तेन धारणशीलेन नियमस्यानुपासनं ।
 देवत्वं देवता प्राप्ता नियमान्वियमान्विते ॥
 तारारूपा ज्वलन्त्येते नियमास्तु तपोधने ।
 नियमेन वरारोहे-वेलाञ्च क्रमतेऽर्षवः ॥
 नियमाज्वलते-चान्निस्तपते नियमाद्भविः ।
 नियमाद्बर्हते वायुर्नियमाद्भियते जगत् ॥
 निष्कल्मषं तपः कृत्वा नियमश्च यथातथं ।
 मामियन्निममात् प्राप्ता त्वं शुभे नात्र संशयः ॥

वर्षं च नियमं यस्तु कुरुते मत्परो नरः ।
स लोके देवतानां हि रमते देववक्त्रुषु ॥

वाराह पुराणे ।

अहिंसा सत्यमस्तेयं ब्रह्मचर्यमकल्मषं ।
एतानि मानसान्याहुर्ब्रतानि व्रतधारिणि ॥
एकभक्तं तद्यानक्तसुपवासादिकञ्च यत् ।
तत्सर्व्वं कायिकं पुंसां व्रतं भवति नान्यथा ॥

उपवासीऽत्राहीरात्राभोजनं, आदिशब्दादयाचितादि ।

तथा ।

किञ्चिद्गतं वा क्षियते पूज्यते यत् तिस्रोचन ।
विप्रेभ्यो दीयते सर्व्वमितज्जन्मतरोः फलं ॥

गरुड पुराणे ।

तपो गतिर्हि भूतानां तप एव परायणं ।
तपसा विजिता लोकास्तपसा निर्व्वृतिः सतां ॥
तपसा पूतपाप्मानो निर्व्वीणं परमङ्गताः ।
तपसा परमायुश्च शान्तिं वापि तथाप्नुयात् ॥
तपसा विन्दते लोकानखिलानपि पूरुषः ।
तपसा परमिच्छन्ति निर्व्वीणमपि शाश्वतं ॥
तपसा चैहिकीं सिद्धिं विपुलामपि विन्दति ।

(४१)

सभन्ते च सुतादींस्तु तपसा मर्त्यजातयः ॥
 अक्षयञ्च धनञ्चाहुस्तस्यन्ते नरा भुवि ।
 व्रतोपवासनियमैः शरीरोत्तापनन्तपः ॥
 उत्थितस्तु दिवा तिष्ठेदुपविष्टस्तथा निशि ।
 एतद्द्वीरासनं प्रोक्तं महापातकनाशनं ॥
 एकभक्तेन मन्त्रेण तथैवायाचितेन च ।
 उपवासेन चैकेन पादकृच्छ्रः प्रकीर्तितः ॥

कूर्मपुराणे ।

व्रतोपवासनियमैर्हीमन्नाङ्गणतर्पणैः ।
 आराधय महायोगैर्योगिनं हृदि संस्थितं ॥
 तथा । ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्याः शूद्राश्चैव द्विजोत्तमा ।
 अर्चयन्ति महादेवं यज्ञ-दान-समाधिभिः ॥
 व्रतोपवासनियमैर्हीमैः स्वाध्यायतर्पणैः ।
 तेषां वै वृद्धसायुज्यं सामीप्यञ्चातिदुर्लभं ॥
 सलोकता च सारूप्यं जायते तत्प्रसादतः ।

गरुडपुराणे ।

धुन्धुमारस्तु राजर्षिर्लभे पुत्रशतं पुरा ।
 दानेन नियमेनैव तपसा च व्रतेन च ॥
 सगरो नाम राजर्षिर्दिक्षु सर्वास्तु विभ्रुतः ।
 पुत्राणाञ्च शतं प्राप्तं तेन राज्ञा महात्मना ॥
 तथा दशरथो राजा व्रतेषु निरतः सदा ।

यन्न दान तपो योगैः सन्तुष्टः पुण्योत्तमः ।
 स्वयं पुण्यत्वमापेदे तस्य राज्ञो महाम्बनः ॥
 जनको नाम राजर्षिस्तपोव्रतनिधिः स्वयम् ।
 ऐश्वर्यमत्तुलं प्राप्य योगिनां गतिमाप्नुयात् ॥
 एवमेव महाराज राजानो ब्राह्मणास्तथा ।
 ऐश्वर्यलक्षणं प्राप्नुर्गतिं वै व्रतवैभवात् ॥
 अतः कुरुष्व सततं तपः सञ्चयमात्मवान् ।
 व्रतोऽपवासनिरतस्तीर्थानि नृपसत्तम ॥

तथा । विनिग्रहश्चेन्द्रियाणां कुर्वीत नियमात्मवान् ।
 उपवास जप, ध्यान तीर्थस्नाना, दिकैरपि ॥
 व्रतैर्यज्ञेन दानेन तपसा तीर्थसेवया ।
 अनेकजन्मसंसिद्धिमेनः क्षपयति द्विजः ॥

व्रतादीनां चातुर्वर्णसाधारणत्वाभिधानात् द्विजग्रहण
 मत्र वर्णमात्रोपलक्षणार्थं । नचैवंसति शूद्रस्य यज्ञेऽनधिकारा-
 द्यन्नशब्दविरोध इति वाच्यं । यज्ञैरनेकार्थत्वेन देवतापूजा-
 द्यर्थसम्भवात् ।

कायिकं मानसञ्चैव वाचिकञ्च त्रिधा मतं ।
 यज्ञोदानं तपश्चैव वदतस्तस्मैशुभ मे ॥
 अहिंसा व्रतचर्या च तपः कायिकमुच्यते ।
 वाचिकं सत्यवचनं भूतद्रोहविवर्जितम् ॥
 मानसं मनसः शान्तिः सर्व्वैराग्यलक्षणं ।

आदित्यपुराणे ।

व्रतोपवासान् खलु वी विधत्ते
दारिद्र्यपाशं स भिनत्ति चाद्य ।

व्रतोपवासेषु रतस्य पुंस
शैवापदः शान्ति वदन्ति तज्ज्ञाः ॥

इति श्री हेमाद्रि विरचिते चतुर्वर्गचिन्तामणौ
व्रतखण्डे व्रतप्रशंसा प्रकरणम् ।

अथ तृतीयोऽध्यायः ।

—०—

अथ व्रतसामान्यधर्मं स्तदधिकारिणश्च निरूप्यन्ते ।

स्कन्दपुराणे ।

निजवर्षा अमा-चार-निरतः शुद्धमानसः ।
व्रतैश्चधिक्रतो राजन्नन्यथा विफलः अमः ॥
अलुब्धाः सत्यवादी च सर्वभूतहिते रतः ।
व्रतैश्चधिक्रतो राजन्नन्यथा विफलः अमः ॥
अज्ञावाङ्मग्रायभौरुच मद्दम्भविवर्जितः ।
व्रतैश्चधिक्रतो राजन्नन्यथा विफलः अमः ॥
समः सर्वेषु भूतेषु शिवभक्तो जितेन्द्रियः ।
व्रतैश्चधिक्रतो राजन्नन्यथा विफलः अमः ॥
पूर्वैर्निश्चित्य श्राद्धार्थं यथावत् कर्मकारकः ।
अवेदनिन्दको धीमानधिकारी व्रतादिषु ॥

सहाभारते ।

श्राद्धकर्म तपश्चैव सत्यमक्रोध एव च ।
स्त्रेषु दारेषु सम्नीषः शौचं नित्यानसूयता ॥
श्राद्धज्ञानन्तितिक्षा च धर्मः साधारणो नृप ।

देवस्योऽपि ।

व्रतोपवासनियमैः शरीरोत्तापनैस्तथा ।
 वर्षाः सर्वेऽपि सुष्यन्ते पातकेभ्यो न संशय इति ॥
 तदेवंचनसन्दर्भोक्तनियमवतां चतुर्णामपि वर्षानां स्त्रीपुं-
 साधारण्येन व्रतेष्वधिकार इति प्रतिपाद्यते ।

तथा च महाभारते ।

मासुपात्रित्य कौत्सेय येऽपिस्थुःपापयोनवः ।
 स्त्रियो वैश्याश्च शूद्राश्च तेऽपि यान्ति पराङ्गतिमिति ॥
 तत्रायं परोविशेषो यत्स्त्रीणां भर्तुराज्ञां विना न स्वात-
 न्द्रेण व्रतादिष्वधिकार इति ।

तथा च मार्कण्डेय पुराणे ।

नास्ति स्त्रीणां पृथक् यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषणं ।
 भर्तृशुश्रूषयैवेता लोकानिष्टान् व्रजन्ति हि ॥
 यद्देवेभ्यो यच्च पित्रादिकेभ्यः
 कुर्याद्भर्ताभ्यर्चनं सत्क्रियाञ्च ।
 तस्यार्हं वै सा फलं नान्यचिन्ता
 नारी भुङ्क्ते भर्तृशुश्रूषयैव ॥
 धर्मार्थकामसंसिद्धैर्भवेद्भर्तुः सहायिनी ॥

आदित्य पुराणे ।

नास्ति स्त्रीणां पृथग्यज्ञो न व्रतं नाप्युपोषणं ।
 पतिं शुश्रूषतेया तु तेन स्वर्गं महीयते ॥
 पत्युरभ्यधिकं नारी नोपवासव्रतञ्चरेत् ।

अनायुषं द्विजत्रेष्ठ पत्युस्तस्यास्तदुच्यते ।
 देवताराधनङ्कुर्यात् कामं वा ब्राह्मणोत्तमः ।
 नारी पतिव्रता नाम प्राप्यानुज्ञान्तु भर्तुतः ॥
 नारी खल्वननुज्ञाता पित्रा भर्ता सुतेन वा ।
 विफलन्तद्भवेत्तस्या यत्करोत्यौर्ध्वदेहिकं ॥

पित्रे तिकन्यात्वे । भर्तेति सौभाग्यदशायां । सुतेनेति वैध-
 व्यदशायां । और्ध्वदेहिकं व्रतानि ।

अथवा सर्वमुत्सृज्य पतिपूजनतत्परा ।
 केशवाराधनङ्कुर्यात् साधो स्त्री पुरुषर्षभा ॥
 विनैव सर्गमाप्नोति यत् किञ्चिन्मनसेच्छति ।
 अफलं सर्वमेव स्यात् भर्तुनुज्ञा-विना कृतं ॥
 केशवाराधनं यच्च तथापि सफलं स्त्रियः ॥

तथा हरिवंशे ।

अरुन्धतीं प्रतिपार्ष्वतीवचनं ।

सतीत्वधर्मचरणं यस्या नित्यमखण्डितं ।
 पुण्यकानां विधिस्तस्याः पुराणे परिकीर्तितं ॥
 दानोपवासपुण्यानि सुकृतान्यप्यरुन्धति ।
 निःफलान्यसतीनां हि पुण्यकानि तथा श्रुभे ॥

पुण्यकानि व्रतानि ।

या नर्क्षयन्ति भर्तारं योनिदुष्टाश्च याः स्त्रियः ।
 योनिदोषात् पुण्यफलं नाश्नन्ति निरयङ्गमाः ॥
 साध्वो जगद्धारयन्ति सुशीलाः पतिदेवताः ।
 अनन्यधर्मनित्याश्च सतां पत्यानमान्विताः ॥
 अवाक्दुष्टाः शीचयुक्ताः धृतिमल्यः श्चित्रताः ।
 सततं साधुवादिभ्यो धारयन्ति जगत् श्वलु ॥
 व्याधितः पतितोवापि निर्धनोवा कथञ्चन ।
 न त्यक्तव्यः स्त्रिया भर्ता धर्म एष सनातनः ॥
 अकार्यकारिणं वापि निर्गुणं स्त्री पतिं तथा ।
 तारयत्येव साध्वी सा तथात्मानं शुभानने ॥
 योनिदुष्टस्त्रियोनास्ति प्रायश्चित्तं हृतैव सा ।
 वाक्दुष्टे विहितं सन्निः प्रायश्चित्तं पुरातनैः ॥
 भर्तुः हृन्देन कर्त्तव्यं व्रतकं सर्व्वदा स्त्रियाः ।
 उपवासोऽपि वा सत्ये काङ्क्षन्त्यास्तु शुभाङ्गतिं ॥
 कल्यान्तरसहस्रेषु न स्त्री सा लभते गतिं ।
 तिर्य्यग्योनिहस्रेषु पच्यते योनिविभ्रमात् ॥
 यदि स्यान्नाम मानुषं स्त्री लभेत्सती सती ।
 चण्डालयोनि दुर्न्धवा जायते कुङ्कुरानना ॥
 भर्ता देवः सदा स्त्रीषां स्त्रीभिर्दुष्टः सनातने ।
 यस्याहि तुष्यते भर्ता सा सती धर्मचारिणी ॥
 कौतूहलहतानाम् स्त्रीषां लोकोन शोभनः ।
 भर्त्तार्य्येव मनो यासां सद्भावेन व्यवस्थितं ॥
 कर्मणा मुनसा वाचा पतिं नातिचरन्ति याः ।

तासां पुण्यफलं सोम्ये पुण्यकैः समुदाहृतम् ॥
 पुण्यकानां विधिं कृत्वा सर्वलोकं प्रति शोभने ।
 निबोध स हि सर्वाङ्घ्रि दृष्टोऽयं तपसा मया ॥
 ज्ञात्वा स्त्री प्रातरुत्थाय पतिं विभ्रापयेत्सती ।
 उपवासार्थमद्यवा व्रतकार्यं धृतव्रते ।
 स्पृष्ट्वा कराभ्यां चरणौ सततं सप्तमस्य च ॥
 गृहीत्वौदुम्बरं पानं सकुशं साक्षतं तथा ।
 गोमूत्रं दक्षिणं सिन्धुं प्रतिगृह्णीत तज्जलम् ॥
 ततो भर्तुः सती दद्यात् ज्ञातस्य प्रयतस्य च ।
 आत्मनोऽथ निषेक्तव्यं ततः शिरसि तज्जलम् ॥
 त्रैलोक्ये सर्वतीर्थेषु ज्ञानमेतदुदाहृतम् ।
 उपवासेषु कर्त्तव्यमेतद्वि व्रतकेषु च ॥
 ज्ञानमेतच्च सामान्यं स्त्रीणां पुंसाञ्च भामिनि ।
 अरुन्धति मया दृष्टं तपसा हरतीषकम् ॥
 अशून्यं विद्विश्यनमासनञ्च तथा विधम् ।
 स्वयं प्रक्षालणं चापि पादयोरनुशब्दितम् ॥
 अनुशब्दितं व्रतोपयोगितया कथितम् ।
 अशुभपातो रोषश्च कलहस्य कृतिः सति ।
 उपवाहात् व्रताङ्घ्रिषु सद्यो म्निंशयति स्त्रियम् ॥
 शुक्लमेघ सदा वासः प्रशस्तं चन्द्रसम्भवे ।
 अन्तर्वासोऽपरश्चैव उपवासव्रते तथा ॥
 पादुकार्यस्तणैः कार्यैः सर्वदा व्रतके सति ।

उपवासेऽपि च विधिरेष एव प्रकीर्तितः ॥
 अन्नं रोचनश्चापि गन्धान् सुमनसस्तथा ।
 व्रतकेशोपवासे च नित्यमेव विवर्जयेत् ॥
 'रोचनं क्लृप्तमादिना, सुखीष्वलीकरणम् ।
 दन्तकाष्ठं शिरःस्नानसुहृत्संनमथापि वा ।
 विवर्जितां मृदं सर्वां शौचार्थं तु विधीयते ॥
 तिस्रामक्षफलैर्मित्थं श्रीफलैश्च समाचरेत् ।
 प्रक्षालयश्च शिरसः सदा मृत्त्रितैर्जलैः ॥
 शिरसोभ्यश्च न सौम्ये नैवमेतत् प्रशस्यते ।
 न पादयोर्न गात्रस्य स्नेहेनेति स्थितिः श्रुता ॥
 गीयानमुष्ट्रयानश्च कथञ्चिदपि नाचरेत् ।
 खरयानश्च सततं व्रते चाप्युपवासके ॥
 नदीजलं प्रस्रवजं शस्तं वै सोमनन्दिनि ।
 शुभे तडागे वाप्यादौ विस्तीर्णं जलजाप्लुते ॥
 गत्वा स्नानं प्रशस्तं तु सदैव खलु सर्वथा ।
 अलाभे त्ववरुद्धा स्त्री घटस्नानं समाचरेत् ॥
 नवैश्च कुशैः स्नातव्यं विधिरेष सनातनः ।
 स्नानश्च कार्यं शिरसा तपःफलमवाप्नुयात् ॥

भविष्यत्पुराणे ।

क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
 देवजाम्निहवनं सन्तोषः स्तेयवर्जनम् ।
 सर्वं व्रतेष्वयं धर्मैः सामान्यो दशमः स्थितः ॥

अथ अमादीनां स्वतन्त्रतया चतुर्वर्गसाधनत्वेन विहितानां
व्रताङ्गतयाभिधानं आदिरं वीर्यकामस्त्रेत्यादिवक्त्रयोगपुत्र-
ज्ञान्यायादुपपन्नम् ।

मत्स्यपुराणे ।

तस्मात् क्षतीपवासेन ज्ञानमभ्यङ्गपूर्वकम् ।
वर्जनीयं प्रयत्नेन रूपन्नं तत्परं नृप ॥

यत्तूक्तं गरुडपुराणे ।

गन्धा-सङ्घार-वस्त्राणि पुष्यमासा-मुत्पेयनम् ।
उपवासे न दुष्कन्ति दन्तधावनमञ्जनमिति ॥

यच्च व्यासोक्तम् ।

दन्तधावनपुष्पाणि व्रतेपि स्वास दुष्कन्ति ॥

तदेतन्महर्षे क्षीपवासविषयं ।

भविष्यत्पुराणे ।

अञ्जनञ्च सताम्बूलं सिन्दूरं रत्नवाससी ।
विभूयाञ्क्षीपवासापि अद्वैधव्यकरणं परं ।
विधवा यतिमार्गेषु कुमारी वा यदृच्छया ॥

पद्मपुराणे ।

गर्भिणी स्वतन्त्रादिषु कुमारी वाच रोगिणी ।

यदाशुभा तदान्येन कारयेत् प्रयता स्वयं ॥

गर्भिण्यादिरुपवासे कर्त्तव्ये नक्तं कुर्यात् ।

सूतकादिभिरशुभा अन्येन व्रतं कारयेत् । प्रयता शुभा,
स्वयं कुर्यात्, पूंसोष्येषविधिः । लिङ्गस्याविवक्षितत्वात् तदेवं
स्त्रीणां कन्यादश्यायां पित्रादेराज्ञया, विद्वानां भर्तुराज्ञया,
विधवानां पुत्राद्याज्ञयैव व्रताधिकारो नान्यथेति सिद्धं ।

अग्निपुराणे ।

व्रीहिवष्टिकमुद्गाश्च कलायाः सलिलं पयः ।

श्यामाकाशैव नीवारा गोधूमाद्या व्रते हिताः ॥

कूष्माण्डालावुवार्त्तकीपालङ्गमृज्योत्स्त्रिकास्थितेत् ।

चरुभक्ष्यं यत्तुकणाः शाकन्दधि घृतं मधु ॥

श्यामाकाः शालि नीवारा यावक मूलतन्दलं ।

हविष्य व्रतनक्तादावग्निकार्यादिकं हितं ॥

मधु मांसं विहायान्यव्रतेच हितमौरितं ॥

‘ज्योतिष्मका, कोशातकी ।

हृन्दोगपरिशिष्टे ।

काल्यायनः ।

हविष्येषु यथा सुख्यास्तदनु व्रीहयः स्मृताः ।

माषकीद्रवगौरादीन् सर्वाभावेऽपि वर्जयेत् ॥

भविष्योत्तरे ।

हैमन्तिकं सितास्त्रिकं धान्यं मुक्ता यवास्तिलाः ।
 कलायकङ्कुनीवारा वास्तूकं हिलमोचिका ॥
 षट्ठिका कालशाकञ्च मूलकं केमुकेतरत् ।
 कन्दः सैन्धव सामुद्रे * लवणे मधुसर्पिणी† ॥
 पयोऽनुवृतसारञ्च पनसा, स्त्र, हरीतकी ।
 पिप्पली जीरकश्चैव नागरङ्गञ्च तिलितौ ॥
 कदली लवलो धात्री फलान्यगुडभेषवम् ।
 अतैलपक्कं मुनयो हविष्याणि प्रचक्षते ॥
 सर्पिः पयश्चात्र गव्यं । अतैलपक्कमित्येतत् कथितहवि-
 ष्याणामिव विशेषणमिदं ।

पद्मपुराणे ।

हविष्यभोजनं ज्ञानं सत्यमाहारलाघवम् ।
 अग्निकार्यमधःशय्यां नक्तभोजी षड्वाचरेत् ॥
 अग्निकार्यमत्र महाव्याहृतिमन्त्रैराज्यहोमः ।

स्कन्दपुराणे ।

अष्टौ तान्यव्रतज्ञानि आपो मूलं फलं पयः ।
 हविर्ब्राह्मणकाम्या च गुरोर्वचनमौषधम् ॥
 पयःपानादीनामव्रतत्वं स्त्री-वासा-त्यन्तन्तपीडित-व्रत
 विषयम् ।

* लवणे सैन्धवसामुद्रे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† लव्ये च सर्पिसर्पिणीति पुस्तकान्तरे ।

सर्वभूतभयश्चैव प्रमादो गुरुशासनम् ।
 अब्रतघ्नानि कथ्यन्ते सक्तदेतानि शास्त्रतः ॥
 सर्वभूत भयं सर्वेभ्यो भूतेभ्यः सक्तायाद्दतकर्तुर्मयम् ।
 मोहात् प्रमादाज्ञोभावाद्द व्रतभङ्गो भवेद्यदि ।
 तदा चिरात् नान्नीयात् क्लृप्त्याद्वा केशसुण्डनम् ।
 प्रायश्चित्तमिदं कृत्वा पुनरेव व्रती भवेत् ॥

इति श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहादेवस्य समस्त
 करणाधीश्वर श्रीहेमाद्रिपण्डितकृते चतुर्वर्ग-
 चिन्तामणौ व्रतखण्डे व्रताधिकारित-
 हर्षनिरूपणं नाम प्रकरणम् ।

अथ चतुर्थोऽध्यायः ।

—०#०—

गुणानामाधारो मलयजरसालेपसुहृदां
प्रसिद्धो हेमाद्रिः स्फुरदमलशास्त्रार्थनिक्षयः ।
स लोकानां कर्त्तुं सुकृतिनिपुणानामुपकृतिं
व्रतव्रातं कृत्स्नं कथयति तिथीनां क्रमवशात् ॥
वदति सम्प्रति सम्प्रतिपत्तये
सुकृतिनां कृतिनामपि सम्प्रतम् ।
व्रतसमुच्चयसमुच्चयशस्करं
प्रतिपदाश्रित पदाश्रित कामधुक् ॥

अथ व्रतान्यभिधीयन्ते ।

तत्र तिथिव्रतप्रकरणे प्रतिपद्गतानि तावदुच्यन्ते ।

शतानीक उवाच ।

द्विजैतास्त्रिययः प्रोक्ताः संक्षेपावसु विस्तरात् ।
विस्तरेणैव मे ब्रूहि भूयोद्विजवरोत्तम ॥
रहस्यं यत्तिथीनाञ्च देवतानाञ्च चेष्टितम् ।
यानीष्टानि च देवानां भोग्यानि नियमास्तथा ॥
तानि मे वद धर्मज्ञ येन पूतो भवाम्यहम् ।
निर्द्वन्द्वोऽपि यथा विप्र लभेद्विष्ट फलानि* च ॥

* द्विजसत्त्वानौति पुत्रकाकरे पाठः ।

सुमन्तुववाच ।

रहस्यं यत्तिथीनाञ्च भोजनं फलमेव च ।
 यावांच यस्य नियमो विशेषात् स्त्रीजनस्य च ॥
 एवन्तु सर्वमाख्यानं रहस्यं तन्निबोध मे ।
 पद्मासनोक्तं पूर्वन्तु कथञ्चित् स्वप्रियस्य तु ॥
 तत्तेऽहं संप्रवक्ष्यामि यस्य देवस्य या तिथिः ।
 देवतानां रहस्यानि व्रतानि नियमास्तथा ॥
 तान् शृणुष्व महाभाग गदतोमम मानद ।
 ब्रह्मा नारायणश्चैव सृष्टिं कर्तुं समुद्यतौ ॥
 ताभ्यां तदानीमखिलद्यावाभूमौ च निर्भमे ।
 दिशश्च प्रदिशश्चैव लोकपालाष्टकावृताः ॥
 तिथिं पूर्वाभिमां राजन् चकाराधिपतिः स्वयम् ।
 तिथीनां प्रवरा यस्मात् ब्रह्मणा समुदाहृता ॥
 प्रतिपादिता पदे पूर्वे प्रतिपत्तेन कथ्यते ।
 अस्यान्ते कथयिष्यामि चीपवासविधिं परम् ॥
 कार्त्तिक्यामद्य सप्तम्यां वैशाख्यां वा युगादिषु ।
 नियमोपवासं प्रथमं ग्राहयेत् विधानवित् ॥

कार्त्तिके वैशाखे वा मासि प्रतिपत्तिथिव्रतस्यारम्भः ।
 सप्तमीव्रते माघे । युगादि तिथि व्रतस्य माघ वैशाख भाद्रपद
 कार्त्तिकेष्वन्यतमे आरम्भः ।

या तिथिर्निर्णयं कर्तुं शक्या समनुगच्छति ।
 तस्यां तिथौ विधानं यत्तन्निबोध जनाधिप ॥

नियमोपवासं प्रथमं शास्त्रेद्विधिवत्परः ।
 यदा वै प्रतिपद्यादौ षष्ठीयात्रियमं नृप ॥
 चतुर्दश्यां कृताहारः सङ्कल्प्य परिकल्पयेत् ।
 अमावास्यां न भुञ्जीत चिकालं ज्ञानमाचरेत् ॥
 पवित्राणि जपेन्नित्यं गायत्रौ शिरसा सह ।
 अथवेदपवित्राणि वस्त्राम्यहमतःपरम् ॥
 येषां जपेय होमैश्च पूयन्ते तमसावृताः ।
 अथमर्षणं देवज्ञतः शुद्धवत्यस्तरत्नमाः ।
 कुष्माण्डाः पावमान्यश्च दुर्गासावित्रिरेव च ॥
 भास्वगानि च सामानि गायत्रं रैवतं तथा ।
 शतपर्वीथर्वशिरस्त्रिसुपर्णं महाव्रतम् ॥
 अभिवङ्गापदस्तोभः सामानि व्याहृतिस्तथा ।
 अस्त्रिङ्गावाहस्यत्यश्च वाक्सूक्तं मध्वृतस्तथा ॥
 तथा । पुरुषसूक्तमघनाशश्च तथा देवव्रतानि च ।
 गोसूक्तमध्वसूक्तश्च ऐन्द्रशुभे च सामनी ॥
 त्रीण्यव्यदोहानि रथन्तरश्च
 अग्निव्रतं वामदेव्यं वृहश्च ।
 एतानि जप्तानि पुनन्ति जन्तून्
 जातिस्मरत्वं लभते य इच्छन् ॥
 अर्चयित्वा विधानेन गन्धमास्थैर्हिजोत्तमान् ।
 शक्त्या क्षीरं प्रदद्यात्तु ब्रह्मा मे प्रीयतां विभुः ॥
 ततो भुञ्जीत गोक्षीरममेन विधिना नृप ।
 एष एव विधिः प्रोक्तः सर्वासु तिथिषु नृप ॥

सर्वांसु तिथिषु मार्गशीर्षादिप्रतिपत्सु ।
 संवत्सरगते काले व्रतमस्य समाप्यते ।
 व्रतान्ते यत् फलं यस्य तन्निबोध नराधिप ॥
 विमुक्तापापशुद्धस्य दिव्यदेहस्य देहिनः ।
 ब्रह्मा ददाति सन्तुष्टो विमानममितौजसम् ॥
 अव्याहतगतिं दिव्यमभरःकिन्नरैर्भूतम् ।
 रमित्वा सुचिरं तत्र देवतैः सह देववत् ॥
 इह चागत्य विप्रत्वं दशजन्मान्यसौ लभेत् ।
 वेदवेदाङ्गविद्यया विद्वान् दीर्घायुरेव च ॥
 भोगी धनपतिर्दाता जायतेऽसौ कृते युगे ।
 अन्नियो वैश्यः शूद्रो वा ब्राह्मणत्वमवाप्नुयात् ॥
 हैहयैस्तालजङ्घैश्च तुरुष्कर्यवनैः शकैः ।
 उपोषिता इहापैव ब्राह्मणत्वं लभन्ति ते ॥

इति भविष्यत्पुराणे शौरप्रतिपद्गतम् ।



सप्ततन्त्रुमार उवाच ।

अथ त्वं प्रतिपत्कृत्यं शृणु सम्प्रतृकारं व्रतम् ।
 यत् कुर्वाणः त्रियं विन्देहर्षभं मानुषैरिह ॥
 शालितन्दुल्लसंसिद्धे मण्डले चतुरस्रके ।
 त्रियं त्रियमथावाह्य पूजयेत्पुनःसरम् ॥

अप्रच्छन्नदसैः पद्मैरयुतैस्तं प्रपूजयेत् ॥
 अप्रच्छन्नदलैः विकसितैः ।
 सहस्रैर्व्या यथा योगं पञ्चसा पायसेन च ।
 ततश्च विधिनाभ्यर्च्य पार्श्वं देवीं सरस्वतीम् ॥
 अथातः पूजयेद्दिन्दुं गुरुं पञ्चादनन्यधीः ।
 परिवारनियोगेन तांश्च सत्कारयेदथ ॥

प्रार्थनामन्त्रः ।

मम विद्यां प्रदिश तु देवो वागीश्वरो हरिः ।
 विद्याधिदैवतं देवी विद्यां दिशतु मेन्द्रिा ॥
 सरस्वती प्रदिश तु वाग्बृद्धिमतिशालिनीम् ।
 शीतांशुरपि मे पुष्टिं सर्व्वभोगप्रपूरिणीम् ॥

पूजा-प्रणवादिनमोन्तैर्नाममन्त्रै रेव कर्त्तव्या ।

इत्येवं कारयेत्साध्यं प्रसन्नः पूजितो गुरुः ॥

साध्यं शिष्यमपदेश्यम् ।

विधिना चोपवासन्तु कारयेन्नियमान्वितम् ।
 समभ्यर्च्य द्वितीयायां देवदेवं त्रियःपतिम् ।
 भुञ्जीत पयसान्नेन शुचिराचम्य सन्निधौ ॥

साध्य इपि शेषः ।

आचार्याय वरं दत्त्वा कुर्व्यात् सुप्रीणनं पुनः ।

वरशब्देन हिरण्यमभिधीयते ।

अनधीतमगारब्धं तदानीमारभेत . ह ।

विद्याव्रतप्रदं नित्यं गुरुं दैवतमित्यपि ॥

मन्थेतेतिशेषः ।

तन्मुखाच्चि तदा तस्य निश्रयससमागमम् ।

निःश्रेयसमतिशयितं श्रेयः ।

तदा तदुक्तकारौस्यावस्यासच्छासनातिगः ।

तिष्ठेत्तिष्ठन्नु गुरुषु न चासीत् तदग्रतः ॥

न शयीत् तदासीने कुर्वीत् वच नाभ्यपि ।

न लङ्घयीत् वचनं गुरोः कृच्छ्रगतेन च ।

निवेद्य गुरवे सर्वं कुर्यादादौ द्विताहितम् ॥

एवमाचार्यनिष्ठस्तु मतिमान् प्राज्ञसम्मतः ।

उत्पन्नज्ञानवैराग्यो दीर्घमायुरवाप्य च ॥

यशस्य विपुलं कृत्वा सदाचारप्रवर्त्तनम् ।

पुत्रपौत्रत्रियाः शुष्टः* पुण्याङ्गतिमवाप्नुयात् ॥

एवं समापयेद्विद्वान्विद्याव्रतमुदारधीः ।

दद्यात् फलानि विप्रेभ्यो ह्युत्कृष्टानि बह्वन्यथ ॥

कदली-चूत-पनस-सम्भवानि शुचीनि च ।

यस्यैवं कुरुते विद्वान् विद्याव्रतमनन्यधीः ।

समस्तविद्यानिपुणो वैष्णवं पदमृच्छति ॥

इति गरुड पुराणोक्तं विद्याप्रतिपद्धतम् ।



पुष्कर उवाच ।

संवत्सरावसाने तु पञ्चदश्यासुषोषितः ।

प्रातःप्रतिपदि ज्ञातः कुर्याद्भूतमनन्वधीः ॥

पूजयेद्भास्करं देवं वर्षकैः कमले ज्ञते ॥

शुचौ स्थाण्डिलदेये नानावर्षैः कमलं विधाय तत्र भास्करं
ध्यात्वा पूजयेदित्यर्थः ।

शुक्लेन गन्धमाख्येन चन्दनेन सितेन च ।

तथा कुन्दुबधूपेन घृतधूपेन भार्गवम् ॥

‘कुन्दुबः, सन्नकीनिर्घ्रासः ।

अपूपैः सैकतैर्दध्ना परमानेन भूरिषा ॥

सैकतैः शर्कराविकारैः ।

श्रीदनेन च शुक्लेन सता लवणसर्पिषा ।

‘सता, उत्तमेन ।

चीरेषु च फलेः शुक्लैर्वृद्धिमाद्यथ तर्पणैः ।

पूजयित्वा जगद्धाम दिनभागे चतुर्थके ॥

आहारं प्रथमं कुर्यात्सृष्टं मनुजोत्तम ।

सर्वेषु मनुजश्रेष्ठ घृतहीनं विवर्जयेत् ॥

भुक्त्वा च सक्तदेवान्नमाहारञ्च समाचरेत् ।

पानीयपानं कुर्वीत ब्राह्मणानुमते पुनः ॥

प्रथममाहारं प्रथमपासं । सर्वं प्रथममप्रथमञ्चाहारं सक्त-
देवान् भुक्त्वा एकमेव पासं भक्षयित्वाऽवशिष्टमन्नं त्यजेत् ।
ब्राह्मणानुमत्या पुनराहारमवशिष्टान्नभोजनं पुनः पानीयपानञ्च
कुर्वीदित्यर्थः । ब्राह्मणानुमत्या भुक्तानोऽपि घृतहीनं न भुञ्जीत
घृतहीनं विवर्जयेदिति निषेधात् ।

संबन्धरमिदं कृत्वा ततः साक्षात् त्रयोदशम् ।

पूजनं देवदेवस्य तस्मिन्नहनि भार्गव ॥

संबन्धरं प्रतिमासं शुक्ल प्रतिपदि ततः साक्षात् त्रयो-
दशमितिलिङ्गदर्शनात् ।

समापयेत् व्रतं पुण्यं राम इत्यभिधीयते ।

हे राम, शास्त्रे एवमभिधीयतइत्यर्थः ।

स हिरण्यं सवस्त्रञ्च तथा दद्याद्भिज्जीतम् ॥

सूर्यायेति शेषः ।

व्रतेनानेन धर्मञ्च रोगमेवं व्यपोहति ॥

पारोग्यमाप्नोति गतिं तद्योग्यां

यश्चस्तद्योग्यां विपुलांश्च भोगान् ।

व्रतेन सम्यक् पुरुषोऽथ नारी

संपूजयेद्यस्तु जगत्प्रधानं ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरे सोद्यापनमारोग्य-प्रतिपद्धतम् ।

—०#०—

मार्कण्डेय उवाच ।

अष्टपत्रन्तु कामसं विन्यसेद्वर्णकैः शुभैः ।
त्रिज्जाणं कर्णिकायान्तु तस्य संपूजयेद्बिशुम् ॥

'तस्य, कामलस्य ।

ऋग्वेदं पूर्वपत्रे तु यजुर्वेदन्तु दक्षिणे ।
पश्चिमे सामवेदन्तु उदक् चाथर्वणं तथा ॥
आग्नेये च तथाङ्गानि धर्मशास्त्राणि नैर्ऋते ।
पुराणश्चैव वायव्ये ईशान्ये न्यायविस्तरौ ॥
एवं विन्यस्य धर्मज्ञः सोपवासस्तु पूजयेत् ।
चैत्र शुक्लमघारभ्य सोपवासो जितेन्द्रियः ॥
सदा प्रतिपदं प्राप्य शुक्लपक्षस्य यादव ।
संवत्सरं महाभाग शुक्लगम्यानुलेपनैः ।
भूरिणा परमाग्नेन धूपद्वीपैरतन्द्रितः ॥
संवत्सरान्ते गान्ध्यात् व्रते चौर्णे नरोत्तमः ।

इदं व्रतं यस्तु करोति राजन्
स वेदवित्प्राहुवि धर्मनिष्ठः ।
कृत्वा तदा द्वादशवकराणि
त्रिचिञ्चिसोक्तं पुरुषः प्रयाति ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सोद्यापनं विद्याव्रतम् ।

—१०१—

मार्कण्डेय उवाच ।

एक एव जगत्सर्वं प्रकृतिः पुरुषः स्मृतः ।
चैत्रशुक्लसमारभ्य सोपवासो जितेन्द्रियः ॥
समारभ्ये, वर्षारभ्ये ।

पूर्ववत् पञ्चदशामुपवासः ।

पुरुषं पूजयेद्विष्णुं स्थले वा यदि वा जले ।
गन्ध-माख-नमस्कार-धूप-दीपान्न-सम्पदा ॥
पौषण्णु तथा सूक्तं जपेदन्तर्जले नरः ।
शुचौ जले विष्णुं ध्यायन् गन्धादिभिः पूजयेदित्यर्थः ।
तथाश्चनं प्रत्युच्यते धूपं दद्यात्प्रसादाक्षिप्त्वा ।
तथा धूपानि धर्मज्ञ फलानि च महाभुज ॥
धूपं दत्त्वा च नैवेद्यं जपेच्छक्त्या तथैव तत् ।
सुहुयाच्च तथाज्येन हिजे दद्याच्च काञ्चनम् ॥
आहारं पश्या दद्यान्निशाकाले च भार्गव ।
दद्यात्संवत्सरं कृत्वा नित्यव्रतमनन्दितः ।
पञ्चयोद्धभयोर्वीर सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥

प्रसादमासाद्य च वासुदेवात्
सुर्वेक्षरात्सर्वंगतादचिन्त्यात् ।
लोकेश्वरादेव पदं प्रयाति
यां यान्ति सिवा; पुनरिव सिधिम् ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरे पौषप्रतिपद्गतम् ।

—:०:—

उद्यापनमन्त्रः पूर्व्ववत् ।

सुमन्तुववाच ।

पौषमास्युपवासन्तु कृत्वा भक्त्या नराधिप ।

अनेन विधिना यस्तु विरिञ्चिं पूजयेन्नरः ॥

पौषमासोयहृषं पूर्व्वदिनोपलक्ष्यं तेन यदा शुक्लप्रति-
पदि वृतं क्रियते तदामावास्यायामुपवासः ।

अनेन वषट्माणेन ।

प्रतिपद्यां महावाही ज्ञातश्चैव समाहितः ।

अग्निर्विशेषतो देवो विरिञ्चिर्वाच देवता ॥

कार्तिके मासि देवस्य रक्षयात्रा प्रकीर्तिता ।

यः कुर्यान्भानवो भक्त्या याति ब्रह्मसंलोकताम् ॥

कार्तिके मासि राजेन्द्र पौषमास्यां चतुर्थ्युषम् ।

मार्गेश मुदितः सध्वं नानावासैः समन्वितम् ॥

स्यापयेद्भ्रामयित्वा तु सलोकं नगरं कृप ।

ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु शाण्डिलेयं प्रपूज्य च ॥

शाण्डिलेयो वैश्वानरः ।

आमोदयेद्देवदेवं ब्रह्मवादिद्वनिस्वनैः ।

रवाम्ने शाण्डिलीपुत्रं पूजयित्वा विधानतः ॥

ब्राह्मणानर्चयित्वा तु कृत्वा पुण्याहमङ्गलम् ।

(४४)

द्रवमारोपयित्वा तु रात्रौ कुर्यात् प्रजागरम् ॥
 नानाविधैः प्रक्षपैद्य ब्रह्मघोषैश्च पुष्कलं ।
 कृत्वा प्रजागन्धेप्रवं प्रभाति ब्राह्मणान् नृप ॥
 पूजयित्वा यथाशक्त्या भक्ष्यभीज्यैरनेकशः ।
 पूजयित्वाजनं वीर वक्ष्येण विधिना नृप ॥
 वाजेन च महाबाहो पयसा पायसेन च ।

वक्ष्यमाण्यम्, वाजमन्त्रम् ।

ब्राह्मणान्वाचयेद्वाचो नागेन विधिना नृप ।
 कृत्वा पुण्याहशब्देन रथञ्च भ्रामयेत्पुनः ॥
 चतुर्व्यं दविदैविप्रैर्भ्रामयेत् ब्राह्मणोरथम् ।
 बद्ध्वा चा यजुषा वीर हृन्दीगाथव्यं भिस्तथा ॥
 भ्रामयेद्देवदेवस्य शुभश्रेष्ठस्य तं रथम् ।
 प्रदक्षिणं पुरं सर्व्वं मार्गेण सुसमेन च ॥
 आरोढव्यं रथं वीर शूद्रेण शुभमिच्छता ।
 नारोहयेद्द्रघं प्राप्नो मुक्तकं भोजकं नृप ॥
 ब्रह्मणो दक्षिणे पार्श्वे सावित्रीं स्थापयेन्नृप ।
 भोजको ब्रामपार्श्वे तु पुरतः पङ्कजं न्यसेत् ॥
 एवं रूपं निनादैश्च शङ्खशब्दैश्च पुष्कलैः ।
 भ्रामयित्वा रथं वीर पुरं सर्व्वं प्रदक्षिणम् ॥
 स्थापयेत् स्थापयेद्दीर कृत्वा नीराजनं बुधः ।
 एवं यः कुरुते यादां भक्त्या यथापि पश्यति ॥
 रथं वा कर्त्तव्येद्यस्तु दीपं यस्तु प्रदापयेत् ।

शालायां ब्राह्मणः कुर्यात् समिच्छेत्परमं पदम् ॥
 प्रतिपत् ब्रह्मण्यापि गुडमित्रैः प्रपूजयेत् ।
 वासोभिरहृतैश्चापि स गच्छेत् ब्रह्मणः पदम् ॥
 गन्धैः पुष्पैर्नैवेर्षस्त्रै रात्मानं पूजयेत् यः ।
 तस्यां प्रतिपदायान्तु स गच्छेत् ब्रह्मणः पदम् ॥
 महापुण्या तिथिरियं बह्वी राज्यप्रवर्त्तिनी ।
 ब्रह्मणस्तु प्रिया नित्यं बालेयी सा प्रकीर्त्तिता ॥
 ब्राह्मणान् पूजयेद्योऽस्यामात्मानञ्च विशेषतः ।
 स याति परमं स्थानं विश्वीरमिततेजसः ॥
 चैत्रमासे महाबाहो पुण्या प्रतिपदा वरा ।
 तस्यां गोष्ठपदं दृष्ट्वा ज्ञानं कुर्यान्नरोत्तम ॥
 न तस्य दुरितं किञ्चिदाधयोव्याधयस्तथा ।
 भवन्ति कुरुमादूर्णं तस्मात् ज्ञानं हि तैस्ततः ॥
 नारानोराजनं तत्र सर्वं रोगनिवारणम् ।
 गोमह्निथादि यत्किञ्चित्तत्सर्वं भूषयेन्नृप ॥
 तैलवस्त्रादिभिः पुष्पैस्सोरथानि पुरानयेत् ।
 ब्राह्मणानां तथा भोज्यं दद्यात् कुरुकुलोदह ॥
 तिस्रो ह्याद्याः पुरा प्रोक्तास्तिथयः कुरुनन्दन ।
 कार्तिके चाश्वयुग्मासे चैत्रे मासि समाचरेत् ॥
 ज्ञानं दानं शतगुणं कार्तिके या तिथिर्नृप ।
 बलिं राज्यात् शुभदा यामूलाश्वभतागिनी ॥

शामूलमशुभहृत्वी ।

इति भविष्यत्पुराणे बलिप्रतिपत्त्रययात्रा व्रतम् ।

—:—

बुधिष्ठिर उवाच ।

ब्रह्मेश केगवादीनां गौर्या गणपते स्तथा ।
दुर्गा सीमान्नि सूर्याणां व्रतानि मधुसूदन ॥
शास्त्रान्तरेण दृष्टानि भवेदुडिगतानि च ।
तानि सूर्याणि मे देवदेव देवकिनन्दन ॥
प्रतिपत्कामयोगेन विहिता यस्य या तिथिः ।
देवस्य यस्यां तत्कार्यं तदशेषे च मे वद ॥

कृष्ण उवाच ।

वसन्ते किंशुकाशोकशोभिते प्रतिपत्तिथिः ।
शुक्ला तस्यां प्रकुर्वीत स्नानं नियममास्थितः ॥
नारौ नरो वा राजेन्द्र संतप्यं पिष्टदेवताः ।
नद्यास्तीरे तडागे वा गृहे वा तदस्नाभतः ॥
पिष्टातकेन विलिखेद्वत्सरं पुरुषाकृतिम् ।
'पिष्टातकं, पटवासकी गन्धद्रव्यचूर्णविशेषः ॥
ततश्चन्दनचूर्णेन पुष्पधूपादिनार्घयेत् ।
मासर्तुनामभिः पद्यान्नमस्कारान्त्योजितैः ॥
मासर्तुनामभियै च वसन्तादिनामभिः ।
पूजयेत् ब्राह्मणो विद्वान् मन्त्रैर्वेदीदितैः श्रमेः ।
संवत्सरोसीतियज्ञुर्गन्धैः । ब्राह्मणो च द्विजः मन्त्रस्तु । संव-
त्सरोसि पदिवत्सरोसीदावत्सरोसि अनुवत्सरोसि उदावत्सरोसि ।

उषसस्ते कल्पन्तां अहोरात्रास्ते कल्पन्तां षड्मासास्ते कल्पन्तां
मासास्ते कल्पन्तामृतवस्ते कल्पन्तां संवत्सरास्ते कल्पन्ताम् ।

संवत्सरोसीति पठन् मन्त्रं वेदोदितं हिजः ।

नमस्कारेण मन्त्रेण शूद्रोपि त्वां प्रपूजयेत् ॥

नमस्कारेण मन्त्रेण, संवत्सरोसीत्यादिना ।

एवमभ्यर्च्य वासीभिः पञ्चाक्षमभिर्वेष्टयेत् ॥

कालद्रव्यैर्बूलफलेनैवेद्यैर्गोदकादिभिः ।

ततस्तं प्रार्थयेत्पद्याम्पुरःस्थित्वा कृताञ्जलिः ॥

भगवंस्त्वन् प्रसादेन वर्षाङ्के महिमास्तु मे ।

संवत्सरोपसर्गा मे विलयं यान्त्वशेषतः ॥

एवमुक्त्वा यथा शक्त्वा दद्यादिप्राय दक्षिणाम् ।

सलाटपट्टे तिलकं कुर्व्याच्चन्दनपङ्कजम् ॥

चन्दनपङ्कोष्टचन्दनम् ।

ततः प्रभृत्यनुदिनं तिलकालङ्कृतं मुखम् ।

घार्थ्यं संवत्सरं यावच्छशिमेव नभस्तलम् ॥

एवं नरो वा नारी वा व्रतमेतत्प्रमाचरेत् ।

सदैव पुरुषव्याघ्र भोगान् भुवि भुनक्त्यसौ ॥

भूत प्रेत पिशाचाद्याः दुर्बारा वैरिणो ग्रहाः ।

निरर्थका भवन्त्येते तिलकं वीक्ष्य तत्क्षणात् ॥

पूर्वमासीन्महीपालो नाम्ना शत्रुञ्जयीजयो ।

चित्तलेखेति तस्याभूद्भार्या चारिचभूषणा ॥

तथा व्रतमिदञ्चैने षड्हीतं हिजसन्निधौ ।

संवल्लरं पूजयित्वा ध्यात्वा हृदि जगार्हणम् ॥

हन्तुमाप्तेमुकामो वा समागच्छति यः पुरः ।

प्रयाति प्रियकृत्स्न्याः दृष्ट्वा तु तिलकं नरः ॥

सपत्नीदर्पापहरा वशीकृतमहीतला ।

भर्तुर्दृष्ट्वा प्रहृष्टा तु सुखमास्ते निराकुला ॥

यावत् करिणाभिभूती भर्ता पुत्रः सवेदनः ।

शिरोर्त्तिना संप्रयातः सुहृदां सुखदायकः ॥

शिरोर्त्तिना संप्रयातः शिरो वेदना युक्तः ।

धर्मराजपुरात्प्राप्ताः सर्व्व भूतापहारकाः ।

तस्मिन् क्षणे महाराज भागत्य यमकिङ्कराः ॥

तस्य द्वारमनुप्राप्ताः प्रविष्टा गृहमञ्जसा ।

शत्रुक्षयं समानेतुं कालमृत्युपुरःसराः ॥

पार्श्वस्थितां चित्रलेखां तिलकालङ्कृतामनाम् ।

दृष्ट्वा मनष्टसङ्ख्याः परावृत्य गताः पुनः ॥

गतेषु तेषु स नृपः पुत्रेषु सह भारत ।

नीरुजोबुभुजे भोगान् पूर्व्वकामार्जितान् शुभान् ॥

अक्रूरेण समख्यातं मम पूर्व्वं युधिष्ठिर ।

एतत् त्रिलोक्यी तिलकाख्यभूषणम्

पुण्यं व्रतं सकलदुष्टहरं परञ्च ।

दृच्छन् समाचरति यः स सुखं विहृत्य

मर्त्यैः प्रयाति पद्मञ्चुतमिन्दुमौलेः ॥

इति भविष्योत्तरे चैत्र शुक्ल प्रतिपदि विहितं तिलकव्रतम्

—:—

श्रीकृष्ण उवाच ।

अश्वयुक् शुक्लपक्षस्य प्रथमेऽङ्गे दिनीदये ।
 अशोकं पूजयेत् वृक्षं प्ररुठशुभपल्लवम् ॥
 प्ररुठैः सप्तधान्यैश्च गुणकैर्मोदकैः शुभैः ।
 फलैः कालोद्भवैर्दिव्यैर्नारिकेलैः सदाष्ठिमैः ॥
 धूपदीपादिना तत्र पूजयेत्तत्समुत्तमम् ।
 अशोकं पाण्डवश्चेत्त शोकं नाप्नोति कुत्रचित् ॥
 पितृभ्रातृपति श्वश्रू सुत जामातृणां तथा ।
 अशोकशोक शमनी भव सर्वत्र नः कुले ॥
 इत्युच्चार्य ततो दद्यादर्धं अहासमन्वितः ।
 पताकाभिरलङ्कृत्य प्रच्छाद्य च सुवाससा ॥
 दमयन्ती यथा स्वाहा यथा देवी च जानकी ।
 तथा शोकं प्रतादृश्याञ्जायते पतिवत्सभा ॥
 वने वसन्त्या सवर्षः सीतया संप्रदर्शितः ।
 दृष्ट्वाशोकं वने पार्थं पल्लवालङ्कृतं तत् ॥
 कृत्वा समीपे भर्तारं देवरश्च तिलाक्षतैः ।
 दीपालङ्कनैर्वैद्यैर्धूपं सूत्रं फलार्चनैः ॥
 अर्चयित्वाभ्यर्चिती सौ रक्ताशोकी युधिष्ठिर ।
 मैथिली प्राञ्जलिं कृत्वा शृण्वतो राघवस्य च ॥

प्राञ्जलिं, वक्ष्येऽञ्जलिम् ।

चिरञ्जीव तु मे हृदः प्रसुरः कोशलेष्वरः ॥
 भर्ता मे देवराष्ट्रैव जीवन्तु भरतादयः ।
 कोशल्यामयि जीवन्ती यस्येयमिति मेचिन्ती ॥
 यथाचेदं महाभागाद्भवंनविभूषणम् ।
 प्रदक्षिणसुपाहृत्य ततः सा प्रथमो गृह्णम् ॥
 युवमन्यापि या नारी पूजयेद्बनौनगम् ।
 तिलतन्दुलसंमिश्रैर्यवगोधूमसर्षपैः ॥
 चमाप्यश्लेषेणैव पादपं रक्तपद्मम् ।
 तदभावे च सौवर्णं राजतं वा स्वशक्तिः ॥
 वर्णकैर्वा समालिख्य पूजितं विधिवत्ततः ।
 मन्त्रेणानेन प्रणम्य या स्त्री कुर्यात्पतिव्रता ॥
 महाहृत् महाशास्त्रमकरध्वजमन्दिर ।
 प्रार्थयेत्त्वं महाभागसर्वकामप्रदीभव ॥
 एवमाभाष्य तं हृत्तं दत्त्वा विप्राय दक्षिणाम्
 तच्च हृत्तं कृतं दत्त्वा वस्त्रयुग्मसमन्वितम् ॥

कृतं सुवर्णादिघटितम् ।

सखीभिः सहिता साध्वी भुञ्जीत ब्रह्मचारिणी ॥
 याः शोकनाशनमशोककरं युवत्यः
 सम्पूजयन्ति कुसुमाक्षतधूपदीपैः ।
 ताः पार्थसौख्यमतुलं भुवि भवति जातं ।
 गौरीपदं प्रमुदिताः पुनराप्रवन्ति ॥

इति भविष्योत्तरेऽशोकप्रतिपद्धतम् ।

—:०:—

भगवानुवाच ।

ज्येष्ठे मासे ह्यभेषे प्रथमिऽङ्गि द्वितीये ।
 देवोद्यानभवं ह्यथं करवीरं समर्चयेत् ॥
 रक्ततन्तुपरीधानं गन्ध-धूपविलेपनैः ।
 प्ररुढसप्तधान्यैश्च नारङ्गैर्वीजपूरकैः ॥
 गुणकैश्च दरैर्भक्ष्यैर्नारिकेलैः सुशोभनैः ।
 अभ्युक्ष्यात्ततीयेन मन्त्रेणैतथं चमापयेत् ॥
 करवीरं विष्णावासं नमस्ते भानुवत्सभ ।
 मीलितमण्डनं दुर्गादिदेवानां सततं प्रिय ॥
 आसन्नैवेति वेदोक्तमन्त्रेणाभ्यर्च्य भक्तितः ।
 एवं भक्त्या समर्थ्यं दत्त्वा विष्णवे दक्षिणाम् ॥
 प्रदक्षिणं ततः कुर्यात्ततः स्वभवत्वं ज्ञेयम् ।
 एतद्गतं पुरा पार्थ सूर्यारोधनकाव्यया ।
 दमयन्त्या सरस्वत्या गायत्र्या गङ्गया तथा ।
 अन्याभिरपि नारीभिर्मर्त्यलोकेष्यनुष्ठितम् ॥
 करवीरव्रतं पार्थ सर्वसौख्यफलप्रदम् ।
 संपूज्य रक्तकुसुमार्चितसर्वशास्त्रं
 नीलैर्दलैस्तततनुं करवीरवृक्षम् ।
 भुक्त्वा मनोमिलषितान् भुवि भव्यभोगा
 मन्ते प्रशान्तिं भवनं सरताग्युभानोः ॥

(४५)

इति भविष्योत्तरे करवीर प्रतिपत्-व्रतम् ।

—:—

ब्रह्मोवाच ।

अग्निमिदं च हुत्वा च प्रतिपद्यामिति स्मृतम् ।

इविद्या सर्व्वधान्यानि प्राप्नुयाद्व्रतं धनम् ॥

इष्टां पूजयित्वा । प्रतिपद्यां प्रतिपदि । इति स्मृतं कामानु
सारेण हिरण्यरेतस्मतया विहितं । इविद्या वृतेन । सर्व्व
धान्यानि हुत्वेत्यन्वयः ।

मूलमन्त्राः स्वसंज्ञाभि रङ्गमन्त्राश्च कीर्त्तिताः ।

पूर्व्ववत् पद्मपत्रस्यः कसंध्यश्च तिथीश्वरः ॥

मूलमन्त्राः प्रधानमन्त्राः । अङ्गमन्त्राः । परिवार देवता
मन्त्राः अन्नये हृदयाय नम इत्येवमादयः । स्वसंज्ञाभिः
ॐ अन्नये नम इत्यादिपूजायां । ॐ अन्नये स्वाहा इत्यादि
होमे । पूर्व्ववत् सूर्य्यव्रतवत् । पद्ममध्यस्थः कर्षिंकायां स्वमूर्त्या
पत्रेषु परिवारमूर्त्यां स्थितः । तिथीश्वरोऽत्र वस्तिः । स च जटा
शमशुधारी त्रिलोचनो रक्ताङ्गश्चतुर्वर्षाङ्गः प्रदक्षिणे शूलं तदपरे
ज्वाला । उल्लङ्गगताया अन्नपात्रहस्तायाः स्वाहायाः स्तम्भे च
न्यस्तपरोवरः । चत्वारः चक्रा रथस्य वोदारः । वायुः सारथि-
रित्येवं चिह्नचर्म्मोत्तराभिहितो वेदितव्यः ।

गन्ध पुष्पोपहारैश्च यथा शक्ति विधीयते ।

पूजाऽश्वादेन यादेन कृतापि तु फलप्रदा ॥

अशाठेन, अन्नपटेन, याठेनेत्यादिस्तुतिः ।

आण्यधारासमिद्धिष दधि श्रीराजमाधिकैः ॥

पूर्वोक्तफलदो होमो विहितः शान्तचेतसा ।

आण्यधारादिभिः षड्भिः पृथक्कृतो होमः पूर्वोक्तफल
दोधनदः । माधिकं मधु । आदौ पूजा ततो वृताक्तधान्यहोम-
स्ततो आण्यधारादिहोमः ।

इति भविष्ये वैश्वानरव्रतम् ।

—:—:—

अगस्त्य उवाच ।

अघ्रातः संप्रवक्ष्यामि धन्यव्रतमनुत्तम ।

येन संख्यो भवेद्दन्वोऽधन्वोऽपि हि यो भवेत् ॥

मार्गश्रीर्षेऽमले पक्षे प्रतिपद्या तिथिर्भवेत् ।

तस्यां मत्तं प्रकुर्वीत रात्रौ विष्णुश्च पूजयेत् ॥

वैश्वानराय आदौ तु अग्नये चोत्तरन्तथा ।

हविर्भुजे तथोरुष द्रविणोदाय वै भुजे ॥

सम्बर्त्तयेतिच शिरो ज्वलनायेति सर्व्वतः ।

अभ्यर्च्येवं विधानेन देवदेवं जनाह्वनं ॥

तस्यैव पुरतः कुण्डं कारयित्वा विधानतः ।

होमान्ते व्रतं कुर्व्वीत एतैर्भान्दैर्विषण्णः ॥

एतैर्मन्त्रैः, वैश्वानरायेत्यादिप्रागुक्तैः ।

ततस्तु यावकं चान्नं भुञ्जीत वृत्तसंयुतम् ।

क्षणपक्षेभ्यमेव चातुर्मास्यान्तु यावकम् ॥

अत्रादिषु तु भुञ्जीयात् पायसं सघृतं बुधः ।
 त्रावणादिषु सक्तं च ततश्चैव समाप्यते ॥
 समाप्ते च व्रते वक्रिकाञ्चनं कारयेन्नृपः ।

वक्रिकपं पूर्वोक्तं ।

रक्तवस्त्रयुगच्छन्नं रक्तपुष्पातुलेपनम् ॥
 कुङ्कुमेन तथा लिम्बेत् ब्राह्मणं त्वेवमेव तु ।
 सर्व्वीवयवसम्पूर्णं गुणिनं प्रियदर्शनम् ॥
 पूजयित्वा विधानेन रक्तवस्त्रयुगेन च ।
 पश्चात् प्रदद्यात्तत्सस्य मन्त्रेणानेन मन्त्रवान् ॥
 धन्योसि धन्यधर्म्मा च धन्योस्मि धन्यवान् भवान् ।
 धन्येनानेन श्रीर्धनेन व्रतेन स्यां सदा सुखी ॥
 एवमुच्चार्य्य तं विप्र न्यस्य कीशभिवाम्बनः ।
 सद्यो धन्यत्वमाप्नोति योऽपि स्याद्भाग्यवर्जितः ।
 इह जन्मनि सौभाग्यं धन्यं धान्यञ्च पुष्कलम् ॥
 अनेन कृतमात्रेण जायते नात्र संशयः ।
 वाक्त्रनःसञ्चितं पापं वक्रिदं हति तस्य वै ॥
 दग्धपापः स ऋषात्मा असुचेह च विन्दति ।

इति वराह पुराणोक्तं धन्यव्रतम् ।

—:~:—

पुस्तक्य उवाच ।

प्रतिपद्येकभक्ताग्नी समान्ते कपिलाप्रदः ।

वैश्वानरपुरं याति व्रतं वैश्वानरम्विदम् ॥

पद्मपुराणे वैश्याणर व्रतमिति ।

पृथिवीं भाजनं कृत्वा यो भुङ्क्ते पक्षसन्दिधु ।

अहोरात्रेण चैकेन विराचफलमश्नुते ॥

इति पद्मपुराणे पक्षसन्धि व्रतं ।



नन्दिकेश्वर उवाच ।

वैदिकेन विधानेन व्रतं पुण्यं महत्तमम् ।

कस्मिंस्तिथौ तु कर्त्तव्यं विधानं तद्वदस्व मे ॥

स्कन्द उवाच ।

मासि भाद्रपदे शुक्ले पक्षे च प्रतिपत्तिथौ ।

नैवेद्यन्तु पचेन्मौनी षोडशत्रिगुणानि च ॥

फलानि पिष्टपक्वानि दद्याद्दिप्राय षोडश ।

देवाय षोडशैतानि दातव्यानि प्रयत्नतः ॥

भुञ्जन्ते षोडश तथा व्रतस्य नियमाश्रयात् ।

सौवर्णं कारयेद्देवं यथा शक्त्या हिरण्यमयम् ॥

सुवर्णं कर्षस्तद्वटितं यथा शक्त्या च कृतम् ।

नेत्रचय समायुक्तं जटा मण्डल मण्डितम्* ॥

पञ्चवक्त्रं चतुर्बाहुं षडारामस्य मध्यगम् ।

* जटाचचेन्दु मण्डितं इति पुलकान्तरे ।

त्रिशूलं चाक्षसुत्रञ्च वह्मन् दक्षिणे करे ॥
 कपालं कुण्डिकां वामे शिखायां चन्द्रधारिणम् ।
 पञ्चामृतेन स्नपनं कृत्वा संस्थापयेत्ततः ॥
 कुम्भस्योपरि देवेशः शुक्लवस्त्रयुगान्वितः ।
 गन्धपुष्पैः समभ्यर्च्य फलैर्नानाविधैस्तथा ॥
 प्रसीद देवदेवेश चराचरजगद्गुरो ।
 हृषध्वज महादेव त्रिनेत्राय नमोनमः ॥

पूजामन्त्रः ।

देवस्य च परीधानं दद्यात् धेनुं पयस्विनीम् ।
 अनेन तु विधानेन यः कुर्यात् व्रतमुत्तमम् ॥
 स राजा लभते देव दीर्घमायुस्तथैव च ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते ॥
 भुक्त्वा तु विविधान भोगान् ततः शिवपुरं व्रजेत् ।
 इति स्कन्दपुराणोक्तं महत्तमव्रतं सीद्यापनम् ।

श्रीभगवानुवाच ।

श्रावणे मासि कृष्णपक्षे शङ्करः प्रथमेऽहनि ।
 त्रिपर्वणा त्रिशस्त्रेण त्रिसुखेन शरेण च ॥
 सुखानि त्रीणि चिच्छेद यत्नस्यमृगरूपिणः ।
 तैः शिरोभिस्तपस्तप्तं वरः प्राप्नोऽथ शङ्करात् ॥
 त्रिशस्त्रेण त्रिसुखेन शस्त्ररूपत्रिसुखेनेत्यर्थः ।
 मृगरूपिणस्त्रिसुखमृगरूपिण इत्यर्थः ॥
 *स्त्रीभिः पूज्यानि तानौति न मनुष्यैः कदाचन ।

• किमिरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

मृगशीर्षन्ततः कृत्वा लिङ्गाकारन्तु मृगयम् ॥
क्षीरेण तपनीयं वै पूजनीयं यथाविधि ।
अर्घ्यैः पुष्पैश्च धूपैश्च नैविद्यैर्विविधैरपि ॥
शाकैः सौवर्चलाभिश्च कृतैः पिष्टमयैः शुभैः ॥
सौवर्चलाभिः अतसीमिश्रपिष्टविकृतिभिः ।
कांस्यभाजनवाद्यैश्च पश्चात् कार्य्यश्च भोजनम् ॥

इति श्रीहेमाद्रि व्रतकाण्डे प्रतिपत् व्रतप्रकरणे पञ्च
पुराणोक्तं मृगशीर्षव्रतम् ।

अथ पञ्चमोऽध्यायः ।

—:०:—

श्रीभगवानुवाच ।

चैत्रे मासि जगत्ब्रह्मा ससर्ज प्रथमेऽहनि ।
शुक्लपक्षे समग्रन्तु तदा सूर्योदये सति ॥
प्रवर्त्तयामास तथा कालस्य गणनामपि ।
ग्रहान्नागानृतून्भासान् वक्षरान् वक्षराधिपान् ॥
ददौ स भगवान् ब्रह्मा सर्वदेवसमागमे ।
ब्राह्मणां सभायां ब्रह्माणमनुद्दिश्यवपुस्ततः ॥
यथोक्तास्ते नमस्यन्तः स्तुवन्तश्च उपासते ।
ततस्तैः कृतशुश्रूषास्ततो गत्वा स्वमालयम् ॥
स्नानि स्नान्यथ कर्मणि ते नियुक्ताश्च चक्रिरे ।
ब्राह्मी सभा कामरूपा विशेषेण तदा नृप ॥
धारयन्त्यमन्तं रूपमनिर्द्दश्यं मनोहरम् ।
ततः प्रभृति यो धर्मः पूर्वंः पूर्वतरैः कृतः ॥
अद्यापि रुढः सुतरां कर्त्तव्योऽसौ प्रयत्नतः ।
तत्र कार्या महाशान्तिः सर्वकल्मषनाशिनी ॥
सर्वोत्पातप्रशमनी कलिदुःखप्रनाशिनी ।
आयुःप्रदा पुष्टिकरी धनमौभाग्यवर्द्धिनी ॥
मङ्गल्या च पवित्रा च लोकहयसुखावहा ।
तस्यामादौ तु संपज्यो ब्रह्मा कमलसम्भवः ॥

पाद्याद्यैश्चैव धूपैश्च वस्त्रालङ्कारभोजनैः ।
 होमैर्व्युत्सुप्रहारैश्च तथा ब्राह्मणतर्पणैः ॥
 ततः क्रमेण देवेभ्यः पूजा कार्या पृथक् पृथक् ।
 कृत्वोङ्कारनमस्कारो कुशोदकतिस्रावतैः ॥
 पुष्प धूप प्रदीपाद्यैर्भोजनैश्च यथाक्रमम् ।

ॐकार नमस्कारो कृत्वा ॐ ब्रह्मणे नम इत्यादि । मन्त्रं
 संपूजनार्थं बहुरूपं परिस्पृशेत् मन्त्रमित्येकं* वचनं बहु-
 रूपं मन्त्रं नानारूपान्मन्त्रान् परिस्पृशेत् पठेदित्यर्थस्तथा च
 ब्रह्मणे नम इत्युपक्रम्य विष्णवे परमात्मने नम इत्यन्त वाक्य
 इन्दीपात्तदेवतानामानि प्रणवादिचतुर्थ्यन्तनमोन्तानि मन्त्र-
 त्वेन ग्राह्याणि ।

ॐ नमो ब्रह्मणे तुभ्यं कामाय च महात्मने ।
 नमस्तेऽस्तु निमेषाय ऋटये च नमोऽस्तु ते ॥
 लवाय च नमस्तुभ्यं नमस्तेऽस्तु क्षणाय च ।
 नमो नमस्ते काष्ठायै कलायै चाथ सर्वदा ॥
 नाभिकायै सुसूक्ष्मायै सुहृत्तायै नमो नमः ।
 नमो निशाम्यः पुण्येभ्यो दिवसेभ्यश्च नित्यशः ॥
 पक्षाभ्याश्चाथ मासेभ्यो ऋतुभ्यः षड्भ्य एक च ।
 अयनाभ्याश्च पञ्चभ्यो वत्सरेभ्यश्च सर्वदा ॥
 नमस्कृत्य युगादिभ्यो ग्रहेभ्यश्च नमोनमः ।
 नमः पुरन्दरेभ्यश्च तत्संस्थेभ्यो नमोनमः ॥
 पञ्चाशते नमोनित्यं दक्षकन्याभ्य एव च ।

* मन्त्रमिति आतापैक वचनमिति कश्चित् पाठः ।

नमोदेव्यै सुप्रभायै जपायै चाद्य सर्वदा ॥
 ऋशास्त्राय नमस्तुभ्यं सर्वास्त्रजनकाय च ।
 नमस्ते बहुपुत्राय पद्मीभिः सहिताय च ॥
 नमोवृद्धत्रै तथा वृद्धै निद्रायै धनदाय च ।
 नलकूबरयश्चाय शुक्लकस्त्रामिने नमः ॥
 नमोस्तु शङ्खपद्माभ्यां निधिभ्यामथ नित्यशः ।
 भद्रकाक्ष्यै नमोनित्यं सुरभ्यै च नमोनमः ॥
 वेदवेदाङ्गवेदान्त विद्यासंख्याभ्य एव च ।
 नागयज्ञसुपर्णभ्यो नमोऽस्तु गरुडाय च ॥
 सप्तभ्यश्च समुद्रेभ्यः सागरेभ्यश्च सर्वदा ।
 उत्तरेभ्यः कुरुभ्यश्च नमोऽहैरण्यताय च ॥
 भद्राक्षकेतुमालाभ्यां नमः सर्वं च सर्वदा ।
 इलाहताय च नमो हरिवर्णाय चैव हि ॥
 नमः किंपुरुषेभ्यश्च भारताय नमोनमः ।
 नमो भारतदेशेभ्यो नवभ्यश्चैव सर्वदा ॥
 पातालेभ्यश्च सप्तभ्यो नरुकेभ्यो नमोनमः ।
 कालाग्निरुद्रशीघाभ्यां हरये क्रोधरूपिणे ॥
 सप्तभ्यस्त्वथ लोकेभ्यो महाभूतेभ्य एव च ।
 नमस्ते बुद्धये चैव नमः प्रकृतये तथा ॥
 पुरुषायामिमानाय नमोऽस्त्वव्यक्तमूर्तये ।
 द्विमवत्प्रमुखेभ्यश्च पर्वतेभ्यो नमस्तथा ॥
 पीराणीभ्यश्च गङ्गाभ्यः सप्तभ्यश्च नमोनमः ।
 नमोऽस्वाद्यमुनिभ्यश्च सप्तभ्यश्चाद्य सर्वदा ॥

नमोस्तु पुष्करादिभ्यस्तीर्थेभ्यश्च पुनःपुनः ।
 निम्नगाभ्यो नमोनित्यं वितस्ताद्याभ्य एव च ॥
 चतुर्दशभ्यो दीर्घाभ्यो धाँरिणीभ्यो नमोनमः ।
 नमोधात्रे विधात्रे च छन्दोभ्यश्च नमोनमः ॥
 सुरभ्यैरावणाभ्याश्च नमो भूत्यै नमोनमः ।
 नमस्तथोच्चैःश्रवसे ध्रुवाय च नमोनमः ॥
 नमोस्तु धन्वन्तरये शस्त्रास्त्राभ्यां नमोनमः ।
 विनायककुमाराभ्यां विघ्नेभ्यश्च नमः सदा ॥
 शाखाय च विशाखाय निगमेशाय वै नमः ।
 नमस्कन्दग्रहेभ्यश्च स्कन्दमातृभ्य एव च ॥
 ज्वराय रोगपतये भस्त्रप्रहरणाय च ।
 ऋषिभ्यो वालखिल्येभ्यः कश्यपाय नमः सदा ।
 अगस्ताय नारदाय व्यासादिभ्यो नमोनमः ॥
 अप्सरोभ्यः सोमपेभ्यो देवैर्भ्यश्च तथा नमः ।
 असोमपेभ्यश्च नमस्तुषितेभ्यो नमःसदा ॥
 आदित्येभ्यो नमोनित्यं द्वादशभ्यश्च सर्व्वशः ।
 एकादशेभ्यो रुद्रेभ्यस्तपस्त्रिभ्यो नमोनमः ॥
 नमोनासत्यदस्ताभ्यामश्विभ्यां नित्यमेव हि ।
 साध्येभ्यो द्वादशेभ्यश्च पौराणेभ्यश्च सर्व्वदा ॥
 एकौनपञ्चाशते च मरुद्गाय नमोनमः ।
 शिल्पाचार्याय देवाय नमस्ते विश्वकर्म्मणे ॥
 अष्टभ्यो लोकपालेभ्यः सानुगेभ्यश्च सर्व्वदा ।
 आयुधेभ्यो वाहनेभ्यो धर्मभ्यश्च नमः सदा ॥

आसनेभ्यो दुन्दुभीभ्यो देवेभ्यश्च नमःसदा ।

दैत्यराक्षसगन्धर्वपिशाचेभ्यश्च नित्यशः ॥

पितृभ्यः सप्तभेदेभ्यः प्रेतेभ्यश्च नमोनमः ।

सुसुक्तेभ्यश्च देवेभ्यो भावगम्येभ्य एव च ॥

नमस्ते वशुरुपायविश्रावे परमात्मने ।

अथ किं वहुनोक्तेन मन्त्रेणानेन चार्चयेत् ॥

प्राञ्जुखोदञ्जुखान्विप्रान् देवानुद्दिश्य पूर्व्ववत् ।

अथ वा किं मन्त्रविस्तारेण ब्राह्मणानेव देवतोद्देशेन
पूजयेदित्यर्थः । पूर्व्ववत् मन्त्रोक्तक्रमेणेत्यर्थः ।

अर्घैः पुष्पैश्च धूपैश्च वस्त्रैर्माल्यैः सप्तष्टकम् ।

सप्तष्टकं सरोमाञ्च हृष्टरोमा सप्तष्टयेदित्यर्थः ॥

धनधान्यान्नविभवेर्दक्षिणाभिश्च सर्व्वदा ।

इतिहासपुराणाभ्यां तद्वक्तृश्च द्विजोत्तमान् ॥

इतिहासपुराणाभ्यां तत् पुस्तकदानेनेत्यर्थः ।

कालज्ञानवेदवेदज्ञानभृत्यान् सम्बन्धि, बाम्भवान् ॥

अनेनैव तु मन्त्रेण स्वाह्वान्तेन पृथक् पृथक् ।

यविष्टायाम्नये होमः कर्त्तव्यः सर्व्वदत्तये ॥

वेदविज्ञानुषीदत्त्वा स्थाने प्राधानिके सति ।

यविष्टोऽग्निरग्निविशेषः । वेदविद्देवोक्तविधिज्ञः । चक्षुषी,
आण्यभागौ । प्राधानिके स्थाने प्रधानहोमारम्भे ।

होमारम्भे ततः कुर्यान्मङ्गलालम्बनं नरः ॥

भोजयित्वा द्विजान् सर्व्वान् सुहृत्सम्बन्धि बाम्भवान् ।

व्रतखण्डं ५ अध्यायः ।] ज्ञेमाद्रिः ।

३६५

विशेषेण च भीक्षुव्यं कार्य्येषां महीक्षवः ॥

नवसंवत्सरारम्भः सर्व्वसिद्धिप्रवर्त्तकः ।

इति ब्रह्मपुराणोक्तः संवत्सरारम्भविधिः ॥

इति श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहादेवस्य समस्तकरणा-

धीश्वर सकलविद्या-विशारद श्रीज्ञेमाद्रि पण्डित

विरचिते चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे

प्रतिपत्त्रतानि ।

अथ षष्ठोऽध्यायः ।

—०*०—

अथ द्वितीयाव्रतानि ।

ब्राह्मणस्तेजो दिनकर करस्वर्षया वर्षमानं
प्रौढं यस्य स्फुरति परितो रोदसीत्यश्रुवान् ॥
प्रांशुर्वंशो जगति विजयी यस्य हेमाद्रिनामा
वक्ति व्यक्तं क्रममुपगलं स द्वितीयाव्रतानाम् ।

शतानीक उवाच ।

ऋषेऽहं तव पृच्छामि भगवन् ब्रूहि तत्त्रतम् ।
यथा व्रतप्रभावेन स्वर्गं प्राप्नोति मानवः ॥
अस्यायासम्बहुफलं व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
प्रसादं कुरु मे देव येन व्रतं करोम्यहम् ॥

ऋषिरुवाच ।

अस्ति व्रतं महापुण्यमशून्यशयनं नृप ।
चन्द्रोदयेचार्घदानं पूजनीयो जगद्गणः ॥

शतानीक उवाच ।

कस्मिन्नासे प्रकर्त्तव्यं पक्षधैव तिथिषु का ।
किं दानं भोजनधैव कथयस्व महाप्रभो ॥

ऋषिरुवाच ।

चातुर्मास्ये भवेद्भ्राजन् वर्षायां व्रतमुत्तमम् ।
 श्रावणस्य द्वितीयायां कृष्णपक्षे नराधिप ॥
 श्रावणादि कार्तिकान्तं कुर्यात् तत्प्रतमुत्तमम् ॥
 पुष्पं धूपञ्च नैवेद्यं दीपमालाविशेषतः ।
 नानाफलं सनैवेद्यं मानारससमन्वितम् ॥
 मौक्तिकं रजतञ्चैव शङ्खं दुग्धसमन्वितम् ।
 ब्राह्मणाय प्रदातव्यं पूजनीयो जनार्दनः ॥
 ततो भाद्रपदे मासे यवदानं ददाति च ।
 दुग्धं दद्याच्च विप्राय दक्षिणाञ्च विशेषतः ॥
 दधि चैव फलञ्चैव बीजपूरसमन्वितम् ।
 जनाहं नञ्चातिभक्त्या पूजनीयो नराधिप ॥
 एवं यः कुरुते राजन् प्राप्नोति परमं पदम् ।
 ततश्चाश्विद्वितीयायां शय्यादानं विशेषतः ॥
 न तस्य शून्यं शयनमपुत्रो न भवेन्नरः ।
 जलमध्ये स्थितो विष्णुः पूजनीयो जनार्दनः ॥
 खेतपुष्पैः फलैर्वस्त्रैः सताम्बूलं सद्दक्षिणम् ।
 विप्राय भोजनं दद्यात् फलं शृणु नराधिप ॥
 एवं यः कुरुते राजन् लभते काञ्चनीं पुरीं ।
 ततश्च कार्तिके मासि द्वितीयायां नराधिप ॥
 शर्कराखण्डखाद्यानि दधिञ्चौरुतानि च ।
 उपहारं भगवते दद्यात्सर्वं प्रयत्नतः ॥

पुष्यं फलं सन्निवेशं गीतवाद्यसमन्वितम् ।
 ह्यत्रं कमण्डलुं दद्यादुपानह्वी विशिषतः ॥
 चतुर्वर्षं प्रकुर्वन्तु पुरुषाश्च तद्या स्त्रियः ।
 एवं यः कुर्वते राजन्नशून्यशयनव्रतम् ॥
 न च दुःखं न दारिद्र्यं न च कष्टं भवेत् क्वचित् ।
 न तस्य शून्या शय्या स्यादुपनी न भवेन्नरः ॥
 शोक व्याधि भयं दुःखं न भवन्ति कदाचन ।
 न भवेद्विधवा नारी निर्धना न भवेत् क्वचित् ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेन स्वर्गं प्राप्नोति मानवः ।

शतानीक उवाच ।

अत्यद्भुतं व्रतं कृष्ण न दृष्टं न श्रुतं मया ।
 अशून्यशयनं नृणां नारीणां यत् प्रकीर्तितम् ॥
 केन चेदं पुरा चीर्यं मर्त्यलोके प्रकाशितम् ।
 फलञ्च कीदृशं प्राप्तं तत्सर्व्वं कथयस्व मे ॥

ऋषिर्वाच ।

राजन् रुक्माङ्गदी नाम सत्यवादी जितेन्द्रियः ।
 कदाचिन्मृगखेटेन गतोऽसौ गहनं वनम् ॥
 भव्यं सरोवरं दृष्टं जलपूर्णं मनोहरम् ।
 हंससारस सङ्घीर्यं चक्रवाकोपशीभितम् ॥
 आसीत् बुद्बुदाकारैर्नानाऋषिसमन्वितम् ।
 तत्र ज्ञानं स ज्ञत्वा तु चलितो वनगङ्गरात् ॥

ही करी संपुटी कृत्वा गतो सी वामनाश्रमम् ।

उग्रं व्रतं चरन्वर्षपायसत्कृतवाटुषिः ॥

नमस्कारं विधायाद्य स्थितोऽसौ वामनाश्रतः ।

वामदेव उवाच ।

किं ते कार्यं समुत्पन्नं येन त्वमिदमागतः ।

वनं मे गह्वरं स्थानं पर्वतश्चातिदुर्गमम् ।

किमर्थं भवता राजन् मम पार्श्वे समागतम् ॥

कृष्णाङ्गद उवाच ।

भगवन् त्वाच्च पृच्छामि वार्त्तामेकां सविस्मयाम् ।

केन पुण्यप्रभावेन सखी धर्मोद्भूदः सुतः ॥

सन्ध्यावल्लीसमा भार्या मम प्राणस्य वल्लभा ।

सप्तहीपवती राजा मत्पुत्री नवखण्डपः ॥

केन कर्मप्रभावेन सत्यं ब्रूहि महासुने ।

वामदेव उवाच ।

अहो नृपवर्येष्ठ सत्यवादिन् जितेन्द्रियः ।

पृष्टवान् गह्वरं प्रञ्चं दुर्विज्ञेयमवृद्धिभिः* ॥

मनीशुकूला प्रवणा भार्या पुत्रश्च तादृशः ।

नम्रास्यपुण्यैः राजेन्द्र प्राप्यते पुरुषैः क्वचित् ॥

येन पुण्येन सकलं प्राप्यते भुवि मानवैः ।

तस्म्यै* शुकु भूपाल यथा राज्यन्त्वमाप्तवान् ॥

पुरा जन्मनि शूद्रस्त्वै* सत्यं न वदसि क्वचित् ।

* गह्वरं प्रचमिति पुण्यकारे पाठः ।

इत्थं कथ्यं न जानासि तव भार्या पतिव्रता ॥
 तव समीपे विप्राश्च चत्वारो वेदपारगाः ।
 सत्कर्मनिरताः चान्ता विद्वांसश्च-जितेन्द्रियाः ॥
 चत्वारो वेदधर्मज्ञास्तव ते प्रतिवेशिनः ।
 तेषां कृतवतामेतदशून्यशयनव्रतम् ॥
 शुक्ला महाफलं ङ्ङा खयाप्ये तदनुष्ठितम् ।
 अर्थं दत्त्वा तु चन्द्रस्य उदये द्वितीयादिने ।
 उदकञ्च घृतञ्चैव माषचारविवर्जितम् ॥
 प्राशनन्ते कृतं दत्त्वा ब्राह्मणाय विशेषतः ।
 चतुर्वर्षसमायुक्तं चातुर्मास्ये सदा नृप ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेन सुतो लब्धोऽभिवाञ्छितः ।
 सन्ध्यावलीसमा भार्या धर्माङ्गदसमःसुतः ॥
 अन्ये ये च करिष्यन्ति फलं सर्वं लभन्ति ते ।
 पुत्र पौत्र समायुक्तौ धन धान्य समाकुलः ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेन स्वर्गं प्राप्नोति मानवः ।
 गच्छ त्वं नृप शार्दूल भोष्यसे सकलां महीम् ॥
 जाया पुत्र समायुक्तः स्वर्गं गच्छसि नान्यथा ।

शतानीक उवाच ।

कथयस्व व्रतं देव प्रकारेण समन्वितम् ।
 उद्यापनं कथं कुर्यात्परिपूर्णं व्रतीक्षणे ॥

ऋषिर्वाच ।

चन्द्रोदये व्रतं कुर्याच्चतुर्वर्षमिदं नृप ।

आचार्यं वेदविदुषं धर्मज्ञं वरयेदथ ॥
 ऋत्विजैश्च^४ समायुक्तं ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ।
 यज्ञोपवीतं वस्त्रञ्च उपानहसमन्वितम् ॥
 सुवर्णं रौप्यमुद्राञ्च ह्यैमं कृत्वा तु वैश्रावणम् ।
 सोवर्णीं विष्णुमूर्त्तिञ्च रुक्मलक्ष्मीसमन्विताम् ।
 शय्याञ्च तुलिकाञ्चैव सप्तधान्यसमन्विताम् ॥
 गोप्रदानञ्च दातव्यमनुज्ञानी भवेन्नरः ।
 ब्राह्मणान् भोजनं दद्यात् छतपूरैः सशर्करैः ।
 एवं यः कुरुते पार्थ प्राप्नोति परमं पदम् ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तमशून्यशयनद्वितीयाव्रतम् ॥

—:—

भविष्णीत्तरात् ।

युधिष्ठिर उवाच ।

भगवन् भवता प्रोक्तं धर्मार्थादिः सुसाधनम् ।
 गार्हस्थ्यं तच्च भवति दम्पत्योः प्रियमाश्रयोः ॥
 पत्नीहीनः पुमान् पत्नी भर्ता विरहिता न च ।
 धर्मार्थकाम संसिद्धैः तस्मात् तु मधुसूदन ॥
 तच्छ्रीर्षे देव देवेश विधवा स्त्री न जायते ।
 व्रतेन वेन गोविन्द पत्न्या विरहितो नरः ॥

कृष्ण उवाच ।

अशून्यशयनां नाम द्वितीयां शृणु भारत ।
 यासुपोष्य न वैधर्म्यं स्त्री प्रयाति नराधिप ॥
 पत्नीवियुक्तश्च नरो न कदाचित् प्रजायते ।
 अत्रोपवासद्दिने न पुनरशनं नक्तं भुञ्जीतेत्यग्नेऽभिधानात् ।
 श्रिते जगत्पतिः कृष्णः श्रिया चार्चं यदा शृणु ।
 अशून्यशयना नाम तदा याद्या तु सा तिष्ठिः ॥
 उपवासेन नक्तेन तथैवायाचिते न च ।
 कृष्णपक्षे द्वितीयायां श्रावणे मासि भारत ।
 यदा श्रिते तदेयं याद्या शयनीसन्निहिता याञ्छेत्यर्घः ।
 तेन श्रावणोऽत्र पौर्णमासपक्षेण ज्ञेयः ।
 स्नानं नदीतटगणे वा शृष्टे वा नियतात्मवान् ।
 स्थण्डिलं चतुरस्रञ्च मन्मथं कारयेत्ततः ॥
 तत्रस्थं श्रीधरं श्रीशं भक्त्याभ्यर्च्य श्रिया सह ।
 नैवेद्यैः पुष्प धूपायैः फलैः कालोद्भवैः शुभैः ॥
 इदमुच्चारयेन्मन्त्रं प्रणम्य च जगत्पतिम् ।
 श्रीवत्सधारिन् श्रीकाल्म श्रीवास श्रीपतेऽब्धय ।
 गार्हस्थ्यमाप्रनाशं मे यातु धर्म्मार्थकामदम् ॥
 शुचयो माप्रणश्यन्तु मा प्रणश्यन्तु निर्जराः ।
 याम्यगा मा प्रणश्यन्तु मत्तो दाम्यत्यभेदतः ॥
 शुचयोऽन्नयः निर्जराः देवाः याम्यगाः पितरः ।
 कल्परा वियुज्यते देव न कदाचिद्यथा भवान् ।
 तथा कालत्रसम्बन्धो देव मा मे वियुज्यताम् ॥

लक्ष्मणा न शून्यं वरद यथा ते शयनं सदा ।
शय्या ममाप्यशून्यास्तु तथाच मधुसूदन ॥

विष्णुरहस्ये पुनरिमे मन्त्राः ।

पत्नी भर्तृ वियोगञ्च भर्ता भार्यासमुद्भवम् ।
नाप्नुवन्ति यथा दुःखं दाम्पत्यानि तथा कुरु ॥
यथा त्रिया वियुक्तस्त्वं लक्ष्मीर्देव त्वया यथा ।
प्रसादान्तव देवेश स्थितिरस्तु तथावयोः ॥
मात्मपुत्राः प्रणश्यन्तु मा धनं माकुलकमः ।
अनयो मा प्रणश्यन्तु गृहभङ्गीस्तु मावयोः ॥

शेषोपन्यो भविष्यीत्तरेण तुल्यार्घ्यः ।

एवं प्रसाद्य पुजाञ्च कृत्वा लक्ष्मणास्तथा हरेः ।
फलानि दद्यात् शय्यायामपीष्टानि जगत्पतेः ॥
नक्तं प्रणम्यायतने हरिं भुञ्जीत वाग्यतः ।
चन्द्रोदये ज्ञानपूर्व्यं पञ्चगव्येन संयुतम् ॥
विप्राय दक्षिणां दत्त्वा स्वशक्त्या फलसंयुतम् ।

हरिं प्रक्षम्य नक्तं भुञ्जीतेत्यन्वयः ।

अनेन विधिना राजन् यावन्मासचतुष्टयम् ।
कृष्णपक्षे द्वितीयायां प्रागुक्तविधिनाचरेत् ॥
कार्तिकेत्वथ संप्राप्ते शय्यां श्रीकान्तसंयुताम् ॥
सोपस्करां सोदकुम्भां साक्षां दद्यात् द्विजातये ।
प्रतिमांसञ्च सोमाय अर्घं दद्यात्समन्वकम् ॥

दध्यद्यतेर्मूलफलैः रत्नैः सौवर्णभाजनैः ।

गगनाङ्गणसम्भूत दुग्धाश्विमद्यनोद्भव ॥

भाभासितद्विगाभोग रमागुज नम्रीस्तुते ।

ब्राह्मणाय द्वितीयेऽङ्कि शक्त्या देया च दक्षिणा ॥

यानि तत्र महाबाहो काले सन्ति फलानि च ।

फलानि दद्यात् शय्यायामित्यनेन सामान्येनोपात्तफलानां
यानीत्यादिना विशेषाभिधानं ।

मधुराणि न तीव्राणि न चापि कटुकानि च ।

दातव्यानि नृपश्रेष्ठ स्वशक्त्या शयने नृप ॥

मधुराणि च दस्वा तु मनोवृत्तभतां व्रजेत् ।

तस्मात् कटुकतीव्राणि स्त्रीलिङ्गानि च वर्जयेत् ।

अर्जुं र मातुलङ्गानि स्थितेन गिरसा सह ।

फलानि शयने राजन् यन्नभागं हरस्य तु ॥

स्थितेन गिरसा सह नालिकेरं यथास्थितं वर्जयेत् । अन्त-
र्गोत्रं दद्यात् हरस्य यन्नभागं वर्जयेत् । रुद्र प्रीत्यर्घं कतिचि-
दवशेष परितस्यजेदित्यर्थः ।

एतान्येव तु विप्राय गाङ्गेयसहितानि च ।

द्वितीयेऽङ्कि प्रदेशानि भक्त्या शक्त्या च भारत ॥

वासीदानं तथा धान्यफलदानसमन्वितम् ।

एतान्येव यानि शयने दत्तानि गाङ्गेय मत्र सुवर्णम् ।

एवं करोति यः सम्यक् नरोमासचतुष्टयम् ।

तस्य जन्मत्रयं वीर गृहभङ्गी न जायते ॥

मासचतुष्टयं कृष्णद्वितीयास्त्रितिशेषः ॥

बोधिन्यनन्तर द्वितीयायां समाप्तिरित्यर्थः ।
 तस्य जन्मत्रयं वावत् गृहभङ्गी न जायते ।
 अग्रन्यशयनस्यैव धर्मकामार्घसाधकः ॥
 भवत्यव्याहृतैः श्रेयैः पुत्रसौ नात्र संशयः ।
 नारी च पार्थ धर्मज्ञा व्रतमेव यथाविधि ॥
 या करोति न सा शोभा बन्धुवर्गस्य जायते ।
 वैधव्यं दुर्भगत्वञ्च भर्तृत्यागञ्च सत्तम ॥
 प्राप्नोति जन्मचितयं न सा पाण्डु कुलीङ्गह ।
 एषाञ्च शून्यशयना नृपते द्वितीया
 ख्याता समस्त कलुषापहरा द्वितीया ।
 एनां सदाचरति यः पुत्रसौऽथ योषित्
 प्राप्नोत्यसौ शयनमन्यमहाहर्भोगम् ॥
 पद्मपुराणे तु तदेव सकलं मन्त्रादिकमभिधाव
 शङ्कर उवाच ।
 गीत वादिन निर्घोषैर्देव देवस्य कारयेत् ।
 घण्टावादनशक्तस्य सर्वदेवमयीं नमः ॥
 एवं संपूज्य गोविन्दमग्नीयात्तैलवर्जितम् ।
 नक्तमक्षारलवणं यावत्तस्याञ्चतुष्टयम् ॥
 यासुपोष्येति तु तैलादिवर्जनाद्द्विवाभोजनवर्जनाथ ।
 ततः प्रभाते सञ्जाते लक्ष्मीपतिसमन्विताम् ।
 दीपान्नभोजनैर्युक्तां शय्यां दद्याद्द्विचक्षुषः ॥
 पादुकीपानहृच्छ्वेत् चामस्तसनसंयुताम् ।
 तथाभरणं धान्यैश्च यथा शक्त्या समन्विताम् ॥

अथ्वङ्गाङ्गाश्च विप्राय वैष्णवाय कुटुम्बिने ॥
 दातव्या वैद्विदुषे न वक्रव्रतिने क्वचित् ।
 तत्रोपवेष्टुं दाम्पत्यमलङ्कृत्य विधानतः ॥
 परन्त्याश्च भोजनं दद्याद्भोज्यसमन्वितम् ।
 ब्राह्मण्यापि सौवर्णीसुपस्करसमन्विताम् ॥
 प्रतिमां देव देवस्य सोदकुम्भां निवेदयत् ।
 एवं यस्तु पुमान् कुर्व्याद्ग्रन्थग्रयनं व्रतम् ॥
 न तस्य विपश्चिरश्चः कदाचिदपि जायते ।
 नारी वाविधवा ब्रह्मन् यावच्चन्द्रार्कतारकम् ॥

मत्स्यपुराणात् ।

न विरूपं न शोकार्त्तं दाम्पत्यं जायते क्वचित् ।
 न पुत्रपशुरन्नानि क्षयं यान्ति नृपोत्तम ॥
 समकल्प सहस्राणि समकल्पगतानि च ।
 कुर्वन्ग्रन्थग्रयनं विष्णुलोके महीयते ॥

भविष्यत्पुराणे ।

अग्रन्थग्रयनं तस्य धर्मं कामार्थं साधकम् ।
 भवत्यव्याहृतैर्धर्मैः पुरुषो नात्र संशयः ॥
 नारी च राजन्धर्मिणा व्रतमेतद्यथा विधि ।
 या करोति न शोच्यासौ बन्धुवर्गस्य जायते ॥
 वैधर्म्यं दुर्भगत्वञ्च भर्तृत्यागञ्च सप्तम ।
 नाप्नोति जन्मचितयमेतत् कृत्वा महाव्रतम् ॥

इत्येषा कथिता राजन् द्वितीया तिथिरुत्तमा ।
यामुपोष्य नरो राजन्वृद्धिर्हि स्वयं व्रजेत् ॥

इति अशून्यशयनद्वितीयाव्रतम् ।

—:—

ब्रह्मा उवाच ।

ब्रह्माण्यश्च द्वितीयायां संपूज्य ब्रह्मचारिणम् ।
भोजयित्वा तु विधिना सर्वासां पारगो भवेत् ॥
मूलमन्त्राः स्वसंज्ञाभिरङ्गमन्त्राय कीर्त्तिताः ।
पूर्ववत्पद्मपत्रस्यः कर्त्तव्यश्च तिथीश्वरः ॥

तिथीश्वरो ब्रह्मा ।

गन्ध पुष्पोपहारैश्च यथा शक्त्वा विधीयते ।
पूजाऽऽश्राटेन श्राटेन कृतापि च फलप्रदा ॥
आज्यधारा समिद्धिश्च दधि क्षीराक्ष माक्षिकैः ।
पूर्वींस्त फलदोहोमः कृतः शान्तेन चेतसा ॥
एतद्गतं वैश्वानरप्रतिपत् व्रतवत् व्याख्येयम् ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं ब्रह्मव्रतम् ।

अगस्त्य उवाच ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि क्लान्तिव्रतमनुत्तमम् ।

(४८)

द्वितीयायान्तु राजेन्द्र कार्तिकस्य सिते दिने ॥

नक्तं कुर्वीत यत्नेन अश्वं येदलकेशवी ।

बलदेवाय पादौ तु केशवाय गिरोऽर्चयेत् ।

एवमभ्यर्थं मेधावी वैष्णवं रूपमुत्तमम् ॥

परस्वरूपं सोमाख्यं द्विकलन्तद्दिनेऽर्चयेत् ।

सोमरूपं विष्णुरूपं कृत्वा तस्य पादौ बलदेवायेत्यर्चयेत् ।

शिरः केशवायेति एवमङ्गद्वयमभ्यर्थं शेष रूपमर्चयेत् । तद्दिने

द्वितीयादिने द्विकलं तत् द्विकले यस्य तत् द्विकले बलदेवकेशवाख्ये

निष्कहानुयहशक्ती व्यक्ते भवतः ।

दद्याद्धर्षश्च मतिमान् मन्त्रेण परमेष्ठिनः ।

परमेष्ठिनः चन्द्ररूपस्य विष्णोः तमेव मन्त्रमाह ।

नमस्त्वमृतरूपाय सर्वोपधिधराय च ।

यज्ञ लोकाधिपतये सोमाय परमात्मने ॥

अनेन खलु मन्त्रेण दत्त्वाध्यं शशिने नृप ।

रात्रौ स विप्रो भुञ्जीत यवाद्यं सष्टतं नृप ।

स विप्रः स ब्राह्मणस्तेन ब्राह्मणाय भोजनं हुत्वा स्वयं भीक्ष-

त्र्यमित्यर्थः सिद्धयति ।

फाल्गुनादि चतुष्कान्तु पायसं सष्टतं शुचिः ।

तिक्तहीमं प्रकुर्वीत कार्तिकादौ यवैस्तथा ॥

आषाढादिचतुष्के तु छतद्हीमञ्च कारयेत् ।

नक्तं तिक्तान्नं भुञ्जीत एष एव विधिक्रमः ॥

कार्तिकादिचतुष्के यवाद्यं भुञ्जीतेत्यर्थसिद्धम् ।

अतः संवत्सरे पूर्णे सोमं कृत्वा तु राजतम् ॥

सितवस्त्र युगच्छन्नं सितपुष्पानुलेपनम् ।
 एवमेव द्विजं पूज्य ततस्तं प्रतिपादयेत् ॥
 कान्तिमानश्वलोके तु सर्वज्ञः प्रियदर्शनः ।
 त्वत्प्रसादात्सौम्यरूपी नारायणनमोऽस्तु ते ।
 अनेन खलुमन्त्रेण दत्त्वा विप्राय वाच्यतः ॥
 कृतमात्रे ततस्तस्मिन् कान्तिमान् जायते नरः ।
 आत्रेयेषापि सोमिन कृतमेतत् पुरा नृप ।
 तस्य व्रतान्ते तन्तुष्टः स्वयमेव जनार्दनः ॥
 इति वराह पुराणोक्तं सोद्यापनं कान्तिद्वितीयाव्रतम् ।

श्रीकृष्ण उवाच ।

कथयामि परं पार्थ सर्वविघ्नोपशान्तिदम् ।
 शुशुब्धाभिनवस्येन्दोरर्घ्यदानविधिं परम् ॥
 रवेर्हार्दशभिर्भागैर्वार्ष्यां दृश्यते शशी ।
 प्रदोषसमये पार्थ अर्घ्यं दद्यात्तथा विधोः ।
 चन्द्रात् हादश भागान्तरिते भूर्ध्वे अर्घ्यं दद्यात् प्रतिपद्यु-
 तायां द्वितीयायामित्यर्थः ।

द्वितीयायां सितेपत्रे सन्ध्याकाले ह्युपस्थिते ।
 संस्थाप्याभिनवं चन्द्रं रूप्यं गोमयमण्डले ॥
 रोहिणीसहितं देवं चन्दनेनाभिलेखयेत् ।
 पुष्पचन्दन कर्कशु फलैस्तन्दुल मिश्रितैः ।
 दूर्वाद्गुरै रत्नवरैः फलेर्वस्त्रैश्च पाण्डुरैः ॥
 मन्त्रे षानेन राजेन्द्र अर्घ्यं दद्याच्चत्वारः ।

कर्कशु फलानि बदराणि ।

नवो नवोसि मासान्ते जायमानः पुनः पुनः ।
 आप्यायस्वसमेत्येवं सोमराज नमोऽस्तुते ॥
 अनेन विधिनाचार्यं सर्वकामं फलप्रदम् ।
 यः प्रयच्छति सोमाय मासि मासि समाहितः ॥
 सर्वकामानवाप्नोति दीर्घमायुषं विन्दति ।
 दत्त्वार्यं विप्र सहितः श्राव्यन्नं क्षीरसंयुतम् ॥
 नक्तं भुञ्जीत कोन्तेय प्रसन्नवदनेक्षणः ।
 युक्तःसुक्रीर्त्वा यशसा काम्या पुष्ट्या च मानवः ॥
 पुत्र पौत्रैः परिवृतो गोधान्धधनसङ्कुलः ।
 स्थित्वा वर्षशतं मर्त्ये मृतः शशि पुरं व्रजेत् ॥
 तत्रास्ते दिवि दिव्यास्तु भोगान् भुञ्जन्वृपोत्तमः ।
 वरस्त्रीभिः सहात्यर्थं यावदाभूतसंप्रवम् ॥
 सर्वां समृद्धिमतुलां यदि वाञ्छसि त्वं
 मासानु मासमिह महचनं कुरुष्व ।
 सोमस्य सोम कुलनन्दन चन्दनाद्यै
 रर्घ्यं प्रयच्छ नवजातनवोदितस्य ॥

इति भविष्योत्तरे नवोदितचन्द्रार्घ्यदानविधिः ।

—:०:—

मार्कण्डेय उवाच ।

इमां तत्रान्यां वक्ष्यामि द्वितीयां सर्वकामदाम् ॥

यामुपोष्य नरः कामान् सर्वानाप्नोत्यभोषितान् ।

चैत्रशुक्लद्वितीयायां संप्राप्य नृप मानवः ॥

दिनावसाने कुर्वीत सम्यक् ज्ञानं नदीजले ।

बालेन्दुमण्डलं कृत्वा पूजयेच्छेतवर्णकैः ॥

श्वेतैः पुष्पैः फलैश्चैव परमाग्नेन भूरिणा ।

इक्षुणेक्षुविकारैश्च शुभ्रेण लवणे न च ॥

दिनावसाने देवेशं पूजयेद्वा निशाकारम् ।

अथवा मण्डलं कृत्वा गगनस्थं प्रपूजयेत् ॥

घृतेन हवनं कृत्वा नक्तं भुञ्जीत वाग्यतः ।

नाम मन्त्रेण पूजा होमौ ततस्तैलेन पचितं भक्षयेत् स
दैवतत् । तैलपक्कं संवत्सरं वर्जयेत् ।

एतद्भूतं नरः कृत्वा सम्यक् संवत्सरं शुचिः ।

सौभाग्यं महदाप्नोति स्वर्गलोकं स गच्छति ॥

एतत्पवित्रं रिपुनाशकारि

सौभाग्यदं रोगहरश्च राजन् ।

प्राक्तं व्रतं यादववंशमुख्य

कार्यं प्रयत्नेन तथा स्त्रियापि ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरे बालेन्दु द्वितीया व्रतम् ।

—:○:—

कृष्ण उवाच ।

रूपं सुरूपं यो वाञ्छेत्सौभाग्यं प्रवराः स्त्रियः ।

कार्तिके शुक्लपक्षे तु द्वितीयावां नराधिप ॥
 पुष्याहारो वर्षभेकं वसेत्सनियतात्मवान् ।
 कार्तिकशुक्लपक्षे द्वितीयायां व्रतमारभ्यान्यासपि शुक्लपक्षे
 द्वितीयास्त्रेव वर्षपथ्यन्तं पुष्याहारी व्रतं कुर्यादित्यर्थः ।
 काल प्राप्तानि यानि स्युर्हविष्यकुसुमानि तु ॥
 भुञ्जीत तानि दस्वा तु ब्राह्मणेभ्यो नराधिप ।
 हविष्य कुसुमानि पूजार्हाणि भक्षये चाविरुद्धानि । अग्नि-
 नोचात्र नाममन्त्रेण पूजनीयौ तयोः फलदाढत्वेन श्रवणात् ।
 सुवर्णस्य च पुष्याणि गवा सह ददाति दः ।
 व्रतान्ते तस्य सन्तुष्टौ देवौ त्रिभुवनेश्वरौ ॥
 दद्युः कामांस्तथा दिव्यान्विमानमपि तैजसम् ।
 सुचिरं देवनारीभिर्लोकं रमयताग्निनौ ॥
 इह चागल्य कल्पान्ते द्विजोविप्रपुरस्कृतः ।
 वेदवेदाङ्गविद्वान् स्यात् सप्तजन्मान्तराण्यसौ ॥
 दाता दान्तमतिर्वाग्मी अग्निधिव्याधिविषर्जितः ।
 पुत्रपौत्रैः परिहृतः सह पत्न्या रमेश्विरम् ॥
 मध्यदेशे सुरम्ये च धर्मिष्ठे राज्यभाग्भवेत् ।
 कथिता ते मया तुभ्यं द्वितीया पुष्यसंज्ञिता ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं पुष्यद्वितीयाव्रतम् ।

—:○:—

ज्ञानुत्तराच ।

सम्बन्धास्तद्वयः पार्थ द्वितीयाद्याश्च विन्दुताः ।
 मासैश्चतुर्भिश्चतस्रः प्रावृट्काले महामहाः ॥

गोपतास्त्रिभयः पार्थ न प्रोक्ताश्च मया क्वचित् ।
 प्रकाशयामि ताः सम्यक् शुभु सर्वाः समाहितः ॥
 प्रथमा आवणे मासि तथा भाद्रपदे परा ।
 तृतीयाश्वपूजे मासि चतुर्थी कार्तिके भवेत् ॥
 आवणे कलुषा नाम तथा भाद्रे च गोर्भला ।
 आश्विने प्रेतसञ्चारा कार्तिके याम्यका मता ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

कस्मात् सा कलुषा प्रोक्ता कस्मात्सा गोर्भला मता ।
 कस्मात्सा प्रेतसञ्चारा कस्माद्यास्या प्रकीर्तिता ॥

कण्व उवाच ।

पुरा व्रतवधे वृत्ते प्रातराज्ये पुरन्दरे ।
 ब्रह्महत्यापनोदार्थमश्वमेधे प्रवर्तिते ॥
 क्रीडादिन्द्रेण वज्रेण ब्रह्महत्या निरूदिता ।
 षड्विधा सा क्षिती क्षिप्ता वृक्षतोयमङ्गीतले ॥
 नारी, ब्रह्महणे, वक्रो संविभज्य यथा क्रमम् ।
 तत्पापं आवणे व्यूढं द्वितीयायामिनोदये ॥
 नारीं वृक्षं नदीं भूमिं वक्रिं ब्रह्महणं तथा ।
 निर्मलीकरणं जातमतीर्थं कलुषा क्षृता ॥
 मधुकैटभयोरक्ते पुरामग्ना हि मेदिनी ।
 अष्टाङ्गुलाऽपवित्रास्मात्नारीणान्तु रजोमलम् ॥
 नद्यो जलमलाः सर्वा वक्रैर्धूमगिखामलम् ।
 कलुषाणि चरन्त्यस्यां तेनैषा कलुषा मता ॥

चरन्ति कृत प्रायश्चितान् परिवर्ज्या कृतप्रायश्चितान् यद्द्वीतं
विचरन्ति । अतएव तस्यां प्रतिसंवत्सरं किञ्चित् प्रायश्चित्तं
कर्त्तव्यम् ।

गीर्गिरां भारतीवाणी वारामेधा सरस्वती ।
गीर्भलं बहते यन्मा द्वितीया गीर्भला मता ॥
देवर्षि पितृधर्माणां निन्दका नास्तिकाः गठाः ।
तेषां सा वाम्मलं व्यूढा द्वितीया तेन गीर्भला ॥
अनध्यायेषु शास्त्राणि पाठयन्ति पठन्ति च ।
शाब्दिकास्तार्किकाः त्रीतास्तेषां ये शब्दजा मलाः ॥
ते च व्यूढा द्वितीयायां ततोर्ध्वं गीर्भला च सा ।
अतस्तस्यां सरस्वती पूजा कार्येत्यर्थः ।
प्रेतास्तु पितरः प्रोक्तास्तेषां तस्यां तु सञ्चरः ।
द्वितीयायाञ्च लोकेषु तेन सा प्रेतसञ्चरा ॥
अग्निव्यत्ता बर्हिषद् आज्यपाः सोमपास्तथा ।
पितृन् पितामहान् प्रेतान् सञ्चारात् प्रेतसञ्चराः ॥
पुत्रैः पौत्रैश्च दौहित्रैः स्वधामन्त्रैस्तु पूजिताः ।
आह्वदान मन्त्रैस्तृप्ता यान्त्यतः प्रेत सञ्चरा ॥
अतस्तस्यामपि आह्वं कर्त्तव्यमित्यर्थः ।
कार्तिके शुक्लपक्षस्य द्वितीयायां युधिष्ठिर ॥
यमो यमुनया पूर्वं भोजितः स्वष्टहे^० सदा ।
द्वितीयायां महोत्सर्गं नारकीयाय तर्पिताः ॥
पापेभ्योपि विमुक्तास्ते मुक्ताः सर्वनिवन्धनात् ।

भ्रंशिताद्यातिसन्तुष्टाः स्थिताः सर्वे यदृच्छया ।
 तेषां महोत्सवो वृत्तो यमराष्ट्रसुखावहः ॥
 अतो यमद्वितीया सा प्रोक्ता लोके युधिष्ठिर ।
 अस्यां निजगृहे पार्श्वे न भोक्तव्यमतोवृधैः ॥
 स्नेहेन भगिनीहस्ताङ्गोक्तव्यं पुष्टिवर्धनम् ।
 दानानि च प्रदेयानि भगिनीभ्योविधानतः ॥
 स्वर्णालङ्कारवस्त्राणि पूजा सत्कारभीजनैः ।
 सर्वाभगिन्यः संपूज्या अभावे प्रतिपन्नकाः ॥

प्रतिपन्नकाः, मित्रभगिन्य इत्यर्थः ।

पितृव्यभगिनीहस्तात् प्रथमायां युधिष्ठिर ।
 मातुलस्य सुताहस्तात् द्वितीयायां तथा नृप ॥
 पितुर्मातुःस्वसुः कन्ये तृतीयायां तयोः करात् ।
 भोक्तव्यं सहजायाश्च भगिन्या हस्ततः परम् ॥
 पितृव्यभगिनी, पितृव्यसम्बन्धेन भगिनी पितृव्यकन्येत्यर्थः ।
 सर्वस्वभगिनीहस्ताङ्गोक्तव्यं वसववर्धनम् ॥
 धन्यं यशस्यमायुष्यं धर्मकामार्थसाधकम् ।
 व्याख्यातं सकलं पार्श्वे सरहस्यं मया तव ॥
 यस्यां तिष्ठौ यमुनया यमराजदेवः
 सम्भोजितः प्रतिजगत्स्वसुसौन्दरेन ।
 तस्यां स्वसुत्तरतलादिह यो भुनक्ति

● यत्ने नभगिनी हस्तादिति पुलकाकारे पाठः ।

† पुष्टि वर्धनमिति पुलकाकारे पाठः ॥

प्राप्नोति रत्नशुभगन्धनमुत्तमं सः॥

इति भविष्योत्तरे यमद्वितीयाव्रतम् ।

—:—

सनत्कुमार उवाच ।

अनन्तरं द्वितीयायां यत्कार्यं तच्छृणुष्व मे ।

सर्वविद्याप्रदं पुण्यं बुद्धिप्रभवदोषहृत् ।

सुखातः कृतजप्यञ्च कृतपुष्पाङ्गिकक्रियः ।

ब्रह्मचारी जितक्रोधो जितवाकायमानसः ॥

मण्डलं चतुरस्रन्तु कुर्यात्तच्छेततण्डुलैः ।

तन्मध्येऽष्टदलं पद्मं विधाय कुसुमोत्करैः ॥

कर्णिकायां त्रियं देवीं पद्महस्तां हरिप्रियाम् ।

पद्माननां पद्मनेत्रां पद्मकिञ्चलसन्निभाम् ॥

सरस्वती रति-भूति-दान्तिः कान्तिश्च सर्वदा ।

मैत्रीविद्येति चाख्याता दिव्यास्तासाष्टशक्तयः ॥

तद्वलेषु यथायोगं न्यसेदष्टसु योजिताः ।

तत्तदाद्यर्षयुक्तेन नाममन्त्रेण पूजिताः ॥

तत्तदाद्यर्षयोगिनेति, तत्तन्नामादिवर्णकृतमन्त्रेणेत्यर्थः यथा
सं सरस्वत्यैनम इति एवं वक्ष्यमाणेष्वपि ज्ञेयम् ।

पद्मां मेधां प्रभां सत्वा, मुत्तरस्यामितिक्रमात् ।

अरेद्विद्विच्चु छायाद्या मित्रवर्णाः पृथक्पृथक् ॥

‡ शुभमन्त्रमुत्तमं च इति क्वचित् वाक्यः ।

गन्दी दक्षोऽदृषः सिद्ध इति दिक् पतयः क्रमात् ।
विष्णुः शेषोदरुचण्ड इति क्रीणाधिपाः क्षताः ॥
धारपाला कृष्टिवाष्टौ दिक्षु वै हन्मयः क्षिताः ।

हन्मयः दिशि ही ही ।

वक्रतुण्डो महादंष्ट्रो नीलजिह्वा वृहस्पतिराः ॥
क्रोधेक्षणे दीप्तमुखो दीप्ताक्षः काल इत्यपि ।
शङ्ख-पद्मनिधौ-दिक्षु-पङ्कजोपरि संक्षरेत् ॥
दिक्षु प्रतिदिशं निधिदयम् ।
व्यासः क्रतु-र्षभ-र्ष-च-वत्वारो गुरवः क्षृताः ॥

‘दिक्षु, इत्यनुवर्त्तते ।

अर्चिर्द्युमत् कविः काण्ड इति दिक्क्रीणतः क्षिताः ॥

‘दिक्रीणतो, विविक्षु ।

वशिष्ठो वामदेवश्च जीमूतश्च पराशरः ।
शाण्डिलकोदरः कान्तो मित्रइत्यपि विश्रुताः ॥
एवमादि सुसंयुक्तां मण्डलं कारयेत् सुधीः ।
चन्दनागुरुधूपेन श्वेतपुष्पैः समर्चयेत् ॥
पायसश्च पयःसिद्धं निवेद्य च यथोदयम् ।
श्रीलता पद्म क्लृप्तमैः श्वेतपुष्पैश्च तण्डुलैः ॥
फल पुष्पदलैर्विष्णैः नन्द्यावर्त्तप्रसूनकैः ।
जाति केशर पुष्पैश्च मल्लिका चम्पकौड्रवैः ॥

श्रीलता पद्मिनी, पद्मन्तु पुष्पं क्लृप्तमन्तु केशरन्तयोः पृथक्-
27-2

पह्यं फलाधिकार्यं । सितं पुण्डरीकं नन्दावर्तं तगरं केसरो
बकुलः, मल्लिका सुपुरकः ।

श्रीबीजिन यथा योगमर्चयेद्दीम्बरप्रियाम् ।
हारपालान् वहिषाष्टौ दिक्षु वै द्वादशस्थिताः ॥
वक्रतुण्डो महादंष्ट्रो नीलजिह्वो वृहच्छिराः ।
क्रोधेक्षयो दीप्तमुखो दीप्ताक्षः कालहृत्पापि ॥
शङ्खपद्मनिधी दिक्षु पङ्कजोपरि संस्मरन् ।
व्यासः क्रतु-मुनि-दक्ष-सत्वारी गुरवः स्मृताः ॥
शक्तीषु तत्तन्मन्त्रेण सर्व्वभैवं विधिःकृतः ।
प्रातरेवं विधिः कार्थ्यो नापराङ्गे कदाचन ॥
एवमभ्यर्च्य विधिना देवीं शक्त्यादिसंयुताम् ।
प्रदक्षिणं नमस्कारान् स्तोत्रालापादि कारयेत् ॥
श्रीसूक्तमन्यसूक्तानि वैष्णवानि च कीर्त्तयेत् ।
'श्रीसूक्तं, हिरण्यवर्णा हरिणीमित्यादि प्रसिद्धम् ॥

'अन्यसूक्तानि, पुरुष सूक्तानि ।

एवं समाप्य विधिवत्प्रथ्यामथानन्यधीः ।
गामन्नगामुदकुम्भश्च गुरुभ्यः प्रतिपादयेत् ॥
गामन्नगामिति गौर्ध्वः, अथ्वा धेनुः, ह्रवधेनू प्रतिपादयेदित्यर्थः ।
लाजापूर्णाणि पात्राणि तिलपूर्णाणि पञ्च च ।
हरिद्राचूर्णपूर्णाणि योषिद्वा प्रतिपादयेत् ॥
दद्यात् कुटुम्बिने हेम, अक्षं हि क्षुधिताय च ॥

अत्रं रिक्ताय दाययेत् रिक्ताय क्षुधिताय इति पुस्तकाकारे पाठः ।

अथ विद्याप्रदं शिष्यं आचार्यमभिवाद्य च ॥
 देहि विद्यां प्रपन्नायेत्यर्थयेत विचक्षणः ॥
 एवमभ्यर्चितः पूर्वमाचार्यो देवसन्निधौ ।
 विद्यामुपदिशेत्तस्मै शिष्याय व्रतचारिणे ॥
 नियमो विद्याधिगतिकारणम् ।
 सम्यगुक्तो मया ब्रह्मन् येन पारम्यसृष्टति ।
 पारम्यं परमता

यो विद्या वा कुलभूतिसुखैः ।

प्राप्तुं पदम्वा परमस्य पुंसः

इत्थं द्वितीयानियमप्रभाव

प्राप्तात्मविद्यः स परं समैति ॥

इति गारुड पुराणोक्तं विद्याव्रतम् ।

—:—

दद्यात्सितद्वितीयायामिन्दोर्लवणभोजनम् ।

समाप्ते गोप्रदी याति विप्राय शिवमन्दिरम् ॥

त्रिप्राथ लवणभोजनं दद्यादित्यन्वयः । सोमश्चात्र देवानां
 सोमव्रतमिदं स्मृतमिति सोमस्य देवतात्वं गम्यते ।
 कल्पान्ते राजराजस्य सोमव्रतमिदं स्मृतम् ।

इति पद्म पुराणोक्तं सोमव्रतम् ।

—:—

पुष्कर उवाच ।

पौषशुक्लद्वितीयायां गवां ऋद्धीदकेन तु ।

ज्ञात्वा शुक्लाम्बरो भूत्वा सूर्योत्पत्तिसमुपागते ॥

वाल्लेन्दोः पूजनं कृत्वा गन्धमाल्यागुलेपनैः ।

दीप धूप नमस्कारैस्तथाचैवान्नसम्पदा ॥

दध्ना च परमाग्नेन गुडेन लवणेन च ।

पूजनैर्ब्राह्मणानाञ्च पूजयित्वा निशाकरम् ॥

सोमरूपं कान्ति द्वितीयायां नाममन्त्रेण पूजा यावदस्तं न
यातीन्दुस्त्वावदेव समाचरेत् ।

आहारं गोरसप्रायमधःशायी निशाकरयेत् ।

एवं संवत्सरे पूर्णं सोम्ये मासि द्विजोत्तम ॥

एवमिति प्रतिमासं शुक्लद्वितीयायां-सूर्यचन्द्रपूजनं विधिनेत्यर्थः ।

‘सौम्यो, मार्गशीर्षः ।

वाल्लेन्दोः पूजनं कृत्वा पूर्वस्मृतिविशेषतः ।

वाससी रसकुम्भश्च काञ्चनश्च द्विजात्तये ॥

दत्त्वा तु पूर्ववद्ब्रह्मणा व्रतपारगतो भवेत् ।

पूजा, भोजनं, पूजयेत् ।

व्रतारम्भ इति, गोरसः ।

श्रीरादि ।

व्रतेनानेन धर्मज्ञो रोगमेवं व्यपोहति ।

सोभाग्यमाप्नोति तथा पुष्टिञ्च मनुजोत्तम ॥

कामं समाप्नोत्यथचैकमिष्टं

यशस्तथाग्यं प्रचुरं स धर्मम् ।

अभ्यासतस्तस्य समस्तकामान्
नरस्तद्याप्रोत्थय वापि नारौ ॥

इति विष्णु धर्म्मोत्तरारोग्यद्वितीयाब्रतम् ।४

—:—:—

मार्कण्डेय उवाच ।

पुरुषः प्रकृतिथीभौ जगत्सर्व्वं प्रकीर्त्तितम् ।

अग्नीषोमात्मकं सर्व्वं तथा तच्च प्रकीर्त्तितम् ॥

वासुदेवश्च लक्ष्मीश्च तावेव परिकीर्त्तितौ ।

चैत्रशुक्ल द्वितीयायां सोपवासो जितेन्द्रियः ॥

पुरुषेण च सूक्तेन वज्रिं संपूजयेन्नरः ।

सोपवास इति प्रतिपदि कृतोपवासो द्वितीयायां वज्रिं
पूजयेदित्यर्थः । उपरिष्ठाच्च क्षीरं प्लुत भोजनस्य विहितत्वात् ।

गन्धमात्य नमस्कार दीप धूपान्न सम्पदा ।

लक्ष्मीश्च वरदं देवं पूजयेदुदकंहरिम् ॥

श्रीसूक्तेन च धर्मन्म तथा चैत्रशुक्लौत्तमम् ।

हरि सोमौ वज्रिं जलकुम्भश्च प्रतिष्ठाप्य पुरुषमग्निं वासु-
!वश्चैकोपरि पूजयेत् ।

काञ्चनं रजतं ताम्रं दद्यात् विप्रेषु दक्षिणाम् ।

प्राणयात्रां बुधः कुर्वीत् क्षीरेण सष्टतेन च ॥

प्राणयात्रामिति, प्राणनिव्वहणम् ।

संवत्सरमिदं कृत्वा व्रतं सम्यगुपोषितः ।

सुच्यते पातकैः सर्वैर्भौक्षोपायश्च विन्दति ।

कामानवाप्नोत्यथ वाञ्छितांश्च
 लोकांश्च पुण्यान् वसुधांसमयां ।
 विरूपवान् रूपमद्यापि वाञ्छुं
 यद्यस्ताद्यान्तनयांश्च सुख्यान् ॥

इति श्रीविष्णु धर्मात्तरोक्त प्रकृतिपुरुषद्वितीयाव्रतम् । ३२

—:—

मार्कण्डेय उवाच ।

नासत्यो देवभिषजावश्विनो परिकीर्त्तितौ ।
 ताविव कथितौ लोके सूर्यताराधिपो नृप ॥
 अश्वयानरतौ यस्मादश्विनो परिकीर्त्तितौ ।
 चैत्रशुक्ल द्वितीयायां सोपवासी जितेन्द्रियः ॥
 नासत्यो देवभिषजौ पूजयेत् प्रयतः शुचिः ।
 गन्धमाख्यानमस्कारधूपदौपान्न सम्यदा ॥
 कृत्वा च रूपनिर्भाणं नासत्यो पूजयेन्नरः ।
 नासत्यमूर्त्तिस्तु विश्व कर्मात्मा
 दिशुजौ देवभिषजौ कर्त्तव्यावश्ववाहनौ ।
 तयोरोषधयः कार्या दिव्या दक्षिणहस्तयोः ॥
 वामदोः पुस्तकौ कार्या दर्शनीयौ तथा द्विजाः ।
 ह्यौपमाळां तथा दद्यात्तयोर्निशि विशेषतः ॥
 कानकं रजतं चीमे दद्याद्विप्रेषु दक्षिणाम् ।
 स-पूज्य तत्रयुगलं विष्णोः संवत्सरं ततः ॥

प्रदीप्ततेजा भवति चक्षुषाञ्चैव जायते ।
प्राणयात्रान्तु कुर्वीत दध्ना हृतयुतेन च ॥
नेत्र व्रतं द्वादश वक्षराणि
कृत्वा भवेद्भूमिपतिः प्रतीतः ।
ततः* सुरूपोऽरिगणप्रमाथी
धर्माभिरामो नृपवर्गसुख्यः ॥

इति विष्णु धर्मोत्तरे नेत्र व्रतम् ।



इति श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहादेवस्य समस्तकरणाधीश्वर
सकल-विद्या-विशारद श्रीहेमाद्रिविरचिते चतुर्वर्ग-
चिन्तामणौ व्रतखण्डे द्वितीयाव्रतानि ।

● चतुर्वर्गोऽरिगण प्रमाथीति पुस्तकान्तरे पाठः ।

अथ सप्तमोऽध्यायः ।

—:○:—

अथ तृतीयाव्रतानि ।

परोपकाराय गृहीतदृष्टिः

‡सर्व्वं च भूतेषु समानदृष्टिः ।

हेमाद्रिं राख्याति पुराणदृष्टं

कृती तृतीयाव्रतजातमिष्टम् ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

चैत्रे भाद्रपदे माघे रूपसौभाग्यसौख्यदम् ।

तृतीयाव्रतं † मेतन्मे कृत्वा कश्चात् कौचित्तम् ॥

क्लिमहं भक्तिरहितः त्रयीमार्गातिगोऽसुवा ।

सुप्रसिद्धं जगत्स्वित् गोपितं केन हेतुना ॥

कृष्ण उवाच ।

भवान् धर्मार्थकुशलः सर्व्वं च इति मे मतिः ।

व्रतञ्चैतन् जगत्स्वितं नाख्यातं तेन ते मया ॥

यद्यस्ति श्रवणे बुद्धिः श्रूयतां कुरुनन्दन ।

कोषाण् श्रीना जगत्स्वित् भवता सदृशी मम ॥

* च सर्व्वं भूतेषु समानं दृष्टिरिति कश्चित् पाठः ।

† सम्यदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ तुल्योवाच च के इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

१ कौत्स इति कश्चित् पाठः ।

जया च विजयाश्चैव उभायाः परिचारिके ।
आगत्य मुनिकन्याभिः पृष्टोऽभीष्टफलेच्छया ॥
भवत्यौ सर्वदा देव्याश्चित्तवृत्तिविदौ किल ।
केन व्रतोपवासेन कस्मिन्नहनि पार्ष्वती ॥
पूजिता तीष मायाति मन्त्रैः कैश्चिहरामने ।
तासां तद्वचनं श्रुत्वा जया प्रीवाच सादरं ।
व्रतसुखवसंयुक्तं नरनारीमनोरमम् ॥
श्रूयतामभिधास्यामि सर्वकामफलप्रदम् ॥
चैत्रे मासि तृतीयायां दन्तधावनपूर्वकम् ।
उपवासस्य नियमान् गृह्णीयाद्भक्तिभावतः ॥
अश्लनं च सताम्बूलं सिन्दूरं रक्तवाससी ।
विभ्रयाक्षोपवासापि अवैधव्यकरं परम् ॥
विधवा यतिमार्गेषु कुमारी च यदृच्छया ।
कुर्व्यादार्थार्चनविधिं श्रूयतामत्र च क्रमः ॥
नेत्रपदपटीवस्त्रैः वस्त्रमण्डयिकां शुभाम् ।
कारयेत् कुसुमामोदवासितां भूषितां शुभाम् ॥
प्रवालालम्बितप्रोतामन्तर्दिव्य वितानकम् ।
विन्यस्तपूर्णकलसां पीठसंविष्टसद्भियाम् ॥
पुरतः कारयेत् कुण्डं हस्तमात्रं समेखलम् ।
यतः* ज्ञात्वा शुद्धिर्भूत्वा परिधाय सुवाससी ॥
देवान् पिष्टुन् समभ्यर्च्य ततो देवीगृहं व्रजेत् ।

* नत रति पुस्तकान्तरे पाठः ।

नामाष्टकेन संपूज्य गौरी गोभर्तृवल्लभान् ॥

नामाष्टकेन वल्लभाखेन, गोभर्तृवल्लभान् वल्लभजवल्लभान् ।

तत्कालप्रभवैः पुष्यैः गन्धादलिकुलाकुलैः ।

कुङ्कुमेन समालभ्य कर्पूरागुदचन्दनैः ॥

एवं सम्पूज्य विधिवत् सुधूपेनाधिवाचयेत् ।

पार्ष्वती ललिता गौरी गायत्री गङ्गरी शिवा ॥

उमा सती समुद्दिष्टं नामाष्टकमिदं सदा ।

सङ्कुक्कैः खण्डवेष्टैश्च गुणकैः सिंहकेशरैः ॥

सोमालङ्कैश्च चरसैः दधिभक्तैः सपूपकैः ।

घृतपक्कैर्वज्रविधैः शक्तिभिः परिकल्पयेत् ॥

दृष्टिप्राण प्रियैर्हृद्यैर्नैवेद्यैः पूजयेदुमां ।

सिंहकेशरैः, सिंहकेशरवह्निलताकृतिभिः ।

धान्यकं जीरकं भव्यं कुङ्कुमं लवणं गुडम् ।

कुसुमं वेद्युकाण्डं च हरिद्राञ्च पुरोन्यसेत् ॥

भव्यसुतकण्ठं ।

नालिकेरसनारङ्गं बीजपूरञ्च दाडिमम् ।

कुष्माण्डं त्रपुसं वृषं दधित्थं पनसं तथा ॥

वृषं वृषवत् नातिपक्वमित्यर्थः ।

त्रपुसं ककंठीफलं दधित्थं कपित्थं ।

कालोद्भवान्यथान्यानि फलानि पुरतोन्यसेत् ।

यन्मकोलूलस शिला सूर्पाणान्ततिभिः सह ॥

नेत्राङ्गनं शलाकाञ्च नक्षसाधनकारि च ।
 दर्पणं विमलं घण्टां भवान्यै विनिवेदयेत् ॥
 शङ्खतूर्ध्वनिनादैश्च गीतमङ्गलनिस्त्रनैः ।
 भक्त्या शक्त्या च संपूज्य देवीं शङ्करवल्लभाम् ॥
 ततोऽस्तमये भानाः कुमार्यः करकैर्नवैः ।
 ज्ञानं कुर्युर्मुदायुक्ताः सोभाग्यभाग्यवृद्धये ॥

कुमार्य इति व्रतचारिलीनामुपलक्षणम् ।

यामे यामे गते ज्ञानं देवीपूजनमव च ।
 तैरेव नामभिर्हीमस्त्रिलाज्येन प्रशस्यते ॥
 पद्मासनस्थिता साध्वो तेनैवार्द्रेण वाससा ।

गौरीवक्त्रे चक्षुपरा तां रात्रिमतिवाहयेत् ॥

काञ्चिद्वायन्ति संहृष्टाः काञ्चित् नृत्यन्ति हर्षिताः ।

कथयन्ति कथाः काञ्चिद्वर्णकामार्थं संश्रयाः ।

गीतं तालानुसंवाहमनुव्रतमनाकुलम् ।

नृत्यन्ति च पुरो देव्याः काञ्चिद्विन्द्वसितभ्रुवः ॥

नृत्येन तुष्यति हरो गौरी गीतेन तुष्यति ।

सङ्गावेनाथ वा सर्वे गृणन्ति चिद्विकसः ॥

सुवासिनीभ्यस्ताम्बूलं कुङ्कुमं कुसुमानि च ।

प्रदेयं जागरवतामन्येषामथ वारितम् ॥

नटैर्विंशैर्भटैः खटैः प्रेरणैः प्रेक्षणीक्षत्रैः ।

नखीभिः सह तां रात्रिं गौबन्धुत्वहसैर्नयेत् ॥

एवं प्रभातसमये ज्ञात्वा संपूज्य पार्ष्वतीम् ।

शक्ता तुलां समारोहेद्वस्त्रालङ्कारभूषिताम् ॥
तोलयेत् श्रितयात्मानं* सितेन लवणेन च ।

श्रितया शर्करया ।

कुङ्कुमेनाथ वा शक्ता कर्पूरागुरुचन्दनैः ।
पर्वतानामपीच्छन्ति दानं केचिच्च सुरयः ॥
कुण्डमण्डपसम्भारमन्त्रैरत्रैवमेव तत् ।
लवणेन सह्यात्मानं तोलयन्त्या गुडेन च ॥
कथापि शक्तिपरया सौभाग्यमतुलीकृतम् ।
एवं देवीं प्रणम्याथ क्षमाप्य गृहमाविशेत् ॥
आमन्त्र्य द्विजदम्पत्यं वासीभिर्भूर्षणैस्तथा ।
संपूज्य भोजयित्वा च दद्यात्तेभ्योऽपि दक्षिणां ॥
यद्यदात्माभोष्टतमं शयनं यानमेव च ।
वस्त्रमाभरणं गावः सर्व्वन्तेभ्यो निवेदयेत् ।
हैमं पत्रं रत्नफलं मुक्ताचूर्णावचूर्णितम् ॥
ताम्बूलं केचिदिच्छन्ति दीयमानं सखीजने ।
पत्रस्थाने सुवर्णं पत्राणि, पूगफलस्थाने रत्नानि ।
चूर्णस्थाने मुक्ताफलानि एवं विधं ताम्बूलं सखीजने देयम् ।
अनन्तं मधुरप्रायं भोजयित्वा सुवासिनी ॥
स्वयं भुञ्जीत सहिता ज्ञातिवन्धुजनैः स्वकैः ।
यच्च देव्याः पुरीदत्तं नैवेद्यादि सुशीभनम् ॥
प्रतिगेहं नयेत्सर्व्वं विभज्यान्त्रान्तमानसा ।

* गृहेनेति पुस्तकान्ते पाठः ।

दन्तवायनकं दिव्यं कृतकृत्यो भवेत्ततः ॥

वायनकं वायनमिति लोके * ।

विधिर्भाद्रपदे श्लेष सर्व्वसौख्य प्रदायकः ।

सप्त धान्य विधिभ्यश्च सर्पस्थां पूजयेदुमां ॥

पूर्व्वकलशस्थाने सर्पमिति शेषः ।

गोमूत्रं प्राशनं यस्मान्मन्मन्नीमूत्रसंज्ञिता ।

माघमासे तृतीयायां विशेषः श्रूयतां मया ॥

पूर्व्वोक्तं सकलं कृत्वा प्रभाते यवसंस्तरे ।

ख्यापयित्वा कुन्दपुष्पैः पूजयेत् ससुतासुमाम् ॥

एतेन कारणेनोक्ता चतुर्थी कुन्दसंज्ञिता ।

पूर्व्वोक्तं सकलं तृतीयायां कृत्वा प्रभाते इति चतुर्थीदिवसे ।

ससुतां विनायकसहितासुमां पूजयेदित्यर्थः ।

उमारूपन्तु कर्त्तव्यं सौधासनगतं† शुभम् ।

सौवर्णश्च महाराज साक्षसृचकमण्डलुम् ॥

विनायकश्च कर्त्तव्यो गजवक्रश्चतुर्भुजः ।

तृतीयाशयमेतत्ते कथितं सर्व्वकामदम् ॥

जयया मुनि कन्यानां यत्पुरा ससुदाहृतम् ।

एवं या कापि कुरुते नारी व्रतमिदं शुभम् ॥

सा रूपसौभाग्ययुता मृता स्वर्गं मञ्जीयते ।

न दुर्भंगा कुले तस्याः काचिद्भवति भारत ॥

* वायनकं वायनमिति पुलकान्तरे पाठः ।

† गोधासनमिति क्वचित् पाठः ।

न दुर्विनीतश्च सुतो न भृत्यो विघ्नकृत्वेत् ।
 न दारिद्र्यं गृहे तस्मिन् न व्याधिरुपजायते ॥
 यत्र सा रमते नारी धौतशामीकर प्रभा ।
 अन्याश्च याश्चरिष्यन्ति ब्राह्मणानुमते व्रतम् ॥
 संपूज्य वाचकं भक्त्या भूषणाच्छादनादिभिः ।
 तास्ताःस्युः सुखसम्पन्ना अत्रिपन्नमनोरथाः ॥
 भविष्यन्ति कुलत्रेष्ठ कुलज्येष्ठ नमीऽस्तु ते ।
 माघे महाहर्षमणिमण्डितपादपीठां ॥
 चैत्रे विचित्रकुसुमोत्कर चर्चिताङ्गो * ।
 सूर्यप्रकृत नवशय्यमयीं नभस्त्रे ।
 संपूज्य शम्भुदयितां प्रभवन्ति नार्थः ।

इति भविष्योत्तरे चैत्रभाद्रमाघत्वतोयाव्रतम् ।

—:०:—

कृष्ण उवाच ।

बहुनात्र किसुक्तेन किं वद्वचरमालया ।
 वैशाखस्य सितामेकां तृतीयामक्षयां† शृणु ॥
 तस्यां ज्ञानं जपो ह्योमः स्वाध्यायः पितृतर्पणम् ।
 दानञ्च क्रियते किञ्चित् तत्सर्वं स्यादिहाक्षयम् ।
 आदिः कृत युगस्त्रेयं युगादिस्त्रेण कथ्यते ॥
 सर्वपाप प्रशमनी सर्वं सौख्यप्रदायिनी ।

* नृप इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† भुञ्जीतधातुनित्ये रचिता समृद्धिनिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

पुरा महोदये पार्थ वशिगासीत् सुनिर्धनः ।
 प्रियंवदः सत्यवृत्तिर्देवं ब्राह्मणं पूजकः ॥
 पुण्यास्थानैकचित्तोऽभूत् कुटुम्बवाकुलोपि सन् ।
 तेन श्रुता वाच्यमाना तृतीया रोहिणीयुता ॥
 यदा स्यात् बुधसंयुक्ता तदा सा सुमहत्फला ।
 तस्यां यद्दोयते किञ्चिद्वच्यं स्नातदेव हि ॥
 इति श्रुत्वा स गङ्गायां सन्त्यर्घ्यं पिबद्देवताः ।
 गृहमागत्य करकान् साक्षाद्देवसंयुतान् ॥
 षष्ठ्यपूर्णान् वृहत्कुम्भान् जलेन विमलेन च ।
 यवगोधूमचणकान् सक्तुदध्नीदंनं तथा ॥
 इक्षुक्षीरविकाराञ्च सहिरण्याञ्च शक्तिः ।
 शुचिः शुद्धेन मनसा ब्राह्मणेभ्यो ददौ वशिक् ॥
 अन्नोदकाभ्यां उदकेन अन्नेन च पूर्णान् कलशान् षष्ठ्युजल
 मध्ये पूर्णान् न तूद्धृतोदकेन ।

भार्यया वार्यमाषोऽपि कुटुम्बासक्तिचित्तया ।
 तावत्तस्यौ स्थिते साच मत्वा सर्व्वं विनश्चरन् ॥
 धर्मसाक्तमतिः पार्थ कालेन बहुना ततः ।
 जगाम पञ्चत्वमसौ वासुदेवमनुष्करन् ॥
 ततः स च्चित्रियोजातः कुशावल्यां युधिष्ठिर ।
 वभूव चाक्षया तस्य सत्त्विर्धर्मसंयुता ॥
 इयाज स महायज्ञैः समाप्तवरदक्षिणैः ।
 सदा दौ गोहिरण्यादिदानान्यन्यान्यहर्निशम् ॥
 वभुजे कामतो भोगान् दीनान्वांस्पर्षयञ्चनैः ।

तत्राप्यक्षयमेवास्व क्षयं याति न तन्ननम् ।
 अद्वापूर्वं तृतीयायां यद्दत्तं विभवं विना ॥
 इत्येतत्ते समाख्यातं श्रूयतामत्र यो विधिः ।
 तृतीयान्तां समासाद्य ज्ञात्वा सन्तर्धं देवताः ॥
 एकभक्तं तदा कुर्यात् वासुदेवं प्रपूजयेत् ।
 उदकुम्भान् सकानकान् साषान् सर्व्वरसैः सह ॥
 यैश्चिकानं सर्व्वमेवात्र शस्थं दाने प्रशस्पते ।
 छत्रोपानत्प्रदानं वै गीभूक्ताश्चनवाससाम् ॥
 यद्यद्विष्टतमं शान्धस्तद्देयमविशङ्कया ।
 यतत्ते सर्व्वमाख्यातं किमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥
 अनाख्येयं न मे किञ्चिदस्ति स्वस्वस्तु तेऽनघ ।
 अस्यां तिस्रोऽक्षयं सुपैति हुतं न दत्तं
 तेनाक्षयेति कथिता मुनिभिस्तृतीया ।
 उद्दिश्य यत् सुरपिङ्गुं क्रियते मनुष्यै
 स्तद्वाक्ष्यं भरतभारत सर्व्वमेव ॥

इति भविष्योत्तरोक्तमक्षय तृतीयाव्रतम् । ७



शुचिष्टिर उवाच ।

केन धर्म्येण नारीणां व्रतेन नियमेन च ।
 सोभाग्यं जायतेऽतीव पुत्राश्च बहवः शुभाः ॥

धनधान्यं हिरण्यं वस्त्रालङ्कारमेव च ।
 अविद्योगश्च सततं भर्तुः सुदृक्कनैः ॥
 सम्यगास्थाहि मे कृष्ण दमातीव हि ते मयि ॥

कृष्ण उवाच ।

शृणु पार्थ प्रवक्ष्यामि व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
 यक्षीत्वा सुभगा नारी बह्वपत्या च जायते ॥
 धनधान्यहिरण्यादिदासीदासैः समन्विता ।
 लोके हिताद्यं पार्वत्या उमामाहेश्वरव्रतम् ॥
 समाख्यातं पुरा पार्थ नाद्यापि प्रथितं भुवि ।
 मार्गशीर्षे सिते पक्षे तृतीयायां समाहिता ॥
 कृतीपवासा राजेन्द्र सर्वभोगविवर्जिता ।
 संवेद्य खेतवस्त्रेषु शिवं रत्नेन चाम्बिकाम् ॥
 पद्मद्रूपं दृष्ट्वा नारी भक्तिभावेन भाविता ।
 भोजयेच्छिवभक्त्या ब्राह्मणान् वेदपारगान् ॥
 भक्तेभ्यो दक्षिणां दद्याद्भक्त्या श्राठं विना कृताम् ।
 कृतीपवासा संकल्पितोपवासा ।
 ज्ञात्वा संपूज्य कलितां हरकायाद्यर्वास्त्रिणीं ।
 गीतवाद्यादिकं कृत्वा क्षपयित्वा क्षितौ क्षणं ॥
 ततः प्रभातसमये ज्ञानं चाङ्गुलिमे जले ।
 धृत्वा शुक्लान्बरुचारी वाक्यमेतदुदीरयेत् ॥
 नमोनमस्ते देवेश उमादेहाईधारक ।
 महादेव नमस्तुभ्यं हरकायार्धवासिनीम् ॥

हृदि कृत्वा शिवं देवो जपेत् यावद्दृष्टं व्रजेत् ।
 ब्रह्मदेहेवमीशानं पुण्यैः काशीव्रजेस्ततः ॥
 वामपार्श्वे स्थितां देवीं दक्षिणे तु महेश्वरम् ।
 धूपं सगुग्गुलुं चाम्ने दहेत् ध्यानपरायणा ॥
 नैवेद्यं विविधं देयं घृतपक्वं स्वयन्निजैः ।
 कारयेद्देशदेवन्तु तिस्राभ्येन सुसंस्कृतम् ॥
 पञ्चगव्यं ततः प्राश्न हव्यं भुञ्जीत वाग्यता ।
 एवं द्वादशमासांस्तु पूजयित्वा महेश्वरौ ॥
 उद्यापनं ततः कुर्यात् प्रहृष्टेनाम्तरात्मना ।
 शिवं रौप्यमयं कुर्यादुमां हेममयीन्तथा ॥
 आरूढो वृषभे * गौरी सर्वाङ्गहारभूषिता ।
 चन्दनेन शिवं चर्च कुङ्कुमेन तु पार्वतीम् ॥
 चर्चयेत् कुङ्कुमैः पश्चात् सुगन्धैः सुमनोहरैः ।
 ततः प्रदक्षिणं कृत्वा मन्त्रमेतदुदीरयेत् ॥
 उमामाहेश्वरौ देवौ सर्वलोकपितामहौ ।
 व्रतेनानेन सुप्रीतौ भवतां मम सर्वदा ॥
 एवमुक्त्वा जितक्रोधा ब्राह्मणे वेदपारगे ।
 व्रतं निवेद्येद्वक्त्या वाचके वा गुणान्विते ॥
 एवं कृत्वा व्रतं नारी महेशार्पितमानसा ।
 प्रयाति परमं स्थानं यत्र देवी शिवप्रिया ॥
 तत्रैव सा वसेत्तावद्यावदिन्द्रासतुर्ह्ययं ।
 अक्षरोभिः परिहृता किञ्चरौभिस्तथैव च ॥

यदा भानुषतां याति जायते विमले कुले † ।
 नृप सीख्ये समाप्नोति पुत्र पीत्रसुतादिभिः ॥
 मृता शिवपुरं याति शिवया सह मोदते ।
 हैमोमुमां रजतपिण्डमयं महेशम्
 रौप्यं सुरूपहृषभे समुपस्थितौ तौ ।
 संपूज्य रक्तसितवस्त्रयुगोपगूढौ
 नारी भवत्यविर्वा सुतसौख्ययुक्ता ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तमुमामाहेश्वर व्रतम् ।-

—:०:—

शुद्धिष्ठिर उवाच ।

शुक्लपद्मे द्वितीयासु बहवः समुदाहृताः ।
 आनन्तर्यव्रतं ब्रूहि द्वितीयोभयसंयुता ॥
 द्विंशत्य व्रतशीलानां नारीणाञ्च विशेषतः ।
 नाम प्राशन नैवेद्यं मांसि मांसि पृथग्विधम् ॥

कृष्ण उवाच ।

ब्रह्म विष्णु महेशाद्यैर्यज्ञोक्तं सुरसप्तमैः ।
 अपूर्व्यं सर्वं तन्नाशामानन्तर्यव्रतं नृणु ॥
 मार्गशीर्षे महाराज व्रतमेतत्समारभेत् ।
 नक्तं कुर्यात् द्वितीयायां तृतीयायामुपेक्षिता ॥

* रूपवैभवं सम्पन्नः यज्ञं पुत्रावतिव्रता ।

धनं धान्यं समायुक्ता शिवया मन्त्रोदते इति पुरुषाक्षरे पाठः ।

उवां देवीं समभ्यर्च्य पुष्पधूपादिभिः क्रमात् ।

ब्रह्मरापुत्रिकां दद्याद्यथाशक्ता च भक्तितः ॥

दधि सं प्राशयेद्ब्राह्मो स्वपेदेकाकिनौ भुवि ।

प्रभाते विधिवद्विप्रं मिथुनं भोजयेन्नृप ॥

अम्बमेधफलावामिर्जायते नात्र संशयः ।

तथा कृष्णतृतीयायां सोपवासी जितेन्द्रियः ॥

बजेत् कात्यायिनीं नाम नारिकेलं निवेदयेत् ।

शीरं प्राश्य स्वपेद्राहो काम क्रोध विवर्जिता ॥

श्रीकृष्णद्विपादस्य गोमेधफलमाप्नुयात्* ।

श्रीकृष्णतृतीयायां सोपवासी जितेन्द्रियः ॥

गोरीं नाम्ना तु संपूज्य खण्डवर्तिं निवेदयेत्† ।

खण्डवर्तिः शक्रा निर्विंती वलिताकृतिर्भक्षः ॥

ततः कुम्भोदकं प्राश्य स्वपेद्रूमौ जितेन्द्रियः ।

प्रभाते रूपसम्पन्नं मिथुनं भोजयेत्ततः ॥

अमाप्य तं नमस्कृत्य बहुस्वर्णफलं लभेत् ।

पुनरेव तुलामाघे कृष्णपक्षे यतव्रता ॥

प्रार्थ्यां नाम्नाय संपूज्य स्वाद्यकञ्च निवेदयेत् ।

स्वाद्यकं स्वस्तिवादि ।

अधुं प्राप्य स्वपेद्रात्रीं सर्व्वं भोग विवर्जिता ।

मिथुनं भोजयित्वा तु वाजपेयफलं लभेत् ॥

तत्रैव फाल्गुने मासि सोपवासा शुचिव्रता ।

* पुष्पधूपादिभिः पुष्पधूपादिभिः पुष्पधूपादिभिः पाठः ।

† खण्डवर्तिं निवेदयेदिति पुष्पधूपादिभिः पाठः ।

भव्यां नाम्ना प्रपूज्याद्य कासाङ्गं विनिवेदयेत् ।
 अक्षरं प्राशयित्वा तु स्वपेद्राक्षौ विमत्तरा ॥
 प्रभाते मिथुनं भोज्य सौत्रामण्डिकं लभेत् ।
 पुनः कृष्णद्वितीयायां फास्वगुणस्यैव भारत ॥
 विशालाक्षीं समभ्यर्च्य पूरिकां विनिवेदयेत् ।
 संप्राश्य तण्डुलजलं स्वपेद्राक्षौ मनस्विनी ॥
 भोजयेन्मिथुनं प्रातरग्निष्टोमफलं लभेत् ।
 चैत्रस्वादिद्वितीयायां सुचिः स्याता जितेन्द्रिया ।
 त्रियं नाम्ना तु संपूज्य वटकान् विनिवेदयेत् ॥
 विश्वपत्रं ततः प्राश्य स्वपेत् ध्यानपरायणा ।
 ततः प्रभाते विमले द्विजदाम्पत्यपूजनात् ॥
 प्रशिपाताच्च तस्यैव राजसूयफलं लभेत् ॥
 ततः कृष्ण द्वितीयायां चैत्रे सम्यगुपदिता ।
 कालीं नाम्ना तु सम्पूज्य पिष्ट प्राश्य स्वपेत्त्रिंशि ॥
 पूषकान् विनिवेद्याद्य कुर्यात्सर्षकयां शुभाम् ।
 भक्त्या संभोज्य मिथुनमतिरात्रफलं लभेत् ॥
 एवं वैशाखमासन्तु सोपवासा जितेन्द्रिया ।
 पूजयेच्चण्डिकां देवीं मधुकार्यां निवेदयेत् ॥

मधुकार्या मधुकपूरचपूरिकाः ।

श्रीखण्डं निशि संप्राश्य स्वपेदेभ्यपतोभुवि ।
 भोजयित्वा च दम्पत्वं चान्द्रायणफलं लभेत् ॥
 तथा कृष्ण तृतीयायां सोपवासा विमत्तरा ।

पूजयेत् कालरात्रिन्तु पुष्पधूपैर्मनोरमैः ॥
 गुडाढ्यं यावकं दत्त्वा तिलान् प्राश्य स्वपेन्निशि ।
 प्रभाते मिथुनं भोज्यमतिकृच्छ्रफलं लभेत् ॥
 ज्येष्ठे सिततृतीयायां सोपवासा यतव्रता ।
 स्कन्दमातेति संपूज्य इन्द्रज्योति निवेदयेत् ॥
 प्राशयेत्पञ्चगव्यञ्च देवीं ध्यात्वा स्वपेन्निशि ।
 प्रभाते मिथुनं भोज्य कन्यादानफलं लभेत् ।
 आषाढमासे संप्राप्ते ढृतोयायां युधिष्ठिर ॥
 नाम्ना यशोधरां देवीं पूजयेत् भक्तितत्परः ।
 करश्मकञ्च नैवेद्यं गोमृङ्गाभिः पिवेन्निशि ॥

करश्मकं दधिमिश्रा सक्तवः ।

प्रभाते मिथुनं भोज्य भूमिदानफलं लभेत् ॥
 तथा कृष्ण तृतीयायां कुष्माण्डौ नाम पूजयेत् ।
 सक्तान् खण्डाज्यसंयुक्तान् पुरतो विनिवेदयेत् ।
 कुम्भोदकञ्च संप्राश्य स्वपेद्देव्याः पुरःक्षितौ ॥
 प्रभातेमिथुनं भोज्य गोप्रदानफलं लभेत् * ।
 श्रावणे सोपवासाद्य चण्डघण्डां प्रपूजयेत् ॥
 कुष्माण्दांस्तत्र नैवेद्यं पिवेत्पुष्पोदकं निशि ।
 कुष्माणाः अर्घस्त्रिन्नानि धान्यानि ।
 प्रभाते भक्तितो विप्र मिथुनं भोजयेत् नृप ।
 द्विजाना मविदुषां प्राशचाणफलं लभेत् ॥

* पानदान चसं लभेदिति प्रसक्तान्करे पाठः ।

तद्वत् कृष्णद्वतीयायां बद्राणीं नाम पूजयेत् ।
सिद्धपिण्डानि दिव्यानि नैवेद्यं सम्प्रदापयेत् ॥
सिद्धपिण्डानि पिण्डीकृताः सत्त्ववः ।

पिण्याकं प्राशयित्वा तु स्वपेट्रादौ विमल्लरा ॥
संपूज्य द्विजदाम्पत्यमिष्टापूर्त्तफलं लभेत् ।
तथाभाद्रपदस्वाद्यौ द्वतीयायामुपोषिता ॥
पुष्यैर्नानाविधैर्हव्यैः पूजयेत् कमलाभयां ।
कर्णावर्त्तन्ततोदेव्या नैवेद्यं पल्लवाचितम् ॥
कर्णावर्त्तं वर्षाकृतिभद्रः पल्लवन्तिलपिष्टम् ।

गन्धोदकं ततः प्राश्य स्वपेत् संहृष्टमानसा ॥
प्रभाते मिथुनं भोज्य ग्रामदानफलं लभेत् ।
तद्वत् कृष्णद्वतीयायां दुर्गान्देवीं समर्चयेत् ॥
दद्यान्नन्दीफलं देव्या गुड्राज्यपरिपूरितम् ।

नन्दीफलं नन्दीवृक्षफलम् ।

प्राशयित्वा च गोमूत्रं स्वपेत् कान्तेन चेतसा ।
प्रभाते मिथुनं भोज्य सदा संनफलं लभेत् ॥
मासिचाश्वयुजे भक्त्या नाम्ना नारायणीं यजेत् ।
सोपवासा खण्डखाद्यनैवेद्यं परिकल्पयेत् ॥

खण्डखाद्यं शर्करानिर्मितं खाद्यम् ।

सम्प्राश्य चन्दनं रत्नं नक्तं स्वप्यात्तदाग्रतः ॥
प्रभाते द्विजदाम्पत्यं भोजयित्वा पतिव्रता ।
निदाघे निर्जले मार्गे प्रपादानफलं लभेत् ।

तथा कृष्ण तृतीयायां स्वस्ति ताव्ना प्रपूजयेत् ॥
 ग्राह्योदनं गुह्योपेतं नैवेद्यं विनिश्चयेत् ।
 कुसुम्भबीजतीयञ्च सम्प्राश्य प्रयतः स्वपेत् ॥
 सन्धोच्य मिथुनं प्रातरग्निहोत्रफलाप्तये ।
 काशिकस्य तृतीयायां स्वाहा नाम प्रपूजयेत् ॥
 पायसं घृतखण्डाय नैवेद्यमुपकल्पयेत् ।
 स्वपेद्रात्री जितक्रोधा प्राश्य क्लृप्तमर्जं जलम् ।
 प्रभाते मिथुनं भोच्य प्रक्षिपत्य चमापयेत् ॥
 अतीवदुर्दरे वर्षे गवाङ्गिकफलं लभेत् ।
 तथा कृष्णतृतीयायां सोपवासा लतत्रता ॥
 विप्राप्य स्वगुहं भक्त्या धर्मशान्तिार्थकीविद्ं ।
 मण्डलञ्च ततो लिख्य नवनाभं वरप्रदं ॥
 सौम्यं कारवेहेवमुमया सहितं शिवम् ।
 तेष्वीनेत्रे तु हातव्यं मौक्तिकं तिलमेव च * ॥
 प्रवासमोडबोद्ध्यात् कर्षणीरेव कुण्डले ।
 उषवीतन्तु देवस्य देव्यां हारं समुज्ज्वलम् ॥
 रत्नावरधरां देवीं क्षितवस्त्रं महेश्वरम् ।
 चन्द्रेण समाकृष्य पुष्पैर्धूपैः समर्चयेत् ॥
 मण्डलं पूजयित्वा च हीमं कुर्यात्ततो गुरुः ।
 तथापराजितां-नाम्ना देवीं भक्त्या प्रपूजयेत् ॥
 मण्डलञ्च सम्प्राश्य कुर्याद्रात्री च जागरम् ।
 जवदायुःशरीपेतं वीरावेष्टुमनोहरम् ॥

* मौक्तिकं बौद्धेण चेति पुस्तकान्तरे ।

माङ्गल्य गीत-निन्दैः प्रेक्षयैरतिशोभितम् ।
 ताम्बूलाशन सिन्दूर पुष्प कुङ्कुमदीपकैः ॥
 सखीजनैः सुषेधैश्च सम्भतात् परिपूजितम् ।
 उत्सवं कारयित्वेत्थं नयेद्रात्रिं विमकरा ॥
 ततः प्रभाते विमले कृतकौतुकमङ्गला ।
 कृत्वा तु नूननान्तूलीं कन्दुकादिसमन्विताम् ॥
 मण्डले देवमुष्टृत्य पर्यङ्कोपरि विन्यसेत् ।
 वितानध्वजनालाभिः कुम्भदर्प्यशोभना ॥
 पुष्पमण्डयितां कृत्वा धूपगुग्गुलुवासिता ।
 तस्याग्रे भोजयेद्भक्ष्या मिथुनानि यथेच्छया ॥
 प्रीणयेद्भक्ष्यभोज्यैश्च पक्वान्नेर्मधुरै रसैः ।
 ततोदत्त्वा कृतं हस्ते ताम्बूलं चन्दनं तथा ॥
 इदमुच्चारयेन्नाम्ना देवस्य च पुरोगुरोः ॥
 प्रीयतां मे उमाकान्तः पार्वत्या सहितस्तदा ।
 उच्छिष्टं शोधयित्वा च ततो भोज्यसमन्वितां ॥
 रक्तवर्णां सुग्रीलां च सुरूपाम् सुपयस्विनीं ।
 शृङ्गाभ्यां दत्तकनकां राजतखुरसंयुताम् ॥
 कांस्यदोहनकीपेतां रक्तवस्त्रां च गुण्ठिताम् ।
 घण्टाभरणशोभाढ्यां सितचन्दनचर्चिताम् ॥
 पूजितां पुष्पमालामिः देवस्य पुरतः स्थिताम् ।
 पादुकोपानहस्तभक्ष्यभोजनसंयुताम् ॥
 त्रिधा प्रदक्षिणोत्तत्य गुरोः सध्वं निवेदयेत् ।
 पुनश्चोदाहरेद्देवं गुरोरग्रे कृतव्रता ॥

उमामहेश्वरं यद्ददवियोगं सुरार्चितम् ।
 अवियोगः स्वभर्ता मे तद्ददस्सु सुसम्पदा ॥
 प्रणम्य शिरसा भूमौ क्षमस्वेति गुरुं वदेत् ।
 एवं समाप्यते सम्यगानन्तर्यव्रतोत्तमं ।
 यः कुर्यात्पुरुषः स्तोत्रा तस्य पुण्यफलं शृणु ।
 गन्धर्वं यच्चसिद्धानां विद्याधर महोरगैः ॥
 देव दैत्य, मुनीनां च कन्याभिः परिवारितः ।
 कामगेन विमानेन क्रीडयित्वा यथेष्टितम् ॥
 समुद्रत्यं कुलं भर्तुः पितृश्चामरपूजिता ।
 ब्रह्मादिभिरनुक्रान्ता विष्णुलोकं सनातनम् ॥
 प्रयाति पुरुषो वापि नात्र कार्या विचारणा ।
 भुक्त्वा भोगांस्ततो दिव्यान् पुण्यशेषेण पार्थिव ॥
 पार्थिवो जायते भूमौ शार्वभौमोपराजितः ॥
 नारी वा महिषी राष्ट्रः सर्वभौमस्य जायते ।
 तरेतर्पं यथा देवी भोगांश्च पतिना सह ॥
 त्रैलोक्यपतिना भुङ्क्ते तथा स्वपतिना तु सा ।
 हरिः शच्या हरिर्लक्ष्म्या समं पत्न्या यथा सुखम् ॥
 भुङ्क्ते निरन्तरं तदक्षया सार्धं नरेश्वर ।
 मुनिनाहन्वती यद्द सतां सन्ना हृदि स्थिता ॥
 तद्दङ्गनक्ति सौभाग्यं नैरन्तर्येण पाण्डव ।
 येनैव पतिना सार्धं करोत्येतद्दुतोत्तमम् ॥
 समजन्मनि तेनैव न वियोगमवाप्नुयात् ।
 एतत्ते सम्यगाख्यातमानन्तर्यव्रतं महत् ॥

भर्तासि मे सखाचेति रहस्यं परमं मया ।
 नाविनीताय दातव्यं नाभक्ताय कथञ्चन ॥
 नास्तिके हेतुके पापे दाता भवति किल्बिषी ।
 एषा विशेष विधिना सहसा तृतीया
 यानोकरीत्यविधवाभिरुदाहृतोच्चैः ।
 एतामुपोष्य विधिवत् प्रतिपन्नयोगा-
 न्नैवान्तरं सुतसुहृत्स्वजनैरुपेति ॥

इति भविष्योत्तरोक्तमानन्तर्यतृतीयान्नतम् ॥७॥



युधिष्ठिर उवाच ।

किमर्थं मधुहृत्स्वमर्चयन्ति वरस्त्रियः ।
 गौरीं जगद्गुरोर्भार्यां भगवं स्तद्गुवीषि मे ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

पुरा क्षीरोदमथने मधुहृत्तो विनिर्गतः ।
 स द्रुहारोपितो मर्त्यैर्मधुना मुनिकारणात् ॥
 विषदर्शोपहाराय व्याधिसंघवधाय च ।
 स्त्रीणां सौभाग्यदानाय यत्र पुष्यफलार्चितः ।
 शोभितस्तवकैरस्यैः दृष्टोललितया वने ॥
 तत्राश्रिता महादेवी पार्वती शङ्करप्रिया ।
 विजयाजयागणेशेन संयुता पर्वतात्मजा ॥
 तत्रस्था देवताभिः सा पूजिता कुसुमैः फलैः ।
 भक्तैर्बहुभिर्धैराजन् मनसैस्सितकारणात् ॥

स्वयं लक्ष्म्या सरस्वत्या सावित्र्या गङ्गया तथा ।
 रोहिष्या रश्म्या राजन् चरन्वत्या सुशीलयम् ॥
 स्त्रीभिरेताभिरागत्य पूजिता मूलशङ्करौ ।
 तासां प्रसन्ना वरदा ददावभिमतं फलम् ॥
 फाल्गुनस्य सिते पक्षे ढतीयायामुपोषिता ।
 ज्ञाता स्थिता ब्रह्मचर्यं ततोन्वस्मिन् दिने पुनः ॥
 ब्रजेष्वाधुवनं गौरीं पूजयेत् यतमानसाः* ।
 मन्त्रेणानेन ध्यायन्ती पार्वतीप्रतिमां शुभाम् ॥
 मृगाजिनाहतकुचां जटामुकुटशोभिताम् ।
 गोधारथगतां देवीं रुद्रध्यानपरायणां ॥
 पूजयेत् गन्ध कुसुमैर्दीपास्तकचन्दनैः ।
 केसरैर्भ्रुवुरद्रवैः स्वर्णमाणिक्यसंयुतैः ॥
 अम्बिका ऋषिका देवी मूषिका ललिता उमा ।
 तपःवनरता गौरी सौभाग्यं मे प्रयच्छतु ॥
 काली कासी सती देवी रुद्राणी पार्वती शिवा ।
 अष्टाङ्गैः प्रणता भक्त्या पतिपुत्रान् प्रयच्छतु* ॥
 सौभाग्यं मे प्रयच्छन्तु सुप्रसन्नाननाः सदा ।
 अवैधव्यकुले जन्म ददातु प्रति जन्मनि ॥
 अङ्ग प्रत्यङ्ग देशेषु प्रतिपञ्च स्थितामृता ।
 सुखदृष्टिस्पर्श-रसं गौरी सौभाग्यं मृच्छतु ।
 एव मुञ्चार्थं मन्त्रेण नारी ज्ञानवती सती ॥
 पूजयेत् ब्राह्मणीनाञ्च भव्या मुख्याः सुवासिनी ।

* पूजयेत्तदातामिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

कुसुमैर्जीरकैश्चैव लवणैर्गुडसर्पिषा ॥
 अक्षैरागैः फलैश्चूर्णैः मनोज्ञैश्च सचन्दनैः ।
 अथैः मधैः चुम्पकैः, रागैः, पुष्यचन्दनैः
 चम्पकादि पुष्यवासितैश्चन्दनैः ।
 कुसुमैः कुङ्कुमैर्मधैः कालेयागुरुश्चन्दनैः ॥
 कालियं पीतचन्दनं चन्दनं, श्वेतचन्दनम् ।
 सिन्दूरेणाभिरक्लेन वस्त्रैर्नानाविधैः शुभैः ॥
 पवित्रकैः पीतवर्णैः पूषकौस्तिलतन्दुलैः ।
 अश्रीकवर्त्तिगुणकैः घृतपूरैः मलद्भुक्तैः ॥
 अश्रीकवर्त्तिभक्षविशेषः पूजयित्वा महाद्भुतः ।
 प्रदक्षिणं ततः कृत्वा दद्याद्दिप्राय दक्षिणाम् ॥
 एतत् व्रतं समाख्यातं कांक्षायै न पुरा नृप ।
 याश्चरिष्यन्ति सर्वास्ता भविष्यन्ति निरामयाः ॥
 अङ्गप्रत्यङ्गसुगभा लोके दृष्टिमनोहराः ।
 स्थित्वा वर्षशतं मर्त्यं ततो वृद्धपुरं शुभम् ॥
 यास्यन्ति हंसयानेन किङ्कीणीशब्दनादिना ।
 तत्र गत्वा रमिष्यन्ति कल्पमेकं युधिष्ठिर ।
 पुनरभ्यागता मर्त्यं सर्वसौख्यकभाजना ॥
 नार्थ्यं भवन्ति संपूज्या मधुवृक्षं सुयोधनम् ।
 अर्घ्यं महार्घ्यमन्तिकुङ्कुमकैसरान्द्रं ॥
 पर्यङ्गुलम् सुखरालिकुलीपगीतम् ।
 दत्त्वा फलाक्षतयुतं मधुपादपस्य
 गौरीव कामसदृशा भवतीह नारी ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं मधुकव्रतम् । १११

—:~:—

युधिष्ठिर उवाच ।

मेघपालीव्रतं कृण्वन् कदाचित् क्रियते नृभिः ।
किं पुण्यं किमनुष्ठानं कीदृशं स्मृता तु सा ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

आश्वयुक् शुक्लपक्षे च तृतीयायां युधिष्ठिर ।
मेघपाली प्रदातव्या भक्त्या स्त्रीभिर्नृभिस्तथा ॥
अर्घ्यैः विरुद्धैः गोधूमैः सप्तधान्यसमन्वितैः ।
तिलतण्डुलमिषैश्च दातव्या धर्मलिप्सुभिः ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

कीदृशीं सा भवेद्दक्षीं मेघपाली जनार्दन ।
लक्षणं कीदृशं तस्याः कोमलमिति मे वद ॥

श्रीकृष्ण उवाच ॥

ताम्बूलसदृशैः पत्रैरक्तावली समञ्जरी ।
वाटीषु या न मार्गेषु प्रेक्षिता पर्वतेषु वा ॥
यत्र वा दृश्यते राजन् शुची देशे समुत्थिता ।
मेघपाली समभ्यर्च्य फलैः पुष्पैस्तथाक्षतैः ॥
खजूरैर्नालिकेरैश्च नारङ्गैर्दाडिमैस्तथा ।
वीजपूरैः कपिरथैश्च सप्तधान्यैर्विबुधैः ॥

त्रपुसीर्वाचीनकस्तु पिण्डैस्तु तिलपिष्टजः ।
 अपुसम्बालकम् इर्वा, कर्काटी चीनकं प्रसिद्धं ॥
 ततस्तैः प्रथमे पात्रे दूर्ध्वादधि समन्वितम् ।
 तिलतण्डुलमिश्रन्तु चन्दनेन सुगन्धिना ॥
 सुगन्धैर्जातिपुष्पैश्च फलैर्कर्कशुकैरपि ।
 कृत्वा र्घ्यं प्रदातव्यं मन्त्रेणानेन भारत ॥
 अनेन भद्रा इति जपेत् मन्त्रं वेदीकृत्मादरात् ।
 स्त्रीशूद्रैः पूजयेत्ताञ्च नमस्कारेण भारत ॥
 इत्येवं पूजयित्वा तां मेघपालीं पुमांस्ततः ।
 नारी वा पुरुषव्याघ्र प्राप्नोति परमां गतिं ॥
 हन्ति पापान्यसङ्ख्यानि* प्रमादादन्यजान्यपि ।
 अन्यजानि अपण्यजानि, अतिक्रियजानि
 पूजिता मेघपालीयं ददाति हृदयेप्सितम् ॥
 स्थित्वा वर्षशतं मर्त्ये तस्यां सौभाग्यगर्विता ।
 त्रिषु लोकमवाप्नोति पुनर्जाता कुलोत्तमे ॥
 नारीमरोनरकभीरुतया ददाति
 योऽर्घं फलात् शुभतनुर्ननु मेघपात्र्यै ।
 उन्मादकूटकपटानि कृतानि यानि
 पापानि हन्ति सवितेव भवप्रदोषात् ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तमेघपालीय तृतीयाब्रतम् ॥

—:ॐ:—

युधिष्ठिर उवाच ॥

* हन्तिपापानिसङ्ख्यानानि ।

अहमन्यश्च पृच्छामि व्रतं द्वादशमासिकम् ।
कलिताराधनं नाम कौटुम्भासक्रमेण तु ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

शृणु पाण्डवयत्नेन यथा व्रतं* पुरातनम् ।
शङ्करस्य महादेव्याः सम्वादनं पुण्यवर्धनम् ॥
कौलासशिखरे रम्ये बहुपुष्पफलाकुले ।
तत्र देवी स्वभर्तारं जगद्भर्तारमब्रवीत् ॥

देव्युवाच ।

स्वामिन् लोकीपकाराय मम प्रीति विवृणुष्वे ।
कथयस्व प्रयत्नेन तृतीयाव्रतमुत्तमम् ।
भक्तास्त्रियो हि मान्देवं पूजयन्ति सदा भुवि ॥
दुर्भगानिरपत्याश्च पुरुषा निहैनास्तथा† ।
आर्त्तिं तासां परिच्छेत्तुमतः पृच्छाम्यहं विभी ॥
येन ताः सुखसंयोगरूपलावण्यसम्पदा ।
पुत्रसौभाग्यवित्तीर्षैः प्रयुक्ताः सुरसत्तम ॥
तन्मे कथय यत्नेन नूनं नारीसुखव्रतम् ।

ईश्वर उवाच ।

माघमासे सिते पक्षे तृतीयायां यत्नता ।
पादौ प्रक्षाल्य हस्तौ च मुखश्चैव समाहितः ॥
उपवासश्च नियमं दन्तधावनपूर्वकम् ।

● कृतमिति पुरुषाकारे पाठः ।

† कुरुपा इति पुरुषाकारे पाठः ।

मध्याह्ने तु नदीं गत्वा तिलैरामलकैः शुभैः ॥
 स्नात्वात्तीर्थं जलात् शुक्ले वाससी परिधाय च ।
 सुगन्धैश्च सुपुष्पैश्च मनोज्ञैः कुङ्कुमादिभिः ॥
 अर्चयेत् तथा देवीं त्यां भक्त्या भक्तवत्सले ।
 कर्पूराद्यैः सुगन्धैश्च नैवेद्यैः शर्करादिभिः ॥
 यथा विभवसम्पन्नैर्गीतवाद्यैर्मनोरमैः ।
 ईशानीनाम जल्पन्ती प्रतिच्छेत् घटिकाजलम् ॥
 पात्रं तान्ममयं शुभ्रञ्जलाक्षतसमन्वितम् ।
 सहिरण्यं द्विजस्याग्रे कुर्यात् वाञ्छलिभिस्तथा ॥
 द्विजोभिषेकस्तेनैव कुर्यात्तस्यै समम्नकम् ।
 जलेन दर्भपूतेन शिवध्यानं परं पठन् ॥
 नारी च ध्यायमाना त्यां शुभाभिधानतत्परा ।
 रागादीन् दूरतस्यज्ञा प्रतीच्छेच्छिरसा जलम् ॥
 ब्रह्मावर्त्ताद् समायाते ब्रह्मयोनिसमुद्भवे ।
 भद्रेश्वरि महादेवि ललितेशङ्करप्रिये ॥
 गङ्गाहाररते मातर्गङ्गाजलविशोधिते ।
 सौभाग्यारोग्यपुत्रांश्च तथैवार्थान्नेप्सितान् ॥
 प्रयच्छास्यै सुप्रसन्ना भवदेवि नमोनमः ॥

अभिषेकमन्त्रः ।

अभिषिक्ता ततो भक्त्या प्रीयमाणेन धेतसा ।
 दस्वाहिरण्यं तत्तस्यै प्राययेत् कुशोदकं ॥
 आचम्य प्रयता भूत्वा भूशय्यां क्षपयेत् क्षपाम् ।
 ईशानी ध्यायमाना च आत्तेसा दर्भं संस्मरे ॥

द्वितीयेऽङ्गि ततः स्नात्वा तथैवाभ्यर्च्यं पार्वतीम् ॥
 यथा शक्त्या द्विजाः पूज्या भीजयित्वा सुवासिनीम् ।
 ततः कुटुम्बं शेषान्नं स्वयं भुञ्जीत वाग्यता ॥
 एवं हि प्रथमे मासि ईशानीं नामपूजयेत् ।
 द्वितीयं पार्वतीनाम तृतीये शङ्करप्रिया ॥
 भवान्यथा चतुर्थे तु स्कन्दमाता तु पञ्चमे ।
 दक्षस्य दुहित्या षष्ठे मैनाकी सप्तमे स्मृता ॥
 अष्टमे ललिता नाम सती च नवमे तथा ।
 दशमे मासि बिख्याता देवी सोभाग्यदायिनी ।
 उमात्वेकादशे मासि गौरीति द्वादशे स्मृता ॥
 कुशोदकं पयः सर्पिर्गोमूत्रं गोमयं फलम् ।
 निम्बपत्रं कदम्बं वा गवां शृङ्गोदकं दधि ॥
 पञ्चगव्यं तथा शाकं प्राशनानिह्यनुक्रमात् ।
 प्रतिमासमुपोष्यैव यथा शक्त्या तु दक्षिणाम् ॥
 ददाति अन्नयोपेता वाचके ब्राह्मणोत्तमे ।
 कुसुममाद्र्लवणं जीरकं गुडमेव च ॥
 सिन्दूरञ्च हरिद्राञ्च शूर्पस्थं देवमादिशेत् ।
 मासि मासि भवेन्नन्दो गकारी द्वादशाक्षरः ॥
 ओङ्कार पूर्विकां देवी नमस्कारान्तयोजितां ।

ॐ गं ईशान्यै नमः शो पार्वत्यै नमः ।

ॐ गुं शङ्कर प्रियायै नम इत्यादि एभिस्तु पूजितैर्मन्त्रै
 स्तुष्यति ब्राह्मणैः प्रिये ।

तुष्टालभोप्सितान् कामान् दास्यामि प्रीति पूर्वकान् ।
 समाप्ते तु व्रते ह्यस्मिन् ब्राह्मणं वेदपारगम् ।
 सहितं भार्ययाभ्यर्च्य गन्धधूपादिभिस्त्रया ॥
 द्विजं महेश्वरं बिद्धि भार्य्या गौरीं तथैव च ।
 इति दत्त्वा ब्राह्मणानाम्पत्न्योः पूजयेत् प्रिये ॥
 अन्नं सद्दक्षिणं देयं तथा शुक्लं च वाससी ॥
 ब्राह्मण्यै रक्तवासांसि देयानि ममवक्ष्ये ।
 एवं चौर्षं व्रतं सम्यक् यत्फलं लभते शृणु ॥
 भुक्त्वा भोगान् समस्तांश्च व्रजेत् भूपतिना सह ।
 शतवर्षसहस्राणां प्राप्य लोकान् परावरान् ॥
 मोदते भर्तृसहिता यथेन्द्रेण शची तथा ।
 मानुषत्वं पुनः प्राप्य तेन भर्षा सहैव सा ॥
 पुण्ये कुले श्रियायुक्ते निरजा स्मश्रुसत्कृता ।
 सप्तजन्मानि यावच्च न वैधव्यमवाप्नुयात् ॥
 पुत्रान् भोगान् तथा रूपं सौगायारोग्यमेव च ।
 एकपत्नीं तथाभर्तुः प्राणैभ्यो भ्यधिकाभवेत् ॥
 शृणुयाद्वाच्यमानन्तु भक्त्या ललिताव्रतम् ॥
 मया स्नेहेन कथितं सापि सौभाग्यमृच्छति ।
 संपूज्यपूज्यपूज्यललिताङ्गयष्टिं
 गन्धीदसंभृतघटां शिरसि क्षिपेद्या ।
 सासभ्यमत्यललानासु ललामभूता
 भूताधिपं पतिसवाप्य भुवं भुनक्ति ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं ललिताव्रतम् ॥५

—:०:—

भीष्म उवाच ।

सौभाग्यारोग्यफलदं विपक्षक्षपणं विभी ।
भुक्ति मुक्ति प्रदं किञ्चित् व्रतं ब्रूहि महामुने ॥

पुलस्त्य उवाच ।

बहुमायाः पुरादेवः प्रोवाचासुरसूदनः ।
कषासु संप्रहृत्तासु ललिताराधनं प्रति ॥
तदिदानीं प्रवक्ष्यामि भुक्तिमुक्तिप्रदं शुभम् ।

ईश्वर उवाच ।

ऋणुष्यावहिता देवि तथैवानन्तपुण्यतात् ।
नराणामद्य नारीणामाराधनमनुत्तमम् ॥
नभस्त्रे वाद्य वैशाखे मार्गशीर्षेऽथवा पुनः ।
शुक्लपक्षे तृतीयायां स्नातः सन् गौरसर्षपैः ॥
गोरीचनाद्य गोमूत्रं सुस्नागोःशुद्धतं दधि ।
चन्दनेन च संमिश्रं ललाटे तिलकं न्यसेत् ॥
सौभाग्यारोग्य क्लृप्तकामदा च ललिताप्रियम् ।
प्रतिपक्ष तृतीयासु पुमान् वाद्य सुवासिनी ॥
धारयेद्भक्तवस्त्राणि कुसुमानि सितानि च ।

मत्स्य पुराणे ।

पुद्गलस्य रत्न वज्र धारण्य सुक्तम् ।
प्रतिपक्ष तृतीयायां पुमान् वै पीतवाससौ ॥

त्वनेन वसु पुण्यस्य रक्त
वस्त्र धारण सुकृतमतस्तयोः
पुरुषेः विकल्पः ।

विधवा शुक्ल वसननेकमेव हि धारयेत् ।
कुमारी सूक्ष्मसूत्रे च वाससी परिधाय वै ॥
देव्यर्चां पञ्चगव्येन ततः क्षीरेण केवलम् ।
स्त्रापयेन्मधुना तद्यत् पुष्य-गन्धोदकेन* तु ॥
पूजयेत् शुक्लवस्त्रैस्तु फले नानाविधै रपि ।
धान्यकाजाजिलवणगुडक्षीर घनान्वितैः ।
शुक्लाक्षतैस्त्रिलै रर्चां ललितायै सदा र्चयेत् ॥
धान्यकं कुसुमुत्* । अजा जीरकम् । अर्चां प्रतिमा ।
आपादादर्चनं कुर्यात् प्रतिपच्चं समाधिना ।
वरदायै नमः पादौ शिवायै गुल्फये नमः ॥
अशोकायै नमोजङ्घे भवान्धै जानुनी तथा ।
गुह्यं मङ्गलकारिण्यै वामदेव्यै तथा कटौम् ॥
पद्मोदरायै जठर मुरः कामश्रिये नमः ।
करो सोभाग्यं दायिन्यै बाह्व शशिसुखाप्रिये ॥
मुखं दर्पणवासिन्यै पार्वत्यै तु स्मितं तथा ।
गौर्यै नमस्तथानासां सुनेत्रायै च लोचने ॥
तुष्टैः ललाटफलकं कात्यायन्यै शिरस्ताथा ।
नमो गौर्यै नमस्तुष्ट्यै नमः काश्यपै नमः श्रिये ॥

* पुष्ये रिति पुष्पकाकरे पाठः ।

रन्नापै ललितायै च वासुदेव्यै नमो नमः ।

इति सर्वाङ्गपूजामन्त्रः ।

एवं संपूज्य विधिवदद्यतः पद्ममालिखेत् ।

पत्रैर्द्वादशभिर्युक्तं कुङ्कुमेन सकर्षिकम् ॥

पूर्व्वेण विन्यसेत् गौरीमपर्णाञ्च ततः परम् ।

भवानीं दक्षिणे तद्द्रुद्राणीञ्च ततः परम् ॥

विन्यसेत्पद्मिमे सौम्यं ततो मदन वासिनीं ।

वायव्ये पाटलासुग्रा सुत्तरेण ततोऽह्यमाम् ॥

लक्ष्मीं स्याद्वा स्वधान्तुष्टिं मङ्गलां कुसुदां सतीं ।

रुद्राणीं मध्यतः स्याद्य ललितां कर्षिकीपरि ॥

अतर्ह्ण चतुष्कोणे गीर्थाद्यष्टदिशी लिखेत् ।

वह्निर्दलाष्टके उमामेकमेकं शीलिखेत् ॥

कुसुमैरक्षतैः शुभ्रैः नमस्कारेण विन्यसेत् ।

गीतमङ्गलघोषांश्च कारयित्वा सुवासिनीं ॥

पूजयेद्भक्तवासीभिरक्तमाल्यानुलेपनैः ।

सिन्दूरमालिकां त्रेष्टं वासः शिरसि दापयेत् ।

सिन्दूरं कुङ्कुमं स्रान मिष्टं देव्याः सदा यतः ॥

नभस्यै पूजयेत् गौरीमुत्पलैरसितैः सदा ।

बभ्रुज्जीवै राश्रयुजे कार्तिके शतपत्रकैः ॥

जातिपुष्पै र्मागंशोर्षे पुष्पैः पीतै कुरुष्टकैः ।

माघेत् पूजयेद्देवीं कुन्दपुष्पैः सुभक्तितः ॥

सिन्धुवारेण जात्वावा फारगुणे पूजयेदुमां ।

चैत्रे तु मालिकाशाकैः वैशाखे गन्धपाठलैः ॥

सिन्दुवाराणि गुण्डिमल्लिका मुद्गवक्रः ।
 ज्येष्ठे कामलमन्दारैरावाटे च जवार्चनम् ॥
 कदम्बैरवमासत्या श्रावणे पूजयेद्गुमाम् ।
 गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् ॥
 विस्वपत्रार्ककुसुमं यवगोशृङ्गवारि च ।
 तिस्रोदकं पञ्चगव्यं प्राशयेत् क्रमशस्तदा ॥
 एतद्गाद्रपदाद्यन्नप्राशनं समुदाहृतम् ।
 प्रतिपच्चं तृतीयायां कर्त्तव्यञ्चाहलीचने ॥
 ब्राह्मणं ब्राह्मणीश्चैव शिवं गौरीं प्रकल्पयेत् ।
 भोजयित्वाश्चयेद्भक्तदा वस्त्रमाभ्यामुलेपनैः ॥
 पुंसः पीतान्तरे दद्यात् स्त्रियः कौशुंभवाससी ।
 निष्यावाजाजिलवणमिन्दुदण्डगुडान्वितम् ॥
 स्त्रियैदद्यात् फलं पुंसे सुवर्णोत्पलकं तथा ।
 यथा न देवि देवेशस्त्वां परित्यज्य गच्छति ॥
 तथा मां संपरित्यज्य पतिर्नान्यत्र गच्छतु ।
 कुमुदा विमला नन्दा भवानौ वसुधा शिवा ॥
 ललिता कमला गौरी सती रश्माद्य पार्ष्वती ।
 नभस्यादिषु मासेषु प्रीयतामित्युदीरयेत् ॥
 व्रतान्ते शयनं दद्यात् सुवर्णकमलान्वितम् ।
 मिथुनानि चतुर्विंशत्तद्वैवाद्य शक्तितः ॥
 अष्टावष्टौ च मासान्ते चातुर्थास्येऽथवाश्चयेत् ।
 तद्योपदेशारमपि पूजयेच्च सतो गुरुं ॥
 न पूज्यते गुरुर्वै त्र सर्वास्तात्ताफलाः क्रियाः ।

उक्त्वा मन्ततृतीयेषा सुतानन्दफलप्रदा ॥
 सर्वपापहरा देवी सोभाग्यारोग्यवर्धनी ।
 न चैनां विस्रग्नाठेऽन कदाचिदपि क्लृपयेत् ॥
 नरो वा यदि वा नारी घतः ग्राठात् पतत्त्वधः ।
 गर्भिणी सूतिका नक्तं कुमारीवाद्य रोगिणी ॥
 यदा शुद्धा तदान्येन कारयेत् प्रयता स्वयम् * ।
 इमामनन्तफलदां या तृतीयां समाचरेत् ॥
 कल्पकोटिशतं सेयं गौरीलीले महीयते ।
 विस्रह्नीनापि कुर्वीत वर्षत्रयमुपोषधैः ॥
 पुष्यमन्त्रविधानेन सापि तत् फलमश्नुते ।
 इति पठति शृणोति वा य इत्थं
 गिरितनयाव्रतमण्डले लोकसंस्थः ।
 मतिमपि च ददाति सोपि देवी
 ममरवभूजन किन्नरैश्च पूज्यः ॥

† इति पद्म पुराणोक्तं मनन्ततृतीया व्रतम् ।

—:◡:—

युधिष्ठिर उवाच ।

स्त्रीणां सम्यद्यते येन मर्त्यलोके ऋद्धे शुभम् ।

* क्रियतेऽप्येति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† मन्त्रियोत्तरोक्तमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

सर्वोपस्कारसंयुक्तं सुखं सौभाग्यं वृद्धिमत् ॥
सपत्नीरहितं कामं महिमानमनुत्तमम् ।
एतदाश्च मे कृणु प्रसादात् सुमुखो भव ॥

कृणु उवाच ।

कौलाग्रशिखरे रम्ये नानाधातुविचित्रिते ।
शङ्करः पार्वतीं प्राह किं त्वया सद्गतं कृतम् ॥
येन सौभाग्यमन्यन्तं प्रियासि वरवर्णिणी ।

देभ्युवाच ।

पुराहं देव तिष्ठामि कुमारी पितुरन्तिके ।
तत्र पृष्टा मया नाद्य जननीं सुखमास्थिता ॥
कथयस्वाम्य मे किञ्चित् व्रतं सौभाग्यवर्द्धनम् ।
एवमुक्त्वा मया देवी जननी मामयाव्रवीत् ॥
भद्रे कुरुष्व यत्नेन रश्माव्रतमनुत्तमम् ।
मनोऽभिलषितं कामं येन प्राप्नोषि शङ्कर ।
ज्यैष्ठ्यशुक्लतृतीयायां खाता नियमतत्परा ।
शुभं पार्श्वेषु पश्चाम्नीन् ज्वालमालान् ज्वालाहुतीन् ॥
गार्हपत्यं दक्षिणाम्निं सभ्यकाष्ठवनीयकम् ।
पञ्चमं भास्करं तेजइत्येते पञ्च बह्वयः ॥
इत्येषां मध्यमा भूत्वा तिष्ठ पूर्वामुखी भवत् ।
चतुर्भुजं ध्यायमानं पद्मजीपरिसंस्थितम् ॥
शृङ्गाजिनह्वयकुचां जटावल्ललधारिणीं ।
सर्वाभरणसम्पन्नां देवीमभिसुखं कुरु ॥

महाकालो महालक्ष्मीर्षहाकाया महामनाः ।
 महामाया महादेवी महामहिषनाशिनी ॥
 सरस्वती वतरणी सैव प्रोक्ता महासती ।
 तदास्यप्रेक्ष्यपरा भवती भावभाषिता ।
 होमं कुर्युं ऋहात्मनो ब्राह्मणाः सर्व्वतोदिशम् ॥
 देव्याः पूजा च कर्त्तव्या पुष्पधूपादिना ततः ।
 वह्नप्रकारं नैवेद्यमनिन्यं दृतपाचितम् ॥
 दापयेद्दपतो देव्याः सौभाग्याष्टकमेव च ।
 कुस्तुम्बरीं जीरकञ्च कुसुम्भं कुङ्कुमं तथा ॥
 निष्पावाः पञ्चमी पुषि सवणं शर्करा गुडम् ।
 पुष्पमण्डयिका कार्या गन्धधूपादिवासिता ॥
 पद्मासनेतिसन्निष्ठेद्यावत् परिणतो रविः ।
 ततः प्रथम्य रुद्राणीं मन्त्रमेतमुदीरयेत् ॥
 वेदेषु सर्व्वशास्त्रेषु दिवि भूमौ रसादले ।
 दृष्टः श्रुतञ्च बहुग्रो न शक्त्या रक्षितः शिवः ॥
 त्वं शक्तिस्त्वं स्वधा स्वाहा त्वं सावित्री सरस्वती ।
 पतिं देहि ष्टहं देहि सुतान् देहि नमोऽस्तुते ॥
 एवं क्षमाप्य तां देवीं प्रणिपत्य पुनः पुनः ।
 देहि शक्त्या ष्टहं रम्यं विचित्रं बहुभूमिकम् ॥
 छाद्य कङ्कारकोदारप्रतीलीभिरक्षतम् ।
 कुङ्कुमं स्तम्भगवाक्षाढ्यं मणिमण्डिततीरक्षम् ॥
 पद्मराग महानीलमणि, वैदूर्य्यं, शोभितम् ।
 गृहधानाविधानेन ब्राह्मणाय ब्रह्मसिन्धे ॥

सपत्नीकाय संपूज्य सर्वापस्कारसंयुतम् ।
 प्रयच्छ प्रचता भूत्वा मनोवाञ्छितदायकम् ॥
 सुवासिनीभ्यस्तद्देयं नैवेद्यं सूर्पसंस्त्रितम् ।
 निर्व्यत्य विधिनानेन ततः पश्चात् समापयेत् ॥
 दम्भत्यानि च संपूज्य सम्पत्वा मधुरैः रसैः ।

देव्यवाच ।

इत्युक्त्या मया चीर्णं देव रश्माव्रतं पुरा ।
 व्रतान्ते देवदत्तस्य दत्तं गृह्ववरं मया ।
 लोपामुद्रा सभर्तृकाचास्मिन् वेद्मनि पूजिता * ।
 व्रतेन तेन देवेभ्य भर्ता लब्धोऽस्मि शङ्कर ॥
 अष्टकायेऽस्त्रिता तेऽहं सौभाग्यबलगञ्जिता ।
 एवमेतन्मयाख्यातं यन्मात्रा कथितं मम ॥
 नीलकण्ठ नमस्तुभ्यं ममार्तिहर शङ्कर ।

श्रीकृष्णउवाच ॥

पूर्वमेव मया चीर्णं याचरिष्यन्ति योषितः ।
 पुरुषास्त्वद्य कौन्तेय ख्यातं रश्माव्रतं भुवि ॥
 भार्या पुत्र गृहं भोगान् कुलवृद्धिमवाप्नुयुः ।
 स्त्रीणां चारुसौभाग्यं गार्हस्थ्यं सार्व्वकामिकम् ॥
 बाल मध्यस्य वृद्धानां रूप लावण्यहृंहणम् ॥
 अनेन व्रतधर्मेण परलोके युधिष्ठिर ।
 काम-यान विमानेन वाञ्छितार्थप्रदेन तु ॥

* पूजिता च वरारोच लोपामुद्रा इति पुलकान्तरे पाठः ।

रुद्रलोके महाभागान् भुक्त्वा पाण्डवमन्दन ।
 मर्त्यलोके शुभे देशे धन धान्य समाकुले ॥
 हिमवद्विन्ध्ययोर्ध्वे आर्यावर्त्तं मनीषरे ।
 कुले च धर्मशीलानां पार्थिवानाञ्च पाण्डव ॥
 उत्पत्स्यते न सन्देहो रूपसौभाग्यसंयुतः ।
 नारीवैरथं महाभागा प्राप्नोत्वविकल्पं फलम् ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेन शिवधर्मपरो भवेत् ।
 भुक्त्वा भोगान् सुविपुलान् रुद्रैकगतमानसः ॥
 मृतोऽत्र कर्मनिर्मुक्तो रुद्रस्यानुचरो भवेत् ।
 भद्रं भवेद्भवभयापहरं नृलोके
 गौर्या स्वमातृभवन स्थितया च शीर्षं ।
 या स्त्री व्रतं भुवि करोति रता स्वधर्मे
 व्रज्येय केशव समं पतिमालभेत् सा ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं पञ्चाग्निसाधनरम्भाव्रतम् ।२

—:~:—

कृष्ण उवाच ।

रम्भाढतीयां वक्ष्यामि सर्व्वपापप्रणाशनीम् ।
 सुख सौभाग्य फलदं सर्व्वामयनिवारिणीं ॥
 सर्व्वदुःखहरां पुण्यां पुत्रपौत्रप्रदां तथा ॥
 सपत्नीदर्पदलनां रूपैश्वर्य्यकरिं शुभाम् ॥
 शङ्करेण पुरास्थाता पार्व्वत्याः प्रियकाव्यया ।
 तामिद्यां नृषु भूपास भूतानां परमं हितम् ॥

उपवासस्य नियमं गृह्णीयात् भक्तिभाविता ।
 देवी सम्बन्धरं यावत् तृतीयायामुपोषिता ॥
 प्रतिमासं करिष्यामि पारणश्चापरेऽहनि ।
 तद्विघ्नेन मे यातु समाप्तिं व्रतसुप्तमम् ।
 शरत्वं त्वां प्रपन्नास्मि दौर्भाग्यादुद्धरस्व माम् ॥
 एवं सङ्कल्प्य विधिवत् कौन्तेय कृतनिश्चया ।
 भक्त्या गारौ ध्यानपरा स्नानं कृत्वा जितेन्द्रिया ॥
 नद्यां तद्भाग्ये वाप्यां वा गृहे वा नियतेन्द्रिया ।
 पूजयेत्पार्वतीं नाम्ना रात्रौ प्राश्य कुशोदकम् ॥
 प्रभाते भोजयेत्द्विपान् शिवभक्तान् विशेषतः ।
 सहिरण्यञ्च सवर्णं दत्त्वा तेषां तु दक्षिणाम् ।
 गौरीष्णाञ्च यथा शक्त्या भोजयेत् प्रयता सती ॥

गौरीष्णाः सुवासिनीः ।

अनेन विधिना राजन् यः कुर्यात् पार्वतीव्रतम् ।
 सा कुलानां शतं साधन्तारयेन्नात्र संशयः ॥
 ब्रह्म लोके सुखं भुङ्क्ता शिवलोके महीयते ।
 पौषे मासे तृतीयायां गिरिजां नाम पूजयेत् ॥
 गोमूत्रं प्राशयेद्द्राक्षी प्रभाते भोजयेद्द्विजान् ।
 हिरण्यं जीरकञ्चैव स्वशक्त्या दापयेत्ततः ॥
 शकललोके वसेत् कल्पं ततः शिवपुरं व्रजेत् ।
 माघमासे तृतीयायां सुदेवीं नाम पूजयेत् ॥
 गोमूत्रं प्राशयेद्द्राक्षी स्वपेद्द्राक्षी विमलरा ।

हिरण्यं च कुशकान्तु दिवा दद्यात् द्विजातये ॥
 विष्णुलोके चिरं खित्वा प्राप्नोति शिवमन्दिरम् ।
 गौरौतिफालशुभे नाम गोक्षीरं प्राशयेन्निशि ॥
 प्रभाते भोजयेद्दिपान् यथाशक्त्यं सुवासिनीम् ।
 कुस्तुम्बुरीः सक्कनकास्तेभ्यो दत्त्वा विसर्जयेत् ॥
 वाजपेयातिरात्राभ्यां फलं प्राप्ता दिवं व्रजेत् ।
 चैत्रे राजन् विशालाक्षीं पूजयेद्भक्तितत्परा ॥
 दधि प्राश्य स्वपेत् प्रातर्दद्यात् हेमसकुङ्कुमम् ।
 शुभसोभाग्यसम्पन्ना मृता शिवपुरं व्रजेत् ॥
 वैशाखस्य तृतीयायां श्रीसुखीं नाम पूजयेत् ।
 घृतञ्च प्राशयेद्द्राक्षी पुनर्दद्यात् द्विजातये ।
 कनकं शर्कराक्षैव पूजयित्वा क्षमापयेत् ॥
 सर्वान् कामानवाप्नोति मृता शिवपुरं व्रजेत् ।
 ज्यैष्ठे नारायणीं नाम पूजयेत् पुष्पदीपकैः ॥
 प्राशयेत्तवणं राक्षी ततश्चैका निशि स्वपेत् ।
 शिवभक्तान् द्विजान् प्रातर्भोजयित्वा यथेष्टितान् ।
 स्ववासिनीर्विधाशक्त्या भक्ष्यभीक्ष्यैश्च भोजयेत् ॥
 ताम्बूलद्वनकं दद्यात् प्रनिपत्य विसर्जयेत् ।
 घृतञ्च प्राशयेद्द्राक्षी पुनर्दद्यात् द्विजातये ।
 कनकं शर्कराक्षैव पूजयित्वा क्षमापयेत् ॥
 सर्वान् कामानवाप्नोति मृता शिवपुरं व्रजेत् ।
 मार्गशीर्षे शुभे मासि तृतीयायां नराधिप ।
 शुक्लायां प्रातर्दद्यात् दन्तधावनपूष्पकम् ॥

अन्तकाले सुखं याति यत्र देवो महेश्वरः ॥
 चाषाढे माधवीं नाम प्राशयित्वा तिलोदकं ।
 प्रभाते भोजयेद्विप्रान् हेमयुक्तं गुडं ददेत् ॥
 सर्वसम्पत्सुखं भुक्त्वा देव्याद्यागुचरी भवेत् ।
 आषाढे तु शिवं पूज्य पिवेद्गोशृङ्गजम्बलम् ।
 प्रभाते ब्राह्मणं भोज्य दद्याद्देम तिलैः सह ॥
 भोगान् भुक्त्वा महीपृष्ठे गोलोकमधिगच्छति ।
 तथा भाद्रपदे मासि सुभद्रां नाम पूजयेत् ॥
 विस्वपत्तरसं प्राश्य स्वपेतु ब्रह्मचारिणी ।
 प्रभाते विप्रमुखाय दद्याद्देम फलैः सह ॥
 सर्वलोकेश्वरी भूत्वा भुक्त्वा भोगाननेकधा ॥
 प्राप्नोति ब्रह्मसदनं व्रतस्यास्य प्रभावतः ॥
 आश्विनस्य ढतौयायां पूजयित्वा शिवप्रियां ।
 प्राशयेत्सङ्कुलजलं प्रातर्विप्रांश्च भोजयेत् ॥
 दक्षिणाचारं निर्दिष्टा चन्दनञ्च सन्नाशनम् ।
 सर्वयज्ञफलं प्राप्य गौरीलोके महीयते ॥
 पद्मोद्भवां कार्तिके च पञ्चगव्यं पिवेन्नृशि ।
 वादिचैर्जागरं कृत्वा प्रभाते भोजयेत् द्विजान् ॥
 सपत्नीकान् सुभाचारान् माल्यवस्त्रैर्विभूषणैः ।
 भूषयेद्भरतश्रेष्ठ गौरिणीर्भोजयेत्तथा ॥
 उमामाहेश्वरं हैमं समाप्ते कारयेत् शुभम् ।
 उमामाहेश्वरं रूपं विष्णुधर्मोत्तरोदितम् ॥
 वामाहै पार्वती कार्या शिवः कार्यश्चतुर्भुजः ।

अक्षमालां त्रिशूलञ्च दर्पणञ्च करे दधत् ॥
 एकवक्त्रस्त्रिनेत्रञ्च वामार्धदयितातनुः ।
 यथा विभवसारेण वितानं पञ्चवर्णकम् ॥
 श्रद्धाचात्र विनिर्दिष्टा सर्वोपस्कारसंयुता ।
 सवत्सां शीलसम्पन्नां गाञ्च दद्यात् पयस्विनीं ॥
 आसनञ्च मृदुं दद्यात् श्वेतकृत्तं कमण्डलुम् ।
 बाहुकोपानह्रीं दिव्ये वस्त्रयुग्मञ्च पाण्डुरम् ॥
 पीतयज्ञोपवीतञ्च पट्टसूत्रसमुद्भवम् ।
 शङ्खशक्तिसमीपितं दर्भञ्च समुज्ज्वलम् ॥
 दत्तं सकम्बुकं देयं स्त्रियाञ्च परिधानकम् ।
 उमामाहेश्वरं स्थाप्य आसने तान्त्रजे नृप ॥
 वृजां विरचयेद्भक्ता ध्यायमाना महेश्वरम् ।
 नानादिभ्यैः सुगन्धैश्च पुष्पैः पत्रैः फलैस्तथा ॥
 हृतपद्मैश्च नैवेद्यैर्दीपमालाविभूषितैः ।
 कूष्माण्डैर्नीलिकेरैश्च दाडिमैर्बलिपूरकैः ॥
 जीरकैर्लवणैश्चैव कुसुमैः कुङ्कुमैस्तथा ।
 रसपात्रैः सुसृष्टैश्च गीतवाद्यैरनेकधा ॥
 पूजयेद्देवदेवेशं सपत्नीकं क्षमापयेत् ।
 ततो द्विजं समाह्वय वेदवेदाङ्गपारगम् ॥
 वेदध्वनिसमायुक्तसुपवेश्य वरानने ।
 सपत्नीकं नृपञ्च छ दिव्यचन्दनचर्चितम् ॥
 परिधापयित्वा लङ्कृत्य सर्वं तस्मै निवेदयेत् ।

हर्षं कृते फलं वरस्यात्तत्र शक्त्यं मयेरितुम् ॥
 सर्वोक्तफलसंयुक्ता सर्वदेवैः सुपूजिता ।
 जाता जाता महाकल्पे सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥
 तदस्मै त्रिवसाद्योष्यं नारी प्राप्नोत्यसंशयम् ।
 पुत्रवो वा वृषचेष्ट त्रिवभक्तिसु सुव्रत ॥
 सोऽपि तत्फलमाप्नोति नान्यथा त्रिवभापितम् ।
 सौभाग्यार्थं पुरा श्रीं रक्षया राजसत्तम ॥
 तेन रथातृतीयं परं सौभाग्यदायिनी ।
 योऽहं स एव भूतेषु गीरी सै वन संशयः ।
 इतिमत्या महाभाग शरषं व्रज पार्ष्वतीम् ॥
 एषा हिमाद्रि दुष्टिर्दुष्टिता तृतीया
 एषाभिधानमभवत् शुचि मत्कृतेति ।
 संप्रायनैवचित्तममवृतासुपीष
 प्राप्नोति वाञ्छितफलान्वयसा वृद्धनि ॥

इति भविष्योत्तरोत्तरं नामव्रतम् ।*



युधिष्ठिर उवाच ।

भगवन् हरिकालीति का देवी प्रोच्यते भुवि ।
 षाड्रंध्रान्ये स्थिता कस्मात् पूज्यते स्त्रीजनेन सा ।
 पूजिता किं ददातीह सर्वं मे ब्रूहि केशव ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

पार्थ पौराणिकीं दिव्यां मत्तः शृणु कथामिमाम् ।
30-2

आसीद्दक्षस्य दुहिता काली नाम सुकन्यका ॥
 वर्णेनापि च सा कृष्णा नवनीलोत्पलप्रभा ।
 चरम्बकाय च सा दत्ता महादेवाय शूलिने ॥
 विवाहिता विधानेन शङ्खतूर्यनिनादिता ।
 यज्ञयात्रां गतैर्द्वैः ब्राह्मणानाञ्च निस्त्रिनैः ॥
 निर्व्वर्त्तिते विवाहे तु कन्यासाहं त्रिलोचनः ।
 क्रीडते विविधैः कामैर्भनसः प्रीतिवर्धनैः ॥
 अथ देवसमाजे तु कदाचित् वृषभध्वजः ।
 आस्थानमण्डपे रम्ये आस्ते विष्णुसदाश्वान् ॥
 तत्रस्थानाङ्गयामास नर्मणा त्रिपुरान्तकः ।
 काली, नीलोत्पलश्यामां गणमादृगणान्विताम् ॥
 एह्ये हि त्वं मतिः काली भिन्नकृष्णाञ्जनप्रभे ।
 कालमप्यतिसौन्दर्यात्तत्त्वरूपं मम प्रियं ॥
 इत्येवमुक्त्वा सा देवी व्रीडिता क्रोधमानसा * ।
 निश्वासीच्छ्वासतान्नाच्ची वाष्पगद्गदया गिरा ॥
 रुरोद सस्वनं वाला प्रीवाच स्फुरिताधरा ।
 किं देव नाम्ना या गोरी सा गोरीत्यभिधीयते ॥
 यस्मान्ममोपमा दत्ता भिन्नकृष्णाञ्जनं विभो ।
 समाजे देवसिद्धानां वासुदेवस्य सन्निधौ ॥
 तस्माद्देहमिमं कृष्णं जुहोमि ज्वलितेऽनले ।
 इत्युक्त्वा वार्यमाणापि हरिकाली रुषान्विता ॥
 मुमोच हरितच्छायां काम्निं हरति श्रावले ।

* क्रीडतेति पुलकान्तरे पाठः ।

विक्षेप देहं रोषेण ज्वलिते हृद्यवाहने ॥
 पुनः पर्वतराजस्य गृहे गौरी बभूव सा ।
 महादेवस्य देहार्हं स्थिता संपूज्यते सुरैः ॥
 या मुक्ता शाल्ले देव्या कालीकान्तिः स्रदेहजा ।
 सा बभूव महावीर्या देवी कात्यायनी पुनः ॥
 तथा कृतानि भूरीणि देवकार्याणि पाण्डव ।
 तृष्टैर्हृदगणैर्दत्तो वरस्तस्यै शृणुष्व मे ॥
 यच्च शाल्लसंस्था वै कालीति वरदायिनी ।
 पूजयिष्यन्ति पुरुषा नार्यैर्वापि विशेषतः ॥
 सर्वपापविनिर्मुक्ताः सुखसौभाग्यगर्विताः ।
 चिरायुषो भविष्यन्ति भर्तृपुत्रसमन्विताः ॥
 एवं सा हरिकालीति गौरी शस्ये व्यवस्थिता ।
 पूजनीया महाराज मन्त्रेणानेन भक्तिः ॥
 हरेर्नाम्नः समुत्पन्ने हरिकालि हरिप्रिये ।
 सर्वदा शस्य मूर्त्तिस्थे प्रणतार्त्तिहरे नमः ॥
 इत्थं संपूज्य तां देवीं दत्त्वा विप्राय दक्षिणाम् ।
 ततो जलाशये रम्ये मन्त्रेषैवं विसर्जयेत् ॥
 अर्चितासि मया भक्त्या गच्छ देवि सुरालयम् ।
 मम दीर्भाग्यनाशाय पुनरागमनाय च ॥
 एवं यः पाण्डवश्रेष्ठ हरिकालीव्रतं चरेत् ।
 प्रतिवर्षं विधानेन नारी वा भक्तितत्परा ॥
 नीत्वा यत् फलमाप्नोति तदन्येन न लभ्यते ।
 मर्त्यलोकात् चिरं जीवित सर्वसामैः सुपूरिता ॥

पुत्र पीत्र सुहृन्नित्र नमृदोचित्र सहस्रकम् ॥
 सार्धं वर्षशतं जीवेत् भोगान् भुक्त्वा महीतले ।
 ततोऽवसाने देहस्य शिवलोके महीयते ॥
 वीरभद्र महाकाल मन्दीश्वर विनायकाः ।
 सर्वं प्रसादसुखा भवन्ति व्रतयोगतः ॥
 संपूज्य शूर्पं गतसप्तनिरूढयक्षां
 देवीं हिमाद्रितनयां हरिकालिकायां ॥
 नैवेद्य जागर सप्तपद्यगीत वाद्यैः
 संप्राप्नुवन्ति मनुजाः सुखिरं सुखानि ॥

अथ उवाच ।

सुकृताभ्युपदेशैव तृतीयायां समाचरेत् ।
 रत्नधान्यैः स वैरुढैः कृत्वा विहितश्रावणे ॥
 खर्जूरेर्नारिकेलैश्च फलैश्च मधुरैस्तथा ।
 मातुलाङ्गकुसुमैश्च धान्यकैर्जम्बिकैस्तथा ॥
 गन्धैः पुष्पैः फलैर्धूपैर्नैवेद्यैर्मोदकादिभिः ।
 प्रीणयित्वा समासाद्य पद्मरागेण भाविता ॥
 घण्टावाद्यादिभिर्गीतैः शुभैर्दिव्यैः कथानकैः ।
 पूजनौघा महाराज मन्त्रेषानेन भक्तितः ॥
 हरेर्नाम्नः समुत्पन्ने हरकालि हरप्रिये ।
 सर्वदा यस्य मूर्त्तिस्थे प्रणतार्त्तिहरे नमः ॥
 इत्थं संपूज्य तां देवीं दद्याद्विप्राय दक्षिणाम् ।
 कृत्वा जागरणं रात्रौ प्रभाते किञ्चिदुद्धते ॥

रात्री सुवासिनीभिश्च सा नेया तु जलाशये ।
 ततो जलाशये रम्ये मन्त्रेष्वैव विसर्जयेत् ॥
 अर्चिता च मया भक्त्या गच्छ देवि सुरालयम् ।
 मम दीर्घात्मनाशाय पुनरागमनाय च ॥
 एवं यः पाण्डवश्रेष्ठ हरिकालीव्रतं चरेत् ।
 प्रतिवर्षं विधानेन नारी वा भक्तितत्परा ॥
 नीत्वा यत् फलमाप्नोति तदन्वयेन न लभ्यते ।
 मर्त्यलोके चिरञ्जीवेत् सर्वकामैः सुपूजितः ॥
 पुत्रं पौत्रं सुहृन्पि च नमृ दीहि च सहस्रसुलम् ।
 सायं वर्षं शतं जीवेद्भोगयुक्ता महीलले ॥
 ततोपसाने देहस्य शिवलोके महीयते ।
 वीरभद्र महाकाल नन्दीश्वर विनायकाः ॥
 सर्वे प्रमादसुमुखा भवन्ति व्रतयोगतः ।

संपूज्य शूर्पगत समविरूढ चस्यां
 देवीं हिमाद्रितनयां हरिकालिकास्थाम् ।
 नैवेद्यजागर समुषतगीतवाद्यैः
 संप्राप्नुवन्ति मनुजाः सुचिरं सुखानि ॥

इति भविष्योत्तरोक्तां हरिकालीव्रतम् ॥५

—:०:—

दृष्यन्दिशुवाच ।

येनाविद्योगमासाद्य व्रतेन नियमेन वा ।
 सदा नारी सुतान् येन व्रजेद्येन पदञ्च तत् ॥

विधवा च परे लोके भर्त्सेव मुनिपूज्यते ।
सुखेनापि सदा ब्रह्मन् वद येन धनेन च ॥

अनिलाद् उवाच ।

उमया चरितं यच्च भवान्या क्लृप्ताव्रतम् ।
वाक्ये हिमवतो जन्म दक्षकोपादिसुचया ॥
महासौभाग्यसन्दोहं दृष्ट्वा देव्या महात्मना ।
परुषत्या वशिष्ठेन कथितं तत् व्रतं शृणु ॥

वशिष्ठ उवाच ।

परुषति शृणुष्वेदं व्रतं सौभाग्यवर्द्धनम् ।
अवैधव्यपदं स्त्रीषामविद्योगव्रतस्त्विदम् ॥
मांशोषे सिते पक्षे ज्ञाता शुक्लाम्बरप्रिया ।
ऋचन्द्रं द्वितीयायां नक्तं भुञ्जीत पायसम् ॥
आचम्य च शुचिर्भूत्वा दण्डवच्छङ्करव्रमेत् ।
मुदान्विता नमस्कृत्य विज्ञाय परमेश्वरम् ॥
ॐ उदुम्बरमयं वृक्षं याञ्छमष्टाङ्गुलं शुभम् ।
उत्तराशागतं सायं सत्वचं निर्गणं दृढम् ॥
वाग्यता प्राङ्मुखी भूत्वा भक्षयेद्दक्षधावनम् ।
द्वितीयायां ततः स्वप्याङ्गुली तद्भुतमानसा ॥
द्वितीयायां ससुखाय सुहृते ब्रह्मणः सुभे ।
कृतकार्या च सुज्ञाता शुक्लमाख्याम्बरा ततः ॥
शालिपिष्टमये कृत्वा स्त्रीपुंसःप्रतिभे शुभे ।
वेषुपात्रे तु संस्थाप्य पूजयेद्भक्तितत्परा ॥

उपवासश्च कुर्वीत सर्वभोगविवर्जितम् ।
पाषण्डादिभिरालापं कृत्वा ज्ञाता विवर्जयेत् ॥
ततो निशायां शूचीषि कृतपूजां कृतोत्सवाम् ।
कृतवादिष्वनिर्घोषां जागरं तत्र कल्पयेत् ॥
विधिवत् पूजयित्वा तत् पैष्टिकं पुत्रिकाद्वयम् ।
सुप्रभाते द्विजापाय सहिरण्यं प्रदापयेत् ॥
यथा शक्या महाभागे विभवाठं विवर्जयेत् ।
उमामाहेश्वरं ह्येतत् कल्पयित्वा तु चेतसि ॥
ब्राह्मणोऽपि जलेऽगाधे पैष्टन्तन्मिथुनं क्षिपेत् ।
एवं कृते स्वस्वयना मिथुनानि तु भोजयेत् ॥
शिवभक्तान् द्विजान् भोज्य मिष्टान्नेन स्वयञ्जितः ।
प्रतिमासं प्रकुर्वीत विविधान्नेन सयुतं ॥
मार्गशीर्षे पुनर्थासि कार्तिकान्ते समुत्थते ।
नामानि ते प्रवक्ष्यामि प्रतिमासक्रमेण तु ॥
पूजाजपनिमित्तश्च सिद्धार्थं चिन्तितश्च च ।
शङ्करं मार्गशीर्षे तु नाम गौरीसमन्वितम् ॥
गौरीं वा पार्वतीश्चैव पुष्यमासे तु पूजयेत् ।
भवश्चैव भवानीश्च माघमासे प्रपूजयेत् ॥
फाल्गुने तु महादेवसुमया सहितं यजेत् ।
चैत्रे त्रिलोचनं देवं ललिताश्च प्रपूजयेत् ॥
व्याणुं वैशाखमासे तु सोलनेषा समन्वितम् ।
वद्व्राण्या सहितं वद्वं ज्येष्ठे मासे यजेत च ॥
भाद्राठे पशुनाथश्च सत्या साधं सुचिन्तिते ।

श्रीकण्ठं त्रावचे देवं सुभद्रां परमेष्वरीम् ॥
 भीमं भाद्रपदे तद्वत् काक्षरान्निसमन्वितम् ।
 शिवमाख्ययुजे भक्त्या गङ्गया सहितं यजेत् ॥
 ईशानं कार्तिके मासि शिवां देवीं प्रपूजयेत् ।
 प्रतिमासे विना नाज्या व्रतसिद्धिर्न विद्यते ॥
 प्रतिमासेषु पुष्पाणि यानि पूजासु योजयेत् ।
 तानि ते संप्रवक्ष्यामि सद्यः प्रीतिकाराणि वै ॥
 आदौ नौलोत्पलं योज्यं तदभावेऽपराक्षपि ।
 पवित्राणि सुगन्धीनि योजयेद्भक्तितो वने ॥
 करवीरं विस्वपत्रं किंशुकं कुम्भमल्लिकाम् ।
 पाटलीं च कदम्बञ्च तरगन्द्रोथमासतीं ॥

अथं कुङ्कुमं द्रोणं सुरवकः ।

एतान्युक्तक्रमेणैव मासेषु हादशेष्वपि ।
 भक्त्या योज्यानि रक्षोश्च देवस्य प्रियकाम्यया ॥
 तथा च पञ्चगव्यन्तु प्राशनं प्रतिमासिकम् ।
 नान्यच्चि पावनं किञ्चित् पञ्चगव्यात्परं स्मृतम् ॥
 एवं व्रते कृते भद्रे शिवभक्तिसमन्विता ।
 वत्सरान्के वितानञ्च ध्वजं किङ्किणिमालिकम् ॥
 षट्पा दीपं वस्त्रयुग्मं शिवभक्त्या निवेदयेत् ।
 त्रापयित्वाशुक्लिता च सौवर्ण्यं विद्धि पङ्कजम् ॥
 यथा विभवतो देयं देवदेवस्य तुष्टये ।
 रौप्यञ्च रूपयुगलं देवस्य पुरतोन्वयेत् ॥

बहुप्रकार नैवेद्यं गीतवाद्यसमन्वितम् ।
 कुर्व्यात्नीराजनं शम्भोः ज्ञात्वा गच्छेत् गृहं स्वकम् ॥
 चतुरस्रं महादेवसुमासैव चिकोणिकीं ।
 ज्ञात्वाचार्याय तद्गुग्मं मौक्तिकादियुतन्ददेत् ॥
 व्रतिनो भोजयेत् पखाद्वाद्दशैव द्विजोत्तमान् ।
 मिथुनानि च यावन्ति भक्त्या शक्त्वा च दक्षयेत् ॥
 कर्षकैकप्रमाणेन श्रातकुम्भमयं शुभम् ।
 उभामाद्देश्वरसैव कारयित्वा सुशीभनम् ॥
 उभामाद्देश्वरं रूपं रश्मादृतीयाव्रतीक्तं वेदितव्यम् ।
 मौक्तिकानि चतुःषष्टिस्तावन्तोऽपि प्रवालकाः ।
 तावन्ति पुष्परामाणि* तान्मपापीपरि न्यसेत् ॥
 वस्त्रेण वेष्टयित्वा च गन्धपुष्पैः समर्चयेत् ।
 एतत्सर्वं सारयुक्तमाचार्याय निवेदयेत् ॥
 व्रतिनां ब्राह्मणानां वा विद्युनानामद्यापि वा ।
 अशक्तो निष्कृत्यं दद्याद्विस्तृताठविवर्जितः ॥
 दत्त्वा हिरण्यं वासांसि प्रणिपत्य क्षमापयेत् ।
 चत्वारिंशत् तथाष्टौ च कुम्भान् कृत्वा सुपानहौ ॥
 सहिरण्यान् क्षतान् सर्वान् दधिपुष्पोदकार्चितात् ।
 दीनाम्भवधिरादीनां तद्दिने बानिवारितम् ॥
 कल्पयेदन्नपानञ्च सुकृष्टं रश्मिमात्मनः ।
 न्यूनाधिकं न कर्षय्यं स्वचित्तपरिमाणतः ॥

* पुष्परामाणि इति पुष्पकान्तरे पाठः ।

संपूरयेत् कल्पनया यदि वित्तं न विद्यते ।
 अवियोगकरं वैतत् रूपसौभाग्यवित्तदम् ।
 आयुः पुत्र, प्रदं काम्यं शिवलोकप्रदायकम् ॥

इति कालिकापुराणोक्तमवियोगवृत्तियाव्रतम् ।

—:○:—

मत्स्य उवाच ।

तथैवान्यत् प्रवक्ष्यामि सर्व्वकामफलप्रदम् ।
 सौभाग्यशयनं नाम यत्पुराणविद्दोविदुः ॥
 पुरा दग्धेषु लोकेषु भुर्भुवःस्वर्गहादिषु ।
 सौभाग्यं सर्व्वलोकानामेकस्यमभवत्तदा ॥
 तच्च वैकुण्ठमासाद्य विष्णुवक्षस्यले स्थितम् ।
 ततः कालेन महता पुनः सर्गविधौ नृप ॥
 अहङ्कारावृते लोके प्रधानपुरुषान्विते ।
 विवादे संप्रहृते च कमलासनकृष्णयोः ॥
 लिङ्गाकारा समुद्रता ज्वलती वीपरूपिणी ।
 तथाभितप्तदेहस्य विष्णोर्वक्षस्यलाञ्छितम् ॥
 सौभाग्यात् यत् द्रवीभूतं न्यायतप्तस्य वक्षसः ।
 रसरूपं न तथावत् प्राप्नोति वसुधातलम् ॥
 उत्क्षिप्तमन्तरिक्षस्थं ब्रह्मपुत्रेण धीमता ।
 दक्षेण पीतमात्रन्तु रूपसावक्ष्यकारकम् ॥
 बलं तेजो महज्जातं दक्षस्य परमेष्ठिनः ।

शेषं तदपतङ्गमावष्टथा तदजायत ॥
 इक्षवः* स्तराजश्च निष्पावाजाजिघाम्यकम् ।
 विकारवच्च गोक्षीरं कुशुम्भं कुङ्कुमं तथा ।
 लवणं चाष्टमन्तत्र सौभाग्याष्टकमुच्यते ॥
 तवराजमत्युत्तमा शर्करा
 विकारवत् विकारसहितम् ।
 पीतं यत् ब्रह्मपुत्रेषु योगज्ञानविदा तथा ।
 दुहितस्याभवत्सन्नाया सतीत्यभिधीयते ॥
 लोकानतीत्य सखिता सखिता तेन चोच्यते ।
 चैलोक्यसुन्दरी राजन् उपयेमे पिनाकष्टक् ॥
 या सौभाग्यैकनिष्पन्ना भुक्ति मुक्ति फल प्रदा ।
 तामाराध्य पुमान् भक्त्या नारी वा किं न विन्दति ॥

मनुस्वाच ।

कथमाराधनं तस्या जगद्धात्रगा जनार्दन ।
 तद्विधानञ्च जगती जायते तद्ददस्व नः ॥

मत्स्य उवाच ।

वसन्तमासमासाद्य तृतीयायां जनप्रियाम् ।
 युक्तपञ्चम्य पूर्वाञ्छे तिलैः स्नानं समाचरेत् ॥
 तस्मिन्नहनि सा देवी किल विश्वात्मना सती ।
 पाण्डिग्रहणकैः मन्त्रैरुदूटा ग्नरवर्णिनी ।
 तथा सहैव देवेभ्यं तृतीयायां समर्चयेत् ॥

* स्तराजमिति पुस्तकाकारे पाठः ।

फलैर्बानाविधैर्धूपैर्दीपैर्नैवेद्यसंयुतैः ।

प्रतिमां पञ्चगव्येन तथा गन्धोदकेन च ।

स्नापयित्वाश्चयेद्गौरीमिन्दुशेखरसंयुतां ॥

प्रतिमाभित्थविशेषोक्तावपि गौरीशयोः सौवर्णमिव प्रतिमाहयं
कर्त्तव्यम् ।

सौवर्णप्रतिमाहयं प्रतिपादयेदित्यपि वक्ष्यमाणत्वात् ।

नमोस्तु पाटलायै तु पादौ देव्याः शिवस्य तु ।

शिवायेति च संकीर्णजयायै गुल्फयोर्हयोः ॥

त्रिगुणायैति रुद्रस्य भवान्यै जङ्घयोर्युगम् ।

शिवं रुद्रेश्वरायेति जयायै इति जानुनी ॥

संकीर्णहरिकेशाय तथोरु वरदे नमः ।

शंशयै शङ्खटिं रत्यै शङ्करायेति शङ्खके ॥

कुचिहये च कोट्यै शूलिनं शूलपाणये ।

मङ्गलायै नमस्तुभ्यमुदरं वापि पूजयेत् ॥

सर्वात्मने नमोरुद्रमीशान्यै च कुचहयम् ।

शिवं वेदात्मने तद्गङ्गास्थौ कण्ठमर्चयेत् ॥

त्रिपुरघ्नाय विश्वेयमनन्तायै करहयं ।

त्रिलोचनायेति हरं बाहू कालानलप्रिये ।

सौभाग्यभवनायेति भ्रूषणाहिं समर्चयेत् ॥

‘भ्रूषणाहिं, शिवं ।

स्नाहा स्तथायै च मुखमीश्वरायेति शूलिनः ।

अशोकमधुवासिन्धौ पूज्या चौठौ च कामदौ ॥

स्नात्वे च हरन्तददास्वस्रसुखप्रिये ।
 नमोऽर्चनारीयहरमसिताङ्गीति नासिकम् ॥
 अर्चनारीयाय नम इति हरं पूजयेदित्यर्थः ।
 नम उघाय लोकेयं सखितेति पुनर्भवी ।
 शर्वाय पुरहन्तारं वासुदेव्यै तद्यासकं ॥
 नमः श्रीकण्ठनाभाय शिवं केशांस्तघार्चयेत् ।
 तथा अक्षक पूजामन्त्राभ्यामुभेययोः केशानर्चयेदित्यर्थः ।
 भीमोद्यसौम्यरूपिण्यै शिरः सर्वाङ्गने नमः ।
 शिवमभ्यर्च्य विधिवत्सौभाग्याष्टकमद्यतः ॥
 स्नापयेद्दृत, निष्पाव, कुसुम्भ, चीर, जीरकम् ।
 तवराजेक्षुलवणं कुसुम्बुहमघाष्टकम् ॥
 दत्तं सौभाग्यकृत्यस्नात्सौभाग्याष्टकमित्यतः ।
 अत्र दृतचीरयोरेककोटिता ।

विकारवच्चगोचीरमिति सौभाग्याष्टकमध्ये मन्त्रपुराणएव
 पूर्वत्राभिधानात् ।

कुसुम्बुहं, धान्यकम् ।
 तवराजः शर्कराविशेषः ।
 एवं निवेद्य तत्सर्वमद्यतः शिवयोःपुरः ।
 चैत्रे ऋद्धोदकं प्राश्य स्वपेत् भूमावरिन्दम ॥
 पुनः प्रभाते उत्थाय कृतस्नानजपः शुचिः ।
 सपूज्य द्विजदान्मत्स्यं मास्यवस्त्रविभूषणैः ॥

सौभाग्याष्टकसंयुक्तं सुवर्णप्रतिमाह्वयम् ।
 प्रीयतामत्र ललिता ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 एवं संवत्सरं यावत्तृतीयायां सदा मनी ।
 प्राशने दानमन्त्रे च विशेषोऽयं निबोध मे ॥
 गोमृद्गोदकमाद्यं स्याद्द्वैशाखे गोमयं पुनः ।
 ज्यैष्ठ्ये मन्दारकुसुमं विल्वपत्रं शुची स्मृतम् ॥
 श्रावणे दधि सम्प्राश्य नभस्ये च कुशोदकम् ।
 शीरमाश्लयुजे मासि कार्तिके पृषदाण्यकम् ॥
 पृषदाण्यं दधिमित्रं हृतम् ।

मार्गशीर्षे तु गोमूत्रं पीषे सम्प्राशयेद्दृतम् ।
 माघे कृष्णतिलांस्तद्वत् पञ्चगव्यञ्च फाल्गुने ॥
 ललिता विजया भद्रा भवानी कुसुदा शिवा ।
 वासुदेवी तथा गौरी मङ्गला कमला सती ॥
 उमा च दानकाले तु प्रीयतामिति कीर्त्तयेत् ।
 मङ्गिका, शोक, कमल, कदम्बो, त्वल, मालती ॥
 कुलत्थं करवीरञ्च वाण, मन्थान, कुङ्कुमम् ।
 सिन्दुवारञ्च सर्वेषु मासेषु क्रमतः स्मृतम् ॥
 वाणं नीलकुरण्टकं, भस्मानं महासहायुष्यं, सिन्दुवारं निं-
 गुण्डीपुष्पम् ।

जपा-कुसुम्भ-कुसुम-मालती-शतपत्रिकाः ।
 यथालाभं प्रशस्तानि करवीरञ्च सर्वदा ॥
 एवं सम्बत्सरं यावदुपोष्य विधिवन्नरः ।

स्त्री वा भक्त्या कुमारी वा शिवावभ्यर्च्य शक्तिः ।
 व्रतान्ते शयनं दद्यात्सर्व्वीपस्करसंयुतम् ॥
 उमामाहेश्वरं हैमं वृषभञ्च गवा सह ।
 स्थापयित्वा च शयने ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥

उपस्करसुपधानादि ।

शोमिथुनमपि हैममेव मुख्यस्य शयने स्थापनासम्भवात् ।
 अन्यान्यपि यथा शक्त्या मिथुनान्यम्बरादिभिः ॥
 धान्यालङ्कारगोदानैरभ्यर्च्य धनसञ्चयैः ।
 वित्तशठेऽत्र न रक्षितः पूजयेद्गतवित्स्त्रयः ॥
 एवं करोति यः सम्यक् सोभाग्यशयनव्रतं ।
 सर्व्वान् कामानवाप्नोति पदमानन्त्यमश्नुते ।
 फलस्यैकस्य च त्यागमेतत् कुर्व्वन् समाचरेत् ॥
 यत्र कीर्त्तिः समाप्नोति प्रतिमासं नराधिप ।
 सौभाग्यारोग्यरूपायुर्व्वस्त्रालङ्कारभूषणैः ॥
 न विमुक्ता भवेद्द्राजस्रष्टार्वुद्दशतत्रयं ।
 यस्तु द्वादशवर्षाणि सौभाग्यशयनव्रतम् ॥
 करोति सप्त वाष्टौ वा श्रीकण्ठभवनैऽमरैः ।
 पूज्यमानो वनेऽस्यक् यावत् कल्पायुतत्रयम् ।
 नारीवा कुरुते वापि कुमारी वा नरेश्वर ॥
 सापि तत्फलमाप्नोति देव्यानुग्रहलालिता ।
 शृणुयादपि यथैव प्रदद्यादथवा मतिम् ॥
 सोऽपि विद्याधरो भूत्वा स्वर्गलोके चिरम्बसेत् ।

इति मत्स्यपुराणोक्तं श्रीभाग्यशयनव्रतम् ॥*

—:~:—

गौरीव्रतमद्यो वक्ष्ये स्त्रीणां श्रीभाष्यवर्द्धनम् ।

चैत्रशुक्लदशमीयां गौरीव्रतं-समाचरेत् ।

उपोष्य तु प्रयत्नेन विधानमिदमाचरेत् ॥

रत्नाम्बरधरी भूत्वा क्लीधस्त्रीभविर्वर्जितः ।

स्त्रिंशत्सहस्रमात्रे तु कर्त्तव्यं गन्धमण्डलम् ॥

कुङ्कुमेन्दुश्रीतेन वस्तुं लं परिवर्त्तयेत् ।

इन्दुः, कर्पूरं श्रीतं चन्दनम् ।

तत्र मध्ये पूजितव्या प्रतिमा हेमसम्भवा ।

मधुजा तदभावे तु पुरा केनापि निर्म्मिता ॥

रत्नचन्दनजा वाद्य कर्त्तव्या सा प्रमाणतः ।

पञ्चामृताद्यवा पूष्या तत्र मासं विधानतः ॥

पञ्चामृता पञ्चामृतजा ।

रत्नपुष्पैस्तु संपूष्या जातीचम्पकसंयुतैः ।

पाटलाकरवीरैश्च रत्नपद्मैर्ध्यातथा ॥

पारिजैर्भस्त्रिकाकुलैस्तथा रत्नोत्पलैरसम् ।

स्थलपद्मैः किंशुकैश्च सुमनोत्पलकेतकैः ॥

एवं पुष्पैस्तथान्यैश्च पूजनीया प्रयत्नतः ।

इन्दुना कुङ्कुमेनैव भूयोभूयः समाक्षभेत् ॥

नानाविधानि रत्नानि मुकुटाङ्गदकानि च * ।

कुण्डलाभरणान्यत्र रशनादीनि दापयेत् ॥

* मुकुटाङ्गदकानि च पुस्तकान्तरेपाठः ।

भस्त्राणि यज्ञात् कल्पगानि हृतकुण्डयुतानि च ।
 शीतलञ्च घनं दुग्धं सुग्धञ्च दधि पिच्छिलम् ॥
 करम्भं नवनीतञ्च तथा शिखरिणीं पुनः ।
 पानकञ्चैव पानीयं सचन्द्रं दापयेत्ततः ॥
 रक्तवस्त्राणि देयानि सभारादौनि चापतः ।
 आचार्य्यैव पूजान्ते पूजनीयः प्रयत्नतः ॥
 हेमवस्त्रासपानैश्च वित्तशाठ्यं विना ततः ।
 रात्रौ जागरणं कार्यं कुमारीर्भोजयेत्तथा ॥
 देवीनामानि वक्ष्यामि मासि मासि यथाक्रमम् ।
 प्राशनन्तु विशेषेण यथावदनुपूर्व्वशः ॥
 गौरी उमा च ललिता सुभगा भगमालिनी ।
 मनोमनी भवानी च कामदा भोगवर्द्धनी ॥
 पद्मिका च तथा कृष्णा रुद्राक्षी पूजयेत् क्रमात् ।
 इत्येताः सितपद्मे तु कृष्णपद्मे तथा शृणु ॥
 रतिर्धृतिव्युद्धिर्भक्तिः पुष्टिश्च परिकीर्त्तिताः ।
 प्रज्ञा मेधा तथा चर्या त्रौरक्षा कौर्त्तिरेव च ॥
 सितासिताभ्यां पद्माभ्यां व्रतं यज्ञात्ममाचरेत् ।
 अशक्तत्वादभायाञ्च द्रव्याणान्तु स्थितं हितम् ॥
 प्राशनं तत्र कर्त्तव्यं शास्त्रोक्ते नैव वर्जना ।

तत्तन्मासोक्तद्रव्यस्थालाभे रोगादिजनकत्वेन प्राशनाशक्तौ च
 क्रमेण क्रमेषु द्वादशेषु मासेषु यत् स्थितं स्वयं यच्च हितं
 तत् प्राशनैयमित्यशक्तत्वादित्वादेरर्थः ।

प्रति मासि प्रवक्ष्यामि शुकपद्मे क्रमेण तु ।

क्षीरं दधि घृतञ्चैव गोमूत्रञ्च कुशोदकम् ॥
 बिल्वपत्रोदकञ्चैव तथाग्न्यश्चन्दनोदकम् ।
 जातीपत्रीदकञ्चैव पद्मकोसरमेव च ॥
 नागकोसरसञ्च लवङ्गं चन्द्रमेव च ।
 शुक्लपत्रे तु कथितं चैत्रात् प्रभृति षष्पख ॥
 प्राशनं क्षणापत्रे तु कथ्यमानं ऋणञ्च तत् ।
 वलाकं कोलकञ्चैव प्राशयेत्तु शतावरीम् ॥
 वनं लघुसुरं दाह सारिवां शङ्खपुष्पिकाम् ।
 गिरीषं सुरभीयुक्तं रक्तञ्च मीत्तिकं तथा ॥
 भारोदकं द्वादशमं प्राशनं कथितं तव * ।
 इतिगौरौव्रतं ख्यातं सौभाग्यं स्त्रीषु पुत्रदम् ॥
 आयुरारोग्यदं स्त्रीणामिह लोके परत्र च ।
 इदं व्रतवरन्वज्जा स्त्रीषु नान्यद्भूतं हितम् ॥
 तस्मात् सर्वप्रयत्नेन गौरौव्रतमुपाचरेत् ।
 अन्नं रक्तवस्त्रञ्च ताम्बूलं कुङ्कुमं तथा ॥
 दर्प्यं व्यजनं हस्तमासनं यानसुत्तमम् ।
 गृहीपकरणं सर्वं हेमजं वाद्य तान्त्रजम् ॥
 व्रतान्तेचैव दातव्यमाचार्याश्च प्रयत्नतः ।
 स्त्रीणाञ्चैव कुमारीणां वस्त्रास्त्राभरणानि च ॥
 दातव्यानि प्रयत्नेन यदीच्छेत् भूतिमात्मनः ।
 इत्ये तस्मिन्सहस्रान्तु गौरौव्रतमुदाहृतम् ॥

* भारोदकमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

इतिकालोत्तरोक्तं गौरीव्रतम् ।^{१५}

—:◌:—

मार्कण्डेय उवाच ।

शुक्लपत्रे तृतीयायां सोपवासोजितेन्द्रियः ।
 मण्डलत्रितयं कुर्याद्वर्षकेन पृथक् पृथक् ॥
 तथा मण्डलं दक्षिणे भागेष्वेतं कुर्यात्ततो नरः* ।
 रक्तं मध्ये रवेः कुर्यात् तादृक्क्षेत्रं भुवस्य तु ॥
 विष्णोः पद्त्रयं तेषु पूज्यं स्यात् मण्डलेन तु ।
 भूमौ तु प्रथमं पादं द्वितीयं सूर्यमण्डले ॥
 तृतीये तु भुवे देवे पूजयेत् प्रयतः शुचिः ।

होममन्त्रेण पूजा ।

यथा मण्डलवर्षोक्तगन्धमाल्यादिभिर्द्विज ।
 तद्विष्णोः परमिन्द्र्यं व होममन्त्रोविधीयते ॥
 चित्रिक्रमायेति तथा स्त्रीशूद्रय द्विजीत्तम ।
 अक्षतानि तिलानाज्यं होमयेत् संयुतत्रयं ॥
 तान्मरुप्य सर्वार्थानि यत्तथा दद्यात्तुदक्षिणाम् ।
 भोजनञ्च त्रिमधुरं भोजयेत् ब्राह्मणीत्तमान् ॥
 प्राणयात्राम् कुर्वीत त्रिगन्धेन तु तद्दिने ।

तद्दिने व्रतदिने व्रतिनो †

उपवासित्वमितरात्रवर्ज्यं नात् ।

* पौत मिति पुस्तकान्तरे ।

† तद्दिने व्रतिन उपवासित्व इतरात्रवर्जनात् द्वितीयभोजन वर्जनायेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

द्वितीयायामुपोष्य तृतीयायां चिगन्ध
 प्राशनं गन्धमिति दधि क्षीरं चृतम् ॥
 एवं वर्षत्रयं कृत्वा व्रतान्ते च त्रिहायनीम् ।
 ब्राह्मणाय तु गां दत्त्वा सर्वकामानवाप्नुयात् ।
 त्रिहायनीं त्रिवर्षी ।
 भूमौ तद्यान्तरिक्षे च दिवि चैव नरोत्तम ।
 गतिस्तस्याप्रतिष्ठता भवत्यरिणिसूदन ॥
 त्रीणि वर्षसहस्राणि त्रिविक्रमव्रतचारिणी ।
 मानसं वाचिकञ्चैव कायिकञ्च विमुञ्चति ॥
 सर्वपापं महाभाग मनुष्यो जायते तथा ।
 कुले धनाढेऽपि महति रूपद्रविणसंयुतः ॥
 विरोगः सर्वसिद्धार्षस्त्रिद्वर्गस्त च साधकः ।
 कृत्वा द्वादशवर्षीणि शिवलोके महीयते ॥
 तत्रापि नित्यं वरदं वरेण्यं
 खल्ल्रीसहायं पुरुषं पुराणम् ।
 पश्यत्वामीघं विभुमप्रतर्क्यं
 सनातनं दुःखविनाशहेतुम् ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं त्रिविक्रम तृतीयाव्रतम् । १२

—:—

मार्कण्डेय उवाच ।

द्वितीयञ्च प्रवक्ष्यामि ऋषे चैविक्रमं व्रतम् ।

भूमिस्तु प्रथमः पादः अन्तरिक्षं तथा परः ॥

अप्रथम इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

द्वितीयादिविभिर्ज्ञेयो देवदेवस्य चक्रिचः ।
 भुवः पतिः स्मृती वक्रिरतिरिक्तस्य चानसः ॥
 दिग्मापतिस्तदा सूर्यस्तव विष्णोः पदचयम् ।
 ज्येष्ठे शक्ततृतीयायां सोपवासो जितेन्द्रियः ॥
 कल्पे कूपजलं स्नातो वक्रिं संपूयेत्तरः ।

सोपवासो द्वितीयायां क्षतोपवासः कल्पं प्रातःकालः ।

गन्धमाख्यनमस्कारं दीपधूपान्नसम्पदा ।
 नदीजले ततः स्नात्वा मध्यं प्राप्ते दिवाकरे ॥
 वायोः संपूजनं कृत्वा सक्तून् दद्याद्दिजातये ।
 स्नात्वा तुसारतोये च सायं सूर्य्यं समर्चयेत् ॥
 ततश्च नक्तं प्राञ्जीयाद्दिविष्यं वाग्यतः शुचिः ।
 एवं सम्बन्धरं राजन् कृत्वा व्रतमनुत्तमं ॥
 समापयित्वा वैशाखे दद्याद्दिग्गेषु दक्षिणाम् ।
 ताम्नं रुष्यं सुवर्षं च षोडश लोहानि यादव ।
 वासोयुगन्तयोष्णीषं षोडश चैतानि भक्तितः ।
 एतन्नम्यत्सरं कृत्वा नरकै विक्रमं व्रतम् ॥
 सर्वं कामं सष्टदस्य यज्ञस्य फलमश्नुते ।
 विमानेनार्कवर्षेण किङ्किणीजालमालिना ॥ ५
 देवरेषु गुचाठेन वीषामुरजवादिना ।
 स्वर्गलोकाववाप्नोति कामचारी विहङ्गमः ।
 कामद्वन्द्वमुपासाद्य वरचय,मुपाश्रुते ॥
 अथमाहुः श्रुतश्चैव प्रसन्ने गरुडध्वजे ।
 आक्रान्तलोक चितयस्य पूज्यः

पदत्रयं धर्माभ्युत्थितम् ।
संप्राप्य कामान् दनुजातहर्तुं
गतिं र्घ्येष्टां पुरुषः प्रयाति ॥

इति विष्णुधर्मात्तरोक्तं त्रिविक्रमव्रततीयाव्रतम् ॥२

— ०*० —

मार्कण्डेयउवाच ॥

वक्ष्यतस्ते महाभाग तव त्रैविक्रमव्रतम् ।
तृतीयं नृपशार्दूल तन्मनिगदतः शृणु ।
व्यष्टे शुकृतृतीयायां नरः सम्यगुपोषितः ॥
भुवः सम्पूजनं कुर्याद्भूपमाख्यानलेपनैः ।
दीपैः रत्नैश्च विविधैर्दद्याद्दिग्दिग्पेषु दक्षिणाम् ॥
बीजपूर्णानि पात्राणि सहिरण्यानि भक्तितः ।
पूजैव मन्तरिक्षस्य मास्याषाढे विधीयते ।
दक्षिणा तत्र दातव्या तथा वासोयुगं द्विजः ॥
दिवः पूजाच कर्त्तव्या आवणे प्राग्वदेव तु ।
छत्रच्छीपानहं युग्मं दक्षिणां तत्र दापयेत् ॥
एवं मासत्रयेणैव पारणं प्रथमं भवेत् ।
मासत्रयेण चान्येन ततोमासत्रये पुनः ॥
ततोमासत्रये चान्यदेवमन्यज्ञचानघ ।
विष्णेर्यं नित्यधर्मास्तु पारणानां चतुष्टयम् ॥
प्रथमपारणन्यायेनैव देवतापूजनं ।
दक्षिणादानादिना सर्व्वपारणसमापनम् ॥

प्रथमं पारशं कृत्वा वज्रिष्टीमफलं लभेत् ।
 अतिरात्रफलं राजन् द्वितीयपारशे तथा ॥
 तृतीये पारशे विश्वं वाजपेयफलं लभेत् ।
 चतुर्थे पारशे प्रोक्तं राजसूयस्य यत्फलं ॥
 विमानेनार्कवर्णेन किङ्किणीजालमालिना ।
 हंसयुक्तेन दिव्येन* वीणासुरजवादिना ॥
 वराप्सरोगणाढेन कामगेनापि चारुणा ।
 यद्येष्टकामी भवति बहुकालमसंशयम् ॥
 मानुष्यजस्य चासास्य त्रीणि शुक्लान्यवाप्नुयात् ।

शुक्लानि परिशुद्धानि ।

विद्या ज्ञान तथा कर्म नात्र कार्या विचारणा ॥
 त्रिविक्रमस्याप्रतिमस्य तस्य
 चराचरेणस्य पदत्रये तु ।
 यः पूजयेत्तस्य भवन्ति कामाः
 सर्व्वे समृद्धिर्नहि संशयोऽत्र ॥

इति विष्णुधर्म्मोत्तरोक्तं त्रिविक्रमव्रतम् ॥२

—♦♦♦♦—
 मार्कण्डेयउवाच ।

ज्येष्ठे शुक्लतृतीयायां निराहारो नरः शुचिः ।
 त्रिमूर्त्तिपूजनं कृत्वा तृतीयायां यथाविधि ॥

* देवरासाजवाढेनेति पुष्पकाकरे पाठः ।

विमूर्त्तिपूजनं तिसृषां मूर्त्तीनां वायु-सूर्य-चन्द्रमसां
पूजनम् ।

कूपनदतङ्गागाद्यैर्मित्रैः प्रातःशुचिर्जलेः ।
प्रत्नने पूजयेद्वायुमनुस्तिष्ठे शुभस्वले ॥
गन्धमाखनमस्कारदीपधूपान्नसम्बदा ।
होमं कुर्वीत्यवैश्वदेव्यैर्वक्ष्यं दद्यात्तृजातये ॥
मध्याह्ने पूजयेद्दृष्ट्वा तथा सूर्यमतन्द्रितः ।
तिसांश्च सुहृद्यादृष्ट्वा दद्यात्त्रिप्रेषु काचनम् ॥
सूर्यास्तमगवेसायां जले चन्द्रश्च पूजयेत् ।

जले चन्द्रमसमभिधाय पूजयेद्विदित्वाद्यत् ।

वज्रावभिधाय मध्याह्ने सूर्यं प्रपूजयेद्विदित्वाद्यत् ।

हृतेन होमं कुर्वीत रजतं दक्षिणा व्यृतम् ।
नक्तं भुञ्जीत धर्मज्ञः तैलहोमं ततो नरः ॥
पूर्वं सम्बन्धरं कृत्वा व्रतमेतदतन्द्रितः ।
स्वर्गलोकमवाप्नोति सहस्रं परिवन्धरं ॥
मानुष्यमासाद्य ततो राजा भवति भूतले ॥
व्रतं कृत्वा महाभाग पूर्वं सम्बन्धरपयस् ।
पञ्चवर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ॥
मानुष्यमासाद्य ततो राजा भवति भूतले ।
विरीगो दर्शनीयश्च सुभगीधनवाचरः ॥
कृत्वा द्वादशवर्षाणि व्रतमेतद्गुणमम् ।
व्रतावसाने विप्राणां सहस्रशो जयेत्ततः ॥
भीष्मं विमद्भुरप्रायं दद्यात्कृत्वा च दक्षिणाम् ।

ततः स्वर्गमवाप्नोति वर्षाणाञ्च दद्याद्भुतम् ॥
 ततो मानुषमासाद्य राजा भवति धार्मिकः ।
 प्रदीतचक्रोद्यनवान् धर्मराजोऽजगन्प्रियः ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं राज्यव्रतम् ।२



रश्मोवाच ।

देवलोके महादेवि गणिकाः सौख्यसंयुताः ।
 मर्त्यलोके तथा सर्वाः स्त्रियः सौभाग्यवर्जिताः ॥
 कथं भाग्यञ्च भोगाञ्च लभन्ते परमेश्वरि ।
 जन्मजन्मनि सौभाग्यं यथा भवति पार्ष्वति ।
 तथा मे सर्वमाख्याहि कारुण्याद्भक्तवत्सले ॥
 उपवासे व्रतेष्वेव तथा नियमएव च ।
 एतत्सर्वं यथान्यायं ब्रूहि मे परमेश्वरि ॥

पार्ष्वत्युवाच ।

नृसु भद्रे परं गुह्यं सर्वकामफलप्रदं ।
 दुर्भंगानाञ्च नारीणां सौभाग्यकारणं परम् ॥
 लक्ष्मेश्वरीति विख्यातं ततः कीटीश्वरीव्रतम् ।
 द्वितीया शक्यपञ्चे तु मासि भाद्रपदे भवेत् ॥
 तस्मां व्रतं तु संघाद्यं यावद्दशमं चतुष्टयम् ।
 उपवासेन कर्त्तव्यं वर्षे वर्षे तु सुन्दरि ॥
 अक्षय्यानां तन्दुलानां तिलानां वा सुलोचने ।
 लक्ष्मिणं विरच्याच्च क्षिपेत् पयसि शोभने ॥

चीरसंमिश्रितैः कार्ज्यां देव्यामूर्तिः सुलोचना ।
 कृत्वा तु पुष्पप्राकारं पुष्पमालाभिमण्डितम् ॥
 संख्याप्य पार्वतीं देवीं पूजयेद्भक्तिशक्तितः ।
 पूजयेद्विविधैः पुष्पैः कुङ्कुमागुरुचन्दनैः ॥
 गन्धैर्धूपैश्च नैवेद्यैः फलैश्च विविधैस्तथा ।
 वस्त्रेण चतुरेष्वैव पूजयेत्परमेश्वरीं ॥
 नमोनमस्ते देवेशि लक्ष्मेश्वरि नमोस्तु ते ।
 कोटीश्वरि नमस्तुभ्यं नमस्तेहरवक्त्रभे ॥
 उमादेवि नमस्तुभ्यं कात्यायनि नमोस्तु ते ।
 नमः कालि महाकालि शिवदुर्गे नमोस्तु ते ॥
 नमः सर्वाणि वृद्धाणि अपर्णं शङ्करप्रिये ।
 सर्वभूतहिते देवि त्राहि संसारसागरात् ॥

पूजामन्त्रः ।

नमो लक्ष्मेश्वरी देवि कोटीश्वरि नमोस्तु ते ।
 गृह्णाणार्घ्यं मया दत्तं शङ्करेण समं मम ॥

अर्घ मन्त्रः ।

पुरा व्रतमिदं भद्रे इन्द्राख्या च कृतं शुभम् ।
 सम्भावत्या च सावित्र्या अरुन्धत्या कृतं पुरा ॥
 दम्बवत्या च रोहिण्या कृतं व्रतवरं शुभे ॥
 गौरिशीर्भोजयेद्धृत्वा इज्यान्ते च मुद्गीक्षिताः ।

गौरिशीः, सुवासिनीः ।

एवंविधविधानेन करोति नियता व्रतम् ।

ततोऽस्याः स्याच्च दारिद्र्यं न च दृष्टवियोजनम् ॥
 अष्टपुत्रा भवेन्नारी भर्तारश्च गुणाधिकम् ।
 सुरूपं गुचिनं कान्तं पण्डितं प्रियदर्शनम् ।
 ईश्वरं चैव राजानं भवेद्द्वीर्घायुषं प्रियम् ॥
 भवेत्, प्राप्नुयात् ।

दातारश्चैव भोक्तारं समस्तजनवह्नभम् ।
 सुशीलं धार्मिकं शूरं चन्द्रवत्प्रियदर्शनम् ॥
 सुरूपा सुगभा साध्वी भर्तृराज्यप्रदर्शिनी ।
 धर्मशीला सुचरिता वाचयामृतभाषिणी ॥
 दयाप्रदा च सर्वस्य सौभाग्यमतुलं भवेत् ।
 सह पत्या वरारोहा कुरुते राज्यमुत्तमम् ॥
 अन्तकाले समं तेन मोदते त्रिदिवे तथा ।
 षष्टिवर्षसहस्राणि षष्टिवर्षशतानि च ॥
 इदं कृत्वा पुरेन्द्राणीन्द्रं लेभे पतिमुत्तमम् ।
 रोहिणी पतिमालेभे चन्द्रव्रतनिषेवणात् ।
 रक्षा देवी सुभर्तारमादित्यं प्राप्य सत्यतिम् ॥
 इदन्ते कथितं भद्रे व्रतं कोटीश्वरश्चर ।
 लक्षेश्वरीतिविख्यातं कुरु रश्मे मनोहरं ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं कोटीश्वरीव्रतम् ॥

—:—

पुस्तकस्य उवाच ।

अन्यामपि प्रवक्ष्यामि तृतीयां पापनाशनीम् ।

रसकल्याचिनीमेतां पुराकल्पविद्दीविदुः ।
 माघमासे तु संप्राप्य तृतीयां शुक्लपक्षतः ॥
 प्रातर्गन्धेन पदवा तिस्रैः स्नानं समाचरेत् ।
 स्नापयेत्कधुना देवीं तत्रैवेष्टुरसेन च ॥
 गन्धोदकेन च पुनः पूजनं कुट्टुमेन वै ।
 दक्षिणाङ्गानि संपूज्य ततो वामानि पूजयेत् ॥
 ललितायै नमो देव्याः पादौ गुण्फं ततोऽर्चयेत् ।
 जङ्गाजानु तद्यागान्धै तत्रैवोषं त्रिवे नमः ॥
 मदालसायै तु कटिं मङ्गलायै तत्रोदरम् ।
 स्नानं मदनवासिन्यै कुमुदायै च कन्धरं ॥
 भुजं भुजापं माघयै कमलायै सुखस्मिते ।
 भूलसाटश्च वद्वान्त्यै शङ्करायै तद्यालकान् ॥
 सुकुटं विन्ध्यवासिन्यै पुनः काश्वै तद्यालकान् ।
 मदनायै ललाटान्तु मोहनायै पुनर्भुवम् ॥
 नेत्रे चन्द्रार्धधारिण्यै तुष्यै च वदनं-पुनः ।
 उत्कण्ठिन्यै नमः कण्ठमभयायै नमः स्नानम् ॥
 रश्मायै वामबाहुश्च विशीकायै नमः करम् ।
 हृदयं मदनगामिन्यै पाटलायै तत्रोदरम् ॥
 कटिं सुरतवासिन्यै तत्रोरु चम्पकत्रिये ।
 जानुजङ्घे नमो गौर्यै गुल्फं गायत्रिकै नमः ॥
 धराधरायै पादन्तु विशीकायै नमः शिरः ।
 नमो भवान्यै कामिन्यै कामदेव्यै जगत्त्रियै ॥
 आनन्दायै सुनन्दायै सुभद्रायै नमोनमः ।

एवं संपूज्य विधिवत् द्विकदम्बत्वमर्चयेत् ॥

भोजयित्वाक्षपानेन मधुरेण विमत्सरः ।

ससङ्कुक्कं वारिकुम्भं शृङ्गाभ्ररतुगद्वयम् ॥

दत्त्वा सुवर्णकमलं गन्धमाक्षरवाचंयेत् ।

प्रीयतामथ कुमुदा मृत्नीवाहवचव्रतम् ॥

कुमुदाप्रोयतमितिमन्त्रेण कुम्भत्रयं सुवर्णकमलं दत्त्वा मासं
सवर्णं न भक्षयामीति व्रतं शृङ्गीयात् ।

अनेन विधिना देवीं मासि मासि सदाञ्जयेत् ।

सवर्णं वर्जयेन्नाथे फाल्गुने च शुभं पुनः ॥

तवराजं तथा चैत्रे वर्जयेत् मधु माधवे ।

पानकं ज्यैष्ठमाथे तु तथाषाढे च जौरक्षम् ॥

त्रावचे वर्जयेत् शीरं दधि भाद्रपदे तथा ।

वृतमाश्वयुजे तद्दूर्ज्वं वर्ज्याथ मर्जिका ॥

‘जर्ज्वं, कार्तिके । ‘मर्जिका, रसाक्ता । लोके शिखरिणी-
तिप्रसिद्धा ।

धान्यकं मार्गशीर्षे तु पीठे वर्ज्याथ शंकरा ।

व्रतान्ते करकं पूर्णमेतेषां मासि मासि च ।

दद्याद्विकासवेसायां भक्षपात्रेषु संशुतं ॥

व्रतान्ते करकमित्वादि । एतेषां सवर्णगुडादीनां मध्ये
वस्त्रिणाथे यत्स्वत्तं तन्नासव्रतान्ते तेन सवर्णादिना पूर्णं
करकं वक्ष्यमाणसङ्कुकादि भक्षपात्रशुक्तं दद्याद्विषयः ॥

सङ्कुकान् श्वेतवर्तींश्च संयावमवपूरिकाः ।

पारिकावृत्तपूराश्च पिष्टापूर्णाश्च मङ्कलान् ॥

चीरशाकञ्च दध्नकं* इन्दुवींशिकवर्तिकं ।
 माघादिक्रमशो ऽदद्यादेतानि करकोपरि ॥
 कुमुदा माघवी गौरी रथा भद्रा जया शिवा ।
 उमा रतिः सती तद्व्याज्जला रतिलालसा ॥
 क्रमात्माघादिसर्वत्र प्रीयतामिति कीर्त्तयेत् ।
 सर्वत्र पञ्चगव्यन्तु प्राशनं समुदाहृतम् ॥
 उपवासी भवेन्नित्यमशक्तो नक्तमिष्यते ।
 पुनश्चाद्ये तु सम्प्राप्ते शर्करा करकोपरि ॥
 कृत्वा तु काश्चनीं गौरीं पञ्चरत्नसमन्विताम् ।
 हैमीयाङ्गुष्ठमात्राञ्च साक्षसूत्रकमण्डलम् ॥
 चतुर्भुजाभिन्दुयुतां सितनेत्रपटावृताम् ।
 तद्वह्नीमिधुनं शुक्लं सुवर्णाब्धं सिताम्बरम् ॥
 सवस्त्रं भोजनं दद्याद्भवानी प्रीयतामिति ।
 अनेन विधिना यस्तु रसकल्याणिनीव्रतम् ।
 कुर्यात् स सर्वपापेभ्यस्तत्क्षणादेव मुच्यते ॥
 भवार्जुदसहस्रन्तु न दुःखीजायते क्वचित् ।
 अग्निष्टोमसहस्रेण यत्फलं तदवाप्नुयात् ॥
 नारी वा कुर्वते या तु कुमारी वा वरानने ।
 विधवा च वराकी वा सापि तत्फलभागिनी ।
 सौभाग्यारोग्यसम्पन्ना गौरीलोके महीयते ॥
 इति पठति य इदं यः शृणोति प्रसङ्गात् ।

* शारिका इति पुष्पकानरे पाठः ।

† चौराज्जय खेचिका इति पुष्पकानरे पाठः ।

सकलकलुषमुक्तः पार्वती लोकमेति ।
 मतिमपि च जनानां योद्दाति व्रतार्थं ॥
 विपुलगतजनानां नायकः स्याद्भोवः ।
 इति पद्मपुराणोक्तं रसकल्याणिनीव्रतम् ॥१०

—:०:—

सनत्कुमार उवाच ।

तृतीयायां महाभाग कर्त्तव्यञ्च व्रतं शृणु ।
 येनानन्तभवारध्वमेनः क्षपयति द्विजः ॥
 ग्रहपीडादिकैरन्यैरुपसर्गैः प्रपीडितः ।
 अस्यां शान्तिं प्रकुर्वीत यतवाक्कायमानसः ॥
 स्थण्डिलं * रचयित्वा तु नरोवीजप्रसूनकैः ।
 चक्राजं मण्डलं कुर्यादस्त्रिभसिततण्डुलैः ॥
 तत्र चावाहयेद्देवं नरसिंहाकृति विभुं ।
 प्रसन्नमधुरोदारवीक्षणक्षपितार्त्तिकं ।
 अग्नेषभयविध्वंसक्षतुरं पुरुषं हरिम् ।
 अग्रभयं भयतप्तानां ददतां ददतांवरम् ॥
 प्रपन्नार्त्तिमुर्धा तत्र प्रसादपरमेष च † ।
 वदनेन च सुस्त्रोणि नयनेन विराजितम् ॥
 विपक्षपक्षविचोदक्षतुरानन्तवाहुकम् ।
 विद्युन्मालावृतोत्सुङ्गरजताद्रिमिवापरम् ॥
 किरोटहारकेयूरवनमालाविभूषितम् ।

● मण्डलञ्चेति पुलकान्तरे पाठः ।

† प्रयतानिसुखा इति पुलकान्तरे पाठः ।

ग्रहपक्ष गदा शार्ङ्गनन्दमाद्यैरलङ्कृतम् ॥
 जातिप्रसूनकैश्चिचैः* सिताम्बोजैरखण्डितैः ।
 अक्षतैर्भक्तिकाद्यैश्च नन्द्यावर्त्तप्रसूनकैः ॥
 अक्षतैर्विष्णुपत्रैश्च तत्फलैश्च तद्द्वारैः ।
 तिलैः सतखण्डैः सिद्धैः तुलसीश्रीलताङ्गुरैः ॥
 नीलोत्पलैः कुवलयैः कुमुदैश्च सकेसरैः ।
 काश्लीरचन्दनचोदकर्पूरागुग्गुभिश्चितैः ॥

चिचैः अपूर्वगन्धैश्च अखण्डितैः संहृतैः, अक्षतैरनुपहतैः, नद्या-
 वर्त्तन्तगरम्, अक्षतैरपृथक्कृतैः, सिद्धैः साधितैः, श्रीलतापद्मिनी,
 कुवलयैश्चतुल्लैः, केसरं वज्रसम् । काश्लेरं केसरं चोदकर्णम् ।

पयसा पायसान्नेन गुडत्रैमधुरोत्थयैः ।
 आभ्यगोतिपदैश्चाङ्गुल्यवाद्यप्रदर्शनैः ।
 प्रदक्षिणं नमस्कारस्तोत्राद्यैर्भक्तिभावितैः ॥
 सम्यगभ्यर्च्य देवेशं विधिदृष्टेन कर्मणा ।
 नानौषधिसमायुक्तं नानातीक्ष्णोदकान्वितम् ॥
 नानारससमायुक्तं नानाकुसुमसंश्रितम् ।
 नानात्रीजीपरिचिप्तं नानावस्त्रसमन्वितम् ॥
 नानाकूर्चयुतं पूर्णकुम्भं संस्थापयेत् पुरः ।
 तस्मिन्नावाहयेद्देवं सुदर्शनमनन्यधीः ।
 पूर्वोक्तैर्नैव मार्गैश्च सम्यगभ्यर्च्य शक्तितः ॥
 पूर्वोद्दिक्तमयोगेन संस्थाप्य चतुरो घटान् ।
 कोशेषु च तथा तेषु क्रमाद्दितांश्च संस्मरेत् ॥

तेषु षष्टकुण्डेषु, तान् नन्दकादीन् ।

नन्दकं सुगलं पद्मं गदा शार्ङ्गं यङ्गकम् ।

पाशं शक्तिरित्येते तद्वाङ्मोऽपि तथैव च ॥

लोकपालप्रतिष्ठानं कृत्वा सर्वं च पूजयेत् ।

तथा च मध्यमे कुम्भे तथान्येष्वप्यलंकृतम् ॥

एवं समाप्य विधिवत् पूजां तत्र विचक्षणः ।

जपेद्दशसहस्रं च सुदर्शनमनन्यधीः ॥

जपेत्सहस्रमन्यत्र प्रतिकुम्भं विचक्षणः ।

अथ कुण्डप्रतिष्ठानमन्वाधानं यथाविधि ॥

विधाद सस्मृते चान्मौ जुहुयात्सर्वशान्तये ।

त्रिमध्वत्तैदिलैः शुभैराजेन पयसापि च ॥

श्रीलताकुसुमापाणिविस्वपत्रप्रसूनकैः ।

दूर्वाङ्गुरैस्त्रिमध्वत्तैः वीजतण्डुलसर्षपैः ॥

आयुः कामस्तु दूर्वाभिः श्रीकामो विश्वसम्भवेः ।

श्रीभाग्यकामो लक्ष्मीवान् श्रीलतापर्णसूचकैः ॥

‘लक्ष्मीवान्, लक्ष्मीकामः ।

शारीर्यकामः पयसा गव्याज्येन तथा तिलैः ॥

पुष्टिकामस्वपामार्गैरपमृत्युर्गदूषिभिः ।

अपमृत्युः अपमृत्युयुक्तः ।

पद्मैश्चाध्याहृता लक्ष्मीः पुष्टिश्च कुमुदैरपि ।

जातिपुष्पैर्धरालाभो नन्द्यावर्त्तप्रसूनकैः ॥

एकपत्रैः सितैः पद्मै रधिराजं संस्पृष्टति ॥

रजतं मक्षिकाद्यैश्च सुवर्णचम्पकीद्वयैः ।

वीजावतण्डुलाद्यैश्च तत्तन्नाभो भविष्यति ॥
 एतेष्वन्यतमैर्दृष्टैर्यस्य कामयते वरं ।
 दशसाहस्रयोगेन तन्तं विन्दत्यसंग्रहम् ॥
 होमाच्च द्विगुणं प्राहुस्तर्पणं मन्त्रनिश्चयः ।
 तस्य तद्विगुणं प्राहुर्जपपण विधिक्रमः ॥
 नियोगारम्भसमये नियमान् प्रतिपालयेत् ।
 द्वयं वाहरहः कुर्वन् नक्तकालं समापयेत् ॥
 नियोगा मण्डले स्वनयः, नियमाभौनादीन् ।
 द्वयं वाहरहः पूर्वं नक्तकालान् समापयेत् ।
 द्वयं होम तर्पणं जपान् ।
 अहरहः प्रतिदिनं संख्या च सहस्रव्यत होमसंख्या निक्षेपा
 येच्छया ।

हविष्याग्नी जितक्रोधी यतवाक्कायमानसः ।
 नित्यं चिःसवणं स्नायात्सदाचाररतीमुनिः ॥
 नचावृतकधीनम्नि ब्रह्मचारी जितश्रमः ।
 गौरी विमलरो नित्यं स्वाध्यायनिरतः शुचिः ।
 अनश्रन् वाद्यशाकाग्नी फलस्य गुरुलाघवम् ॥
 मत्वाद्दीत नियमानासमाप्तिः प्रयत्नतः ।
 'नियमान्, हविष्याश्चाशनं । शाकाशनमनशनं च ।
 तथा संख्या ससुत्कर्षः फलगौरवहेतुकः ॥
 अयुतश्च वरं वाहु स्तद्दृष्टिस्तत्फलानुगा ।
 कृत्वैवं सम्यगाचार्यं समानीय च साधकम् ।
 मध्यमं कुम्भमादाय आपयेद्देवसन्निधौ ॥

‘साधकं, यज्ञमानं ।

सुदीपित महाज्वालाविदीपितदिग्गन्तरम्* ।

त्रायस्वचैनमापन्नो भद्रं प्रदिशते नमः ॥

अथैरपि यथा योगं कुर्व्यात्तस्त्राभिषेचनम् ।

तत्तन्मन्त्रेषु वाचाय्यंस्तस्त्वमद्यं महामतिः ॥

ॐ दैतेयनिष्काराभोग शैलनिर्भेददीक्षितः ।

पद्मयज्ञमनोमन्द चाङ्गेनमपि नन्दक ॥

ॐ विपक्षकाथमद्यनतच्छिरोस्तुलितानन ।

कमलाकान्तदयितपाङ्गेनं सुषलायुध ॥

विष्णोर्भवभयत्राचक्षीलस्व परमान्धनः ।

क्षीलारविन्दसुभग पाङ्गेनमपि पङ्कजः ॥

कीमोदक्षीगदा सा वै देवी दिशतु मङ्गलम् ।

या सुकुन्दकराञ्जोत्तुविलसद्भूषणायते ॥

ॐ स्वविष्कारहृताशेषरक्षीदनुजजीवितम् ।

येनासौ रक्षतादेनं विष्णोःशार्ङ्गं धनुर्वर ॥

दैत्वसौमन्तिनीगर्भनिर्भेदचतुरस्रन ।

स्त्रवद्व्यक्तारत्नाजमधुपूर्णंमुख स्वराट् ॥

दैत्वरक्षोधिप्रमासवसारुधिरभोजन ।

एनं सर्वत्र रक्षन्तु शार्ङ्गपाणेःशरोत्कराः ॥

अरातिहेतिप्रमुखशक्त्योजःक्षपस्वत्तमा ।

आपन्नरक्षतादेनं शक्तिः श्रीःसवरायुध ॥

एवं स्वात्वा हृतैर्व्यस्यैर्भूषणायैरलकृतं ।

सुदर्शनमद्यः आसुविदीपितदिग्गन्तरमिति गुलकाकारे पाठः ।

नोराजनविधिर्दयीदद्यात् द्विप्राय दक्षिणाम् ॥
 गुरवे च वरं दत्त्वा वन्धुभ्यो दक्षिणादिकम् ।
 अन्यथापि तदार्थिभ्यो दद्याद्गूरि यथोदयम् ॥
 द्विजमध्यमथानीय तैः स्नातोमङ्गलाकृतिः ।
 तिलचन्दनलाजाज्ज्वेतसर्षपचन्दनैः ॥
 ब्राह्मणैः स्वस्तिमावाच्यमाश्रीरपिच कारयेत् * ।
 कूर्चीदकेन चाचार्यः कुर्याद्भद्रवचः कृती ॥
 ॐ आयुः विपुलं देव त्रियञ्च विपुलां भुवि ।
 अक्षय्यमपि चारोग्यं मनःशक्तिमथाक्षयां ॥
 विद्यामानकुलवुद्धिरोगाद्यैरप्यनाहतम् ।
 विद्याधिकं तथात्यर्थं श्रीशो दिशतु मङ्गलम् ॥
 स्वस्तिचास्तु शिवं चास्तु भद्रमस्तु सदा तव ।
 आपद्गात्र भयेभ्यश्च रक्षन्तु त्वां त्रियःपतिः ॥
 इति रक्षाविधिं कृत्वा लोकपालबलिं क्षिपेत् ।
 पूर्व्वे च तन्दलैः कार्यैः कशरात्रेण दक्षिणा ॥
 पश्चिमे पायसेनैव शुभात्रेण तद्योदरे ।
 कोणेषु शक्तिभिः कुर्यात् गुह्यमिच्छैस्ततोवह्निः ॥
 सर्वार्थे च बलिन्दद्यात् सर्वैर्द्रव्यैर्महामतिः ।
 इति शान्तिव्रतं प्रोक्तं तृतीयायां महामते ॥
 सर्व्वदुःखप्रशमनं सर्व्वरोगविनाशनम् ।
 सर्व्वसौख्यप्रदं स्त्रीषामन्नकामफलप्रदम् ।
 सर्व्वार्तिशमनं धन्यं सर्व्वपापप्रणाशनम् ॥

यस्त्वेतत् कुर्वते मर्त्यः शशाभक्तिसमन्वितः ।
 स सर्वार्थविनिर्मुक्तो शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम् ॥
 दुःखेने वामयप्रासे उग्रपीडाद्युपद्रवे ।
 विषाद्युपनिपाते च पुत्रनाशधनक्षये ॥
 राक्षसाशे जनघोभे दुर्भिक्षे शत्रुपीडने ।
 च्चरान्निरोगार्त्तिघोरघ्नौहृकुष्ठभगन्दरैः ॥
 क्षयापस्मरणाद्यैश्च तीव्रदुःखचये सति ।
 ज्ञानमेतत् प्रकुर्वीत प्रज्ञासारस्तु पूरुषः ॥
 सुक्तावारक्तपुरुषः प्रज्ञावाञ्छास्त्रसम्मतः ।
 अत्युपद्रवसाहस्रमतीत्यसुखमेधते ॥

इति गरुडपुराणोक्तं शान्तिव्रतम् ।।०

—०#०—

पुलस्त्य उवाच ।

तथैवान्यां प्रवक्ष्यामि तृतीयां पापनाशिनीं ।
 लोके तु नाम्ना विख्यातां, सान्द्रानन्दकरीमिमाम् ॥
 यदा शुक्लतृतीयायामाषाढर्चं भवेत् क्वचित् ।
 ब्रह्मर्चं वाथ वाप्यं वा हस्तौ मूलमथापि वा ॥
 आषाढर्चं उत्तराषाढा, ब्रह्मर्चं, अभिजित् ।
 'आप्यं, पूर्याषाढा ।
 दर्भगन्धोदकैः स्नानं तदा सम्यक् समाचरेत् ।
 शुक्लमाश्याम्बरधरः शुक्लगन्धानुलेपनः ॥

भवानीमर्चयेद्गत्या शुक्लपुष्पैःसुगन्धिभिः ।
 भवेन सहितां राजन् उपविष्टाभ्वरासने * ॥
 वासुदेव्यै नमः पादौ शङ्कराय ततोद्हरम् ।
 जङ्घे शोकविनाशिन्यै भ्रानन्दाय नमः प्रभो ॥
 रत्नायै पूजयेद्गुरु शिवाय च पिनाकिने ।
 भ्रानन्दिन्यै कटिं देव्याः शूलिने शूलपाणये ॥
 माधव्यै च तथा नाभिं तथा शम्भोर्भवाय च ।
 स्तनावानन्दकारिण्यै शङ्करायेन्दुधारिणे ॥
 उत्कण्ठिन्यै नमः कण्ठं नीलकण्ठाय वै हरम् ।
 करानुत्पलधारिण्यै रुद्राय यजतां पती ॥
 वाङ्मय परिरन्धिण्यै नृत्यशीलाय वै हरम् ।
 देव्या मुखं विनाशिन्यै वृषेशाय पुनर्विभो ॥
 स्मितश्च स्मरशीलायै विश्ववक्त्राय तत्परे ।
 नेत्रे दमनवासिन्यै विश्वधात्रे त्रिशूलिने ॥
 भ्रुवौ नेत्रप्रियायै च ताण्डवेशाय वै विभो ।
 देव्या ललाटमिन्द्राण्यै हव्यवाहाय वै विभो ॥
 स्वाहायै मुकुटन्देव्याः शम्भोर्गङ्गाधराय वै ।
 विश्वकायो विश्वमुख्यो विश्वपादकरो शिवो ॥
 प्रसन्नवदनो वन्दे पार्वतीपरमेश्वरी ।
 एवं संपूज्य विधिवद्दत्तः शिवयोः पुनः ॥
 पद्मोत्पलानि रजसा नानावर्णानि वा लिखेत् ।
 शङ्खं चक्रं स्वस्तिकञ्च तथा चैवार्चनार्थकम् ।

* उपविष्टां वरानने इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

यावन्तः पांशवस्तत्र रजसः पतिता भुवि ॥
 तावद्दर्षसहस्राणि शिवलोके मञ्जीयते ।
 चत्वारि घृतपात्राणि सहिरण्यानि भक्तितः ॥
 दद्याद्दिजाय करकमुदकेन समन्वितं ।
 प्रतिपक्षं चतुर्मासं यावदेताभिवेदयेत् ॥
 ततस्तु चतुरी मासान् पूर्व्ववत् करकोपरि ।
 चत्वारिंशत् पात्राणि तिलपात्राणि तत्परम् ॥
 पूर्व्ववत्सहिरण्यानि करकोपरिधाय दद्यात् ।
 गन्धोदकं पुष्पवारि चन्दनं कुङ्कुमोदकं ।
 अपक्कं दधि दुग्धं वा गोमूत्रोदकमेव च ॥
 पिष्टोदकं तथा वारि कुष्ठचूर्णान्वितं पुनः ।
 उग्रौरसलिलं तद्वत् यववज्रुदकं तथा ॥
 तिलोदकञ्च सम्प्राश्य स्वपेष्मार्गशिरादिषु ।
 मासेषु पक्वहितये प्राशनं समुदाहृतम् ॥
 सर्व्वत्र शुक्लपुष्पाणि प्रशस्तानि शिवार्चने ।
 दानकालेषु सर्व्वेषु मन्त्रमेतमुदीरयेत् ॥
 गौरी मे प्रीयतां नित्यमनघा सर्व्वमङ्गला ।
 सौभाग्याय सुललिता भवानी सर्व्वसिद्धये ॥
 सख्यत्सरान्ते लवणं गुडकुम्भसमन्वितम् ।
 चन्दनं नेत्रपट्टञ्च सहिरण्याम्बुजं तथा ॥
 उमामहेश्वरं हैमं तद्वदिक्षुफलैर्युतम् ।
 सुशुक्लामासृतां शय्यां सोपधानां निवेदयेत् ॥

नेत्रपट्टंति पुष्पान्करे पाठः ।

सपत्नीकाय विप्राय गौरी मे प्रीयतामिति ।
 आर्द्रानन्दकरी नाम तृतीयैषा सनातनी ॥
 यामुपोष्य नरोयाति शश्वोस्तत्परमं पदम् ।
 इह लोके सदानन्दं प्राप्नोति च न संशयः ॥
 आयुरारोग्यसम्पन्नो न क्वचित् शोकमाप्नुयात् ।
 नारी वा कुरुते या तु कुमारी विधवा तथा ।
 सापि तत्फलमाप्नोति प्रसादाच्छूलपाणिनः ॥
 प्रतिपक्षमुपोष्यैवं मन्त्रार्घ्नविधानतः ।
 रुद्राणीलोकमाप्नोति पुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥
 य इदं शृणुयान्नित्यं श्रावयेद्वापि मानवः ।
 रुद्राणीलोकमाप्नोति पुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥
 य इदं शृणुयान्नित्यं श्रावयेद्वापि मानवः ।
 शक्रलोकैः सगन्धर्वैः पूज्यतेऽव्दुयुतावधि ॥
 आनन्ददां सकलदुःखहरां तृतीयां
 या स्त्री करोति विधवा सधवाथवा वा ।
 सा स्त्री गृहे सुखसुखान्यनुभूय भूयो
 गौरीपुरं सदयिता मुदिता प्रयाति ॥

इति पद्मपुराणोक्तमार्द्रादानव्रतम् ।

— ०० —

सुमन्तुर्वाच ।

पतिव्रता पतिप्राणा पतिशुश्रूषणे रता ।

एवंविधा प्रियायुक्ता शचिसन्भोजना सती ॥

सोपवासा ष्टीयायां सवणं परिवर्जयेत् ॥

सोपवासेति व्रतारम्भे द्वितीयायां कृतोपवासा ष्टीयायां
सवणं परिवर्जयेत् ।

सा वै गृह्णातु वै भक्त्या व्रतमामरणान्तिकम् ।

गौरी ददाति सन्तुष्टा रूपसौभाग्यमेव च ॥

सावण्यसवणं ह्यथं ज्ञाप्यं पुंसां मनोनुगम् ।

पुंसां मनोरमा नारी मर्त्ता भार्यामनोरमः ॥

गौरीव्रतेन सभते राजन् सवणवर्जनात् ।

उमया च पुरा प्रोक्तं यद्वा तच्च निवोधत ॥

इतिव्रतं प्रतिविभो धर्मराजस्य श्रुण्वतः ।

मयामन्तमिदं सृष्टं सौभाग्यकरणं नृणाम् ॥

मर्त्ये तु नियता नारी व्रतमेतच्चरिष्यति ।

सह मोदिष्यते भर्त्ता यावद्भर्त्ता हरोमम ॥

या वै कल्याणभर्त्तारं विन्दते शोभना सती ।

सात्विदं व्रतमुद्दिश्य भवेद्द्वारभोजना ॥

मस्त्रिणा मन्मना कुर्यान्मदभर्त्ता मत्परिग्रहा ।

गौरीं संख्याप्य सोवर्णीं गन्धालङ्कारभूषिताम् ॥

वस्त्रैः सुसूक्ष्मैः सम्ब्रीतां पुष्पमण्डनमण्डिताम् ।

सवणामृतं गुह्यं तैलं देव्याः शुक्रे निवेदयेत् ॥

कदुखण्डं जीरकञ्च शङ्खं पत्रञ्च भारत ।

शुक्रे पत्रे इति शेषः ।

‘कदुखण्डं, आर्द्रकम् ।

गुडपूपास्तथा पूपाः खण्डवेष्टास्तथा नृप ।
 ब्राह्मणे वेदसम्पन्ने प्रदेयाः सुबहुभुते ॥
 शुक्ले शुक्ले सदा देया यथा शक्त्या हिरण्ययी ।
 धनहीनैस्तु शक्त्या वै मधुक्षीरमयी नृप ॥
 अक्षारलवणं राक्षी भुङ्क्ते वीर सुवाग्यता ।
 गोरी सन्निहिता नित्यं भूमी संस्तरशायिनी ॥
 भर्तारं लभते कन्या या वाञ्छति मनोनुगम् ।
 सुचिरं सह भर्ता वै क्रीडयित्वा स हैव सा ॥
 सन्ततिञ्च प्रतिष्ठाप्य सह तेनैव गच्छति ।
 इह लोकान् परे लोके भोगश्चित्तशिखण्डिनाम् ॥
 विधवा तु महाराज देव्या व्रतपरायणा ।
 भर्तारं नियता नित्यं सदार्षनपरायणा ॥
 इह वीतृच्छन्य देहस्य दत्त्वा हरपुरे प्रियम् ।
 आकृण्व यमदूतेभ्यः सा भर्तारं रमेद्विवि ॥
 वर्धकोटिं शतगुणां परीत्वा पुनरागता ।
 भर्ता सहैव पूर्वोक्तं लभते फलमीश्वितम् ॥
 इत्येषा तिष्ठिरित्येवं तृतीया लोकपूजिता ।
 सदा विशेषतः पुण्या वैशाखे मासि वा भवेत् ॥
 पुण्यभाद्रपदे मासि माघस्यैव न संशयः ।
 माघभाद्रपदे वापि स्त्रीणां धन्यां प्रचक्षते ॥
 साधारणा तु वै पूर्या सर्वलोकस्य भारत ।
 माघमासे तृतीयायां गुडस्य लवणस्य च ॥
 दानं त्रैयस्कारं राजन् स्त्रीणाञ्च पुरुषस्य च ।

गुह्येन तुष्यते देवी सर्वथेन तु शहरः ॥
 गुह्यपूपास्तु कर्त्तव्या मासि भाद्रपदे तु या ।
 तृतीया साक्षया लोके गौर्वाथै रूपशब्दप्रते ॥
 योऽस्यां ददाति करकान् वारिधारासमन्वितान् ।
 स याति पुत्रवो वीर लोकान् वै हेतिमालिनः ॥
 वारिदानं प्रशस्तं वै मोदकानाच्च भारत ।
 वैशाखे मासि राजेन्द्र तृतीया चन्दनस्य च ॥
 वारिषा तुष्यते देवी मोदकैर्भवएव हि ।
 दानान्तु चन्दनस्त्रेह* नरयोनावसम्भवः ॥
 यात्वेषा कुबशादूस वैशाखे मासि या तिथिः ।
 तृतीया साक्षया लोके गौर्वाथै रिह शस्यते ॥
 योऽस्यां ददाति करकान् वारिधान्यसमन्वितान् ।
 स याति पुत्रवो वीर लोकान् वै हेतिमालिनः† ॥
 इत्थेषा कथिता वीर तृतीया तिथिरुत्तमा ।
 यामुपीच्च नरो राजन् वृष्टिर्हृष्टिं न्द्रियं व्रजेत् ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं अल्लवणत्तृतीयाव्रतम् ।



ब्रह्मीवाच ।

गौरी कांक्षी उमा भद्रा दुर्गा कान्तिः सरस्वती ।

* वंजयोनावसम्भव इति पुस्तकान्तर पाठः । कंयौमावसम्भवा इति क्वचित्पाठः ।

† हेममालिन इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

मङ्गला वैष्णवी लक्ष्मीः शिवा नारायणी क्रमात् ॥
 मार्गतृतीयामारभ्य पूजयेत् स्वर्गभाक् भवेत्,
 मार्गशीर्षतृतीयामारभ्य प्रतिमासमे कौकेन नाम्ना पूज-
 येदित्यर्थः

अर्धनारीश्वरं रुद्रमथवा उमाशङ्करम् ।

पूजयेद्विधिवन्नारीमवियोगमवाप्नुहात् ।

यथा वा विष्णुरूपेण पूजयेदीश्वरं सदा ॥

ईशस्य वामभागस्थां सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥

अर्धनारीश्वरमूर्त्तिमुमामहेश्वरम्

वा सुवर्णादिमयं विभाय वामभागस्थां देवीं गौर्यादिभिः
 पूजयेत् । अथवा विष्णुरूपेण संयुतं ईश्वरमिति । हरिहर
 मूर्त्तिं कृत्वा वामार्धस्थकेशवादिनामभिः प्रत्येकं पूजयेत् ।
 केशव नारायण माधव गोविन्द विष्णु मधुसूदन श्रीधर हृषीकेश
 पद्मनाभ दामोदराख्यान देवान् धूपस्त्रग्दीपाद्यैरुपोथ पूज्य
 दक्षिणाभिर्नामभिः । अश्वमेधादिसर्वमखानां गोलचदान
 स्यापि नित्यसर्वनामस्मरणादभिमतफलमाप्नोति ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं नाम तृतीयान्नतम् ।-

—:—

ब्रह्मोवाच ।

तृतीययान्तु वित्तेशं वित्तादग्री जायते ध्रुवम् ।

पूजयित्वेति शेषः ।

क्रयादिव्यवहारे च लाभोदिव्यगुणो भवेत् ।

मूलमन्त्राः सन्नाभिरङ्गमन्त्राश्च कीर्त्तिताः ॥
 पूर्वतः पद्मपत्रस्थः कर्त्तव्यश्च तिथीश्वरः ।
 गन्धपुष्पोपहारैश्च यथाशक्ति विधीयते ॥
 पूजाशठैश्च शठैश्च कृतापि तु फलप्रदा ।
 आग्न्यधारां समिद्धिश्च दधिचीराश्चमाक्षिकैः ।
 पूर्वीक्षफलदी होमो भवेच्छान्तेन चेतसा ॥
 एतत् व्रतं वैश्वानरप्रतिपद्गतवत्प्रास्थियम् ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं कुवेरव्रतम् ।

—:०:—

अगस्त्य उवाच ।

अतः परं महाराज सोभाग्यकरणं व्रतम् ।
 शृणु येनाह सोभाग्यं स्त्रीपुंसामभिजायते ॥
 फाल्गुनस्य तु मासस्य तृतीया शुक्लपक्षतः ।
 उपोषितेन नक्त्रेण शुचिना सत्वभाषिणा ।
 सश्रीकञ्च हरिं पूज्य रुद्रं वा उमया सह ॥
 अथ देवताया इति प्रतिमासक्षणविधानं ततस्त्वं ब्राह्मणे दद्या-
 दिति वक्ष्यमाणत्वात् । सा च प्राधान्येन सुवर्णमयी प्राप्नोति ।
 गभीरायेति पादौ तु सुभगायेति वै कटिम् ।
 उदरं देवदेवेति श्रीकण्ठेति च वै उरः ।
 चिलोचनायेति शिरो रुद्रायेति समन्ततः ।
 एवमभ्यर्च्य मेधावी विष्णुं लक्ष्मीसर्मान्वतम् ॥
 विष्णु पूजायान्तु वैश्वानरप्रयोगः ।

इरं वा गौरौसंयुक्तं गन्धपुष्पादिभिः क्लृप्तात् ।
 ततस्तस्याद्यतो ह्योमं कारयेन्मधुसर्पिंषा ॥
 तिस्रैः सह महाराज सौभाग्यपतयेति च ।
 ततस्त्वच्चारसंयुक्तं निःश्लेहं धरणीतले ॥
 गोधूमाक्षं तु भुञ्जीत कृत्वाप्येवं विधिः स्मृतः ।
 आघ्राठादिद्वितीया तु पायसं तत्र भोजयेत् ॥
 यवाकन्तु ततः पश्चात् क्रांतिंकादिषु पार्थिव ।
 श्यामाकाक्षं हविर्वापि यथा शक्त्वा प्रसन्नधीः ॥
 ततस्तं ब्राह्मणे दद्यात् पात्रभूते विचक्षण्ये ।
 अनङ्गुहीने वेदानां पारगे साधुवर्तिनि ॥
 सदाचारयुते दद्यादल्पचित्तेऽपि भूपते ।
 खड्गैः पात्रैरुपेतश्च ब्राह्मणाव निवेदयेत् ॥
 एकं मधु छतं पात्रं द्वितीयं छतपूरितम् ।
 तृतीयं तिस्रस्तैलस्य चतुर्थं गुडसंयुतम् ।
 पञ्चमं लवणपार्थं षष्ठं गोक्षीरसंयुतं ॥
 एतान् दत्त्वा रसान् राजन् सप्तजन्मान्तरे भवेत् ।
 सुभगो दर्शनीयश्च नारी वा पुत्रोऽपि वा ॥

इति श्रीवराह पुराणोक्तं सौभाग्य तृतीयाव्रतम् ।

—:ॐ:—

नारद उवाच ।

भगवन् श्रोतुमिच्छामि व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
 सौभाग्यजननश्चैव अभीष्टफलदायकम् ॥

ब्रह्मोवाच ।

नृणु दिप्र विधानेन तृतीयां प्रह्वराम्बिकाम् ।
 वा योचितो विधानेन स्वर्ग सौभाग्यदा भवेत् ॥
 माघे शुक्लतृतीयावासुपवासन्तु कारयेत् ।
 रात्रौ सन्धारमाहृत्य गौरीयानस्य मण्डपे ॥
 षष्टपत्रं लिखित्यद्य मण्डपे मुनिपुङ्गव ।
 उमामहेश्वरं तत्र पूजयेत्सुसमाहितः ॥
 पूर्वपथे न्यवेद्गौरीमाम्बेयां क्लृप्तां न्यवेत् ।
 दक्षिणे तु उमानाम नैर्ऋत्ये च स्वर्धां तथा ॥
 पश्चिमे वामदेवीन्तु वायव्यां मूलगौरिकां ।
 उत्तरे तु शुभगान्तु ऐशान्यां गिरिजां तथा ॥
 उमामहेश्वरं मध्ये गन्धपुष्पैः प्रपूजयेत् ।
 भृङ्गारक्षैव संख्याप्य तण्डुलैः परिपूरयेत् ॥

‘भृङ्गारः, कलशः ।

ततस्तस्याधतः कुण्डं हस्तमात्रं समिखलम् ।
 षष्ट्यां कोचे तु संख्याप्य चत्वारो वारिसंभृताः ॥
 हृतेनाज्याहुती हुत्वा तिलहोमन्तु कारयेत् ।
 धाहुतीनां शतं हुत्वा गायत्र्या तु समाहितः ॥
 षड्धवा गौरीनाम्ना तु लुडुगात् ब्राह्मणो मुने ।
 कुण्डस्य चोद्गरे भागे व्रती स्नानं समाचरेत् ॥
 आम्बेयां दिशि संख्येन षटेन प्रथमे विभो ।
 यामे वै द्विजगार्हूण ततो होमं समाचरेत् ॥

(६१)

एवं यामानुयामन्तु ज्ञानं होमन्तु कारयेत् ।
 प्रभाते विमले जाते सपत्नीकं द्विजोत्तमम् ॥
 पूजयित्वा विधानेन वस्त्रालङ्कारभूषणैः ।
 रक्तवस्त्रे गुरोः पत्नीं गुरवे सितवाससी ॥
 एवं कृत्वा विधानेन सुने वर्षचतुष्टयम् ।
 आराधनन्तु देव्याश्च सौभाग्यजननं परम् ॥
 उद्यापनं ततः कुर्यात्तस्मिन्नेव ततोद्दिने ।
 उमामहेश्वरं हेमं स्वच्छन्दे मन्त्रके स्थितम् ॥
 वस्त्रैर्गन्धैश्च धूपैश्च दीपमालादिभिस्तथा ।
 भक्षैर्नानाविधैः सम्यक् पूज्य भक्त्या ततो सुने ॥
 तद्दङ्गुलं सभार्यश्च पूजयेत् द्विजसुत्तमम् ।
 गाञ्चैव गुरवे तद्वत् वस्त्रालङ्कारसंयुताम् ॥
 मिथुनानोह चत्वारि भोजयेत्सुसमाहिता ।
 उमामहेश्वरं हेमं दत्त्वा भक्त्या चमापयेत् ॥
 या चरेद्विधिना सम्यक् सौभाग्यारोग्यभागभवेत् ।
 इह लक्ष्मि सौभाग्यं मृता शिवपुरं व्रजेत् ॥
 विधिहीना न कर्त्तव्या तृतीया फलमिच्छता ।
 व्यर्थः परिश्रमस्तस्य पर्वते स्नानं यथा ॥
 नारी वा नरशार्ङ्गल नरो वा विधिना सुने * ।
 फलं यद्योक्तं प्राप्नोति सत्यमुक्तं मया द्विजाः ॥

* विधवाविधवा सुने इति पुस्तकान्तरेपाठः ।

इति स्कन्दपुराणोक्तं हरतृतीयाव्रतम् ॥१०

—०००—

फाल्गुनादितृतीयायां सवचं बन्धु वर्जयेत् ।
समान्ते शयनं दद्यात् गृहं सोपस्कारान्वितम् ॥

‘समान्ते, वक्षरान्ते ।

संपूज्य विप्रमिथुनं भवानौ प्रीयतामिति ।
गौरीश्लोकप्रदं नित्यं सौभाग्यव्रतमुच्यते ॥

इति गरुड पुराणोक्तं सौभाग्यव्रतम्* ।

—०००—

कार्तिकादि तृतीयायां प्राग्ग गोमूत्रयाचकम् ।
नक्तश्चरेद्दमेकं तदन्ते गोप्रदी भवेत् ॥
गौरीश्लोके वसेत् कल्पं ततीराजा भवेदिह ।
एतद्गद्राव्रतं नाम सर्वकल्याणकारकं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं भद्राव्रतम् ।

—:○:—

भालौपनश्च यः कुर्यात् तृतीयायां शिवास्तये ।
‘शिवा, पार्वती ।

समान्ते धेनुदेयाति भवानौव्रतमित्यत ॥

* इति पद्मपुराणोक्तमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

इति पद्मपुराणोक्तं भवानीव्रतम् ।

—:~:—

अनघिपङ्कमन्नाति तृतीयायान्तु योनरः ।
गान्दस्वा शिवमध्येति पुनरावृत्तिदुर्लभं ॥
वृद्धदानन्दकृत्युंसां शीलव्रतमिदं स्मृतं ।

इति पद्मपुराणोक्तं शीलव्रतम् * ।

—:~:—

माघेमास्यद्यवा चैत्रे शुद्धेनुप्रदोभवेत् ।
शुद्धव्रतस्मृतीयायां गौरीसीके महीयते ॥
'शुद्धव्रतः, शुद्धवर्जः' ।
महाव्रतमिदं नाम परमानन्दकारकं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं महाव्रतव्रतम् ।

—:~:—

ब्रह्मीवाच ।

तृतीयायान्तु शृङ्गायां सिखेद्वस्त्रयुगे शुभे ।
रोचनासितकर्पूरेः शिवोमां पूजयेत्ततः ॥
हेमरत्नस्रजैर्वस्त्र मन्त्रयुग्मसुदीरयेत् ।
समस्तकामफलदं यत्तत् पूर्णसुदाहृतं ॥
तदेव मन्त्रद्वयं सिध्यति ।

नमः समस्तभुवनसर्गास्त्रित्यन्तकारक ।

* इति पद्मपुराणोक्तं महाव्रतमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ईशान ध्यानपरम योगिगम्यायते शिव ॥
 नमः शिवायै विश्वेश्वररीरार्हापहारिणि ।
 सत्यं चराचरस्वैह जनस्यै कामदायिनि ॥
 ततोऽजपार्जनं होमं कर्त्तव्यं द्विजसत्तम ।
 अद्वियोगाय नारीणां व्रतराजं सदा हितं ॥
 सहेमपुष्परत्नाढ्यं सवस्त्रं द्वापयेत्तु तं ।
 महापुष्पं महाभाष्यं सर्वकामप्रदायकं ॥
 सुतभ्रातृवियोगस्तु नभवेत्तेन भो द्विज ।
 न व्याधिर्नोपसर्गाच्च यावत्तत्पुरजो भवेत् ।
 तावत्कालमुमासीजे राजते मोदते* चिरं ॥

इति श्रीदेवीपुराणोक्तं व्रतराज तृतीयाव्रतम् १ ।

—00—

सूत उवाच ।

अथ वः कौर्त्सयिष्यामि इतिहासं पुरातनं ।
 यद्वत्तं काशिराजस्य भार्याया द्विजसत्तम ॥
 काश्यांराजः पुराह्वासीत् ज्यमेन इति स्मृतः ।
 तस्य भार्यासहस्रान्तु आसीद्रूपसम्बितं ॥
 तथैवान्या प्रिया तेन सन्धा भार्या शुभोभना ।
 सुता मद्राधिराजस्य विश्वकोनस्य धीमतः ॥
 सा स्वप्नात् प्रातश्चरन्वाय गत्वा गङ्गातटं शुभम् ।

* स्मोदते इति पुंलकारे पाठः ।

† इति व्रतराजव्रतमिति पुंलकारे पाठः ।

यावत्तु पुत्रि गीरीं त्वमेतैः पूजयसेऽचरैः ।
 जलपानं न कर्त्तव्यं तावच्चैव कथञ्चन ॥
 येन संप्राप्तयसेऽभीष्टं तत्प्रभावात् यथेष्टितम् ।
 तद्येति च मया प्रोक्तं तस्मात् प्रीता शुभाननाः ॥
 ततो विवाहे निर्वृत्ते गताहं पतिना सह ।
 श्वशुरस्तिष्ठते यत्र श्वश्रूश्चैव सुदारुणा ॥
 गीरीपूजाकृते माच्च निवारयति सर्व्वदा ।
 ततोऽहं भयसम्बन्धा गौरीभक्तिपरायणा ॥
 जलार्थं यत्र गच्छामि तस्मिंश्चैव जलाशये ।
 तत्र कईममादाय मन्त्रैः पञ्चभिरेव च ॥
 पञ्चपिण्डात्मिकां गौरीं विनिर्वाय ततः पुनः ।
 तैरेव पूजयाम्येतां गौरीभक्तिपरायणा ॥
 प्रक्षिपामि पुनस्तोत्रे ततो गच्छामि मन्दिरम् ।
 कस्यचित्स्वयं कालस्य भर्त्ता मे प्रक्षितः शुभाः ॥
 देशान्तरं वचिष्यत्वा सोऽपि मार्गं समाश्रितः ।
 सगच्छन्मरुमार्गेषु मां समादाय खेहतः* ॥
 संप्राप्तोनिर्जलं देशं सुरीद्रं मरुमण्डलम् ।
 तथा रीद्रतमे काले वृषस्यै दिवसाधिप ॥
 ततः सार्धः समथश्च विद्यान्तः स्वसमध्यगः ।
 जूपमेकं समाश्रित्य गन्धीरं दूरतोयकम् ॥
 एतस्मिन्नेव काले तु मया दृष्टं समीपगम् ।
 तोयाकारं मरुदेशं ततस्तोत्रं विचिन्तितम् ॥

एतच्च दृश्यते तोयं समीपस्थं तथा बहु ।
 तत्र ज्ञात्वा शुचिर्मुखा गौरीमभ्यर्ष्य भक्तिः ॥
 पिबामि सलिलं पश्चात् सुखादु सुरसौ* भवेत् ।
 ततः संप्रस्थिता यावत् प्रयच्छामि पदात्पदम् ॥
 ततो दूरतरं याति क्षणेन शृगढश्लिका ।
 एतस्मिन्नन्तरे प्राप्ते नभोमध्यं दिवाकरः ।
 वृषस्यस्तेन दग्धास्त्रिंशत्* उपरिष्ठात् शुभाननाः ॥
 अधोभागे तु तप्ताभिर्वालुकाभिः समन्ततः ।
 भ्रममाणा ततस्तस्मिन्नरुद्रेण समालुला ॥
 ततश्च पतिता भूमौ विष्णोटकसमाहृता ॥
 ततो मया कृता चित्ते कथा भारतसम्भवा ।
 एतेन तु पुरा पञ्चवालुकाभिर्विनिर्मिता ।
 रूपे तु चिप्यमाणेन वन्धुभ्यान्तोयवर्त्तिते ॥
 भक्तिप्राप्तास्ततो देवास्तुष्टास्तस्य महात्मनः ।
 तदेवं वालुकाभिश्च पूजयामि हरिप्रियाम् ॥
 तेन तुष्टा तु सा देवौ मम राग्यं प्रयच्छति ।
 अन्ये देहतरं संख्यं मन्येभौऽहमनन्तकम् ॥
 ततस्तु पञ्चभिर्मन्त्रैस्त्रैरेव कृतिमागतैः ।
 पञ्चभिर्मुष्टिभिर्देवौ वालुकोष्ठीः प्रपूजिता ॥
 ततः पञ्चत्वमापन्ना तत्कालेऽहं वराङ्गनाः ।
 द्वायार्थाधिपतेर्जाता सद्ने लोकविद्युते ॥
 जातिस्वरचसंबुद्धा तस्मा देव्याः प्रभावतः ।

* सुरमोति पुष्पाकरे पाठः । † दग्धमावाचीति पुष्पाकरेपाठः ।

भवतीनां कनिष्ठाभि ज्येष्ठा सौभाग्यतः स्थिता ॥
 एतज्जात् कारणाद्गौरीं क्लृप्तां पञ्चपिण्डिकान् ।
 कर्हमेव विधायाञ्च पूजयामि दिने दिने ॥
 एतत् शुभ्रं समाख्यातं भवतीनामसंग्रहम् ।
 समीनामेन मे गौरी मनोभीष्टं प्रयच्छतु ॥

सञ्जीववाच ।

ततः सर्वाः सपत्न्यस्ताः कृताञ्जलिपुटस्थिताः ।
 ताम्बुधूर्हीनया वाचा प्रणिपत्य मुहुर्मुहुः ॥
 प्रसादं कुरुवाञ्जाकं दीयतां मन्त्रपञ्चकम् ।
 तदेव येन ते गौरी सन्तुष्टा परमेश्वरी ॥
 त्वया प्रोक्ता च यं सर्वाः प्रार्थयध्वं यथेच्छया ।
 अष्टं सर्वं प्रदास्यामि तत्सत्त्वं वचनं कुरु ॥
 ततो देव मया प्रोक्तं तासां तन्मन्त्रपञ्चकम् ।
 शिष्यत्वं गमितानान्तु वाक्त्र, नः, काय, कर्म, भिः ॥

विष्णुववाच ।

ममापि वद देवेशि क्रीडक् तन्मन्त्रपञ्चकं ।
 यस्त्वयाशुचितं पूर्वं तासां गौर्या निवेदितम् ॥

सञ्जीववाच ।

नमः पृथिव्यै चान्धै ते नम आपोमये शुभे ।
 तेजस्विनि नमस्तुभ्यं नमस्ते वायुरूपिणि ॥
 आकाशरूपसम्पत्ते पञ्चरूपे नमोनमः ।
 एभिर्गन्धैर्गौर्या पूर्वं पूजिता परमेश्वरी ॥
 तेन राज्ञं पुरा प्राप्तं सम्बन्धीनां सुदुर्लभम् ।

ततः स्वस्थापितां देवीं कृत्वा रत्न मयीं ह्यभाम् ॥
 षाट्कोशरजे चेषे मया तत्र सुरेश्वर ।
 तां या पूजयते नारी साचापि * पतिवह्नुभा ।
 जायते नात्र सन्देहः सर्वपापविवर्जिता ॥
 लक्ष्मीववाच ।

एवं राज्यं मया प्राप्तं गौर्याः पूजाकृते विभी ।
 सोभाग्यं परमश्चैव दुर्लभं सर्वयोषिताम् ।
 नचापत्यं मया लब्धं तद्यापि परमेश्वर ॥
 तादृशेऽपि च सोभाग्ये तारुण्ये तादृशे स्थिते ।
 तद्यापि तेन दुःखेन दिवानक्तं सुखेन मे ॥
 कस्यचित्स्वयं कालस्य दुर्घासा मुनिपुङ्गवः ।
 ध्यानार्त्ताधिपते ईर्ष्यं संप्राप्ते गौरवाय सः ॥
 चातुर्ध्वासीकृतेचैव शक्तिकाग्रहणाय च ।
 ततः संपूजितो राज्ञा ध्यानार्त्तेन यथाक्रमम् ॥
 दत्त्वार्धं मधुपर्कञ्च ततः प्रीतः प्रचम्य च ।
 स्वागतन्ते मुनिश्रेष्ठ भूयः सुस्वागतश्च ते ॥
 नाग्योधन्यतमोलोके भूपोऽस्ति सदृशो मया ।
 यत्ते पादौ रजोयस्तौ केशैर्भ्यो निर्ध्वलीकृतौ ॥
 तद्गुह्यं किङ्करोस्वयं शृङ्गाघातस्य ते मुने ।
 अपि राज्यं प्रयच्छामि का वार्त्ताम्येषु सुश्रुतुः ॥

दुर्घासा उवाच ।

चातुर्ध्वासीविधानन्ते करिष्ये नृप मन्दिरे ।

मृत्तिकाग्रहणं यावत् शुश्रूषा क्रियतां मम ॥
 स तद्येति प्रतिज्ञाय* मामूचे पार्थिवोत्तमः ।
 शुश्रूषा चास्य कर्त्तव्या सर्व्वदैव वरानने ॥
 चातुर्न्मार्त्तकृतं यावद्देवताञ्च नपूर्व्वकम् ।
 वाठमित्वेवमुक्त्वाथ मया सर्व्वमनुष्ठितम् ॥
 शुश्रूषार्थं च यत् कर्म दुहित्रा तु पितुर्यथा ।
 चातुर्न्मार्त्तस्यांभ्यतीतायां यदा संप्रस्थितो मुनिः ।
 तदा प्रोचे स मां तुष्टः पुत्रि किं करवाणि ते ॥
 ततः स भगवान् प्रोक्तः प्रणिपत्य मया गुरुः ।
 अपत्यं नास्ति मे ब्रह्मन् तेन दग्धास्त्राहर्निशम् ॥
 तादृशे फलिते राज्ये शौवनेऽपि महत्तरे ।
 तन्मेवद् मुनिश्चेष्ट येन स्वात्मम सरकतिः ॥
 व्रतेन नियमेनाद्य दानेन च हृतेन वा ।
 ततः स सुचिरं ध्यात्वा मामुवाच अयन्निव ॥
 अन्यदेहान्तरे पुत्रि त्वया गौरी प्रपूजिता ।
 तन्नाभिर्वालुकाभिश्च मृत्युकाल उपस्थिते ॥
 तद्ब्रह्मया लब्धराज्योऽपि तापेन परिभूयसे ।
 गौरी यत्तापसंयुक्ता वालुकाभिः कृता त्वया ॥
 न देवो विद्यते काष्ठे पाशाने मृत्तिकासु च ।
 भावेषु विद्यते देवो मन्त्रसंयोगतस्ततः ॥
 तव भक्तिसमायुक्ता मन्त्रसंयोजनेन च ।
 देवी तन्न समायाता त्वया वालुक्याधिं ताः ।

* मामूचे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

तप्तयानेन सत्तापा भवत्यः सर्व्वदा स्थिताः ॥
 तस्माद्भ्रमर्यो कृत्वा देवी' त्वं पञ्चपिण्डिका ।
 हाटकोश्वरजे शेषे संस्थापय शुभानने ।
 वृषस्थे भास्करे पञ्चाक्षस्या उपरि स्नावि यत् ॥
 जलयन्त्रं दिवानन्तं धारयस्व प्रयत्नतः ।
 ततो यथा यथा तस्याः शैत्यभावो भविष्यति ॥
 तथा तथा च ते देवः शान्तिं यास्यत्यसंग्रयं ।
 देहात्ते भविता गर्भस्ततः पुत्रमवाप्स्यसि ॥
 राज्यभारक्षयं श्रेष्ठं सुरसौख्येषु विश्रुतम् ।
 अन्यापि कामिनी याच एवं तां पूजयिष्यति ।
 ज्यैष्ठे मासि तथा सापि यथा त्वं प्रभविष्यसि ॥
 सख्यौववाच ।

ततो मया पुनः प्रोक्तो भगवान् स मुनीश्वरः ।
 मानुषत्वे च मे रागविरक्तिर्नहती स्थिता ॥
 नदीवेगोपमं दृष्ट्वा जीवितं सर्व्वदेहिनाम् ।
 तन्मे वद् महाभाग किञ्चिद्भ्रतमनुत्तमम् ॥
 मानुषत्वं न येन स्यात् सम्यक् चीर्षेण स हिजः ।
 ततः स सुचिरं ध्यात्वा मा याहि परमेश्वरि ॥
 अस्ति पुत्रि व्रतं पुच्छं गौरीतुष्टिकरं परम् ।
 येन चीर्षेण वै सम्यक् योषिद्देवत्वमाप्नुयात् ॥
 गोमयाख्या महादेवी कृता गोमादृभिः पुनः ।
 ततो गोलोकमापन्नाः सर्व्वास्ता वरवर्षिणि ॥
 ताश्च कुर्व्वन् कथाधि ततोदेवत्वमाप्स्यसि ।

ततो मया पुनः प्रोक्तः स मुनिः सुरसत्तम ॥
 कस्मिन् काले प्रकर्त्तव्या विधिना केन मन्त्रेण ।
 सर्वं विस्तरतो ब्रूहि येन तां प्रकरोम्यहम् ॥

दुर्वासा उवाच ।

नभस्त्रे च सिते पक्षे ढतीयादिवशे स्थिते ।
 प्रातःकृत्याय पञ्चाश भक्षयेत् दन्तधावनम् ॥
 ततश्च नियमं कुर्यादुपवाससमुद्भवम् ।
 गौरीनाम समुच्चार्य अहापूतेन चेतसा ॥
 ततो निशागमे प्राप्ते कृत्वा गौरीचतुष्टयम् ।
 शक्यं यादृशश्चैव तदिदंैकमनाः शृणु ॥
 एका गौरी प्रकर्त्तव्या पञ्चपिण्डा यद्योचिता ।
 प्रहरे प्रहरे प्राप्ते तासु पूजां समाचरेत् ॥
 यैर्मन्त्रे स्तान्निवोध त्वं एकैकस्याः पृथक् पृथक् ।
 हिमाचलगृहे जाता देवि त्वं शङ्करप्रिया ॥
 मिनागर्भं समुद्भूता पूजां गृह्ण नमोऽस्तु ते ।
 धूपं दद्यात्ततश्चैव कर्पूरं अहया सह ॥
 रक्तसूत्रेषु दीपञ्च हृतेन परिकल्पयेत् ।
 जातीपुष्पैः समभ्यर्च्य नैवेद्यं मोदकाश्चरेत् ॥
 रक्तवस्त्रञ्च सम्याद्य अर्घ्यं दद्यात्ततः परम् ।
 यस्य वृक्षस्य विहितं तस्य स्याद्दन्तधावनम् ॥
 मातुलङ्गेन चार्घ्यं मन्त्रेणानेन भक्तितः ।
 शङ्करस्य प्रिये देवी हिमाचलसुते शुभे ॥
 अर्घ्येण मया दत्तं परिगृह्ण नमोऽस्तु ते ।

तदेव प्राशनं कार्यं ततः कायविशुद्धये ॥
 तदेव मातुलङ्घमेव ।
 द्वितीये प्रहरे प्राप्ते चर्षीनारीश्वरं ततः ।
 सुरभ्या पूजयेद्भक्त्या मन्त्रेणानेन पार्ष्वतीम् ॥
 रमाहाराह्वयोर्ष्वेवं या हरस्य व्यवस्थिता ।
 सा मे पूजां प्रष्टन्नातु तस्मै देव्यै नमोनमः ॥
 अगुरुश्च ततो दद्यात्तूपं दद्यात्तदासुते ।
 नैवेद्यं गुणकाश्चैव नालिकेरेणचार्घिकम् ॥
 मन्त्रेणानेन दातव्यं तदेव प्राशनं स्मृतम् ।
 चर्षीनारीश्वरो यो च संस्थितो परमेश्वरो ॥
 चर्षं मे तु प्रष्टन्नानां स्यातां सर्वसुखप्रदौ ।
 तृतीये प्रहरे प्राप्ते शतपत्रया प्रपूजयेत् ॥
 उमामाहेश्वरी देवी मन्त्रेणानेन सुन्दरि ।
 उमामहेश्वरी देवी यो तो सृष्टिलयात्मको ॥
 तौ सृष्टीतामिमां पूजां मया दत्तां प्रभक्तितः ।
 गुग्गुलूरथं ततो धूपं नैवेद्यं धारिकात्मकम् ॥
 जातीफलैश्च चार्घ्यं तदेव प्राशनं स्मृतम् ।
 ततश्चार्घः प्रदातव्यो मन्त्रेणानेन भक्तितः ।
 उमामहेश्वरी देवी सर्वकाम सुखप्रदौ ॥
 सृष्टीत्वा दत्तमर्घं मे दयां कृत्वा महेश्वरी ।
 चतुर्थे प्रहरे प्राप्ते गौरीं पञ्च च पिष्टिकाम् ॥
 शृङ्गराजेन संपूज्य मन्त्रेणानेन भक्तितः ।
 पृथिव्यादीनि भूतानि यानि प्रीक्तानि पञ्च च ॥

पञ्चरूपाणि देवेशि पूजां गृह्ण नम्रोस्तु ते ।
 नैवेद्यं घृतपूरञ्च दद्याद्देव्याः प्रभक्तितः ॥
 ग्रन्थिचूर्णेन धूपञ्च अर्घ्यं मदनजं फलम् ।
 तदेव प्रशमं कार्यं अर्घ्यं मन्त्रइति स्मृतः ॥
 पञ्चभूतमयी देवी पञ्चधा या व्यवस्थिता ।
 अर्घ्यं मेनं मया दत्तं सा गृह्णातु क्षुरेश्वरी ॥
 एवं सर्वां निशां वापि गीतवाद्यादिनिःस्वनैः ।
 तासां चैवाग्रतो नेया नैव निद्रां समाचरेत् ॥
 ततः प्रभाते विमले प्रोङ्गते रविमण्डले ।
 स्नात्वा संपूजयेद्दिप्रं सह पद्म्या सुभक्तितः ॥
 वस्त्रैराभरणैश्चैव स्वशक्त्या नृपनन्दनि ।
 गौरीभक्ते च दातव्यं मिष्टान्नञ्च श्चिच्छिते ॥
 ततः करेणुमानौघ वडवां वा सुमध्यमे ।
 गौरीचतुष्टयं तच्च समारोप्य तदोपरि ॥
 गीतवादिचक्रव्येन वेद्ध्वनियुतेन च ।
 नद्यां वाद्य तडागे वा वाप्यां वाद्य परिच्छिपेत् ॥
 मन्त्रे षानेन सङ्गत्वा तप्ते ऽहं वच्मि सुन्दरि ।
 आगतासि महादेवि पूजितासि मया श्रुभे ॥
 मम सौभाग्यदानाय यत्तेष्टं तत्र गम्यताम् ।

लक्ष्मीरूपा च ।

एवं मया कृता देव सा द्वितीया यथोदिता ।
 नभस्त्रे मासि संप्राप्ते भक्त्या परमया विभो ॥
 द्वितीये तु तत्रा प्राप्ते द्वितीये तु विशिषतः ।

तावद्गोमगता वाणी समुत्तस्थौ सुरेश्वर ।
 मा पुत्रि जलमध्ये त्वं मम मूर्तिं चतुष्टयम् ॥
 परिशिपाद्य महाकव्यं श्रुत्वा चैवं विधीयताम् ।
 हाटकोश्वरजे चेत्रे स्थापयैतत्संदाद्ययात् ॥
 अक्षयं जायते येन सर्वस्त्रीणां हिताय च ।
 त्वं प्रार्थय यदाभीष्टं वरं सर्वं ददाम्यहम् ॥
 ततः सा प्रशिपत्कोशैर्भया प्रोक्ता सुरेश्वरी ।
 यदि यच्छसि मे देवौ वरन्तुष्टा सुरेश्वरि ॥
 तदहं मानुषे गर्भे मा भूयासं कथञ्चन ।
 भर्ता भवतु मे विष्णुः ग्राह्यतोऽभीष्टदः सदा ॥
 नान्यत् किञ्चिदभीष्टं मे चेद्ग्राह्यं त्रिदशोद्भवम् ।
 अन्यापि कुर्वते या तु व्रतमेतत् समाहिता ॥
 सर्वव्रतैर्यदा तुष्टिप्तव देवि प्रजायते ।
 तथा तस्याः प्रकर्त्तव्या एकेनानेन पार्वति ॥
 एवं भविष्यतीत्युक्त्वा ततश्चादर्शनं गता ।
 स्वदेवी च मया तत्र तच्च देवी चतुष्टयम् ॥
 हाटकोश्वरजे चेत्रे मया संस्थापिता प्रभो ।
 तत्प्रभावात्प्रया लब्धो भर्तायं परमेश्वरः ॥
 ग्राह्यतश्चाक्षयश्चैव सुखप्रेक्ष्य च सर्वदा ।

इति पद्मपुराणीयनागरखण्डे पञ्चपिण्डिकागौरीव्रतम् ७

—000—

गुह्येन तुच्यते देवी पार्वती सर्वमङ्गला ।
 यावत्प्रशामि प्रत्यूषं तावद्गौरी चतुष्टयम् ॥

(६३)

जातरत्नमयं तच्च मया तत्परिवर्जितम् ।
 प्रस्थिता तत्समादाय परिश्रेतुं जलाशये ॥
 गुडपूपास्तु दातव्या मासि भाद्रपदे तु या ।
 तृतीया पायसेनापि वामदेवस्य प्रीतये ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं गुडतृतीयाव्रतम् ।^५

—000—

साध्या द्वादश प्रोक्ताः

ब्रह्माण्डपुराणात् ।

मनोऽनुमन्ता प्राणश्च नरयानश्च वीर्यवान् ।
 वित्तिर्हृद्योऽप्यथैव हंसो नारायणस्तथा ॥
 प्रभवो विष्णुर्विश्वश्च साध्या द्वादश यन्निरे ।
 तृतीयायां महाभाग पूजयेत्तानुपोषितः ॥
 प्रतिदृतीयायां यावद्दुर्घं सोपवास इति शेषः ।

इतिविष्णुधर्म्मोत्तिरोक्तद्वादशाह्यक्षफलावाप्नितृतीयाव्रतं ।*

—000—

तृतीयायां तथाभ्यर्च्य ब्रह्म विष्णु महेश्वरान् ।
 पृथक् पृथक् नाम मन्त्रैर्नैवेद्यादि निवेदयेत् ॥
 नीन् लोकाश्च तदा नाम सव्यक् संपूजयेत्तरः ।
 ऐश्वर्यं महदाप्नोति गतिमधराश्च विन्दति ।

* अर्थं इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

इति विष्णुधर्माङ्गत्तमैश्वर्यं तृतीयाव्रतम् ।

—000—

तृतीया श्रावणे कृष्णा या स्यात् श्रावणसंयुता ।

श्रावणोऽत्र पौर्णमास्यन्तोमासी ब्राह्मः अतःश्रावणकृष्ण
तृतीयायाः श्रावणयुक्तत्वं न दुर्घटं ।

तस्यां संपूज्य गोविन्दं तुष्टिमयामवाप्रयात् ।

पूजादि प्रणवादिनमोन्तैर्नाममन्त्रैः ।

इति विष्णुधर्माङ्गत्तुष्टिं प्राप्तिं तृतीयाव्रतम् ।

—000—

वशास्त्रसङ्कल्पे तु तृतीयायामुपोषितः ।

अक्षयं फलमाप्नोति सर्वस्य सुकृतस्य तु ॥

सा तद्या कृत्तिकोपेता विशेषेण च पूजिता ।

तत्र दत्तञ्च जप्तञ्च सर्वमक्षयमुच्यते ॥

अक्षय्या सा तिथिस्तास्मात्तस्यां सुकृतमक्षयं ।

अक्षयैः पूजितोविष्णुस्तेन साधाक्षयता कृता ॥

अक्षयैस्तु नरः ज्ञातो विश्वोर्दत्त्वा तथाक्षयान् ।

शक्तून् सुसंस्कृताञ्चैव हुत्वा चैव तथाक्षयान् ॥

विप्रेषु दत्त्वा तानेव तथा शक्तून् ह्यसंस्कृतान् ।

पञ्चाशन्तु महाभाग फलमक्षयमयुते ।

एकामप्युक्तां यः कृत्वा तृतीयां शृणुनन्दन ।

एतावत्तु तृतीयानां सर्वासान्तु फलं लभेत् ॥

इति विष्णुधर्मात्तरोक्तमश्वयफलावाप्तिं अश्वयतृतीयाव्रतं ।

—०००—

ईश्वर उवाच ।

फलद्वयीयां या नारी कुरुते तत्र भाविता ।
वर्षमेकं सिते पक्षे देवीं पूज्य विधानतः ॥
फलानि ब्राह्मणे दद्याद्भीष्टानि च यानि तु ।
फलानि वर्जयेत् नक्तं अत्रासि सुरसुन्दरि ॥
निष्वावानाढकीं मुहान् माषांश्चैव कुलत्थिकान् ।
मसूरान् राजमांषाश्च गोधूमान् स्त्रियुटांस्तथा ॥
चणकान् वर्तुलान् वापि मुकुटां भक्तितोऽस्तिजः ।
नरो वा यदि वा नारी यावद्गौरौव्रतं चरेत् ॥
तस्याः पुण्यफलं वर्षे कथ्यमानं शृणुष्व मे ।
धनं धान्यं गृहे तस्य न कदाचित् क्षयं व्रजेत् ॥
दुःखिता दुर्भगा दीना सदा जन्मनि नो भवेत् ।
कथानकश्च श्रोतव्यं देव्या माहात्म्यसंयुतम् ॥
उत्तपातकनाशाय सर्व्वकामसमृद्धये ।

इति पद्मपुराणीयप्रभासखण्डोक्तं फलतृतीयाव्रतं ।

इति श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहादेवस्य सकलकरणा-
धीश्वर सकलविद्याविशारदं श्रीहेमाद्रिविरचिते
चतुर्व्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे
तृतीयाव्रतानि ।

अथ चतुर्थीव्रतानि ।

—000—

अनाथलोकोद्धरणैकवन्द्युर्गण्यपुण्यामृतसारसिन्धुः ।
हेमाद्रिरज्ञानसमुद्रसेतुं ब्रूते चतुर्थीव्रतमिष्टहेतुं ॥

स्कन्द उवाच ।

केन भोगानवाप्नोति निर्विघ्नं पुरसूदन ।
पुत्रपौत्रांस्तथारोग्यं व्रतेनाप्नोति शङ्कर ॥

ईश्वर उवाच ।

पुरा देवासुरे युद्धे असुरैर्निर्जिता रणे ।
शक्राद्या देवताः सर्वास्त्रिपुरावासिभिर्यदा ॥
तदा विवर्णवदनास्ते सर्वे मासुपागताः ।
चाहि द्राहि वदन्तस्ते मयाप्याम्बासितास्तादा ॥
विघ्नैरुपहतानाञ्च समादिष्टं व्रतं मया ।
तत्कृतं तैस्तास्कान्द तेषां तुष्टे गणाधिपः ॥
गणेशेन तु तुष्टेन विघ्नानां संचयः कृतः ।

स्कन्द उवाच ।

विधिना केन देवेश व्रतमेतन्महाफलं ।
कृतं भवति देवेश तन्मे ब्रूहि वृषध्वज ॥

ईश्वर उवाच ।

-मार्गशीर्षे शुभे मासि सिते पक्षे तु षण्मुख ।

चतुर्थीं नियमं षट्त्रयं विज्ञेयं पूज्य भक्तितः ॥
 पुष्पैर्गन्धैश्च नैवेद्यैः लङ्घु कैश्च सुसंस्तुतैः ।
 पल्लवैस्तिलपिष्टैश्च तथा सोहालकैः प्रभुं ॥
 पल्लवं तिलपिष्टं षष्ठेते पिष्टादिमयाः* ।
 पूजयित्वा विधानेन प्रार्थयेत्तत्र मानवः ॥
 त्वत्प्रसादेन देवेश व्रतं व्रतचतुष्टयं ।
 निर्विघ्नेन तु मे या तु प्रमाणं तु खगध्वज† ॥
 संसारार्थवदुस्तारं सर्वविघ्नसमाकुलं ।
 तस्मात् ध्यानजगन्नाथ चाहि मां गणनायक ॥
 एवं प्रार्थ्य गणाध्वजं भुञ्जीयाद्वाप्यतस्ततः ।
 एवं क्रमेश्च संपूज्य एकभक्तो नरोत्तमः ॥
 गणेशं मनसा ध्यायंस्ततोराशौ स्वपेद्बुधः ।
 एवं संवत्सरं कृत्वा चतुर्थीव्रतं षष्मुञ्च ॥
 ततो मार्गशिरे मासि विधिना तस्य पूजनं ।
 नक्लाशी च भवेत्तद्दद्यावत्संवत्सरंपुनः ॥
 मार्गशीर्षे तु संप्राप्ते तथैवायाचितो भवेत् ।
 अयाचितेनाब्दमेकं ततो मार्गशिरे पुनः ॥
 आरभ्योपवसेद्द्वन्द्वमेकं तद्दत्त्वं पूजनं ।
 एवं क्रमेश्च विधिवच्चत्वार्यब्दानि मानवः ॥
 समाप्य तु ततोऽगन्ते व्रतच्छातो महाव्रत ।
 कारयेद्देमघटितं स्वयत्तयास्त्रुरयं शुभं ॥

* षट्कोट्टकैश्चेत्येवमवा सोमादिभिः प्रभुं । षट्कोट्टं तिलपिष्टं, उद्धरणापि-
 दादिमया इति पुलकान्तरे पाठः ।

† प्रमाणं खगध्वज इति पुलकान्तरे पाठः ।

आखुरघं, गणेशं ।

तद्रूपं विष्णुधर्मीक्षरात् ।

विनायकस्तु कर्त्तव्यो गजवक्रश्चतुर्भुजः ।

शूलर्षश्चाक्षमाला च तस्य दक्षिणहस्तयोः ॥

पात्रश्चीदकपूर्णश्च परशुश्चैव वामतः ।

दक्षिणस्यास्य नकर्त्तव्यो वामो रिपुनिघ्नूदन ॥

पादपीठकृतः पादोदकचामनगो भवेत् ।

सम्बोदरस्तथाकार्यस्तन्तुकर्णश्च यादव ॥

व्याघ्रचर्मधरः सर्पव्यालयज्ञोपवीतवान् ।

कारयेद्दर्शनकैः शुभैररविन्दं सपत्रकं ॥

तस्योपरि घटं स्थाप्य ताम्रपात्रेण संयुतं ।

पूरयेत् शुभशालेयेस्तन्दुलैरेव वा खग् ॥

तस्योपरि न्यसेद्देवं वासोभिर्विष्टं सुव्रत ।

पूजयेत् पुष्पधूपार्घ्यैर्नैवेद्यैर्विविधैस्तथा ।

मोदकैश्च ततः शुभैः पक्वान्नेष्टुतपाचितैः ॥

नैवेद्यं कल्पयेत्तत्र गणेशः प्रीयतामिति ।

जागरं कारयेद्दिहान् गीतवादित्रनिस्त्रनेः ।

पुराणास्थापनश्चैव तां रात्रिं क्षपयेद्बुधः ॥

प्रभाते विमले ज्ञातो होमकार्य्याणि कारयेत् ।

तिस्रस्त्रोद्दिव्यवैश्वेव तथा सिद्धार्थकैः शुभैः ॥

ॐ गणेशाय स्वाहा । ॐ गणपतये स्वाहा । ॐ मेघवर्षाय

स्वाहा । ॐ कुम्भाष्टाय स्वाहा । ॐ त्रिपुरान्तकाय स्वाहा ।

ॐ एकदन्ताय स्वाहा । ॐ सम्बोदराय स्वाहा । ॐ रुक्मदंष्ट्राय

स्वाहा । ॐ विष्णवे शंकराय स्वाहा । ॐ ब्रह्मणे स्वाहा । ॐ इन्द्राय
स्वाहा । ॐ यमाय स्वाहा । ॐ वरुणाय स्वाहा । ॐ सीमाय
स्वाहा ॥ श्रीगणेशंपरमेश्वरिणे स्वाहा । गणपति मन्त्रेण होमयेत् ।

अष्टोत्तरं व्रतं कृत्वा ततो व्याहृतिभिर्हुनेत् ।

यावत् शक्यं महावाहो ततो होमं समाप्यते ॥

ततस्तमर्चयेद्दिहान् आचार्यं भक्तिभावितः ।

वस्त्रैराभरणैर्दिव्यैः पूजयित्वा क्षमापयेत् ॥

तत्पत्न्यै पुरुषो भक्त्या रत्नैराभरणैः शुभैः ।

शय्या देया ततो राजन् सोपधानां सलङ्घकां ॥

गां सवक्षां ततो दद्यात् सर्वालङ्कारभूषितां ।

प्रीयतां गणनाथोऽथ इति मन्त्रमुदाहरेत् ॥

ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या चतुर्विंशतिसंख्यया ।

तेभ्यस्तु करकान् दद्यात् तिलपात्रसमन्वितान् ॥

अनेन विधिना यस्तु करोति व्रतमुत्तमम् ।

न विघ्नैरभिभूयेत गणनाथप्रसादतः ॥

यः करोति समारम्भं निर्विघ्नं तत्फलप्रदम् ।

पूर्वं तथा कृतं सर्वैरिन्द्राद्यैस्त्रिदशैर्विभो ॥

बद्धे च ब्रह्मणा पूर्वं विष्णुना च पुरा कृतम् ।

अन्यैश्चैव महीपालै राजभिर्बहुभिः कृतम् ॥

एतदेव व्रतं शीर्षं मनुष्यैर्भूतले मुने ।

अनेन क्रियमाणेन न विघ्नैरभिभूयते ।

सर्वलोकात्परिभ्रष्टस्ततो याति पराङ्गतिम् ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं सोपधानं कृत्वा चतुर्थी व्रतम् ।

—000—

मार्कण्डेय उवाच ।

इदमन्यत् प्रवक्ष्यामि चतुर्मूर्तिव्रतं तदा ।
 चैत्रस्वामलपक्षे तु सोपवासो जितेन्द्रियः ॥
 चतुर्थ्यां वासुदेवस्य कृत्वा संपूजनं शुभम् ।
 काञ्चनं दक्षिणां दद्यात् द्विजाय ब्रह्मचारिणे ॥
 तथा सङ्घर्षणं देवं पूजयित्वा जगद्गुरुं ।
 वैशाखे तु गृहस्थाय दद्याच्छय्यां सुसंस्मृतां ॥
 संपूज्य देवं प्रद्युम्नं ज्यैष्ठ्ये मासि यथा विधि ।
 वनस्थाय तदा दधीत् फलमूलान्तु गोरसम् ।
 अतिरुचं यथाघाटे पूजयित्वा जगद्गुरुं ॥
 दद्यादलावुपाचन्तु योगस्थाय द्विजाय तु ।
 इत्येव पारणं प्रोक्तं स्वर्गलोके महीयते ॥
 द्वितीये पारणे प्राप्ते शक्यलोके महीयते ।

सालोक्य मायात्यय केयवस्य

प्राप्ते तृतीये त्वद्य पारणास्वात् ।

पारणं त्रयं विधानात् व्रतावृत्तिः

इत्याश्रमाणां व्रतसुत्तमं ते

मयेरितं कल्पयनाश्रकारि ।

● दद्याच्छय्यां सुसंस्मृतां इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† पुत्रमिति पुस्तकान्तरे पाठः । ‡ पारणे प्राप्ते इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

इति विष्णु धर्मात्तरोक्तमाश्रमव्रतम् ।



मार्कण्डेय उवाच ।

इदमन्यत् प्रवक्ष्यामि चतुर्मूर्तिव्रतं तव ।
 चतुरात्मा हरिः प्रोक्तश्चत्वारश्च हुताशनाः ॥
 आहिताग्निर्हिजो यस्य विद्यतेऽग्निचतुष्टयम् ।
 सोपवाससतुर्थ्यान्तु शुक्लपत्रस्य फाल्गुने ॥
 अभ्यर्च्य चतुरात्मानं वासुदेवमतन्द्रितम् ।
 तस्मै दद्याद्विजेन्द्राय तिलप्रस्थानि षोडश ॥
 सुवर्णस्य सुवर्णञ्च वस्त्रं दृप्ततुलामपि ।

सुवर्णं कर्षीनं ।

एवं संवत्सरं कृत्वा व्रतमेतद्व्रतन्द्रितः ।
 सर्वकामसमृद्धस्य यज्ञस्य फलमनुते ॥
 विमानेनार्कवर्णेन स्वर्गलोकश्च गच्छति ।
 मनुष्यो दीमतेजाः स्यात् दीमाग्निः प्रमदाप्रियः ॥
 रिरूपन् जयति संपामे धनवाञ्च तथा भवेत् ।
 ये त्वग््नयो वै चतुरप्रविष्टाः
 स वासुदेवः कथितश्चतुर्षा ।
 यः पूजयेत् ब्राह्मणमाहिताग्नि-
 देवः स तेनाप्यथ पूजितः स्यात् ॥

इति विष्णुधर्मात्तरोक्तमग्निव्रतम् । ११



इदमग्न्यत् प्रवक्ष्यामि चतुर्मूर्तिव्रतं तव ॥
 वासुदेवाग्रकात् जाताः सर्वे देवगणा नृप ।
 अधिकेन तु देशेन साध्या जातास्तथा सुराः ॥
 तत्रापि वाधिकाग्निः चतुरात्मा हरिः स्मृतः ।
 नरो नारायणश्चैव हरिः कृष्णश्च वीर्यवान् ॥
 चतुरात्मा हरिर्जातो गृहधर्मस्य यादव ।
 आदित्येषु तु यावुक्तो मिषावरुणसंज्ञको ।
 तावेव नान्यो जानीहि हरिकृष्णौ च यादव ॥
 आदित्येषु तु या वुक्तो यज्ञविष्णू सुरोत्तमो ।
 तावेव सिद्धसाध्येषु नरनारायणौ पुनः ॥
 चैवशुक्लचतुर्थ्यान्तु सोपवासस्तु पूजयेत् ।
 देवेभ्यं चतुरात्मानं वित्तयज्ञया नराधिप ॥
 व्रतमेतन्नरः कृत्वा पूर्णं ह्यदशवत्सरम् ।
 न दुर्गतिमवाप्नोति मोक्षोपायश्च विन्दति ॥
 ततः समासाय्य वनिप्रभुत्वं
 परेषु पूंसां समसत्वमेति ।
 सर्वेश्वरश्चाप्रतिमप्रभावो
 विमुक्तदुःखो भुवनस्य गोप्ता ॥

इति विष्णुधर्म्मोक्तोक्तं चतुर्मूर्त्तिव्रतम् ॥२

—000—

शुक उवाच ।

चतुर्थ्यङ्गारकदिने यदा भवति भारत ।

मृदा स्नानं तदा कुर्यात् पद्मरागविभूषितः ॥

अग्निर्मूर्त्ता दिवो मन्त्रं जपंस्तिष्ठेदुदङ्मुखः ।

शूद्रस्तुष्णीजपं भौममास्ते भोगविवर्जितः ॥

अथास्तमितत्रादित्ये गोमयेनोपलिप्य च ।

प्राङ्मुखं पुष्पमालाभिरक्षताभिः समन्ततः ॥

अभ्यर्च्याभिलिखेत्यन्नं कुङ्कुमेनाष्टपत्रकम् ।

कुङ्कुमस्याप्यभावे तु रक्तचन्दनमिष्यते ॥

चत्वारः करकाः कार्या भस्त्रभोज्यसमन्विताः ।

तण्डुलैरक्तशालेयैः पद्मरागैश्च संयुताः ॥

चतुःकोणेषु तान् कृत्वा फलानि विविधानि च ।

गन्धमाल्यादिकं सर्वं तद्यैव विनिवेदयेत्

सुवर्णमूर्त्तीं कपिलामघार्च्यं

रोष्यैः खुरैः कांस्यदोहां सवस्त्रान् ।

धुरन्धरं रक्तमतीव सौम्यं

धान्यानि सप्तावरसंयुतानि ॥

सप्त धान्यानि, यव गोधूम धान्यकम्

कङ्कु, श्यामा चणक चीनकानि ।

अङ्गुष्ठमात्रं पुष्यं तद्यैव

सौवर्णमन्वायतबाहुदण्डम् ।
 चतुर्भुजं हेममये निविष्टं
 पात्रे गुह्योपरि सर्पिषायुतम् ॥
 सामस्वरज्ञाय जितेन्द्रियाय
 पात्राय शीलत्रयसम्भवाय ।
 दातव्यमेतत्सकलं द्विजाय
 कुटुम्बिने नैव च दम्भयुक्ते ॥

भूमिं पुत्रमहातेजः स्वेदीङ्गवपिनाकिनः ।
 रूपार्थी त्वां प्रपन्नोऽहं गृह्णाषाध्वीं नमोऽस्तुते ॥
 मन्त्रेणानेन दस्वार्थं रक्तचन्दनवारिणा ।
 ततोऽर्चयेद्दिप्रवरं रक्तमाल्यांबरदिभिः ॥
 दद्यान्मन्त्रेण तेनैव भौमं गोमिथुनान्वितम् ।
 ग्रथ्यां च शक्तितो दद्यात्सर्वोपस्कारसंयुताम् ॥
 यद्यदिष्टतमं लोके यज्ञस्य दयितं गृहे ।
 तत्तद्गुणवते देयं तदेवाचयमिच्छता ॥
 प्रदक्षिणं ततः कृत्वा विसर्ज्य द्विजपुङ्गव ।
 नक्तमन्चारलवणमन्त्रीयात् पृथसंयुतम् ।
 शक्त्या यस्तु पुमान् कुर्यादेवमङ्गारकाष्टकम् ॥
 अङ्गारकाष्टकमिति, अङ्गारकचतुर्थेष्टकम् ।
 चतुरोवाच वा तस्य यत् पुण्यं तद्ददामि ते ॥
 रूपसोभाम्यसम्पन्नः पुनर्जन्मनि जन्मनि ।
 वैश्वदेवोऽद्य शिवोभक्तः समहोपाधिपो भवेत् ॥
 समकल्पसहस्राणि ब्रह्मलोके मञ्जीयते ।

इति मन्त्रपुराणोक्तं *अङ्गारकचतुर्थीव्रतम् ॥

—000—

ब्रह्मोवाच ।

गणेशपूजनं कुर्यात् चतुर्थीं सर्वकर्मसु ।
 अविघ्नं सुरलोके च गतिमिष्टीं प्रयच्छति ॥
 कर्मस्त्रिविदुषं विघ्नं कुर्याच्चैव न संग्रहः ।
 सर्वेषां कर्मणामादौ ततः पूज्यो गणाधिपः ॥
 मूलमन्त्राः स्वसंज्ञाभिरङ्गमन्त्राद्य कीर्तिताः ।
 पूर्ववत्पद्मपत्रस्थः कर्त्तव्यश्चतुर्थीश्वरः ॥

तृतीयोऽहोऽत्र गणेशः ।

तद्रूपप्रकारस्तु कञ्चचतुर्थीव्रते विलोकनीयः ।
 गन्धपुष्पीपद्धारैश्च यथाशक्ति विधीयते ।
 पूजाशठैर्न शठैर्न कृतापि तु फलप्रदा ॥
 आल्यधारासमिद्धिश्च दधिञ्चौरान्नमांसिकैः ।
 पूर्वोक्तं फलदा होमो यस्तु शान्तेन चेतसा ॥
 एतद्भूतं वैश्वानरं प्रतिपद्भूतवह्नाख्येयं ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं गणेशव्रतम् ।

—0*0—

सूत उवाच ।

चतुर्थीं न तु भुञ्जीत ज्ञात्वा नद्यां नृपोत्तम ।

* वक्रपुराणोक्तमिति पुस्तकान्तरं बाह्यं ।

रत्नाम्बरधरी भूत्वा रत्नगन्धानुलेपनः ॥
 रत्नचित्तो गवाधीशं विनायकमघाष्येत् ।
 रत्नचन्दनतीयेन स्नानपूर्वविधानतः ॥
 विलिप्य रत्नगन्धेन रत्नपुष्पैः प्रपूजयेत् ।
 ततोऽसौ दत्तवान् भूयः साज्ययुक्तं च चन्दनम् ॥
 नैवेद्यं चैव हारिद्रं गुडखण्डं घृतप्लुतम् ।
 एवं सम्बन्धरं पूज्यं विनायकमथ स्तवन् ॥
 नमस्कृत्य महादेवं स्तोत्रेऽहं त्वां विनायकम् ।
 महागणपतिं शूरमशितं जयवर्धनम् ॥
 एकदन्तं द्विदन्तञ्च चतुर्दन्तं चतुर्भुजम् ।
 अश्विमुखं सप्तहस्तञ्च रत्ननेत्रं वरप्रदम् ॥
 आविकीर्यं शङ्खवर्षं प्रचण्डं दण्डनायकम् ।
 आरत्नं दण्डिनं चैव वज्रिवक्त्रं हुतप्रियम् ॥
 अर्चयित्वा विघ्नकरः सर्वकार्येषु यो नृशाम् ।
 तं नमामि गवाध्वजं भीमसुप्रसमाहृतम् ॥
 मदनतं विरूपाक्षं भवदत्तसमुद्भवं ।
 सूर्यं कोटिप्रतीकाशं रत्नाञ्जनसमप्रभम् ॥
 बुधं सुनिबलं शान्तं नमस्त्वामि विनायकम् ॥
 नमोऽस्तु ब्रह्मरूपाय विष्णुरूपाय ते नमः ।
 नमोऽस्तु गजरूपाय गजानां पतये नमः ।
 मेघ मन्दररूपाय नमः कैलासवासिने ॥
 नमो विघ्न विनाशाय नमस्ते ब्रह्मचारिणे ।

भक्तस्तुताय देवाय नमस्तुभ्यं विनायक ।
 त्वया पुराणं सर्वेषां देवानां कार्यसिद्धये ॥
 गजरूपं समास्थाय चासिताः सर्व्वदानवाः ।
 ऋषीणां देवतानाञ्च कृताः सर्व्वे मनोरथाः ॥
 यतस्ततः सुरैरथैः पूज्यसे त्वं भवाम्बज ।
 त्वामाराध्य गणाध्यक्षं सर्व्वज्ञं कामरूपिणम् ॥
 कार्य्यार्थं रक्तकुसुमैः रक्तचन्दनवारिभिः ।
 रक्ताम्बरधरो भूत्वा चतुर्थ्यामर्ष्येज्यपन् ॥
 त्रिकालमेककालं वा नियतो नियतात्मनाः ।
 राजानं राजपुत्रं वा राजमन्त्रिणमेव च ॥
 राक्ष्यं वा सर्व्वं विघ्ने शो वशी कुर्यात्पराङ्मुखम् ।
 अविघ्नं कुरु मे नित्यं कुरु विघ्नविनायक ॥
 मया त्वं संस्ततो भक्त्या पूजितश्च विशेषतः ।
 यत् फलं सर्व्वं तीर्थेषु सर्व्वयज्ञेषु यत्फलम् ॥
 तत् फलं सर्व्वमाप्नोति स्तुत्वा देवं विनायकम् ।
 विघ्नं न भवेत्तस्य नश्च गच्छेत्पराभवम् ॥
 न च विघ्नो भवेत्तस्य जातो जातिस्त्रो भवेत् ।
 य इदं पठति स्तोत्रं घृत्निर्मासैर्वरं लभेत् ॥
 सम्बन्धरेण सिद्धिश्च लभते नात्र संशयः ।
 इति नरसिंहपुराणोक्तं गणेशचतुर्थीव्रतम् ।

— 000 —

सुमन्तुस्वाच ॥

शिवो ग्रान्तासु खी राजन् चतुर्थी त्रिविधा श्रुता ।

मासि भाद्रपदे शुक्ला शिवा लोकेशपूजिता ॥
 तस्यां स्नानं तथा दानमुपवासोजपस्तथा ।
 क्रियमाणं शतगुणं प्रसादाहन्तिनो नृप ॥
 गुड लवणं घृतानाम्नु दानं शुभकरं स्मृतम् ।
 गुडपूपाश्च स्तथा वीर पुष्पं ब्राह्मणभोजनम् ॥
 चतुर्थीं नरशार्दूलं पूजयेत् सदा स्त्रियः ।
 गुड लवणं पूजाभिः श्वशुरशरमांतरः ॥
 ता. सर्वा सुभगाःस्युर्वै विघ्नेशस्यानुमोदनात् ।
 कन्यकाश्च विशेषेण विधिनानेन पूजयेत् ॥

इति भविष्यपुराणोक्तं शिवाचतुर्थीव्रतम् ।

—0#0—

सुमन्तुववाच ।

माघमासि तथा शुक्ला या चतुर्थी मङ्गीपते ।
 सा सर्वशान्तिदा नित्यं शान्तिं कुर्यात्सदैव हि ॥
 स्नानं दानं बलिः कर्ष्यं सर्वमस्यां कृतं विभी ।
 भवेत्सहस्रगुणितं प्रसादाहन्तिनः सदा ॥
 कालोपवासं शस्तस्यां पूजयेद्विघ्ननायकम् ।
 तस्यां होमादिकं कर्ष्यं भवेत्साहस्रिकं नृप ॥
 लवणं गुडपूर्णं च घृताक्तं तच्च भारत ।
 दत्त्वा भक्ते तु विघ्नेयं फलं साहस्रिकं लभेत् ॥

● गुडपूजेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

विशेषतः स्त्रियोराजन् पूजयेत् स्वगुरुं नृप ।
गुह्यं सवयं हृते वीरं सदासां कुहनन्दन ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं शान्ताचतुर्थीव्रतम् ॥

—:—

सुमन्तुववाच ।

सुखावहां नृप सुखां सौभाग्यकरिणीं* शुभां ।
चतुर्थीं कुरुशार्दूल रूपसौभाग्यदां शुभां ॥
सुखव्रतं महापुण्यं रूपारोग्यप्रदायकम् ।
सुसूत्रं सुकरं धन्यभिदं पुण्यं सुखावहं ॥
परं फलदं वीर दिव्यरूपप्रदायकम् ।
विलासं विभ्रमाक्षेपं हसितं चेशितं शुभम् ।
सुखव्रतेन सर्वं स्यात् शुभं कुरुकुलोद्दह ॥
कृतपूजे तु देवेशि विप्रेष शिवयोः सुते ।
यदा शुकचतुर्थ्यान्तु वारो भौमस्य भाक् भवेत् ॥
तदा सा रुण्णदा ज्ञेया चतुर्थी वै सुखेति च ।
पुरा मैथुनमाश्रित्य स्थिताभ्यान्तुहिनाचले ॥
भीमीमाभ्यां महाबाहो† रवि रिन्दुश्रुतः क्षितौ *
मेदिन्या सुप्रयत्नेन सुखेन तु श्रुतो यथा ।

* परामिति पुण्यदाकरे वाचः ।

† रत्नचिन्दरिति पुण्यदाकरे ।

जातस्तस्यां महावीर रक्तो रक्तसमुद्भवः ॥
 उमया चार्त्तवीत्यसस्तस्माद्ङ्गारको ह्ययम् ।
 अङ्गदोऽङ्गारकान्तिश्च अङ्गानान्तु सदा तृप ॥
 सौभाग्यादिकरो यस्मात्तस्माद्ङ्गारको मतः ।
 भक्त्या चतुर्थीं नक्तेन* यो वै श्रद्धासमन्वितः ॥
 उपोष्यति नरो राजन् नारी वानन्यमानसा ।
 पूजयेच्च कुजं भक्त्या रक्तपुष्पविलेपनेः ॥
 अङ्गारकरूपश्च वक्ष्यमाणमस्त्रपुराणोक्ताङ्गारकचतुर्थी

व्रते द्रष्टव्यम् ।

गणेशं प्रथमं पूज्य भक्त्या श्रद्धासमन्वितः ।
 स तु तुष्टः प्रयच्छेत् सौभाग्यं रूपसम्पदम् ॥
 पूर्व्वं न्तु कृतसङ्कल्पः स्नानं कृत्वा यथाविधि ।
 मृहीत्वा मृत्तिकां वन्दे मन्त्रेषानेन भारत ॥
 इह त्वं वन्दिता पूर्व्वं कृष्णो नो हरता किल ।
 तस्मात्सि दह पाप्मानं यन्मया पूर्व्वसञ्चितं ॥
 इमं मन्त्रं पठन् वीर आदित्याय प्रदर्शयेत् ।
 आदित्यरश्मिभिः पूतां गङ्गाजलकपोक्षितां ॥
 दत्त्वा मृदं शिरसि तां सर्वाङ्गेषु नियोजयेत् ।
 ततः स्नानं प्रकुर्व्वीत मन्त्रपूर्व्वं जले शुभे ॥
 यूयमापःस्य सर्व्वेषां दैत्यदानवसञ्चिताः ।
 खेदाण्डजोद्भिदानाश्च जरायूणाश्च योनयः ॥

ज्ञातोऽहं सर्वतीर्षेषु सर्वप्रन्ववेषु च ।
 तथा काश्यादितोर्षेषु मानसादिसरःसु च ॥
 नदीषु देवजातेषु ज्ञातोऽहं तेषु तेषु वै ।
 ध्यायन् पठन्निमं मन्त्रं ततः ज्ञानं समाचरेत् ॥
 ततः ज्ञातः शुचिर्भूतो गृहमागत्य च सृशेत् ।
 दर्श्यान्मत्प्रशमीः सृष्ट्वा गात्रं मन्त्रे च मन्त्रवित् ॥
 दूर्वां नमोन्तमन्त्रे च अन्त्रप्रशमय क्षया ।
 गां दृष्ट्वा तु ततो देवीं वन्द्याद्दोरं प्रदक्षिणम् ॥
 समासभ्यं तु हस्तोत्तमं ततो मन्त्रसुदीरयेत् ।
 सर्वदेवमयी देवी निर्घृतिस्त्वं प्रपूजिता ।
 तस्मात् सृशामि वन्द्ये त्वां वन्दिता पापहा भव ॥
 नतो मीनेन चागच्छत् वन्दिता गृहदेवता ।
 प्रक्षाल्य च मृदा पादावाचान्तोऽम्बिगृहं विशेत् ॥
 होमं तत्र प्रकुर्वीत एतैर्षन्मपदैर्ष्वरेः ।
 सर्वाय सर्वं पुत्राय पार्ष्णीतौबभ्रुताय च ॥
 कुजाय सोहिताङ्गाय यज्ञेशाङ्गारकाय च ।
 शोकारपूर्वकैर्ष्वरेः स्वाहाकारसमन्वितैः ॥
 अष्टोत्तरशतं वीर अर्धमात्रार्धमिव च* ।
 एतैर्षन्मपदैर्भक्त्या कामतोऽकामतोऽप्युप ॥
 ज्ञादिरोभिः समिद्धि च चाण्डदिग्भैरवैस्त्रिभिः ।
 भस्मैर्नानाविधैश्चान्यैः शक्त्या भक्तिरसमन्वितः ॥

* अहं महंमिति पुत्रकाकारे पाठः ।

कृत्वा होमं ततो वीर देवं संस्थापयेत् क्षिणी ।
 सौवर्णं राजतं ताम्रं भद्रदाकमयं नृप ॥
 देवदाकमयं वापि श्रीखण्डघटितं तथा ।

भद्रदाकः, शरलः ।

गाङ्गेय पात्रे रोष्ये वा अर्घ्याः कुङ्कुमकेसरैः ।
 अग्न्यैर्घ्वा लोहितैर्भयैः पत्रैः पुष्पैः फलैरपि ॥
 रक्तैश्च विविधैर्वीरअथवा भक्तितघरेत् ।
 यावच्चि विभृतं विस्रं विस्रच्च वीर शक्तिः ।
 तावद्विवर्षते पुण्यं दातुः शतसहस्रकम् ॥
 यद्वा ताम्रमये पात्रे वंशजे मृन्मयेऽथवा ।
 पूजयेत नरो भक्त्या शक्त्या कुङ्कुमकेसरैः ॥

श्रीं अङ्गारकाय नमः पादौ । श्रीं कुञ्जराय नमः वदनं ।
 श्रीं भीमाय नमः स्कन्धयोः । श्रीं मङ्गलाय नमः बाह्वोः । श्रीं
 वज्राय नमः जघ्नीः । श्रीं खेदजाय नमः जङ्घयोः । श्रीं लाहिताय

नमः शिखायां ।

पुरुषाकृतिं कुञ्जपात्रे एतैर्धन्यपदैर्यजेत् ।
 भूमिपुत्र महादेव, खेदीह्वय पिनाकिनः ।
 रूपार्थी त्वां प्रपन्नोऽहं गृह्णाणार्थं नमोऽस्तु ते ॥

अर्घमन्त्रः ।

महादेवाङ्गसम्भूत मेदिनीगर्भसम्भव ।
 अङ्गारक महाराज लाहिताङ्ग नमोऽस्तु ते ॥

प्रार्थनामन्त्रः ।

सुगन्धपुष्पधूपार्घ्यैर्ग्रीष्मार्घ्यो यः प्रपञ्चयेत् ।
गुडोदनघृत क्षीर गोधूमान् शालितण्डुलान् ॥
अपेक्ष्य शक्तिं द्रव्याहैर्ब्राह्मणेभ्यो यतेन्द्रियः ।
वित्तघाठं न कुर्वीत विद्यमाने धने नृप ।
वित्तघाठश्च कुर्वीषो नासुचफलभास्ववेत् ॥

शतानीक उवाच ।

अङ्गारकेण संयुक्ता चतुर्थी नक्तभोजनेः ।
उपोष्याः कतिसंख्यास्तु उताहो सकृदेव हि ॥

सुमन्तु उवाच ।

चतुर्थी तु चतुर्थी तु यदाङ्गारकसंयुता ।
उपोष्य तत्र तत्रैव प्रदेयो विधिवत् कुलः ॥
उपोष्य नक्तेन विभो चतस्रः कुजसंयुताः ।
चतुर्थ्यान्तु चतुर्थ्यान्तु विधानं शृणु यादृशम् ॥

एकचतुर्थीशब्दः तिथिविशेषवचनः, अपरस्तत्संख्यापर इति
दशसौवर्णिके मुख्यं दशाहार्दिकं यथापि वा ।
सौवर्णपात्रे रोष्ये वा भक्त्या ताम्रभयेऽपि वा ।
विंशत्यज्ञानि पात्राणि विंशत्यर्हपलानि च ।
विंशत्कर्षाणि वा वीर अतोहीनं न कारयेत् ॥
शक्त्या वित्तस्य भक्त्या च पात्रे ताम्रभयेऽपि वा ।
प्रतिहाप्य कुजपात्रे रक्तवस्त्रेषु वेष्टयेत् ॥

पुष्पमण्डयिकां कृत्वा दिव्यधूपैस्तु धूपिताम् ।
 तत्तत्स्वमर्चयेद्देवं पूर्वमन्त्रैः क्रमेण तु ॥
 भस्त्रं भोज्यै रनैकैश्च फलैरन्यैश्च संमतैः ।
 वस्त्रैः प्रावरणैः पात्रैः शय्योपानहारासनैः ॥
 कृत्रैः पुष्पैर्गन्धवैः शङ्खा विज्ञानुसारतः ।
 ब्राह्मणाय च तं दद्याद्दक्षिणासहितं नृप ॥
 वाचकाय महाबाहो गुणिने श्रेयसेन च ।
 अङ्गारकेन संयुक्तां धेनुं शीलसमन्विताम् ॥
 अनेन विधिना दत्त्वा यद्योक्तफलभाग्भवेत् ।
 इति ते कथिता पुराण तिथोनामुत्तमा तिथिः ॥
 यामुपोथ नरो रूपं दिव्यमाप्नोति भारत ।
 काम्याचेयसमं वीर तेजसा रविसप्रभम् ॥
 प्रभया हरितुल्यञ्च सर्वतो बलसम्भितः ।
 ईदृश्रूपं वरं प्राप्य याति मौमसदोऽनृप ॥
 प्रसादाद्द्विभ्रराजस्य गणेशस्य गणायते ।
 पठतां शृण्वतां राजन् कुर्वतां च विशेषतः ॥
 ब्रह्महत्यादिपापानि चीयन्ते नात्र संशय इति ।

इति भविष्यत् पुराणोक्तं सुखव्रतम् ।

— ००० —

चतुर्थ्यान् महा राज निराहारो व्रतान्वितः ।
 दत्त्वा तिलाक्षं भुङ्क्ते यः स्वयं भुङ्क्ते तिलोदकम् ॥

दिवा निराहारो रात्रौ भुङ्क्ते इति विरोध परिहारः ।
 वर्षद्वये समासिद्धिर्नातस्य तु यदा भवेत् ।
 विनायकस्तस्य तुष्टीददाति फलमौषितम् ॥

इति भविष्यत् पुराणोक्तं गणपति चतुर्थीव्रतं ।

—:○:—

स्कन्द उवाच ।

केन व्रतेन भगवन् सौभाग्यमतुलं भवेत् ।
 पुत्र पोत्रधनैश्चर्यं मनुजः सुखमेधते ॥
 तस्मै वद् महादेव व्रतानामुत्तमं व्रतं ।
 येन चीर्णेन देवेश नरो राज्यञ्च विन्दति ॥
 राज्ञीय जायते नारो अपि दासीकुलोद्भवा ।
 राजपुत्रो जयेच्छत्रून् गरुडः पद्मगानिव ॥
 ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चस्वं प्राप्य सर्वाश्चको भवेत् ।
 वर्णाश्रम विहीनोऽपि साऽपि सिद्धिञ्च विन्दति ॥

ईश्वर उवाच ।

शृणु वत्स प्रवक्ष्यामि व्रतानामुत्तमं व्रतं ।
 अपूर्व्वं गणपते व्रतं यत् त्रैलोक्य विन्दुतं ॥
 भगवत्या पुरा चीर्णं पार्ष्वत्या पद्मया सह ।
 सरस्वत्या महेन्द्रेण विष्णुना धनदेन च ॥
 अन्यैश्च देवैर्न निभिर्गन्धर्वैः किञ्चरैस्तथा ।

चीर्षमितन्नतं सर्व्वैः पुराकस्ये वङ्गानन ।
 चतुर्थी या भवेदुक्ता नभोमासस्य पुष्पदा ॥
 तस्यां व्रतमिदं कुर्यात् कार्तिकां वा वङ्गानन ।
 गजाननं चतुर्व्याहृमिकदन्तं विपाटिनम् ॥

विपाटिनं, मदधारास्त्राविषं । आशुधानि क्लृप्तचतुर्थी
 व्रतवद्दिधाय हेष्वा विघ्नेयं हेमपीतासनस्त्रितं ।
 तथा हेमौमयो दूर्वां तदाधारे व्यवस्थितां ।

तदाधारे, विघ्नेयासने ।

संख्याप्य विघ्नहन्तारं कलसे ताम्रभाजने ।
 वेष्टितं रत्नवस्त्रेषु सर्व्वतोभद्रमण्डले ॥
 पूजयेच्छुक्लकुसुमैः पञ्चिकाभिश्च पञ्चभिः ।
 विश्वपञ्चमपामार्गं शमी दूर्वा हरिप्रिया ॥

हरिप्रिया, तुलसी ।

एता एव पञ्चपञ्चिकाः ।

अन्यैः सुगन्धकुसुमैः पञ्चिकाभिः सुगन्धिभिः ।
 फलैश्च मोदकैः पञ्चादुपहारं प्रकल्पयेत् ।
 यथावदुपचारैश्च पूजयेन्निरिजासुतं ॥

आवाहनमन्त्रः ।

उमासुत नमस्तुभ्यं विश्वव्यापि सनातन ।
 विघ्नोघं ह्यिन्द्रि सकलं अर्घ्यं पादं ददामि ते ॥

अर्घ्यमन्त्रः ।

गणेश्वराय देवाय उमापुत्राय वेधसे ।
पूजामन्नं प्रयच्छामि गृह्णाण भगवन्नमः ॥

गन्धमन्त्रः ।

गणेश्वराय देवाय वरदाय गजानन ।
उमासुताय देवाय कुमारगुरवे नमः ॥
लम्बोदराय वीराय सर्व्वविघ्नविहारिणे ।

पुष्पमन्त्रः ।

उमामङ्गलसङ्गते* दानवानां वधाय वै ।
अनुग्रहाय लोकानां स देवः पातु वैश्वभृक् ॥

धूपमन्त्रः ।

परंज्योतिःप्रकाशाय सर्व्वसिद्धिप्रदाय च ।
दीपं तुभ्यं प्रदास्यामि महादेवात्मने नमः ॥

दीपमन्त्रः ।

गणानाञ्च गणपतिं इव महाकविं-कवीनां ।
उपमन्त्रवश्र्वं ज्येष्ठं रागं ब्रह्मणां ब्राह्मणस्यातिश्राणं शृण्वन्
ज्योतिभिः सिद्धसादनं ।

उपहारमन्त्रः ।

गणेश्वर गणाध्यक्ष गौरीपुत्र गजानन ।
वतं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादादिमार्गना ॥

* उमामङ्गलसङ्गते इति पुलकानन्देवाद्यः ।

प्रार्थना मन्त्रः ।

एवं संपूज्य विघ्नेशं यथाविभवविस्तरैः ।
 सोपस्करं गणाध्वक्षमाचार्याय निवेदयेत् ॥
 ऋद्धाण भगवन् ब्रह्मन् गणराज प्रदक्षिणं ।
 व्रतं तद्वचनादद्य सम्पूर्णं यातु सुव्रत ॥

दानमन्त्रः ।

एवं यः पञ्चवर्षाणि कृत्वोद्यापनमाचरेत् ।
 ईप्सिताष्टभते कामान् देदान्ते शाङ्करं पदम् ॥
 अथवा शुक्लप्रज्ञस्य चतुर्थीं संयतेन्द्रियः ।
 कुर्याद्दर्शनयज्ञैवं सर्वसिद्धिमवाप्नुयात् ॥
 उद्यापनं विनायकस्य करोति व्रतमुत्तमम् ।
 तेन शुक्लतिलैः कार्यं प्रातःस्नानं षडानन ॥
 हेन्ना वा रजतेनापि कृत्वा गणपतिं बुधः ।
 पञ्चगव्यैस्तु संज्ञाप्य दूर्वाभिः संप्रपूजयेत् ॥
 मन्त्रैस्तु दशभिर्भक्त्या दूर्वायुक्तैः शिशिध्वज ।
 दूर्वायुक्तैः पञ्चगव्यैः स्नपनं दूर्वायुक्तैर्दशभिर्बन्धैः
 पूजा एकस्य मन्त्रस्य दशत्वं ।
 इत्येवं कथितं वस्तु सर्वसिद्धिप्रदं शुभं ।
 व्रतं दूर्वागणपतेः किमन्यच्छोतुमिच्छसि ॥
 इति सौरपुराणोक्तं दूर्वागणपतिव्रतम् ।

—000—

भरस्नान् चतुर्थ्यान्तु शनैश्चरदिने यमम् ।

पूजयन् सप्तजम्बोरुधैर्युच्यते पातकैर्नरः ॥

इति कूर्मपुराणोक्तं यमव्रतम् ।

—०००—

अगस्त्यः ।

अथ विघ्नहरं राजन् कथयामि तवानघ ।
 येन सम्यक्कृतेनेह न विघ्नमुपजायते ॥
 चतुर्थ्यां फाल्गुने मासि यद्द्वीतयं व्रतं त्विदम् ।
 नक्ताहारेण राजेन्द्र तिलाद्यं पारणं स्मृतं ॥

पारणं नक्तभोजनम् ।

तदेव वक्रो ह्येतद्व्यं ब्राह्मणाय च तद्भवेत् ।
 दिव्याय शूराय गजाननाय
 दंष्ट्राकरालाय नमः शिवाय ।
 नगाम्बजादेहमल्लोद्भवाय
 कुमारहस्ताय नमस्तथा ॥

एवं संपूज्य मनुभिर्हीमं कुर्यादाद्यादिभिः ।

मनुभिर्गन्धैः ।

एकस्यैव वृथा बहुत्वं ब्रवीमि तत् ह्योमं ब्रवीमि ह्योम-
 मन्तो ह्योमद्रव्यञ्च तदेव वक्रो ह्येतद्व्यं इत्यादिनोक्तं वर्त्तमान
 समीपे वर्त्तमानवदिहातीते स्मट् ।

चतुर्थासप्ततश्चैव कृत्वेत्थं पञ्चमे तथा ।

सौवर्षं राजतं नापि कृत्वा विप्राय दापयेत् ॥

ताम्रपात्रे पायसाद्यैश्चतुर्भिः सहितं नृप ।
 पञ्चमेन तिलैः सार्द्धं गणशान्तिकरेण च ॥
 मृत्स्नयानि हरिद्वैस्तु विधिनानेन कारयेत् ।
 होमश्च राजतं शक्त्या विधिनानेन दापयेत् ॥
 इत्थं व्रतमिदं कृत्वा सर्वविघ्नात् स मुच्यते ।
 हयमेधस्य यज्ञे तु सञ्जाते सगरः पुरा ॥
 एतदेव हरश्चक्रे त्रिपुरं येन हन्ति* च ।
 मया समुद्रमथने त्वेतदेव व्रतं कृतं ॥
 अन्यै रपि मञ्जीपालैरेतदेव पुरा कृतं ।
 ततो निर्व्विघ्नसिद्ध्यर्थं विघ्नीपशमनं परं ॥
 अनेन कृतमात्रेण सर्व्वविघ्नैः प्रमुच्यते ।
 ततो रुद्रपुरं याति वाराहवचनं यथा ॥
 विघ्नानि तस्य न भवन्ति गृहे कदाचित्
 धर्म्यार्थकामसुखसिद्धिविघातकानि ।
 यः सप्तमीन्दुशकलाकृतिकामृतदृप्तं
 विघ्नेशमर्चयति नक्तं कृती चतुर्थी ॥
 इति वराहपुराणोक्तमविघ्नविनायकव्रतम् ।

—000—

ब्रह्मीवाच ।

माघमासे तु सम्प्राप्ते चतुर्थी कुन्दसंज्ञिता ।

सोपोषा तु सुरश्रेष्ठ ततो राज्यं भविष्यति ॥
 सर्वोपहारसम्पन्नं सर्वोपस्करमाहरेत् ।
 कन्दपक्कं फलं शाकं लवणं गुडशर्करा ॥
 खण्डं कुस्तु, श्वरी जीरं धान्यानि विविधानि च ।
 दातव्यानि रघुश्रेष्ठ कन्यकानाम्नु भक्तितः ॥
 खण्डं, शर्कराभेदः ।

सूर्यपात्रं * तथा भाण्डं सृष्टयानि विशेषतः ।
 उद्दिश्य दापयेद्देवीं प्रीयतां मे सदा इति ॥
 अनेन विधिना शक्र सौभाग्यं पुत्रसन्ततिः ।
 वर्हेते नात्र सन्देहो नान्यथा मम भाषितं ॥

इति देवीपुराणोक्तं कुन्दचतुर्थीव्रतम् ।

—000—

ऋषय ऊचुः ।

निर्विघ्ने न तु कार्याणि कथं सिद्धान्ति सूतज ।
 अप्रसिद्धिः कथं नृणां पुत्रसौभाग्यसम्पदां ॥
 दम्पत्योः कलहे चैक्यं वन्मुभेदे तथा नृणां ।
 उदासीनेषु लोकेषु कथं संसुखता भवेत् ॥
 विद्यारम्भे तथा नृणां वणिज्यायां लषो तथा ।
 नृपतेः परचक्रस्व जयसिद्धिः कथं भवेत् ॥
 कां देवतां नमस्कृत्य पूजासिद्धिकरी नृणां ।

* सूर्यपात्रमिति पुनः कान्ते पाठः ।

सूत उवाच ।

सब्रह्मणोः पुरा विप्राः कुरुपाण्डवसेनयोः ।
 पृष्टवान् देवकीपुत्रं धर्मराजो युधिष्ठिरः ॥
 निर्विघ्ने न जयोद्धेवां वद देव कथं भवेत् ।
 कां देवतां नमस्कृत्य समयां ह्यलभन्महीम् ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

पूजयन्व गणाध्यक्षं विघ्नेशं सिद्धिदायक ।
 तस्मिन् संपूजिते राजन् सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

देव केन विधानेन पूजनाहो गणाधिपः ।
 पूजितश्च तिष्ठी कस्यां सिद्धिदो गणपो भवेत् ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

गजवक्रान्तु शृङ्गायां चतुर्थां पूजयेत्पृथक् ।
 यदा वोत्पद्यते भक्तिर्मासे पूज्यो गणाधिपः ॥
 प्रातः शुकृतिलैः स्नात्वा मध्याह्ने पूजयेत्पृथक् ।
 स्वयं कृत्वा गणनाथस्य स्वर्णरौप्यां यथाकृतिं ॥
 कृत्वा पूजां प्रयत्नेन स्नात्वा पश्चात्कृतैः पृथक् ।
 गणाध्यक्षेति नाम्ना वै गन्धं दद्याच्च भक्तितः ॥
 विनायकेति पुण्याणि धूपक्षोमासुतेति च ।
 दीपं बहुप्रियासेति नैवेद्यं विघ्ननाशन ॥
 वस्त्रं सर्व्वप्रदे रक्तं पुष्पं दद्यात् शुभाहतं ।
 ततो दूर्वां कुशान् यष्ट्यं विंशतिशैकमेव च ॥

पूजयेत प्रयत्नेन एभिर्नामपदैः पृथक् ॥
 गणाधिप नभोस्तोऽस्तु उमापुत्राद्यनाशन ।
 विनायकेशपुत्रेति सर्वसिद्धिप्रदायक ॥
 एकदन्तेभवत्नेति नमो मणिकवाहन ।
 कुमारगुरवेत्सवं पूजनीयः प्रयत्नतः ॥
 दूर्ध्वायुग्मं गृहीत्वा तु गन्धयुक्तं प्रपूजयेत् ।
 एकैकेन च नाम्ना वै पूज्य एकेन सर्वतः ॥
 एकेन, दूर्ध्वाङ्गुरेण, युग्मे नावगच्छेन ।
 सर्वतः, सर्वैर्नामभिः पूजा कार्या ॥
 तत्रैकविंशतिर्गृह्य भोक्तृकान् घृतपाचितान् ।
 स्थापयित्वा गणाध्यक्षं समीपे कुरन्मन ॥
 दश विप्राय दातव्या स्वयं चाद्यात्तथादश ।
 एकं गणाधिपे दद्यात् सनैवेद्यं नृपोत्तम ॥
 विप्राय भोजनं दद्याद्भुञ्जीयात्सैखर्वितं ।
 कृत्वा नैमित्तिकं कर्म पूजयेद्विष्टदेवतां ॥
 एवं कृते धर्मराज विघ्ननाशस्य पूजने ।
 विजयस्ते भवेन्नृगं सत्यं सत्यं मयोदितः ॥
 विद्याकामो लभेद्विद्यां धनकामो धनं यथा ।
 जयं विजयकामस्तु पुत्रार्थी विन्दते सुतान् ॥
 पतिकामा च भर्तारं सौभाग्यञ्च सुवासिनीम् ।
 विधवा पूजयित्वा तु वैधव्यं नाश्रुयात् क्षणित् ॥
 वैश्यावाद्यास्तु द्दीक्षास्तु श्राद्धी पूज्यो गणाधिपः ।
 यस्मिन् संपूजिते विष्णुरीषी भानुस्तथा, उमा ॥

इव्यवाहमुखा देवाः पूजिताःस्मृन् संश्रयः ।
 चण्डिकाया मातृगणाः परितुष्टा भवन्ति च ॥
 यस्मिन् संपूजिते भक्त्या विप्राः सिद्धिविनायके ।
 य इदं श्रुत्वाचित्त्रं श्रावयेद्वा समाहितः ॥
 सिद्धान्ति सर्वकार्याणि सिद्धिदस्व प्रसादतः ।
 इति स्कान्दपुराणोक्तं सिद्धिविनायकव्रतम् ।

—000—

प्रधास्वामिव भविष्योत्तरोक्तं कृत्यान्तरम् ।
 मासि भाद्रपदे शुक्या शिवस्तोके प्रपूजिता ॥
 तस्यां स्नानं तथा दानमुपवासोऽर्चनं तथा ।
 क्रियमाणं व्रतगुणं प्रसादाद्विभो नृपेति ॥
 चतुर्वीत्युत्तमः ।
 अस्यां चन्द्रदर्शनं न कर्त्तव्यम् ॥
 अतएवीकृतं मार्कण्डेयेन ।
 सिंहादित्से शुक्यपक्षे चतुर्वीं चन्द्रदर्शनम् ।
 मिथ्याभिक्षुवचं कुर्यात्तस्मात् पश्येत् तं तदेति* ॥
 पराशरकृतावपि ।
 कन्यादित्से चतुर्वीन्तु शुक्ये चन्द्रस्य दर्शनम् ।
 मिथ्याभिक्षुवचं कुर्यात्तस्मात् पश्येत् तं तदा ॥
 अत्र सिंहादित्सेकन्यादित्सेशब्दाभ्यां चान्द्रो भाद्रपद उपसभ्यते ।

* चतुर्वीं न वशीदित्यन्वयः श्रावणश्रावणमात् तेन चतुर्वींशुदित्से पश्येत्
 न मिथेव इति पुस्तकान्तरे वाक्यः ।

सौरमासपक्षे षिष्टाचारविरोधप्रसङ्गात् ।

दीपस्य शान्तये सिंहः प्रसेनमिति वै पठेत् ।

स च श्लाको विष्णुपुराणे ।

सिंहः प्रसेनमवधोक्त्सिंहो जाम्बवता हतः ।

सुकुमारक मारोद्दीप्तवद्वेष स्यमन्तक इति ॥

अथ कार्तिकशुक्लचतुर्थ्यां कूर्मपुराणोक्तं नागव्रतम् ।

कार्तिकशुक्लपक्षमुपक्रम्य ।

तिथौ युगाद्द्वयाद्यान्तु समुपोष्य यथाविधि ।

शङ्खपालादिनागानां शेषस्य च महात्मनः ॥

पूजा कार्या पुष्य गन्ध-क्षीराप्यायनपूर्वकमिति ।

युगाद्द्वयायाश्चतुर्थ्यां प्रातर्गन्ध्याद्भव्यापिन्याश्च कर्षव्यम् ।

तथा च स्कन्दपुराणे ।

प्रातर्गन्धन्दिने तत्र तत्रोपोष्य फणोश्वरान् ।

क्षीरेणाप्याय्य पञ्चम्यां पारयेन् प्रथमा मरः ।

विषाणि तस्य नश्यन्ति न तं हिंसन्ति पशुगाः ॥

इति नागव्रतम् ।

अथ मार्गशीर्षशुक्लचतुर्थ्यामारभ्य स्कन्दपुराणोक्तं

वरचतुर्थीव्रतम् ।

चतुर्थ्यां मार्गशीर्षे तु शुक्लपक्षे नृपोत्तम ।

प्रारभ्य प्रतिमासञ्च चतुर्थ्यां गणनायकम् ॥

संपूज्य विधिना कुर्व्यादिकभक्तं समाहितः ।

अक्षारसवणं त्वेवं पूर्णसम्बन्धेरे ततः ॥

द्वितीये वक्तरे चाद्य नक्तं प्रतिचतुर्भिः च ।
 कुर्यात्तत्रैशमभ्यर्च्य तृतीयेऽथावितं तथा ॥
 एवमेव प्रकुर्वीत चतुर्थं स्वादुषोषणम् ।
 ततश्चतुर्थं संपूर्णं तदुद्यापनमाचरेत् ।
 इदं वरचतुर्थ्याख्यं व्रतं सर्वार्थसाधकम् ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं वरचतुर्थीव्रतम् ।
 अथास्यामेव ब्रह्मपुराणोक्तं गौरीचतुर्थीव्रतम् ।

समाचतुर्थीं माघे तु यज्ञायां योगिनो गणैः ।
 प्राग्भक्षयित्वा सृष्ट्वा च भूयः स्वाङ्गात् स्वकैर्गणैः ॥
 तस्मात्सा तत्र संपूज्या नरैः स्त्रीभिर्विंशेषतः ।
 कुन्दपुष्पैः प्रयत्नेन सम्यग्भक्त्या समाहितैः ॥
 कुङ्कुमासंज्ञकाभ्याश्च रक्तसूत्रैः सकण्ठणैः ।
 भर्षैः पुष्पैः स्नादाधूपैर्दीपैर्वलिभिरेव च ॥
 गुङ्गार्द्रकाभ्यां पनसलवलीभ्याश्च पालकैः ।
 पूज्या स्त्रियश्च विधवास्तथा विप्राश्च शीभनाः ॥
 सोभाग्यवृद्धये पश्चात् भाक्तव्यं बन्धुभिः सहति ।
 पालकैः कुण्डलैर्मृद्वाण्डविशेषैरित्यर्थः ।

इति गौरीचतुर्थीव्रतम् ।

सवयैर्धान्यैर्कुर्यात् औरकां मरीचानि च ।
 चिह्नं शूण्ठीं हरिद्राश्च सर्वं परिकरं तथा ॥
 चतुर्थीमेकभक्त्याश्री सकण्ठस्वा कुटुम्बिने ।
 मृद्वेषु सप्तशु तथा शिलाशुक्तानि भारत ॥

शिक्षा, मनःशिक्षा ।

एतच्छिक्षाव्रतं नाम सञ्जीवोक्तप्रदायकम् ।

इति भविष्योक्तरोक्तं शिक्षाव्रतम् ॥

—000—

चतुर्थी नक्षत्रमुद्दयादन्ते हेमवारणम् ।

वारणः, करी ।

व्रतं वैनायकं नाम सर्वविघ्नोपशान्तिदम् ।

इति पद्मपुराणोक्तं वैनायकव्रतम् ।

—0#0—

मन्दिकेश्वर उवाच ।

विनायकचतुर्थीस्थं व्रत वक्ष्यामि तेऽनघ ।

धन्यं यशस्यमायुष्यं समीहितफलप्रदम् ॥

विघ्नोपशमनायासं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ।

प्रियं गणपतेर्नित्यं ऋषिभिश्चाप्युपासितम्* ॥

मार्गशुक्लचतुर्थ्यान्तु पाञ्च व्रतमिदं महत् ।

ऋक्षाहारेण विप्रेन्द्र तिलाकं पारशं स्मृतम् ॥

तदेव वङ्गौ होतव्यं ब्राह्मणाय ददेत् सदा ।

नद्यां नदे वा नैवेद्यं विघ्नराजाय संयमी ॥

पूजयेत् गणपतिं रात्रौ गन्धैः पुष्पैर्यथाक्रमम् ।

स्वापितं कुम्भीं संखं तं स्थापितं कुट्टुमाश्रया ॥

* त्रिषं चि विघ्नराजस्य इदं व्रतमुपासितमिति पाठान्तरम् ।

† विघ्नराजस्य कुम्भीमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

सुमार्गादिन्धो तैस्तु नामभिश्चाच्च वैत्ततः ।
विनायकश्चैकदन्तः कृष्णपिङ्गो गजाननः ॥
लम्बोदरो भालचन्द्रो हेरम्बो विकटस्तथा ।
वक्रतुण्डश्चाक्षुरश्चो विघ्नराजो गणाधिपः ॥
इत्येवं मासनाम्ना तु जपद्भोममघार्चनम् ।
कृत्वैवं प्रार्थयेत् पञ्चाङ्गान्ते चानेन भक्तिमान् ॥
चैमातुराय वीराय परशुहस्ताय वै नमः ।
विघ्नेशायैकदंष्ट्राय नमो लम्बोदराय च ॥
नमस्तु गजवक्त्राय सर्वज्ञायाऽमूर्त्तये ।
समीहितार्थसंप्राप्तौ निर्विघ्नं कुरु मे सदा ॥
भोजयित्वा ततो विप्रान् यथाशक्त्या विमन्सरः ।
भुञ्जीत च स्वयं नक्तं वाय्यतोऽचमकुक्षयन् ॥
सायन्मातश्च सर्वेषां भोजनं श्रुतिचोदितम् ।
एकभक्तं पुनस्तस्मादुपवासस्ततोधिकः ॥
उपवासात्परं भैक्षं भैक्ष्यात्परमयाचितम् ।
अयाचितात्परं नक्तं तस्मात्तपो भवेत् ॥
देवैस्तु भुक्तं पूर्वान्नि मध्याह्ने मानुषैस्तथा ।
अपराह्णे च पिब्यभिः सञ्ज्ञायां प्रेतराक्षसैः ॥
वेलाश्चैता अतिक्रम्य नक्तभोजी च यो भवेत् ।
स तैस्तु तपितैः सर्वैर्यत्पुण्यं तदवाप्नुयात् ॥
इविश्वभोजनं स्नानमाहारस्य च साधवम् ।
अधिकार्थमधः शय्यां नक्तभोजी समाचरेत् ॥
एवं संवत्सरस्थान्ते व्रते पूर्णे गजानन ।

यत्रापि कञ्चनचतुर्थ्यामुक्तं रूपं निर्माचन् ।
 सौवर्चरीष्ये वारोप्यमधियास्य प्रवदन्तः ।
 ताम्रपाचैर्द्वादशभिर्दृश्यैर्ध्याय वैश्वैः ॥
 तिलसंभोदकश्चतैः प्रातर्भिर्प्राय दापयेत् ।
 दद्याच्च विधिवद्भक्त्या वृषभश्च गवा सह ॥
 अष्टाङ्गपदसंयुक्तसप्तधान्यसमन्वितम् ।
 भोजयेत् ब्राह्मणान् पश्चात् वित्तगाठविचर्षितः ॥
 इत्थं व्रतमिदं शीर्षा सर्वविघ्नैः प्रमुच्यते ।
 विद्यां त्रियं यशः सौख्यं प्राप्नोत्यविकलं सदा ॥
 अपुत्री लभते पुत्रं दरिद्रस्तूतमं धनम् ।
 कन्यार्षी लभते कन्यां परत्र च शुभां गतिम् ॥
 श्रूयतेऽत्र पुरावृत्तं पुष्यधूपादिसाधनम् ।
 मल्लिकारक्तमञ्जो ज्ञातितगरनीव च ॥
 पुष्यिकां केतकीं वानसुवर्णकुसुमानि च ।
 प्रति मासन्तु कार्याणि पुष्याख्येतानि नारद ॥
 फलानामप्यभावे तु वीजपूरं प्रशस्यते ।
 अलाभेतूक्तपुष्याणां शतपत्रं विशिष्यते ॥
 नारिकेलं वीजपूरं नारङ्गं दाडिमं तथा ।
 सारिवां पनसश्चैव सहकारं तथैव च ॥
 क्षीरीफलं वामलकं कुष्माण्डं त्रपुषं तथा ।
 भूमीफलं* क्रमाच्चान्न अर्घ्यज्ञाने प्रयोजयेत् ॥

* सङ्घनिति पुष्यकान्तरे पाठः ।

† पुनोसङ्घनिति बाह्याकारः ।

एकदन्त महादन्त गौरीसुत गन्धाधिप ।
चतुर्ध्वजितपूजार्थं अर्घं गृह्य नमोऽस्तु ते ॥

अर्घमन्त्रः ।

शतपत्रं तथा कुण्डं मरुकङ्कणवीरकम् ॥
स्मारविन्दं वकुलाशोकानादाय पूजयेत्ततः ॥
अर्घान् सम्ब्रूयति वर्धयतीह धर्मं
कामं प्रसाधयति तस्य पिनष्टि पापम् ।
यः पूजयन्निखिललोकनुताङ्गिपद्मम्
गौरीसुतं फणितनूद्रमादिदेवम् ॥
विघ्नाच्च तस्य न भवन्ति गृहे कदाचित्
धर्मार्थकामसुखसिद्धिविधायकाय ।
यः समभौन्दुशकलाकृतिकान्तिदन्तम्
विघ्नेशमर्चयति तं सुकृती चतुर्थी ॥
आनन्ददां सकलपापहरां चतुर्थीं ।
या स्त्री करोति विधवा सधवा च कन्या ।
सा स्त्रे गृहे सुखशतान्यनुभूय भूयो
हेरम्बमाहभवनं सुदितः प्रयाति ॥
एवञ्च यः प्रकुरुते वरदां चतुर्थीं
वैनायकीं विविधपुत्रसुकान्तिकीर्त्तिः ।
ग्रन्थोः शशाङ्ककलिकाङ्कितशेखरस्य
स्थानं प्रयाति परमैकसुखस्वरूपम् ॥

* नवकं करवीरनमिति पुस्तकालये पाठः ।

स्वविरगक्षपतिं पूजयन्पुञ्जयन्वां
 सकृदपि समुपेत्य ध्वस्तदोषास्तु मर्त्याः ।
 द्विरदवदनमाद्यं ते प्रयान्तीह धन्याः
 सुरनगरपुरन्धीलोचनैः प्रीयमानाः ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं नक्षत्रचतुर्थीव्रतम् ।

इति श्रीमहाराजाधिराज महादेवस्य समस्तकरणाधी-
 श्वर-सकलविद्याविशारद श्रीहेमाद्रिविरचिते
 चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे
 चतुर्थीव्रतानि ॥

अथ नवमोऽध्यायः ।

—000—

अथ पञ्चमीव्रतानि ।

चेती लक्ष्मीरमणचरचन्द्रराजीवलीनं ।
हवीत् कर्षादतिरसलसद्गृहभङ्गीमुपति ॥
यस्य स्फारस्फुरितमतिना तेन हेमाद्रिषेह ।
प्रस्तूयन्ते विपुलफलकृतपञ्चमीषु व्रतानि ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

कथं सा प्राप्यते लक्ष्मीर्दुर्लभा यामरैः श्विर्भो ।
दानेन तपसा वापि व्रतेनापि[†] बद्धस्य तत् ॥
जप-होम-नमस्कारैः संस्कारैर्वा पृथग्विधैः ।
एतद्धृदयदुःखेष्ठ सर्व्वं विश्वं मतिर्मम ॥

कृष्ण उवाच ।

शृगोः ख्याता समुत्पन्ना पूर्व्वं स्त्री श्रीपतेः शुभा ।
वासुदेवाय दत्ता सा मुनिनां मम वृहये ॥
वासुदेवोऽपि तां प्राप्य पीनोन्नतपयोधरां ।
पद्मपत्रविशाखाचीं पूर्व्वं चन्द्रनिभाननां ॥
भाभासितदिगाभीगामर्काद्धानोः प्रभामिव ।

* अरैरितिपुष्पकान्तरे पाठः ।

† निचनेनेति पुष्पकान्तरे पाठः ।

नितम्बाङ्गव्रवतीं मत्तमातङ्गगामिनीं ।
 रेमेसह मया राजन् विभ्रमोद्गान्ताचिन्तया ॥
 सा च विष्णुं जगज्जिष्णुं पतिं त्रीजगतां पतिं ।
 प्राप्य कृतार्थमात्मानं मेने मानयशीधरा ॥
 कृष्ण कृष्ण जगत्सर्वं भगवन् धारितं त्वया ।
 क्वचि मां पाल पशुभ्यां सहृदोव महीतलम् ॥
 चेमं सुभिन्नमारीम्य मनात्तन्मनामयान् ।
 रसाज्जलं जायतेऽस्मात् हृदिविर्ब्रह्मो हुनेत्ततः ॥
 चातुर्वर्ण्यं ससङ्गीर्णं पात्यते पार्थ पार्थिवैः ।
 विरोचनप्रभृतिभिर्हृद्द्वैव दैत्यसत्तमैः ॥
 तपसस्तमसाभ्यर्थमग्निमान्नित्य संयमैः ।
 सोमसंस्था हविः संस्था पाकसंस्थादिभिर्मखैः ॥
 समाचारैः समभ्यर्च्य येषु भक्तिप्रकारिभिः ।
 पशुधर्मप्रधाने स्तौर्देवदानवराक्षसैः ॥
 जगदासीक्षमाक्रान्तं विभ्रमेन क्रमेण च ।
 लक्ष्मी विलासप्रभवो देवानाञ्च सदा मदः ॥
 ग्रीलं गर्भञ्च सत्यञ्च सद्योलक्ष्मीञ्च सहृद्दे ।
 सत्यग्रीचविहीनां स्तान् देवान् सन्त्यज्य चक्षसा ॥
 जगाम दीना वाक्कुलं कुदेवानुरागतः ।
 लक्ष्म्या भावितदेहैस्तैः पुन रुद्धतमानसैः ॥
 व्यवहर्षुः समारब्धामन्यायेन मदीकृतैः ।
 वयं देवा वयं यन्त्राः वयं विप्रा वयं जगत् ॥
 ब्रह्मविष्णु सप्रज्ञाया वयं सर्वदिबोक्तवः ।

अहङ्कारविमूर्छांस्तान् भ्रात्र्या दानवसंसप्तमान् ॥
 सागरे सलिले पार्थं भ्रान्तचित्ता भृगोः सुता ।
 क्षीरोदमध्ये गतया लब्धः क्षीणार्थसम्भयम् ॥
 निरामदं गतश्रीकामभवद्भवनचयम् ।
 गतश्रीकमथात्मानं मत्वा शम्बरसूदनम् ॥
 पप्रच्छाङ्गिरसस्विप्रं ब्रूहि किञ्चित् व्रतं मम ।
 येन संप्राप्यते लक्ष्मीर्लब्धा न चलते पुनः ॥
 निचलापि सुहृन्मित्र भोग्या भवति सा मुने ।
 न सा स्त्रीत्यभिमन्तव्या कन्या सा पात्यते गृहे ॥
 परार्थं या सुहृन्मित्र भृत्यैर्नैवोप भुञ्जते ।
 शकस्यैतद्वचः श्रुत्वा हृदस्पतिरुदारधीः ।
 कथयामास सञ्चित्य शुभं श्रीपञ्चमीव्रतम् ॥
 यत् पुरा कस्यचित् नोक्तं व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
 तदहं कथयामास सरहस्यमशेषतः ॥
 तच्छ्रुत्वा कर्त्तुमारब्धं शुभं नरवरैः सह ।
 दैत्यदानवगन्धर्वैश्चैः प्रक्षीणकल्पैः ॥
 सिद्धैः प्रसिद्धचरितैर्विष्णुना प्रभविष्णुना ।
 ब्राह्मणैर्ब्रह्मतत्वज्ञैः समर्थैः पार्थिवैः सह ।
 कैश्चित् सात्विकभावेन राजसेनापरैरपि ॥
 तामसेन तथा कैश्चित् कृतं व्रतमिदं तथा ।
 व्रते समासभृदिष्टे निष्ठया परया प्रभो ॥
 देवानां दानवानाञ्च युधि चासीदमोचता ।
 निर्भय्य भुजवीर्यैश्च सागरं सरितां पतिम् ।

समाहरामोद्यत्तं हित्वा यतिद्विवीकसः ॥
 इत्येतस्मयं कृत्वा ममन्युर्वदृषालयं ।
 मन्यानं मन्दरं कृत्वा नेत्रं कृत्वा तु वासुकिं ॥
 मथ्यमाने जलाज्जातचन्द्रः शीतांशुवृञ्जलः ।
 अनन्तरे समुत्पन्ना लक्ष्मीः क्षीराब्धिमध्यतः ॥
 तथा चालोकिताः सर्वे दैत्यदानवसप्तमाः ।
 चालोक्य तान् जनामासौ विष्णोर्वृक्षखलं शुभम् ।
 विधिना विष्णुना चीर्णं व्रतं तेनाब्धिसम्भवा ॥
 शरीरस्था बभूवास्य विभ्रमोद्भ्रान्तलोचना ।
 किञ्च राजसभावेन शक्नो यैव कृतं यतः ॥
 तेन स्वर्गवलैर्द्वयं प्राप्यतेऽस्म महर्षिमत् ।
 तमसावृतचित्तैस्तु सचीर्णं दैत्यदानवैः ॥
 तेन तेषामथैर्द्वयं दृष्टनष्टमभूत् किल ।
 एवं स श्रीकमभवत् सदेवासुरमागुषं ॥
 जगति जगतांश्रेष्ठ व्रतस्यास्य प्रभावतः ।

युधिष्ठिर उवाच ।

कथमेतद्व्रतं कृणु क्रियते मनुजैः कदा ।
 प्रारभ्यते पार्थ कस्मिन् सव्यं वद जनार्दन ॥

कृष्ण उवाच ।

यदिन्द्रे ष पुरा चीर्णं श्रीवियुक्तेन पार्थिव ।
 श्रीसमृद्धिकरं तद्वि शृणु श्रीपञ्चमीव्रतम् ॥
 मार्गशीर्षे सिते पक्षे पञ्चम्यां पन्नगोत्सवे ।

उपवासस्य नियमं कुर्यात् पद्मां अरेवृदि ॥
 स्वर्णरौप्यां यथा शक्त्वा तान्नां मृत्काष्ठजामघ ।
 चित्रपद्मगतां देवीं लक्ष्मीं आपाल कारयेत् ॥
 पद्मासनां पद्महस्तां पद्मां पद्मदलेक्षणां ।
 दिग्गजेन्द्रैः स्नायमानां काञ्चनैः कलसौत्तमैः ॥
 लक्ष्मीरूपनिर्घाणन्तु विष्णुधर्मीं सरोक्तं वेदितव्यम् ।
 तद्याथा ।

समुत्थिता श्रोः कर्त्तव्या शङ्खाम्बुजकरा शुभा ।
 सुखस्थिता महाभाग पद्मे पद्मकरा शुभा ॥
 द्विभुजा चारुसर्वाङ्गो सर्वाभरणभूषणा ।
 द्वौ च मूलकरो मूर्ध्नि कार्थ्यौ विद्याधरो शुभाविति ॥
 ततो यामक्षये यति निम्नगायाः मृदाघवा ।
 स्नानं कुर्यादसंभ्रान्तः शक्तिमदुपचारतः ॥
 देवान् पितृंश्च सन्तर्प्य ततो देवगृहं व्रजेत् ।
 तत्रस्थां पूजयेद्देवीं पुष्यै स्तत्कालसम्भवैः ॥
 चपलायै नमः पादौ चक्षलायै च जातुनी ।
 कर्टी कामलवासिन्यै नाभिं ख्यात्यै नमो नमः ॥
 स्तनी मन्दाधवासिन्यै ललितायै भुजद्वयं ।
 उत्कर्षितायै कम्बुक्ष माधव्यै मुखपद्मजम् ॥
 नमः त्रिभै शिरः पूष्य दद्यान्नै वेद्यमादरात् ।
 फलानि च यद्यालाभं विरुद्धं धान्यसञ्चयम् ॥
 ततः स्ववासिनौ पूज्या कुङ्कुमैः कुङ्कुमेन च ।
 भोजयेन्मधुरान्ने न प्रक्षिपत्य विसर्जयेत् ॥

ततस्तु तच्छुद्धप्रस्थं दृष्टपात्रेण संयुतम् ।
 ब्राह्मणाय प्रदातव्यं सा श्रीर्षा प्रीयतामिति ॥
 निर्वर्त्यैतदग्नेषु ततो भुञ्जीत वाग्यतः ।
 मासानुमासं कर्त्तव्यं विधिनानेन भारत ॥
 श्रीर्षाः कमला सम्पत् पद्मा नारायणी तथा ।
 पद्मदृष्टिः स्थितिः पुष्टिस्तुष्टिः सिद्धिः क्षमा तमात् ॥
 मासानुमासं राजेन्द्र प्रीयतामिति कौत्सयेत् ।
 ततो द्वादशमे मासि सम्प्राप्ते पञ्चमीदिने ॥
 वस्त्रमण्डयिकां कृत्वा पुष्यगन्धादिवासितां ।
 शय्यायां स्थापयेत्क्षीं सर्व्वोपस्कारसंयुताम् ॥
 सोभाग्याष्टकसंयुक्तां नेत्रपट्टाद्वत्तस्तनीं ।
 सप्तधान्यसमोपेतां रसधातुसमन्विताम् ॥
 पादुकोपानहृच्छत्रभाजनासनसंस्कृताम् ।
 देवीं संपूज्य विधिवद्ब्राह्मणाय कुटुम्बिने ॥
 व्यासाय वेदविदुषे यस्मै वा रोचते स्वयं ।
 सोपस्करां सवत्साञ्च धेनुं दत्त्वा क्षमापयेत् ॥
 क्षीराब्धिमथनोद्भूते विष्णोर्वक्षस्यलालये ।
 सर्व्वकामप्रदे देवि सिद्धिं यच्छ नमोस्तुते ॥
 ततः स्ववासिनीः पूज्या वस्त्रैराभरणैः शुभैः ।
 भोजयित्वा स्वयं पद्याङ्गुञ्जीत सह वन्द्यभिः ॥
 य एव कुर्वते पार्थ भक्त्या श्रीपञ्चमीव्रतं ।
 तस्य श्रीर्भवने भाति कुलानामेकविंशतिम् ॥

नारी वा कुरुते या तु प्राप्यानुज्ञां स्वभर्तुः ।

सुभगा दर्शनीया च बहुपुत्रा च जायते ॥

यः पञ्चमीव्रतमिदं दयितं सुरारे-
र्भक्त्या समाचरति पूज्य भृगोस्तनूजाम् ।
राज्यश्रियं च भुवि भव्यजनोपभोग्यं
भुक्त्वा प्रयाति भवनं मधुसूदनस्य ॥

इति श्रीभविष्यपुराणोक्तं श्रीपञ्चमीव्रतं सम्पूर्णम् ।

—000—

श्रीकृष्ण उवाच ।

माहात्ममभिवक्ष्यामि पञ्चम्यास्तव भारत ।
जयेति या च विख्याता व्रतिनां जयदायिनी ॥
यस्याज्याया जयाशब्दं कुर्वन्ति व्रतिनो बुधाः ।
परिपूर्णं व्रतं यस्यां सा ज्ञेया जयपञ्चमी ॥
जया च विजया चैव जयन्ती पापनाशिनी ।
जया, कार्तिकशुक्लपञ्चमी ।

क्षेत्री भगवान् यश्चूर्णकृपायाः सरितस्तथा ।
प्रभासाद्यानि तीर्थानि जम्बूद्वीपसरांसि वा ॥
प्रयागं पुष्करं गङ्गां गयाञ्चैव कुहस्यथ ।
एतान्यन्यानि तीर्थानि व्रतिनः स्नापयन्मुत ॥
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन स्नानं कुर्याज्यादिने ।
क्षेत्री नोद्वर्त्तनेनेव हिजान् स्नानापयेदङ्गम् ॥
तीर्थे प्रस्नवणे गत्वा स्नापयेत् स्वयं हरिं ।

जयासहितमित्यर्थः ।

शङ्ख-चक्र-गदापाणिं वामभागे जयां स्थितां ।
 वरदाभयहस्ताच्च श्वेतां हंसीपरिस्थिताम् ॥
 पूजयेद्विधिः पुष्पैर्धूपनैवेद्यजादिभिः ।
 एभिर्भस्मैस्तु तं देवं जयाञ्च प्रतिपूजयेत् ॥
 पादो वै पद्मनाभाय जानुभ्यो माधवीति च ।
 ऊरु वै नारसिंहाय मध्ये वै मन्मथाय वा ॥
 दामोदरायेत्युदरं चक्षुः श्वीवत्सधारिणे ।
 श्रीकण्ठायेति कण्ठं वा बाह्वुः सर्वाङ्गधारिणे ॥
 मुखं पद्ममुखायेति शिरः सर्वाङ्गने नमः ।
 अनेन विधिना चैव पूजयेद्गुरुङ्घ्रजम् ॥
 अनन्तरं तु तां देवीं वेणुपात्रोपरिस्थिताम् ।
 जातीलताधीभागस्थितां देवीं प्रपूजयेत् ॥
 नमः पुष्टै पादयुग्मे जानुभ्याञ्च त्रिये नमः ।
 नदायै च कटीदेशे विजयायै च वक्षसि ॥
 शिरः सर्वार्थदायिन्यै सर्वार्ङ्गे विजयां तथा ।
 विधिनानेन संपूज्य अर्चयेद्विजयां हरिं ॥
 ॐ जयायै जयरूपाय जयगोविन्द रूपिणे ।
 जय दामोदरायेति जय सत्सन्नमोऽस्तुते ॥
 अर्घ्यं मन्त्रः ॥
 वेणुपात्राणि सर्वाङ्गि सप्तधान्यभृतानि च ।
 रक्तसूत्रेषु सम्पूज्य सफलानि निवेदयेत् ॥
 तथा वेणुफलं दृष्ट्वा तुष्यते मधुसदनः ।

तथा मे अशुभं सर्वं^१ वैष्णवात्रप्रदानतः ॥

वैष्णवात्रदानमन्त्रः ।

अनेन विधिना चैव दत्त्वा पात्राणि गीसुरे ।

गीसुरे, ब्रह्मण्ये ।

रक्षाबन्धमतः कुर्यात् सुहृत् स्वजन बन्धु ।
अक्षताः सर्षपा दूर्वा रक्षामध्ये च रोचना ॥
धौ येन बहो वलीराजा दानवेन्द्री मङ्गावलः ।
तेन त्वामाशु बध्नामि रक्षे माचल माचल ॥

रक्षाबन्धनमन्त्रः ।

रक्षाबन्धं नरो यस्तु कुर्याद्भक्तिसमन्वितः ।
न तस्य यक्षपीडा स्यात् न च मृत्युभयं भवेत् ॥
भूतवेतालरक्षाद्यैः पिशाचैर्नाभिभूयते ।
रक्षायाबन्धनं कृत्वा संयामे प्रविशेत् यः ॥
जयते स रिपून् सर्वांश्च जीयते न स केनचित् ।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन रक्षाबन्धं तु कारयेत् ॥
यस्तु वै भक्तिसंयुक्तः स्नानं कुर्यात्त्रयादिने ।
कुतस्तस्त्वेव पापानि माघसामप्रवे यथा ॥
यद्याश्वमेधावभृथं तादृशं कारयेद्बुधः ।
जलाक्षलिस्तु व्रतिना क्षिप्यते यस्य मूर्धनि ॥
ब्रह्महत्यादिपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ।
अपुत्रो लभते पुत्रान् बन्ध्या गर्भं विविन्दति ॥

* रक्षाबन्धनाद्यप्यन्यमिति पुरुषान्तरे पाठः

रोगी रोगैर्विसुष्येत प्रयाति हरिमन्दिरम् ।

इति भविष्योत्तरोक्तं जयापञ्चमीव्रतम् ॥

—000—

भरहाज उवाच ।

आचक्षते विधिं ब्रह्मन् पञ्चम्याः परमं व्रतम् ।
स एव महिमा यस्य सर्वान् कामान् प्रवर्षति ॥

सनत्कुमार उवाच ।

शृणु वक्ष्यामि भगवन् पञ्चम्याः परमं विधिं ।
यस्य श्रवणमात्रेण नरः पापात् पमुष्यते ॥
श्रवणेन यदा युक्ता शुक्लपत्रे तु पञ्चमी ।
उत्तराफाल्गुनौ यस्यामिन्दुवारसमागमः ॥
आरभेत नरस्तस्यां व्रतं पूर्वमुपोषितः ।
चतुर्थ्यामेकभक्ताग्नी ब्रह्मचारी जितेन्द्रियः* ॥
धृतिमान् कृतसंकल्पो भवेन्नियमवाचरः ।
ततः कथं समुत्थाय ज्ञात्वा नियतमानसः ॥
धृतसङ्कल्पया पद्म्या कुर्याद्विष्वस्य चार्चनम् ।
विष्वमूले ततः कुर्यादेदिं पुष्पाक्षतैर्युतां ॥
स्नापयेत् कलशानष्टौ तस्यामष्टसु दिक्षु वा ।
तन्मध्ये विष्वमूलं तु स्नापयेच्च महाघटान् ।
सौवर्णं राजतं ताम्रमार्त्तिकं वा सुभाषितम् ॥

* चतुर्थ्यां विधिना ज्ञात्वा ब्रह्मचारी विजितेन्द्रिय इति पुस्तकाकारे ।

वस्त्रयुग्मेन सच्छेषं नवरत्नसमन्वितम् ॥
 कलसाद्य तथा कुर्यात्तीर्थोदकसमन्वितान् ।
 दूर्वा च विष्णुपर्णी च श्रीलता पद्मजं सितम् ।
 शालपत्रमपामार्गस्तूलसी जातिरित्यपि ॥
 विष्णुपर्णी, प्रस्त्रिपर्णी, श्रीलता, पद्मिनी ।

शालपत्रं शालहृत्पत्रं ।

विश्वाम्भ-ताल-तिन्दूक-धात्रो-रश्मा-फलान्यथ ।
 तिन्दूकं, टिवरुषीफलं ।

जम्बू पनसजातानि बुद्धिः शक्तिः सरस्वती ।
 अहा लक्ष्मीर्धृतिस्तुष्टिः पृष्टिरित्यष्ट शक्तयः ।
 एलासर्षपकक्कोलतिलकर्पूरपद्मकाः ॥

पद्मको, हृत्पत्रविशेषः ।

लोभमांसीसमायुक्तान् इति सर्वान् विनिक्षिपेत् ।
 पूर्वाद्दोशानपर्यन्तं कलशेषं महामतिः ॥
 मध्यमे तु क्षिपेत् सर्वं दूर्वादि यदुदीरितम् ।
 अथ तत्र त्रियं देवोमष्टशक्तिसमन्वितां ॥
 श्रीबीजेन समावाह्यं तत्र पूजादि साधयेत् ।
 एवं सर्वत्र शक्तीनां बीजेनावाहनं विदुः ॥
 स्नानामाद्याचरं बीजं मनुस्वारसमन्वितम् ।
 तत्र तत्र च तत्पूजां विधिना सम्यगाचरेत् ॥
 श्रीसताजातिबकुलेर्नव्यावर्तं प्रसूनकैः ।

नन्यावर्त्तं, तगरम् ।

एषा पञ्च सिताम्भ.जैः मल्लिकाकुसुमाश्रितैः ॥

श्रीशूक्तेन त्रियं देवीमर्चयेत् प्रदक्षं सुधीः ॥

श्रीशूक्तं, हरिष्यवर्णां हरिणीमित्यादि ।

गुह्यान्पायसापूपमुह्नासदधिसंयुतैः ॥

शाख्यजैःक्षीरमधुरैः त्रियं देवीं समर्चयेत् ।

बुद्ध्यादिगन्धर्वचर्मं नाममन्त्रैः ।

एवं कृत्वा यथा योगं ततः संहृणुयाद्हरम् ।

देवि पद्मपलाशाक्षि नमस्ते श्रीधरप्रिये ॥

सिद्धार्थं मां कुरुष्व त्वं व्रतेनानेन सुव्रते ॥

बोध्यं बुद्ध्या च भूतानां बोधयन्ति हृदि स्थिते ।

सिद्धार्थं मां कुरुष्व त्वं व्रतेनानेन सुव्रते ।

शक्तिः सती सती देविवेष्टयन्त्यनिशं प्रजाः ॥

सिद्धार्थं मां कुरुष्व त्वं व्रतेनानेन सुव्रते ।

सिद्धार्थयेऽमृतकलेः पद्मबासे सरस्वती ॥

सिद्धार्थं मां कुरुष्व त्वं व्रतेनानेन सुव्रते ।

अहं अहावतीशानि सत्त्वानि कुर्वतीवशे ॥

सिद्धार्थं मां कुरुष्व त्वं व्रतेनानेन सुव्रते ।

सच्चितासि सतीसङ्घो दीव्यन्ती स्वस्तिमञ्जगत् ।

सिद्धार्थं मां कुरुष्व त्वं व्रतेनानेन सुव्रते ।

धृत्यैमां हं हति धात्री मन्दिरे दिवसे शुभे ।

* मल्लिका कुसुमाश्रितै रिति पुस्तकालकरे पाठः ।

† सिद्धार्थयेऽमृतकले रिति पुस्तकालकरे पाठः ।

सिद्धार्थं मां कुरुष्व त्वं व्रतेनानेन सुव्रते ।
 सती तोषयतां तुष्टिप्रदाभीकमलेऽमले ।
 सिद्धार्थं मां कुरुष्व त्वं व्रतेनानेन सुव्रते ॥
 सन्धुष्यसि सुसंपृष्टमङ्गलायतनं जगत् ।
 सिद्धार्थं मां कुरुष्व त्वं व्रतेनानेन सुव्रते ॥
 इति मन्वीतसकलाः संपूर्णा मे मनोरथाः ।
 इन्दिरायाः प्रसादेन व्रतेनासमहं सुखी ॥
 ततः परिसमाप्यैवं त्रियः पूजां समाहितः ।
 मध्यमस्य समीपे तु महितं स्थापयेद्दण्डं ॥
 तस्मिन्नावाहयेद्देवं श्रीधरं श्रीपतिं प्रभुं ।
 वस्त्रयुग्मेन सञ्चरन् सर्व्वरत्नसमन्वितम् ॥
 विधाय विधिना कुम्भं तत्र पूजां समाचरेत् ।
 अद्यावस्थापिते पूर्व्वं देवमावाह्य पूजयेत् ॥
 समाप्य विधिवत् पूजां ततश्च शृणुयाद्द्वारम् ।
 भगवन् श्रीपते श्रीय श्रीनिवास जगन्नाथ ॥
 प्रसादात्तव ते सन्तु संपूर्णा मे मनोरथाः ।
 अथ संपूजयेद्दिवान् ब्राह्मणान् वेदपारगान् ॥
 नवकं मिथुनं कृत्वा तत्र मन्त्रेण वैष्णवान् ।
 तेभ्योद्द्याद्यद्योग्यं भूषणानि धनं बहु ॥
 बहिर्त्सुत्तदाश्रीभिर्बिम्बैश्च द्विजसत्तमान् ।
 ततस्तु लोकपालानां दक्षिं दिक्षु विनिश्चिपेत् ॥
 उगवासच कर्त्तव्यः सहवध्वा वरेण वा ।
 पावकादिभिरालापे न कर्त्तव्यः कथञ्चन ॥

यदि स्वात्पतनं गच्छेन्निरयच्छाप्यधोमुखः ।
 वृथाजल्पपरो न स्यात् वृथारथो वृथामतिः ॥
 न स्वपेत्तु द्विवारात्रो नाद्यादपि कश्चन ।
 न क्रोडां नोपहासश्च न मिथ्याभाषणं क्वचित् ॥
 श्रीधराय नमोनित्यं श्रिये नम इतोरयेत् ।
 एवमेव दिनं नीत्वा ततः षष्ठ्यां समाहितः ॥
 समभ्यर्च्य श्रियं देवीं तथा देवं यथा पुरा ।
 ब्राह्मणान् भोजयेत् पद्याद्विधिवत्परिव्रजात् ॥
 दत्त्वा धनादिकं मद्यं खात्वा कुम्भोदकेन वा ।
 पत्न्या सह हविःशेषं ततो भुञ्जीत वाग्यतः ॥
 तथा दानं दरिद्रेभ्यो योषिद्वाद्यान्नमुत्तमम् ।
 गुरवे दक्षिणां दद्यात् पितृभ्यश्च स्वधामपि ।
 विश्वश्च दृष्ट्वा प्रणमेत् तदग्रे प्रणतो व्रजेत् ॥
 न कुर्यात्ताडनं तस्य तथा पादाभिमर्शनं ।
 न लङ्घयेत् तच्छायां नाद्यात्तस्य फलादिकं ॥
 प्रशस्तं विश्वपात्राणां वारणं मूर्द्ध्नित्यशः ॥
 शतपत्रं चैकपत्रं श्रीलताकुसुमान्यपि ।*
 दूर्वाश्च कूर्पकुसुमं तिलसर्षपतण्डुलान् ॥
 शिरसा धारयेन्नित्यं श्रियमिच्छन्नानुकुलः ।
 आयुर्विद्यां श्रियन्तुष्टिमारोग्यं कान्तिमुत्तमाम् ॥
 सोभायं क्षेमसम्पत्तिं व्रतेनाप्नोति मानवः ।
 विन्दते व्रतकृद्वाजा राज्यं श्रियमनुत्तमाम् ॥

* कान्तिकुसुमसिद्धिं पुस्तकान्तरे पाठः ।

देशे च सभते विस्र* शूद्रः सुश्रमवाप्नुयात् ।
 कन्या च सभते सौम्यं पतिं हृदयहारिणम् ॥
 बन्ध्या वाभिमत पुत्रं विन्देताशु न संशयः ।
 योधित्परममाङ्गल्यं प्राप्नुयात् व्रतसम्पदा ।
 अपत्यङ्गभिर्षो नारी यावद्दुसुतार्थिनी ॥†
 पायसेन त्रियं देवीं देवेशसमर्चयेत् ।
 त्रियं कामयमानेन पूज्योक्तविधिनार्चनं ।
 सौभाग्यमिच्छता कार्यं घृताग्नेन समर्चनं ॥
 हविष्यफलमूलाद्यं कार्यं राजन्यपार्थिवैः ॥‡
 विद्यार्थिना च देयानि हवीं वि मधुराणि च ।
 आयुःकामेन विधिना पयसा कार्यं मर्चनं ॥
 एवमेव च वर्षान्तमनुतिष्ठेत्तु पञ्चमी ।
 पथवा सकृदुक्ते न विधिना कार्यमिष्यते ॥
 अथ यावत् फलप्राप्तिः कार्यमेतत् व्रतं मत्तं ।
 सर्व्वं भाग्यवशादेव फलं भुङ्क्ते नरो भुवि ॥
 तद्योगात्तत्क्षणात्तावदचिरं स्याच्चिरं फलं ।
 अपि च क्षीणभाग्यानामसतामपि सम्पदः ॥
 भवेयुः सर्व्वसत्त्वानां व्रतेनानेन वै ध्रुवं ।
 एवमुक्ते न विधिना व्रतस्य व्रतिनाम्बरः ॥
 सर्व्वसिद्धिकरं पुंसामुक्तमेतत्तमहाव्रतं ।

* नित्यस्य सभतेवित् निति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† अपत्यं प्रायश्चेत्तावत् पुत्राकाले सुतार्थिनीति पुस्तकान्तरे पाठः ॥

‡ राज्ञो जयार्थिनेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

इति श्रीगरुडपुराणोक्तं श्रीपञ्चमीव्रतम् ।

—000—

श्रीमार्कण्डेय उवाच

अतःपरं प्रवक्ष्यामि पञ्चमूर्त्तस्तथाचर्चनं ।
 पृथिव्यापस्तघातेजो वायुराकाशमेव च ॥
 एता वै देवदेवस्य* कथिताः पञ्चमूर्त्तयः ।
 चेत्त्रे तु पञ्चमीं शृक्त्वां समासाद्य विचक्ष्णः ॥
 सोपवासो हरिं देव पञ्चात्मनं समश्चयेत् ।
 पञ्चमण्डलकाः कार्य्याः पञ्चभिर्वर्षकैः पृथक् ॥
 पार्थिवं मण्डलं कार्य्यं शृक्त्ववर्णं महीपते ।
 वारुणश्च तथा श्वेतं रक्तमाग्नेयमिष्यते ॥
 पीतं भवति वायव्यं कृष्णमाकाशदैवतं ।
 समानयर्णगन्धेशी† पुष्यैस्तानश्चयेत् पृथक् ॥
 शक्त्या च धूपदीपान्नैर्यथासाभमरिन्दम ।
 यवैर्माषैस्त्रिलैश्चैव सर्षपैश्च हृतेन च ॥
 पञ्चभिर्जुहुयात्सन्धैः सर्वेषाञ्च पृथक् पृथक् ।
 हुत्वा ॐ पृथिव्यप्तेजोवायुराकाशेभ्यः स्वाहेति सर्वेषां
 मित्रैर्जुहुयात् ।
 तस्मिन्नेवैरेव मन्त्रैश्च अथवा नृप नामभिः ।
 ॐकारपूर्वकैर्हुत्वा शक्त्या विप्राञ्च भोजयेत् ॥
 एवं संवत्सरं कृत्वा पूर्णसंवत्सरे ततः ।

● वायुदेवस्य देवकीति प्राडाकारम् ।

† तमाहवर्णगन्धेशीति पुस्तकाकारे ।

दत्त्वा विप्रेषु वस्त्राणि देवरङ्गसमानि तु ॥
 मन्त्राभूतव्रतमिदं यः करोत्यथ पञ्चकम् ।
 पञ्चयज्ञानवाप्नोति क्रमशो ये तु कीर्तिताः ॥
 बह्वन्यद्महस्त्राणि स्वर्गलोके महोयते ।
 मानुष्यमासाद्य भवत्यरोगो
 बलान्वितो वैरिगणादिहन्ता ।
 श्रुतेन रूपेण धनेन युक्तो
 जनाभिरामः प्रमदाप्रियथ ॥

इति विष्णुधर्मात्तरोक्तं पञ्चमन्त्राभूतं व्रतं ।

—०*०—

श्रीभीष्म उवाच ।

मधुरा भारती केन व्रतेन मधुसूदनं ।
 तथैव जनसौभाग्यं सर्व्वं विद्यानुकौशलं ॥
 अभेदेषापि दम्पत्योस्तथावन्भुजनेः सह ।
 आशुच विपुलं पुंसां तन्मे कथय सत्तम ॥

पुलस्त्य उवाच ।

सम्यक् पृष्टं त्वया राजन् शृणु सारस्वतं व्रतं ।
 यस्य सङ्गीर्त्तनादेव तुष्यतीह सरस्वती ॥
 यो यद्भक्तः पुमान् कुर्यादेतद्भूतमनुत्तमं ।
 तद्वासरादौ संपूज्य विप्रानेतत्समारभेत् ॥
 षष्ठ्यादित्यवारेषु यद्दत्तारावसेन च ।

(७०)

पायसभोजयित्वा तु कुर्याद्वाङ्मन्त्रवाचनं ॥
 शुक्लवस्त्राणि दद्याच्च सहिरष्यानि शक्तितः ।
 गायत्रीं पूजयेद्भक्त्या शुक्लमाख्यानलेपनैः ॥
 एभिर्मन्त्रपदैः पश्चात् सर्वं कुर्यात् कृताञ्जलिः ।
 यथा न देवि भगवान् ब्रह्मा लोकपितामहः ॥
 त्वां परित्यज्य सन्निष्ठे त् तथा भव वरप्रदा ।
 वेदाः शास्त्राणि सर्वाणि नृत्यगीतादिकञ्च यत् ॥
 न विहीनं त्वया* मातस्तथा मे सन्तु सिद्धयः ।
 लक्ष्मीर्धाम धरा पुष्टिः गौरी तुष्टिः प्रभामतिः ॥
 एताभिः पाहि तनुभिरष्टाभिर्श्वां सरस्वती ।
 एवं संपूज्य गायत्रीं वीणाक्षमधिधारिणी ॥
 शुक्लपद्मेऽर्चते भक्त्या सकमण्डलुपुस्तकां ।
 मौनव्रतेन भुञ्जीत सायं प्रातश्च धर्मवित् ॥
 पञ्चम्यां प्रतिपद्ये च पूजयित्वा सुवासिनीः ।
 तस्यां तु तण्डुलप्रस्थं घृतपात्रे ष संयुतं ॥
 क्षीरं दद्यात् हिरण्यञ्च गायत्री प्रीयतामिति ।
 सन्ध्ययोश्च तथा मौनमेतत् कुर्वन् समारभेत् ॥
 नाम्तरा भोजनं कुर्याद्यावन्मासास्त्रयोदश ।
 समाप्ते तु व्रते दद्यात् भाजनं शुभतण्डुलैः ॥
 पूर्णं सवस्त्रयुग्मन्तु गां सवस्त्रां सुशोभनां ।
 विप्राय वेदविदुषे वाचकायाश्च पार्थिव ॥

* तथादेभी पुण्ड्रान्तरे पाठः ।

† घृतिरिति पुण्ड्रान्तरे पाठः ।

देव्यै वितानं वष्टाच्च सितचामरसंयुतां ।

चन्दनं वस्त्रसंयुक्ताच्च दध्यन्नं शिखरं तथा ॥

शिखरं दधि क्षीरं घृतानां सन्तानिका शिवा ।

शिखरं चिरं संस्त्रस्य द्रवस्त्रोपरिपीडिकेत्यायुर्वेदकृतेः ।

तद्योपदेष्टारमपि भक्त्या संपूजयेद्ब्रह्म ॥

वित्तशोभेन रक्षितो वस्त्रमाख्यानं सेपनैः ।

अनेन विधिना यस्तु कुर्यात् सारस्वतं व्रतं ॥

विद्यावान् धनयुक्ताच्च रत्नकण्ठश्च जायते ।

सरस्वत्याः प्रसादेन व्यासवत्सकविर्भवेत् ॥

नारी वा कुर्वते या तु सापि तत्फलभागिनी ।

ब्रह्मलोके वसेत्सावद्यावद्युगशतत्रयं ॥

सारस्वतं व्रतं यस्तु शृणुयाच्छ्रावयेत्तथा ।

विद्याधरपुरं सोपि प्राप्नोति गतकल्मषः ॥

सारस्वतव्रतवरेण सरस्वतीं ये

संपूजयन्ति विधिवज्जगती जनिषी ।

विद्योवद्वातद्दद्यात् मधुरस्वरास्ते

रूपान्विता बहुगुणाः कुमला भवन्ति ॥

पत्रं व्रते शुक्लपत्रे स्नेहदेवतातिथौ ।

रविदिने शुभदिने वा आरम्भः प्रतिदिनं सन्ध्योर्भोजने च

मीनं शुक्लपत्रम्वां सरस्वतीपूजा सुवासिनी पूजा च ।

इति पद्मपुराणोक्तं सारस्वतं व्रतम् ।

—०#०—

अगस्त्य उवाच ।

शान्तिव्रतं प्रवक्ष्यामि शृणुष्वैकमना नृप ।
 येन चौर्येण शान्तिः स्यात् सर्वदा गृहमेधिनः ॥
 पञ्चस्थां शुक्लपद्मस्य कार्त्तिके मासि प्रार्थिव ।
 अपारभ्य वर्षमेकान्तु भुञ्जीयादन्नवर्जितं ॥
 नक्तान्तु पूजयेद्देवं हरिं शेषोपरिस्थितं ।
 देव प्रतिमा शेषोपरिस्थिता चतुर्भुजा
 लक्ष्मणसङ्गतस्तत्रैकपादः, शेषोपरिस्थित
 एवापरो, जानूपरि तस्यैकः करो, नाभिदेशस्थो अपरः
 शीर्षधरः, सन्तानमञ्जरीधरद्यान्यः नाभौ पद्मं, पार्श्वेऽप्लाणीति ।
 अनन्तायेति पादौ तु धृतराष्ट्राय वै कटीं ।
 तच्चकायेति जठरमुरः कर्कोटकस्य तु ॥
 पद्माय कण्ठं संपूज्य महापद्माय दीर्युगं ।
 शङ्खपालाय वक्त्रान्तु कुलिक्कायेति वै शिरः ॥
 विष्णुं सर्वाङ्गमप्येवं पृथक् चैव प्रपूजयेत् ।
 पद्मक्षेत्रेति अनन्ताद्यानष्टो नागान् पृथगपि पूजयेदित्यर्थः ।
 क्षीरेण स्नपनं कुर्यात् हरिमुद्दिश्य वास्यतः ।
 नागानपि हरिबुद्ध्या स्नापयेत् ।
 तदग्नौ हीमयेत् क्षीरं तिलैः सह नृपोत्तम ।
 एषं संवत्सरस्यान्ते कुर्यात् ब्राह्मणतर्पणं ॥

नागन्तु काञ्चनं कृत्वा रुक्मिणं विधारयेत् ।
 गां सवत्सां वस्त्रयुगां कांस्यपात्रां पयस्विनीं ॥
 द्विरण्यञ्च यथा शक्त्या ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 एवं यः कुरुते भक्त्या व्रतमेतन्नराधिप ।
 तस्य शान्तिर्भवेन्नित्यं नागेभ्यश्चाभयं तदा ॥
 शेषाद्भिर्भोगशयनस्वमपां प्रसूतिं
 संपूज्य यज्ञपुरुषं पतगेन्द्रकेतुं ।
 येऽन्नन्त्यनस्त्रमधुरं सितपञ्चमीषु
 तेषां न नागजनितं भयमस्ति किञ्चित् ॥
 इति वराहपुराणोक्तं शान्तिव्रतम् ।

—000—

सुमन्तुववाच ।

पञ्चमी दयिता राजन् नागानां नन्दवर्द्धिनी ।
 पञ्चम्याः किल नागानां भवतीत्युक्तवो महान् ॥
 वासुकिस्तच्चथैव काशियोः* मणिभद्रकः ।
 धृतराष्ट्रश्चैरावतःकर्कोटकधनञ्जयो ॥
 एते प्रयच्छन्त्यभयं प्राणिनां प्राणदाः सदा ।
 पञ्चम्यां स्नापयन्तीह नागान् क्षीरेण ये नराः ॥
 तेषां कुले प्रयच्छन्ति अभयं प्राणदक्षिणां ।
 यस्तां नागा यदा मात्रा दह्यमाना दिवानिशं ।

* काशिक इति पुलकाकरे पाठः ।

† अत्रा इति पुलकाकरे पाठः ।

निर्व्यापिता गवां क्षीरेस्त्रेषां क्षीरन्तु दुर्लभं ॥

शतानीक उवाच ।

मात्रा त्रासाः कथं नागाः किमुद्दिश्य च कारणं ।

कथं शापस्य शावस्य विनाशो वै महासुने ॥

सुमन्तु उवाच ।

उच्चैः श्वोश्वराजा च श्वेतपर्णोऽश्वतीश्वरः ।

तं दृष्ट्वा धवलं कद्रुर्नागानां जननीश्वरा ॥

उवाचेतिशेषः ।

अश्वरत्नमिदं श्वे तं पश्य पश्यान्मतीश्वरं ।

कुलस्य यस्य ते बालाः सर्वश्वेतयुतास्तथा ॥

मर्ष्यश्वे ताकृतिवरो नायं कृष्णो न लोहितः ।

कथं त्वं यस्य कृत्कृष्णं विनतोवाच तत्स्वमां ॥

कद्रु उवाच ।

यस्याहमेकमयनं कृष्णत्वचसमन्वितं ।

द्विनेत्रा त्वं सविनते यदि पश्य पथं कुह ॥

विनतोवाच ।

अहं दासी भविषी ते कृष्णे कोशप्रदर्शितं ।

न च दर्शयिष्ये कद्रुर्धमदासी भविष्यसि ॥

एवं ते च पथं कृत्वा गते क्रोधसमन्विते ।

शपिते प्राक्प्रदेवोपि कद्रुर्जिह्वमचिन्तायत् ॥

आह्वय पुत्रान् प्रीवाच वासोभूत्वा इयोनमे ।

तिष्ठध्वं विषयं ज्येष्ठां विनतां जयवर्द्धिनौ ॥
 प्रोचुस्ते जिष्णुवृद्धीनां नागमातां विगृह्य च ।
 स्वधर्मपृष्ठः सुमहान न करिष्यामि तं वचः ॥
 एवं पुत्रवचः श्रुत्वा कद्रुः क्रोधसमाकुला ।
 शशप पुत्रान् सकलान् वाचकीशं प्रधक्षति ॥
 गते बहुतिथे काले पाण्डवो जनमेजयः ।
 सर्पसन्ध कर्ता वै यदन्यैर्भुविदुष्करं ॥
 तस्मिन् यज्ञे पावको वै दृष्टिष्यति न संशयः ।
 एवमुक्त्वाभवत्सुषीं कद्रुः क्रोधपरायणा ॥
 तानुवाच तदा सर्वान् ब्रह्मलोकपितामहः ।
 पञ्चम्यां शकृपचे तु सवञ्चोपरमिष्यते ॥
 तत्र वो भविता नन्दस्तेनानन्दो भविष्यति ।
 इत्युक्त्वा पन्नगान् सर्वान् देवदेवपितामहः ।
 जगाम चिद्विषं भूयो नागाः स्वस्वानमास्थिताः ॥
 तस्माद्विषं महाराज पञ्चमी दयिता सतां ।
 नागानां हर्षजननीं दत्ता वै ब्रह्मणा पुरा ॥
 अपरं ते प्रवक्ष्यामि नियमं पञ्चमीं प्रति ।
 यं कृत्वा न विभेति स्म नरो नागकुलात् क्वचित् ॥
 नागान् सोवर्षरोप्यान् वा अथवा मृत्सयान् नृप ।
 नागान् वासुकिस्तक्षकश्चैवेत्यादिप्रथमश्लोकपठितान् ॥
 करवीरैः शतपत्रैः जातीपत्रैश्च सुव्रत ।
 तत्रा गन्धप्रधूपैश्च पन्नगान् पूज्य चोत्तमान् ।
 ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चात् छतपाद्यसमीदकैः ॥

कृत्वा तु भोजनं पूर्वं ब्राह्मणानाम् कामतः ।
 विसृज्य नागा प्रीयन्तां ये केचित् पृथिवीतले ॥
 हिमाचले तु ये विन्धे येऽन्तरिक्षे दिविस्थिता ।
 ये नदीषु समुद्रेषु च देषु च सरः सुच ॥
 ये वापीषु तडागेषु तेभ्यः सर्वेषु वै नमः ।
 नागानिति नमस्कृत्य विप्रान् पूज्य विसर्जयेत् ॥
 ततः स्वयञ्च भुञ्जीयात्सहस्रैर्नराधिप ।
 प्रथमं मधुरं भोज्यं स्वेच्छया तदनन्तरं ॥
 एवं नियमयुक्तस्य यत्फलं तन्निबोध मे ।
 मृतो नागपुरं याति पूज्यमानोऽप्यरोगयैः ॥
 विमानवरमारुढो रमते सूर्यपर्ययं ।
 इह वागत्य राजासौ मण्डलाधिपतिर्भवेत् ॥
 सर्वरत्नसमृद्धम् बाहनाद्यैश्च जायते ।
 पञ्चजन्मानि भूपालो द्वापरे द्वापरे भवेत् ॥
 आधिष्याधिनिर्मुक्तः पुत्रपौत्रसहायवान् ।
 तस्मात् पूज्याश्च मान्याश्च हृतपायसगुणैः ॥
 इति भविष्यत् पुराणोक्तमानन्दपञ्चमीव्रतं ।

—000—

सुमन्तुववाच ।

नागदृष्टो नरो राजन् प्राप्य मृत्युं ब्रजत्वथः ।
 अधीगत्वा भवेत्क्षपीं निर्विन्दो मात्र संशयः ॥

शतानीक उवाच ।

नागदष्टः पिता यस्य भ्राता च दुहितापि वा ।
माता पुत्रोऽथवा भार्या कर्त्तव्यं तद्वदस्व मे ॥
मौनाय तस्य विप्रेन्द्र दानं व्रत सुपोषितं ।
ब्रूहि मे द्विजशार्ङ्ग ल येन तद्दे करोम्यहं ॥

सुमन्तुर्वाच ।

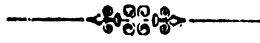
उपोष्य पञ्चमीं सम्यक् नागानां बलवर्द्धनं ।
स्वमेकमेकं यावच्च विधानं शृणु भारत ॥

स्वमेकं, सम्बन्धरम् ॥

मासि भाद्रपदे राजन् शुकपक्षे तु पञ्चमी ।
सापि पुष्कतमा प्रोक्ता ब्राह्मणसौ गतिकाभ्यया ॥
चतुर्थ्यामेकभक्तश्च तस्यां नक्तं प्रकीर्तितं ।
तस्यां पञ्चम्यामुपोष्येति दिवा भोजनवर्जनात् ।
कुर्थ्याञ्चान्द्रमसं नागमन्त्रवा कलधौतजं ।
अथ दारुमयं भव्यं कृष्णयं वाप्यशक्तिः ॥
चान्द्रमसं, सौवर्णं, कलधौतजं, कृष्णमयं ।
पञ्चम्यामर्चयेद्ब्रह्मणा नागं पञ्चफणमवा ॥
करवीरैस्तथा पद्मैः जातीपुष्पैः सुगन्धिभिः ।
गन्धैर्धूपैः सनैवेद्यैः स्नाप्य क्षीरादिभिर्नृप ॥
ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात् छतपायसमोदकैः ।
अनन्तं वासुकिं शङ्खं पद्मं कम्बलमेव च ॥
तथा कर्कोटकं नागं नागमन्त्रतरं नृप ।

धृतराष्ट्रं शङ्खपाशं काशिकं तच्छकं तथा ॥
 पिङ्गलस्य महानागं मासि मासि क्लमाद्यजेत् ।
 पूजयित्वा प्रयत्नेन पञ्चम्यां नक्तभुग्भवेत् ॥
 एवं द्वादश कृत्वा ने मासि भाद्रपदे नृप ।
 बलरान्ते यथाशक्त्वा महाभाष्यन्तु कारयेत् ॥
 ब्राह्मणानां यतीनाञ्च नागानुद्दिश्य भक्तिः ।
 इतिहासविदे नागं काश्चनं रत्नचिचितं ॥
 गाञ्च दद्यात्कवलाब्धे सर्वोपस्करसंयुतां ।
 दानकाले पठेदेतत् स्मरन्मारायणं विभुं ॥
 सर्व्वगं सर्व्वधातारमनन्तमपराजितं ।
 येकेचिन्ने कुले सर्पैः दष्टाः प्राप्तास्तधोगतिं ॥
 प्रतदानेन गोविन्द मुक्तिभाजो भवन्तु ते ।
 इत्युच्चार्याचतैर्युक्तं तिलचन्दनमिश्रितं ॥
 वासुदेवापतो भूयस्तोयं तोये विनिश्चिपेत् ।
 अनेन विधिना सर्व्वे येऽर्चयिष्यन्ति चामृताः ॥
 सर्पतस्तेऽपि यास्यन्ति स्वर्गतिं नृपसत्तम ।
 कृत्वा सर्व्वान् समुद्धृत्य कुलजान् कुलमन्दन ॥
 प्रयाति विष्णुसात्रिभ्यं वेद्यमानोऽप्यरोमणैः ।
 विपत्तशाठ्यविहीनो यः सर्व्वमेतत् फलं लभेत् ॥
 नक्तेन भक्तिसहिताः चितपञ्चमीषु
 ये पूजयन्ति भुजगान् क्लृप्तमोपहारैः ।
 तेषां स्पृहेष्वभयदा हि भवन्ति सर्पा-
 दघ्नान्विता मन्त्रिमयूखविभाषिताङ्गाः ॥

इति भविष्योत्तरपुराणोक्तं नागदष्टोत्तरपञ्चमीव्रतं ।



सुमन्तुववाच ।

तद्गद्गाद्रपदे मासि पञ्चम्यां श्रवणान्वितः ।
यस्ताम्लिख्य नरो नागान् कृष्यावर्षादिवर्षकैः ॥
पूजयेद्बभ्रूपैस्तु सर्पिर्गुग्गुल्लपायसैः ।
तस्य तृष्टिं समायाति पञ्चगास्तच्चकादयः ॥
आसमासकुलात्तस्य न भयं नागतो भवेत् ।
तस्मात्सर्वप्रयत्ने न नागान् संपूजयेद्बुधः ॥
तथा वाश्ययुजे मासि पञ्चम्यां कुजनन्दन ।
कृत्वा कुशमयाच्चागानिन्द्राण्या सह पूजयेत् ॥
नागान्, पूर्वव्रतोत्ताननन्तादीन् ।
शची द्विवाहुः सन्तानमासाहस्ता गलस्थिता ।
घृतोदकाभ्यां पयसा स्नापयित्वा त्रिशास्यते ॥
गोधूमैः पयसा स्निग्धैर्भक्षैश्च विविधैस्तथा ॥
यस्तस्यां विधिवच्चागान् शुचिर्भक्त्या समन्वितः ।
पूजयेत् कुङ्कुमाङ्गुल तस्य शेषादयो नृप ।
नागाः प्रीता भवन्तीह शान्तिमाप्नोति वा विभो ॥
प्रशान्तिलोकमासाद्य मोदते शाश्वतीः समाः ।
यथायं कथ्यते मन्त्रः सदा विघनिषि धतः ॥

ॐ कुङ्कुमे हुं फट् स्वाहा ।

नक्तं न भक्तिमहितं सितपञ्चमीषु

ये पूजयन्ति तुजगान् कुशमीपहारैः ।
 तेषां गृहेष्वभयदा हि भवन्ति नागाः
 सर्वे फणामगिमरौचिरुचो भवन्ति ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं शान्तिपञ्चमीव्रतं ।

—0#0—

ईश्वर उवाच ।

यो नरः पूजयेद्विष्णुं पञ्चम्यां फाल्गुने सिते ।
 पञ्चोपचारविधिना मिताहारो जितेन्द्रियः ॥
 न तं दृशन्ति फणिनो दशवर्षाणि पञ्च च ।
 विषं न क्रमते तस्य कुले मातृकुलेऽपि च ॥
 तस्मात्तं पूजयेद्यज्ञात् पञ्चम्याञ्च विशेषतः ।
 इति स्कान्दे प्रभाषखण्डोक्तमनन्तपञ्चमीव्रतं

—0#0—

ईश्वर उवाच ।

श्रावणे मासि पञ्चम्यां शुक्लपक्षे वरानने ।
 शारभ्योभयतो लेख्याः गोमयेन विषोस्त्वया ॥
 कृत्वा च कौस्तुभावागाविद्रालीच प्रपूजयेत् ।
 हृतीदकाभ्यां पयसा स्नापयित्वा वरानने ॥
 गोधूमैः पयसा पूज्य लाजभिर्विधिस्तथा ।
 पूजयेत् विधिवहेवि दधिदूर्वाङ्गुरैः क्रमात् ॥

गन्धपुष्पीपहारैश्च ब्राह्मणानाञ्च तर्पणं ।
 अथवा श्रावणे मासि पञ्चम्यां श्रद्धयान्वितः ॥
 यच्चालेख्यं नरो नागान् कृष्णवर्णादिवर्णकैः ।
 गुरुकल्पान् तथा वीथ्यां स्वगृहे विलिखेत् वधः ॥
 पूजयेद्बन्धूपैश्च पयसा पायसेन च ।
 तस्य तुष्टिं समायान्ति पद्मकास्तथाकादयः ॥
 आनतमात् कुलं तस्य न भयं नागतो भवेत् ।
 प्रमुञ्चते मन्त्रः सर्पविषञ्च प्रतिषेवकः ॥
 तस्य प्रजपनामे तु न विषं क्षमते सदा ।

ॐ कुकुलं हुं फट् स्वाहा ।

इत्थेवं कथितं देवि नागव्रतमनुत्तमं ॥
 यत् श्रुत्वा च पठित्वा च मुञ्चते सर्वपातकैः ।

इति स्कान्दे प्रभाषखण्डोक्तं सर्पविषापञ्च पञ्चमौव्रतं ।

— ००० —

ईश्वर उवाच ।

मासि भाद्रपदे यापि शुक्लपक्षे तु पञ्चमी ।
 सा तु पुण्यतमा प्रोक्ता ख्याता स्वर्गतिव्याप्तया ॥
 या च हादशवर्षेभ्यः पञ्चम्याश्च वरानने ।
 चतुर्थ्या मेकभक्तान्तु तस्यां नक्तं प्रकीर्तितम् ॥

तस्यां पञ्चम्यां ।

भूरिचन्द्रमयं नागमद्यवा कलघोतजं ।

कृत्वा धातुमयं वापि चक्षवा वृक्षमयं प्रिये ॥
 पञ्चम्यामश्चेत् शतधा नागं पञ्चफलं स्मृतं ।
 करवीरैः शतपत्रैः जातीपुष्पैश्च शोभनैः ॥
 गन्धैः पुष्पैश्च धूपैश्च पूजयेन्नागसुत्तमं ।
 ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चात् दृष्टपायसमीदकैः ॥
 धननमं वासुकिं शङ्खं पद्मकम्बलमेव च ।
 तथा कर्कोटकं नाम नागमश्रतरं नरः ।
 धृतराष्ट्रं शङ्खपालं कालिकं तक्षकं तथा ॥
 पिङ्गलश्च महानागं मासि मासि प्रकीर्तितं ।
 व्रतस्थान्ते पारणं स्यात् क्षीरैर्ब्राह्मणभोजनैः ॥
 सुवर्णतारनिष्यञ्चं नागं दद्याच्च गां तथा ।
 तथा वस्त्राणि देयानि विप्रायामिततेजसे ॥
 पूजयेत्पञ्चगान् सर्वान् सदा भक्त्या समन्वितः ।
 विशेषतस्तु पञ्चम्यां पञ्चम्यां पायसेन च ॥

इति स्कान्दे प्रभाषखण्डे नागपञ्चमीव्रतम् ।

—:०:—

सुमन्तुववाच ।

पञ्चमी सा तिथिर्धन्या सर्वपापहरा शुभा ।
 एतस्यां सर्वतो यस्तु कर्माणि परिवर्जयेत् ॥
 क्षीरेण स्नापयेन्नागान् ते च यास्यन्ति मित्रतां ।

इति भविष्यत्पुराणि नागमैत्रीव्रतम् ।

—000—

सुमन्तुववाच ।

तथा भाद्रपदे मासि पञ्चम्यां त्रहयान्वितः ।
बभूवोऽस्य नरो राजन् क्षत्रवर्षादिवर्षकैः ॥
पूजयेद्बभूवुषैश्च सर्पिभिः फलपायसैः ।
पायसेन वृताङ्गेन पूजयित्वा द्विजोत्तमं ॥
नक्तं स्वयं तदञ्जीयात् यतवाक् भीतमक्षरः ।
तस्य तुष्टिं समायाति प्रसगास्तक्षकादयः ॥
आसप्तसं कुलन्तस्य न भयं नागतो भवेत् ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तमालेख्यप्रश्नमीव्रतम् ।

—000—

पयोव्रतन्तु पञ्चम्यां दत्त्वा नागं द्विजातये ॥
सोवर्षं सर्पजनितं भयं तस्य न जायते ।
एतत् सर्पव्रतं प्रोक्तं सर्वमैत्रीकारं परं ॥
इति भविष्यत्पुराणोक्तं सर्पपञ्चमीव्रतम् ।

—000—

तिलपिष्टमयं कृत्वा गजं हैमविभूषितं ।
कक्षाद्भुज्युतं तददारोहकसमन्वितं ॥
तददिति निरन्तरव्रतोक्तमन्त्रगजस्वरूपं गृह्यते ।

नक्षत्रमालामहितं चामरापीठधारिणं ॥
 दशनाश्रवहनेत्रं रक्तवस्त्रयुगाहृतं ।
 ताम्रपात्रां कुण्डके वा क्षतदन्ताग्रमोदकं ।
 प्रदद्याद्द्विजदम्पत्योः पूज्य मालातिभूषणैः ॥
 कर्णाभरणकं दद्यात् वस्त्रञ्च मलवर्जितं ।
 कान्तारतत्वरतं ह्येतत् कथितं हि युधिष्ठिर ॥
 कान्तारगिरिदुर्गेषु तारयत्यपि दुःखितान् ।
 इह लोके परे चैतन्नात्र कार्या विचरन्ना ॥
 ये कुर्वन्ति दिने पुण्ये व्रतं पौरन्दराह्वयं ।
 तेषां पौरन्दरे लोके वासः स्यात् सुचिरं वृष ॥
 दिनेपुण्ये, पञ्चम्यां प्रकरणवशात् ।

इति भविष्योक्तरोक्तं पौरन्दरव्रतं ।

—000—

लक्ष्मीमभ्यर्च्य पञ्चम्यामुपवासी भवेन्नृपः ॥
 समाप्ते हेमकमलं दद्याद्देवुसमन्वितं ।
 स वैष्णवं पदं याति लक्ष्मीर्जन्मनि जन्मनि ॥
 एतन्नक्षत्रीव्रतं नाम दुःखयोक्त विनाशनं ।

इति यमपुराणोक्तं लक्ष्मीव्रतम् ।

सिताम्न उवाच ।

श्रुतानि देव देवश व्रतानि सुवह्नि च ।
 साम्प्रतं मे समाचक्ष व्रतं पापप्रणाशनम् ॥

ब्रह्मीवाच ।

शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि व्रतानासुत्तमं व्रतम् ।
 ऋषिपञ्चमीति विख्यातं सर्वपापहरं परम् ॥
 येन चीर्षेण राजेन्द्र नरकानि व्यपोहति ।
 अत्रैवादाहरन्तीममितिहासं पुरातनम् ॥
 वैदेहेऽत्र द्विजवर उतङ्घो नामनामतः ।
 तस्य भार्य्या सुशीलेति पतिव्रतपरायणा ॥
 तस्या अपत्ययुगलं पुत्री हि सुविभूषणं ।
 अधीतवान् सुतस्तस्य वेदान् साङ्गपदक्रमात् ॥
 समाने च कुले तेन सुता वापि विवाहिता ।
 विवाहितैव सा देवात् वैधव्यं प्राप सत्वरं ॥
 तां पालयति ह्यास्ते सा सुतानिजपितृर्गृहे ।
 तस्या दुःखेन सन्तप्तः सुतं संस्थाप्य विश्रमि ॥
 गङ्गातीरे वनं प्राप्तः सकलवस्तया सह ।
 स तत्राध्यापयामास शिष्यान्वेदान् द्विजोत्तमः ॥
 सुता बहुमतं तस्य पितुः शृश्रुषणे रता ।
 शृश्रुषणं ततः कृत्वा परिव्रान्ता कदाचन ॥
 निग्रीथे क्लिप्तसंसृता क्लमिराशिरजायत ।
 तद्याविधाञ्च तां दृष्ट्वा विवस्त्रां प्रस्तरम्बिना ॥
 शिष्या निवेदयामासुस्तस्मात्तुः करुणान्विताः ।
 न जानीमी वयं किञ्चिद्देवीं साध्वीं तद्याविधां ॥
 क्लमिराशिरद्योजाता मातः सम्प्रति दृश्यते ।
 व्रजपातसदृशं तत् श्रुत्वा शिष्यैरुदीरितम् ॥

सभ्राह्मणस्य ग्रीष्मं तत्समीपमुपागता ।
 सा तां तथाविधां दृष्ट्वा विललाप सुदुःखिता ।
 उरश्च ताडयामास सुतरां मा भोहमाप च ॥
 क्षणेन प्राप्य चैतन्यं तामुत्थाप्य प्रमृज्य च ।
 समालम्ब्य च बाहुभ्यां निन्ये तत्पितुरन्तिकम् ॥
 स्वामिन् क्रथय मे साध्वी केन दुष्कृतकर्म्मणा ।
 निशीथे संप्रसुप्तयं जायते कृमिसंकुला ॥
 एतत् श्रुत्वा ततो वाक्यमृषिर्ध्यानपरायणः ।
 ब्राह्मी निवेदयामास तस्याः प्राग्जन्मचेष्टितम् ॥

ऋषिरुवाच ।

प्रागियं सममेऽतीते जन्मनि ब्राह्मणी ह्यभूत् ।
 तदभागा द्रुपदे* संजाता च रजस्वला ॥
 अस्या स्तत्पापभावेन जायते कृमिवहपुः ।
 रजस्वला च भावेन युक्ता भवति सानघ ॥
 प्रथमेऽहनि चाण्डाली द्वितीये यामशूकरी ।
 तृतीये रजकी प्रोक्ता चतुर्थेऽहनि शुध्यति ॥
 तथानया सखीसंगाद्गतं दृष्ट्वावमानितम् ।
 दृष्टव्रतप्रभावेन जाता द्विजकुलेऽमले ॥
 अवमानाद्गतस्यास्य कृमिराशिभ्रमाधुना ।
 एतत्ते कथितं सर्व्वं कारणं कन्यकाकृते ॥

सुग्रीकोवाच

दृष्ट्वापि यस्य स्नाहिप्राणां निर्मले कुले ।

* ग प्रामा च साद्रेभ्य इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

जन्मभुक्मद्विधानां हि जायते ब्रह्मतेजसां ॥
 अथ ब्रह्मा प्रजायन्ते विग्रहे कृमिराशयः ।
 महासूर्यकरं नाथ तद्वत् कथयस्व मे ॥

ऋषिरुवाच ।

सुशीले शृणु तत् सम्यक् व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
 येन शीर्षेण महसा पाषादम्मादिमच्छते ॥
 दुःखत्रयाभिघातश्च जायते सात मंगयः ।
 कल्पाणानि विवर्धन्ते सम्पदश्च निरापदः ॥
 नभस्ये ऋक्लपचे तु यदा भवति यञ्चमी ।
 नद्यादिषु तदा स्नानं कृत्वा नियममेव च ॥
 विधाय नित्यकर्मादि गत्वा हारवतीसृषीन् ।
 स्नापयेद्विधिवद्ब्रह्मा पञ्चाष्टतरसैः ऋभैः ॥

वारवती, अग्निहोत्रशाला

धूमनिर्गमहारैर्बहुभिर्युतन्नात् ।

चन्दनागुरुकपूरैर्विस्त्रिभ्य च सुगन्धिभिः ।
 पूजयेद्विभिधैः पुष्पैर्गन्धधूपादिदोषकैः ॥
 समाच्छाद्य शुभैर्वस्त्रैः शोपकोतैर्धर्मविधि ।
 ततो नैवेद्यसंयममर्थं कृत्वाच्छुभैः कलेः ॥

अर्थमन्तः

कथ्यपोत्रिर्मरहाजो विश्रामितस्तु गौनमः ।
 जमदग्निर्वसिष्ठश्च समैते ऋषयः स्मृताः ॥
 श्रोतव्यमिदमाख्यानं शान्ताहारं प्रकल्पयेत् ।
 स्यात्तद्यं ब्रह्मचर्येण ऋद्धिश्चानपरायणैः ॥

अनेन विधिनासम्यम्ब्रतचेतत् समाचरेत् ।
 यस्य यत्प्रायते पुण्यमद्गुण्य समाहितः ॥
 सर्व्वव्रतेषु यत् पुण्यं सर्व्व तीर्थेषु यत्फलम् ।
 सर्व्वदानेषु दत्तेषु तदस्य व्रतपारणात् ॥
 कुरुते या व्रतं चैतन्ना नारी सुखभागिनी ।
 रूपलावण्यसंयुक्ता पुत्रपौत्रादिसंयुता ॥
 इह लोके सदैव स्यात् परत्राप्यक्षया गतिः ।
 व्रतस्यास्य प्रभावेन जातिं स्मरति पौर्व्विकीं ॥
 इति ब्रह्माण्डपुराणोक्तं षष्टिपञ्चमीव्रतम् ।

—0*0—

ब्रह्मीवाच ।

नामानिद्वा तु पञ्चम्यां न विधैरभिभूयते ।
 स्त्रियं च लभते पुत्रं परमां श्रेयमाप्नोति ॥
 मूलमन्त्राः स्वसंज्ञाभिरङ्गमन्त्राद्य कौर्त्तिताः ।
 पूर्व्वं वत् पद्मपत्रस्यः कर्त्तव्यश्च तिथीश्वरः ॥

तिथीश्वरोऽत्र नागः ।

गन्धपुष्पोपहारश्च यथाशक्ति विधीयते ।
 पूजा शठेन शठेन कृतापि तु फलप्रदा ॥
 आज्यधारासमिद्धिश्च दधिक्षोरान्नाच्छिकैः ।
 पूर्व्वोक्तफलदो ह्यमो यतः शान्तेन चेतसा ॥
 एतद्ब्रह्मैश्वानरप्रतिपहतवद्वास्त्रियं ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं नागव्रतम् ।

—000—

षड्वराहसृताज्जातो वातरंहा मनोजवः ।
 उच्चैः श्रवाः पूजनीयश्चैत्रशुक्लपक्षमी ॥
 तत्रैव पूज्या गन्धर्वीस्तुरङ्गाणाम्नाम्नाम्नाः ।
 पञ्चवाचधराः केचित् केचित् पञ्चैव संयुताः ॥*
 भीमश्चित्ररथश्चैव विख्यातः सर्वविद्मम् ।†
 तथा सालिशिराः श्रीमान् प्रद्युम्नश्च महाययाः ॥
 नारदश्च कलिन्दश्च गन्धर्व्यश्च हाहा हुहुः ।
 सुवाहुस्तुम्बुरुश्चैव तथा चित्ररथः प्रभुः ॥
 चित्राङ्गदश्च विख्यातयिषसेनश्च वीर्यवान् ।
 सिद्धपूर्णाश्च ६ देवी पर्यायश्च महाययाः ॥
 ब्रह्मचारी रतिगुणः सुपर्णाऽतिवल्लभा ।
 विश्वावसुः सुरेन्द्रश्च गन्धर्वीऽतिपराक्रमः ॥
 इत्येते पूजनीयाः स्युर्गीतैश्चण्डिकाः शुभैः ।
 गोदकैः पीलिकाभिश्च परमाद्येनषाद्यतैः ॥
 दध्ना गुह्येन पयसा शालिपिष्टेन भूरिशः ।
 धूपैर्माष्यैश्च दीपैर्हिजानां स्वस्तिवाचनैः ॥
 एवं हि पूजिताः सम्यक् तुरगाणां हि बान्धवाः ।
 बलमायुः प्रसृष्टान्ति संप्रामेष्वपराजयम् ॥
 आरोग्यं परमां पुष्टिं तद्यैव च विधीयते ।

* पञ्चवासाः कश्चित् वर्षे लंघुक्त्वा महाययाः इति पुण्डरीकपुराणे पाठः ।

† सर्वविद्मिति शुक्लकामरे पाठः ।

इति शालिहोत्रहयपञ्चमीव्रतम् ।

—000—

सर्वोपध्दकक्षातः पञ्चम्यां पूज्य पञ्चजम् ।
 सर्वोपस्कारदानश्च यः करोति गृहात्मने ॥
 गृहाटोदूखलं शूर्पं शिलां खालीश्च पञ्चमीं ।
 गृहाटः, पेषणयन्त्रं उदूखलं, ध्यान्यकण्डनम् ॥
 उदकुम्भश्च पूषंश्च एतेषामनुगश्च यत् ।
 एतानि गृहिणां गेहे प्रस्थाप्य पुरुषोत्तम ॥
 उपस्कारकृतै नारी न सौदति कदाचन ।
 एतद्गृहव्रतं नाम सर्वसौख्यप्रदायकं ।

इति भविष्योत्तरोक्तं गृहपञ्चमीव्रतम् ।

—000—

पञ्चम्यां पूजनं कृत्वा तथा चन्द्रमसो नरः ।
 आयुश्च विपुलां लब्धीं यश्चाप्यास्य विन्दति ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सौभाग्यव्रतम् ।

—0#0—

पञ्चम्यां पृथिवीं देवीं तथा सम्पूजयेन्नरः ॥
 तमेवाप्नोति यत्ने न नात्र कार्या त्रिचारणा ।

इति विष्णुधर्मोत्तं पृथिवीव्रतम् ।

—000—

विष्णे देवाश्च ये प्रोक्ताः पूर्वंमेव मया दत्तम् ।
 तेषां संपूजनं कृत्वा पञ्चम्यां द्विवमाप्नुयात् ॥

वायु पुराणात् ।

ऋतुर्हृषो वसुः सत्यः कालकामो विरोचनो ।

पुरुषवा भाद्रवाद्यो विष्णो देवाः प्रकीर्त्तिताः ॥

इति विष्णु धर्म्मोत्तरोक्तं रूपावाग्निव्रतं ।

—000—

वाक्चैः पुष्करत्यां यः पूजाचैव समाचरेत् ।

सर्वकाम सम्पत्स्य यज्ञस्य तु फलं लभेत् ॥

वाक्चैः, पुचैः ।

पुष्करं, उत्तमं तथा पूजामपि कुर्यात् ।

इति विष्णु धर्म्मोत्तरोक्तं श्रीप्राग्निव्रतं ।

—:◡:—

चैत्रशुक्लस्य पञ्चम्यां पूजयित्वा यथाश्रियं ।

सकृदेवाङ्गु यादेतत् फलं सम्बन्धरोदितं ॥

इति विष्णु धर्म्मोत्तरोक्तं श्री व्रतम् ।

—000—

उमां मेधां भद्रकालीं तथा काल्यायनीमपि ।

धृतिं स्नाह्यं स्वधामृद्धि मनस्र्यां तथा चमां ॥

सुरभीं देवसेनाञ्च वेलां ज्योत्स्नां तथा शर्चीं ।

गौरीं वरुणपत्नीञ्च धूम्राणीञ्च तथैव च ॥

अभीष्टदेवजननीं देवपत्नीं तथैव च ॥

पूजयन् काममाप्नोति वीतशोकी न संशयः ।

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं कामाचिव्रतं ।

—000—

ऐरावतं वायुतुण्डसुखैःश्रवस मेव च । •

तदा संपूजयन् राजन् विजयं ससुपाश्रुते ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं विजयव्रतं ।

प्रति श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहादेवस्य समस्तकरणा

धीश्वर-सकलविद्याविशारद-श्रीहेमाद्रि-विरचिते

चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे पञ्चमीमत्तानि ।

—————

अथ दशमोऽध्यायः ॥

—000—

अथ षष्ठीव्रतानि ।

अध्यासो सततं यदीयरसना*सिंहासनं भारती
यस्योत्फुल्लमनःसरोजनिसलयं क्षीरोदशायौ विभुः ।
स्नाध्यं दक्षिणपाणिपल्लवतलं यस्यापि कल्पद्रुमी
हेमाद्रिः स निरूपयत्यभिमतं षष्ठीव्रतानां गणं ॥

विक्रान्त उवाच ।

रूपसम्पद्मारोग्यं स्वर्गवासश्च† पुष्कलं ।
प्राप्नुवन्ति नरा येन नियमं तं वदस्व मे ॥

अगस्त्य उवाच ।

साधु साधु महाप्राज्ञ यत् पृष्टोऽहन्वयानघ ।
तत्सर्वं कथयिष्यामि ततः श्रेयो भविष्यति ॥
शुभं पार्थिव वक्ष्यामि सर्वमोक्षप्रदं नृणां ।
यस्य गुप्तं पुरा राजन् ब्रह्म-विष्णुन्देवतैः‡ ॥
असुराणाञ्च सर्वेषां राजसार्गां तथैव च ।
शङ्करेण पुरा चैतत् वक्ष्यन्त्याय निवेदितम् ॥
वक्ष्यन्तेन समाख्यातं महापातकनाशनम् ।

* अध्यासो सप्तमप्रदीपरचनेति पुस्तकालये पाठः ।

† अन्नं धान्येति पाठान्तरं ।

‡ ब्रह्मविष्णुश्च देवतैरिति पुस्तकालये पाठः ।

यत्कृत्वा ब्रह्महा गोघ्नः सुरापो गुरुतल्पगः ॥
 अगारदाही गरदः सर्वपापरतोऽपि वा ।
 मृच्यते सर्वपापेभ्यो व्रतं श्रुत्वा नरोत्तमः* ॥
 सर्वपुण्यं पवित्रञ्च नृणामद्भुतनाशनं ।
 उपकाराय लोकानां तथा तव नृपोत्तम ॥
 शृणु भूप महापुण्यं व्रतमाहात्म्यमुत्तमं ॥
 प्रोष्ठपदाहिते पक्षे षष्ठी भौमेन संयुता ।
 व्यतीपातेन रोहिण्या सा षष्ठी कपिला स्मृता ॥

प्रोष्ठपदी, भाद्रपदः

सचात्र दर्शान्तीयाह्नः, रोहिणीयोगस्य तत्रैव सम्भवात् ।

द्वितीया तु महापुण्या दुर्लभा व्रतिनः क्वचित् ।
 षष्ठी संवत्सरस्यान्ते सा पुनस्तेन संयुता ॥
 चैत्रवैशाखयोर्मध्ये सिते पक्षे शुभोदया ।
 वैशाखेऽपि च राजेन्द्र द्वारवत्यां परा स्मृता ॥
 यदि हस्ते सहस्रांशस्तदा कार्यं व्रतं वधैः ।
 अस्यां चैव द्रुतं दत्तं यत् किञ्चित् प्रतिपादितम् ॥
 तस्य सर्वस्य पुण्यस्य संख्यां वक्तुं न शक्यते ।
 यस्मिन् काले भवेदेतैर्गुणैः षष्ठी युता तदा ॥
 पञ्चम्यामेकभक्तान्तु कुर्यात्तत्र विचक्षणः ।
 पथ्यां प्रातः समुत्थत्य कृत्वादी दन्तधावनम् ॥
 जलपूर्णाञ्जलिं कृत्वा इमं मन्त्रमुदीरयेत् ।
 निराहारीऽथ देवेभ्य त्वद्भक्तस्वर्गपरायणः ॥

* सर्वलोकत्रयं गच्छतीति पाठोऽन्ये

पूजयिष्याम्यहं भक्त्या शरणं भव भास्कर ।
 अर्घ्यं दस्विति संकल्पं कृत्वा तत्र शुचिस्ततः ॥
 स्नानं कृत्वा प्रयत्नेन नद्यां तीर्थेऽथवा ऋदे ।
 तङ्गागे दीर्घिकायां वा गृहे वा नियतात्मवान् ॥
 देवदारु तथोग्रीर कुङ्कुमैः स्ना मनःशिलाः ।
 पत्रकं पद्मकं यष्टीमधु गव्येन पेषयेत् ॥
 चीरेणालोड्य कल्केन स्नानं कुर्यात्समन्वकं ।
 ॐ आपस्त्वमसि देवेश ज्योतिषां पतिरेव च ॥
 पापं नाशय मे, देव वाङ्मनःकायकर्म्मजम् ।
 पञ्चगव्यकृतस्नानः पञ्चभङ्गैस्तु माञ्जयेत् ॥

पञ्चभङ्गैः, पञ्चपल्लवैः ।

आनयेन्मृत्तिकां शुद्धां स्नानार्थन्तु प्रयत्नतः ।
 मृत्तिके ब्रह्मपूतासि काश्यपेनाभिमन्त्रिता ॥
 पवित्रं कुरु मां नित्यं सर्वपापात्ममुद्धर ।
 मन्त्रेणानेन वरुणं पूजयेद्दक्षिमाक्षरः ॥
 पाशाग्रहस्त बरुण सर्व्ववारौक्षर प्रभो ।
 अद्याहं प्रार्थयामि त्वां पूतं कुरु सुरेश्वर ॥
 आदित्यो भास्करो भानूरविः सूर्यो दिवाकरः ।
 प्रभाकरोऽसि तिमिरो देवः सर्व्वेश्वरो हरिः ॥
 गोमयेनामुल्लिप्तायां भूम्यां वै कुङ्कुमेन तु ।
 मण्डलं सर्व्वतोभद्रमालिखेद्दक्षिमाक्षरः ॥
 तत्र मध्ये लिखेत्पद्मसृष्टपत्रं सकर्मिकं ।

पूर्वपत्रे न्यसेत् सूर्यमाग्नेये तपनं न्यसेत् ।
 सुवर्णुरेतसं याम्ये भैर्ऋत्ये च न्यसेद्भुवि ॥
 आदित्यं वारुणे पत्रे वायव्ये च दिवाकरं ।
 सौम्ये प्रभाकरं तत्र सूर्यमीशानपत्रके ॥
 तीव्ररश्मिधरं देवं ब्रह्माणशैव विन्यसेत् ।
 आधाररूपिणं देवं मध्यन्तु वरुणं न्यसेत् ॥
 सहस्ररश्मिं सूर्यश्च सूर्यस्य गुणान्वितं ।
 सर्वगं सर्वरूपश्च मध्ये भास्कारमेव च ॥
 सप्तारम्भमाकृतं पद्महस्तं दिवाकरं ।
 अक्षसूत्रधनुःपाणिं कुण्डलैर्मुकुटेन च ॥
 रत्नैर्नानाविधैर्युक्तं सौवर्णं तत्र कारयेत् ।
 शक्तिस्तप्तु पलादूर्ध्वं तदर्धं कर्षतोऽपि वा ॥
 सौवर्णमाकृतं कुर्यात् रौक्मश्चैव तथा रथं ।
 सप्तारम्भैर्भूषितं कृत्वा रथं तस्यायतः स्थितं ॥
 अरुणं विनतापुत्रं गृह्णीताश्वमनूषकं ।
 एवं रूपं रथं कृत्वा पद्मस्योपरि विन्यसेत् ॥
 तस्योपरि न्यसेद्देवं रत्नवस्त्रविभूषितं ।
 रत्नचन्दनमाख्यादिमण्डितं वातियोभितं ॥
 अथतः सारथिं कृत्वा पूजयेद्दक्षं शुचिः ।
 रत्नपुष्पैः शुक्यैश्च तद्यान्यैरपि शक्तितः ॥
 ॐ विनतातनयो देवः कर्मसाक्षी तमोनुदः ।
 सप्तारम्भः सप्तारम्भश्च अरुणो मे प्रसीदतु ॥
 मन्त्रेणानेन संपूष्य सारथिं तद्दन्तरं ।

देवस्य वाचनं कल्प्य प्रभृतादिकपञ्चकं ॥
 प्रभृतं विमलं सारमाराध्यं परमं शुभं ।
 दीप्ताभिः शक्तिभिश्चैव ततोभानुं प्रपूजयेत् ॥
 दीप्ता सुख्या तथा भद्रा विनता विमलानघा ।
 अमोघा वैद्युताचेति नवमी सर्वतीमुखी ॥
 अपवित्रः पवित्रोवा सर्वविद्यां गतोऽपि वा ।
 यः स्मरेद्भास्करं देवं स वाङ्माभ्यन्तरः शुचिः ॥
 शिखायां भास्करं न्यस्य ललाटे सूर्यमेव च ।
 चतुर्भुजं न्यसेद्भानुं सुखे तत्र रविं न्यसेत् ॥
 कण्ठे न्यसेद्भानुमन्तं पद्मगर्भं द्विजङ्घयोः ।
 तिमिरं क्षयकहे वं स्नानयोरेव विन्यसेत् ॥
 जातवेदीभिर्धनं नाभ्यां कटां भानुं तथा न्यसेत् ।
 उपसृष्ट्यं गुणदेशे तेजोरूपं द्विजङ्घयोः ॥
 पादयोः सर्वं रूपं तु सूर्यसूत्रगुणान्वितं ।
 एवं यद्योक्तं विन्यस्य पात्रं षट्पत्रं तथा चयेत् ॥
 करपीरार्ककुसुमैरत्नचन्दनचम्पकैः ।
 पुष्पैः सुगन्धैर्धूपैश्च कुङ्कुमैरुपशोभितं ॥
 मार्शच्छं भानुमादित्यं भास्करं तपनं रविं ।
 हंसं दिवाकरं चेति पादतो मुकुटावधि ॥
 पादौ जङ्घे तथा जानुद्वयमूर्ध्वा कटिन्तथा ।
 नाभिवक्षस्त्रसं शीर्षमितेष्वङ्गेषु पूजयेत् ॥
 शानयेद्व्यं पात्रन्तर्द्वीप्यं वा ताम्रमेव च ।
 अर्घ्यार्घ्यं देवतं पात्रमुदकोन प्रपूरयेत् ॥

पूजयेत्तत्र प्रागादिदेवतास्ताः समाहितः ।
 द्विग्देवतास्ततः पूज्य गन्धपुष्पाशुलीपनैः ॥
 पात्रे तीर्थं समादाय सपुष्पं फलचन्दनं ।
 जानुभ्यामवनीं गत्वा सृष्ट्वायाध्वं^१ निवेदयेत् ॥
 वेदगर्भं नमस्तुभ्यं वेदगर्भं नमोस्तु ते ।
 अथ्यक्तमूर्त्तये तुभ्यमर्घ्यं गृह्ण नमोस्तु ते ॥
 ब्रह्ममूर्त्तिधरोमिश चतुर्वक्त्रं सनातन ।
 सृष्टिस्थितौ संस्थिताय गृह्णाथाघ्रं^२ नमोस्तु ते ॥
 विष्णुरूपधरो देवः पीतवस्त्रचतुर्भुजः ।
 प्रभवः सर्वलोकानामर्घ्यं गृह्ण नमोस्तु ते ॥
 यं रुद्ररूपिणं देवं भगवन्तं त्रिशूलिनं ।
 यो दृष्टे च त्रिलोके वै अर्घ्यं गृह्ण नमोस्तु ते ॥
 त्वं ब्रह्मा त्वञ्च विष्णुश्च रुद्रस्त्वञ्च प्रजापतिः ।
 त्वमेव सर्वभूतात्मा अर्घ्यं गृह्ण नमोस्तु ते ॥
 कालात्मा सर्वभूतात्मा वेदात्मा सर्वतीमुच्चः ।
 जन्ममृत्युजराशोकसंसारभयनाशनः ॥
 हरिद्रव्यसनध्वंसी श्रीमान् देवो दिवाकरः ।
 सुवर्णस्फटिको भानुः स्वर्चरेता दिवाकर ॥
 हरिदम्बोऽंघ्रमाली च अर्घ्यं गृह्ण नमोस्तु ते ।
 चतुर्भिर्मूर्त्तिभिः संख्यामष्टाभिः परिगीयते ॥
 चतुर्भिर्मूर्त्तिभिः संख्यामष्टाभिः परिगीयते ।
 सामध्वनिस्तयो यज्ञे अर्घ्यं गृह्ण नमोस्तु ते ॥
 अथ यन्त्रञ्च पुष्पञ्च तथा धूपञ्च दीपकं ।

नैवेद्याद्य यथाशक्त्वा प्रार्थयेद्भूर्देवतां ॥
 अग्निमीले नमस्तुभ्यं नमस्ते जातवेदसे ।
 ईशे चैव नमस्तुभ्यमग्ने चैव नमोनमः ॥
 शची देवी नमस्तुभ्यं जगज्जम्ब नमोनमः ।
 आत्मरूपिणमस्तुभ्यं विश्वमूर्त्तं नमोनमः ॥
 त्वं ब्रह्मा त्वच्च वै विष्णुस्त्वन्माता त्वं हुताशनः ।
 मुक्तिकाममभीष्टागामि प्रार्थयामि सुरेश्वर ॥
 विश्वतश्चक्षुराख्यातो विश्वतश्चरचानन ।
 त्रिश्चाल्ना सर्व्वतो देवः प्रार्थयामि सुरेश्वर ॥
 इति मन्त्रं समुच्चार्य्य नमस्कुर्व्वीत भस्करं ।
 संवच्चैवेति पाणिभ्यां तोयेन विक्रजेभ्युखं ॥
 चंसः शुचिषदित्यृषा सूर्यास्यै वाबलीकनं ।
 उदुत्यं चिचमित्येतत् सृक्तं देवाग्रतो जपेत् ॥
 प्रथमे चैवकोणे तु फलश्चैव च कारयेत् ।
 फलेः पुष्पैरक्षतादिभस्त्रैर्नानाविधैरपि ॥
 शय्यां तत्र च देवस्य शुभे देशे प्रकल्पयेत् ।
 षट्धान्यं षड्रसं देवं रौप्यञ्चैव महाप्रभुं ॥
 पुरुषं खड्गहस्तश्च कारयेच्चैव बुद्धिमान् ।
 वस्त्रयुग्मेन सख्यन्वं सवणोपरि विन्यसेत् ॥
 अनेनैव च मन्त्रेण ज्ञानमर्घार्चनन्ततः ।
 नमस्ते क्रोधरूपाय खड्गहस्तजिघांसवे ॥
 जिघांसकामस्त्वां दृष्ट्वा शुद्धुवुः सर्व्वदेवताः ।
 त्वया व्याप्तं मेरुपृष्ठं चण्डभास्करसुप्रभं ॥

अतस्त्वं पूजयिष्यामि अर्घ्यं गृह्ण नमोस्तु ते ।
 अथयित्वा ततो रात्रिं गीतवादिभनिस्त्रने ॥
 ततस्त्वभ्यदिते सूर्ये होमं कुर्यात् स्वशक्तिः ।
 पूजयेत्तत्र शक्त्या च देवांश्च विधिवद्भुक् ॥
 होमोऽर्कस्य समिद्भिश्च घृतमिन्द्रै स्तिलैस्तथा ।
 संसिद्धचरकश्चैव घृतञ्च जुहुयात् द्विजः ॥
 पातकान्नेतिमन्त्रेण शतमष्टोत्तरं शतं ।
 होमो व्याहृतिभिश्चाथ स्त्रिष्टकत्तदनन्तरं ।
 कपिलां पूजयेद्देवीं सवत्सां पापनाशिनीं ॥
 वस्त्रयुग्मां सघण्टाञ्च स्वर्णशृङ्गविभूषितां ।
 सुवर्णास्यां रौप्यसुरां कांश्वदोहनकल्पितां ॥
 मन्त्रेणानेन तां दद्याद्वास्त्रणाय च शक्तिः ।
 कपिले सर्वदेवानां पूजनीयासि रोहिणी ॥
 सर्वतौर्धमयी यस्मादतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
 या लक्ष्मीः सर्वदेवानां या च देवेष्ववस्थिता ॥
 धेनुरूपेण सा देवी मम शान्तिं प्रयच्छतु ।
 देहस्या या च रुद्राणां शङ्करस्य च या प्रिया ॥
 धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु ।
 विष्णोर्ध्वक्षसि या लक्ष्मीः स्वाहा चैव विभावसोः ॥
 चन्द्रार्कानलशक्तिर्या धेनुरूपास्तु सा त्रिये ।
 चतुर्मुखस्य या लक्ष्मीर्या लक्ष्मीर्धनदस्य च ॥

• शान्तिं प्रयच्छतु इति पुस्तकान्तरेपाठः ।

सङ्कीर्षां लोकपालानां सा धेनुर्वरदास्तु मे ॥
 स्वधा त्वं पिबन्मुख्यानां स्वाहा यज्ञभुजामपि ।
 वषट् या प्रीचते लोके सा धेनुस्तुष्टिदास्तु मे ॥
 गावो मे भयतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः ।
 गावो मे हृदये सन्तु नवां मध्ये वसाम्यहम् ॥

गोपूजनमन्त्रः ।

गावः स्यूहा नमस्कृत्य यो वै कुर्यात् प्रदक्षिणं ।
 प्रदक्षिणीकृता तेन सप्तद्वीपा वसुन्धरा ॥
 नमस्ते कपिले देवि सर्वपापप्रणाशिनि ।
 संसारार्थवन्धनं मां शोभातस्त्रातुमर्हसि ॥

गोदानमन्त्रः ।

हिरण्यगर्भगर्भस्वं हेमवीजं विभावसीः ।
 अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥

असह्यारदानमन्त्रः ॥

रत्नवस्त्रयुगं यस्मादादित्वस्य च वक्त्रभम् ।
 प्रदानात्तस्य मे सूर्य्य भतः शान्तिं प्रयच्छतु ॥

वस्त्रदानमन्त्रः ।

सुवर्णं वस्त्रयुग्मञ्च परिधानं च कारयेत् ।
 सुवर्णमसह्यारं परिधानं यथास्थानघृतं कारयेत् परिघाटकेण ॥
 एतैः प्रकारैः संयुक्तां दद्याद्देवुं दिजातये ।
 भानुं सदक्षिणं दद्यात्तन्मे यानेन यज्ञतः ॥*

* कपिलां कपिलवर्णीं च त्रेणुं दद्यात् त्रनस्त्रापि देवतास्त्वल्पमिति कथितं
 पञ्चवाक्ये पाठः ।

भास्करो विधितो जातो द्रव्यस्यो भास्करः स्वयम् ।

भास्करस्य प्रदाता च तेन वै भास्करो मम ॥

दानमन्त्रः ।

भास्करं प्रतिगृह्णामि भास्करो वै ददाति च ।

भास्करस्तारकीभाभ्यां तेन वैभास्करो मम ॥

प्रतिग्रहमन्त्रः ।

ब्राह्मणान् भोजयेत्पत्यात्यायसेन गुह्येन च ।

शक्त्या च दक्षिणां दद्यात्तेभ्यश्चैव विशेषतः ॥

अल्पवित्तोऽपि यः कश्चित् सोऽपि कूर्वादिमं विधिं ।

आत्मशक्त्यनुसारेण सोऽपि तत्फलमाप्नुयात् ॥

आचार्यस्य ततो भक्त्या सर्व्वप्राणैर्विनिक्षिपेत् ।

गोभूहिरण्यवासांसि त्रीहृशो लवणं तिलाः ॥

एतत्सर्व्वं प्रदत्त्वा च कपिलां प्रार्थयेत्ततः ।

कपिले पुण्यकर्मासि निष्पापे पुण्यकर्माणि* ॥

मां समुहर दौर्नं वाददती ह्यभयं कुरु ।

अददती अदातुरपि ।

दिव्यवादित्रशब्दैश्च सेव्यसे कथिता सदा ।

तथा विद्याधराः सिद्धा भूतनागगणा यक्षाः ॥

कपिला रोमसंख्यातास्तत्र देवाः प्रतिष्ठिताः ।

पुण्यदृष्टिं प्रमुञ्चन्ति नित्यमाकाशमास्थिताः ॥

ब्रह्मणोत्पादिता देवी अग्निकुण्डा तु सुप्रभा ।

नमस्ते कपिले पुण्ये सर्व्वदेवनमस्सते ॥

* पुण्यवर्धनीति पुण्यकालरे पाठः ।

अथ नित्यमहासत्वे सर्वतौर्बाह्मिण्युक्ते ।
दातारं स्वजनोपेतं ब्रह्मलोकं नयाद्य वै ॥
दातारं व्रताङ्गानां ।

प्रदक्षिणं ततःकृत्वा नत्वा ब्राह्मणपुङ्गवान् ।
आशीर्वादान्बदेयुस्ते पुत्रपौत्रधनानमान् ॥
आरोग्यं रूपसौभाग्यं सर्वदुःखविवर्जितः ।
अन्ते गोलोकमासाद्य चिरायुः सुखभाग् भवेत् ॥
यदा स्वर्गात् प्रपतति राजा भवति धार्मिकः ।
सप्तहोपवतीं भुङ्क्ते भुङ्क्ता राज्यमकण्ठकम् ॥
अहो व्रतमिदं पुण्यं सर्वदुःखप्रयाशनम् ।
अतः परं प्रवक्ष्यामि दानस्य फलसुप्तमम् ॥
महावेदमये पात्रे सहृत्ते चाक्षयं भवेत् ।
व्रतं सर्वव्रतत्रैष्ठमिदमप्रमं मह्यफलं ॥
तारयिष्यति दातारं नूनमक्षयमव्ययम् ।
एवं देवगणाः सर्वे भूतसंघासहर्षिताः ॥
आकाशस्थाः प्रनृत्यन्ति पुण्येऽस्मिन् दिवसागमे ।
पात्रभूताय ऋषये श्रीचिदाय कुटुम्बिने ॥
एवं यः कपिलां दद्यात् विभ्रिदृष्टेन कर्म्मणा ।
स याति परमं स्थानं यावन्न च्यवते पुनः ॥

स्तान्दे प्रभासखण्डे तु विशेषः ।

उपलिप्ते श्रुते देशे पुष्याक्षतविभूषिते ।

स्थापयेद्व्रणं कुम्भश्चन्दनोदकपूरितं ॥

पञ्चरत्नसमायुक्तं दूर्वापुष्पाक्षतान्वितम् ।
 रत्नवस्त्रयुगच्छत्रं तान्त्रपात्रेषु संयुतम् ॥
 रथो रौक्मफलस्यैव एकचक्रः सुचिचितः ।
 सौवर्णफलसंयुक्ता मूर्तिः सूर्यस्य कारयेत् ॥
 कुम्भस्योपरि संस्नाप्य गन्धपुष्पैस्तुष्टार्चयेत् ।
 आदित्यं पूजयेद्देवं नामनिः स्वैर्यथोदितैः ॥
 आदित्य, भास्कर, रवे भानो सूर्यं दिवाकर ।
 प्रभाकर नमस्तुभ्यं संसाराणां समुदर ॥
 मुक्ति मुक्ति प्रदो यस्मान्तस्माच्छान्तिं प्रयच्छ मे ।

प्रार्थनमन्त्रः ।

नमो नमस्तो वरद ऋक्सामयजुषां पते ।
 नमस्तो विश्वरूपाय विश्वधात्रे नमो स्तुते ॥
 एवं संपूज्य विधिवद्देवं देवं दिवाकरम् ।
 पूजयेत् कपिलां धेनुं वस्त्रमाण्यामुलेपनैः ॥

दानमन्त्रः ।

दिव्यमूर्तिर्जगत्सुहार्दशाखा दिवाकरः ।
 कपिलासहितो देवो मम मुक्तिं प्रयच्छतु ॥
 तस्मात्त्वं कपिले पुण्या सर्वलोकस्य पावनी ।
 प्रदत्ता सह सूर्येण मम मुक्तिप्रदा भव ॥
 इति स्कन्दपुराणोक्तं कपिलाषष्ठीव्रतम् ।

—०*०—

ईश्वर उवाच ।

चैवशुक्लाक्षभारश्च व्रतार्थमधुनीष्यते ।
 उपोष्य विधिना षष्ठीं विशेषात् षष्मुखं धजेत् ॥

नृस्ययीं प्रतिमां रस्यां तदां कुर्व्याद्विशेषतः ।
 वषमुखं द्वादशभुजं बालवत् काञ्चनप्रभम् ॥
 मयूरवाहनं देवं सौम्यं लावण्यपूरितम् ।
 शक्तिघण्टा पताकास्त्र पाशकुक्कुटभूषितम् ॥
 दण्डाभयं सवरदं खड्गं पुधिगरासनम् ।
 संपूज्य परया भक्त्या शुक्लपुष्पोपचारकैः ॥
 नैवेद्यं गन्धवस्त्राणि शुक्तान्येव प्रदापयेत् ।
 ब्राह्मीरसं समादाय कपिलाज्यपलं तथा ॥
 सारस्वतमनुनामन्वा सहस्राष्टोत्तरेण तु ।

सारस्वतमनुना सरस्वतीमन्त्रेण ।
 आचार्यं पूजयेद्गन्धैश्च वस्त्रहेमाक्षवाहनैः ।
 ब्राह्मीरसघृतं पद्माङ्गताम्बे प्राशनं हितम् ॥
 मासि मासि प्रकर्त्तव्यं यावत्सम्बत्त्रावधि ।
 ब्रह्मचर्येण शुचिना षड्भेकं समाचरेत् ॥
 महाकविर्भवेत्सोऽपि भुवि वाचस्पतिर्यथा ।
 सकृद्ब्रह्माति शस्त्राणि वादिनां मूर्ध्नि तिष्ठति ॥
 रक्षोविनायकास्तस्य न हिंसन्ति कदाचन ।
 स्कन्दग्रहा महाघोरास्तथापस्मारदुर्गहाः ॥
 न हिंसन्ति महासेनव्रतस्यास्य प्रभावतः ।
 इदं व्रतोत्तमं त्रैलोक्यं भूतिवर्द्धनम् ॥
 षण्मुखं पार्वतीपुत्रं गुह्यं स्कन्दं कुमारकम् ।
 कार्त्तिकेयं तथा बालं तथा क्रौञ्चनिस्तदनम् ॥
 तारकारातिसंज्ञं च तथाभ्यं क्षत्तिकामृतं ।

वैशाखश्च विशाखश्च मासि मासि प्रपूजयेत् ॥
 सूर्यं सूर्यकलायुक्तं ग्रथिना सूर्ध्वं भूषितम् ।
 क्रमिण मन्त्रा वोढव्या द्वादशानां शिखिध्वज ॥
 इति कालोत्तरोक्तं कुमारषष्ठीव्रतम् ।

—०३०—

स्नान्दलवाच ।

प्राप्तारण्यं च राजानं धर्मपुत्रं युधिष्ठिरम् ।
 कदाचिदाययौ द्रष्टुमुर्ध्वासो मुनिसत्तमः ॥
 तं पप्रच्छमहातेजा धर्मसूनुः कृताञ्जलिः ।
 तद्व्रतं श्रोतुमिच्छामि कर्तुञ्च मुनिसत्तम ॥

दुर्ध्वासो उवाच ।

मृगु राजन्महाभाग व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
 अस्तीह यञ्चीर्णमात्रात् सर्वकामास्तु पूरयेत् ॥
 सर्वपापक्षयं कुर्यादखण्डितव्रतीह्यपि ॥
 यदि लभ्येत जीवेऽङ्गि दैवेन नृपसत्तम ॥
 षष्ठी भाद्रपदे शुक्ला वैधृतेन समन्विता ।
 विशाखा भौमयोगेन साचम्पेतीह विद्युता ॥
 देवासुरमनुष्याणां दुर्लभा षष्टिहायनी ।
 कृते त्रेतायां पञ्चाशहायनी द्वापरे पुनः ॥
 चत्वारिंशत् कलौ त्रिंशहायनी दुर्लभा ततः ।
 आदौ कृतयुगे पूर्व्यां या चीर्णा विश्वकर्माया ॥
 तत्फलसाहस्रकटैर्त्वं प्राजापत्यमवाप्तवान् ।

• अचक्षित व्रताचपि इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

पृथुना कार्त्तवीर्येण भुवा नारायणेन च ॥
 ईश्वरेणोमया सार्द्धमितरेतरलिष्यया ।
 यद्यैनां विधिवत् कुर्यात् सोऽनन्तं फलमश्नुते ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

तद्विधिं श्रोतुमिच्छामि विस्तराद्भद्रतो मुने ।
 के मन्त्राः के च नियमाः सापि किंलक्षणा भवेत् ॥

दुर्वासा उवाच ।

द्विद्वैवत्यर्चनीभेन वैष्टेन समन्विता ।
 नभस्ये वासिता षष्ठी सा चम्येति निगद्यते ॥

द्विद्वैवत्यर्चं विशाखा ।

पञ्चम्यां नियमद्वय्यादुपवासस्य च व्रती ।
 उपवासस्याङ्गभूतनियममेकभक्तं कुर्यादित्यर्चः ॥
 चम्पाषठीव्रतं कुर्याद्यद्योक्तवचनाद्गुरोः ।
 ततः प्रभाते विमले दन्तधावनपूर्वकम् ॥
 कृत्वा सम्यक् व्रतं तस्य सङ्कल्पं कुरुते नरः ।
 सम्यक्कृत्वा सर्वाङ्गोपेतव्रतनिःपादनशक्तिं निर्वाय्यै ॥

निराहारीऽथ देवेश त्वङ्गस्तत्परायणः ॥

पूजयिष्याम्यहं भक्त्या शरणं भव भास्कर ।

संकल्पमन्त्रः ।

ततः स्नानं प्रकुर्वीत नद्यादौ विमले जले ।
 सृद्मालम्ब्य मन्त्रैश्च तिलैः शृङ्गैश्च मन्त्रवित् ॥
 सावित्रः परमस्त्वं हि परं धाम जले मम ।
 त्वत्तेजसा परिभ्रष्टं पापं यातु सहस्रधा ॥

प्राथममन्त्रः ।

आपस्वमसि देवेशज्योतिषां पतिरेव च ।

पापं नाशय मे देव वाङ्मनःकर्षाभिः कृतम् ॥

ज्ञानमन्त्रः ।

ततः सन्तर्पयेद्देवाः कृषीन् पितृगणानपि ।

ततश्चेत्य षट्क्षं मौनी पाषण्डालापवर्जितः ॥

स्थण्डिलं कारयेत्कुम्भश्चतुरस्रं सुशोभनम् ।

स्थापयेद्द्रव्यं कुम्भं पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥

रत्नवस्त्रयुगच्छत्रं रत्नचन्दनचर्चितं ।

तस्योपरि न्यसेत्पात्रं सोवर्णं तास्त्रमेव वा ॥

कुङ्कुमिन लिखेत्पद्मं ह्यद्धारं सकर्णिकं ।

तस्योपरि न्यसेत् सूर्य्यं सोवर्णं सरधारणम् ॥

शक्त्या वा वित्तसारेण वित्तशठप्रविवर्जितः ।

तमर्चयेन्न्यपुण्यैर्विधिमन्त्रपुरःसरं ॥

पञ्चावृतेन स्नपनं कुर्यादर्कस्य संयतः ।

ततस्तु गन्धतोयेन परां पूजां समाचरेत् ॥

यन्मैर्नानाविधैर्द्विष्टैः कर्पूराशुक्कुङ्कुमैः ।

फलैस्तदनु सन्धूतैरनेकैश्च सुगन्धिभिः ॥

मण्डपं कारयेत्तत्र पुण्यमासाविभूषितम् ।

यथाशोभं प्रकुर्वीत अथस्योपरिसर्व्वतः ॥

ततस्तु पूजयेद्देवं भास्करं कामस्योपरि ।

आदित्याय नमः । तपनाय नमः । पुण्ये नमः । भानुमते नमः ।

भानवे नमः । अश्विणे नमः । विश्ववक्त्राय नमः । अंशुमते नमः ।

व्रतखण्डं १० अध्यायः । १ हेमाद्रिः ।

५८३

सहस्रांशवे नमः । खनीयकाय नमः । सुकरायनमः । सूर्याय
नमः । खगाय नमः ।

एषु प्रथमेन मन्त्रेण मध्ये पूजनं इतरैर्हीदृशभिः

पूर्वादिदशक्रमेण पूजनम् ।

आदित्यपूजामन्त्रः ।

जन्मान्तरसहस्रेण दुष्कृतं यन्मया कृतं ।

तत् सर्वं नाशमायातु दिवाकर तवार्चनात् ॥

प्रार्थनमन्त्रः ।

विनतातनयो देवः कर्मसाक्षी तमोनुदः ।

समाद्यः समरञ्जस्य अरुणो मे प्रसीदतु ॥

रथपूजामन्त्रः ।

ततः संपूजयेद्देवमश्रुतमन्त्रद्वयस्थितं ।

अष्टाक्षरेण मन्त्रेण गन्धपुष्पादिभिः क्रमात् ॥

अष्टाक्षरो, छण्डिभन्त्रः सम्प्रदायादवगन्तव्यः ।

कालात्मा सर्वभूतात्मा वेदात्मा विश्वतोमुखः ।

जन्म-मृत्यु-जरा-रोग-संसारभयनाशनः ॥

सूर्योदये अर्धमन्त्रः ।

ततः संपूजयेच्छुक्लां सवक्षां गां पयस्विनीं ।

सवस्त्रकण्ठाभरणां सृष्टवष्टाभिरलङ्कृतां ॥

ब्रह्मण्योत्पादिते देवि सर्वपापविनाशिनि ।

संसारार्थवमन्त्रं मां गोमातस्त्रातुमर्हसि ॥

(७५)

सुररूपा बहुरूपाश्च मातरो लोकमातरः ।
 गावोमासुपसर्पन्तु सरितः सागरं यथा ॥
 या लक्ष्मीः सर्वदेवानां या च देवेषु संस्थिता ।
 धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु ॥
 या लक्ष्मीर्लोकपालानां या लक्ष्मीर्धनदस्य च ।
 चन्द्रार्कशक्रशक्तिर्या सा धेनुर्वरदास्तु मे ॥

धेनुपूजामन्त्रः ।

तिलह्रीमं ततः कुर्यात् सावित्रग्राष्टीत्तरं शतम् ।
 ततस्तां कल्पयेद्देनुमर्की मे प्रीयतामिति ॥
 आचार्याय ततो दद्यादादित्यं सरथाक्षयं ।
 सकुम्भरत्नवस्त्रैश्च सर्वोपस्करणैः सह ॥
 ददामि भानुं भवते सर्वोपस्करसंयुतं ।
 मनोभिलषितावासं करोतु मम भास्करः ॥

दानमन्त्रः ।

मृत्त्वामि भास्कर रवे अनन्त विश्वतो मुख
 मनोऽभिलषितावाप्तिमुभयोः कर्तुमर्हसि

प्रतिग्रहमन्त्रः ।

सर्वतीर्थमयीं धेनुं सर्वयज्ञमयीं शुभां ।
 सर्वदानमयीं देवीं ब्राह्मणाय ददाम्यहम् ॥

गोदानमन्त्रः ।

मृत्त्वामि सुरभिं देवीं सर्वयज्ञमयीं शुभां ।

उभौ पुनीहि वरदे उभयोस्तारिका भव ॥

प्रतिग्रहमन्त्रः ।

ततस्तु भोजयेद्विप्रान् द्वादशैव स्वशक्तितः ।
 दद्याच्च हस्त्रिणां तेभ्यः प्रणिपाद्य विसर्जयेत् ॥
 अवैकल्पं व्रतं तस्य सा धेनुर्हिजसत्तमः ।
 अभिनन्दतु श्लाशीर्भिरभिरस्येरनिन्दिता ।
 ततस्तु स्वयमश्रीयात् द्विजानां शेषमिष्टवान् ॥
 सह पुत्रैः कलत्रैश्च अन्यैर्बहुजनैवृतः ।
 एवं यः कुरुते चम्यां सोऽत्यन्तं फलमश्नुते ॥
 प्रभूणाञ्चबिधिः प्रोक्तस्तत्प्रभूणाञ्च गोचरः ।
 सर्वज्ञैर्दत्तं कार्यं स्वशक्त्या दुःखभीरुभिः ॥
 प्रभुः प्रथमकल्पस्य योऽनुकल्पेन वर्त्तते ।
 विफलं तस्य तत्र स्यादनीशस्वानुकल्पिकः* ॥
 पञ्चम्यां निवसं कुर्यादाचार्यवचनाद्भृती ।
 षष्ठां ज्ञानं प्रकुर्वीत सन्तर्प्य पित्रदेवताः ॥
 अध्येत्य स्वगृहं मौनी सूर्य्यं मनसि चिन्तयेत् ।
 स्वापयेदन्नं कुम्भं सृत्याञ्च तथोपरि ॥
 तस्योपरि न्यसेत् सूर्य्यं पलेकेन विनिर्मितम् ।
 सोदर्यं भक्तिसंयुक्तं विससारंगं तद्यारुणं ॥
 तमर्चयेज्जगन्नाथं गृहीत्वान्नां गुरोः स्वयम् ।
 षडक्षरेण मन्त्रेण गन्धपुष्पानुसन्धवम् ॥

* न साध्वराधिकं तस्य दुर्भतेच्छिद्यते चक्षुषिणि पाठान्तरं ।

† विषमशास्त्रमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ॐ नमः सूर्यायेतिमन्त्रः ।

संपूज्य विधिवद्देवं फलपुण्यादिकञ्च यत् ।
 सूर्यायावेदयेत् सर्वं सूर्यो मे प्रीयतामिति ॥
 ततः प्रभाते विमले गत्वा गुरुगृहं व्रती ।
 सर्वोपकरणैः सूर्यमाचार्याय निवेदयेत् ॥
 धान्यं पुष्पं फलं वस्त्रं रत्नं गवादिकञ्च यत् ।
 गवां कोटिसहस्रेण कुरुक्षेत्रेऽर्कपर्वणि ॥
 चम्पादानस्य राजेन्द्र कलां नार्हन्ति षोडशीं ।
 सर्वतौर्षप्रदानानि तथान्यान्यपि षोडश ॥
 चम्पायास्तुलना पार्थ चम्पैकाल्तिरिच्यते ।
 आदित्यस्तपनः पूषा भानुमान् भानुरर्थमा ॥
 विश्ववक्त्रोऽशुमान् * देवः सहस्रांशुः खनायकः ।
 सूरःसूर्यः खगः पूज्यः पूर्वपश्चादिषु क्रमात् ॥
 देवद्वयं शुभमतो विशेषणं ।

आदित्यो मध्ये पूज्यस्तपनादयः पूर्वपश्चादिषु पूज्या इत्यर्थः ।

पञ्चम्यामित्यादिना पुनर्ब्रतविधिर्धनहीनविषयः ।

इति स्कन्दपुराणोक्तञ्चम्पापष्टौव्रतं ।

— ००० —

ज्ञानवाच ।

मार्गशीर्षे सिते पक्षे षष्ठी भरतसप्तम ।

पुष्पा पापहरा ज्ञेया शिवा शीता गुह्यप्रिया ॥

† विश्ववक्त्रोऽशुमानिति पुस्तकाकारे पाठः ।

निहत्य तारकं षष्ठां गुहस्तारकराजवत् ।
रराज तेन दयिता कार्तिकेयस्य सा तिथिः ॥
ज्ञानदानादिकं कर्म तस्यामद्यमुच्यते ।
येऽस्यां पश्यन्ति गाङ्गेयं दक्षिणाशां समान्त्रितं ॥
ब्रह्महत्यादिपापैस्ते मुच्यन्ते नात्र संशयः ।
तस्मादस्यां सोपवासः कुमारं स्वर्णसम्भवं ॥
राजतश्च महाराज मृगमयश्चाथ दारुजं ।
कारयित्वा र्थसारेण कामामर्षविवर्जितः ॥
अपराङ्गे ततः स्नात्वा सम्यगाचम्य बुद्धिमान् ।
पद्मासनस्थं गाङ्गेयं ध्यायंस्तिष्ठेच्च शक्तिः ॥
ब्राह्मणस्तु ततीं विद्वान् गृहीत्वा करकवचं ।
दक्षिणास्यः स्वगिरसि धाराश्चैव निपातयेत् ॥
चन्द्रमण्डलसम्भूता भवभूतिपवित्रिता ।
गङ्गाकुमार धारेयं पातिता तव मस्तके ॥
एवं ध्यात्वा समभ्यर्च्यं मार्तण्डमण्डलं दिवः ।
पुष्यभूषादिना पश्चात् पूजयेत् क्तिसकासुतं ॥
देव सेनापते स्तन्द कार्तिकेय भवोद्भव ।
कुमार गुह गाङ्गेय शक्तिहस्त नमोस्तुते ॥
एभिर्नामपदैः पूज्य नैवेद्यं विनिवेदयेत् ।
फलानि पनसादीनि दक्षिणाशाभवानि वै ॥
चन्दनं मलयोद्भूतं कर्पूरं स्वामिवल्लभं ।
पार्श्वस्थी पूजयेद्भागकुण्डली सर्वदा प्रियौ ॥

सकलापचयूरश्च प्रत्यक्षं हेमजन्तया ।
 कृत्तिका, शकटं पार्श्वे सम्पूज्य स्तब्धवृक्षम् ॥
 तैरेव नामभिर्हीमः कार्यः साज्यैस्तिसैस्ततः ।
 एवं निर्वर्त्य विधिवत् फलमेकं युधिष्ठिर ॥
 प्राशयित्वा स्वपेद्राग्नौ चित्तिले दर्भसंस्तरे ।
 नालिकेरन्धातुसङ्गं नारङ्गम्भनसन्तया ॥
 जम्बीरन्दाडिमन्द्राणां श्रीफलामलकन्तया ।
 कदम्बाश्च फलं हृद्यं चपुषं क्रमशो नृप ॥
 प्रतिमासम्प्राशयित्वा मासमेकं विवर्जयेत् ।
 असाभे देशकालोत्थैः फलैर्द्वादशभिः क्रमात् ॥
 सम्पूर्णं जायते राजन् नक्तभुक्तस्य नान्यथा ।
 प्रत्यक्षो हेमघटितः छागो वा कुक्कुटोऽथवा ॥
 प्रातर्दद्यात् वाचकाय सेनानीः प्रियतामिति ।
 सेनानीधरसम्भूतः क्रौञ्चारिः वस्सुखो शुभः ॥
 गाङ्गेयः कार्तिकेयश्च स्वामी वालो यज्ञायषीः ।
 छागप्रियः शक्तिधरः कुमारो हादश्च श्रुताः ॥
 प्रीयतामिति सर्वेषु क्रमात्पावेषु कीर्त्तयेत् ।
 ब्राह्मणान् भोजयित्वादी पञ्चाङ्गुञ्जीत वाप्यतः ॥
 एवं सम्बन्धरस्यान्ते कार्तिके मासि भारत ।
 कार्तिकेयं समभ्यर्च्य वासोभिर्भूषयैस्तथा ॥
 प्रतिमासमशक्तोयः सङ्गदेतत्समाचरेत् ।
 सम्बन्धरविधानेन पूजाहोमपुरःसरं ॥
 दद्यात्सर्वं द्विजेन्द्राय वाचकाय विशेषतः ।

पारितोऽस्मिन् व्रते पार्थ तीर्थः स्नातृवसागरात् ॥
 य एवं कुरुते भक्त्या नरो योगिदद्यापि वा ।
 संप्राप्येह श्रुभान् कामान् गच्छतीन्द्रसलोकतां ॥
 सदैव पूजनीयस्तु कार्त्तिकेयो महाभुजः ।
 कार्त्तिकेयाद्व्रतेनान्योरान्नां पूज्यः प्रचक्षते ॥
 संधामि गच्छमानो यः पूजयेत् क्षत्तिकासुतम् ।
 स जयेच्छत्रसंधातान् यद्येन्द्रो दानवान् रणे ॥
 तस्मात् प्रतिष्ठतिं कृत्वा कार्त्तिकेयस्य शोभनां ।
 दक्षिणाशास्त्रितस्त्रैक* सम्यग् वीक्ष्य विचक्षणः ॥
 हेमादिकां यथा शक्त्या गृहे संस्थाप्य पूजयेत् ।
 पूज्यमानस्तु तां भक्त्या सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥
 यस्तु षष्ठ्यां सदा नक्तं कुर्यादुद्दिश्य तं विभुं ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तो गाङ्गे यस्य प्रियो भवेत् ॥
 चिःकृत्वो दक्षिणामायां गच्छेत् अहासमन्वितः ।
 यः पश्येह वेदेवेशं पुत्रं षष्ठपतेः स्वयं ॥
 विहाय दुर्भतिं सद्यः प्रशान्तात्मा स जायते ।
 विमुक्तो दुःखदौर्गत्या सुखमाप्सो चिरायुषा ॥
 सतः शिवपुरङ्गत्वा मोदते स्कन्दवच्चिरम् ।
 ततः कुले द्विजाभ्यासां वेदवेदाङ्गपारगे ॥
 समुपे धर्मश्रीले च यज्वनां दानश्रीलिनाम् ।
 गुणैर्युक्तः समस्तैस्तु वेदवेदाङ्गपारगः ॥
 सर्वभूतदयालुश्च स्कन्दैकगतमानसः ।

* दक्षिणाशास्त्रितस्त्रैकं पुस्तकान्तरे पाठः ।

जायते भरतश्चेष्ट पुराणार्थिकनिष्ठितः ।
 विमुक्तकर्षेवन्धश्च प्रयाति परमं पदं ॥
 इति सर्वं मयाख्यातं स्कन्दमाहात्म्यमुत्तमम् ।
 यः पठेत् शृणुयाद्भक्त्या सोऽपि पापैः प्रमुच्यते ॥
 यः पूजयेच्छरवणोद्भवमादिदेवं
 शशोः सुतश्च दयितं गिरिराजपुत्रागः ।
 स्वर्गे निरर्गलसुखान्यनुभूय भूयः
 सेनापतिर्भवति राज्यधुरन्धरोऽसौ ॥
 इति भवतिष्योत्तरे कार्तिकेयषष्ठीव्रतं ॥

—000—

युधिष्ठिर उवाच ।

षष्ठीविधानमधुना कथयस्व जनार्दन ।
 सर्व्वव्याधिप्रशमनं सर्व्वकामफलप्रदं ॥
 श्रुतस्त्रया पूज्यमानो भानुः कामान् प्रयच्छति ।
 दिवाकराराधनं मे तस्मात् कथय केशव ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

विशोकषष्ठीमधुना वक्ष्यामि मनुजोत्तम ।
 यामुपोष्य नरः शोकं न कदाचिदिह सृशेत् ॥
 माघे कृष्णतिलैः स्नानं पञ्चम्यां शुक्रेणपचतः ।
 कृताहारः कृशरया दन्तधावनपूर्व्वकं ॥

कृशरया, तिलतण्डुलान्नेन ।

उपवासव्रतं कृत्वा ब्रह्मचारौ भवेन्निशि ।

ततः प्रातः समुत्थाय कृतस्नानतपः सुचिः ॥
 कृत्वा तु काञ्चनं पद्ममूर्त्तौऽयमिति पूजयेत् ।
 करवीरेण रत्नेन रत्नवस्त्रयुगेन च ॥
 यथा विशोकं भुवनमुदिते त्वयि जायते ।
 तथा विशोकता मे स्याच्चक्रतेः प्रतिजन्मनि ॥
 एवं सम्पूज्य घञ्चान्तु द्विजान् शक्त्या प्रपूजयेत्* ।
 सुध्यात्संप्राश्य गोमूत्रं समुत्थाय ततः शुचिः ॥
 संपूज्य विप्रान् दानेन गुह्यपात्रेण संयुतं ।
 वस्त्रेणाच्छाद्य गुरवे सर्व्वमेतन्निवेदयेत् ॥
 अतैलसवणं भुक्त्वा सप्तम्यां मौनसंयुतः ।
 ततः पुराणश्रवणं कर्त्तव्यं भूतिमिच्छता ॥
 अनेन विधिना सर्व्वसुभयोरपि पक्षयोः ।
 कुर्याद्वावत् पुनर्माघशुक्लपक्षस्य सप्तमी ॥
 व्रतान्ते कलैशं दद्यात् सुवर्णकमलान्वितं ।
 शय्यां सोपस्कारां तद्वत् कपिलाञ्च पर्यखिनीं ॥
 यस्त्वेनेन विधानेन वित्तशोठाविवर्जितः ।
 विशोकघष्टी नाम्नीयं कृत्वा याति पराङ्गतिं ॥
 इह लोके समायातः शोकभागी न जायते ।
 जन्मद्वादशकं यावन्नात्र कार्या विचारणा ॥
 यं यं प्रार्थयते कामन्तं तं प्राप्नोति पुष्कलम् ।
 निःकामः कुरुते यस्तु स याति परमं पदम् ॥
 यः पठेत् शृणुयाद्वापि घष्टी शोकविनाशिनौ ।

* द्विजसम्पूज्य इति पुष्कलाक्षरे पाठः ।

सोऽपि पापविनिर्मुक्तः सुखी स्याद्वा नुभक्तितः ॥

ये भास्करं करकदम्बकपूरिताशं

संपूजयन्ति मनुजाश्च कतोपवासाः ।

ते दुःखशोकरहिताः स्वजनैः सुहृद्भि-

र्भूमौ विद्वत्पुत्रैश्च रत्नैश्चोत्तमवाप्नुवन्ति ॥

इति भविष्योत्तरोक्तां विशोकषष्ठीव्रतम् ।

—०००—

कृष्णउवाच ।

अन्यामपि प्रवक्ष्यामि फलषष्ठीं शुभां तथा ।

यामुपोष्य नरः पापैर्विमुक्तः फलभाग् भवेत् ॥

मार्गशौर्षे सिते पक्षे पञ्चम्यां नियमस्थितः ।

कृत्वा तु दन्तधावनं स्वपेट्राणौ विमत्सरः ॥

ततः प्रभाते विमलेकारयित्वा तु काञ्चनम् ।

कमलञ्च फलखेकं स्वशक्त्या शाठ्यवर्जितः ॥

ततस्तु सङ्गमे स्नातो मध्याह्ने कृतनित्यकः ।

आगत्य भवनं देवं पूजयित्वा जगद्गुरुम् ॥

कृत्वा तु कमलं पात्रे सफलं शर्करान्वितं ।

श्रीडुम्बरे नृसमये वा यथाशक्त्या नृपोत्तमः ॥

पूजयेत् पुष्पधूपार्घ्यैर्नवेद्यैर्विविधैः फलैः ।

गीतनृत्योत्सवैर्युक्तं कारयित्वा तु जागरम् ॥

स्नात्वा प्रातः शुचिर्भूत्वा कृतकाल्यस्वनातुरः ।

तुष्टं संपूज्य यत्नेन वस्त्रमाख्यविभूषणैः ॥

देयं तद्वकलं तच्चै भानुर्मे प्रीयतामिति ।
 भक्त्या विप्रांस्तु संभोष्य स्वयं भुञ्जीत वाग्यतः ॥
 सप्तम्यां कुवशादूर्ल यद्भीष्टं स्वदेवताः* ।
 तावद्वर्ज्यं फलं त्वेकं यावत् क्षणा तु पञ्चमी ॥
 पुनः प्राक्कथितं हुत्वा फलपञ्चक[†]संयुतम् ।
 षष्ठ्यामुपोष्य दातव्यं सप्तम्यां तद्विधानतः ॥
 पुनरन्यत् फलव्याज्यं यावच्छुक्त्वा तु पञ्चमी ।
 एवं षष्ठ्योर्हयोरान्नं वर्षमेकं यतव्रतः ॥
 उपोष्य दत्त्वा क्रमशः सूर्यमन्त्रमुदीरयेत् ।
 सोपस्करं यथा शक्या ताम्रवर्णां पयस्विनीं ॥
 तद्वर्णानि च दम्पत्योर्व्यासांस्त्राभरणानि वा ।
 भानुरकीरविर्ब्रह्मा सूर्यः शक्रो हरिः शिवः ॥
 श्रीमान्विभावमुख्येष्टा वरुणः प्रीयतामिति ।
 प्रतिमासञ्च सप्तम्यामेकैकं नाम कीर्त्तयेत् ॥
 यथा न विफलाः कामास्त्वद्भक्तानां सदा रवे ।
 तथानन्तफलावाप्तिरस्तु मे प्रतिजन्मनि ॥
 इमामनन्तफलदां फलघटीं करोति यः ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तः सूर्यलोके महीयते ॥
 इह चागत्य राजासौ पुत्रपौत्रसमन्वितः ।
 सर्वं च सफलारम्भो जायते नात्र संशयः ॥
 क्रियमाणस्तु यः पश्येद्यद्दद्यात् चानुवर्तयेत् ।

● लघ्वेतसा इति पुस्तकान्तरे पञ्चः ।

† फलपञ्चजेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

शृणुयाद्वा पठेद्वापि सोऽपि कल्याणभाग् भवेत् ॥
 हैमं फलं सकमलं कलशं वितानं
 घञ्जामुपोष्य विधिवद्विजपुङ्गवाय ।
 दद्यात् सुरासुरशिरोमणिष्टष्टपादं
 भानुं प्रणम्य फलसिद्धिसुपैति मर्त्यः ॥
 इति श्रीभविष्योत्तरोक्तं फलषष्ठीव्रतम् ।

—000—

घञ्जां फलाशनो राजन् विशेषात् कार्तिके नृप ।
 राज्यच्युतो विशेषेण स्वराज्यं लभतेऽचिरात् ॥
 षष्ठीतिथिर्महाराज सर्व्वदा सर्व्वकामदा ।
 उपोष्या सा प्रयत्नेन सर्व्वकालं जयार्थिना ॥
 कार्तिकेयस्य दयिता एका षष्ठी महातिथिः ।
 देवसेनाधिपत्यं हि प्राप्तमस्यां महात्मना ॥
 अस्यां हि त्र्यसमायुक्ती यस्मात् स्कन्दो भवेत् पुरा ।
 तस्मात् षष्ठां न भुञ्जीत प्राप्नुयाद्भागं वीं सदा ॥
 भार्गवी, लक्ष्मीः ।

दत्त्वार्थं कार्तिकेयाय स्थित्वा वै दक्षिणामुखः ।
 दध्ना घृतोदकैः पुष्यैर्मन्त्रेणानेन सुव्रत ॥
 समर्षिदारज स्कन्द सेनाधिप महाबल ।
 रुद्रोऽग्निज षड्वक्त्र, गङ्गागर्भं नमीस्तु ते ॥
 प्रीयतां देव सेनानीः सम्प्रादय सुहृद्भृतं ।
 दत्त्वा विप्राय वामान्रं यच्चान्यदपि वर्त्तते ॥

पद्याङ्गुलं त्वसौ रात्र्यां भूमिं कृत्वा तु भाजनं
 एवं षष्ठीव्रतस्यस्य उक्तं स्कन्देन यत् फलम् ॥
 तन्निबोध महाराज प्रोच्यमानं मयाखिलम् ।
 षष्ठां फलाशनो यस्तु नक्ताहारी भविष्यति ॥
 शक्त्यामघ कृष्णार्थां व्रत्तचारी समाहितः ।
 तस्य सिद्धिर्धृतिः पुष्टिः राज्यमायुर्निरामयम् ॥
 पारतिकं चैहिकञ्च दद्यात् स्कन्दो न संशयः ।
 अशक्तो ह्यपवासस्य स नक्तो नृणो भवेत् ॥
 तैलं षष्ठां न भुञ्जीत न दिवा कुहनन्दन ।
 यस्तु षष्ठां नरो नक्तं कुर्याद्भरतसत्तम ॥
 सर्वपापैर्विनिर्मुक्तो गाङ्गे यस्य सदा व्रजेत् ।

गाङ्गे योच स्वामिकार्तिकेयः ।

स्वर्गे च नियतं वासो भवते नात्र संशयः ।
 इह चागत्य कालेन यद्योक्तफलभाग्भवेत् ॥
 देवानामपि वन्द्योऽसौ राजराजो भविष्यति ।

इति भविष्योत्तरपुराणोक्तं स्कन्दषष्ठीव्रतम् ।

—०*०—

व्रत्तोवाच ।

संपूज्य कार्तिकेयन्तु हिजत्रेष्ठः प्रजायते ।
 मेधावी रूपसम्यन्नो दीर्घायुःकीर्त्तिवर्द्धनः ॥
 मूलमन्त्राः स्वसंज्ञाभिरङ्गमन्त्राश्च कीर्त्तिताः ।

तिथीश्वरोऽत्र कार्तिकेयः ॥

पूर्वं वत्पद्मपत्रस्यः कार्तिकेयस्य तिथीश्वरः ॥
 गन्धपुष्पोपहारैश्च यथाशक्ति विधीयते ।
 पूजाशाठेन शाठेन कृतापि च फलप्रदा ॥
 आज्यधारा समिद्धिश्च दधिक्षीराद्यमाश्लिकैः ।
 पूर्वोक्तफलदो होमः कृतः शान्तेन चेतसा ॥
 एतत् व्रतं वैश्वानरप्रतिपद्व्रतं बहुप्रास्येयम् ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं कार्तिकेयव्रतम् ।

—000—

कृष्णउवाच ।

शृणु पार्थ प्रवक्ष्यामि सर्व्वं पापप्रणाशिनीं ।
 सर्व्वकामप्रदां पुण्यां षष्ठीं मन्दारसंज्ञितां ॥
 माघस्यामलपत्रे तु पञ्चम्यां लघुभुक् नरः ।
 दन्तकाष्ठं ततः कृत्वा स्वपेङ्गुमौ जितेन्द्रियः ॥
 सर्व्वं भोगविहीनस्तु षष्ठीसुपवसेनरः ।
 प्राप्यानुष्णां द्विजश्रेष्ठं मन्दारं प्रार्थयेन्नृपि ॥

मन्दारो, राजार्कः ।

ततः प्रभाते उत्थाय कृतस्नातः पुनर्द्विजान् ।
 संपूज्य संहतं कृत्वा मन्दारं कुङ्कुमान्वितम् ॥
 सौवर्णं पुरुषं तद्वत् पद्महस्तं सुशोभनम् ।
 पद्मं कृष्णतिलैः कृत्वा तान्त्रपात्रे दलाष्टकम् ॥

पूष्यमन्दारकुसुमैः भास्कारायेति पूष्यं तः ।
 ननस्कारेण तद्वत् सूर्यायेत्यानलेदले ॥
 दक्षिणे तद्वदकार्य यज्ञेयाय च नैर्दृते ।
 पश्चिमे वसुधाश्चेति वायव्ये चण्डभानवे ॥
 ऋष्येत्युत्तरतः पूष्य भानन्दायेत्यतः परम् ।
 कर्णिकायां च पुरुषं पूष्य सर्वात्मना हरिम् ॥
 शुक्लवस्त्रैः समावेद्य भक्षमाख्यफलादिभिः ।
 एवमभ्रश्च तत् सर्व्वमुपाध्याये निवेदयेत् ॥
 भुञ्जीतातैलसवणं वाग्यतः प्राङ्मुखः स्थितः ।
 अनेन विधिना सर्व्वं सप्तम्यां मासि मासि च ॥
 कुर्व्यात् संवत्सरं यावत् वित्तशोठाविवर्जितः ।
 एतदेव व्रतान्ते तु निधाय कलशोपरि ॥
 रविशुक्लं द्विजेन्द्राय दातव्यं भूतिमिच्छता ।
 रविशुक्लमिति सौवर्णं रविशुक्लमित्यर्थः ॥
 नमोमन्दारनाथाय मन्दारभवनाय च ।
 त्वं रवे तारयस्वात्मानन्मात् संसारसागरात् ॥
 विधिनानेन तत् कुर्व्यात् षष्ठीं मन्दारसंज्ञितां ।
 विपाप्मा समुखी धन्यो नृतः स्वर्गं महीयते ॥
 इमां सन्धोऽष्टपटलध्वान्तीहासनदीपिकां ॥
 प्रगृह्य गच्छन् संसारगर्त्तायां न खलेश्वरः ।
 मन्दारषष्ठीं विख्यातामीप्सितार्थफलप्रदां ॥
 यः पठेच्छृणुयाद्वापि सर्व्वपापैः प्रमुच्यते ।
 षष्ठीमुपोष्य तिलपङ्कजकर्णिकायां

संपूज्य भास्करमहस्करं वृक्षपुष्पैः ।
 ये प्राप्नुवन्ति पुरुषा नहि तत् कदाचित्
 गोभूष्टिरण्यतिलदाः फलमाप्नुवन्ति ॥

इति श्रीभविष्योत्तरोक्तं मन्दारपल्लीव्रतम् ।

—0#0—

युधिष्ठिर उवाच ।

आरोग्य रूप-सौभाग्य-विपन्नक्षयकारकम् ।
 भुक्ति-मुक्तिप्रदं नृणां व्रतं मे ब्रूहि केशव ॥

कृष्ण उवाच ।

यदुमायाः पुरा देव उवाच त्रिपुरान्तकः ।
 कथासु सुवृत्तासु भास्कराराधनं प्रति ॥
 तदिदानीं प्रवक्ष्यामि धर्मकामार्थसिद्धिदम् ।
 नराणामथ नारीणां समाराधनमुत्तमम् ॥
 शृणुष्ववहितो भूत्वा सर्वपापप्रणाशनं ।
 मासि भाद्रपदे शुक्ले एकभक्ताशनो भवेत् ॥
 दन्तधावनपूर्वं तु षष्ठ्यामुपवेश्वरः ।
 गौरसर्षपकल्मे न ज्ञायात् कायविशुद्धये ॥
 रोचना-कृष्णगोमूत्र-मुस्ता-चन्दन-गोसक्तम् ।
 दधिकालाशुबच्चैव ललाटे तिलकं न्यसेत् ॥
 शिलाबन्धदलैश्चैव सौभाग्यारोग्यकदातः ।
 स्रजं कुङ्कुमताम्बूलं सिन्दूरं रक्तवाससी ॥
 वितरेत् सोपवासाहं नारीमङ्गलवर्धनम् ।

विधवा तु विविक्तानि कुमारी शुक्लवाससी ।
 ततः स्रभवने भासुं पूजयेत् शीतलौदकैः* ॥
 अपराह्णे ततः स्नात्वा सुमौनी नियतव्रतः ।
 प्रतिमां स्थापयेद्भानोः पञ्चगव्येन वारिणा ॥
 रत्नचन्दनपद्मेन कुङ्कुमेन समासभेत् ।
 भगवत्कुसुमेरुसैः करवीरैः प्रपूजयेत् ॥
 दद्यात्तु गुग्गुलुं धूपं तथा कुन्दुरकोषं च ।
 रत्नांशुकैरसङ्कृत्य कासागुरुविभूषितैः ॥
 तत्र ताम्बमयं पात्रं पुष्याक्षतजलान्वितं ।
 सदूर्वाकुङ्कुमं कृत्वा रत्नचन्दनमिश्रितं ।
 करवीरोत्पलैरक्षैश्चिन्त्रं कीरण्डकैः शुभैः ।
 रत्नागस्यजवापुष्पैर्भासती कुन्दसुन्दरैः ॥
 सुषुकुन्दैरधान्यैश्च यतपत्रैः सुगन्धिभिः ।
 गीरोचना कुशायाणि सिद्धार्थतिलपद्मजैः ।
 यथासम्भवसंलब्धैर्दधिकुङ्कुमकेसरैः ॥
 एभिरर्घ्याः प्रदातव्यः उच्चैः कृत्वा करी नृप ।
 देवदेव जगन्नाथ सहस्रांगो दिवाकर ॥
 पूजेयं परिपूर्णास्तु गृहाणार्घ्यं नमोस्तु ते ।
 भस्मैर्नानाविधैर्युक्तं पायसं मधुसर्पिणा ॥
 नैवेद्यं विनिवेद्याथ ततो नीराजयेद्भविम् ।
 धातारमिति संपूज्य प्रणिपत्य पुनःपुनः ॥
 पुष्यमण्डलिकां कृत्वा रात्रौ जागरसं तथा ।

* हीतदोहरे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

अथयश्च पुराणस्य वाचनं वास्य शस्यते ॥
 त्रीतव्यं ब्राह्मणादेतद्वाचकादभ्यतः क्वचित् ।
 गीतमृत्सैश्च वाद्यैश्च जपयेत्सकलां निशाम् ॥
 एवमाश्वपुजे मासि अर्थ्यमिति प्रपूजयेत् ।
 मित्रेति कार्तिके पूज्यो वारुणो मार्गशीर्षके ॥
 पुष्येऽंशुमान् सुसंपूज्योमाघे पूज्योभगतिषु ।
 इन्द्रेति फाल्गुने* मासि विवस्वानिति चैत्रके ॥
 पूषेति पूज्योवैशाखे ज्येष्ठे पृथिव्यमर्चयेत् ।
 पूज्यस्त्वष्ट्रेति चाषाढे त्रावणे विष्णुमर्चयेत् ॥
 ततः प्रभाते विमले सप्तम्यां स्नानमाचरेत् ।
 देवं संपूजयेद्भूमौ गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥
 ततः प्रणम्य देवेशं सर्वार्घ्जे षधिपूजयेत् ।
 पादौ धात्रे ततः पूज्यो नमः कण्ठं विवस्वते ॥
 पूषे नम इति प्राणं पृथिन्यायेति लोचने ।
 नमस्त्वष्ट्रे ललाटन्तु विष्णवेति शिरोऽर्चयेत् ॥
 वाचकं पूजयेत् पथात् व्रतमार्गोपदेशकम् ।
 भूम्या हिरण्यवासोभिर्विष्णुसंघाठं विवर्जयेत् ॥
 वाचके पूजितेचैव सदा तुष्यति भास्करः ।
 एवं संपूजयेद्यावद्दत्तरं मासि मासि च ॥
 ब्राह्मणान् भोजयेत् पश्चात्पायसं सर्पिषा सह ।
 दक्षिणाञ्च यथा शक्त्या भास्करः प्रत्रैयतामपि ॥
 ततो हविष्यमत्रीयात्स्वयं बन्धुजनैः सह ।

* चन्द्रेति पुलकान्तरे पाठः ।

अथोद्यापनमाख्यामि श्रूयतामत्र च क्रमः ॥
 नेत्रपट्टैः शुभैर्भस्त्रैः कृत्वा मण्डयिकां शुभाम् ।
 कुङ्कुमाभोहितां कुर्व्याद्दिव्याभरणभूषिताम् ॥
 कृत्वा देयं विमानन्तु प्रान्तलम्बितपल्लवम् ।
 तन्मध्ये रत्नकलशीं पञ्चरत्नसमन्वितां ॥
 घटस्थोपरि विन्यस्य तान्मपात्रसमन्वितां ।
 पद्मं कृष्णतिलैः कार्यमष्टपत्रं सकर्णिकम् ।
 सौवर्णं भास्करं कृत्वा पद्महस्तां रथे स्थितम् ।
 कर्णिकायां न्यसेत्तन्तु स्नापयित्वा घृतादिभिः ॥
 ततः स्नातोऽनुलितश्च परिधाय सुवासक्षी ।
 देवान् पितॄन्* समभ्यर्च्य ततोदेवगृहं व्रजेत् ॥
 पञ्चगव्येन संस्नाप्य नामहादशकेन च ।
 पूजयित्वा र्चयेत्पश्चात् नैवेद्यं परिकल्पयेत् ॥
 तर्पयेत्पायसैः सान्ध्यैः लङ्कुकेः खण्डहारकैः ।
 सोमालकैः कीकरसैः* शीघ्रप्राणप्रियैः शुभैः ॥
 श्रीफलैर्मातुलङ्गैश्च नारिकेलैः सदाङ्गिमैः ।
 कूष्माण्डैः कर्कटैर्दूर्वात्तैर्नारङ्गपनसादिभिः ॥
 कालोद्भवानि सर्वाणि फलानि विनिवेदयेत् ।
 शङ्खतूर्ध्वनिनादेन गीतनृत्यैः समर्चयेत् ॥
 ततः प्रभातसमये भास्करं कलशैर्नवैः ।
 स्नापयित्वा व्रतोपेतः सौभाग्यारोग्यव्रतयतः ॥

● सकर्णिकेति पुस्तकालये पाठः ।

* इष्टिप्राणेति पुस्तकालये पाठः ।

तैरेव नामभिर्हीमस्त्रिणाञ्चयेन प्रयच्छते ।
 ततः सूर्य्यस्य पुरतः सूर्य्ययागं समाचरेत् ॥
 रत्नचन्दनपङ्केन विलिखेत्समभूतकम् ।
 हस्तमात्रं द्विहस्तान्तु चतुर्हस्तमथापि वा ॥
 मनःशिलाभिः सिन्दूरैः सूर्य्यमण्डलमालिखेत् ।
 रत्नपुष्पैः सुगन्धैश्च धूपैः कुङ्कुमकादिभिः ॥
 संपूज्य दद्याच्चैवेद्यं विधिवत् छृतपायसम् ।
 पुरतः स्थापयेत् कुम्भं सहिरण्यं सवाससं ॥
 दद्यात् कन्याभ्यस्तान्मूलं कुङ्कुमं कुसुमानि च ।
 वस्त्रैश्चैव सुवस्त्रिश्च वन्धुभिस्तां समापयेत् ॥
 एवं पश्चादवसाने तु सप्तम्यासुषसि व्रती ।
 द्रव्यैः प्राक्प्रविहितैः ज्ञात्वा द्विजैर्हीमञ्च कारयेत् ॥
 आकाशेनेतिमन्त्रेण समिन्निर्वाकादिभिः ।
 तिसौराण्यगुह्येपेतैर्दद्यादष्टयतापुत्रीः ॥
 ततस्तु दक्षिणा देया ब्राह्मणेभ्यो बुधिष्ठिर ।
 भोजयित्वा द्विजान् वस्त्रं विविधैः परिधापयेत् ॥
 हादयान्न प्रयंसन्ति गावो वस्त्रान्विताः ह्यभाः ।
 छत्रीपानद्युगैः सार्धं दद्याद्विभ्रेषु संयतः ॥
 यदाशक्तस्तदैकान्तु दद्याद्वेषु पयस्विनीं ।
 ततः संपूज्य गन्धाद्यैर्ब्राह्मणं शीलसंयुतम् ॥
 तस्मै तां प्रतिमां दद्यान्मन्त्रेणानेन पाण्डव ।
 ॐ नमोऽर्वाय सकलध्यान्तविच्छित्तिकारिणे ॥
 त्वहानेन रवेः सन्तु मम सर्व्वे मनोरथाः ।

रथवस्त्रयुताङ्गाश्च भूमिं सस्त्रीचितामपि ॥
 द्विरप्यसहितां दद्यात् भास्करः प्रीयतामिति ।
 ह्यभोपानद्युगक्षैव मण्डलस्याप्रतो न्यसेत् ॥
 अक्षयं तत्पुरीन्धस्य तस्याथे सप्त वाजिनः ।
 तदन्तरे तु रेवन्तं तत्पसादश्विनौ न्यसेत् ॥
 तद्विषये शमिं विन्वादिक्कासांश्च यथाक्रमम् ।
 दानानि च प्रदेशानि शयनानि वृष्ट्याणि च ॥
 आह्वानि पित्रदेवानां श्राद्धतीं ह्यतिमिच्छता ।
 एवमेषा तिष्ठिः प्राञ्च सर्व्वकामप्रदा वृष्टां ॥
 वरा सुखप्रदा सौम्या भानुलोकप्रदायिनी ।
 अल्पवित्तोऽपि कुर्व्वीत वष्ट्यां वष्ट्यासुषोषणम् ॥
 सप्तम्यां भोजयेद्विप्रं यावत्संवत्सराष्टकम् ।
 व्रतान्ते सुरभिं यच्छेदिप्रायोष्वसहस्रये ॥
 अश्वत्थकारवाद्वाजान् सोऽपि तत्फलमाप्नुयात् ।
 उत्पद्यते सदा भक्तिर्भानोरुपरि श्राद्धती ॥
 एवं यः कुशते पार्थ व्रतमेतद्गुप्तमं ।
 सूर्य्यकोटिप्रतीकाशैर्व्विमानैः सर्व्वकामिवैः ॥
 अप्सुरोगणसम्पन्नैर्देवैर्गन्धर्व्वैर्वितैः ।
 हंससारससंयुक्तैर्वाद्यगीतरवाकुलैः ॥
 दीधूयमानवमरैर्नाना^{*}रससमन्वितैः ।
 सर्व्वैः सुहृद्भिः संयुक्तीनानाक्षिण्णरभास्करैः ॥

* दिक्पतिर्वापि पुलकाकारे पाठः

* नानारत्नेति पुलकाकारे पाठः

विमानवरमारूढो विद्याधरगणैः सह ।
 स याति परमं स्थानं यत्रास्ते रविरंशुमान् ॥
 यावच्चन्द्रार्कताराणि यावच्च कुलसप्ततिः ।
 तावद्दृगसहस्राणि सूर्यलोके महीयते ॥
 त्रिभिस्तु पुरुषैः सार्धं भोगान् भुञ्जा यथेष्टितान् ।
 ब्रह्मविष्णुहरादीनां लोके स्थित्वा सुखी चिरं ॥
 पुण्यत्रयाद्गतो राज्ञां राजा चैव ध्रुवं भवेत् ।
 पञ्चाक्षः क्रीर्त्तियुक्तश्च लोचनानन्दकारकः ॥
 पुत्रपौत्रसमायुक्तोयज्ञदानक्रियारतः ।
 प्रज्ञावान् धार्मिकः शूरः सर्व्वं शास्त्रविशारदः ॥
 ब्रह्मण्यः* सत्सक्विषेव सत्यवक्ता जितेन्द्रियः ।
 वक्ता शरण्यः सुमना दोनानाथदयापरः ॥
 भुनक्ति वसुधां चीर्णं विग्रहेवाजितः परैः ।
 नारी वा कुरुते पार्थ सापि तत्फलभागिनो ॥
 भवितव्याद्दृतेश्चर्या मद्भिषी चक्रवर्त्तिनः ।
 सपत्नीदक्षनीचैव सौभाग्यारोग्यपुत्रिणी ॥
 मोदते सुचिरं कालं सुखेन वसते गृहे ।
 योदासो वा भवेत् कश्चिद्भूतमेतत् समाचरेत् ॥
 तस्य श्रीर्व्विजयश्चैव त्रिवर्गश्च प्रवर्द्धते ।
 मृतः स्वर्गमवाप्नोति विमानवरमास्थितः ॥
 सूर्यलोकेषु निवसेत् सर्व्वकामसमन्वितः ।

* रूपवानिपाठान्तरं ।

* सत्यवर्चंति पुलकान्तरैः पाठः ।

सेवितः सुरनारीभिः सिद्धगन्धर्वसेवितः ॥
 वादित्रगेयनिनदैर्भैन्वन्तरगणान्वङ्गन् ।
 ज्ञानयोगन्तु संप्राप्य सूर्य्यमण्डलमाविशेत् ॥

एतां नरेन्द्र समुपोष्य नभस्यमासे
 षष्ठीं सिदान्तरणिमर्षयितुं यदीच्छेत् ।
 गोभूहिरण्यवसनैर्ह्रिजपुङ्गवानां
 प्रीतिं विधाय स रवेर्भवनं प्रयाति ॥

इति भविष्योत्तरे सोद्यापनसूर्य्यषष्ठीव्रतम् ।

—०%०—

अनस्य उवाच ।

कामव्रतं महाराज शृणु मे गद्गतोऽधुना ।
 येन कामाःसमृध्यन्ति मनसा चिन्तिता अपि ॥
 षष्ठां फलाशनी यस्तु वर्षमेकं व्रतं चरेत् ।
 माघमासे सिते पक्षे पञ्चम्यां नक्तभोजनः ॥
 षष्ठ्यान्तु प्राशयेत्तृतीयां फलमेकान्तु पार्थिवं ।
 ततो भुञ्जीत यत्नेन वाग्यतः शुद्धमोदनं ॥
 ब्राह्मणैः सह राजेन्द्र अथवा केवलं फलम् ।
 तमेकं दिवसं स्थित्वा सप्तम्यां पारणं नृप ॥
 अग्निकार्यं च कुर्वीत गुह्यरूपेण केशवम् ।
 पूजयित्वा विधानेन वर्षमेकं व्रतं चरेत् ॥
 गुह्यरूपेण केशवमिति कार्तिकेयरूपं विष्णुं पूजयेदित्यर्थः ।

वैष्णवपुराणेषु

सर्वे देवा विष्णोरेकरूपा इति निरूपणादियं मुक्तिः ।
 षट्पञ्चः कार्त्तिको गुह्यः शैनानी पावकात्मजः ॥
 कुमारः स्वप्न इत्येवं पूज्यो विष्णुश्च नामभिः ।
 समाप्तौ तु व्रतस्यास्य कुर्याद्वाङ्मणभोजनं ॥
 षष्णुखं सर्वसौम्यं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 सर्वे कामाः समृद्धयन्तां मम देव षड्भोजन ॥
 त्वत्प्रसादादिद् भक्त्या षड्भक्तां विधिनाधिरम् ।
 अनेन दत्त्वा मन्त्रेण ब्राह्मणाय सयुग्मकाम् ॥

वस्त्रयुग्मसहितं ।

ततः कामाःसमृद्धयन्ते सर्व एवेह जन्मनि ।
 अपुत्रो लभते पुत्रानधनो लभते धनं ॥
 भ्रष्टराज्यो लभेद्भ्राज्यं नाच कार्या विचारया ।
 इति वराहपुराणोक्तं कामषष्ठीव्रतम् ।

—000—

ब्रह्मोवाच ।

भाजनं यच्च संपूर्णं मधुना च समन्वितम् ।
 दद्यात् कृष्णतिलानां तु प्रस्थमेकन्तु मागधं ॥
 त्रिगुणं तण्डुलानां च पृथक् प्रस्थं च कारयेत् ।
 भाजनं प्रस्थचतुष्टयपूरणीयं पात्रं, त्रिगुणं प्रस्थत्रयं ।
 पृथगिति घृतमधुतिलतण्डुलपात्राणि पृथक् कुर्यात् । मागध
 प्रस्थपरिमाणं परिभाषायामुक्तं ॥

गन्धपुष्पैस्तथा धूपैर्नानावाद्यैर्बिंशतिः ।
ततः संपूजयेत् सूर्यं नानावाद्यसमन्वितम् ॥
सूर्यं गगनस्थं ।

पूजयेच्च ततो व्योम वलिं दिष्टु प्रपूजयेत् ।
व्योमदेव षडहे चैव सर्वभूतानि योजयेत् ।
व्योमदेवषडहे तत्र यत्र व्योम प्रतिष्ठितम् ॥

व्योमनिर्भाषं विष्णुधर्मोत्तरात् ॥

चतुरस्रं भवेत्पूजे तत्रहस्तं महाभुजम् ।
ततोऽन्यत् चतुरस्रञ्च प्रथमं संस्थितं शुभं ॥
भद्रपीठमये प्रोक्तो व्योमभागस्तुरीयकः ।
स्तम्भे वैश्वानरोऽस्य मध्यभागः प्रकीर्तितः ॥
भद्रपीठवदन्यच्च तत्र पद्मं निवेशयेत् ।
शुभाष्टपत्रं तन्मध्ये कर्षिकायां दिवाकरः ॥
पत्राष्टके न्यसेत्तस्य दिक्कालान् सर्वतोद्दिशमिति ।
य एवं कुरुते षष्ठ्यां सन्ध्याकाले वलिं रवेः ॥
स सूर्यलोकभासाद्य मोदते शास्त्रतीः समाः ।
पुष्पक्षयादिहागत्य सप्तहे जायते कुले ॥
मेधावी सुभगः त्रैमान् पुष्पवान् दानशीलवान् ।
पुनर्लोकमवाप्नोति भास्वरस्य न संशयः ॥
इति भविष्यत्पुराणोक्तं व्योमषष्ठीव्रतम् ।

— 000 —

छाण उवाच ।

भाद्रभाद्रपदे मासि शुक्ले षष्ठां सुसंयता ।

(७८)

नारी स्नात्वा प्रभाते च शुक्रमाख्याम्बरप्रिया ॥

सुवेषाभरणोपेता भूत्वा संगृह्य वालुकाः ।

नवे वेणुमये पात्रे गृह्यं गच्छेद्वाङ्मुखी ॥

सोपवासा प्रयत्नेन तत्र देवीं प्रपूजयेत् ।

कृत्वा वस्त्रयुगं रम्यं पुष्पमालाविचित्रितं ॥

तत्र संख्याप्य तां देवीं पुष्पैः संपूजयेद्वरिं ।

तां देवीमिति जलान्तरगतां वालुका-मान्दीय वंशपात्रे
पञ्चपिण्डाकृतिं वालुकामयीं देवीं पूजयेदिति ।

ध्यात्वा तु ललितान् देवीं तपोवननिवासिनीम् ।

पङ्कजं करवीरञ्च नेपालीं मालतीं तथा ॥

नेपाली पुष्पविशेषः, गृहीत्वा पूजयेदिति शेषः ।

नीलोत्पलं केतकीञ्च संगृह्य तगरं वरम् ।

एकेकाष्टगतं ग्राह्यमष्टाविंशतिरेव वा ॥

अक्षताः कलिका गृह्य ताभिर्देवीं समर्चयेत् ।

प्रार्थयेत व्रती भूत्वा गिरिजां गिरिशप्रियाम् ।

गङ्गाद्वारे कुशावर्त्ते विल्वके नीलपर्वते ।

स्नात्वा कनखले तीर्थे हरिं पद्मावतोपतिम् ॥

ललिते ललिते देवि सौख्यसौभाग्यदायिनि ।

अनन्तं देहि सौभाग्यं भवत्वघडरं परम् ॥

मन्त्रणानेन लुप्तमैश्वर्यकस्यातिशोभनैः ।

एवमभ्यर्च्य विधिना नैवेद्यं पुरतो न्यसेत् ॥

व्रपुषेवालुकुष्माण्ड-नालिकेरैः सदाङ्गैः ।

वीजपूरैःसतुण्डीरैः कारवेक्षैः सवर्षटैः ॥

फलेस्तत्कालसम्भूतैः कृत्वा श्रीभां तदप्रतः ।

अपुषं वालुकम् । एलबालुः कर्कटी । तुण्डीरम् वृक्षभेदः ।

विरुद्धैर्नान्यसम्भूतैर्दीपालीभिः समन्ततः ।

साङ्गं सगुणकैर्धूपैः सोमालककारङ्गकैः ॥

गुह्यपुष्पैः कर्षवेष्टैर्मोदकैरुपमोदकैः ।

बहुप्रकारैर्नैवेद्यै र्यथाविभवसारतः ॥

एवमभ्यर्च्य विधिवद्वाचो जागरणोत्सवा ।

गीतवाद्यनटैर्नृत्यैः प्रेक्षणीयै रनेकधा ॥

सखीभिः सहिता साध्वी तां रात्रिं प्रशयन्नयेत् ।

न च सम्प्रीत्येनेत्रे नारी यामचतुष्टयम् ॥

दुर्भगा दुर्गता बन्ध्या नेत्रसम्प्रीलनाङ्गवेत् ।

एवं जागरणं कृत्वा समम्यां सरितन्नयेत् ॥

गन्धधूपैरथाभ्यर्च्य गीतवाद्यपुरःसरम् ।

तच्च दद्याद्द्विजेन्द्राय नैवेद्यादि नरोत्तम ॥

कृत्वा गृहं समागत्य हुत्वा वैश्वानरं क्रमात् ।

देवान् पितृन् मनुष्यांश्च पूजयित्वा सुवासिनीः ॥

कान्यकाश्चैव सम्भ्राज्या भ्राह्मण्यो दश पञ्च च ।

भक्ष्यभोज्यैर्व्वहुविधैर्दत्त्वा दानानि भूरिशः ॥

कलिता मेऽस्तु सुप्रीता इत्युक्त्वा तु विसर्जयेत् ।

यः कश्चिदाचरेदेतद्गतं सौभाग्यसम्पदम् ॥

कलिताषष्ठीसंज्ञञ्च सर्व्वपापनिवर्हणम् ॥

नरी वा यदि वा नारी तस्य पुण्यफलं शृणु ।

यदलभ्यं व्रतैश्चान्यैर्दानैर्वा नृपसत्तम ॥

तपोभिर्निर्गमैर्वापि तदेतेन हि लभ्यते ।
 ब्रह्म चैवातुल्यं सम्पत्सोभाम्यमनुभूय च ॥
 कृत्वा मूर्ध्नि पदं पार्श्वं सपत्नीनां यशस्विनी ।
 मृता शिवपुरं प्राप्य देवैरसुरपत्नैः ॥
 प्राप्नोति दर्शनं देव्या तया तु सह मोदते ।
 पुण्यशेषादिहागत्थ पुण्या सोभाम्यभाजना ॥
 सत्य-प्रेता-युगे नारी* सीतेव प्रियवत्तभा ।
 ब्रह्मं यः शृणुयात्पार्श्वं पठेत्सा साधुसंसदि ।
 सोऽपि पापविनिर्मुक्तः शक्तलोके महीयते ॥
 षष्ठ्यां जलान्तरगतां वरवंशपात्रे
 संगृह्य पूजयति या सिकतां क्रमेण ।
 नक्तञ्च जागरमनुव्रतवेषशीला
 कुर्यादसौ चिभुवने क्लितेव भाति ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं ललिताषष्ठीव्रतम् ।

—0#0—

सनत्कुमार उवाच ।

अथ षष्ठ्यान्तु राजन्यः समुपोष्य यथाविधि ।
 चक्राजमण्डलं कृत्वा कर्णिकायां सुदर्शनम् ॥

● राज्ञीति पाठान्तरम् ।

इलेषु लोकपालानामायुधानि समर्चयेत् ॥

चक्राख्यं चक्रनाभिघटिताक्षं

स्नानायुधानि पुरतः प्रतिष्ठाप्य प्रपूजकः ।

रत्नचन्दनसिद्धार्थरत्नपद्माङ्कुरैरपि ॥

रत्नवस्त्रैः सुगन्धाटैर्भूषणादिभिरर्चयेत् ।

अपूपफलसंयुक्तं गुडान्नञ्च निवेदयेत् ।

सुदर्शनं महाचक्रं ज्वालाव्याप्तदिगन्तरं ।

दैत्वारिचक्रोन्मथनं विहिषो मे निबर्हय ॥

अनिशं लोकपालानां सर्वप्रहरणाख्यपि ।

अभयं विजयं युद्धे मङ्गलं प्रदिशन्तु नः ॥

यथा विष्णुर्धरः पुंसां यथा लक्ष्मीश्च योषिताम् ।

तथा शत्रुहरं चक्रं विजयं मे करोत्वलं ॥

चक्रप्रतिमरूपाणि शस्त्रान्यव्याकुलान्यपि ।

आयुधानि समस्तानि भवन्तु मम सर्वदा ॥

मत्तमातङ्गनिकाररथवाजियुतं मम ।

दृष्टपुष्टपदास्त्रोद्यं वलं रथं सुदर्शनं ॥

इति सन्न्यार्थं तद्गत्या सालभेतायुधं स्वकम् ।

ततश्च पुरतो वृत्तमण्डलद्वारयेक्षुधीः ॥

तच्छुलेन समायुक्तान् तिलवीजेन पूरितान् ।

अन्नणान् वस्त्रसंछन्नान् सर्वोषधिसमन्वितान् ॥

चतुरः स्थापयेद्दिक्षु कलसाश्च चतुर्थापि ।

मध्ये सर्वोषधियुतं पञ्चरत्नसमन्वितम् ॥

ब्रह्मयुग्मेन संछन्नं कुम्भं तत्र निधाप्य च ।

तस्मिन्नावाहयेद्देवं सुदर्शनमनन्यधीः ॥
 शङ्खञ्च नन्दकञ्चैव शार्ङ्गं कोमोदकीं गदाम् ।
 न्यसेत् प्राच्यादिकुम्भेषु तत्र तत्र प्रपूजयेत् ॥
 पायसञ्च गुडान्नञ्च सुद्धान्नं दधिसम्भवं ।
 निवेदयेत् यथा योगं मध्यमे सकलं मतम् ॥
 अथवा पञ्चकुम्भेषु पुण्या वै पञ्च हेतयः ।
 चक्रं शङ्खं तथा पद्मं शार्ङ्गञ्च नन्दकं गदां ।
 बहिस्तु लोकपालानामायुधानि न्यसेद्युगमिति ॥
 युगमिति प्रतिकुम्भं द्वे द्वे ।

तदग्रे महतीं यच्छिं पीतकीशेयसंघताम् ॥
 संस्थाप्य तार्क्ष्यसंस्थानं ध्वजमग्रे निवध्य च ।
 तार्क्ष्यं सम्पूजयेत्पञ्चाहन्धपुष्याक्षतादिभिः ॥
 अपूपफलमूलान्नं भूरि तत्र निवेदयेत् ।
 प्रदक्षिणमस्कारस्तोत्रालापादि कारयेत् ॥
 घनं घनानां पटलं द्रावयन्मनिलो यथा ।
 तथा मयि च विद्वेष्टृन् विद्रावयतु पश्चिराट् ॥
 इति सम्प्रार्थ्य विधिवत्पूजां परिसमाप्य च ।
 लोकपालबलिं दद्यात् कशरान्नेन माधकः ॥

कशरान्नेन तिलतण्डुलान्नेन ।

तदग्रे वयमानीय सौवर्णं सिंहविष्टरम् ।

सिंहविष्टरं, सिंहसनं ।

तस्मिन्नृपं समारोप्य सर्वाङ्गहारसंयुतम् ।
 सौवर्णपात्रमानीय तस्मिन्देवं सुदर्शनम् ॥

तन्मन्त्रेण समावाह्यं गन्धपुष्पादिनार्चयेत् ।
वर्तिं सिद्धार्थसंयुक्तां रक्तवस्त्रेण वेष्टिताम् ॥

सिद्धार्थाः, सर्षपाः ।

प्रक्षाल्य तत्र संस्थाप्य पूजां कुर्याद्यथाविधि ।
मूर्ध्नि त्रिःपरिहृत्याथ प्राच्यां योषिहिनिक्षिपेत् ॥
परिहृत्य, नीराजनं कृत्वा ।

आयुधानां प्रदानञ्च हेतिराजस्य मन्त्रतः ।
हेतिराजस्य सुदर्शनस्य ।

तत्तन्मन्त्रेण वावाह्यं वाहनादिसमर्पणम् ।
तत्रैवंभूषणादीनामेष एव विधिः स्मृतः ॥
युद्धारम्भे महोत्पाते परसेनाप्रपौडने ।
रान्यभ्रंशपरिक्षेशे शोकव्याध्यादिपौडिते ॥
इष्टदारवियोगे च सुतनाशे वलक्षये ।
ज्ञानमेव प्रकुर्वीत शुकलषष्ठां समाहितः ॥
निमित्ते क्षणिते वास्याञ्जन्मर्षेवालयं विधिः ।
तार्क्ष्यध्वजस्य सम्पूज्य युद्धारम्भे च भूपतिः ॥
रणप्रमुखतः कृत्वा सुध्वजत्रयमावहेत् ।
ध्वजस्य चलनादादौ फलाफलविनिश्चयः ॥
जयं शक्यं चलाद्भूयुर्दक्षिणे च पराजयम् ।
पश्चिमे परसेन्यानामुत्तरे च पलायनम् ॥
आग्नेय्यामधिपोनश्येत् नैर्ऋत्यां वलनाशनं ।
वायव्ये वाज्जिमरणं ऐशान्यां धनसंचयम् ॥

अथद्विदिशि स्नातःस्नातःध्वजस्येति परीक्षणम् ।
 द्विवे बन्धे स्मरणं यष्टिच्छेदे परस्म वा ॥
 तत्कृतञ्च स्वदेहस्यं विद्यादेवं विचक्षणः ।
 आदौ सर्वं परीक्ष्यैव कुर्वीत रणपण्डितः ॥
 कार्यान्तरेष्वेवमेव भावो भवविनिश्चयः ।
 ब्राह्मणैः स्वस्तिवचनं पद्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥
 एवं नास्मा ततः कुर्यात् पूजां चैत्रापरेऽहनि ।
 विप्रशेषेण तत् कुर्याद्दशनं बान्धवैः सह ॥
 विप्रशेषेण ब्राह्मणभोजनावशेषेण
 गुरवे दक्षिणां दद्यादृत्विग्भ्योभुरिदक्षिणाम् ॥
 विज्ञातं न कुर्वीत यावन्नतं समापयेत् ।
 न ब्रूयादन्तं कुर्याद्ब्रह्मचर्यस्य दक्षिणाम् ॥
 एतस्त्वस्वयनं प्रोक्तं सर्वरोगविनाशनम् ।
 सर्वदुःखप्रशमनं सर्वस्य विजयावहम् ॥
 एतद्व्रतं पुष्टिकरं शृणुतां कुर्वतामपि ।
 एतत्सर्वधिकारः स्याद्ब्राह्मणैः त्रयो ददात्यक्षं ।
 षष्ठीव्रतं समाख्यातं सर्वकामफलप्रदम् ॥
 इति श्रीगारुडपुराणोक्तं सुदर्शनषष्ठी व्रतम् ।

—000—

आदित्य उवाच ।

कृष्णवृष्ट्यां प्रयत्नेन कृत्वा नक्तं विधानतः ।
 मासि मार्गशिखादावंशुमानिति पूजयेत् ॥

० बन्धो नीति पुस्तकान्तरे पाठः ।

विधिवत् प्राश्य गोमूत्रमनाहारी निश्चि स्तपेत् ।
 अतिरात्रस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥
 पुष्येष्ट्येवं सहस्रांशं भानुमन्तसुगन्धि वै ।
 वाजपेयफलं तत्र प्राप्तव्रते लभेत्तरः ॥
 माघे दिवाकरं नाम क्षण्यषष्ठ्यां नियोजयेत् ।
 निश्याघे चान्ति गोमूत्रं गोमेधफलमाप्नुयात् ॥
 तिलैस्तु फाल्गुने मासि पूजयेद्ब्रह्मयेत्तिलान् ।
 राजसूयस्य यज्ञस्य तुल्यं फलमवाप्नुयात् ॥
 चैत्रे च हंसनामानं क्षण्यषष्ठ्यां प्रपूजयेत् ।
 शुक्रेण्युष्यत्तरः प्राश्य अन्नमेधफलं भवेत् ॥
 वैशाखे सूर्यनामानं क्षण्यषष्ठ्यां प्रपूजयेत् ।
 पीत्वा कुशोदकं पुष्यं जितक्रोधो जितेन्द्रियः ।
 महामेधस्य यज्ञस्य वैनतेय फलं लभेत् ॥
 ज्येष्ठे दिवस्यतिं पूज्य गवां शुक्रेणोदकं पिबेत् ।
 गवां कोटिप्रदानस्य निखिलं फलमश्नुते ॥
 आषाढे अर्जुनामानमिष्टा प्राश्य च गोमयम् ।
 प्रयात्यर्जुसक्तोक्तं वर्षायां द्विशतं शतम् ॥
 श्रावणेऽर्शमनामानं पूजयित्वा पयः पिबेत् ।
 वर्षाणामयुतं सायं मोदते भास्कराक्षये ॥
 मासि भाद्रपदे षष्ठ्यां भास्करं नाम पूजयेत् ।
 दूर्वाङ्गुरं सन्नत् प्राश्य राजसूयफलं लभेत् ॥
 आश्विने देवदेवस्य सप्ताश्वमिति पूजयेत् ।
 दधि संप्राश्य विधिवत् पुण्डरीकफलं लभेत् ॥

मासे तु कार्तिके षष्ठां श्रद्धाख्यं नाम पूजयेत् ।

गोमूत्रफलमश्रीयादश्वमेधफलं क्षमेत् ॥

गोमूत्रभावितफलं गोमूत्रफलम् ॥

वर्षान्ते भोजयेद्विप्रान् सूर्यभक्तिपरायणान् ।

पायसं मधुसंयुक्तमाग्नेन सुपरिप्लुतम् ॥

श्रद्धया हिरण्यवासांसि भक्त्या तेभ्यो निवेदयेत् ।

निवेदयेत्तु सूर्याय गाञ्च कृष्णां पयस्विनीम् ॥

वर्षमेकश्चरेदेवं नैरन्तर्येण यो नरः ।

कृष्णषष्ठीव्रतं भक्त्या तस्य पुण्यफलं ऋणम् ॥

सर्वपापविनिर्मुक्तः सर्वकामसम्पन्नितः ।

मीदते सूर्यलोके तु स नरः श्राव्यतीः समाः ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं कृष्णषष्ठी व्रतम् ।

—000—

षष्ठीनामतिथिर्याज्या सामान्या दैवतैरपि ।

एकभक्तेन नक्तेन तथैवायाचितेन च ॥

उपवासेन दानेन तैलचरविर्वर्जितः ।

अयं हि भगवान् देवो भास्करश्च परश्रुतिः ॥

येन शीघ्रिण दृश्येत तद्गुह्यं कथयाम्यहम् ।

गोपनीयं व्रतं दिव्यमिह लोके फलप्रदम् ॥

यस्मिन् कृते व्रते चैव दरिद्रो न भवेत् कुले ।

षष्ठीतिथिं समुद्दिश्य ब्राह्मणस्य च भोजनम् ॥

शास्वीदनञ्च पयसि कृत्वा च शर्करायुतम् ।
 बाहुव्यष्टतसंयुक्तं वर्षमेकं प्रदापयेत् ॥
 कुले तस्यैव ये जाता ये भविष्यन्ति मानवाः ।
 इह तस्यैव ये सन्ति तान् दारिद्र्यं न गच्छति ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तमदारिद्र्यषष्ठीव्रतम् ।

—०#०—

स्तुतिलघ्योपहारेण पूजया च विवस्वतः ।
 उपवासेन षष्ठ्यां वै सर्व्यं पापैः प्रमुच्यते ॥

इति ब्रह्मपुराणोक्तं षष्ठीव्रतम् ।

—०#०—

कृतोपवासः पञ्चम्यां षष्ठ्यां योऽर्चयति रविं
 नियमव्रतचारी च रवेर्भक्तिसमन्वितः ।
 सप्तम्यां वा महाभाग सोऽष्टमेधफलं लभेत् ॥

इति ब्रह्मपुराणोक्तं षष्ठीव्रतम् ।

—०#०—

षष्ठ्याञ्च शुक्लपक्षस्य ये नरा भौमवासरे ।
 व्रतचरति यत्नेन तथा तासां पृथक् पृथक् ॥
 न तेषां दुर्लभं किञ्चित् भविष्यति सुरोत्तम ।
 द्वियोगे हि गुणं तेषां फलं स्कन्द भविष्यति ॥
 त्रियोगे पूजनं कृत्वा मासेषु सुरसत्तम ।

पक्षयं जायते पुच्छं नात्र कार्या विचारणा ।

इति विष्णुधर्म्मोत्तरोक्तं षष्ठीव्रतम् ।

—०००—

वैशाखमासादारभ्य पक्षम्यां य उपोषितः ।
 भवन्तं पूजयेत् षष्ठां संवत्सरमतन्द्रितः ॥
 पुत्रार्थी प्राप्नुयात् पुत्रान् धनकामो धनी भवेत् ।
 स्वर्गार्थी प्राप्नुयात् स्वर्गमपि तुष्टो ममात्मजः ॥
 स्त्रीत्रेण च मदीयेन ये स्त्रीष्यन्ति नरः प्रभोः ।
 लोकाहयेऽपि ते कामान् प्राप्नोति तमसः प्रियान् ॥
 कुमारस्य तथा स्कन्दो विशाखस्य गुहस्ताया ।
 चतुरात्मा विनिर्दिष्टो भगवान् क्रौञ्चसूदनः ॥
 तमभ्यर्च्य नरः षष्ठां पुत्रान् प्राप्नोत्यभीष्टितान् ।
 वासुदेवानां षष्ठेऽप्येवो नरः प्राप्नोत्यसंशयम् ॥

इति विष्णुधर्म्मोत्तरोक्तं पुत्रप्राप्तिव्रतम् ।

—०*०—

ऋषीणां पूजनं कृत्वा षष्ठां सुखमवाप्नुयात् ॥

इति विष्णुधर्म्मोत्तरोक्तं सुखव्रतम् ।

—०*०—

स्कन्दपार्श्वेचरान् राजन् ब्रह्मपार्श्वेचरानघ ।
 वनपार्श्वेचरां चैव रोगसुक्तिमवाप्नुयात् ॥

इति विष्णुधर्मात्तरोक्तं रोगमुक्तिव्रतम् ।

—000—

काशपायं तथाभ्यर्च्य ज्वरव्याधीशमेव च ।

रोगमोक्षमवाप्नोति वायुवह्निदवांस्तथा ॥

इति विष्णुधर्मात्तरोक्तं रोगहरषष्ठीव्रतम् ।

इति श्रीमहाराजाधिराजसमस्तकरणाधीश्वरसकल-

विद्याविशारदश्रीहेमाद्रिविरचिते चतुर्वर्ग

चिन्तामणौ व्रतखण्डे षष्ठीव्रतानि ।

—

अथ एकादशोऽध्यायः ।



अथ सप्तमीव्रतानि ।

आचारैः प्रथमयुवा युगेन सार्धं
न सार्धं कश्चिरपि साम्प्रतं विधत्ते ।
यस्योच्चैः स्वरितमवाप्य साधुसोऽयं
हेमाद्रिः कथयति सप्तमीव्रतानि ॥

छाया उवाच ।

पार्थ श्रुतं मया पूर्व्वं शाण्डिल्याद्भ्रतमुत्तमम् ।
शुक्लाद्भ्रतमं पुष्यं तपस्वरणसंज्ञितम् ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

कथं कार्य्यं व्रतं देव तपस्वरणसंज्ञितम् ।
सविस्तरं मम ब्रूहि सरहस्यं समन्वकम् ॥

छाया उवाच ।

शृणुष्वावहितो भूत्वा युधिष्ठिर तपोव्रतम् ।
मार्गशीर्षादिमासेषु कर्त्तव्यं भूतिमिच्छता ॥
तस्मिंश्चित्तोव्रते विप्रो वङ्गुचो वेदपारगः ।
ब्रह्मवित् छाण्डसप्तम्यां दद्यादर्घ्यं महौतसे ॥
ऋग्वेदवर्गभितयं पठिता सूर्य्यवत्सभम् ।

पादक्रमेण कौन्तेय कनिष्ठददितिश्रुतम्^० ॥

पादक्रमेणातिप्रतिपादनमर्घ्यदानम् ।

एकभक्तेन नक्तेनायाचितेन तथा सुधीः[†] ॥

द्विजो वेदोक्तमन्त्रैस्तु प्रागुक्तैः पाण्डवाग्रज ।

अर्घ्यं दद्याद्विना मन्त्रैः शूद्राः सूर्यपरायणाः ।

चतुर्थ्यन्तेन मन्त्रेण नामचादौ व्यवस्थितम् ॥

शूद्राणां परमोमन्त्रः सर्वशास्त्रेषु पठ्यते[‡] ।

कृत्वा ताम्रमये पात्रे सार्द्धं पुष्याक्षतैर्नृप ॥

रक्तचन्दनसंमिश्रं दूर्वपल्लवशोभितम् ।

रक्तानि करवीराणि तथा रक्तोत्पलानि च ॥

कोरुण्डकविमिश्राणि जवाशोकाश्वितानि च ।

किंशुकागरुचकुसुमकरवीराणि मालतीं ॥

सुचक्रुन्दश्च क्रुन्दश्च शतपत्रं समञ्जिकम् ।

एतानि च यथास्वाभं^० ताम्रपात्रे विनिक्षिपेत् ॥

गोरोचनाकुशाद्याणि श्रीखण्डकुङ्कुमन्तथा ।

तिलतन्दुलसिद्धार्थदधिकुङ्कुमकोसरम् ॥

कुङ्कुमकोशरं कुसुभं ।

एभिरर्घ्यं^० दद्यादुच्चैः कृत्वा भुजौ नृप ।

व्योमसुद्रां पुनर्वध्वा नमस्कृत्य समापयेत् ॥

० निष्क्रन्ददिति चतुर्निति पुलकान्तरे पाठः ।

† कुर्वोद्भवतिर्हं सुधारिति क्वचित्पाठः ।

‡ सुनिश्चित इति तु त्रकान्तरे पाठः ।

¶ पुष्याधि रक्तचर्माद्यैति पुलकान्तरे पाठः ।

०० इत्यानिकपत्रे कुर्वोदिति तु त्रकान्तरे पाठः ।

व्योममुद्रान्तु विष्णुधर्मोत्तरात् ।

करयोः संपुटोन्योन्यमणिवन्धस्थिताङ्गुलिः ।

सान्तरालान्तरोयत्र व्योममुद्रेति तां जगुरिति ॥

अत्र प्रतिमानुक्तेः प्रत्यक्षस्यैव सूर्यविम्बस्वार्धदानमिति ।

एवं मानकमेणैव यावत्सम्बन्धं नृप ।

समाप्ते तु व्रते दद्याद्विप्रेभ्यः श्रद्धयान्वितः ॥

द्वादश प्रणीताः पार्श्वं पायसेन प्रपूरिताः ।

सौवर्णं पङ्कजं शक्त्या विप्रेभ्यो दक्षिणा स्मृता ॥

वस्त्रयुग्मञ्च काषायं दद्याद्देवाय दानव ।

एवं यः कुर्वते सम्यक् तपश्चरणसंज्ञितं ॥

व्रतं नरो वा नारी वा सूर्यभक्त्या सुभावितः ।

स याति भवनं तत्र यत्र देवी दिवाकरः ॥

पूज्यमानोऽप्सरीहृन्दैः हृन्दारकइवापरः ।

सम्प्राप्य जन्मचैवाग्रं दुःखदौर्भाग्यवर्जितः ॥

आदित्यस्य प्रसादेन भक्तिः स्यात्तत्र निश्चला ।

श्रीदुम्बरैः फलयुगैः सममाचितं च

दर्भान्वितञ्च कुसुमाक्षतपूरितञ्च ।

अर्घ्यं विधाय विधिवत् नृप यः प्रदद्यात्

लोकं प्रयात्यमलद्वैधितिनासित सः ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं तपश्चरणव्रतम् ।

—•••—

कृष्ण उवाच ।

सुनीन्द्रीश्रीमश्रीनाम मधुरायां गतः पुरा ।

सोऽर्चिती वसुदेवेन देवक्या च युधिष्ठिर ॥
 उपविष्टः कथाः पुण्याः कथयित्वा मनोरमाः ।
 ततः कथयितुं भूप कथामेतां प्रचक्षते ॥
 कथेन ते हताः पुञ्जि पुञ्जा जाताः पुनः पुनः ।
 मृतवत्सा देवकि त्वं पुञ्जदुःखेन दुःखिता ॥
 यथा चन्द्रसुखी दीना बभूव नहुषप्रिया ।
 पचाशीर्षव्रता सैव बभूवाऽतवत्सका ॥
 त्वमेव देवकि तथा भविष्यसि न संशयः ।

देवक्युवाच ।

का वा चन्द्रसुखी ब्रह्मन् बभूव नहुषप्रिया ।
 किञ्च शीर्षं व्रतं पुण्यं तथा सन्ततिवर्षणम् ॥
 सपत्नीदर्पदसनं सौभाग्यारोष्यदं विभी ।

सौम्य उवाच ।

अयोध्यायां पुरा राजा नहुषो नाम विन्दुतः ।
 तस्मात्सौद्रूपसम्भवा देवी चन्द्रसुखी प्रिया ॥
 तथा तत्रैव नगरे विष्णुगुप्तोऽभवद्विजः ।
 आसीद्गुणवती तस्मै पत्नी भद्रसुखी तथा ॥
 तयोरासीद्भृङ्गा प्रीतिः शृङ्गनीया परस्परम् ।
 अत्र ते द्वेपि सख्यौ वै ज्ञानार्थं शरयूतटे ॥
 प्राप्ते प्राप्ताश्च तत्रैव वाग्याश्च नगराङ्गनाः ।
 ताः ज्ञात्वा मण्डलाक्षजस्तन्मध्ये व्यक्तकपिचम् ॥
 लेखयित्वा शिबं शान्तसुमया सच्च शङ्करम् ।
 गन्धपुष्पाक्षतैर्भक्त्या पूजयित्वा बधाविधि ॥

प्रथम्य गन्तुज्ञानास्ताः पप्रच्छतीवरस्त्रियः ।
 ता जसुः शङ्करोष्माभिः पार्ष्वत्या सह पूजितः ॥
 बद्धा स्रगमयं तन्मुं शिवस्यान्मा निवेदितः ।
 धारणीयमिदन्तावद्यावरप्राणविधारणम् ॥
 तासां तद्वचनं श्रुत्वा सख्यावेतेऽपि देवकि ।
 ज्ञत्वा च समयं तत्र बद्धा दीर्घीं सुखीरक्षम् ॥
 ततस्ताः खण्डहं जग्मुः खसखीभिः समाहृताः ।
 कालेन महता तस्यास्तद्वृतं विस्मृतं शुभम् ॥
 चन्द्रमुख्याः प्रमत्तायाः विस्मृतः स च क्षीरकः ।
 भद्रमुख्या तथा भद्रे विस्मृतं सर्वमेव तत् ॥
 मृते कैचिद्दक्षीराचैः सा बभूव ब्रह्ममी ।
 भद्रा स्यात् कुक्षुटी जाता व्रतभङ्गाच्छुभानने ॥
 कालेन पञ्चतां प्राप्ते सखीभावस्य हेतवे ।
 अद्वैवमाहके देशे जाते गोकुलसङ्गुले ॥
 ब्राह्मणी ब्राह्मणी जाता क्षत्रिया क्षत्रियी तथा ।
 राज्ञी जाया बभूवाद्य पृथ्वीनाथस्य वल्लभा ॥
 ईश्वरी नाम विख्याता यासीत् चन्द्रमुखी पुरा ।
 नाम्ना भद्रमुखी यासीत् भूषणानाम साभवत् ॥
 अग्निमीक्षस्य सा दत्ता पिता तस्य पुरोधसा ।
 अतीववल्लभा आसीत् भूषया भूषणप्रिया ॥
 भूषिता भूषितवरैरूपेणासङ्गता स्रगम् ।
 तस्या बभूव रक्षाद्य पुत्राः सर्वगुणान्विताः ॥
 माहवद्रूपसम्पत्ताः पितृवत्सर्वाशीलिनः ।

सखी तेचैव तद्वच्च जाते जातिस्मरे किल ॥
 पुनर्निरन्तरा प्रीतिस्त्रयोरासीद्यथा पुरा ।
 काले बहुतिथे याते त्यक्त्वा सा सख्यवत्तमा ॥
 मध्ये वयसि सा राक्षी पुत्रमेकमजीजनत् ।
 ईश्वरी रोगिणं मूकं प्रप्राह्वीनञ्च विस्तरम् ॥
 तादृशोऽपि महाभागे सतोऽसौ नववार्त्तिकः ।
 ततस्तां भूषणभ्रष्टामोश्वरीं पुत्रदुखिताम् ॥
 सखीभावादतिस्त्रेहात् पुत्रैश्च परिवारिता ।
 अमुक्त्वाभरणा भद्रा स्वरूपेणैव भूषिता ॥
 तां दृष्ट्वा सदृशीं भार्यां प्रजज्वालेश्वरी कथा ।
 ततो गृहं प्रेषयित्वा ब्राह्मणी तौत्रमन्तरा ॥
 चिन्तयामास सा राक्षी तस्याः पुत्रबधं प्रति ।
 निश्चित्य चेतसा क्रूरा यातयामास तक्षुतान् ॥
 हताहताश्च ते पुत्राः पुनर्जीवन्त्यनामयम् ।
 तद्गूततरं दृष्ट्वा सतीमाङ्गय भूषणां ॥
 उपवेश्यासने श्रेष्ठे बहुमानपुरःसरम् ।
 अपृच्छत् विस्मयाविष्टा राक्षी सा स्रुतवत्सका ॥
 ब्रूहि तव्यं महाभागे किन्त्वया सुकृतं कृतम् ।
 दानव्रतं तपोवापि शून्यं चण्डसुषोषितम् ॥
 येन ते निहताः पुत्राः पुनर्जीवन्त्यनामयाः ।
 तथा हि बहुपुत्रा च जीववत्सा शुभानने ॥
 अमुक्त्वाभरणा नित्यं भर्तुं चेतस्यवस्थिता ।
 अतीव ग्रीभवे देवि विद्युद्वर्षात्पदे वशा ॥

भूषणीवाच ।

शृणु देवि प्रवक्ष्यामि जन्मान्तरविषेष्टिणम् ।
 किं तर्हि विष्कृतं सर्व्वं मयीध्यायाच्च यत् कृतं ॥
 आवाभ्यां व्रतवैकल्यं प्रमत्ताभ्यां वरानने ।
 येन त्वं भ्रवगी जाताहं सा च कुक्कुटी तथा ॥
 तथापि व्रतवैकल्यं त्वया च मानप्रतः कृतम् ।
 मया तु सर्व्वभावेन चेतसाध्याय शङ्करम् ॥
 तिर्थ्यग्योन्धं गता येन मनोवृत्त्या स्वनुष्ठितम् ।
 एतच्च कारणं भद्रे नान्यत्किञ्चित् करोम्यहम् ॥

सोमय उवाच ।

इत्याकर्ण्यं च संगृह्य पूर्व्वजन्मनि चेष्टितम् ।
 ईश्वरी च तथा सार्धं पुनःसम्यक् चकार ह ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेन पुत्रपौत्रादिसम्भवैः ।
 भुक्त्वा च सौख्यमतुलं मृता शिवपुरङ्गता ॥
 तस्मात्स्वमपि कथाणि व्रतमेतत् समाचर ।
 प्रारब्धेऽस्मिन् व्रते दिव्ये जीवत्पुत्रा भविष्यति ॥

देवकुमुदाच ।

ब्रह्मन्नास्यादि ते सम्यक् व्रतमेतत् सुखप्रदम् ।
 सन्मानवृत्तिकारणं शिवस्तीर्णे स्थितिप्रदम् ॥

सोमय उवाच ।

भाद्र भाद्रपदे मासि सप्तम्यां सशिलाग्रये ।
 ज्ञात्वा शिवं मण्डलके ज्ञेययित्वा तथाम्बिकाम् ॥

भक्त्या सम्पूज्य समयं कुर्याद्दद्या करे शुचम् ।
 यावज्जीवं मयात्मा तु शिवस्य विनिवेदितः ॥
 इत्येवं समयं कृत्वा शिवस्य विनिवेदितः ।
 इत्येवं समयं कृत्वा ततः प्रभृतिशोरकम् ॥
 सौवर्णं राजतश्चापि सौषं वा धारयेत् करे ।
 मण्डकान् वेष्टिकानद्यादश्वपत्रे यथा द्विज ॥
 स्वयन्ताशैव भोक्तव्या व्रतभङ्गभयाच्छुभे ।
 पारिते मुद्रिका वासो हैमीरौप्याः स्वप्रक्षितः ॥
 तान्मपात्रोपरि स्थाप्य ब्राह्मणेभ्यो निवेदयेत् ।
 आचार्याय विशेषेण कर्त्तव्यश्चाङ्गुलीयकम् ॥
 पुष्य कुङ्कुम सिन्दूर ताग्वूलाङ्गनसूचकैः ।
 एवं तत्पारयित्वा तु व्रतं सन्ततिवर्षणम् ॥
 सर्वपापविनिर्मुक्ता कृत्वा सौख्यं मनोरमम् ।
 सन्तानं वर्षयित्वा च शिवलोके मञ्जीयते ॥
 एतत्ते सर्वमाख्यातमाख्यानसहितव्रतम् ।
 कुर्व देवकि यत्नेन जीवपुत्रा भविष्यसि ॥

कृष्ण उवाच ।

इत्युक्त्वा स मुनिश्चै उ स्तत्रैवान्तरधीयत ।
 चकार सर्वयत्नेन यदुक्तं तेन धीमता ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेण देवकी मामजीजनत् ।
 तस्मात् पार्थ नरैः कार्यं क्लीभिः कार्यं विशेषतः ॥
 व्रतं पापहरं भव्यं सुखसन्ततिदं सदा ।
 इदं च नृण्युयाद्ब्रह्मा यच्चैतत् प्रतिपादयेत् ॥

व्रतमाख्यानसहितं सोऽपि पापैः प्रमुच्यते ।
 सान्त्तानकं व्रतमिदं सुख मोक्षकामा
 या स्त्री चरिष्यति शिवं हृदये निधात्वा ।
 विहाय दुःखमनुसङ्गतकल्मषीणा
 सा स्त्री व्रताद्भवति श्रीभक्तजीववत्सा ॥

इति भविष्योत्तरे अमुक्ताभरणसप्तमीव्रतम् ।

—000—

भीष्म उवाच ।

भगवन् दुर्गसंसारसागरोत्तारकं तथा ।
 किञ्चिद्भूतं समाचक्ष्व स्वर्गारोग्यसुखप्रदम् ॥

पुलस्त्य उवाच ।

सौरधर्मं प्रवक्ष्यामि पार्थ कल्याणसप्तमीं ।
 विधानं तस्या वक्ष्यामि यथावदनुपूर्व्यम् ॥
 यदा तु शुक्लसप्तम्यामादित्यस्य दिनं भवेत् ।
 सा तु कल्याणिनी नाम विजया च निगद्यते ॥
 प्रातर्गन्धेन पयसा स्नानमस्यां समाचरेत् ।
 शुक्लाम्बरधरः पद्ममन्त्रैः परिकल्पयेत् ॥
 प्राङ्मुखोऽष्टदलं मध्ये तद्भुजस्य सकर्णिकम् ।
 सर्वेष्वपि दशेष्वीशं विन्यसेत् पूर्वतः क्रमात् ॥
 पूर्वेषु तपनायेति मार्शच्छायेति वै ततः ।
 याम्ये दिवाकारायेति विधात्रे इति नैर्हते ॥
 पश्चिमे वरुणायेति भास्करायेति चामिषे ।

सौम्ये विकर्त्तनायेति रचयेदष्टमि दक्षे ॥
 आदावन्तेषु मधेयं च नमोस्तु परमात्मने ।
 मन्त्रैरेभिःसमभ्यर्च्यं नमस्तारान्तादीपितैः ॥
 शलावस्त्रैः फलेभ्यश्चै धूपैर्मात्यागुलेपनैः ।
 स्त्रिण्डुले पूजयेद्भक्त्या गुह्येन सवयेन च ॥
 ततो व्याहृतमन्त्रेण विसृजेत् द्विजपुङ्गव ।
 शक्तिस्तर्पयेद्भक्त्या गुह्येन चौरघृतादिभिः ॥
 तिस्रपात्रं हिरण्यं च गुरवे विनिवेदयेत् ।
 एवमु नियमं कृत्वा प्रातरुत्थाय मानवः ॥
 कृतस्नानजपैर्विप्रैः सहैव घृतपायसम् ।
 भुक्त्वा च वेदविद्वद्भिर्व्यंङ्गासन्नतवर्जितः ॥
 घृतपात्रं सकानकं सोदकुम्भं निवेदयेत् ।
 प्रीयतामच भगवन् फलमाहृद्दिवाकरः ॥
 अनेन विधिना सर्व्वं मासि मासि समाचरेत् ।
 एवं सम्बन्धरस्यान्ते कृत्वैतदखिलं वृष ॥
 उद्यापयेद्यथाशुक्त्वा भास्करं संस्मरन् वृदि ।
 ततस्त्रयोदशे मासि गावोदद्यात् त्रयोदश ॥
 वस्त्रालङ्कारसंयुक्ता हेमशृङ्गीः पर्यस्त्रिणीः ।
 एकामपि प्रदद्यात्कान् विसृष्टीनश्च निःश्रियः ॥
 विसृष्टाठं न कुर्वीत ततोस्त्रोभात् पतत्यधः ।
 अनेन विधिना यस्तु कुर्यात् कल्याणसप्तमीम् ॥
 श्रुत्वैति पठनाहापि सर्व्वपापैः प्रमुच्यते ।
 कर्त्ता शिवपुरे स्थित्वा कल्पमेकमिहागतः ॥

राजा भवति राजेन्द्र चेतायां राघवी यथा ।
 पद्माष्टपत्रकमसोदरकर्णिकायां
 सम्यजयेत्कुसुम धूप विलेपनाद्यैः ।
 षष्ठाः परे हनि जनार्त्तिहरं दिनेऽग्रं
 कल्याणभाजनमसौ भवतीह नूनम् ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं कल्याणसप्तमीव्रतम् ।

—*—

पुस्तक उवाच ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि व्रतं कमलसप्तमीं ।
 यस्य संकीर्तनादेव तुष्यतीह दिवाकरः ॥
 वसन्तामनसप्तम्यां स्नातः सन्* गौरसर्षपैः ।
 तिलपात्रे तु सौवर्चं निधाय कमले रविम् ॥
 वस्त्रोपवीताभरणगन्धपुष्पैरघार्चयेत्* ।
 नमस्ते षष्पदस्थाय नमस्ते विश्वधारिणे ।
 दिवाकर नमस्तुभ्यं प्रभाकर नमोस्तु ते ॥
 ततस्तु कालवेलायासुदकुम्भसमन्वितं ।
 विप्राय दद्यात्संभ्रूय वस्त्रमाज्यादिभूषितम् ॥
 रविं सकमलं दद्यादसंज्ञित्य विधानतः ।
 उपवासं प्रकुर्वीत परं नियममास्त्रितः ॥
 प्रभातायान्तु शर्करीयामष्टम्यां भोजयेद्भुजान् ।

* कमलं ग्रामनिधि पुस्तकालये पाठः

* वस्त्रयुग्माद्यमिति वा पाठः

यथाशक्त्या स्वयं पश्चात् भुञ्जीत मांसवर्जितम् ॥
 अनेन विधिना शुक्लसप्तम्यां मांसि मांसि तु ।
 सर्व्वं समाचरेद्भक्त्या वित्तश्राठाविवर्जितः ॥
 व्रतान्ते शयनं दद्यात् सुवर्णकमलान्वितम् ।
 गाञ्च दद्याद्यथाशक्त्या सर्व्वसङ्कारभूषिताम् ॥
 व्यजनासनदीपाञ्च यद्यान्यात् कल्पितं गृहे ।
 अनेन विधिना यस्तु कुर्यात् कमलसप्तमीं ॥
 आधिव्याधिविनिर्मुक्तः सुखसौभाग्यभाजनः ।
 मुक्ता भोगाञ्छिरं मर्त्ये नृतीरविपुरं व्रजेत् ॥
 कल्पानेकं ततः स्थित्वा आगत्याञ्च नराधिपः ।
 सर्व्वसम्पत्त्यवृत्ते च कुले भवति भूभुजाम् ॥
 तत्रापि भानुनिरतोव्रतैः सन्तीष्य भास्करम् ।
 उपर्य्युपरि संप्राप्य जन्म भङ्गीरवेस्तथा ॥
 सप्तजन्मानि राजेन्द्रस्ततीयाति परं पदम् ।
 यदर्थैर्भुङ्गयः सिद्धाः सुराषेन्द्रपुरोगमाः ॥
 निर्व्विष्या भरतश्रेष्ठ प्राप्नुवन्त्यक्षतोद्यमं ।
 एवं व्रतं महेन्द्रस्य समाख्यातं स्वयञ्चुवा ॥
 तेनैव नारदस्वीकृतं नारदेन स्वयं मम ।
 आख्यानं विजनं कृत्वा यतो गुह्यतरं नृप ॥
 यः पश्यतीदं शृणुयाच्च क्लृप्तं
 पठेच्च भक्त्याथ मतिं ददाति ।
 सीप्यञ्च लक्ष्मीमचलामवाप्य
 गन्धर्व्वविद्याधरलोकमिति ॥

इति पद्मपुराणोक्तं कमलसप्तमीव्रतम् ।

पुलस्त्य उवाच ।

शर्करासप्तमीं वक्ष्ये सर्व्वं कल्पधनाग्निनीं ।
 आयुरारोग्यमैश्वर्य्यं यथानन्तं प्रजायते ॥
 माधवस्य सिते पक्षे सप्तम्यां अहयान्वितः ।
 प्रातस्नातस्त्रिलैःशुक्लैः शुक्लमाख्यानुलेपनः ॥
 स्यण्डिले पद्ममालिख्य कुङ्कुमेन सकर्णिकम् ।
 तस्मिन्नमः सविचेति धूपं पुष्पं निवेद्ययेत् ॥
 स्यापयेद्ब्रह्मणं कुम्भं शर्करापाचसंयुतम् ।
 शुक्लवस्त्रेण संवेष्ट्य शुक्लमाख्यानुलेपनैः ॥
 सहिरण्यं यथाशक्त्या मन्त्रेणानेन पूजयेत् ।
 विश्वेदेवमयोग्यस्माद्देवादीति पठयेत् ॥
 त्वमेवाभृतसर्व्वंस्व भूतः पाहि सनातन ।
 पञ्चगव्यं ततः पीत्वा स्वपेक्षत्पार्श्वतः क्षितौ ॥
 सौरसूक्तं जपंस्तिष्ठेत् पुराणश्रवणेन च ।
 अहोरात्रे गते पश्चादष्टम्याद्भृतनित्यकः ॥
 तत्सर्व्वं वेदविदुषे ब्राह्मणाय निवेद्ययेत् ।
 भोजयेच्छक्तितोविभान् शर्कराघृतपायसैः ॥
 भुञ्जीतातैललवणं स्वयमस्याथवायतः ।
 अनेन विधिना सर्व्वं मासि मासि समाचरेत् ॥
 वत्सरान्ते पुनर्दद्याद्ब्राह्मणाय समाहितः ।
 शयनं वस्त्रसंस्नीतं शर्कराकनकान्वितं ॥
 सर्व्वोपस्कारसंयुक्तं तथैकां गां पयस्विनीम् ॥

गृह्यच्च शक्तितोदयात् समस्तोपस्कराश्रितं ।
सहस्रेणाद्य निष्काराङ्गुत्वा दद्याच्छतेन वा ॥
दशभिर्वा त्रिभिर्निकैर्निकैकेन वा पुनः ।
पद्मं स्वशक्तितो दद्यात् वित्तगाठाविवर्जितः ॥

पद्मं, सौवर्णपद्मम् ।

अमृतं पितृतोवक्त्रात् सूर्यस्यामृतविन्दवः ।
निष्पेतुष्ये तदुत्पन्नाः शालिसुहेचवः स्मृताः ॥
शर्करा च परं तस्मादिदुसारामृतोपमा ।
दृष्टा रवेरतः पुण्याः शर्करा ह्यव्यकव्ययोः ॥
शर्करासप्तमी चैषा वाजिमेधफलप्रदा ।
सर्वदुःखोपशमनी पुत्रसन्ततिवर्धनी ॥
यः कुर्यात्परया भक्त्या स वै सन्नतिमाप्नुयात् ।
कल्पमेकं वसेत् स्वर्गं* ततोऽयाति परं पदम् ॥

इदमनघं शृणोति यः क्षरेद्वा

पठति स याति सुरेश्वरस्य लोकम् ।

मतिमति च ददाति यो जनानां

ममरवधूजनकिशरैः सपूज्यः ॥

इति पद्मपुराणोक्तं शर्करासप्तमीव्रतम् ।

—000—

युधिष्ठिर उवाच ।

अभ्रवेण शरीरेण सुपुष्टेनापि किं फलम् ।

माघस्नानविहीनेन त्वयोक्तं यदुनन्दन ॥

* तनोराजाभवेदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

प्रातस्नानसमर्धानां शरीरं यस्य देहिमः ।
 किं तेन वद् कर्त्तव्यं माघे संसारभौक्षणा ॥
 कायज्ञेयसहा नार्थी न भवति वदूतम ।
 लीलुनार्थ्याश्चरीरस्य भवलात्प्रातर्बैष ॥
 कबच ताः सुरूपाः स्युः सुभगाः सुप्रजास्तथा ।
 स्वज्ञतस्त्रैव पुण्यस्य सर्वमेतत् फलं यतः ॥
 अत्यायासेन सुमहत् केन पुण्यमवाप्यते ।
 स्त्रीभिर्मार्घे भवेद्ब्रूहि ज्ञानं तद्धि जगद्गुरो ॥
 ज्ञान उवाच ।

श्रूयतां पाण्डवश्रेष्ठ रहस्यं मुनिभाषितम् ।
 यन्मया कस्यचिन्नोक्तमचलात्ममीश्वरं ॥
 वेद्या चेन्दुमती नाम रूपोदार्यगुणान्विता ।
 आसीत् कुङ्कुलश्रेष्ठ मगधस्य विलासिनी ॥
 तनुमध्या सुजघनी पीनोन्नतपयोधरा ।
 सम्यम्बिभक्तावयवा पूर्वचन्द्रनिभानना ॥
 सौन्दर्यं सुकुमार्यश्च तस्याः कामेन गीयते ।
 यस्याः सुदर्शनादेव कामः कामातुरीभवेत् ॥
 मूर्तिः शशधरस्त्रैव नयनानन्दकारिणी ।
 बभौकरचविद्येव सर्व्वं लीकमनीहरा ॥
 एकस्मिन् दिवसे प्रातः सन्मुखस्त्रितया तया ।
 चिन्तिता हृदये राजन् संसारस्यानवस्थितिः ॥
 संनिज्ज्जगदिदं विषवेलायसागरे ।
 जरास्युज्वरग्राहे न कश्चिदवबुध्यते ॥

अक्षुपारभूतभाण्डो धातुयित्पिबिनिर्मितः ।
 स्वकर्म्मघनसन्धीतः पश्यते काशवद्विना ॥
 ये यान्ति दिवसाः पुंसां धर्म्मकर्म्मार्थवर्जिताः ॥
 न ते पुनरिच्छामन्ति हरभक्तनरा यथा ॥
 पूजास्नानतपोहोमस्नाध्यायपित्ततर्पणं ।
 यस्मिन् दिने न क्रियते वृथा तद्विवसं वृथाम् ॥
 पुत्रार्थां दारमृद्दके समावृत्तं हि मानवम् ।
 वृक्षीवीरचमासाद्य मृत्युरादाय गच्छति ॥
 इत्येवं चिन्तयित्वा तु वेद्याचेन्दुमती ततः ।
 वसिष्ठस्वात्म्यं पुच्छं जगाम गजगामिनी ॥
 वसिष्ठमृषिमानीं प्रथम्य विनयान्विता ।
 कृताञ्जलिपुटो कृत्वा इहं वचनमब्रवीत् ॥

इन्दुमत्युवाच ।

मया न इत्तं न द्युतं नीपवासकृतं व्रतम् ।
 भक्त्या न पूजितः शम्भुः स्वामिन् माहर्षिरो न च ॥
 साम्प्रतं तप्यमानाया व्रतं किञ्चिददत्त मे ।
 वेन दुःखान्मुषहोषादुत्तरानि भवार्थंवात् ॥
 एतत्तस्याः सुबहुयः श्रुत्वातिकरुचम्वचः ।
 कारुणात् कथयामास वसिष्ठो मुनिसत्तमः ॥
 माचक्षु सितकृतम्बां सर्वकामफलप्रदम् ।
 रूपसौभाग्यजननं स्नानं कुह वरानने ॥
 कृत्वा वष्टानिकभक्तं कृतम्बां निवसं जलम् ।
 रात्रंते चाकथेवास्व' इत्या मिरसि हीपकम् ॥

माघस्य क्षितिसप्तम्यामचलचालितश्च वत् ।
 जलं मलागां सर्वेषांकारणत् चालनन्ततः ॥
 वसिष्ठवचनं श्रुत्वा तस्मिन्नहनि भारत ।
 चकारेन्दुमतीक्ष्णानं दानं सस्रज् वचाविधि ॥
 ज्ञानस्वास्त्र प्रभावेच भुक्त्वा भोगान्यधेक्षितान् ।
 इन्द्रलीकेऽखरःसङ्घे नायकत्वमवाप सा ॥
 पञ्चलासप्तमीज्ञानं कथितं ते विशान्यते ।
 सर्वपापप्रशमनं सुखसौभाग्यवर्धनम् ॥

• बुधिष्ठिर उवाच ।

सप्तमीज्ञानमाहात्म्यं श्रुतं निरवशेषितम् ।
 साम्प्रतं श्रोतुमिच्छामि विधिं मन्त्रसमन्वितम् ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

एकभक्त्येन सन्तिष्ठेत् षष्ठ्यां संपूज्य भास्करम् ।
 सप्तम्यां तु व्रजेत् प्रातः सुगन्धौरजलाशयम् ॥
 सरिस्कारस्तङ्गानं वा देवखातमद्यापि वा ।
 सुखावगाहसलिलं दुष्टसर्वै रदूषितम् ॥
 व्यालाम्बुपक्षिभिश्चैव जलगैर्मत्स्यकच्छपैः ।
 न केन चाख्यते यावत्तावत् ज्ञानं समाचरेत् ॥
 सौवर्णं राजते पात्रे भक्त्या ताम्बमयेऽथ वा ।
 तैलवर्त्तिः प्रदातव्या महारजतरञ्जिता ॥

महारजतद्गु सुभं

* वसिष्ठउवाचेति क्वचित्पाठः ।

समाहितमना भूत्वा दत्त्वा शिरसि दीपकम् ।
भास्करं हृदये ध्यात्वा हर्मं मन्मनुदीरयेत् ॥
नमस्ते बद्रूपाय रसानां पतये नमः ।
बह्वाय नमस्तेस्तु हरिवास नमोस्तु ते ॥
जलोपरि तरेद्दीपः स्नात्वा सन्तर्प्य देवताः ।
चन्द्रेण लिखेत्पद्ममष्टपत्रं सकार्षिकम् ॥
मध्ये शिवं सपत्नीकं प्रणवेन च संयुतम् ।
शक्रे दक्षे रविः पूज्यो भानुश्चैवानले तथा ॥
याम्ये विवस्वावैर्ऋते भास्करं पूजयेद्बुधः ।
पश्चिमे सविता पूज्यः पूज्योऽर्कश्चामिले दले ॥
सौम्ये सहस्रकिरणः शैवे सव्याजने नमः ।
पूज्याः प्रणवपूर्व्यास्तु नमस्कारान्तयोजिताः ॥
पुण्यैः सुगन्धधूपैश्च पृथक्तेन युधिष्ठिर ।
विसर्गं ब्रह्मसम्प्रीतं स्वस्थानं गम्यतामिति ॥
विसर्जिते सहस्रांगी समागम्य स्वमालयम् ।
तान्त्रपात्रे यथाशक्त्या मृत्स्ये वाद्य भक्तिमान् ॥
स्नापयेत्तिलपिष्टञ्च सष्टतं सगुडं तथा ।
आचमनं तैलकं कृत्वा पश्चात्तिलपिष्टजम् ॥
तैलकं दीपपात्रं ।
संख्याय रत्नवस्त्रेण पुण्यैर्धूपैरचार्ययेत् ।
ततस्तान् वाचयेद्विप्रान्दद्यात्कान्त्रेण तालकम् ॥
आदित्यस्य प्रसादेन प्रातश्चानफलनेन च ।
दुष्टदोर्भाग्बहुः सुप्तं मया दत्तन्तु तालकम् ॥

तासकं तालपत्रं कर्षाभरत्रविशेषः ॥

पूजशिलोपदेष्टारं विप्रानन्धांश्च पूजयेत् ।

ततोद्दिनं सप्तमञ्च भास्वरध्यानतत्परः ॥

ताएव च कथाः शृण्वन्त्या वा धर्मसंहिताः ।

पात्राणादिभिरालापदर्शनस्वर्गनादिकम् ॥

वर्जयेत् क्षपयेत् प्राञ्ज्यदातीवशुभैः सह ।

नक्तं भुञ्जीत च नरोदीनान् सन्धोञ्च यत्कृतः ॥

एतत्ते कथितं पार्श्वं रूपसौभाग्यकारकम् ।

अचलासप्तमीस्नानं सर्वकामफलप्रदम् ॥

इति पठति यद्वचं चः शृणोति प्रसङ्गात्

कलिकलुषविनाशं सप्तमीस्नानमेतत् ।

मतिमपि च जनानां यो ददाति प्रयत्नात्

सुरभवनगतोऽसौ वेद्यते वाचरोभिः ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं अचलासप्तमीव्रतं ।

—०*०—

पुलस्त्य उवाच ।

अन्धामपि प्रवक्ष्यामि शोभनाद्बभससमीम् ।

यामुपीव नरोरोगात्* शोकदुःखात् प्रमुञ्चते ॥

शुक्लेचाश्वयुजे मासि कृतस्नानजपः शुचिः ।

वाचयित्वा दिजत्रेष्ठानारभेच्चुक्तसप्तमीम् ॥

कपिला पूजयेद्ब्रह्मया गन्धमाख्यामुलेपनैः ।

● दौर्गन्धाद्ब्रह्मचर इति कथितं पाठः ।

नमामि सूर्यसम्भूतामश्वभुवनालयाम् ॥
 त्वामहं सर्वसम्पत्प्राप्तयेऽश्वरीणां सर्वसिद्धये ।
 अथाह्वत्स तिस्रप्रस्थं ताम्बपात्रे कृतं नवम् ॥
 काञ्चनं हृषभं तद्वद्वज्रमास्त्रगुह्याम्बितम् ।
 फलेनीनाधिभैर्भस्त्रैः* सर्वोपस्कारसंयुतैः ॥
 दद्याद्विकालवेलायाज्यर्चना प्रीयतामिति ।
 पञ्चगव्यं तु संप्राश्य स्वपेद्भूषो दिवस्वरः ॥
 ततः प्रभाते सुजातो भक्त्या कल्पवेदिजान् ।
 अग्नेन विधिना दद्यात् नानि नानि सदा नरः ॥
 वासुदेवो हृषभं हैमं तद्वच्छन्दोश्च† पूजनम् ।
 बल्लरान्ते च शयनमिच्छुद्वन्द्वगुह्याम्बितम् ॥
 शोपधानकवित्रामभाजनासनसंयुतम् ।
 ताम्बपात्रे तिस्रप्रस्थं शौबर्णहृषभैर्दुतम् ॥
 दद्याद्देवदेवे सर्वं विद्याया प्रीयतामिति ।
 अग्नेन विधिना राजन् कुर्व्याथः हृषभसमीन् ॥
 तस्य त्रीर्भ्रजवः‡ सोऽस्त्रं भवेज्जन्मनि जन्मनि ।
 अक्षरोगणगन्धर्वैः पूज्यमानो हरालये ॥
 वसेद्दद्यादधिपोभूत्वा चतुर्भुगधिपर्श्वयेषु ।
 ततः पुनरिहागत्स साञ्च भौमो भविष्यति ॥
 समानीतो देवलोकात् सुराणाञ्चारदेन तु ।

* हृषभ पाशसंयुतैरिति पुस्तकालये पाठः ।

† हरालये इति ह्यपि पाठः ।

‡ पूज्यते वा नृसपी प्राप्येति पुस्तकालये पाठः ।

॥ तद्वत्तेषुपूजनं इति पुस्तकालये पाठः ।

शुभाख्या सप्तमीचैयं शतकोटिप्रविस्तरा ॥
 ब्रह्महत्यादिपापानां विनाशाय दयालुना ।
 समाख्याता नारदेन मया च कथिता तव ॥

इमां पठेद्यः शृणुयाच्च भक्त्या
 पश्येत् प्रसङ्गादपि दीयमानाम् ।
 शोष्यत्र सर्वाघवियुक्तदेहः
 प्राप्नोति विद्याधरनाथकत्वम् ॥
 यावत् समा व्रतमिदं करोति
 यः सप्तमी सप्तविधानयुक्तः ।
 स सप्तलोकाधिपतिः क्रमेण
 भूत्वा पदं याति पदं सुरारिः ॥

इति पद्मपुराणोक्तं शुभसप्तमीव्रतम् ।

—0*0—

पुलस्त्य उवाच ।

अघातः संप्रवक्ष्यामि सर्वपापप्रणाशिनीम् ।
 सर्वकामप्रदां पुण्यां नाम्ना मन्दारसप्तमीम् ॥
 माघस्यामलपक्षे तु पञ्चम्यां लघुभुक् नरः ।
 दन्तकाष्ठं ततः कृत्वा षष्ठीमुपवसेन्नरः ॥
 विप्रान् संभोजयित्वा तु मन्दारं प्राशयेन्निशि ।
 ततः प्रभाते उत्थाय कुर्यात् स्नानं पुनर्द्विजान् ॥
 भोजयेच्छक्तितः कृत्वा मन्दारकुसुमाटकम् ।
 मन्दारोराजाङ्गः ।
 शीवर्थं पुरतस्तद्वत् पद्महस्तं सुशोभनम् ॥

पद्मं कञ्चतिसैः कृत्वा ताम्रपात्रेऽष्टपत्रकम् ।
 हेमं मन्दारकुसुमं स्वाप्य मध्ये च पूजयेत् ॥
 नमस्कारे च तद्वच्च सूर्यायेत्यनले दले ।
 ऐशान्यां मित्रनामानं नमस्कारेण पूजयेत् ।
 दक्षिणे तद्वद्वर्णाय अथार्थ्यन्नेति नैर्ऋते ॥
 पश्चिमे वेदधान्नेति वायव्ये चण्डभानवे ।
 पूर्ये चोत्तरतः पूज्य आनन्दायेत्यतः परम् ॥
 कर्चिकायाश्च पुरतः स्वाप्य सर्वाङ्गनेति च ।
 शुकवज्रैः समावेद्य भस्मैर्मातृफलादिभिः ॥
 एषमभ्यर्च्य तत्सर्वं दद्याद्देविदे पुनः ।
 भुञ्जीतातेलसवचं वाग्वतः प्राङ्मुखोऽगृही ॥
 अनेन विधिना सर्वसप्तम्यां मासि मासि वा ।
 कुर्यात् संवत्सरं यावद्विज्जगताठविजितः ॥
 एतदेव व्रतान्ते तु विधाय कलशोपरि ।
 गोभिर्विभवतः सार्धं दातव्यं भूतिमिच्छता ॥
 नमोमन्दारनाथाय मन्दारशयनाय च ।
 त्वं वै तारयस्वास्मान्साक्षात्संसारसागरात् ॥
 अनेन विधिना यस्तु कुर्यान्मन्दारसप्तमीं ।
 विहार्यथात्सुखी लोके कल्पश्च दिवि मोदते ॥
 इमामघोषपटलभीषणध्वान्तदौपिकाम् ।
 गच्छन् प्रमृष्टं संसारशर्व्वार्थ्यां न खलेन्नरः ॥
 मन्दारसप्तमी नाम ईशितार्थफलप्रदा ।
 यः पठेच्छ्रुत्वाहापि सोऽपि पापैः प्रमुच्यते ॥

इति पद्मपुराणोक्तं मन्दारसप्तमीव्रतम् ।

—000—

बुधिरिदं उवाच ।

कथं सा क्रियते कृष्ण मनुष्यैरद्यसप्तमी ।
चक्रवर्तित्वफलदा या विख्याता त्वया मम ॥

कृष्ण उवाच ।

आसीत् काम्बोजविषये यशोधर्मनराधिपः ।
ब्रह्मे वयसि तस्यानीत् सर्व्वं व्याधियुतः सुतः ॥
तत्कर्म्मपाकं सोऽपृच्छ द्विनोती द्विजपुंगवान् ।
सचाह राजन् वैश्वीयं कृपणः पूर्व्वजन्मनि ॥
ददर्श रघसप्तम्यां क्रियमाणव्रतं नृप ।
व्रतदर्शनमाहात्म्यादुत्पन्नो जठरे तव ॥
अदाता विभवे तस्मात्तेनायं व्याधितोऽभवत् ।
ततः स राजा पप्रच्छ किं मे तत्कंविधीयताम् ॥
यस्य सन्दर्शनात् प्राप्नो लाभस्तव निकेतनम् ।
तदेव क्रियतां राजन् रघसप्तमिसंज्ञितम् ॥
व्रतं पापहरं येन चक्रवर्तित्वमाप्यते ॥

राजोवाच ।

ब्रूहि विप्र व्रतं कृतं सविधानं समन्वयकम् ।
श्रेय्यराणां दरिद्राणां सर्व्वसम्पत्प्रदायकम् ॥

द्विज उवाच ।

शुक्रपक्षे तु माघस्य दद्यामामन्त्रवेत् गृही ।

ज्ञानं ह्यज्ञतिसैः कार्यं नद्यभावे तु कुचक्षित् ॥
 विमले सलिले राजन् विधिवद्वर्णभक्ततः ।
 देवादीन् पूजयित्वा तु गत्वा सूर्यालयं ततः ॥
 सूर्यं सम्बन्धं नमस्कृत्य पुष्पधूपाद्यतैः ह्यभैः ।
 चागत्य भवनं पश्चात् पञ्चयज्ञांश्च निर्वापेत् ॥
 संभोज्यातिभिर्भृत्यांश्च वालवृक्षाश्रितान् स्वयम् ।
 विद्यमाने दिनेऽत्रौयादाद्यतस्तैस्त्वर्जितम् ॥
 रात्रौ विप्रं समाह्वय विधिं च वेदपारणम् ।
 संपूज्य नियमं कुर्व्यात् सूर्यमाधाय चेतसि ॥
 सप्तस्नान्तु निराहारो भूत्वा भोगविवर्जितः ।
 भोज्येऽष्टव्यां जगत्त्रेण निर्विघ्नं तत्र मे कुर्व ॥
 इत्युच्चार्य तृपत्रेष्ठ तोयं तोयेषु निक्षिपेत् ।
 ततो विसृज्य तं विप्रं स्वपेद्भूमौ जितेन्द्रियः ॥
 ततः प्रातः समुदथाय कृतावश्यः शुचिर्नरः ।
 कारयित्वा रथं दिव्यं किङ्किणीजालमास्त्रिनम् ॥
 सर्पोपस्करसंयुक्तं रत्नैः सर्वार्थचिञ्चितम् ।
 काञ्चनं राजतश्चाञ्च हयसारथिसंयुतम् ॥
 ततो मध्याह्न समये कृतज्ञानादिकीव्रती ।
 प्रतीर्यग्नीक्षमाणस्तु पापच्छालापवर्जितः ॥
 सौरसूक्तं जपन् प्राङ्गः समागच्छेत् स्वमालयम् ।
 निर्व्यसं नित्यकार्यन्तु कृत्वा ब्राह्मणवाचनम् ॥
 वस्त्रमण्डलिकामध्ये स्थापयेत्तं रथोत्तमम् ।
 कुङ्कुमिन् सुगन्धेन चार्चयित्वा समन्ततः ॥

माताभिः पुत्रदीपानां समन्तात्परिवेष्टयेत् ।
 धूपेनागुहमिन्नेषु धूपयित्वा रक्षोपरि ॥
 रत्नस्य स्थापयेद्भानुं सर्वसम्पूर्णसद्यस्य ।
 वित्तानुरूपं चैमच्च विन्नघाठविवर्जितः ॥
 घाठमात् व्रजति वैकल्पं वैकल्यादिकल्पं फलम् ।
 ततोदेवं समभ्यर्च्य सरथं सहस्रारविम् ॥
 पुष्यै धूपैस्तथागन्धैश्च स्नासङ्कारभूषणैः ।
 कलौर्नानाविधैर्भस्मैर्नैवेद्यैर्घृतपाचितैः ॥
 पूजयेद्भास्करं भक्त्या मन्त्रैरेभिस्त्रिभिः क्रमात् ।
 भानो दिवाकरा, दिव्य मार्तण्ड जगताम्पते ॥
 क्षपानिधे जगद्रक्ष भूतभावन भास्कर ।
 प्रणतार्त्तिहृदाचिन्त्य विश्वविन्तामणे विभो ॥
 विश्वो हंसादिभूतेश्च प्रादिमध्यान्तकारक ।
 भक्तिहीनं क्रियाहीनं मन्त्रहीनं जगत्पते ॥
 प्रसादात्तव सम्पूर्णमर्चनं यदिहास्तु मे ।
 एवं सम्पूज्य देवेशं प्रार्थयेच्च मनोगतं ॥
 ददाति प्रार्थितं भानुर्भक्त्या सन्तोषितोनरैः ।
 वित्तहीनोपि विधिना सब्धमेतत् प्रकल्पयेत् ॥
 रथं ससारधिं साश्वं वर्णकैर्भित्तिलेखितम् ।
 सौवर्ण्यं च तथा भानुं यथाशक्या विनिर्भितं ॥
 प्रागुक्तेन विधानेन पूजयित्वा सुविस्तरम् ।
 जागरङ्कारयेद्भानुं गीतवादिचनिस्स्रनैः ॥
 प्रोक्षणीयैर्घ्निचित्रैश्च पुण्याख्यानकथादिभिः ।

रथयात्रां प्रपश्येत् भागोरायतनं त्रितः ॥
 अनिमोहितनेत्रस्तु नयेत्तां रजनीं बुधः ।
 प्रभाते विमले आतः कृतकृत्वस्ततोहिजान् ॥
 तर्पयेद्विधैः कामे र्दानैर्वासीविभूषणैः ।
 अश्वमेधेन तुल्यं तदिदं ब्रह्मविदीविदुः ॥
 अतोदेवानि दानानि यथाशक्त्वा विचक्षणेः ।
 रथन्तु गुरवे देयं सर्व्वीपस्करसंयुतम् ॥
 रत्नञ्च बन्धयुगलं रत्नधेनुसमन्वितम् ।
 एवं शीर्षं व्रतोरजन् किन्नाप्नोति जगद्यथे ॥
 तस्मान्मन्त्रं प्रयत्नेन कुरु त्वं रथसप्तमीं ।
 येनारोग्यो भवेत् पुत्रः स्वदीपो नृपसत्तम ॥
 व्रतस्वास्व प्रभावेन प्रसादाद्वास्करस्व च ।
 भविष्यति मन्त्रातेजा महाबलपराक्रमः ॥
 मुक्ता भोगान् सुविपुलान् कृत्वा राज्यमकण्ठकम् ।
 दत्त्वासी रथसप्तम्यां कृतेत्वपि माहाभुजः ॥
 उत्पाद्य पुत्रान् शीवांश्च सूर्य्यसोकं स वासति ।
 तत्र स्थित्वा कल्पमेकं चक्रवर्त्ती भविष्यति ॥

ज्ञप्त्वा उवाच ।

इति सर्व्वं समाख्याय विपरितो हिजोत्तमः ।
 यथागतं जगामासौ नृपः सर्व्वश्चकार ह ॥
 यदादिष्टं हिजेन्द्रे च तसकम्बं बभूव ह ।
 एवं स चक्रवर्त्तित्वं प्राप्तवान् कृपनन्दन ॥
 श्रूयते यस्तु माम्नाता पुराणेषु परम्प ।

य इदं नृशुद्याङ्गत्वा बोधापि परिकीर्त्तयेत् ॥
 तस्यैव तुष्यते भानुर्वःशुल्लैवाभयं सदा ।
 एवं विधं रघवरं रघवाजिनुक्तं
 हैमच हैमयतदीधितिना समीतम् ।
 दद्याच्च माससितसप्तमिवाक्षरेषु
 सोसङ्गचक्रगतिरेव महीं भुनक्ति ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं रघुसप्तमीव्रतम् ।

—000—

ब्रह्मोवाच ।

माघे मासि महादेव सिते पक्षे जितेन्द्रियः ।
 चठ्यानुषोषितोसुत्वा गन्धपुष्पोपहारकैः ॥
 पूजयित्वा दिनकरं राघो तस्मात्प्रतः स्वयेत् ।
 विबुधस्त्वय सप्तम्यां भक्त्या भानुं समर्चयेत् ॥
 ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या विस्रगांठं विवर्जयेत् ।
 चण्डवेष्टैर्मादकैश्च तथेषुगुह्यपूपकैः ॥
 प्रथमं च वक्षरेपूर्णे सप्तम्यां कारयेद्बुधः ।
 देवदेवस्य वै यात्रां पूर्वोक्तविधिनाचरेत् ॥
 पूर्वोक्तविधिनेति नानातिथिप्रकारश्च
 स्मृत रघयात्राविधिनेत्वर्चः ।
 छान्द्रपादं व्रतं कुर्व्याद्दद्याच्छुद्धं व्रतं रविम् ॥

● चव चमनचरे पूर्णे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

● छान्द्रपादनुषः क्षमारया शुद्धं चरमित्ति इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

पश्चेद्व्रतवा जगन्नाथं स याति परमाङ्गतिम् ।
 तृतीयायामेकभक्तं चतुर्थीं नक्तमुच्यते ॥
 अयाचितन्तु पञ्चम्यां षष्ठ्याञ्चैव उपोषितः ।
 सप्तम्यां पारणं कुर्व्यात् दृष्ट्वा देवं रथे स्थितम् ॥
 पूजयित्वा च विधिना भक्त्या देवं चित्तोचनम् ।
 सौवर्चन्तु रथं कृत्वा ताम्रपात्रोपरिस्थितम् ॥
 रथमध्ये न्यवेदगीमं पूजितं मणिभिर्नवम् ।
 व्योमनिर्णायं* तु व्योमवठीव्रतएव व्याख्यातम् वेदितव्यं ।
 पद्मरागं न्यवेदध्वे मौक्तिकं पूर्व्वतो न्यसेत् ।
 इन्द्रनीलमणो बाम्या वाहण्यां* मकरध्वजम् ॥
 प्रवालसुतरे रुद्रे सर्व्वं च विन्यसेद्दुधः ।
 श्वेतं पीतं सितञ्चापि रक्तञ्चान्यकसुदन ॥
 एतानि नववस्त्राणि दिक्षु सर्व्वानि विन्यसेत् ।
 पताका रथसंस्थाने षण्ठाभरणभूषिते ॥
 पुष्पदाया स्वस्त्युक्त्य रथं व्योमसमन्वितम् ।
 यद्यान्यायं पूजयित्वा भास्कराय निवेदयेत् ॥
 भोजयित्वाथवा विप्रमाचार्याय निवेदयेत् ।
 योऽधीते सप्तमीकल्पं सोपाख्यानञ्च शाङ्करम् ॥
 आचार्यः सद्भिर्ज्योष्यो वर्णानामनुपूर्व्वशः ।
 सौराचां वैश्वानराञ्च शैवानां पार्व्वतीपतिः ॥
 अलाभे तु सुवर्चस्व रथं राजतमाद्दिशेत् ।

* मरुतमिति पुस्तकान्तरे वाकः ।

तदलाभे तान्मयं रथं व्योमच कारयेत् ।
 अलाभेन च तान्मस्य रथः पिष्टमवःसृतः ॥
 सहिरण्यं महादेवं तान्मभाजनमाश्लितम् ।
 काषाययुग्मसहितं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 पूर्वोक्तेन महादेव* वाचकाय महासुते ।
 पञ्चरत्नममायुक्तं शुभाङ्गप्राप्तं सितं ॥
 स्वयत्तदा तु विरूपाक्षं वित्तयात्रं विवर्जयेत् ।
 एषा पुण्या पापहरा रवाङ्गा सप्तमी हर ॥
 कथिता ते मया रुद्रमहतीयं प्रकीर्तिता ।
 ज्ञानं दानमथो होमः पूजनं चहनायकम् ॥
 शतसाहस्रिकं पुष्पं भूत्यै भूधर विद्यते ।
 एवमेवा पुष्पतमा माघे प्राप्ता तु सप्तमी ॥
 यासुपोथ नरोभक्त्या सूर्यस्नानुचरोभवेत् ।
 ब्राह्मणो याति देवत्वं क्षत्रियोविप्रतां व्रजेत् ॥
 वैश्यस्तु क्षत्रतां याति शूद्रो वैश्यत्वमेति वै ।
 विद्याविनयसम्पन्नं भर्तारं कन्यका लभेत् ॥
 अपुत्रा स्त्री सुतं विन्द्वात् सौभाग्यञ्च नचाधिप ।
 विधवा चाप्युपोष्येनासुत्तमं† लोकमनुते
 नान्यजन्तु वैभवं प्राप्नुयात्कार्त्वीतीप्रिय ।
 बहुपुत्रा बहुधना भर्तुर्वैभवातां व्रजेत् ।
 यावद्भिः सप्तजन्मानि नारी वा पुत्रवस्तथा ॥

* शभन-आश्लितमिति पुलकान्तरे पाठः ।

† सप्तमीं त्रिपुराणक इति पुलकान्तरे पाठः ।

इति भविव्यत्यपुराणोक्तं रथाङ्कसप्तमीव्रतम् ।

—०००—

वासुदेव उवाच ।

माघस्य शुक्लपक्षे तु चतुर्थ्याञ्च कुरुद्वह ।
 एकभक्तं समाख्यातं षष्ठ्यां नक्तमुदाहृतम् ॥
 सप्तम्यामुपवासञ्च केचिदिच्छन्ति सुव्रत ।
 षष्ठ्यां केचिदुग्रन्तीह सप्तम्यां राधनं किल ॥
 कृतोपवासः षष्ठ्यान्तु पूजयेद्भास्करं बुधः ।
 रक्तचन्दनमिश्रैस्तु करवीरैः समाहृतैः ॥
 गुग्गुलेन महाबाहो सुगन्धेन च सुव्रत ।
 पूजयेद्देवदेवशङ्करेशशङ्करं रविं ।

शङ्करं सुखकरमित्यर्थः ॥

एवं हि चतुरोमासान् माघादीन् पूजयेद्भविम् ।
 भ्रातृन्नापि शुद्धार्थं प्राशनं गोमयस्य च ॥
 ज्ञानञ्च गोमयेनेह कर्त्तव्यञ्चात्मशुद्धये ।
 ब्राह्मणान् दिव्यभौमांश्च भोजयेच्चापि शक्तिः ॥
 दिवि देवकुले भवाः दिव्या इतरेभौमाः ।
 ज्यैष्ठादिष्वपि मासेषु श्वेतचन्दनमुच्यते ।
 श्वेतानि चापि पुष्पाणि शुभगन्धान्वितानि वै ॥
 कृष्णागुरु तथा धूपं नैवेद्यं पायसं स्मृतम् ।
 तेनैव ब्राह्मणान् साधून् भोजयेच्च महामते ॥
 प्राशयेत्पञ्चगव्यन्तु ज्ञानं तेनैव सुव्रत ।

कार्त्तिके मासि शुभशुभशुभैः कृतं
 पूजनं कुश्यार्षं च धूपचैवापराजितः ॥
 नैवेद्यं गुह्यपूजा च तद्यैवैश्वरसः कृतः ।
 तेनैव ब्राह्मणान् ज्ञातोभोजयेच्च स्वशक्तिः ॥
 कुशोदकं प्राशयेच्च ज्ञानञ्च कुशं सिद्धये ।
 ऋतीयपारचस्वान्ते मासे मासि महामते ॥
 भोजनं तच्च दानञ्च द्विगुणं समुदाहृतं ।
 देवदेवस्य पूजा च कर्त्तव्या शक्तितो बुधैः ॥
 रघस्य चापि दानन्तु रघयात्रा च सुव्रत ।
 रघस्य प्राप्तिहेतोर्वै कर्त्तव्या विभवै सति ॥
 दानं सूर्यरघस्वेह यद्योक्तं विभवे सति ।
 इत्येषा कथिता पुत्र रक्षाहसप्तमी यथा ॥
 सप्तमीति महाख्याता महापुण्या महोदया ।
 यामुपोष्य धनं पुत्रान् कौर्त्तिं विद्यां समश्नुते ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं महासप्तमीव्रतम् ।

—000—

ब्रह्मोवाच ।

जया च विजया चैव जयन्ती चपराजिता ।
 महाजया च नर्या च भद्रा वाम्ना प्रकीर्त्तिता
 यज्ञाश्चैव सप्तम्यां नक्षत्रं पञ्चतारकम् ।
 यदा भवेत्तदा ज्ञेया जयानामिति सप्तमी ॥
 पञ्चतारकमिति रोहिण्यङ्के नामघाहस्ताच्च ।
 तस्यां दत्तं पुत्रं जन्तं तप्यं देवयूजन्म् ॥

सर्वगतगुणं प्रोक्तं पूजाद्यापि दिवाकरौ ।
हंसै हृद्दसमारुढे शुक्ला या सप्तमी परा ॥

हंसः सूर्यः,

वर्षमेकन्तु कर्त्तव्या विधिनानेन भास्करम् ।
सौवर्णं कारयेद्गत्त्या द्विभुजं पद्मधारिणम् ॥
पारणवितथं तस्यां क्रियते गोपते पुरा ।
प्रथमश्चतुरोमासान् पारणं कथितं बुधैः ॥
कथितान्यत्र पुष्याणि करवीरस्य सुव्रत ।
चन्दनञ्च तथा रक्तं धूपार्थं गुग्गुलुः स्मृतः ॥
कासारन्तु सितासारं नैवेद्यं भास्कराय वै ॥
कासारो गोधूमचूर्णञ्चवष्टैर्भृष्टा निर्मितो
लोके प्रसिद्धः सितातारः शर्कराबहुलः ॥
अनेन विधिना पूज्य मार्त्तण्डं विबुधाधिपम् ।
पूजयेद्वाङ्गान् भक्त्या* भक्ष्यभोज्यैर्यथाविधि ॥
कासारं भोजयेद्विप्रान् पारणं फलदम्भवेत् ।
स्वयमेव तथाञ्जीयादाहृतो मौनमास्थितः ॥
पञ्चम्यामेकभक्तञ्च षष्ठ्या नक्तन्तु कीर्त्तितम् ।
कल्पीपवासं सप्तम्यामष्टम्यां पारणं भवेत् ॥
सिद्धार्थकैः स्नानमत्र प्राशनं पायसेन तु ।
भानुर्मे प्रीयतामत्र दन्तकाष्ठं तथार्कजम् ॥
द्वितीयं त्र्ययतां कर्त्तव्यं पारणं गदतो मम ।
मासतीकुसुमानो ह श्रीखण्डं चन्दनं तथा ॥

* भोजयेद्वाङ्गान् भोजयति पुण्यकरे पाठः ।

नैवेद्यं पायसश्चानोर्धूपं विजयमाविशेत् ।
 ब्राह्मणान् भोजयेच्चापि समञ्चीयात् स्वयं विभो ॥
 रविर्षो प्रीयतामत्र नाम देवस्य कीर्त्तयेत् ।
 प्राशयेत्पञ्चगव्यन्तु खादिरं दन्तधावनम् ॥
 द्वितीये पारशे चापि विधिरक्तो मयाधुना ।
 तृतीये पारशे चैव विधानन्तु निबोध मे ।
 पगस्यकुसुमैरत्र भास्करं पूजयेद्बुधः ।
 स्वमालम्बनमात्रोक्तं त्रींशत् कुङ्कुमं तथा ॥
 सिद्धकं धूपनिर्द्दिष्टं सूर्यप्रीतिकरं परम् ।
 शास्त्रांदनन्तु नैवेद्यं रसालोपरिसंयुतम् ॥

रसाल.शिशुच्छिन्नो

ब्राह्मणानामसौ दानं भोजयेच्च तद्यात्मना ।
 कुशोदकप्राशनञ्च बद्ध्यां दन्तधावनम् ॥
 विकर्त्तनः प्रीयतां मे नाम देवस्य कीर्त्तयेत् ।
 वर्षान्ते देवदेवस्य पूजा कार्त्तव्या विधानतः ॥
 गन्धपुष्पोपहारैश्च नानाप्रोक्ष्यचक्रेस्तथा ।
 गोदानभूमिदानैश्च ब्राह्मणानाञ्च तर्पणेः ॥
 इत्यं सम्पूज्य देवेशन्देवस्य पुरतः स्थितं ।
 कारयेत् परमं पुष्पं धर्ष्यपुस्तकावाचनम् ॥
 वस्त्रैर्गन्धैस्तथाधूपैर्त्तार्त्तकं पूज्य बलतः ।
 देवस्य पुरतः स्थित्वा ततो मन्त्रमुदीरयेत् ॥
 देवदेव जगन्नाथ सर्वं व्याधि विनाशन ।

ग्रहेषु लोकातपन विकर्त्तन तमोपहृ ॥
 कृतेषु देव देवस्य जया नामिति सप्तमी ।
 मया तव प्रसादेन धन्या पापहृरा शिवा ॥
 अनेन विधिना वीर यः कुर्यात्सप्तमीव्रतम् ।
 तस्य ज्ञानादिकं सर्वं भवेच्छ्रुतगुणं विभो ॥
 कृत्वेमां सप्तमीं वीर पुरुषः प्राप्नुयाद्ययः ।
 धनं धान्यं सुवर्णं च पुत्रानायु, बलं श्रुतम् ॥
 प्राप्येह नरशार्दूल स्वर्गलोकं च गच्छति ।
 तस्मादेत्य पुनर्भूमौ राजा भवति धार्मिकः ॥
 इत्येषा कथिता वीर जया नामिति सप्तमी ।
 कृतान्मुता श्रुता या तु हंसलोकप्रदायिनी ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं जयासप्तमीव्रतम् ।

—000—

ब्रह्मीवाच ।

शुक्लपञ्चस्य सप्तम्यां सूर्यवारो भवेद्यदि ।
 सप्तमी विजया नाम तत्र दत्तं महाफलम् ॥
 ज्ञानं दानं जपो होम उपवासस्तथैव च ।
 सर्वं विजयसप्तम्यां महापातकनाशनम् ॥
 पञ्चम्यानि कभक्तं स्नात् ब्रह्मां नक्तं ब्रह्मते ।
 उपवासस्तु सप्तम्यामष्टम्यां पारशं भवेत् ॥
 उपवास परः ब्रह्मां चक्रत् पूजयेद्भविन् ।
 उपवासपरः विजय सप्तम्यानुपवासं करिष्यन् ॥
 गन्धपुष्पोपहारैश्च भक्त्या त्र्यदासमन्वितः ।

प्रकल्प्य पूजा भूमौ च देवस्य पुरतः स्वपेत् ॥
 जपमानस्तु गायत्रीं सौरसूक्तमथापि वा ।
 त्र्यक्षरं वा महाश्येतं षडक्षरमथापि वा ।
 विबुधस्त्वन्न सप्तम्यां कृत्वा ज्ञानं गणाधिपं ॥
 ग्रहेशं पूजयित्वा तु ह्रीमं कृत्वा विधानतः ।
 ब्राह्मणान् भोजयेत्पञ्चाङ्गत्या च गणनायकन् ॥
 शाश्वोदनमपूपांश्च खण्डवेष्टाश्च शक्तितः ।
 दत्त्वा तु दक्षिणां शक्त्या ततो विप्रान् विमर्जयेत् ॥
 इत्येषा कथिता देव पुण्या विजयसप्तमी ।
 यासुषोश्च नरोगच्छेत्परं वैरीचनं पदम् ।
 कारवीराणि रक्तानि कुङ्कुमश्च विलेपनम् ।
 विजयं धूपमस्यान्तु भानोस्तुष्टिकराणि वै ॥
 एषा पुण्या पापहरा महापातकनाशिनी ।
 अत्र दत्त हुतञ्चापि अत्ययञ्च गणाधिप ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं विजयासप्तमीव्रतम् ।

— 000 —

ब्रह्मीवाच ।

माघस्य शुक्लपक्षे तु सप्तमी या त्रिलोचना ।
 जयन्ती नाम सा प्रोक्ता पुण्या पापहरा तथा ॥
 उपोष्य येन विधिना शृणु तं पार्ष्वतीप्रिय ।
 पारणानि तु चत्वारि कथितानि च पण्डितैः ॥
 पश्यामिकभक्तान्तु षष्ठ्यां नक्तं प्रकीर्तितम् ।

उपवासस्तु सप्तस्वामष्टम्यां पारणशिवेत् ॥
माघे च फाल्गुने मा स तथा चैत्रे च सुव्रत ।
अर्कपुष्पाणि धन्यानि कुङ्कुमश्च विलेपनम् ॥
नैवेद्यं मोदकश्चाद्यं धूपमाद्यमुदाहृतम् ।
प्राशनं पञ्चगव्यस्य पवित्रीकरणं परम् ॥
मोदकैर्भोजयेद्दिग्रान् यथाशक्त्या गणधिय ।
शास्त्रोदनश्च भूतेश दद्यात्तत्रा हिजेषु वै ॥
इत्थं संपूजयेद्यस्तु भास्करं लोकपूजितम् ।
सर्वेषु पारणेष्वेवं सोऽश्नन्निभफलं लभेत् ॥
द्वितीये पारणे पूज्य राजसूयफलं लभेत् ।
वैशाखेत्थश्च ज्येष्ठे तु भाषाठे मासि सुव्रत ॥
पूजार्घमन्त्रे भानोर्वै शतपक्षाणि योजयेत् ।
श्वेतश्च चन्दनं भीमं धूपी गुग्गुलुश्च्यते ॥
नैवेद्यं गुह्यपूपाद्य प्राशनं गोमयस्य च ।
भोजनश्चापि विप्राणां गुह्यपूपाद्य क्रीर्षिताः ॥
द्वितीयमिदमाख्यातं पारणं पापनाशनम् ।
तृतीयं ऋषु देवेशपूजार्थं भास्करस्य तु ॥
आवणे मासि देवेश तथा भाद्रपदे विभी ।
भास्त्रिने चापि मासे तु रक्तचन्दनमिष्यते ॥
मालतीकुङ्कुमान्नीच धूपी विजयश्च्यते ।
नैवेद्यं घृतपूपाद्य भोजने तु द्विजातिषु ॥
कुशोदकं प्राशनन्तु कायशुद्धिकरं परम् ।
तृतीयमपि त्वाख्यातं पारणं पापनाशनम् ॥

राजसुयाश्वमेधाभ्यां फलदन्भास्करपियम् ।
 चतुर्धमप्यहं वच्मि पारणं त्रेयसे नृप ॥
 मासि कार्तिके के वीर मार्गशीर्षे तथापि च ।
 षोढे च नरशार्दूल नृणु पुण्याश्वशेषतः ॥
 करवीराणि रक्तानि तथा रक्तञ्च चन्दनम् ।
 अमृताख्यं तथा धूपं नैवेद्यं पायसन्तथा ॥
 अर्जुनीयं तथा वज्रं प्राशनं परमं मतम् ।
 अगुरुं चन्दनं मुस्तां सिञ्चकं वृषभं तथा ॥
 समभागान्तु कर्त्तव्यं धूपञ्चामृतसम्भवं ।
 अर्जुनीयं । गव्यं । वज्रं । घृतं ।
 नामानि कथितान्यत्र भास्करस्य महात्मनः ॥
 चित्रभानुस्तथा भानुरादित्यौ भास्करस्तथा ।
 प्रीयतामिति सर्वेषु पारणेष्वेवमादिशेत् ॥
 अनेन विधिना यस्तु कुर्यात्पूजां विभावसोः ।
 अस्यान्तिथौ महादेव स याति परमं पदम् ॥
 कृत्वैवं सप्तमीं भीम सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।
 पुत्राद्यौ लभते पुत्रान् धनार्थौ लभते धनम् ॥
 सरोगो मुच्यते रोगात् शुभं प्राप्नोति पुष्कलं ।
 पूर्णं सम्पत्तरे भीम कार्या पूजा दिवाकरे ॥
 गन्धपुष्पोपहारैश्च ब्राह्मणानाञ्च तर्पणैः ।
 नामाविधैः प्रोक्षणकैः पूजया वाचकस्य च ॥
 इत्थं संपूज्य देवेशं ब्राह्मणञ्च प्रपूजयेत् ।
 वाचकं द्विजं संपूज्य इदं वाक्यमुदीरयेत् ॥

धर्मकार्येषु मे देव धर्मकार्येषु नित्यशः ।
 कामकार्येषु सर्वेषु जयो भवति सर्वदा ॥
 तदा बिसर्जयेद्विप्रान् वाचकश्च द्विजोत्तमम् ।
 इत्थं कुर्याद्विदं पश्चात् स जयं प्राप्नुयात्तदा ॥
 सर्वपापविशुद्धात्मा सूर्यलोकं स गच्छति ।
 विमानवरमारूढः कविजोद्भवसुत्तमम् ॥
 तेजसा कविसंकाशः प्रभया पतगोत्तमः ।
 कविजं, कविरग्निस्ताम्रं सुवर्चं । पतगः, सूर्यः ।

इति भविष्यपुराणोक्तं जयन्तीव्रतम् ।

—000—

ब्रह्मोवाच ।

मासि भाद्रपदे शुक्ला सप्तमी वा गवाधिप ।
 अपराजितेति विख्याता नद्यापातकनाशिनौ ॥
 चतुर्वर्णिकभक्तान्तु पञ्चम्यां नक्तमादिशेत् ।
 उपवासस्तथा ब्रह्मणां नक्तम्यां पारुषं भवेत् ॥
 पारुषान्यत्र चत्वारि कथितानि मनोविभिः ।
 पुष्याषि कारवोराषि तत्रा रक्तञ्च चन्दनम् ॥
 धूपक्रिया गुग्गुलुना नैवेद्यं शुद्धपूषकाः ।
 नभस्यादिषु मासेषु विधिरेव प्रकीर्तितः ॥
 तद्याशुभगपुष्याषि कुङ्कुमञ्च विलेपनम् ।
 धूपार्चं सिद्धार्कं प्रीतमद्यवा विस्वसम्भवम् ॥
 शास्त्रीदनञ्च नैवेद्यं रसाक्षाः फाल्गुनादिषु ।

रत्नोत्सवानि भूतेषु अगुबन्धनं तथा ॥
 अमन्तधूपमुद्दिष्टं नैवेद्यं शुद्धपूपाः ।
 त्र्योखण्डं अन्विसहितं अगुबः सिद्धकं तथा ॥
 सुखा तवेन्दुं भूतेषु अर्कराद्य दहेत्प्रहम् ।
 इत्येवोऽमन्तधूपस्य कथितो देवसप्तमः ॥
 अन्वि, अन्विपर्णी, इन्दुः, कर्पूरः ।
 ज्योष्ठादिषु तथास्त्रेण विधिवन्तो मनीषिभिः ।
 शृणु नामानि देवस्य प्राशनानि च सुव्रत ॥
 भगो ऽश्मानर्यमा च सविता त्रिपुरान्तकः ।
 पारणेषु च सर्वेषु प्रीयतामिति कौर्त्तवेत् ॥
 गीमूषं पञ्चगव्यञ्च घृतमुष्णञ्च वै पयः ।
 यस्मिन्नां सप्तमीं कुर्यादनेन विधिना नरः ॥
 अपराजितो भवेन्नोपि सदा शत्रुभिराहवे ।
 हन्त्याच्छत्रून् जयेद्यापि शिवर्गं नात्र संशयः ॥
 त्रिवर्गमद्य संप्राप्य भानीः पुरमवाप्नुवात् * ।
 गन्धपुष्पोपहारैश्च पुराचञ्चयेन च ॥
 अश्वदानेन च विभो ब्राह्मणानाञ्च तर्पयेत् ।
 वाचकं पूजयित्वा तु भास्करस्य प्रियं सदा ॥
 स पराजित्य वै शत्रून् याति हंससखीकताम् ।
 शक्रजोद्भवयानेन आपगेयपताकिना ॥
 आपगाधिपसंकाशो ह्यापगाधिपतिर्भवेत् ।

शक्रजं, सुवर्णं आपगेयमपि सुवर्णमेव, आपगाधिपो, वरुणः ।

* पुष्पपुर्णं लभेत्कलुषं पावयेत् अन्वितः अमरति पुष्पकानरे वाङ् ।

इति भविष्यपुराणोक्तमपराजितासप्तमीव्रतम् ।

—*—

ब्रह्मोवाच ।

शुक्लपक्षे तु सप्तम्यां यदा संक्रान्तेरविः ।
 महाजया तदा स्वाहै सप्तमी भास्करप्रिया ॥
 ज्ञानं दानं जपो होमः पित्र्यदेवाभिपूजनम् ।
 सर्व्व^१ कोटिगुह्यं प्रोक्तं तपनेन महौजसा ॥
 यस्त्वस्यां मानवो भक्त्या हृतेन चापवेद्भविन् ।
 सोऽश्वमेधफलं प्राप्य ततः सूर्य्यपदम्भजेत् ॥
 पयसा चापयेद्यस्तु भास्करं भक्तिमाचरः ।
 विमुक्तः सर्व्वपापेभ्यः स याति सूर्य्यलीकतान् ॥
 स्थित्वा तत्र चिरं कालं राजा भवति संजय ।
 महाजयेषा कथिता सप्तमी त्रिपुरान्तक ॥
 यामुपोष्य नरोभक्त्या चक्षुषां स्वर्गतिं^२ लभेत् ।
 ततो याति परं स्वानं यत्र गत्वा न शीघ्रति ॥
 इति भविष्यपुराणोक्तं महाजयासप्तमीव्रतम् ।

—000—

ब्रह्मोवाच ।

या तु मार्गशिरि मासि शुक्लपक्षे तु सप्तमी ।
 नन्दा सा कथिता वीर सर्व्वानन्दकरौ शुभा ॥
 पञ्चम्यानेकभक्तं तु षष्ठ्यां नक्तं प्रकीर्त्तितम् ।

* मङ्गलानिति पुरुषाकारे पाठः ।

सप्तन्वामुपवासश्च कीर्त्तयन्ति मनीषिणः* ।
 मासतो कुसुमानीह सुगन्धं चन्दनं तथा ।
 कर्पूरगुडसंमिश्रं धूपञ्चापि विनिर्दिशेत् ।
 दधीदनं खण्डकञ्च नैवेद्यं भास्करप्रियम् ॥
 तदेव दद्याद्विभो घ्नन्त्रीयाश्च स्वयं तथा ।
 पूजार्थं भास्करस्वैव प्रथमे पारणे विधिः ॥
 घासाग्रपुष्पाणि विभो यश्चचन्दनमेव च ।
 कर्पूरं सिद्धकं कुष्ठसुशीरं चन्दनं तथा ॥
 चमन्निहवचं भीम कुङ्कुमं गृह्णन् तथा ।
 हरीतकी तथा भीम एव यच्चाङ्गुष्ठयेत्† ॥

गृह्णन्, पलाण्डुभेदः ।

धूपं प्रबोधमादिष्टं नैवेद्यं खण्डखाद्यकम् ।
 कृष्णागुडः सिद्धकश्च चाचम्बं हवणं तथा ॥
 चन्दनस्तगरं सुस्ता प्रबोधः शर्करान्वितः ।

चाचम्बं, मूलकभेदः ।

भोजयेद्ग्राह्याणां चापि खण्डाद्यैर्गणाधिप ॥
 विस्वपत्रं तु संप्राश्य ततो भुञ्जीत वास्यतः ।
 पारणस्य द्वितीयस्य विधिरेष प्रकीर्त्तितः ॥
 नीलोत्पलानि पुष्पाणि धूपं गुग्गुलुमाहरेत् ।
 नैवेद्यञ्च पांशुमुखाः प्रीतये भास्करस्य तु ॥
 पांशुमुखाः, शर्कराधूपपूर्ववदना भक्ष्याः ।

* पारणासनं नैवादि उग्रनीच मनीषिणः इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† चमन्निहवचने इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

विलेपनं चन्दनस्य सुस्ताप्राशनं मुच्यते ॥
 तृतीयस्यापि हे वीर कथितो विधिरुत्तमः ।
 शृणु नामानि देवस्य पावनानि नृणां सदा ॥
 विष्णुर्भगवत्तथा धाता प्रीयतामुच्चरेद्बुधः ।
 अनेन विधिना यस्तु कुर्यान्नन्दानरः सदा ॥
 स कामानेह संप्राप्य विधातारमवाप्नुयात् ।
 पुत्रकामो लभेत्पुत्रं धनकामो लभेद्धनम् ॥
 विद्यार्थी लभते विद्यां यशोर्धी च यशस्तथा ।
 सर्वकामस्तथाप्राप्य मोदते शाश्वतोः समाः ॥
 ततः सूर्यसदो गत्वा नन्दते नन्दवर्षणम् ।
 इत्येषा नन्दजननी नन्दा ख्याता मया हिज ॥
 यामुपीष्व तथा श्रुत्वा नन्दतेऽर्कमवाप्य वै ।
 इति भविष्योत्तरोक्तं नन्दासप्तमी व्रतम् ।

—000—

ब्रह्मावाच ।

यज्ञपथे तु सप्तम्यां नक्षत्रं सवितुर्भवेत् ।
 यदा प्राप्यमघेशेण तदा सा भद्रतां व्रजेत् ॥
 सविष्टनक्षत्रं, इत्या ।
 चतुर्थीनिकभक्तन्तु पञ्चम्यां नक्तमादिशेत् ।
 ब्रह्मरामयाचितं प्रोक्तं उपवासस्ततः परम् ॥

* विज्र प्राप्तविति पुत्रकान्तरे वाडः ।

† रविरिति क्षितिं वाडः ।

तर्षाच्च देवदेवेशो हृतेन कथितं बुधैः ।
 श्रीरेच च तथा वीर पुनरिष्टुरवेन च ॥
 आपयित्वा तु देवेशं चन्दनेन विलेपयेत् ।
 दद्याच्च गुग्गुलुं तस्यै दद्याद्गोम तद्यागतः ॥
 गोधूमचूर्णनिष्पन्नं विमलं शशिसन्निभम्
 सुवर्णं सगुडञ्चैव रक्तपुष्पोपशोभितम् ॥
 वदथ ऋषमीशानं तत्र वैमोक्षिकं न्यवेत् ।
 यदथे तत्र माषिकं न्यवेदा रोहितं मषिम् ॥
 नैर्ऋते मरकतन्दद्याद्वायव्येयत्ररागकम् ।
 सरोजं वाप्युत्तरतः स्रग्वत्तथा विष्यञ्चिद्बुधः ॥
 पाषण्डिनो विकर्मस्त्वान्मैत्रालप्रतिकान् त्वजेत् ।
 सप्तम्यां भोजयेद्भ्रात्रो दिवास्नप्रश्च वजेयेत् ॥
 अनेन विधिना यस्तु कुर्व्याच्चै भद्रव्रतमीम् ।
 भद्रा ददाति सप्तम्यां भद्रव्रतस्य व्रतं भवेत्* ।
 तस्य भद्राः सर्व्व एव गच्छन्ति ज्ञातव्यः सदा ॥
 तद्दशतः फलं तस्यां विधिनाक्नेन दीयते ।
 श्योमभद्रमिति प्रोक्तं देवचिह्नं मनोरमम् ॥
 शालिपिष्टमयं प्रोक्तं चतुःकोचं मनोरमम् ।
 मध्येन सर्पिषा युक्तं च्छुक्कगर्भरसान्वितम् ॥
 चतुर्जातकचूर्णेन द्राक्षाभिश्च विशेषतः ।
 चतुर्जातकचूर्णेनेति, एसासवङ्गपचकनागकेसरचूर्णेनेत्यर्थः ॥
 नासिकेसकलैश्चैव शुभगन्धैर्गन्धाधिप ।

* इदं भद्रमिति प्रोक्तं पदसङ्ख्यात् नु भुवच इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

मध्येन्द्रनीलं भद्रं च न्यवेत् प्राज्ञः कर्मज्ञितः ॥
 पुष्करागं नरकतं चक्षुरागन्तव्यैव च ।
 अतीवनीचमाचिकं ज्ञात्वात्कोषेषु विन्यवेत् ॥
 प्रस्यमानं भवेद्भद्रं प्रस्यार्हं स्याच्च वा विभी ।
 अनेन विधिना कृत्वा देवस्य पुरतो न्यवेत् ॥
 वाचसावाच वै दृष्ट्यादृशवा भीष्मके सखम् ।
 अनेन विधिना यस्तु कृत्वा भद्रं प्रवच्छति ॥
 स हि भद्राणि संप्राप्य मण्ड्येहोपतिमन्दिरम् ।
 ब्रह्मलोकं ततो मण्ड्येद्यामादृष्टो न संशयः ॥
 तेजसा रविसङ्घातः कान्ध्यापेयसमस्तथा ।

वापेय, चन्द्रः

प्रभवा नीपतेस्तुल्यलोजसा बहुरस्य च ।
 तस्मादेतत् पुनर्भूमौ नीपतिः न्याय संशयः ॥
 प्रसादाद्वापतेर्वीर भद्रवानभिजायते ।
 इत्येषा कथिता वीर भद्रानामेति सप्तमी ॥
 वानुपीय नरो वीर ब्रह्मसौक्यमवाप्नुवान् ।
 नृपयन्ति च पठन्तीह कुर्वन्ति च मयाधिप ॥
 ते सर्वे चन्द्रमासः सप्त यान्ति तत्रैव प्राण्यतम् ।

० चण्डनीपमपूजित इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† भद्रमासाचेति कथितं पाठः ।

इति भविष्यपुराणोक्तं भद्रासप्तमीव्रतम् ।

—000—

सुमन्तुववाच ।

सर्वभक्ता तु वा नारी भ्रुवं सा पुत्रयो भवेत् ।
 ज्यौ वैवाघ्युत्तमं नाभं धरत्वा गृह्य साश्रितम् ॥
 निष्पुभार्कव्रतं भानोः सदा प्रीतिविवर्धनम् ।
 अष्टविंशत्यक्षरं वीर धर्मकामार्थसाधकम् ॥
 सप्तम्यामथ वष्ट्यां वा संक्रान्तौ भानवे दिने ।
 इविषा इविषा ज्योमं सोपवासः समाचरेत् ॥
 निष्पुभार्कस्य देवार्थां कृत्वा स्वर्णमयीं ह्वाम् ।
 राजर्तौ वाच वार्धां वा चापयेद्य हृतादिभिः ॥
 निष्पुभा, सर्वपात्री तथा सहितोऽर्कः ।

इविषा इविषा, नम्यहृतेन ।

रूपनिर्माणं विष्णुपञ्चीकरात् ।

कर्णयो निष्पुभार्कस्य वारीकवचभूषितः ॥
 रत्नवदस्य कर्णयो वामदक्षिणदक्षयोः ॥
 अरवीरन्वजोस्तस्य कमले कमलासनः ।
 दक्षपद्मे रथे चैव वष्टारे निष्पुभस्मितः ॥
 पशुर्षाह्वर्षहातेजा रत्ननाभिर्बिभूषितः ।
 उपविष्टस्य कर्णयोः स देवोऽवचसारथिः ॥
 नम्यनाभैरसङ्कुल वक्षसुन्मैव शोभनैः ।
 नम्यभोज्यै रथिवैश्च विमानध्वजचामरैः ॥

भोजयेत्सूर्यभक्तांश्च भोजकांश्च तथा वृष ।
 भक्त्या च दक्षिणां दद्याद्वास्करः प्रीयतामिति ॥
 ताम्रपात्रे च कांस्ये वा शुक्लवस्त्रायगुण्डितम् ।
 कृत्वायतनमध्ये तु प्रतिमासुपकल्पयेत् ॥
 कृत्वा शिरसि तत् पात्रं वितानच्छदशोभितम् ।
 ध्वजकृत्वादिभिश्चैव व्रतं त्वायतनं व्रजेत् ॥
 निम्बुभार्कदिनेशस्य व्रतमेतन्निवेदयेत् ।
 तत्पीठे स्थापयेत् पात्रं पुष्पशोभासमन्वितम् ॥
 प्रदक्षिणीकृत्य रविं प्रणिपत्य प्रसादयेत् ।
 सप्राप्यैतद्गतं पुण्यं शृणु यत् फलमाप्नुयात् ॥
 द्वादशादिन्यसंकाशैर्नृणांहायानेर्नगोपमैः ।
 यथेष्टं वै रवेलोके सौरैः सार्धं प्रमोदते ।
 वर्षकोटिसहस्राणि कोटिवर्षगतानि च ॥
 मन्दते च महाभागैर्बिष्णुलोके महीयते ।
 ततः कर्षविशेषेण सर्वकामसमन्वितः ॥
 ब्रह्मलोकं समासाद्य परं सुखमवाप्नुयात् ।
 ब्रह्मलोकात् परिभ्रष्टः श्रीमान् सङ्घः प्रपूजितः ॥
 प्रजापतित्वमाप्नोति सुरासुरनमस्कृतः ।
 भोगानिह चिरं भुङ्क्ता सोमलोके महीयते ॥
 सोमाश्चान्द्रं पुनर्लोकमासाद्येन्द्रसमो भवेत् ।
 इन्द्रलोकाच्च गान्धर्वलोकां प्राप्य स मोदते ॥
 गन्धर्वराजप्रतिना सह भोगैर्वसेत्सुखम् ॥

• वर्षकोटि व्रतानि चेति पुष्पकामरे वाकः ।

महारत्नप्रभावेन उपशोभितमङ्गतम् ।
 यच्चलोकमपि प्राप्तो यथा कामं प्रमोदते ॥
 यच्चलोक्यात् परिभ्रष्टः क्रीडते मेरुमूर्धनि ।
 स्थानानि लोकपालानां क्रमादागत्य मोदते ॥
 लोकासीक्षांस्तपर्यन्ते सर्व्वस्मिन् चितिमण्डले ।
 यच्च तत्र वृष्टी नित्यं तद्देशमवाप्नुयात् ॥
 धर्म्मार्थकाममोक्षाच्च राज्यं प्राप्य प्रमोदते ।
 षाद्विद्यात् प्राप्यते भोगः सुभगो नाच संशयः ॥
 इति भविष्यपुराणोक्तं निष्कुभार्कसप्तमीव्रतम् ।

—000—

सुमन्तुववाच ।

या तु षष्ठ्यां तु सप्तम्यां नियता व्रतचारिणी ।
 वर्षमेकान्तु क्तत्वैवं महालोकजिगीषया ॥
 वर्षान्ते प्रतिमाहृत्वा निष्कुभार्कतिविश्रुतां ।
 निष्कुभार्करूपनिर्माणं नियत व्रतोक्तं वेदितव्यम् ॥
 खानाद्यश्च विधिं कृत्वा निष्कुभार्केति विश्रुतम् ।
 पूर्वोक्ताङ्गभते कामान् पूर्वोक्तान् लभते गुणान् ॥
 जाम्बूनदमयैर्धानैः स्वर्गेन रमते चिरम्भु ।
 गत्वाहित्यपुरं रम्यं निखिलं विन्दते फलम् ॥
 सौरादिसर्व्वलोकेषु भोगान् भुङ्क्ता यथेक्षितान् ।
 क्रमदावत्स लोकेश्चिन्नाजानं पतिमाप्नुयात् ॥

० वर्षमेकं न सुषुप्तौ च इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† विधि मन्वन्मोभिरीतिरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

इति प्रथमम् ।

या नार्थ्युपवसेदेवं कृष्णामिकान्तु सप्तमीं ।
 सा गच्छेत्परमं स्थानं भानोरमिततेजसः ॥
 वर्षान्ते प्रतिमाहृत्वा शालिपिष्टमयीं शुभाम् ।
 पीतानुलेपनैर्माल्यैः पीतवस्त्रैः प्रपूजयेत् ॥
 पूर्वोक्तं निखिलं कृत्वा भास्कराय निवेदयेत् ।
 सर्वभूमौ महीपालो धातुचामीकरप्रभः ॥
 वर्षकोटिसहस्राणि सूर्यलोके महीयते ।
 सौरादिसर्वलोकेषु भोगान् भुङ्क्ता यद्येषितान् ॥
 क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् जनेशं विन्दते पतिम् ।
 कुलीनं रूपसम्पन्नं सर्वशास्त्रविशारदम् ॥

इति द्वितीयम् ।

सप्तम्यां या निराहारा भवेदब्दनियन्त्रिता ।
 गजं पिष्टमयं कृत्वा वर्षान्ते विनिवेदयेत् ॥
 विधाय राजतं पद्मं सुवर्णकृतकर्षिकाम् ।
 भक्त्या विन्यस्य तत्पृष्ठे सर्वं पूर्ववदाचरेत् ॥
 कामतोऽपि कृतं पापं भ्रूणहत्यादि यद्भवेत् ।
 तत्सर्वं गजदानेन क्षीयते नात्र संशयः ॥
 महापद्मविमानेन नरो नारायणान्वितः ।
 वर्षकोटिशतं पूर्णं सूर्यलोके महीयते ॥
 सौरादिसप्तलोकेषु* भोगान् भुङ्क्ता यद्येषितान् ।

* सौरकोकादिशोकं चिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् जनेयं विन्दते पतिं ॥
 कुलीनं रूपसम्पन्नं* सर्वशास्त्रविद्यारदम् ।
 सर्वसङ्गणसम्पन्नं धनधाव्यसमन्वितम् ॥
 महोष्वाहं महावीर्यं महासत्त्वं महाबलम् ।

इति तृतीयम् ।

ज्ञान्यपथे तु माघस्य सप्तम्यां या दृढव्रतता ।
 वर्षकमुपवासेन सर्वभोगविवर्जिता ॥
 वर्षान्ते सर्वगन्धोदघं निष्ठुमार्कं निवेदयेत् ।
 सुवर्षंनषिमुक्ताढं भोजयित्वा द्विजोत्तमम् ।
 इतिहासविदम्रात्रं वाचकं भार्यया सह ॥
 सुविचित्रैर्कीर्त्यायानैर्दिव्यगन्धर्व्यैश्चोभितैः ।
 क्रोडेऽद्युगयतं सार्धं सूर्य्यस्त्रीके नराधिप ॥
 प्रभया सूर्य्यशङ्कायस्तेजसा हरिसन्निभः ।
 यद्येष्टं भानवे लोके भोगान् भुक्त्वा बधेक्षितान् ॥
 क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् राजा भवति धार्मीकः ।
 स एव* कुरुते राजन् व्रतं पापभयापहम् ॥
 निष्ठुमार्कमिदं पुष्पं स याति परमं पदम् ।
 वर्षमेकं महाबाहो त्रहया परयान्वितः ॥
 वर्षान्ते भोजयेद्द्वीर वाचकं भार्यया सह ।
 भोजयित्वा तु द्वाभ्यस्यं महाभारतवाचकम् ॥
 पूजयेद्गन्धनाम्नैः स वाक्मीभिर्भूषयेत्सदा ।

* सर्वं कुरुते चण्डं चितिं पुष्पनाकरे पाठः ।

हत्वा तावन्मये पापे बन्धपूर्वेष्वसङ्कृते ।
 निचुभार्कन्तु सौवर्णन्द्यासाभ्यां स्वयन्निः ।
 निचुभा ब्राह्मणो ज्ञेया वाचकोऽर्कः प्रकीर्तितः ।
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं निचुभार्कचतुष्टयम् ।

—०*०—

सप्तम्यतिसक उवाच ।

वेनतेय नृण्यन्व त्वं विधानं सप्तमीव्रतम् ।
 एतच्च परमं गुह्यं रवेराराधनं परम् ॥
 सिद्धार्थकैस्तु प्रथमा द्वितीया चार्कसम्पुटेः ।
 तृतीया मरिचैः कार्या चतुर्थी निम्बसप्तमी ॥
 षट्श्रुता पञ्चमी कार्या षष्ठी च फलसप्तमी ।
 सप्तम्यनोदना वीर सप्तमी परिकीर्तिता ॥
 षट्श्रुता इति सिद्धार्थकादिषु द्विः प्रकारैर्युता* ।
 इत्येताः सप्तसप्तम्यः कर्त्तव्या भूतिमिच्छता ॥
 तथा चानुकमेपासाङ्करचं कथयाम्यहम् ।
 माघे वा मार्गशीर्षे वा कार्या यत्ना तु सप्तमी ॥
 न च स्यान्नियमभङ्गः पञ्चमासकतो भवेत् ।
 धार्तिवशादन्यस्मिन् मासे पञ्चे च कार्या त्वर्षः ।
 अर्धप्रहरशेषे तु कुर्याद्दैन्यधावनम् ॥
 अर्धप्रहरशेषे पूर्वदिनेऽवशिष्टार्धप्रहरे ।

* षट्श्रुता षड्भिः अर्धपार्कमरिचनिम्बफलपयोमिरिचि च ॥ सप्तमीवर्षं युता
 षट्श्रुतं त्रय्यापञ्चमास सप्तमे बाह्याना इति पाठान्तरं ।

तत्रैव दन्तकाष्ठानां फलन्तव वदाम्यहम्* ॥
 मधूके पुत्रलाभः स्याद्राजवृक्षाज्यं कभेत्† ।
 गृहतां याति सर्व्वं च‡ प्राङ् रूपकसम्भवे ॥
 अशोकैः विशोकः स्याद्भ्रतवदरे यशः ।
 त्रियं प्राप्नोति विपुलां शिरीषस्य निषेवणात् ॥
 प्रियङ्गुं सेवमानस्य सौभाग्यं परमं भवेत् ।
 अमौषितार्थसिद्धिः स्यान्नित्यं पुत्रनिषेवणात् ॥
 वदर्याश्च वृहत्याश्च क्षिप्रं रोगात् प्रमुच्यते ।
 वृहती, डोरसी ।

दिश्वर्याश्च भवेद्विषये खदिरे धनसञ्चयः ।
 शत्रुक्षयं कदम्बे च अर्थलाभोतिमुक्तके ॥
 अतिमुक्तः काराङ्गुदी ॥
 सूतेन नृपवश्यं स्यात्सौभाग्यं पनसेन तु ।
 आयुः स्यात् पङ्कजस्यैव अर्थलाभोऽविमुक्तये ।
 अविमुक्तः, रापशालः ।

न पाटितं समश्रीयादन्तकाष्ठञ्च सत्रणम् ।
 न चार्धशुष्कं शुक्रम्बा न चैव त्वग्निवर्जितं ॥
 पितस्त्रिमात्रमश्रीयाद्द्विर्घं कृत्स्नं विवर्जयेत् ।
 उदङ्मुखः प्राङ्मुखो वा सुखासीनोऽथ वाग्यतः ॥

* सत्रम्बां ये तु ते वृक्षाः कामिकासान्पदाम्यहमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† अङ्गुने भार्गवी स्थितिः क्वचित् पाठः । तत्र अङ्गुनः, कङ्कभः । भार्गवी, क्वकीरिति पाठान्तरे ।

‡ आनिपधानतां यानोति पुस्तकान्तरे पाठः ।

कामं यथेष्टं हृदये कृत्वा समभिमन्त्रा च ।
 मन्त्रेष्वनेन मतिमानश्रीयाद्वन्तधावनम् ॥
 वरं दत्त्वाभिजानामि कामदश्च वनस्यते ।
 सिद्धिं प्रयच्छ मे नित्यं दन्तकाष्ठ नमोस्तु ते ॥
 चीन् तथा परिजप्यैव भक्षयेद्वन्तधावनम् ।
 पश्चात्प्रक्षाल्य तत्काष्ठं शुचौ देशे विविक्षिपेत् ॥
 ऊर्ध्वं निपतिते सिद्धिस्तथा वाभिसुखस्थिते ।
 अतोन्मथा निपतिते आनीय पुनरुक्तृजेत् ॥
 पुनस्तथा निपतितं तद्यथा दन्तधावनम्* ।
 असिद्धिं तु विजानीयात् न प्राप्त्वा सातु सप्तमी ॥
 ब्रह्मचारी तु तां रात्रिं स्वप्यात् मङ्गल्यशेवया ।
 विभ्रहासोऽनुपहतं शुचिराचारसंयुतः ॥
 तस्यां रात्राम्ब्यतीतायां प्रातरुत्थाय वे स्वग ।
 प्रक्षालयेत् सुखं धीमानश्रीयाद्वन्तधावनम् ॥
 उपविश्य शुचिर्भूत्वा प्रणम्य शिरसा रविम् ।
 जपं यथेष्टं कृत्वा तु जुहुयाच्च हुताशनम् ॥
 ततोऽपराह्णसमये स्नात्वा शृङ्गोद्भवान्बुभिः ।
 विधिपूर्वमुपसृश्य मीनी शक्ताम्बरः शुचिः ॥
 पूजयित्वा तु विधिना भक्त्या देवं दिवाकरम् ।
 स्वपेद्देवस्य पुरतो गायत्रीजपतत्परः ॥
 अतःपरं प्रवक्ष्यामि यैर्यैर्यत् फलमादिशेत् ।
 स्वप्नेदृष्टैस्तु सप्तम्यां पुष्षो नियतव्रतः ॥

* यदां सुखं यद्विभवेत् बीजं वाराम् दन्तधारमिति पाठान्तरं ।

समाप्य विधिवत् सर्वाङ्गपहोमादिकां क्रियाम् ।
 भूमौ शय्यां समास्थाय देवदेवं विचिन्तयेत् ॥
 अत्र सुप्तो यदि नरः पश्ये दुद्याह्वाकरम् ।
 शक्रध्वजं वा चन्द्रं वा तस्य सर्वाः समृद्धयः ॥
 वृषभं गजगोवत्सवोणां लोकाननामयान् ।
 शृङ्गारममलादर्शकरकामौ सुखोत्सवः ॥
 रुधिरस्य श्रुतिः सेकः परमैश्वर्यकारकः ।
 सप्तवृक्षाधिरोहय च्छिप्रमैश्वर्यमावहेत् ॥
 दोहने महिषीं सिंहीं गोधिनूनां करिश्वकः ।
 गन्धर्वानां राज्यलाभो लाभस्तु द्युमणेर्गतिः ।
 अभिपत्यस्त्रयं खादेत्सिंहङ्गाभुजगान्पि ॥
 स्वाङ्गमस्थि हुताशम्बा सुरापानं तथा खग ।
 हैमे वा राजते चापि यो भुङ्क्ते पायमन्नरः ॥
 पात्रे तु पद्मपात्रे वा तस्यैश्वर्यम्परं भवेत् ।
 द्यूते चापि च वादे वा विजयो हि सुखावहः ॥
 गात्रस्य च प्रव्वलनं शिरोवेधश्च भूतये ।
 मात्स्याम्बराणां शुक्लानां धारणं पशुपत्तिणाम् ॥
 सदालाभं प्रशंसन्ति तथा विष्टानुत्तेपनम् ।
 हययाने भवेत् क्षेमं रथयाने प्रजागमः ॥
 नानाशिरोभक्षणाच्च हस्तस्थां कुरुते त्रियम् ॥
 षडगम्बागमनं लब्धं वेदाध्ययनमुत्तमं ।
 देवा विलम्बरा वीरा गुरुवृद्धतपस्विनः ॥
 यद्दन्ति नरं स्रप्रे सत्त्वमेवति तद्दिदुः ।

प्रशस्तं दर्शनं तेषामाशीर्वाद्ः खगाधिप ।
 राज्यं स्यात् स्वधिरःच्छेदे धनं बहुतरं भवेत् ॥
 रुदिते* भक्ष्यसम्प्राप्ती राज्यं निगडवन्धनैः ।
 पर्वतं तुरगं सिंहं वृषभङ्गजमेव हि ॥
 महदैश्वर्यमाप्नोति विमानं योऽधिरोहति ।
 यसमाना ग्रहास्तारा महीश्च परिवर्त्तयेत् ॥
 उन्मूलयन् पर्वतांश्च राजा भवति भूतले ।
 देहलीक्रान्तरत्नानां वेष्टनश्च खगाधिप ॥
 यानं समुद्रसरितामैश्वर्यसुखकारकम् ।
 सरितं चाश्वधिं वापि तीर्त्वा पारं प्रयाति यः ॥
 तस्मै फलं भवेद्दीरः सकलं कामलोपमम् ।
 अद्रिं लङ्घयतश्चापि भवत्यर्थो जयस्वाद्या ॥
 मांसमामं तथा विष्टां फलं नानाविधं खग ।
 भवत्यर्थागमः शीघ्रं कामिन्वा यदि भक्षयेत् ॥
 अङ्गनानां^१ कुरूपाणां लाभो दर्शनमेव च ।
 संयोगश्चैव माङ्गल्यैरारोग्यं धनमेव च ।
 ऐश्वर्यं राज्यलाभो वा यस्मिन् स्वप्नं उदाहृतम् ॥
 तत्र स्यान्नात्र सन्देहस्तैस्तैर्दृष्टैर्विहङ्गम ।
 दृष्ट्वा तु शोभनं स्वप्नं न भूयः शयनं व्रजेत् ॥
 प्रातश्च कीर्त्तयेत् स्वप्नं यथा दृष्टं खगाधिप ।
 प्राञ्च भोजकविप्रेभ्यः सुहृदां देवतासु वा ॥

* वधिर इति पाठान्तरं ।

१ कुरूपाणां मिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ततो मध्याह्नसमये ज्ञातः प्रयतमानसः ।
 तथैवदेवं विधिवत् पूजयित्वा दिवाकरम् ॥
 सम्यग्जपकृतो मौनी ततो हुतहुताशनः ।
 निष्क्रम्य देवायतनाङ्गो जयेद्वाङ्गाणांस्ततः ॥
 रत्नानि चैव वस्त्राणि तथा चैव सुगन्धयः ।

सुगन्धिमाल्यानि हविष्यमक्षं
 पयस्विनीं गामथ वाचक्राय ।
 देयानि यावच्च भवेद्भीष्टम्
 भवेद्लाभो यदिवाचकानां ॥
 विप्रा यदर्हन्ति विशिष्टबुद्ध्या
 ये मन्त्रवेदाहृतपातकाः* वै ।
 ये वापि सामाध्यने नियुक्ताः
 यजुष्विदो वापि ऋचां विधिज्ञाः ॥

कृतैवं सप्तसप्तम्यो नरो भक्तिसमन्वितः ॥
 अन्नधानीनस्यश्च स कथं नाप्नुयात् फलम्† ।
 दधानामश्वमेधानां कृतानां यत् फलं भवेत् ॥
 तत् फलं सप्तसप्तम्यां कृत्वा प्राप्नोति मानवः ।
 दुःप्रापं नास्ति तद्दीर सप्तम्यां यन्न लभ्यते ।
 न च रोगोत्थसौ लोके य एताभिर्विभ्राम्यते ॥
 कुलानि यानि रौद्राणि दुःखितानीह यानि च ।

* कृत पावकेति कश्चित् पुस्तकान्तरे पाठः ।

† सकलं प्राप्नुयात् पञ्चमिति वा पाठः ।

शाम्यन्ते तानि सर्वाणि गरुडेनेव पन्नगाः ॥
 व्रतनियमविशेषैः सप्तमी सप्त चैवं
 विधिवदिह हि कृत्वा मानवो धर्मशीलः ।
 श्रुतधनफलयोगैः सौख्यपुण्यैरुपेतो
 व्रजति तदनुलोकां शाश्वतं तीक्ष्णरश्मिः ॥

एष दन्तधावनादिब्राह्मणभोजन्तः रुमानां सप्तमीनां साः
 विधिः ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं-सिद्धार्थकादिसप्तमीव्रतम् ॥

—000—

व्रह्मोवाच ।

संपूज्य विधिवद्देवं पुष्पधूपादिभिर्बुधः ।
 यथाशक्ति ततः पञ्चान्नैवेद्यं भक्तितो न्यसेत् ॥
 पुष्पाणां प्रवरा जातिर्धूपानां विजयः परः ।
 गन्धानां कुङ्कुमं श्रेष्ठं लेपानां रक्तचन्दनं ॥
 दीपदाने घृतं श्रेष्ठं नैवेद्यं मोदकं परम् ।
 एतैस्तृष्यति देवेशः सान्निध्यं चापि गच्छति ॥
 एवं संपूज्य विधिवत् कृत्वा चापि प्रदक्षिणम् ।
 प्रणम्य शिरसा देव देवदेवं दिवाकरम् ॥
 सुखासीनस्ततः पश्येद्देवरभिसुखस्थितः ।
 एवं सिद्धार्थकं कृत्वा हस्तेपानीयसंयुतः ॥
 सिद्धार्थकं पश्येदित्यन्वयः ।
 कामं यथेष्टं हृदये कृत्वा तं वाञ्छितं नरः ।

हमाद्रिः । [व्रतखण्डं ११ अध्यायः ।

...त् सन्तोषयन् विप्रमसृशन् दशनैः सकृत् ॥

रात्राविति शेषः ।

द्वितीयायान्तु सप्तम्यां द्वौ गृहीत्वा तु सुव्रत ।
द्वितीयायां तु सप्तम्यां पातव्यास्त्रयएव हि ॥
चतुर्थ्यां वापि चत्वारः पञ्चम्यां पञ्च एव च ।
षट् पिवेच्चापि षष्ठ्यां तु इतीयं वैदिकी श्रुतिः ॥
सप्तम्यां वारिसंयुक्तां सप्त चैव पिवेन्नरः ।

वारिगण्यः द्रववाची पञ्चगव्यस्य वक्ष्यमाणत्वात् ।

आदित्यप्रभृति ज्ञेयो मन्वोऽयमभिमन्त्रणे ॥
सिद्धार्थकत्वं लोके हि सर्वत्र श्रूयते सदा ।
तथा ममापि सिद्धार्थमर्थिनः कुरु तद्रवे ॥
ततो हविरुपसृशन् जपं कुर्याद्यद्योचितं ।
हुताग्रं चैव जुहुयाद्विधितृष्टेन कर्मणा ।
एवमेवापराः कार्य्याः सप्तम्यः सप्त सर्व्वदा ॥

एवमर्कसंपुटाद्येकोत्तरहृत्वा पराः षट् सप्तम्यः प्रत्येक
कार्याः तन्मन्त्रास्तु वक्ष्यमाणास्सर्कसप्तमीषूक्ता विज्ञेयाः ।

उदकप्रभृतिं यावत् पञ्चगव्येन सप्तमी ।
एकं तीयेन सहितं द्वौ वापि घृतसंयुतौ ॥
द्वितीयं मधुना सार्द्धं दध्ना पि च चतुष्टयम् ।
युक्तास्तु पयसा पञ्च सट् च गोमयसंयुताः ॥
पञ्चगव्येन वै सप्त पिवेत् सिद्धार्थका द्विज ।
अनेन विधिना यस्तु कुर्यात् सर्षपसप्तमीं ॥

बहुपुत्रो बहुधनः सिद्धार्थश्चापि सर्व्वदा ।

इह लोके नरो भूत्वा प्रेत्य याति विभावसुम् ॥

इति श्रीभविष्यपुराणोक्तानि सर्षपसप्तमीव्रता

—०००—

सुमन्तुत्वाच्च ।

स्वयं या कथिता पूर्व्वमादित्येन खगम्य तु ।

अरुणस्य महावाहोः सप्तम्यः सप्त पूजिताः ॥

अर्कसम्पुटकैरेका द्वितीया मरिचैस्तथा ।

तृतीया निम्बपत्रैश्च चतुर्थी फलसप्तमी ॥

अनोदः पञ्चमी स्यात् षष्ठी विजयसप्तमी ।

सप्तमी कामिकी ज्ञेया विधिना मां निवोध मे ॥

शुक्लपक्षे रविदिने प्रवृत्ते चोत्तरायणे ।

पुन्रामधेये नक्षत्रे गृहीत्वा सप्तमीव्रतम् ॥

सर्वासु ब्रह्मचारो स्यात् शौचयुक्तो जितेन्द्रियः ।

सूर्यार्चनपरो दान्तो अपहोमपरस्तथा ॥

पञ्चम्यामेकभक्तान्तु कुर्यान्नियतमानसः ।

षष्ठप्रातर्मैथुनं गच्छेत् मधुमांसञ्च वर्ज्जयेत् ॥

नक्तं कुर्व्वन्निति शेषः ।

अर्कसम्पुटकैरेकां तथान्यां मरिचैर्नयेत् ।

तथापरां निम्बपत्रैः फलाख्यां फलभक्षणात् ॥

चेमाद्रिः । [व्रतखण्डं ११ अध्यायः ।

अनोदनो निराहारः उपवासो यथाविधि ।
 अहीराचं वायुभक्षः कुर्याद्द्विजयसप्तमीं ॥
 तथैताः सप्तकृत्वा तु प्रतिमासं विचक्षणः ।
 एताः षट् प्रत्येकं सप्तकृत्वैर्त्यर्थः ।
 कुर्याद्द्विधानं विधिवत् ततः कर्त्वीत कामिकीं ।
 आसां गृहोत्वा* नामानि पात्रेष्वथ पृथक् पृथक् ॥
 तानि सर्वाणि पात्राणि क्षिपेद्भिनवे घटे ।
 श्वेतचन्दनदिग्धाङ्गे मास्यदामोपशोभिते ॥
 धनधान्यहिरण्याटैः शुद्धकुन्देन्दुसन्निभैः ।
 अश्वत्थाशोकपत्राङ्गे र्द्धोदनसमन्वितैः ॥
 तदर्धं यो न जानीते बालोवाग्योपि वै नरः ।
 तेनाभ्युहारयेदेकं तत् कुर्याद्विचारयन् ॥
 तेनैव विधिना या तु प्रतिमासं परन्तप ।
 सप्तैव यावत् संप्राप्ता विज्ञेया सा तु कामिकी ॥
 इत्येताः सप्तसप्तम्यः स्वयं प्रोक्ता विवस्वता ।
 कुर्वीत यो नरो भक्त्या स यात्यर्कसदो नृप ॥
 श्वेतचन्दनदिग्धाङ्गे मास्यदामोपशोभिते ।
 सप्तधान्यहिरण्याटैः शुद्धकुन्देन्दुसन्निभे ॥
 अश्वत्थाशोकपत्राङ्गेः र्द्धोदनसमन्विते ।
 अर्कसम्पुटकैर्विंशत्सप्तमसं साप्तपौरुषम् ॥
 मरिचैः सङ्गमः स्याद्द्वै प्रियपुत्रार्धिनः सदा ।
 सर्व्व रोगाः प्रणश्यन्ति निम्बपत्रैर्न संशयः ॥

* क्षिपति इति पुस्तकान्तरे प्राठः ।

फलैश्च पुत्रपौत्रैश्च दौहित्रैश्चापि पुष्कलैः ।
 अमोदनाहनं धान्यं सुवर्णं रजतं तथा ॥
 तथा* यशो हिरण्यञ्च आरोग्यं-सन्ततिर्नृप ।
 उपोष्य विजयं शत्रून् राजा जयति नित्यशः ।
 साधयेत्कामदा कामान् विधिवत्पर्युपासिता ॥
 पुत्रकामो लभेत्पुत्रमर्थकामोऽर्थमन्नयम् ।
 विद्याकामो लभेद्विद्यां राज्याधीं राज्यमाप्नुयात् ।
 कृत्स्नान् कामानं ददात्येषा कामदा कुलनन्दन ॥
 नरो वा यदि वा नारी यद्योक्तं सप्तमीव्रतम् ।
 करोति नियतात्मा चेत् स याति परमां गतिं ॥
 मोहात् प्रमादात्तोभाहा व्रतभङ्गीभवेद्यदि ।
 तदा त्रिरात्रं नास्मीथात् कुर्यात् वा केशसुच्छनं ॥
 प्रायश्चित्तमिदं कृत्वा पुनरेव व्रती भवेत् ।
 सप्तैव यावत् संप्राप्ता सप्तम्यः सप्तसंयुताः ॥
 सप्तसंयुताः, सप्तगुणिता एकोनपञ्चाशदित्यर्थः ।
 अभ्यर्च्य सूर्यं सप्तम्यां मास्यधूपान्दिभिर्नरः ॥
 भोजयित्वा द्विजान् भक्त्या प्राप्नुयात्स्वर्गमन्नयम् ।
 सप्तम्यां विप्रसुख्येभ्यो हिरण्यं यः प्रयच्छति ॥
 स तदन्नयमाप्नोति सूर्यलोकञ्च गच्छति ।

* यद्य हिरण्यञ्चेति पाठान्तरं ।

इति भविष्यपुराणोक्तः सप्तसप्तसप्तमी करुपः ।

— ११० —

सुमन्तुर्वाच ।

अथ अर्कसम्पुटकादिसप्तमीसप्तकम्

समुद्रेश्वरानं पुनरेकैव सा विवृणोति

इत्येवं सप्तमीकल्पः समासात् कथितस्तथा ।

विस्तरन्ते पुनर्वर्चिम शृणुष्वेकमना भृशम् ॥

फाल्गुनामलपक्षस्य षष्ठ्यां सम्यगुपोषितः ।

पूजयेद्भास्करं स्नात्वा पुष्यगन्धानुलेपनैः ॥

अर्कपुष्पैर्महावाह्यां गुग्गुलेन सुगन्धिना ।

सितेन भूषयन् देवं चन्दनेन दिवाकरम् ॥

गुह्योदनञ्च नैवेद्यं पलानां त्रितयं रवेः ।

एवं पूज्य दिवा भानुं रात्रौ तस्याग्रतः स्वपेत् ॥

जपेद्भूमौ परं जप्यमानिद्रागमनाहृधः ।

ध्यायमानो महात्मानं देवदेवं दिवाकरम् ॥

षष्ठक्षरेण मन्त्रेण जपपूजां समाहितः ।

जपहीमं तथा पूजां शतशब्देन सर्व्वदा ॥

सावित्र्या च जपं पूर्वं कृत्वा शतसहस्रशः ।

पञ्चाक्षर्यं प्रकुर्व्वीत जपादिकमनाकुलः ॥

त्रैयोऽर्धमात्मनो वीर धनपुत्रार्थसिद्धये ।

ॐ भास्कराय विद्महे सहस्ररश्मिं धीमहि

तन्नः सूर्य्यः प्रचीदयात् ।

इति सावित्री ।

जप एष परः प्रोक्तः सप्तम्यां भानुना स्वयं ॥
जम्बा संज्ञत् भवेत् पूतो मानवो नात्र संशयः ।
प्रभाते त्वन्न सप्तम्यां ज्ञातो नियतमानसः ॥
पूजयेद्वास्करं भक्त्या पूज्योक्तविधिना नृप ।
अथवा भोजयेद्वापि ब्राह्मणान् भक्तितो नृप ॥
दिव्यैर्भोगैश्च विधिवत् भास्करप्रीतये पुमान्* ।
विस्तृताठरं न कुर्वीत भोजनार्हास्तु भोजयेत् ॥
सन्भोजयेत्तथा सौरान् सौरादभ्यश्च भोजयेत् ।
घटी भोज्यो भवेद्दिप्रः सप्तमीं कुर्वते च यः ॥
सौरतन्त्रे तु कुशलः स भक्तो वै दिवाकरे ।
एते भोज्य द्विजा राजन् प्रादित्येन समासतः ॥
ग्रीष्माः कुशकुलत्रेष्ठ तथा भोज्यान् नृपश्च मे ।
परभार्यारतिर्भ्यस्तु कुठरीगवहश्च यः ॥
अथान्यदेवताभक्ताः तथा नक्षत्रसुचकाः ।
परापवादनिरतीवश्च देवसकलतथा ।
एते ह्यभोज्या विपेषु स्वयं देवेन निर्भिताः ।
घटते तु त्रयीं विद्यां ब्राह्मणानां कदम्बके ॥
घटेलुक्ता तु सा राजन् घतः सानुघटा ज्ञता ।
साघटा विद्यते यस्त्व सघटीत्युच्यते द्विजः ॥
ब्राह्मणविद्यां वीर शूद्राश्चाश्च कदम्बके ।

* भक्तभोज्यैरनेकत्र इति पुस्तकालये पाठः ।

नृपतां विधिवत्पुण्यं भक्त्या पुस्तकवाचनं ॥
 इतिहासनिबन्धाः या सा समस्येति भानुना ।
 प्रीच्यते कुरुशार्दूल स्वयमाकाशगामिना ॥
 कर्त्ता तस्या भवेद्यस्तु समस्वाकारकोमतः ।
 स विप्रो राजशार्दूल स द्वेष्टि भास्करस्य तु ॥
 जयोपजीवी व्यासस्य समस्याजीवकस्तथा ।
 याच्येतानि पुराणानि सेतिहासानि भारत ॥
 जयेतिकथितानीह स्वयं देवेन भानुना ।
 एतानि वाचयेद्यस्तु ब्राह्मणो ह्युपजीवति ॥
 जयोपजीवी स ज्ञेयो वाचकस्तु तथा नृप ।
 समाश्वा यत्र नो भक्त्या प्रीतये भास्करस्य तु ॥
 आरुणेयादिशास्त्राणि समाश्नतिलकं तथा ।
 यस्तु जानाति सौराणि स विप्रः सौरतन्त्रवित् ॥
 जयोपजीवी व्यासस्य समस्याजीविकस्तथा ।
 पूजयेत्सततं यस्तु पूजयेत् भास्करं नृप ॥
 स याति परमं स्थानं यत्र पश्यन्ति सूरयः ।
 भोजकस्तु यथा राजन्यथादेवो दिवाकरः ॥
 स ज्ञेयो भास्करेणोक्तो भोजनीयः प्रयत्नतः ।
 भोजनं निन्दयेद्यस्तु न च तं पूजयेत्तथा ॥
 ज्ञेयोऽन्यदेवताभक्तः स विप्रः कुरुनन्दन ।
 सुण्डो व्यङ्गी तथा गौरः शङ्खपद्मधरस्तथा ॥

* इतिहासनिबन्धायां सा समस्येति सद्भिन्न इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

यस्य याति गृहे राजन् भोजको मानवस्य तु ।
 तस्यायान्ति गृहं देवाः पितरो भास्करस्तथा ॥
 ब्राह्मणो यश्च राजेन्द्र हृष्या कर्म करोति वै ।
 देवतायतनेष्वेव देवानां पूजनं तथा ॥
 साधिपत्यं भक्षयन्तु नैवेद्यञ्च परन्तप ।
 स विज्ञेयो देवलोको ब्राह्मणो ब्राह्मणाधमः ॥
 नाधिकारोऽस्ति विप्राणां भौमानां देवपूजने ।
 हस्ता भरतशार्दूल आधिपत्ये विशेषतः ॥
 देवालयेषु सर्वेषु वर्जयित्वा शिवालयम् ।
 देवानां पूजने राजन् अग्निकार्येषु वा विभो ॥
 अधिकारः स्मृतौ राजन् लोकानाञ्च न संशयः ।
 पूजयन्तस्तु देवांस्तु प्राप्नुवन्ति पराङ्गतिम् ।
 नैवेद्यं भुञ्जते यस्मात् भीजयन्तीव भास्करम् ॥
 पूजयन्ति च वै देवान् दिव्यत्वं तेन ते गताः ।
 पूजयित्वा तु वै देवान् नैवेद्यं भुञ्जते विभो ॥
 यान्ति ते परमं स्थानं यत्र देवो दिवाकरः ॥
 हावेव तु प्रियौ राजन् भास्करस्य द्विजो नृप ॥
 वाचको भोजकश्चैव तावेवोत्तमतां गतौ ।
 स्वयं गत्वा गृहं भक्त्या पाणिभ्यां पादमालभेत् ॥
 ब्रवीति च तथा विप्र प्रसादं कुरु मे विभो ।
 भास्करप्रीतये विप्र भोजनं भुङ्क्षु मे गृहे ॥
 येन मे देवास्तृप्यन्ति त्वयि तस्मै दिवाकरे ।
 ब्राह्मणस्यापि तं व्रयात् क्षणे सति महामते ॥

एवं करिष्ये श्रेयोऽर्धमात्मनस्तव वा विभो ।
 इत्यामन्त्र्य ततो गच्छेत् खगटहं कुहनन्दन ॥
 तथापराङ्ग* समये भक्त्या देवं दिवाकरम् ।
 हुत्वाथ पावकं राजन् भोजयेत् ब्राह्मणांस्ततः ॥
 शाब्बोदनं तथा सुन्नान् सुगन्धघृतमेव च ।
 अपूपान् गुड़पूर्णांश्च पयोदधि तथा गुड़म ॥
 एतैस्तु दक्षिमायाति भास्करोऽनैस्तु सप्तधा ।
 वर्षाणि भरतश्रेष्ठ नात्र कार्या विचारणा ॥
 शियुकुन्दं तथात्यक्तं राजमासास्तथैव च ।
 कुलोत्थकान् मसूरांश्च तिलाशाण्डकमेव च ।
 एतान् भास्करेदद्याद्यदीच्छेच्छ्रेय आत्मनः ॥
 दुर्गन्धं यच्च कदुकं अत्यक्तं भास्करस्य च ।
 विमित्रां स्तदुलांश्चापि नो दद्याद्भास्कराय वै ॥
 इत्थं भोज्य द्विजान्† सर्वांन् भक्षयेत्सर्व्वसम्पुटम् ।
 प्रथम्य शिरसा देवमुदकेन समन्वितः ॥
 निष्क्रम्य नगराद्वाजन् गत्वा पूर्व्वोत्तरां दिशम् ।
 नात्युच्छ्रितं नातिनीचं शुचौ देशेऽर्कमुत्तमम् ॥
 जातं दृष्ट्वा महाबाहो पूजयित्वा खखोक्तातः ।
 खखोक्तात इति खखोक्तामन्त्रेण । तद्यथा खखोक्ताय
 नमः इति पूर्व्वोत्तरगतायां वै तस्य साभिभूमीयायां शाखायां

* तथापराङ्गं संपूज्यपूजेति पाठः ।

† भास्करेद्वासं पुरमितं पुरुकान्तर पाठः ।

अथगते पचेसुसूक्ष्मपक्ववाञ्छिते संश्लिष्टे पृथग्भूते गृहीत्वा
गृहमात्रजेत् । द्विवचनप्रयोगात् पत्रद्वयायतनं प्रतीयते ।

स्नातः पूज्य विवस्वन्तमर्कपुष्पैः खखोष्कतः ।

ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु अर्कौमे प्रीयतामिति ॥

प्राश्य मन्त्रेणार्कपुटं ततो भुञ्जीत वाग्यतः ।

देवस्य पुरतोवीर असृशन् दशनैः पुटं ॥

ओं अर्कसंपुट भद्रं ते सुभद्रं मेस्तु वै सदा ।

ममापि कुरु भद्रं वै प्राशनाद्विन्दोभव ॥

इमं मन्त्रं जपेद्राजन् जपन्नर्कं महीपते ।

स्थित्वा पूर्वमुखः प्रह्वो वारिणा सहितं नृप ॥

प्राश्य भुङ्क्ते च यो राजन् स याति परमम्यदम् ।

अनेन विधिना भक्त्या कर्त्तव्या सप्तमी सदा ॥

वर्षं यावन्महाबाहो प्रीतयेऽकंस्य अहया ।

यद्यै मां सप्तमीं कुख्यात् भास्करप्रीतये नृपः ॥

तस्याक्षयं भवेद्विजयचलं साप्तपौरुषम् ।

कृत्वेमां सिद्धिमायातः कौशुभिः सामगः पुरा ॥

कुष्ठरोगाच्च वै सुक्तो जपन् साम महामतिः ।

दृष्ट्वाऽथ जनको याज्ञवल्क्योऽथ कृष्णजः ॥

कृष्णजः शाश्वः ।

अनयाऽर्कमारध्यागतीर्कसात्मतां नृप ।

इयं धन्यतमा पुण्या सप्तमी पापनाशिनी ॥

पठतां नृषवतां राजन् कुर्वताश्च विशेषतः ।

तस्मादेषा सदा कार्या विधिवच्छेयसे नृप ।
अर्कप्रिया महाबाहो महापातकनाशिनौ ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तार्कसम्पुटसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

सुमन्तुरुवाच ।

तथा संपूज्य देवेशं भानुं कामप्रदं नृप॥ ।
भोजयित्वा यथाशक्ति ब्राह्मणांस विशिषतः ॥
नक्षत्र्यां प्राशयेच्चापि मरीचं मनुजाधिपः ।
गृहीत्वामरीचशतमन्नं सुदृढं परं ॥
मरीचं प्राशयेद्वाजन् मन्त्रेणानेन वाम्पृथक् ।

ॐ खखील्कायस्वाहा ।

प्रियतां प्रियसङ्गदीभव ज्ञाहा ।

इति सम्प्रार्थ्य मरीचं, ततो भुञ्जीत वाग्यतः ।
प्रियसङ्गममाप्नोति तत्क्षणादेव नान्यथा ॥
इतीयं सप्तमी पुण्या प्रियसङ्गमदायिनी ।
यः कुर्यादुत्सवं वीर वियोगं स न गच्छति ॥
पुत्रादिभिर्नरत्रेष्ठ प्रजापतिरभाषत ।
कुरु तस्मान्महा बाहोतामितां प्रियदायिनीं ॥
उपोष्य इन्द्रोविधिवत् पुरा मारिचसप्तमीम् ॥
संयोगं गतवान् वीर सहस्रांश्चाधिपः पुरा ।
रामयन्मानसस्त्रापि इन्द्रवक्त्रा सह्यपि च ।
रामोपि सीतया सार्धं उपोष्यैतां नराधिप ॥

* एतन् विधिना नृप इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

इति भविष्यपुराणोक्तं मरौचसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

सुमन्तुर्वाच ।

तृतीयां सप्तमीं वीर शुणुष्वैकमना नृप ।

निम्बपत्रैः स्नता या तु पापघ्नी* पापनाशिनी ॥

तथार्चनविधिं वान्यं येन पूजयते रविम् ।

देवदेवं गदापाणिं शङ्खचक्रगदाधरम् ॥

तथार्चनविधिं वक्ष्मि मन्त्रोद्धारं निवाध मे ।

सर्वपापहरं पुण्यं सर्वरोगविनाशनम् ॥

ॐ खंखोस्काय नमः । मूलमन्त्रः विट् विव शिरः ।
 श्रीं ज्वल ठठ शिखा । श्रीं सहस्रधात्रे व कवरं । श्रीं सर्वं
 तेजोधिपतये अस्त्राः सहस्रकिरणोज्ज्वलाय ववजघनं श्रीं भूतभक्ष्ये
 भूतभाविन्यै वव भूतवन्धः । श्रीं ज्वल नेत्र ज्वल प्रज्वलत ठठ
 अग्निप्रकारः† । ॐ आदित्याय विद्महे विश्वभावायधीमहि
 तन्नःसूर्यः प्रचोदयात् । गायत्री सक्रलीकरणमिदं । श्रीं धर्मात्मने
 नमः पूर्वतः । यमाय नमः दक्षिणतः । श्रीं कालदण्डनायकाय
 नमः पश्चिमतः‡ । श्रीं रैवताय नमः । श्रीं उत्तरतः ।

श्यामपिङ्गलाय नम ऐशान्यां ॐ दीक्षिताय नम आग्नेय्याम् ।

* रोगनाशिनोति क्वचित् पाठः ।

† ॐ विट् विटि वव शिरः । ॐ उरुशक्ति वव शिखा । ॐ सप्तमीधि-
 पतये वव अस्त्राः । ॐ सहस्रकिरणोज्ज्वलाय वव कवचवन्धः । ॐ धर्मात्मने
 भाविन्यै वव भूतवन्धः । श्रीं ज्वलनेत्र प्रज्वलन वव अग्निप्रकार इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ दण्डनायकाय नमः पश्चिमत इति पाठाकारं ।

ॐ वज्रपाणये नम नैऋत्यां ॥ आदित्याय भूर्भुवःस्वर्नभो
वायव्यां ॐ चन्द्राय चन्द्राधिपतये नमः पूर्वतः । श्रीं अङ्गार-
काय चितिसुताय नमः आग्नेय्यां ।

ॐ वृषाय सोमपुत्राय नमः दक्षिणे । ॐ नमो वागी-
श्वराय सर्वविद्याधिपतये नैऋत्यां । ॐ शुक्राय महर्षये
भृगुसुताय नमः पश्चिमतः । श्रीं शनैश्वराय रविसुताय नमो
वायव्यां । ॐ राहवे नमः उत्तरतः* । केतवेनम ईशान्यां† ।
भगवन्नपरिमितमण्डलमालिन् सकलजगत्पते सप्ताश्ववाहनच-
तुर्भुजपरमसिद्धिपदे विष्णुलिङ्गभावो एङ्गेहि इममर्धं मम शिरसि
गतं गृह्णाण तेजोप्ररूप अनन्तज्वलन ठठः ।

अर्घ्यावाहनमन्त्रः ।

ॐ नमो भगवते आदिधाय सहस्रकिरणाय गच्छ सुखं पुन-
रागमनाय ।

विसर्जनमन्त्रः ।

नृगुण्यत्र विधिं कृत्स्नं प्रवक्ष्याम्यनुपूर्वशः ।
दौर्घ्याद्य विधानञ्च लोकानां हितकाम्यया ॥
आचार्यो विधिवद्भोजन् मन्त्रपूतेन वारिणा ।
प्रोक्ष्य देवस्य पुरतो भूमिं भारतसत्तम ॥
प्राणायामत्रयं कुर्याच्छुद्धार्थं सुसमाहितः ।
हृदयादि तद्याङ्गेषु मन्त्रं‡ विन्यस्य मन्त्रवित् ॥

* पश्चिमत इति पाठान्तरं ।

† श्रीं यमाय नमः इति पाठान्तरं ।

‡ दिशाच्च प्रति शोषणे इति श्चचित् पाठः ।

कुर्यात्सतर्जनीमुद्रां दिशान्तं प्रतिशोधयेत् ।
 पातालभूशोधनञ्च वक्रिप्रकारमेव च* ॥
 शोधनं नभसश्चैव कुर्वीतास्त्रमनुस्मरत् ।
 याम्यःसौम्यस्तथाविष्णुर्ब्रह्मा ईशान अग्नयः ॥
 रुद्रं नैर्ऋतवायव्यः पद्ममेतत् प्रकीर्तितम् ।
 अष्टपत्रं लिखित्यष्टं शुचौ देशे सकर्णिकमणं ॥
 आवाहनं ततो वद्धा मुद्रामावाहयेद्रुचिम् ।
 खल्वीस्कं स्थापयेत् तत्र स्वरूपं लोकभावनम् ॥
 स्थापयेत् स्थापयेच्चैव मन्त्रं मन्त्रजरीरिजम् ।
 पुरतो देवदेवस्य हृदये स्थापयेत् रूपं ॥
 ऐशान्यां शिर संस्थाप्य नैर्ऋत्यां विन्ध्यसेष्टिवम् ।
 पौरन्दर्यां न्यसेत्पद्मेकाग्रस्थितिमात्मनः ॥
 ऐशान्यां स्थापयेत्कीमं पौरदञ्जातिलोहितम् ।
 वायव्याञ्चैव कवचं वारुण्यामस्त्रमेव च ।
 आग्नेय्यां सोमतनयं याम्याञ्चैव हृहस्पतिम् ॥
 नैर्ऋत्यां दानवगुरुं वारुण्यान्तु गनैधरम् ।
 वायव्याञ्च तथा राहुं, कौबेर्यां केतुमेव च ॥
 द्वितीयायान्तु कक्षायां देवतेजःसमुद्भवान् ।
 स्थापयेद्वाद्वाद्यादित्यान् काश्यपेशान् महाबलान् ॥
 भगःसूर्योऽर्यमा चैव मित्रो वै वरुणस्तथा ।
 सविता चैव धाता च विवस्वाश्च महाबलः ॥

* अष्ट पत्रं लिखेत् पद्मं अष्ट पत्रं सकर्णितकर्मणि पाठान्तरं ।

† आग्नेय्यां दिशि देवलोति पाठान्तरं ।

त्वष्टा पूषा तथा चन्द्रो द्वादशो विष्णुरुच्यते ।

पूर्व्वे इन्द्राय, दक्षिणे यमाय. पश्चिमे वरुणाय, उत्तरे
कुबेराय, ऐशान्यामीश्वराय, आग्नेय्यामग्ने, नैर्ऋत्यां नैर्ऋतये,
वायव्यां वायवे नमः ।

अथा च विजया चैव जयन्ती वापराजिता ।
शेषस्य वासुकिश्चैव रेवन्तोऽथ विनायकः ॥
महाश्वेता तथा देवी राज्ञी चैव सुवर्चला ।
तथास्यावपि विख्यातो दण्डनायकपिङ्गलो ॥
पुरस्ताद्भास्करस्त्वैते स्थापनीयौ विजानता ।
विश्विर्बुद्धि, स्मृती देवी तथैवोत्पलमालिनी ।
आप्यास्तु दक्षिणे पार्श्वे लोकपूज्याः समन्ततः ॥
प्रज्ञा तन्त्री क्षुधा ब्राह्मी हारीता तुष्टिरेव च ।
ह्यायापार्श्वे च विज्ञेया इत्येता देवशक्तयः ।
दोषमन्त्रमन्त्रहार वाचःपुष्याणि मन्त्रतः ।
देवान्देवानि देवस्य सानुगस्य च मूर्त्तये ॥
विधिनानेन सततं सर्व्वदा याति भास्करम् ।
सं प्राप्य परमान् कामांस्ततोभानुसमी भवेत् ॥
अनेन विधिना यस्तु पूजयेद्भास्करं नृप ।
रविप्रमादाहृच्छेत्तु परमं स्थानमव्ययम् ॥
पुत्रानवाप्तयान् राजन् दुर्जयत्वं तथा रिपोः ।
अनेन विधिना पूज्य भगवान् भास्करं हरिम् ।
अनेन विधिना पूज्य मन्त्रां भानुमनूदितं ॥
देशात्प्रयत्नपक्ष्या जितक्रोधी जितेन्द्रियः ।

निम्बपत्रं ततोऽश्रीयात् सप्तम्यां मन्त्रतो नृप ॥

निम्बपत्रव भद्रन्ते सुभद्रन्ते स्तु वै सदा ।

ममापि कुर्व भद्रञ्च प्राशनाद्भोगहृद्भाभवेः ॥

इत्युदितो मन्त्रः ।

इत्थं प्राश्य स्वपेङ्गुमी देवस्य पुरतो नृप ॥

अष्टम्यां पूजयेद्भानुं पुनरेव तु पात्रतः ।

ब्राह्मणान् भोजयेत् पद्याच्छक्त्या दत्त्वा च दक्षिणाम् ॥

मुञ्चोत वाग्यतः पद्यान्मधुरास्त्रविवर्जितम् ।

इत्येषा वक्षरं यावत् कर्त्तव्या निम्बसप्तमी ॥

कुर्वाणः सप्तमीं चैव सर्व्वरोगैः प्रमुच्यते ।

सर्व्वरोगविनिर्मुक्तः सूर्य्यलोकाच्च गच्छति ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं निम्बसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

सुमन्तुर्नवाच ।

अथ भाद्रपदे मासि सिते पक्षे महीपते ।

कृत्स्नीपवासं सप्तम्यां विधिवत् पूजयेद्भुवि ॥

माहिष्मरेण विधिना पूजयेदन्न भास्करम् ।

अष्टम्यां तु पुनः प्रातः पूजयित्वा दिवाकरम् ॥

दद्यात् फलानि विप्रेभ्यो मार्त्तण्डः प्रीयतामिति ।

खर्जूरं नारिकेलञ्च मातुलङ्गफलानि च ॥

ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु फलाहारः स्वयं भवेत् ।

पूर्व्वभक्तान् सस्त्राग्र्यं सुसूक्त्यं फलमादरात् ॥

मन्त्रेण भरतस्यै च ततःशेषाणि भक्तयेत् ।

फलं प्राश्य कुलश्रेष्ठ भवेदिन्द्रत्वमेव च ।
 सर्वं भवन्तु सफला मम कामाः समन्ततः ॥
 इत्युक्त्वा भक्षयेत्तानि फलानि कुहनन्दन ।
 आकण्ठं तत् कुहश्रेष्ठ नचान्यत् किञ्चिदेव हि ॥
 फलाहारौभवेदेवमष्टम्यां कुहनन्दनः ।
 इति संवत्सरं यावत् कर्त्तव्या फलमममी ॥
 कृता च या महावाहो पुत्रपौत्रान् प्रयच्छति ।
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं फलसप्तमीव्रतम् ॥

—०००—

सुमन्तुरुवाच ।

शुक्लपक्षे तु वैशाखेण षष्ठीं सम्यगुदीपितः ।
 पूजयेद्गार्ग्यं भक्त्या पुष्पधूपादिलेपनैः ॥
 येन तत् पूजयेद्देवं स विधिः कथ्यते तव ।
 तदा वैश्रवणा येन विधिना पूजयेत्तप ॥

श्रीं प्रज्वतने स्नाहा । श्रीं अग्निप्रकारः । श्रीं नमः सहस्र-
 किरणीज्ज्वालास्नाहा । श्रीं यं वः । श्रीं पृथिव्यै सर्वापधिकृषिर्श्रीं
 स्नाहा । पृथिव्यस्त्वं नमः सकलौकरणमन्तः । आत्मनो देव
 शरीरे वा श्रीं धर्मात्मने नमः पूर्वतः । श्रीं धर्माय नमोद्-
 क्षिणतः । श्रीं देवताय नमः पश्चिमतः । श्रीं सततज्ज्वाला-
 रूपाय नमः । उत्तरतः । श्रीं श्यामभिङ्गलोक्षिताय नमः

+ पूर्वोक्तानि फलानीति क्वचित् पाठः ।

+ चैत्रश्रेष्ठेति क्वचित् पाठः ।

‡ इत्युक्त्वा ममो दक्षिण इति पाठान्तं ।

ऐशान्वां । नीललोहिताय नमः शान्नेय्यां । ईशानेश्वराय
नमीनेर्हृत्वां । वज्रपाणये नमो वायव्यां । श्रीं नमोहरदेहाय
महाबलपराक्रमाय भूर्भुवो जेधिपतये स्वाहा ।

उत्तरशक्तिधराय नमः ।

प्रथमः प्रातः प्रतीहारः । श्रीं हरदेहाय वज्ररूपधराय*
नमः । द्वितीयः प्रतिहारः दक्षिणतः । श्रीं हरिताय नमस्तृतीयः
पश्चिमतः । श्रीं अश्वमुवाय नमः पूर्वतः । द्वारपाल-
चतुष्टयम् । श्रीं कुन्देन्दुबोरप्रभाय स्वाहा । प्रथमेशः ।
श्रीं रक्षाचरकवर्षदीप्ताय नमः । द्वितीयेशः । श्रीं चौरवर्ष-
तेजस्विने नमः । तृतीयेशः । श्रीं भिन्नाञ्जनवर्णाय नमः ।
चतुर्थः । श्रीं तीव्रतेजसे नमः । पञ्चमेशः । व्योमवर्णाय
प्रदीपमालिने† नमः । षष्ठेशः । श्रीं सर्ववर्णाय
सर्वधिपतये नमः । सप्तमः । श्रीं नमो अगगकटाय कवचिने-
कम्बुपुत्राय प्रजापतये नमः । श्रीं अनन्तदेवाय नमः । श्रीं असा-
धारणविक्रमतेजसे नमः ॥

आवाहन मन्त्रः ।

श्रीं भास्कर देवाधिदेव गच्छगच्छ तथा सुखं स्वभवनं पुन-
रागमनाय ॥

विसर्जनमन्त्रः ।

गायत्र्या स्वागमनार्थं पाद्याचमन स्नानातिथ्यकरण मन्त्र-
पुष्पधूपबलिहोमोपहारादिनिवेदनं ।

* वज्ररूपधराय इति कश्चित् पुस्तके पाठः ।

† प्रदीपवर्णाय इति कश्चित्पाठः ।

मुकुलीपद्ममुद्रा च निष्करा च तथा परा ॥

नागाख्या व्योममुद्रा च उग्रा चैव पराः स्मृताः ।

सप्तैतास्तु परा मुद्राः कौटिमुद्रास्तथैव च ।

श्रीं खड्गोल्काय नमः हृदयं । श्रीं त्रिपिष्टपायाय नमः । शिरः ।
श्रीं तेजसे नमः शिखा । आदित्याय तेजोधिपतये नमः कवचम् ।
आदित्याय सहस्रकिरणोच्चलाय नमोऽस्त्रं । तेजोधिपतये नमः
सुखं । श्रीं शेषशाय नमः गुह्यं । श्रीं सहस्रकिरणाय नमः पादौ ।
श्रीं दीप्ताधिपतये नमः पृष्ठम् । श्रीं भास्कराय विद्महे
सहस्ररश्मये* धीमहि तन्नाभानुः प्रचोदयात् ॥

सुमन्तुरुवाच ।

अनेन विधिना पूज्यं घट्यामुपवसेच्छुचिः ।

पुरतः शयनं भानोः सप्तम्यां पूजयेत् पुनः ॥

भोजयेन्नापि विप्रांस्तु दध्ना वा पायसेन वा ।

स्वयत्कथा दक्षिणां दत्त्वा यद्वया तु ब्रजेत् तान् ॥

पयः पीत्वा ततो गव्यं स्थातव्यं कुरुनन्दन ।

सुरभिरसिभद्रन्ते भद्रन्तेस्तु सुखाय वै ॥

तथा समापि भद्रं वै प्राशात् सम्पत्करीभव ।

इत्यभिहितेन मन्त्रेण पयः पानम् ॥

दन्तखाद्यं भवेद्यदि तद्दोदनमिति स्मृतम् ॥

भक्ष्यं चूथं तथा लोहमोदनन्त्रिः प्रकीर्तितम् ।

तेषां वा नोदनं प्राक्तं तस्मात्तत्परिवर्जयेत् ॥

तत् परिवर्जयेदिति तच्छब्देन शोदनः परावृत्तते ।
तस्माद्दोदनमेव वर्जयेत्तु पेयमपि तस्मानोदनत्वात् ॥

प्राशन मन्त्रः ।

इत्येषानोदना नाम सप्तमी भरतर्षभ ।
यामुपोष्य नरो भक्त्या धनधान्यमवाप्नुयात् ॥
सर्व्वपापविनिर्मुक्तः सूर्य्यलोके मञ्जीयते ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तमनोदना सप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

सुमन्तुसुवाच ।

याधि मासि सितेषु च सप्तम्यां कुरुनन्दन ।
निराहारो रविं भक्त्या पूजयेद्द्विधिना नृप ॥
पूर्व्वोक्तेन जपेज्जप्यं देवेषु पुरतः स्थितः ।
शुद्धैकाग्रमना राजन् जितक्रोधी जितेन्द्रियः ॥
वायो वसिष्ठ भद्रन्ते भद्रन्ते स्तु च वै सदा ।
समापि कुर्व्व भद्रं वै प्राशनात् शशुहा भव ।
इत्यभिहितेन मन्त्रेण पीतपवनो निराहार इति

शतानीक सुवाच ।

केन मन्त्रेण जप्तेन दर्शनं भगवान् व्रजेत् ।
स्तौत्रेण वापि सविता तन्मे कथय सुव्रत ॥ १ ॥

सुमन्तुसुवाच ।

स्तुतो नामसहस्रेण यदा भक्तिमता मया ।
तदा मे दर्शनं यातः साक्षाद्देवो दिवाकरः ॥ ४ ॥

शतानीक उवाच ।

नाम्नां सहस्रं सवितुः श्रोतुमिच्छामि तद्विज ।
येन ते दर्शनं यातः साक्षाद्देवो दिवाकरः ॥ ५ ॥

सुमन्तु उवाच ।

सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वं पापप्रणाशनम् ।
स्तोत्रमेतन्महापुण्यं सर्वोपद्रवनाशनम् ॥ ६ ॥
न तदस्ति भयं किञ्चिद्यद्नेन न शाम्यति ।
ज्वराहिसुच्यते राजंस्तोत्रेऽस्मिन् पठिते नरः ॥ ७ ॥
अन्ये च रोगाः शाम्यन्ति पठतः शृण्वतस्तथा ।
सम्पद्यन्ते तथा कामाः सर्वे एव यथेच्छिताः ॥ ८ ॥
य एतदादितःसुत्वा सङ्ग्रामं प्रविशेन्नरः ।
स जित्वा समरे शत्रून्भ्येति गृह्णमन्नतः ॥ ९ ॥
बन्ध्यानां पुत्रजननं भीतानां भयनाशनम् ।
भूतकारिद्रिद्राणां कुष्ठिनां परमौषधम् ॥ १० ॥
बालानां चैव सर्वेषां ग्रहरक्षोनिवारणम् ।
पठेदेतच्च यो राजन् स श्रेयः परमाप्नुयात् ॥ ११ ॥
स सिद्धसर्वसङ्कल्पः सुखमन्यन्तमश्रुते ।
धर्मार्थिभिर्दक्षिणैश्चैव सुखाय च सुखार्थिभिः ॥ १२ ॥
राज्याय राज्यकामैश्च पठितव्यमिदन्नरैः ।
विद्यावहन्तु विप्राणां क्षत्रियाणां जयावहन् ॥ १३ ॥
पञ्चावहं तु वैश्यानां शूद्राणां धर्मवर्धनम् ।
पठतां श्रुन्तानेतद्भवतीति न संशयः ॥ १४ ॥
तच्छृणुष्व नृपश्रेष्ठ प्रयतात्मा ब्रवीमि ते ।

नाम्नां सहस्रं विख्यातं देवदेवस्य भास्करः ॥ १५ ॥
श्रीं विश्वविद्विष्वजितकर्त्ता विश्वात्मा विश्वतोमुखः ।
विश्वेश्वरी विश्वयोनिर्नियतात्मा जितेन्द्रियः ॥ १६ ॥
कालाश्रयः कालकर्त्ता कामहा कालनाशनः ।
महायोगी महाबद्धिमहात्मा सुमहाबलः ॥ १७ ॥
प्रभुर्विभूर्भूतनाथो भूतात्मा भुवनेश्वरः ।
भूतभयभावितात्मा भूतान्तकरणः शिवः ॥ १८ ॥
शरण्यः कमलानन्दो नन्दनो नन्दिवर्द्धनः ।
वरणी वरदो योगी सुसंयुक्तः प्रकाशनः ॥ १९ ॥
प्राप्तयानः परः प्राणः प्रीतात्मा प्रयतः प्रियः ।
सहस्रपात्सुष्ठुसाधुर्दिव्यकुण्डलमण्डितः ॥ २० ॥
अव्यङ्गधारी धीरात्मा सविता वायुवाहनः ।
समाहितमतिर्धाता विधाता कृतमङ्गलः ॥ २१ ॥
कपर्दी कल्पकद्रुद्रः सुमेता धर्मयत्नलः ।
समायुक्तो विद्युक्तात्मा कृतात्मा कृतिनाम्बरः ॥ २२ ॥
अविचिन्त्यवपुःश्रेष्ठो महायोगी महेश्वरः ।
कान्तः कान्धारिरादित्यो नियतात्मा निराकुलः ॥ २३ ॥
कामः कारुणिकः कर्त्ता कमलाकरबोधनः ।
सप्तसप्तिरचिन्त्यात्मा महाकारुणिकोत्तमः ॥ २४ ॥
सञ्जीवनी जीवनाथो जपो जीवो जगत्पतिः ।
अजयो विश्वनिर्लयः संबिभागी वृषध्वजः ॥ २५ ॥
वृषाकपिः कल्पकर्त्ता कल्पान्तकरणो रविः ।
एकचक्ररथो मौनी सुरथो रविनाम्बरः ॥ २६ ॥

अक्षीधनी रश्मिमाली तेजोराजिर्बिर्भावसुः ।
 दिवाकृद्दिनकृद्देवो देवदेवो दिवस्यतिः ॥ २७ ॥
 दिननाथो हृदो ह्योता दिव्यवाहो दिवाकरः ।
 यज्ञो यज्ञपतिः पूषा स्वर्धरेताः परावरः ॥ २८ ॥
 परावरन्नन्दरथिः अंशुमाली मनोहरः ।
 प्राज्ञः प्रज्ञापतिः सूर्यः सविता विष्णुरंशुमान् ॥ २९ ॥
 सदागतिर्गन्धर्वहो विहितोविधिराशुगः ।
 पतङ्गः स्याणुर्विहङ्गो विहङ्गो विहृतोवरः ॥ ३० ॥
 हृद्यंशो हरिताम्रश्च हरिदृशो जगत्प्रियः ।
 अन्तकः सर्वदमनो भावितात्मा भिषग्वरः ॥ ३१ ॥
 आलोकलक्ष्मीकनाथो लोकालोकनमस्कृतः ।
 कालःकल्याणको वञ्छिस्तपनः सन्धतापनः ॥ ३२ ॥
 विरोचनो विरूपाक्षः सहस्राक्षः पुरन्दरः ।
 सहस्ररश्मिर्महिरो विविधास्वरभूषणः ॥ ३३ ॥
 खगः प्रतर्दनो धन्वी ह्यगो वाग्विशारदः ।
 श्रीमानशिशिरो वाग्मी श्रीपतिः श्रीनिकेतनः ॥ ३४ ॥
 श्रीकण्ठः श्रीधरः श्रीमाञ्छीनिवासो वसुप्रदः ।
 कामचारी महामायो महेशो विहिताशयः ॥ ३५ ॥
 तीर्थक्षियावान् सुनयोचितवो भक्तवत्सलः ।
 कौर्त्तिः कौर्त्तिकरो नित्यं कुण्डली कवची रक्षी ॥ ३६ ॥
 द्विरण्यरेताः सप्तारः प्रयतात्मा परन्तपः ।
 बुद्धिमानपरश्रेष्ठो रोचिष्णुः पाकशासनः ॥ ३७ ॥
 समुद्रोष २०० नदीधाता मान्धाता कर्मक्षापहः ।

तमोघ्नो ध्यान्तहा वक्रिहोतान्तकरणो गुहः ॥ ३८ ॥
 पशुमान् प्रयतानन्दो भूतेशः त्रीमेताम्बरः ।
 नित्योदितो नित्यरथः सुरेशः सुरपूजितः ॥ ३९ ॥
 अजितो विजयोजेता जङ्गमः स्वावरात्मकः ।
 जीवानन्दो नित्यगामी विघ्नेता वियदप्रदः ॥ ४० ॥
 पर्जन्योऽम्बिस्त्रिभिः स्त्रियः स्वविरोऽष्टनिरञ्जनः ।
 प्रद्योतनो रवाङ्कुरः सर्व्व लोकप्रकाशकः ॥ ४१ ॥
 ध्रुवोमिधौ महाबोध्यौ हंसः संसारतारकः ।
 सृष्टिकर्त्ता क्रियाहेतुर्भार्त्तच्छो मरुतापतिः ॥ ४२ ॥
 मरुत्वान् दहनस्वष्टा भगीभाण्योऽर्थ्यमा कपिः ।
 वरुणोऽजो जगन्नाथः क्षतक्षत्र्यः सुलोचनः ॥ ४३ ॥
 विद्वत्मान् भानुमान् कार्य्यं कारणं तेजसान्विधिः ।
 भस्मगामी तिम्र्मातिर्ष्वं र्भ्यांशुर्हीतदीधितिः ॥ ४४ ॥
 सहस्रदीधितिर्ब्रह्मः सहस्रांशुर्दिवाकरः ।
 गभस्तिमान् दीधितिमान् स्रधिमानमलद्युतिः ॥ ४५ ॥
 भास्करः सुरकार्य्यज्ञः सख्य प्रस्रीस्वदीधितिः ।
 सुरण्येष्ठः सुरपतिर्वहुघ्नो वचसान्वतिः ॥ ४६ ॥
 तेजोनिधिर्ष्वं हस्तेजा हृत्कीर्त्तित्वं हस्यतिः ।
 अहिमानूर्जितोधीमानामुक्तः कीर्त्तिवर्धनः ॥ ४७ ॥
 महावैद्यो गणपतिर्गणेशो गणनायकः ।
 तीव्रः प्रतापनः स्तापी तापनो ३०० विघ्नतापनः ॥ ४८ ॥
 कार्तं स्वरो ह्रषीकेशः पद्मानन्दोभिनन्दितः ।
 पद्मनाभोऽष्टतहरः स्वितिमान् केतुमात्रभः ॥ ४९ ॥

अनाद्यन्तोच्युतोविश्वो विश्वामित्रो वृषीविराट् ।
 आमुत्रकवचो वाग्मीकशुको विश्वभावनः ॥ ५० ॥
 अनिमित्तमतिःश्रेष्ठः शरण्यः सर्व्वीतोमुखः ।
 विगाह्वी रेणुरसहः समायुक्तः समाक्रतुः ॥ ५१ ॥
 धर्म्यकेतुर्धर्मरतिः संहर्त्ता संयमी यमः ।
 प्रणतार्त्तिहरोऽभियः सिद्धकार्य्यो जपेश्वरः ॥ ५२ ॥
 नभोविगाहतः सत्योऽमितात्मासुमनोहरः ।
 हारी हरिर्हयो वायुऋतुः कालानलद्युतिः ॥ ५३ ॥
 सुखसेव्यो महतेजा जगतामन्त्रकारणम् ।
 महेंद्रो निष्ठुतःस्तीर्णस्तुतिहेतुः प्रभाकरः ॥ ५४ ॥
 सहस्रकरषायुष्मानरोगः सुखदःसुखी ।
 व्याधिहा सुमुखः सौख्यं कल्याणं कल्पनाम्बरः ॥ ५५ ॥
 आरोग्यकरणं सिद्धिर्ष्वृद्धिर्द्विरहस्पतिः ।
 द्विरण्यरेताथारोग्यं विश्वान् बुधो बुधो महान् ॥ ५६ ॥
 प्रणमान् धृतिमान् धर्माधर्म्यकर्त्ता शशिप्रदः ।
 सर्व्वप्रियः सर्व्वसहः सर्व्वशत्रुनिवारणः ॥ ५७ ॥
 अशुर्व्वद्योतनोद्योतः सहस्रकिरणः क्षती ।
 केयूरी भूषणीक्लासी भासिता भासनाऽनलः ॥ ५८ ॥
 शरण्यार्त्तिहरोऽज्ञेता खद्योतः खगसत्तमः ४०० ।
 सर्व्वद्योतमवद्योतः सर्व्वद्युतिहरोऽमतः ॥ ५९ ॥
 कल्याणः कल्याणकरः कल्पः कल्पकरः कविः ।
 कल्याणक्षतकल्पवपुः सर्व्वकल्याणभाजनं ॥ ६० ॥
 शान्तिक्रियः प्रसन्नात्मा प्रशान्त उत्तमप्रियः ।

उदारकर्मा सुनयः सुवर्चा वृषलोचनः ॥ ६१ ॥
 वर्चस्वीवर्चसामीश स्त्रीलोक्येशो वशानुगः ।
 तेजस्वी सुयशावर्ची वर्णाध्यक्षो बलिप्रियः ॥ ६२ ॥
 यशस्वी वेदनिलयस्तेजस्वी प्रकृतिः स्थितिः ।
 आकाशगः शीघ्रगतिराशुगो गतिमान् खरः ॥ ६३ ॥
 गोपतिर्षहदस्त्रेशो गोमानेकः प्रभञ्जनः ।
 जनिताप्रजनञ्जीवो दीपः सर्वप्रकाशनः ॥ ६४ ॥
 कर्मसाक्षी योगनित्यो नभस्वान् त्रिपुरान्तकः ।
 रक्षोघ्नो विघ्नगमनः किरीटी प्रगमप्रियः ॥ ६५ ॥
 मरीचिमाक्षौ सुमतिः कृती नित्यो विशेषकः ।
 शिष्टाचारः शुभाचारः स्वाचाराचारतत्परः ॥ ६६ ॥
 मन्दारो मातुरो दण्डः क्षुधापः पाक्षिको गुरुः ।
 अवशिष्टो विशिष्टात्माविधेयो ज्ञानशीभनः ॥ ६७ ॥
 महाश्वेतप्रियोऽन्नयः सामगो मोक्षदायकः ।
 सर्व वेदप्रणीतात्मा सर्व वेदालयोऽलयः ॥ ६८ ॥
 वेदमूर्त्तिश्चतुर्वेदो वेदभृद्देदारगः ।
 क्रियावानसितोजिष्णुर्वरीयांश्च वरप्रदः ॥ ६९ ॥
 व्रतचारी व्रतधरो लोकबन्धुरलङ्कृतः ।
 अलहारोऽक्षरो विद्वान् विद्यावान् विद्विताशयः ॥ ७० ॥
 आकारो भूषणो भूषो भूष्णुर्भवनपूजितः ।
 चक्रपाणिवज्रधरः सुरेशो लोकवत्सलः ॥ ७१ ॥
 राज्ञां पतिर्महाबाहुः प्रकृतिर्व्यैकृतिर्मुणः ।
 अन्धकारापहः श्रेष्ठो युगावर्त्ती युगादिज्ञात् ॥ ७२ ॥

अप्रमेयः सदायोनिर्द्विरहृद्द्वारईश्वरः ।
 शुभप्रभः शुभः शोभा शुभकर्माशुभप्रदः ॥ ७३ ॥
 सत्यक् च स्तुतिमानुच्चैर्नकरो वृद्धिदोऽनलः ।
 बलभृद्वलदे।बन्धुर्भृहिमान् बलिनावरः ॥ ७४ ॥
 अनङ्गोनागराङ्गिन्द्रः पद्मयोनिर्गणेश्वरः ।
 सम्बत्सर ऋतुर्नेताकालवक्त्रप्रवर्त्तकः ॥ ७५ ॥
 पद्मेक्षणः पद्मयोनिः प्रभावानमरप्रभुः ।
 सुमूर्तिः सुमतिः शोभो गोविन्दो जगदादिजः ॥ ७६ ॥
 पीतवासाः कृष्णवासादिस्वासातीन्द्रियो हरिः ।
 अतीन्द्रोऽनेकरूपात्मा स्कन्दः परपुरञ्जयः ॥ ७७ ॥
 शक्तिमाञ्छू लभृग्वाली* मोक्षहेतुरयोनिजः ।
 सर्व्व वर्षीजितादर्शीदुःखहाशुभनाशनः ॥ ७८ ॥
 माङ्गल्यकर्त्ता तरणिवर्गवान् कुमलापहः ।
 स्पष्टाक्षरो महामन्त्रो विशाखो यजनप्रियः ॥ ७९ ॥
 विश्वकर्मा महाशक्तिर्घोतिरीशो विहङ्गमः ।
 विचक्षणो दक्ष इन्द्रः प्रत्यूहः प्रियदर्शनः ॥ ८० ॥
 अखिन्धो वेदनिलयो वेदविहिदिताशयः ।
 प्रभाकरो जितरिपुः सजनोऽरुणसारथिः ॥ ६०० ॥ ८१ ॥
 कुवेरः सुरथः स्कन्दो महितो भिमतो गुरुः ।
 ग्रहराजो ग्रहपतिर्ग्रहनक्षत्रमण्डलः ॥ ८२ ॥
 भास्करः सततानन्दो नन्दनो नरवाहनः ।
 मङ्गलोखो मङ्गलवान् मङ्गल्यो मङ्गलावहः ॥ ८३ ॥

* नोक्षरति पुस्तकान्तरे पाठः ।

मङ्गलं चारुचरितः सर्व्वसर्व्वव्रतीव्रती ।
 चतुर्मुखः पद्ममाली पूतात्मा प्रणतार्त्तिहा ॥ ८४ ॥
 अकिञ्चनः सत्यसन्धी निगुणो गुणवान् शुचिः ।
 संपूर्णः पुण्डरीकाक्षो विधेयो गततत्परः ॥ ८५ ॥
 सहस्रांशुः क्रतुपतिः सर्व्वस्त्रं सुमतिः सुवाक् ।
 सुवाह्नो माख्यदामा कृताहरो हरिप्रियः ॥ ८६ ॥
 ब्रह्मा प्रचेताः कथिताः प्रतीतात्मा स्थितात्मकः ।
 शतविन्दुः शतमुखो गरीयाननलप्रभः ॥ ८७ ॥
 धीरो मङ्गलरो विस्रः पुरुषः पुरुषोत्तमः ।
 विद्याराजो धिराजो द्विविद्यावान् भूतिदः स्थितः ॥ ८८ ॥
 अनिर्देश्यवपुः श्रीमान् विपासा बहुमङ्गलः ।
 सुस्थितः सुरथः स्वर्णो भोक्ता धारनिकेतनः ॥ ८९ ॥
 निर्द्वन्द्वो द्वन्द्वहा सर्गः सर्गगः सम्प्रकाशकः ।
 दयालुः सूक्ष्मधा क्षात्रिः क्षेमाक्षेमस्थितिप्रियः ॥ ९० ॥
 भूधरो भूपतिर्व्वक्त्रा पवित्रात्मा त्रिलोचनः ।
 महावराहः प्रियकृत् धाता भोक्ता भयप्रदः ॥ ९१ ॥
 चतुर्व्वेदधरोऽचिन्त्यो विनिद्रो विविधासनः ।
 चक्रवर्त्ती धृतिकरः संपूर्णोऽद्य महेश्वरः ॥ ९२ ॥
 विचित्ररथ एकाकीश्वरः सुप्तिः परावरः ।
 सर्व्वोदधिस्थितिकरः स्थितिस्थेयः स्थितिप्रियः ॥ ९३ ॥
 निष्कलः पुष्कलमुखो वसुमान् वासवप्रियः ।
 पशुमान् वासरस्वामी वसुधाता वसुप्रदः ॥ ९४ ॥
 बलवान् ज्ञानवान् तस्वभोक्ता रक्षिषु संस्थितः ।

संकल्पयोनिर्दिनकृत् भगवान् कारणावहः ॥ ८५ ॥
 नीलकण्ठी धनाध्यक्षस्तुर्वेदप्रियञ्जहः ।
 वषट्कारो व्रतं हीता स्नाहाकारोद्भुतावृत्तिः ॥ ८६ ॥
 जनार्दनो जनानन्दो नरो नारायणो बुधः ।
 सन्देहक्षेपणो वायुरापः सुरनमस्कृतः ॥ ८७ ॥
 विग्रही विमलो विन्दुर्विशोको विमलद्युतिः ।
 द्योतिती द्योतिनी विद्युद्विद्युद्दिवारदो बली ॥ ८८ ॥
 घर्मदोहिमदोहीमः कृष्णवर्णा सभाजितः ।
 सावित्रीभाजितो राजा विरुती विष्टुणी विराट् ॥ ८९ ॥
 सप्तार्चिः सप्ततुरगः सप्तलोकनमस्कृतः ।
 संपन्नोर्थी जगन्नाथः सुमनाः शोभनप्रियः ॥ ९० ॥
 सर्वाङ्गा सर्वव्यष्टिः स्यान् सप्रिमान् सप्तमीप्रियः ।
 प्रमेधा मेधिक्रोमेधोमेधावी मधुसूदनः ॥ १ ॥
 अङ्किरागतिकालज्ञो धूमकेतुः सुकेतनः ।
 सुखीसुखप्रदः सौख्यं कार्त्तिकीतिप्रियीसुनिः ॥ २ ॥
 सन्तापनः सन्तपनः प्रातपस्तपसां निधिः ।
 उन्नपतिः सहस्राक्षः प्रियकारी प्रियङ्करः ॥ ३ ॥
 प्रीतिर्विद्यत्पवारणोऽद्योः खजगज्जगतां पतिः ।
 जगत्पिता प्रीतमनाः सर्वसर्वाङ्गुहोऽनलः ॥ ४ ॥
 सर्वङ्गोजगदानन्दो जगन्नेता सुरारिहा ।
 त्रेयः त्रेयस्करो ज्वाशानुत्तमीत्तमत्तमः ॥ ५ ॥
 उत्तमीत्तमयोऽत्र धारणो धरणीधरः ।

● त्रीतिर्विद्यत्पवारणो इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

धाराधरो धर्मराजो धर्माधर्मप्रवर्तकः ॥ ६ ॥
 रथाध्यक्षोपशुपतिस्वरमानोमनोनलः ।
 उत्तरोत्तुत्तरस्तापी तासापतिरपांपतिः ॥ ७ ॥
 पुण्यसंकीर्त्तनः पुण्योद्देशितुर्लोकत्रयाश्रयः ।
 स्वर्भानुर्षिगतारिष्टोविशिष्टोत्कृष्टकर्मज्ञात् ॥ ८ ॥
 व्याधिप्रणाशनः क्षेमः सुरः सर्वजितोत्तरः ।
 एकनाथोरथाधीशः शनैश्चरपिता सितः ॥ ९ ॥
 वैवस्वतो गुहर्भृत्युर्धर्मनित्यो महाव्रतः ।
 प्रलम्बहारः सञ्चारो प्रद्योतोद्योतितानलः ॥ १० ॥
 शताक्षरपरोमन्त्रोमन्त्रमूर्त्तिर्महाबलः ।
 तुष्टात्मा सुप्रियः शशुर्भक्ततामीश्वरेश्वरः ॥ ११ ॥
 संसारगतविच्छेत्ता संसारार्णवतारकः ।
 सप्तजिह्वः सप्तस्राग्धिर्नीलगर्भोऽपराजितः ॥ १२ ॥
 धर्मकेतुरमेयात्मा धर्माधर्मफलप्रदः ।
 लोकसाक्षी लोकगुरुर्लोकेशः शब्दवाहनः ॥ १३ ॥
 धर्मयूपोधर्महृत्क्षो धनुष्याण्डधनुर्धरः ।
 पिनाकघृष्टहेतुसाक्षोनेकमायो महाशनः ॥ १४ ॥
 वीरःशक्तिमतां श्रेष्ठः सर्वशास्त्रधृताम्बरः ।
 ज्ञानगम्योदुराराध्या लोहिताङ्गीरिर्मर्दनः ॥ १५ ॥
 सुखलकीधर्मदेनित्यो धर्मज्ञश्च विविक्तमः ।
 भगवान् स्वामीरेवन्तोषचरोनीललोहितः ॥ १६ ॥
 एकोऽनेकस्त्रयीव्यासः सविता समितिज्ञयः ।
 शार्ङ्गधन्वाऽनलोभीमः सर्वप्रहरणायुधः ॥ १७ ॥

अर्हमः परमेष्ठी च नाकपाली दिविस्थितः ।
 बहान्धोवासुकिर्वैद्यः प्राचेयोऽस्यपदान्तमः ॥ १८ ॥
 ह्यापरः परमेदारः परमेऽन्नप्रवर्षवान् ।
 सदीप्यवेशीमुक्तुरीपद्महस्तोहिर्माशुभृत् ॥ १९ ॥
 शीतः प्रसन्नवदनः पद्मोदरनिभाननः ।
 सायं दिवादित्यवपुरनिर्देश्यो महारथः ॥ २० ॥
 महारथो महानीशः शेषः सत्वरजस्तमः ।
 धृतातपत्रप्रतिभाविमर्षीनिर्णयस्थितः ॥ २१ ॥
 अहिंसकः शुद्धमतिरहितीयोऽरिमर्दनः ।
 सर्वदोधनदोमोक्षोविहारोबहुदायकः ॥ २२ ॥
 दारुणार्त्तिहरोनाथो भगवान् सर्व्वगोऽव्ययः ।
 मनोहरवपुः शुभ्रः शोभनः सुप्रभावनः ॥ २३ ॥
 सुप्रभः सुप्रभाकारः सुनेत्रोनिष्ठभापतिः ।
 राज्ञा प्रियः शब्दकारोयज्ञेशस्तिमिरापहः ॥
 सैहिकेयुरिपुर्देवोवरदोवरनायकः ।
 चतुर्भुजो महायोगी योगीशोऽन्नपतिस्तथा ॥ १००० ॥
 एतत्ते सर्व्वमाख्यातं यन्मां त्वं परिपृच्छसि ।
 नास्तीं सहस्रं सवित्तुः पाराशर्यो यदाह मे ॥ २४ ॥
 धन्यं यशस्यमायुष्यं दुष्टदुःस्त्रप्रनाशनम् ।
 बन्धुभोजककरं चैव भानोर्नामानुकीर्त्तनम् ॥ २७ ॥
 यस्त्विदं शृणुयान्निव्यं पठेद्वा प्रयतोऽनरः ।
 अक्षयस्त्रगमन्नाथं भवित्तस्योपसाधितम् ॥ २८ ॥
 कुराजितस्तारभयं व्याधिभ्यो न भयं भवेत् ।

विजयी विभवेचित्वां त्रे यद्य समवाप्नुयात् ॥ ८२ ॥
 कीर्त्तिमान् सुभगोविहान् सुसुखी प्रियदर्शनः ।
 भवेदर्षयतायुध सर्व्ववाधाविवर्जितः ॥ २० ॥
 नास्त्रां सहस्रमिदमंशुमतः पठेद्यः
 प्रातःशुचिर्नियमवान् सुसमाधियुक्तः ।
 दूरेण तं परिहरन्ति स दैव रोगाः
 भीताः सुपर्णमिव सर्व्वमहोरगोन्द्राः ॥ २१ ॥
 इत्थं राजन् जपेद्वाचो यावन्निद्रावशङ्कतः ।
 जपेत् भक्त्या पुनर्व्वीर आदित्यादिसुखस्थितः ॥
 पूजयित्वा यथादित्यमर्षयित्वा द्विजोत्तमम् ।
 शुष्नीत वाग्यतः पञ्चादमांसं सुसमाहितः ॥
 विप्रेभ्यो दक्षिणां दत्त्वा यथाशक्त्या नराधिपः ।
 एवं संवत्सरं यावत् कुर्याद्द्विजयसप्तमीम् ॥
 स जयेदखिलाच्छत्रून् सूर्य्यलोकं स गच्छति ॥
 इति भविष्योक्तपुराणोक्तं विजयसप्तमीव्रतम् ।

—०४०—

युधिष्ठिर उवाच ।

सप्तमी जयदा नाम कश्चिद्काले विधीयते ।
 किंफला नियमः कश्चिद्देवकिनन्दन ॥

ह्युवाच ।

शुक्लपक्षे तु सप्तम्यां यदादित्यदिनं भवेत् ।
 सप्तमी विजया नाम तत्र दत्तं महाफलम् ॥
 ज्ञानं दानं जपो ह्येव उपवासस्तथैव च ।

सख्यदा* जयसप्तम्यां मन्त्रापातकनाशनम् ॥
 प्रदक्षिणं यः कुरुते फलैः पुष्यैर्द्वाकरम् ।
 स सख्यं गुणसम्पन्नं पुत्रं प्राप्नोत्यसंशयम् ॥
 प्रथमा नालिकेरैस्तु द्वितीया बीजपूरकैः ।
 तृतीया रक्तनारङ्गैश्चतुर्थी कदलीफलैः ॥
 पञ्चमी षट्जुकुशाण्डैः षष्ठी पक्षैश्चतेन्दुकैः ।
 हस्ताकैः सप्तमीश्रेया शतेनाष्टोत्तरेण तु ॥
 मौक्तिकैः पद्मरागैस्तु तिलैः कर्कटकैस्तथा ।
 गोमिदैर्वज्रवेदर्यैः शतेनाष्टाधिकेन तु ॥
 ईङ्गुदैर्बदरैर्विल्वैः करमहैः सवर्भटैः ।
 आम्बातकैश्च जम्बीरैर्जम्बू कर्कटिकैः फलैः ॥
 पुष्येण धूपैः फलैः पत्रैर्मोदकैश्चतुर्पाचितैः ॥
 एभिर्विजयसप्तम्यां भानोः कुर्यात्प्रदक्षिणम् ।
 अन्यैः फलैश्च कालोत्थैरखण्डैर्धन्यववर्जितैः ।
 रवेः प्रदक्षिणं देयं फलेन फलमादिशेत् ॥
 न विशेषत्रच संजल्पेत् न स्पृशेत्किञ्चिदेव हि ।
 एकचित्ततया भानुश्चिन्तितोतिप्रयच्छति ॥
 वसोर्धारा प्रदातव्या भानोर्गव्येन सर्पिषा ।
 चन्द्रातपत्रं बध्नीयात् ध्वजं किङ्किणिकायुतम् ॥
 कुङ्कुमैर्न ममायुक्तं पुष्यैर्वस्त्रैश्च वेष्टयेत् ॥

* सख्यं विजयप सप्तम्यां तिति पुष्यकाले पाठः ।

† पूनीखण्डे रिति पुष्यकाले पाठः ।

‡ पूष्येति पाठान्तरं ।

शुचिर्निवेश्य नेवेश्यं ततोदेवं चमापयेत् ॥
 भानी भास्करमार्त्तण्ड चण्डरश्मे दिवाकर ।
 आयुरारोग्यमैश्वर्यं पुत्रान् देहि नमोस्तु ते ॥
 उपवासेन नत्तेन भक्तकायाचितेन च ।
 नेया नियमयुक्ते न राजन् विजयसप्तमी ।
 रोगी प्रमुच्यते रोगात् हरिद्रः श्वियमाप्नुयात् ॥
 अपुत्रो लभते पुत्रान् विद्यार्थी पूज्यते सभां ।
 युक्तपक्षे यदा पार्थ साहित्या सप्तमी भवेत् ॥
 तदानत्तेन सुहाय्यी चपयेत्सप्तसप्तमीम् ।
 भूमौ पलाशपत्रेषु ज्ञात्वाङ्गुत्वा यथाविधि ॥
 समाप्ते तु व्रतं दद्यात्सुवर्णं सुहृन्मिश्रितम् ।
 सुहृन्भोग्याय सूर्याय कवकायाद्यवा नृप ॥
 सप्तमीः सप्तसंयुक्ता आदित्येन तु योनरः ।
 षष्ठ्यरेषु मन्त्रेषु सर्वं कार्याणि कारयेत् ॥
 होमार्चनं प्राशनानि श्रुतेनाष्टोत्तरेषु च ।
 होमः सान्ध्यातिलः कार्यः प्राशनं चन्दनोदकम् ॥
 पूजां तत्कालसंभृतैः सुपुत्र्यैः करवीरकैः ।
 एवं पूर्णं व्रते पश्चात् सुवर्णेन घटाधितम् ॥
 स्वयङ्गुत्वा भास्करं पार्थ रुक्मपात्रमुपस्थितम् ।
 आदित्यरूपमिच्छांषन्तु निन्दुभार्कसप्तमीव्रतोक्तं वेदितव्यं ।
 कषायवाससा युक्तां गाञ्च दद्यात् सदक्षिणाम् ।
 मन्त्रे चानेन विप्राय वाचकाय गुणान्विते ॥
 भास्करेण नमस्तुभ्यं यमस्त्वार नमोस्तु ते ।

श्रेयस्कार प्रसीद त्वं वाञ्छितं देहि मे विभी ॥
 दानान्यत्र प्रदेयानि वृद्धानि शयनानि च ।
 अन्नान्नद्वया पार्थ श्राद्धार्थं प्रीतिमिच्छता ॥
 यात्रा प्रशंस्या यातॄणां राज्ञां विजयमिच्छतां ।
 विजयो जायतेवश्यं गतानाम् तु मृणाम्नादा ॥
 अतोऽर्थं विभ्रुता पार्थ लोके विजयसप्तमी ।
 एवमेषा तिथिः सद्यः सर्वकामफलप्रदा ॥
 इह वामूत्रफलदा सूर्यलोकप्रदायिनी ।
 तदनुष्ठानतो* विद्वान्दीर्घायुर्नीरुजः सुखी ॥
 इहागत्य भवेद्राजा हस्तस्त्ररथसंकुलः ।
 नारी वा कुरुते या तु सापि तत्फलभागिनी ॥
 नित्यं महीतलजयप्रतिपादयिषी
 या सप्तमी सुनिवरैः प्रवरा[†] तिथीनाम् ।
 सा भानुपादकमलार्चनचिन्तकानां
 पुंसां सदेव विजया विजयं ददाति ॥
 इति श्रीभविष्योत्तरोक्तं विजयसप्तमीव्रतम् ।

—000—

श्रीकृष्ण उवाच ।

अथान्यन्ते प्रवक्ष्यामि सप्तमीकल्पसुप्तमम् ।
 माघमासात् समारभ्य शुक्लपक्षे युधिष्ठिर ॥
 सप्तम्यां ज्ञातसङ्कल्पो वर्षमेकां व्रतीभवेत् ।

* दामा रोगोद्धृष्टिर्द्वानिति पाठान्तरं ।

† या अग्नये इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

वरुणं माघमासे तु भातुं संपूज्य कारयेत् ॥
 ब्रह्मकूर्चविधानेन यथा शक्त्या नृपोत्तम ।
 अष्टम्यां भोजयेद्विप्रान् तिलपिष्टगुहोदनैः ॥
 अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य फलं क्रात्स्न्यसवाप्यते ।
 तपनः* फाल्गुने मासि सूर्यमित्यभिपूजयेत् ॥
 वाजपेयस्य यज्ञस्य† फलं प्राप्नोति दुर्लभम् ।
 सप्तम्यां चैत्रमासे तु वेदांश्चरिति पूजयेत् ॥
 उक्थाध्वरसमं पुण्यं नरः प्राप्नोत्यसंशयम् ।
 वैशाखस्य तु सप्तम्यां धाताइत्यभिपूजयेत् ॥
 पशुबन्धाध्वरं पुण्यं सम्यक् प्राप्नोति मानवः ।
 सप्तम्यां ज्येष्ठमासस्य इन्द्रमित्यभिपूजयेत् ॥
 अश्वमेधफलावाप्तिर्जायते नात्र संशयः ।
 तथाषाढस्य सप्तम्यां पूजयित्वा दिवाकरम् ॥
 बहुस्वर्णस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति पुष्कलम् ।
 श्रावणे मासि सप्तम्यामातपानां प्रपूजयेत् ॥
 सौचामणिकलं पार्थ नरः प्राप्नोति भक्तितः ।
 रविं भाद्रपदे मासि सप्तम्यामर्चयेच्छुचिः ॥
 तुलापुरुषदानस्य गुह्यं न फलमाप्नुयात् ॥
 अश्वयुक्शुक्लसप्तम्यां सवितारं प्रपूजयेत् ॥
 गौसहस्रप्रदानस्य फलमाप्नोति भक्तितः ।

* भद्रकालेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† यथोक्तं सभते पक्ष इति पाठान्तरं ।

‡ फलत्यागी भवेन्नर इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

कार्तिके शुक्लसप्तम्यां सप्ताश्विनी नाम पूजयेत् ॥
 योभ्यर्चयति पुण्यात्मा पीण्डरीकफलं लभेत् ।
 मार्गशीर्षे तथा भानुं पूजयित्वा विधानतः ॥
 राजसूयस्य यज्ञस्य फलमाप्नोति वै नरः ।
 भास्करं पुष्यमासे तु पूजयित्वा विधानतः ॥
 चतुर्णामपि वेदानां स्नाध्यायस्य फलं लभेत् ।
 तथैव कृष्णसप्तम्यां नामपूजादिकान्तु यः ॥
 सोपवासः प्रयत्नेन वर्षभिकं समाचरेत् ।
 पारिते नियमे पार्थं सूर्य्यशगं समारभेत् ॥
 शुद्धभूमौ समि* दशै रक्तचन्दनलेपिते ।
 एकहस्तं द्विहस्तं वा चतुर्हस्तमथापि वा ॥
 सिन्दूरेणातिरागेण सूर्य्यमण्डलमालिखेत् ।
 रक्तपुष्पैश्च पद्मैश्च धूपैः कुन्दुकादिभिः ॥
 सम्पूज्य दद्यात्कैवेद्यां विचित्रं हृतपाचितम् ।
 पूरतः स्थापयेत् कुम्भान् जलपूर्णान् सदक्षिणान् ।
 द्वादशाब्जं नृपञ्चे षट् रक्तवर्णान् सुचर्चितान् ॥
 अग्निकार्यं ततः कार्यं सम्यक्कृतपुताशनः ।
 आकृष्टो नेति मन्त्रेण समिन्निष्कार्कहृत्तजैः ॥
 तिलैराज्यमुक्तैः पेतैर्दद्याद्दृष्टशताहुतीः ।
 दक्षिणा च ततो देया ब्राह्मणेभ्यः पृथक् पृथक् ।

¶ मानव इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

* इमेदेह इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

देयानि रक्तयासांसि ग्रानां द्विजहादक्षणां ।
 हादशात्र प्रग्रंसन्ति गावो वस्त्रविभूषिताः ॥
 छत्रोपानख्यगञ्जैर्वनेकैकाय प्रदापयेत् ।
 विसृष्टीनेन शक्नोति दानं हादशधेनुकम् ॥
 एकाह्मपि सुशीला च रक्तवर्णा पर्याखनी ।
 उपदेष्ट्रे प्रदातव्या विसृष्टाठगमकुर्वतः ॥
 ततोविसृज्य तान् विप्रान् स्वयं भुञ्जीत वाग्वतः ।
 य एवं कुरुते पार्थ सप्तमीव्रतमादरात् ।
 निरुजो रूपवान् वाग्मी दीर्घायुश्चैव जायते ॥
 विमुक्तो दीर्घरोगैश्च शस्तः कुशादिना तु यः ।
 तेन कार्यं प्रयत्नेन व्रतमेतद्गुणोपकम् ॥
 नेहास्ति* भास्करादन्यदौषधं रोगहानिदम् ।
 भास्करैकगतिर्यस्तु सर्व्वभूतहिते रतः ॥
 तस्य सन्दर्शनस्यर्शाद्भोगहानिः प्रजायते ।
 कथं वा सूर्य्यभक्तानां रोगदौर्गत्यसम्भवः ॥
 जायते भरतश्चेत् प्रत्यक्षे परमेष्ठिनि ।
 सप्तम्यां प्रतिमासन्तु जन्मव्रतचरे हि यः ॥
 उपवासीरवेर्भक्तः सर्व्वभूतहिते रतः ।
 षष्टम्यां विप्रसहितो हविष्यं भोजयेत्तरः ॥
 एकादशसमा यस्य दिव्यरूपः च सप्तमी ।
 सूर्य्यस्य मण्डलं भिक्षा याति ब्रह्मसनातनम् ॥
 व्रतमेतन्महाराज सर्व्वार्थभविनाशनम् ।

† नकिञ्चि भास्करादन्य दौषधं रोगचानिक मिति पाठान्तरं ।

सर्वदुष्प्रोपशमनं शरीरारोग्यदायकम् ॥

सूर्यलोकप्रदक्षान्ते प्राचेदं नारदोमुनिः ।

ये सप्तमीसुपवसन्ति सितासिताश्च

नामाश्चरैरमितदीधितिमर्षयन्ति ।

ते सर्वरोगरहिता सुखिनः सदैते

भूत्वा रवेरनुचरा सुखिरं वसन्ति ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तां द्वादशसप्तमीव्रतम् ।

—000—

सुमन्तुववाच ।

यः क्षिपेन्नोमयाहारः शुक्लाः द्वादशसप्तमीः ।

राजेन्द्र याचकाहारः* शीर्षपर्णाशनेऽपि वा ॥

चीराशीवैकभक्तौवा भिक्षाहारोऽथवा पुनः ।

जलाहारोऽथवा भूत्वा पूजयित्वादिवाकरम् ।

पुष्पोपहारैर्निविधैः पद्मसौगन्धिकोत्पलैः ॥

नानाप्रकारैर्गन्धैस्तु धूपैर्गुग्गुलचन्दनैः ।

शर्करापयसाद्यैश्चविचित्रैश्च विभूषणैः† ॥

अर्चयित्वा नरञ्चैश्च हिरण्मन्त्रादिभिर्नरः ।

यद्योक्तफलमाप्नोति क्ततुभिर्भूरिदक्षिणैः ॥

तद्वच्च प्राप्यते बीर सप्तम्यां केवलं रवेः ।

विमानवरमाकूठः सूर्यलोके महीयते ॥

* याचकाहार इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† क्लृप्ता शर्करं इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ततः पुष्यकृत्तराजन् कुले महति जायते ।
 एवं भक्त्या विवस्वन्तं प्रतिमासं समाहितः ॥
 पूजयेद्विधिवद्भक्त्या नामान्येतानि कौर्त्तयेत् ।
 मधो मासे विष्णुरिति माधवेचार्यमेति च ॥
 शुक्ले विवस्वान् मासे च शुषी मासे दिवाकरः ।
 पर्जन्यः श्रावणे मासि नभस्ये तरणिस्तथा ॥
 मित्रश्रावणयुजे मासि कौर्त्तनीयोदिवाकरः ।
 मार्त्तं ऋते रविर्ज्ञेयः कार्तिके काञ्चनप्रभः ॥
 मार्गशीर्षे रविः प्रोक्तः सर्वपापघनाशनः ।
 पुष्यमासे* च पूषेति विज्ञेयः काञ्चनप्रभः ॥
 मासे भगव विज्ञेयः त्वष्टा वैवाय फाल्गुने ।
 एवं क्रमेण नामानि कौर्त्तयेत् प्रीतये रवेः ॥
 धूपार्चनं विधानन्तु सप्तम्यान्तु विधानतः ।
 बः करोति नरोभक्त्या स याति परमां गतिं ।
 तेजसा हरिसङ्काशः प्रभयारविसन्निभः ॥
 एतत्ते सर्वमाख्यातं शृणुतत् पापनाशनम् ।
 न वदेच्च श्लिष्याय नाभक्त्याय कदाचन ॥
 न च पापकृते देयं नातप्ततपसे पि च ।
 न कृष्ये नास्तिके वीर न देयं क्रूरकर्षणे ॥

* पुषा यौवे तत्प्रासाचे तुजनीवः प्रवक्षणा इति पुष्यकान्तरे पाठः ।

इति श्रीभविष्यपुराणोक्तगोमयादिसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

सुमन्तुवाच ।

उदकप्रभृतिं पीत्वा क्रियते या तु सप्तमी ।

सा ज्ञेया सुखदा वीर सदैवोदकसप्तमी ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तमुदकसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

या काचित् सप्तमी प्रोक्ता ततोवक्ष्यामि शोभनम् ।

वराटिकाचयन्नीतं यत् किञ्चित् प्रागयेन्नरः ।

अनेन देही मूल्येन यत्नत्वं तच्च भक्षयेत् ।

अभक्ष्यं वापि भक्ष्यं वा नात्र कार्या विचारण ।

अनेन विधिना कार्या वराकाञ्चयसप्तमी ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तवराटिकासप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

ब्रह्मोवाच ।

अतः परं प्रवक्ष्यामि रहस्या नामसप्तमीं ।

पवित्राहि पवित्राणां महापातकनाशिनी ॥

सप्तमी कृतमात्रेयं नरस्तारयते भवात् ।

सप्तापरान् सप्तपूर्वान् पिष्टुं चानि न संशयः ॥

रोगाच्छिनन्ति दुःखेद्यान् दुर्जयान् जयते रिपून् ।

अर्घं प्राप्नोति दुःप्राप्यं सक्तं कृत्वापि सप्तमीं ॥

* पूजयेदिति पुलकान्तरे पाठः ।

कन्यार्थी लभते कन्यां धनार्थी लभते धनम् ।
 पुत्रार्थी लभते पुत्रान् धनार्थी धनमाप्नुयात् ॥
 समयान् पालयन् सर्वान् कुर्याच्चेमां विशक्षणः ।
 शृणुयात् शृणु भूतेश्च श्रेयसे गदतोमम ॥
 आदित्यभक्तः पुरुषः सप्तम्यां गणनायकम् ।
 मैत्रीसर्व्वं च वै कुर्यात् भास्करंवापि* चिन्तयेत् ॥
 सप्तम्यां न स्पृशेत्सैलं नीलवस्त्रं न धारयेत् ।
 न च बामलके स्नानं न कुर्यात् कलहं क्वचित् ॥
 तथैवान्नमसं मद्यं न दद्यान्नपिविदुधः
 न द्रोहं कस्यचित् कुर्यान्नपारुथं समाचरेत् ।
 न च भाषेत चाण्डालं वचनैः स्त्रीं रजस्वलां ॥
 स चापि संसृजेत् स्थानं मृतकं नावलीकयेत् ।
 न मृत्वेदितिरागेण न च वाद्यानि वादयेत् ।
 न स्त्रपेच्च स्त्रिया स्पर्शं न सेवेत दुरीदरम् ॥
 न रोदेदस्त्रुपातेन न चाद्यात् पञ्चशाकिकम् ।
 पञ्चशाकिकं कन्दमूलफलदलपुष्पाणि पञ्चशाकानि ॥
 नाकर्षेच्च शिरीयूकान् न हृद्या वादमाचरेत् ।
 परस्यानिष्ट कथन मतिशोकं विवर्जयेत् ॥
 नास्कोटयेचापि हसेत् गायेच्चापि न गीतकं ॥
 न किञ्चित्ताडयेजन्तुं न कुर्यादतिभोजनम् ।
 न चैव हि दिवास्त्रप्रं दन्धं श्राठगं च वर्जयेत् ॥
 रथ्या यामठनं चापि यत्नतः परिवर्जयेत् ।

* पूजयेदिति पुष्पकान्तरे वाक्यः ।

अथापरोविधिशतं श्रूयतां त्रिपुरान्तक ॥
 चैत्रात् प्रभृति कर्त्तव्या सव्यंदा नाम सप्तमी ।
 धातेति मधुमासे तु पूजनीयो दिवाकरः ॥
 अर्थमेति च वैशाखे ज्यैष्ठे मिथः प्रकीर्त्तितः ।
 आषाढे वरुणो ज्येष्ठे इन्द्रोऽभसि कथ्यते ॥
 विवस्वाश्च नभस्ये तु पर्जन्योऽश्वयुजि स्मृतः ।
 पूषा कार्त्तिकमासे च मार्गशीर्षे तु कथ्यते ॥
 भगः पौषे यिवस्वाश्च त्वष्टामासे तु कथ्यते ।
 विष्णुस्तु फाल्गुने मासि पूज्यो वन्द्यश्च भास्करः ॥
 सप्तम्यां चैव सप्तम्यां भोजयेद्भोजकान् बुधः ।
 सष्टतं भोजनं देयं भोजयित्वा विधानतः ॥
 भोजकाय प्रदेया तु दक्षिणा स्वर्णमाषकम् ।
 सष्टतं भोजनं देयं रत्नवस्त्राणि चैव हि ॥
 अस्त्राणि भोजकानान्तु दत्त्वा पीया द्विजोत्तम ।
 तथैव भोजनीयाश्च श्रद्धया परयान्वितः ॥
 विशिषतः पूजनीयाः ब्राह्मणाः कल्पचिन्सदा ।
 इत्येता कथिता तुभ्यं सप्तमी गणनायक ।
 श्रुता सती पापहरा सूर्यलोकप्रदायिनी ॥
 इति भविष्यपुराणोक्तं नाम सप्तमीव्रतम् ॥

—000—

पितामह उवाच ।

फाल्गुनासप्तपक्षस्य सप्तम्यां च घनाघन ।

उपोषिता नरो नारी समभ्यर्चा^१ तमोपहृम् ॥
 सूर्यनाम जपन् भक्त्या भावयुक्तो जितेन्द्रियः ।
 उत्तिष्ठन्नपविशंश्चैव सूर्यमेवानुकीर्त्तयेत् ॥
 ततोन्वदिवशे प्राप्ते अष्टम्यां नियतो रविम् ।
 ज्ञात्वा सम्यक् समभ्यर्चा दद्याद्विप्राय दक्षिणाम् ॥
 रविमुद्दिश्य चैवाग्नौ कृतहोमः कृतक्रियः ।
 प्रणिपत्य रविं देव* मिति वाक्यमुदीरयेत् ॥
 यमाराध्य पुरा देवा सावित्री काममाप वै ।
 स मे ददातु देवेशः सर्वान् कामान् विभावसुः ।
 समभ्यर्थ्य दितिः प्राप्ता कृतज्ञान् कामान् यथेष्टितान् ।
 ददातु सकलान् कामान् प्रसन्नो मे दिवस्पतिः ॥
 भद्रराज्यः स देवेन्द्रो समभ्यर्थ्य दिवाकरम् ।
 कामार्थमाप्तवान् राज्यं स मे कामान् प्रयच्छतु ॥
 एवमभ्यर्चा पूजाञ्च निष्पाद्येह विशेषतः ।
 भुञ्जीत च ततः सम्यक् हविष्यं पतगध्वज ॥
 फाल्गुने चैत्रवैशाखे ज्यैष्ठमन्थं तथा परम् ।
 चतुर्भिः पारणं मासैरेभिर्निष्पाद्य सश्वेत् ॥
 करवीरैश्चतुरोमासान् तथा संपूजयेद्भविम् ।
 कृष्णागुहं दहेद्भूपं प्राश्य गीमृच्छं जलं ॥
 नैवेद्यं खण्डवेष्टांश्च दद्याद्विप्रेभ्य एव च ।
 तनस्तु श्रूयतामन्यथाघाटादिषु या क्रिया ॥
 जातीषुष्याणि यस्तानि धूपो गुग्गुलुहृत्ते ।

* जगन्नाथमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

कुतपोदकमन्त्रीयात् नैवेद्यं पायसं मतम् ॥

स्वयं तदेव चान्त्रीयात् शेषं पूर्ववदाचरेत् ।

कुतपोदकं, कुशोदकं ।

कार्तिकादिषु मासेषु गोमूत्रं कायशीधनं ।

महाङ्गं धूपसुहिष्टं पूजारत्नोत्पलैस्तथा ॥

महाङ्गधूपो, भविष्यत्पुराण उक्तो यथा ।

कपूर्वं कुङ्कुमं सुस्नामशुक्लं सिङ्गकं तथा ॥

व्यजनं शर्करा कृष्ण महाङ्गं सिङ्गकं तथा ।

महाङ्गोऽयं स्मृतो धूपः प्रियो देवस्य सर्व्वदा ॥

कुतपोदकमन्त्रीयात् नैवेद्यं पायसं मतम् ।

कासारश्चैव नैवेद्यं प्रदद्याद्वाक्कराय वै ।

प्रतिमासश्च विप्राय दद्याच्छक्त्या तु दक्षिणां ॥

प्रीत्यनं स्वेच्छ्या भानोः पारणं पारणे गते ।

यथाशक्ति यथायोगं विस्रयाठं विवर्जयेत् ॥

सद्भावेनैव समाश्वः पूजितः प्रीतये मतः ।

पारशान्ते यथाशक्त्या पूजितः स्नापितो रविः ॥

प्रीषीतश्चेष्टितान् कामान् दद्यादव्याहृतान् रविः ।

एषा पुण्या पापहरा सप्तमी सर्व्वकामदा ॥

यथाभिलषितान् कामान् ददाति गरुडध्वज ।

अपुत्रः पुत्रमाप्नोति अधनो धनमाप्नुयात् ॥

रीगाभिभूतश्चारोग्यं कन्या विन्दति सत्यतिम् ।

समागमं प्रवासेभ्य उपोषे तद्वाप्नुयात् ॥

सर्व्वान् कामानवाप्नोति गोगतश्चापि शीघ्रतः ।

गोगत इति, स्वर्गतः ।

पुनरेत्य महीं-कण्ठ घनाघन समीकृतम् ।

घनाघनसमः, यत्रातुष्यः ।

स्नातले स्यान्नसन्देहः प्रसादाज्ञोपतेर्नरः ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं कामदासप्रमीव्रतम् ।

— ००० —

सुमन्तुरुवाच ।

अथ भाद्रपदे मासि शुक्लपक्षे महामते ।

उपोष्या प्रथमा तत्र विधानं शृणु यत्नवीत् ॥

अयाचितो चतुर्थ्यां तु पञ्चम्यामेकभोजनम् ।

उपवासपरः षष्ठ्यां जितक्रीधी जितेन्द्रियः ॥

अर्चयित्वा दिनकरं गन्धपुष्पनिवेदनैः ।

पुरतः स्थण्डिले रात्रौ स्वपेद्देवस्य पुत्रक ॥

प्रध्याय* आनसा देवं सर्वभूतार्त्तिनाशनं ।

सर्वदोषप्रशमनं सर्वपातकनाशनं ॥

विवुहस्त्वथ सप्तम्यां कुर्व्याद्वाङ्मणभोजनम् ।

पूजयित्वा दिनकरं पुष्पधूपविलेपनैः ॥

नैवेद्यं तत्र देवस्य फलानि कथयन्ति हि ।

सर्वदूरं नास्तिकेरथ तथैवास्त्रफलानि च ॥

मातुलङ्गफलानीह कथितानि मनीषिभिः ।

भोजयित्वा ततो विप्रा[†] नाम्ना चैव भोजयेत् ॥

* चत्वारोऽपि पुस्तकान्तरे षाडः ।

† एतेषु भोजवेदिप्रामिति पाठान्तरं ।

तथैषां चाप्यभावेत् शृणु वान्यानि सुव्रत ।
 शालिगोधूमपिष्टेन कारयेत्तन्नायकम् ॥
 गुडगर्भकतानीह हृतगर्भाणि पाचयेत् ।
 जातु जीरक मिश्राणि* आदित्याय निवेदयेत् ॥
 जातुजीरकमिश्राणि एलापत्रनागकेशराणि ।
 शर्कराखाद्यमिश्राणि आदित्याय निवेदयेत् ॥
 अन्निकार्यमथो ज्ञत्य ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ।
 इत्थं द्वादश वै मासान् कार्य्यं व्रतमनुत्तमम् ॥
 मासि मासि फलाहारः फलदायी भवेन्नृप ।
 व्रतमेतत्तु कुर्वीत भक्त्या ब्राह्मणभोजनम् ॥
 ज्ञानप्राशनयोश्चापि विधानं शृणु सुव्रतम् ।
 गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् ॥
 तिलाः सर्षपजं कल्कश्चेतश्चैव हि सुव्रत ।
 दूर्वाकल्कं हृतञ्चापि गोशृङ्गचालनं जलं ।
 जाती गुल्म विनिर्यासःप्रशस्तं ज्ञानकर्म्मणि ।
 दूर्वाकल्कघृतं, दूर्वाकल्कघृतयुतं ।
 गोशृङ्गचालनं, येन गोशृङ्गं चाल्यते ।
 जातीशुद्धम विनिर्यासं, समूलशाखजातीपक्कवम् ।
 प्राशनेचाप्यथैतानि सर्वपापहराणि वै ॥
 आदौ ज्ञत्वा भाद्रपदे यथा संख्यं विदुर्बुधाः ।
 इत्थं वर्षान्तमासाद्य भोजयित्वा द्विजोत्तमान् ।
 दिव्यान् भीमान् महादेव ततस्त्रेभ्यो निवेदयेत् ॥

देवकुले भवा, दिव्या, इतरे भौमाः ।

फलानि चाद्य हेमानि यथा शक्त्या क्षतानि तु ॥

सवत्सामद्यवा धेनुं भूमिं शस्यान्विता* मद्य ।

प्रासादमद्यवा भौमं सर्व्वधान्यसमन्वितं ॥

भौमप्रासादं, राजगृहसुखं गृहं ।

दद्याद्भक्तानि वस्त्राणि तान्त्रपात्रं सविद्रुमम् ।

शक्तिशुक्तस्य चैतानि दरिद्रस्य च मे गृह्य ॥

फलानि पुष्पाणि च तथा तिलचूर्णानि तानि तु ।

भोजयित्वा द्विजान् दद्याद्भ्राजतानि फलानि च ॥

धातूरक्तं वस्त्रं युरममाचार्य्याय निवेदयेत् ॥

सद्विरण्यं महादेवं पञ्चरत्नसमन्वितम् ।

इत्थं समाप्यते सम्यग्वाक्ते तात पारणम् ॥

इत्येषा वै पुण्यतमा सप्तमी दुरितापहा ।

यासुपोष्य नराः सर्व्वं यान्ति सुख्यसन्तोक्तां ॥

पूज्यमानाः सदा देवैर्गन्धर्वाप्सरसां गणैः ।

अनया मानवो यस्तु पूजयेद्भास्करं सदा ॥

दारिद्र्यदुःखदुरितैर्मुक्तो याति दिवाकरम् ।

ब्राह्मणो मोक्षमायाति क्षत्रियश्चन्द्रतां व्रजेत् ॥

वैश्यो धनदसालोक्यं शूद्रो विप्रत्वमाप्नुयात् ।

अपुत्रो लभते पुत्रं दुर्भगा सुभगा भवेत् ॥

विधवा या सती भक्त्या अनया पूजयेद्भवि ।

* भूमिं ब्रह्मान्विता इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† आन्वितमिति पाठान्तरं ।

नान्यजन्मनि वैधव्यं नारी प्राप्नोति मानद ॥
 चिन्तामणिसमा ह्येषा विज्ञेया फलसप्तमी ।
 पठतां शृण्वतां भक्त्या सर्व्वं कामप्रदा कृता ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं फलसप्तमीव्रतम् ॥

— ००० —

भगवत् उवाच ।

मासि भाद्रपदे प्राप्ते शुक्लपक्षे सुरेश्वरः ।
 सप्तम्यासुपवासेन पुत्रप्राप्तिप्रदं व्रतम् ॥
 घट्यां चैव सुसंकाश्यं सप्तम्यां पूजयेत्हरिं ।
 हरिं, विष्णुं नाममन्त्रैः पूजा ।
 देवै, ब्रह्मादिभिः तद्गुपाधि पुण्याभिषेके ।
 देवैर्यमगतं देवमात्मभिः परिवारितम् ॥
 ततः प्रभाते विमले अष्टम्यां प्रवतो हरिं ।
 प्राग्विधानेन गोविन्दं अर्चयित्वा विधानतः ॥
 प्राग्विधानेन वैष्णवमार्गेण गोविन्दमिति विशेषेण गोपाल
 मन्त्रेण ह्रीमपूजा ।

तस्माद्यतः कृष्णतिलैः सष्टतैर्ह्रीममाचरेत् ।
 ब्राह्मणान् भोजयेत् भक्त्या यथाशक्त्या तु दक्षिणां ॥
 ततः स्वयं तु भुञ्जीत प्रथमं विश्वनिष्ककम् ।
 विश्वप्राशने फलसप्तमीव्रतो मन्त्रः ।
 पद्याद्यष्टैश्च भुञ्जीत स्नेहाद्यं षड्रसान्वितम् ॥
 प्रतिमासमनेनैव विधिनीपोऽथ मानवः ।
 कृष्णाष्टमीमपुत्रोऽपि लभेत् पुत्रं न संशयः ॥

वक्षरान्ते च गीयुष्मं कृत्वा देयं द्विजातये ।
 इदं पुनर्व्रतं नाम मया ते परिकीर्तितम् ॥
 एतत् कालानरः पापैः सर्वैरेव प्रमुच्यते ।
 इति वाराहपुराणोक्तं पुनर्व्रतमीव्रतम् ।

—-000—-

ब्रह्मोवाच ।

कृत्वापचे तु माघस्य सर्वाणि सप्तमीं शृणु ।
 यामुपोष्य समाप्नोति सर्वाङ्गं कामान् धराधर ॥
 पाषण्डादिभिरालापमकुर्वन् भानुतत्परः ।
 पूजयेत् प्रणतो देवमेकाग्रमतिरंशुगं ॥
 माघादिपारणं मासेः षड्भिः शुच्यन्तकं स्मृत ।

शुच्यन्तकं, आषाढान्तिकम् ।

मार्त्तण्डं प्रथमं नाम द्वितीयोऽङ्कः प्रकीर्तितः ।
 तृतीयं चित्रमानुष विभावसुरतः परम् ।
 भगेति पञ्चमी ज्ञेयः षष्ठोऽहंसः प्रकीर्तितः ॥
 पूर्वेषु षट्सु ममासेषु ज्ञानप्राशनयोस्तिलाः ।
 श्रावणादिषु मासेषु पञ्चगव्यमुदाहृतं ।
 ज्ञाने च प्राशने चैव प्रशस्तं पापनाशनं ॥
 प्रतिमासन्तु देवस्य कृत्वा पूजा यथाविधि ।
 विप्राय दक्षिणां दद्यात् अह्वानः सशक्तितः ॥
 पारणान्ते च देवस्य प्रीणनं भक्तिपूर्वकम् ।
 कुर्वीत शक्त्या विधियद्भविं शक्त्या दिवसति ॥

नक्तं भुञ्जीत वै विष्णोः तैलाचारविवर्जितम् ।
 कृष्णवस्त्रासुपीथैवं सप्तम्यामश्वत्थदिने ॥
 एतासुषित्वा धर्मज्ञः हंसप्रीथनतत्परः ।
 सर्वाङ्गं कामानवाप्नोति यद्यदिच्छति चेतसा ॥
 स्वतो लोकेषु विख्याता सर्वाप्तिरिति सप्तमी ।
 कृताभिलषिता श्लेषा प्रारब्धा कर्मतत्परैः ॥
 पूरयत्यखिलान् कामान् प्राञ्जितानां दिने दिने ।
 इति श्रीभविष्यपुराणोक्तं सर्वाप्तिसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

ब्रह्मोवाच ।

सप्तम्यां वृक्षपत्रे तु फाल्गुन्यां यो वजेकरः ।
 जपेद्ब्रह्मीति देवस्य नाम भक्त्या पुनः पुनः ॥
 देवार्चनं वाष्टयतं कृत्वैवं तु जपेच्छुचिः ।
 ज्ञातः प्रख्यातकाले तु उत्थाने स्वस्तिते क्षुते ॥
 पाषण्डान् पतितांश्चैव तथैवान्धावशायिनः ।
 नास्त्रापयेत् तथा भानुमर्चयेच्छुद्धयान्वितः ।
 इन्द्रोच्चारयेद्भानुं मनसा ध्यानतत्परः ॥
 हंस हंस कृपासो त्वं भ्रगतीनां गतिर्भव ।
 संसारार्थव मन्थानां चाता भव दिवाकर ॥
 एवं प्रसाद्योपवासं कृत्वा नियतमानसः ।
 पूर्वार्द्धमेव वान्धेद्युः सकृत् प्राश्नार्जुनीयकं ॥
 शार्जुनीयकं, सकृद्ब्रह्मयं ।
 ज्ञात्वा शार्जुन्यित्वा हंसैति पुनर्नाम प्रकीर्त्तयेत् ।

वारिधारात्रयंचैव त्रिचिपेहेवपादयोः ॥
 चैव वेशाखयोश्चैव तद्वज्जिष्ठे च पूजयेत् ।
 मर्त्तग्लोके गतिं त्रैष्टां कृत्वा प्राप्नोति वै नरः ॥
 उत्क्रान्तश्च व्रजेत् कृष्ण दिव्यहंसमयं शुभम् ।
 धर्मध्वजप्रसादाद्द्वै संक्रन्दनसमी भवेत् ।
 आषाढे त्रावणे चैव मासि भाद्रपदे तथा ॥
 मासि चाश्वयुजे चैव मनेन विधिना नरः ।
 उपोष्य संपूज्य तथा मर्त्तग्लेति च कीर्त्तयेत् ॥
 गोमूत्रप्राशनाक्षूर्यपुरं गत्वा महीयते ।
 आराधितस्य जगतामीश्वरस्य कृतात्मनः* ॥
 उक्तान्तिकाले अक्षरं भास्करस्य तथा श्रुते ।
 क्षीरस्य प्राशने कृष्ण विधिरेष मयोदितः ॥
 कार्तिकादि यथा न्यायं कुर्यात्प्रासचतुष्टयम् ।
 तेनैव विधिना कृत्वा भास्करेति प्रकीर्त्तयेत् ॥
 स याति भानुसालोक्यं भास्करानुरतिः क्षयेण† ।
 प्रतिप्रासं द्विजातिभ्यो दद्याद्दानं यथेच्छया ॥
 चातुर्मास्ये तु संपूर्णं कुर्यात् पुस्तकवाचनं † ।
 कथाया भास्करस्येति तत्कीर्त्तनमथापि वा ॥
 धर्मश्रवणमिष्टन्तु सदा धर्मध्वजस्य च ।
 धर्मध्वजः, सूर्यः ।

वाचकं पूजयित्वा तु तस्मात् कार्यं च श्रवया ।

* अथवात्मनेति क्वचित् पाठः ।

† भास्करं स्मरति क्षये इति पाठान्तरं ।

आद्यमन्त्रेण पक्वे न होमेन च द्विजेन तु ॥
 दिव्येन च तथा शुक्ल मभीष्टं भास्करस्य हि ।
 एवमन्ते गतिश्रेष्ठ देवनामानुकीर्त्तयेत् ॥
 प्राप्नोति त्रिविधान् कृष्ण शिलोकान्मानवः सदा ।
 कथितं पारणं यत्ते तद्येमङ्गीधराधर ॥
 आधिपत्यं तथा भोगांस्तेन प्राप्नोति मानुषः ।
 द्वितीयेन तथा भोगान् गोचारैः प्राप्नुयात्तरः ॥
 गोचारि, रिन्द्रः ।

सूर्यलोकं तृतीयेन पारणेन तद्याप्नुयात् ।
 एवमेतत् समाख्यातं गतिप्रापकसुत्तमम् ॥
 विधानं देवशार्दूल यदुक्तं सप्तमीव्रतम् ।
 यस्त्वेतां सप्तमीं कुर्यात् त्रिगतिं त्रययान्वितः ॥
 तथा भक्त्या च वै नारी प्राप्नोति त्रिविधां गतिं ।
 एषा पुण्या पापहरा त्रिगतिः समुदाहृता ।
 आराधनाय शास्त्रेण सदा भानोर्गतिप्रदा ॥
 पठतां श्रुत्वतां चैव सर्वपापभयापहा ।
 तथा कर्मसु पुण्येषु त्रिवर्गा, ज्येष्ठदा सदा ।
 त्रिवर्गज्येष्ठदा, धर्माः ।

अत्र व्रते हेलिनाम चातुर्मास्यत्रयसाधारण्यां
 हंस-मार्त्तण्ड-भास्करनामानि प्रातिस्त्रिज्ञानि ।
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं त्रिगतिसप्तमीव्रतम् ।
 आदित्य उवाच ।

माघमासे तु शुक्लार्थां सप्तम्यां समुपोषितः ।

पूजयेद्यस्तु मां भक्त्या तस्माहं प्रभुतां व्रजेत् ॥

समुपोषितः, षष्ठ्यां ।

एवञ्चीभय सप्तम्यां मासि मासि शरोत्तम ।

यस्तुमां पूजयेद्भक्त्या स्वमेकमेकमाद्रात् ॥

स्वमेकः, सम्बन्धरः ।

प्रयच्छामि सुतान् तस्य ज्ञानोद्भङ्गसम्भवान् ।

वित्तं यमस्तथा पुत्रानारोग्यपरमं सदा ।

माघमासे तु यो ब्रह्मन् शुक्लपत्रे जितेन्द्रियः ॥

पाषण्डान् पतितानन्यान् जल्पन्वितितेन्द्रियः ।

उपोष्य विधिवत्षष्ठ्यां श्वेतमाख्यविलेपनैः ।

पूजयित्वा तु मां भक्त्या निशि भूमौ स्वपेहुधः ॥

पुनश्चाय सप्तम्यां कृत्वा ज्ञानादिक्रियां ।

पूजयित्वा तु मां वीरहोमं ब्रह्मन् समाचरेत् ॥

पूजयित्वा हरिं भक्त्या हविषा पद्मलोचनम् ।

वीरहोम, मन्त्रिहोमं हरिविष्णुरूपं ।

दध्नादनेन पयसा पायसेन द्विजास्तथा ॥

तस्यैव कृष्णपत्रस्य षष्ठ्यां सम्यगुपोषितः ।

तस्यैवेति, माघमासस्य ।

रक्तोत्पलैः सुगन्धाढैररक्तपुष्पैस्तु पूजयेत् ।

एवं यः पूजयेद्भक्त्या नरो मां विधिवत्सदा ॥

उभयोरपि देवेन्द्र स पुत्रं लभते फलम् ।

इत्यादित्यपुराणोक्तं पुत्रसप्तमीव्रतम् ।

—000—

ब्रह्मोवाच ।

शुक्लपक्षस्य सप्तम्यां यदा ऋक्षङ्गणे भवेत् ।
तदा पुष्टतमा प्रीक्षा सप्तमी पापनाशिनी ॥
करो, हस्तः ।

अयं हि योगी बहुले आवणेमासि सम्भवति ।
तस्यां संपूज्य देवेशं चित्रमाण्डगद्गुहम् ।
सप्तजन्मकृतात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥
यस्योपवासं कुरुते तस्यां नियतमानसः ।
सर्वपापविनिर्मुक्तः सूर्यलोके महीयते ।
दानं यहीयते किञ्चित्सुहिम्न दिवाकरम् ॥
होमो वा क्रियते तत्र तत्सर्वं चाद्यं भवेत् ।
एका ऋग्वेदपुरतो जप्त्वा अष्टापरेश तु ॥
ऋग्वेदस्य समस्तस्य यजते तत्फलं भ्रुवं ।
सामवेदफलं साम यजुर्वेदे फलं यजुः ॥
अथर्वं षोडश्वर्णस्य निखिलं यजते फलम् ।
यतः पापमशेषेण नाशयत्यथ भास्करः ॥
करार्चा सप्तमी कृत्वा तेनोक्ता पापनाशिनी ।
अस्यां समभ्यर्च्य रविं याति सौमनसं पुरं ॥
विमानवरमारुह्य कर्षूरेऽङ्गवसुसप्तमम् ।
सौमनसम्पुरम्, देवलोकं, कर्षूरं, दुर्बर्णम् ।
तेजसा रविसहायः प्रभया ऋषिसन्निभः ॥

कान्त्याभेयसमः कृष्ण शीर्षे हरिसमः सदा ।
 मोदते तत्र सुचिरं हृन्दारकगणैः सह ।
 इति भविष्यपुराणोक्तं पापनाशिनीव्रतम् ।

—०३०—

ब्रह्मीवाच ।

शुक्लपत्रे तु सप्तम्यां मासि भाद्रपदेऽच्युत ।
 प्रथम्य शिरसा देवं पूजयेत् सप्तवाहनम् ॥
 पुष्पधूपादिभिर्ध्वीरं कृतपानाच्च तर्पणैः ।

कृतपानां, ब्राह्मणादीनां

पाषण्ठादिभिराज्ञापमकुर्वन् न्रियतात्मवान् ।
 विप्राय दक्षिणां दत्त्वा नक्तं भुञ्जीत वाग्यतः ।
 तिष्ठन् हुवन् प्रस्थितश्च क्षुतप्रक्षलसितादिषु ।
 आदित्यनामस्कारणं कुर्यादुच्चारणं तथा ॥
 अनेनैव विधानेन मासान् द्वादश वै क्रमात् ।
 उपोष्य पारणे पूर्वे समभ्यर्च्य जगद्गुरुम् ॥
 पुष्येन श्रवणेनेह प्रथयेत्पुष्टिमाप्नुयात् ।
 एवं यः पुनश्च कुर्यादादित्याराधनं शुचिः ॥
 नारौ वा स्वर्गमभ्येत्य सानन्त्यं फलमश्नुते ।

इति भविष्यपुराणोक्तमनन्तफलसप्तमीव्रतम् ।

—०००—

ब्रह्मीवाच ।

शुक्लपत्रे समभ्यर्च्य पुष्पधूपादिभिः शुचिः ।

श्रावणेमासि सप्तम्यां देवायं सप्तिवाहनम् ॥
 प्राप्येह विपुलं देवं धर्मानन्तरमक्षयम् ।
 भूमूलोकमायाति दिव्यं खगपतेः शुभम् ॥
 धर्मानन्तरमर्धं खगपति, रचादित्यः ।
 पाषण्डादिभिरालापमकुर्वन् सिद्धताम्बवान् ॥
 विप्राय दक्षिणां दत्त्वा नक्तं मुञ्चति वाग्यतः ।
 भव्यङ्गं देवदेवस्य वर्षे वर्षे नियोजयेत् ॥

भव्यङ्गं, एकवर्षं: शोभनकार्पाससूत्रनिर्मित सर्पनिर्मोक्ता-
 क्षतिरन्तःसुचिरो द्वाविंशत्यधिकशताङ्गुलपरिमितमध्यमोष्टोत्त-
 रशतांगुलपरिमितोऽङ्गुलरूपी वाहव्यम् । एतत्सर्वं भविष्यत्पुराणे
 एव साम्बोपाख्याने विस्तरेणोक्तम् ।

सप्तम्यामत्र देवायं शुभं शुक्लं नवन्तथा ।
 खभवेषु यद्यान्येषु पवित्राण्यत्र वै विदुः ॥
 तथा देवस्य मासेस्त्रिभ्यङ्गः परिगीयते ।

खभवेषु, देवेषु ।

यस्वारोपयते भक्त्या भास्करस्य नरोऽप्युत ।
 भव्यङ्गं विधिवत् कृत्वा भक्त्या ब्राह्मणभोजनम् ॥
 शङ्कतूर्थनिनादैश्च ब्रह्मघोषैश्च पुष्कलैः ।
 स दिव्यं यानमारुठो लोकमायाति हेलिनः ॥
 अनेनैव विधानेन मासान् द्वादश वै क्रमात् ।
 उपोष्य पारणे पूर्णं दत्त्वा विप्राय दक्षिणाम् ॥
 एवं यः पुरुषः कुर्व्यादादित्याराधनं शुचिः ।

स गच्छेत्तु परं लोकं समुद्दिश्य दिवाकरम् ॥
हीमार्चा क्रियते तत्र तत्सर्वं चाचर्य भवेत् ।

इति श्रीभविष्यपुराणोक्तमव्यङ्गसप्तमीव्रतम् ।

—000—

पुलस्त्य उवाच ।

अन्यामपि प्रवक्ष्यामि नाम्ना तु फलसप्तमीम् ।
यामुपोष्य नरः पापैर्विसुक्तः स्वर्गभागभवेत् ॥
मार्गशीर्षे शुभे मासि पञ्चम्यां नियतव्रतः ।
षष्ठ्यामुपोष्य कमलं कारयित्वा तु काञ्चनम् ॥
शर्करासंयुतं दद्यात् ब्राह्मणाय कुटुम्बिने ।
रूपन्तु काञ्चनं कृत्वा फलस्यैकस्य धर्मवित् ॥
दद्याद्द्विकालवेलायां भानुर्ध्मे प्रीयतामिति ।
भक्त्या तु विप्रान् संपूज्य सप्तम्यां क्षीरभोजनम् ॥
कृत्वा कुर्यात्फलत्यागं यावत्सगात् कृष्णसप्तमी ।
तामुपोष्य विधिं कुर्याद्दनेनैव क्रमेण तु ॥
तद्द्वेषेनफलं दद्यात् सुवर्णकमलान्वितम् ।
शर्करापात्रसंयुक्तं वस्त्रमालाविभूषितम् ॥
संवत्सरमनेनैव विधिनीभयसप्तमीम् ।
उपोष्य दद्यात् क्रमशः सूर्य्यमन्त्रमुद्वीरयेत् ॥
भानुरकीं रविं ब्रह्मा सूर्य्यः शक्रो हरिः शिवः ।
श्रीमान्विभावसुखवृष्टा वरुणः प्रीयतामिति ।
प्रतिमासञ्च सप्तम्यां एकैकं नाम कीर्त्तयेत् ॥

प्रतिपक्षं फलत्यागमेकं कुर्वन् समाचरेत् ।
 व्रतान्ते विप्रमिथुनं पूजयेदस्त्रभूषणैः ॥
 शर्कराकलशं दद्याद्देमपुष्पसमन्वितम् ।
 यथा न विफलाः कामास्त्रयज्ञानां सदा रवे ।
 तद्यानन्तफलावाप्तिर्भोऽस्तु जन्मनि जन्मनि ॥
 इमामनन्तफलदां यः कुर्यात्फलसप्तमीम् ।
 सर्वपापविशुद्धात्मा शूर्यलोके महीयते ॥
 सुरापानादिकं पापं यद्यद्दशपुराकृतम् ।
 तत्सर्वं नाशमायाति यः कुर्यात् फलरुप्तमीम् ॥
 कुर्वाणः सप्तमीमितां सदातं रोगवर्जितः ।
 भूतान् भव्यांश्च पुरुषांस्तारयेदेकविंशतिम् ।
 इति पद्मपुराणोक्तं फलसप्तमीव्रतम् ।

—000—

विष्णुहञ्जात् ।

कुले जन्म तच्चारोग्यं धनञ्चैवेह दुर्लभम् ।
 तृतीयं प्राप्यते येन तस्मै वद जगत्पते ॥

ब्रह्मीवाच ।

येऽ मार्गशीर्षे सितसप्तमिऽङ्घ्रि
 हस्तार्चयीने जगतः प्रसूतिं ।
 संपूज्य भासुं विधिनीपवासी
 स्रग्गन्धधूपान्नवनीपहारैः ॥
 वृहीतगव्यं प्रतिघव्यपूजा
 दानाद्विभुक्तं व्रतमष्टमेकम् ।

यव्यो, मासः ।

दद्याच्च दानं द्विजपुगङ्गवेभ्य
स्तत्कण्ठ्यमानं विनिवोध वीर ॥

वज्रं यथा त्रीह्रियवं हिरण्यं
यवान्नमन्थः करकान्नपात्रम् ।

हृतं पयोक्तं गुह्यफाणितार्ठं
दद्यात्तथा वस्त्रमनुक्रमेण ।

गव्ये च यव्ये विधिचोदिते च
तस्यां तिष्ठौ लोकगुरुं प्रपूज्य ।

करकान्नपात्रं, अन्नपूर्णपात्रपिहित

उदकपूर्णकलसं । गुह्यफाणितार्ठं गुह्यकामनं ।

अत्रोतधान्यानि विशुद्धिहेतोः ॥

संप्राशनानीह निवोध तानि

गोमूत्रमन्थो हृतमामशाकं ।

दूर्वादिभिर्त्रीह्रियवांस्तिलाच्च

सूर्याशुतप्तं जलमंबुजानि ।

चौरश्च मासक्रमशोऽपि योज्यं

कुले प्रधाने धनधान्यपूर्णं ॥

पद्माहते ध्वस्तसमस्तदुःखे

प्राप्तिरिति जन्माविकलेन्द्रियश्च ।

भवन्व्यरोगी मतिमान् सुखी च

पद्मा हते लक्ष्मणाहते ॥

इति भविष्यपुराणोक्तं* नयनप्रदसप्तमीव्रतम् ।

—000—

पुलस्त्य उवाच ।

विशोक सप्तमीं तद्दत् वक्षामि मुनिपुङ्गव ।
 यामुपोष्य नरः शोकं न कदाचिद्दिहाश्रुते ॥
 माघे कृष्णतिथौ, ज्ञातः पञ्चम्यां शुक्लपक्षतः ।
 कृताहारः कथयथा दन्तधावनपूर्वकम् ॥
 उपवासव्रतं कृत्वा ब्रह्मचारी भवेन्नृपि ।
 ततः प्रभाते चोत्थाय कृतस्नानजपः शुचिः ॥
 कृत्वा तु काञ्चनं पद्ममर्कोऽयमितिपूजयेत् ।
 करवीरैश्च पुष्पैश्च रत्नवस्त्रयुगेन च ॥
 यथा विशोकं भुवनं तथैवादित्य सर्वदा ।
 तथा विशोकीभिवास्तु त्वद्भक्तेः प्रति जन्मनि ॥
 एवं संपूज्य षष्ठ्यां तु भक्त्या संपूजयेद्द्विजान् ।
 सुखा संप्राप्य गोमूत्रसुत्थाय कृतमित्यकः ॥
 संपूज्य विप्रं यज्ञेन गुह्यपात्रसमन्वितं ।
 सुसूक्ष्मं वस्त्रसंयुक्तं* ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 अतैस्त्रयसंयुक्तं भुङ्क्ते सप्तम्यां मीनसंयुतः ।
 ततः पुराश्चरवच कर्त्तव्यं भूतिमिच्छता ॥
 अनेन विधिना सर्वसुभयोरपि पञ्चयोः ।
 कुर्याद्यावत् पुनर्भाष्यशुक्लपक्षस्य सप्तमीम् ॥
 व्रतान्ते कालसं दद्यात् सुवर्षकमलान्वितम् ।

* कर्त्तव्यमिति पुस्तकालये ।

† तद्दत्तपुष्पं पञ्चतिथि कृत्वा पुष्पं पाठोच ।

शय्यां सीपस्करां दद्यात् कपिलां गां पयस्विनीं ।
 अनेन विधिना यस्तु विस्रशाठाविवर्जितः ॥
 विशोकसप्तमीं कुर्यात् स याति परमां गतिं ।
 यावज्जन्मसहस्राणि सार्धंकोटिशतं भवेत् ॥
 तावन्नशोकमभ्येति रोगदौर्गत्यवर्जितः ।
 यं यं कामयते कामं तं तं प्राप्नोति पुष्कलं ॥
 निष्कामः क्लृप्तो यस्तु स परं ब्रह्म गच्छति ।
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं विशोकसप्तमीव्रतम् ।

—000—

अगस्त्य उवाच ।

अथापरं महाराज व्रतमारोग्यसंज्ञितम् ।
 कथयामि परं पुण्यं सर्वपापनाशनं ॥
 तस्यैव माघमासस्य सप्तम्यां समुपोषितः ।
 पूजयेद्भास्करं* देवं विश्वरूपं सनातनं ॥
 आदित्य भास्कर रवे भानो सूर्य दिवाकर ।
 प्रभाकरेति संपूज्यो देवः सर्वेश्वरो विभुः ॥
 षष्ठ्यां चैव कृताहारः सप्तम्यामुपवासकात् ।
 अष्टम्याश्चैव भुञ्जीत एष एव विधिः क्षमः ।
 अनेन वस्त्रं पूर्णं विधिना योऽर्चयेद्भुविम् ॥
 तस्यारोग्यं धनं धान्यमिह जन्मनि जायते ।
 परत्र च सुखं स्थानं यद्गत्वा न निवर्त्तते ॥

* शीजयेन् इति पुस्तकाकारे पाठः ।

इति वराहपुराणोक्तमारोग्यसप्तमीव्रतम् ।

सुमन्तुर्वाच ।

हन्त ते संप्रवक्ष्यामि सूर्य्यं व्रतमनुत्तमम् ।
 धर्मकामार्थमीक्षाणां प्रतिपादकमुत्तमम् ॥
 पौषे मासे च सप्तम्यां यः कुर्यान्नक्तभोजनं ।
 जितेन्द्रियः सत्यवादी ज्ञाति गोमूत्रगोरसैः ॥
 पशुयोः सप्तमीं यन्नादुपवासेन यो नयेत् ।
 त्रिसन्ध्यमर्चयेद्भानुं शाण्डिलेयश्च सुव्रत ॥

शाण्डिलेयोऽग्निः !

अधःशायी भवेन्नित्यं सर्व्वं भोगविदग्जितः ।
 मासि पूर्णं तु सप्तम्यां घृतादिभिररिन्दम् ॥
 कृत्वा ज्ञानं महापूजां सूर्य्यमन्त्रेण भारत ।
 नैवेद्यमोदनप्रस्थं क्षीरसिद्धं निवेदयेत् ॥
 भोजयित्वा द्विजानष्टौ सूर्य्यं भक्तांस्तु सामगान् ।
 गां च दद्यान्महाराज कपिलां भास्कराय च ॥
 य एवं कुरुते पुण्यं सूर्य्यव्रतमनुत्तमं ।
 तस्य पुण्यफलं वच्मि सर्व्वं कामसमन्वितम् ॥
 सूर्य्यकोटिप्रतीकाशैर्विमानैः सर्व्वं कामिकैः ।
 अक्षरोगणसंपूर्णैर्गर्भहाविभवंसंयुतैः ॥
 सङ्घ्नीतनृत्यनिर्दोषैर्गन्धर्व्वं गणशोभितैः ।
 दीध्रुमानस्रमरैस्तूयमानः सुरासुरैः ॥

सहस्रकिरणाज्ञानोर्ध्वनैर्ध्वसमन्वितः ।
 स याति परमं स्थानं यत्रास्ते रविरंशुमान् ॥
 रोमसंस्थाय तस्यास्तत्प्रसूतिकुले युवा ।

तस्याः, कपिलायाः ।

तावद्युगसहस्राणि सूर्यलोके महीयते ।
 त्रिःसप्तकुलजैः सार्धं भोगान् भुक्त्वा यथेष्टितान् ॥
 ज्ञानयोगं समासाद्य सूर्यस्य निक्षयं व्रजेत् ।
 माघमासे तु संप्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥
 पिण्याकं घृतसंमिश्रं भुञ्जानः सञ्चितेन्द्रियः ।
 उपवासश्च सप्तम्यां भवेदुभयपक्षयोः ॥
 घृताभिषेकमष्टम्यां कुर्याद्ज्ञानोर्नराधिप ।
 गाश्च दद्याद्दिनेशाय तरुणीं नीलसन्निभां ॥
 गत्वादित्यपुरं रम्यं भोगान् भुङ्क्ते यथेष्टितान् !
 फाल्गुने मासि राजेन्द्र यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥
 श्यामाकैः क्षीरनीवारैः जितक्रोधी जितेन्द्रियः ।
 षष्ठ्यां वाप्यथ सप्तम्यामुपवासपरीभवेत् ॥
 अष्टम्यां तु महाज्ञानं पञ्चगव्यघृतादिभिः ।
 वस्त्रीकाशादिभ्यश्च गोमूत्रसक्ततादिभिः ॥
 त्वग्निश्च क्षीरहृक्षाणां स्नापयित्वा प्रपूजयेत् ।
 सौरभेयीं ततोदद्यात् रक्ताभां रश्मिमालिने ॥

सौरभेयी, गौः ।

गत्वादित्यपुरं रम्यं सोदते शाश्वतीः समाः ।

मासि चैत्रे तु संप्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥

शास्त्रं पयसायुक्तं भुञ्जानः संयतेन्द्रियः ।

भानवे पाटलां दद्याद्दैष्णवीं तरुणीं नृप ॥

वैश्ववी, गौरेव ।

पुष्परोगमयैर्व्यानेर्नानाङ्गसानुयायिभिः ।

गच्छेत्सूर्यपुरं रम्यं दुष्प्रापमकृतात्मभिः ॥

वैशाखे मासि राजेन्द्र यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ।

दध्योदनञ्च भुञ्जानो जितक्रोधो जितेन्द्रियः ॥

गोष्ठेशयोद्घोषःशायी निशायामेकवस्त्रधृक् ।

नियमञ्च यद्योद्दिष्टं सामान्यं सर्वमाचरेत् ॥

सामन्यो, नियमः पाषण्डाद्यसम्भाषणादिः ।

वैशाख्यां पौर्णमास्यां तु कुर्यात् ज्ञानं वृतादिभिः ॥

सूर्यायालंकृतान्ते कां दद्याद्दान्तरुणीं नृप ।

शङ्खकुण्डेन्दुवर्षाभिर्भ्रमहायानैरलंकृतैः ॥

श्वेतैर्गरुडसंयुक्तैर्गच्छेदकस्य मन्दिरम् ।

सर्वीतिशयरूपाभिर्नारीभिः परिवारितः ॥

नीलोत्पलसुगन्धाभिर्घ्नोदते कालमक्षयम् ।

मासि ज्येष्ठे महावाहो यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥

भुञ्जानः पायसम्बीर सर्पिषा मधुना सह ।

वीरासनो निशायां स्यादहर्गाः समनुव्रजेत् ॥

वीरासनं, अनुपविश्यावस्थानम् ।

हितकारी गवां नित्यं गवां हिसाविवर्जितः ॥

उभयोरपि सप्तम्यां कुर्यात्सन्ध्यादिकं विधिम् ।

उभयोः पञ्चयोरिति शेषः ।

सूर्याय धेनुं दद्याच्च धूम्रवर्णामलङ्कृताम् ।
नीलोत्पलसमप्रस्थे र्महायानैरनूपमैः ॥
महासिंहमिदेषैश्च मोदते कालमन्वयम् ।
आधाठे मासि यः कुर्वीन्नयती नक्तभोजनम् ॥
षष्टिकीदनसंमित्रं संकृदश्रीत गौरसम् ।
गां दद्याच्च महाराज भास्कराय शुभाननाम् ॥
सामान्यञ्च विधिं कुर्यात्प्रागुक्तो योमयानघ ।
शुक्लटिकसङ्घाग्रैर्याने वैर्हिंसवाहनैः ॥
अणिमादिगुणैर्युक्तः सूर्यवद्विचरेद्वि ।
संप्राप्ते आवणे मासि यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥
चौरषष्ठिकयुक्ताच्च सर्वसत्त्वहिते रतः ।
पीतवर्णाञ्च गान्ध्याङ्गास्कराय महात्मने ॥
सामान्यमखिलदुर्थाद्दिधानं यत्प्रकीर्त्तितम् ।
सुविचिन्महायानैर्हंससारसयायिभिः ॥
गत्वादित्यपुरं श्रीमान् पूर्वोक्तं लभते फलम् ।
वीर भाद्रपदे मासि यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥
दुतशेषं हि विश्वात्मन् हृत्तमूलसुपान्वितः ।
स्वप्यादायतने रात्रौ सर्वभूतानुकम्पया ॥
दद्यात्तां तरुणीं वीर भास्कराय महात्मने ।
निशाकरसमप्रस्थैर्वज्रैर्दुर्यचित्तितैः ॥
चक्रवाकसमायुक्तैर्विमानैः सार्वकामिकैः ।
गत्वादित्यपुरं रम्यं ससुरासुरवन्दितः ॥

मोदते स महायानैर्यावदाहृतसंग्रहं ।
 श्रीमानश्वयुजे मासि यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥
 घृताग्नश्च भुञ्जानो जितक्रोधो जितेन्द्रियः ।
 दद्याद्ग्रां पद्मवर्षाभां भानोरमितनेजसे ॥
 पृष्ठाभरणसम्पन्नां तरुणींश्च पयस्विनीं ।
 स्वच्छमौक्तिकसङ्घाशैरिन्द्रनीलोपशोभितैः ॥
 जीवन्जीवकसंयुक्तैर्विमानैः सर्वकामिकैः ।
 गच्छेद्भानुसलीकत्वं तेजसा रविमन्निभः ॥
 कान्वा विधुममो राजन् प्रभया भृगुसन्निभः ।
 राजेन्द्र कार्तिके मासि यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥
 क्षीरोदनश्च भुञ्जानः सत्यवादी जितेन्द्रियः ।
 दिवाकराय गां दद्यात् ज्वलनार्कसमप्रभाम् ॥
 पूर्वोक्तश्च विधिद्वय्यात् सूर्यतुल्यो भवेन्नृप ।
 कालानलशिखाप्रस्थैर्महायानैर्नगोपमैः ॥
 महासिंहकतोद्भूतैः सूर्यवत् मोदते सुखी ।
 मार्गशीर्षे शुभे मासि यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥
 यवान् पयसा युक्तं भुञ्जानः संयतेन्द्रियः ।
 प्रयच्छेद्ग्रां तथा कृष्णां नानालङ्कारभूषिताम् ॥
 सूर्याय कुरुशार्दूल विधिं वापि समाचरेत् ।
 सितपद्मनिभैर्यानिः श्चै ताश्वरथसंयुतैः ॥
 गत्वादित्यपुरं रम्यं प्रभया परयान्वितः ।
 अहिंसा, सत्यवचन, मस्तेयः, क्षान्ति, रार्जवम् ॥
 निषवणाग्निहवनं भूशय्या नक्तभोजनम् ।

पक्षयोश्चपवासेन सप्तम्यां कुङ्कनन्दन ॥
 एतान् गुणान् समान्त्रित्य कुर्वीषो व्रतमुत्तमम् ।
 सप्तम्युभयमाख्यातं सर्वरोगभयापहम् ॥
 सर्वपापप्रशमनं सर्वकामफलप्रदम् ।
 इत्येवमादिनियमैश्चरेत् सूर्यव्रतं सदा ।
 य इच्छेद्द्विपुलं स्वानं भानोरमिततेजसः ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तमुभयसप्तमीव्रतम् ।

—०००—

श्रीकृष्णउवाच ।

अथान्यदपि ते वक्ष्मि दानं पापविनाशनम् ।
 आदित्यमण्डकं नाम समीहितफलप्रदं ॥
 यवचूर्णेन शुभ्रेण कुर्याद्गोधूमजेन वा ।
 सुपक्वं भानुविम्बाभं गुडं गव्याज्यपूरितं ॥
 सम्पूज्य भास्करं भक्त्या तदपे मण्डलं शुभम् ।
 रक्तचन्दनजं कृत्वा कौडुमं वा विशेषतः ॥
 मण्डकं तत्र संस्थाप्य रक्तपुष्पैः प्रपूजितम् ।
 सहिरण्यं सवस्त्रञ्च वित्तश्राठप्रविर्जितः ॥
 ब्राह्मणाय प्रदातव्यं मन्त्रे षानेन पाण्डव ।
 आदित्यतेजसोत्पन्नं राज्ञः करविनिर्भितम् ॥
 श्रेयसे मम विप्र त्वं प्रतीच्छापूपमुत्तमम् ।
 ब्राह्मणोपि पठेन्मन्त्रं गृह्णीयाद्भास्करप्रियम् ॥
 दत्तं भास्करभक्तेन स्वयं तद्भक्तिभावतः ।
 कामदं धनदं धन्यं पुत्रदं सुखदं तथा ॥

आदित्यप्रीतये दत्तं प्रतिगृह्णातु मण्डकम् ।
 एवं कृत्वा नरोभक्त्या सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥
 धनधान्यसमृद्धात्मा भूतात्मा भक्तवत्सलः ।
 आदित्याराधनपरस्ततः स्वर्गं महीयते ।
 इह चागत्य राजेन्द्र निजपुण्यस्य संचयात् ॥
 सर्वकामसमृद्धार्थी मण्डलाधिपतिर्भवेत् ।
 दातव्यो रघुसप्तम्यां महादानसमो नृप ॥
 दातव्यः प्रतिवर्षञ्च फलमत्यन्तमीक्षता ।
 एकेनापि प्रदत्तेन वास्य योवन वार्धकैः ॥
 पापं प्रणाशमायाति बहुभिः पुण्यभागभवेत् ।
 गीधूमचूर्णजनितं यवचूर्णजं वा ॥
 आदित्यमण्डकमखण्डमदीनसत्त्वः ।
 कृत्वा द्विजाय विधिवत्प्रतिपादयेद्यो
 नूनं भवत्यमितमण्डलमण्डनोऽसौ ।
 इति भविष्यत्तरोक्त मादित्यमण्डकब्रतम् ।

— ००० —

ब्रह्मीवाच ।

मार्त्तण्ड समर्षो कृष्ण अघान्यां वपिम तेऽनघ ।
 योषमासे सिते पक्षे सप्तम्यां समुपोषितः ॥
 सम्यक् संपूज्य मार्त्तण्डं मार्त्तण्ड इति वै जपन् ।
 पूजयेत्कुतपं भक्त्या अश्रया परयान्वितः ॥

कुतपः सूर्यः ।

पुष्य धूपोपहाराद्यैरुपवासैः समाहितः ।

मार्त्तण्डेति जपनाम पुनस्तद्वतमानसः ॥
 विप्राय दक्षिणां दद्यात् यथाशक्त्या खगध्वज ।
 स्वपन् विबुधः खलितोमार्त्तण्डेति च कीर्त्तयेत् ॥
 पाषण्डिभिर्विकर्मस्त्रैरालापञ्च विवर्जयेत् ।
 गोमूत्रं गोमयं वापि दधिञ्जीरमद्यापि वा ।
 गोदेहतः ससृङ्गतं प्राञ्जियादात्मशुद्धये ।
 द्वितीयेऽङ्गि पुनस्तात स्तत्रैवाभ्यर्चनं रवेः ॥
 तेनैव नाम्ना सन्भूय दत्त्वा विप्राय दक्षिणां ।
 ततो भुञ्जीत गोदेहसमूद्भूतसमन्वितम् ॥
 हवमेवाश्विलान् मासान् उपोष्य प्रयतः शुचिः ।
 दद्याद्वाङ्गिकं विद्वान् प्रतिमासञ्च शक्तिः ।
 पारितेष* पुनर्वर्षे यथा पूर्वं गवाङ्गिकम् ॥
 दत्त्वा परगवे भूयः शृणु यत् फलमश्रुते ।
 स्वर्णशृङ्गः पञ्चगावः षष्ठञ्च वृषभशरः ॥
 प्रतिमासं द्विजातिभ्यो दत्त्वा यत् फलमश्रुते ।
 तदाग्निात्मखिलंसम्बन्धतमेतदुपोषितः ॥
 तच्चत्नीकमवाप्नोति मार्त्तण्डोयञ्च तिष्ठति ।
 श्राण्डिलेयसमः कृष्ण तेजसा नात्र संशयः ॥
 श्राण्डिलेयसमः अग्निसमः ॥

* प्रारब्धेति पुण्यकारे षाडः ।

इति भविष्यपुराणोक्तं मार्तण्डसप्तमीव्रतम् ।

—०००—

बुधिष्ठिर उवाच ।

वासुपीथ्य नरःकामानाम्नीति मनसः प्रियान् ।
तामेकां वद मे देव सप्तमीं पापनाशिनीं ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

भानोर्दिने सिते पञ्चे चतीते श्रीसुराग्रहे ।
पुत्रामधेयनक्षत्रे गृह्णीयात् सप्तमीव्रतं ॥

सत्रीहकाक्षित्तु बवान् सप्त माससुभै
गोधूमसांसमशुभैश्चुनकांक्षपात्रैः ।
अभ्यक्षनाक्षनक्षिसातस चूर्चितानि
वष्टीव्रती परिहरेद्दृष्टनीष्टसिद्धे ॥

देवान् पिढृन् मुनिगवान् सजसाक्षसीभिः

सन्तर्प्य पूज्य गगनाङ्गनक्षसादीपम् ।

बुत्वानसे तिसायवान् बहुमीष्टताप्तान्

भूमौ स्वपेत् हृदि निधाय दिनेशबिम्बं ॥

वानि चबोद्गदिनैरिह वर्जितानि

द्रव्याणि तानि परिहृत्यदिनेः च वष्ट्यां ।

संप्राश्य गृहचक्रकानि च वर्षभिकं

प्राप्नोति भारत पुमान् मनवेष्टितानि ॥

चक्रकग्रहचक्रं विवर्ज्यं ताम्बरोपसचक्रार्थं

मन्त्रादीनां विवर्ज्यं नमनर्षकं ज्ञात् ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं त्रयोदशपदार्थवर्जनसप्तमीव्रतम् ।

—०००—

वसुदेव उवाच ।

नैमित्तिकान् ततोवच्छे यज्ञांचात्र समाहितः ।

सप्तम्यां ग्रहणे चैव संक्रान्तिषु विशेषतः ॥

नैमित्तिकान् ततो वच्छे इत्यनेन श्लोकेन ग्रहणसंक्रान्तिषु साधारण्येन यज्ञप्रतिष्ठा कृता सप्तसप्तमीयज्ञ तावदाह शुक्ल-
पक्षस्येत्यादिना ।

शुक्लपक्षस्य सप्तम्यां हविं भुक्तैकदा दिवा ।

सन्ध्यायाम्य सन्ध्यायां वरुणं प्रणिपत्य च ॥

वरुणोच सूर्यः ।

इन्द्रियाणि तु संयम्य स तं ध्यात्वा स्वपेदुधः ।

दर्भशय्यागतोरात्रौ प्रातःस्नातः सुसंयुतः ।

सर्वं स्वादौ तथेवान्ते पूर्व्वं वह्नयं यजेत् ।

शुद्धयादद्द्रुचस्वन्मिं सूर्याग्निं परिकल्पयै ॥

सूर्याग्निं करणं वच्छे तर्पणं च समासतः ।

अस्त्रेणोद्धारमुत्तिष्ठ्य सावित्राभ्युक्ष्य वानले ॥

अस्त्रेण अस्त्रमन्त्रेण सावित्रा सूर्यगायत्रा ।

एतच्च सर्वं निष्ठुभाः सप्तम्यामेवाभिहितं वेदितव्यम् ॥

प्रक्षिप्यास्तीर्थं दर्भांश्च देशे भूमी यथेक्षिते ।

प्रागग्रैरुदगग्रैश्च पात्राण्णालभ्य चक्रवत् ।

यथिचं हिकुशं कृत्वा सायं प्रादेशसञ्चितम् ॥

* निम्बचक्रत्वामेवाभिहितमिति पुरुकालकरे पाठः ।

तेन पाषाणि संप्रोक्ष्य संशोध्य च विलीप्य च ।
 उदग्भागस्थिते पात्रे साम्निनाचोल्लसुक्तेन च ॥
 पर्यम्निकरचं कृत्वा ततश्चोत्पवनं त्रिधा ।
 परिसृज्य स्तुपादींश्चदर्भैः संप्रोक्षितैश्च तैः ॥
 लुडुयात् प्रोक्षिते बज्जौ तत्रार्कं पूर्व्ववत् यजेत् ।
 भूमौ स्थितेन पात्रेण विस्तरेण तु पाणिना ॥
 वामेन यदुशादूर्ल नान्तरिक्षे तु पूयते ।

अन्तरिक्षे त्रिकादौ ।

दक्षिणेन शुचीं गृह्य लुडुयात्प्रावकां बुधः

हृदयेन क्रियाः सर्वाः कर्त्तव्याः पूर्व्वोदिताः ।

हृदयेन हृदयमन्त्रेण ।

अनेन हुत्वा सन्तर्प्य दद्यात् पूर्णाहुतिं ततः ।

वरुणायाद्वरान्माघे समभ्यां वरुणं यजेत् ॥

यथा शक्र्या तु विप्रेभ्यः प्रदद्यात् खण्डवेष्टकान् ।

दद्याच्च दक्षिणां शक्र्या प्राप्यते यागजं फलं ॥

एवञ्च फाल्गुने सूर्य्यं चैत्रे टे वांशुमालिनम् ।

बैशाखे मासि धातारं इन्द्रं ज्येष्ठे यजेद्द्रविम् ॥

आषाढे आवणे मासि भगं भाद्रपदं तथा ।

आश्विने चापि पर्जन्यं त्वष्टारं कार्त्तिकेय जेत् ॥

मार्गशीर्षे तु मित्रश्च पीषे विष्णुं यजेद्यदि ।

सम्बत्सरेण यत् प्रोक्तं फलमिष्टा दिने दिने ॥

तत् सर्व्वं प्राप्नुयात् क्षिप्रं भक्त्या अज्ञासमन्वितः ।

एवं सम्बत्सरे पूर्णं कृत्वा वै काश्चनं रथम् ॥

सप्तभिर्वाजिभिर्वृक्षां नानारत्नोपशोभिताम् ।
 आदित्यप्रतिमां मध्ये शुद्धहेम्ना कृतां शुभाम् ॥
 रत्नैरलंकृतां कृत्वा हेमपद्मोपरिस्थितां ।
 तस्मिन् रथवरे कृत्वा चारुधिं चाग्रतः स्थितम् ॥
 व्रतं हादशभिर्विप्रेः क्षमान्मासाधिपात्मभिः ।
 सर्वंकल्पद्रुमाचार्यं पूजयित्वा रथाग्रतः ॥

मासाधिपाः प्रतिमासोक्ताः सूर्याः ।

अतस्तद्गतिभावितैर्हादशभिर्विप्रे
 र्वृतमाचार्यं पूजयेदित्यर्थः ।
 संचिन्त्यादित्यवत्तं वै वसुरत्नादिनाचयेत् ॥
 एवं मासाधिपान् विप्रान् संपूज्याथ निवेदयेत् ।
 आचार्य्याय रथं चक्रं ग्रामं वासो महीं शुभाम् ॥
 माघान्मासाधिपेभ्यश्च हादशेभ्यो निवेदयेत् ।
 एवं भक्त्या यथा शक्त्या हेमरत्नादिभूषणम् ॥
 दत्त्वा तस्य नमस्कृत्य व्रतं पूर्णं निवेदयेत् ।
 अतज्ज्ञानं न दोषोस्ति व्रतस्य कारणादिह ॥
 एवमस्त्विति विप्रेन्द्रैः सहाचार्यैः पुनः पुनः ।
 वद्वृत्तैराशिषोदत्त्वा प्रवदेत् प्रीयतामिति ॥
 आदित्यो येन कामेन यस्त्वयाराधितो व्रतैः ।
 तुभ्यं ददातु तं कामं संपूर्णं भवतु व्रतम् ॥
 विप्रेभ्यो गुणवद्ग्राह्यं निस्त्रेभ्यश्च विशेषतः ।
 दीनान्द्रुपणेभ्यश्च शक्त्या दत्त्वा च दक्षिणाम् ॥
 ब्राह्मणान् भोजयित्वा तु व्रतमेतत्क्षमापयेत् ।

कृत्वैवं सप्तमीमब्दं राजा भवति धार्मिकः ॥
 पुरुषश्च* भवेद्वाता भास्वस्यातिवह्नभः ।
 शतयोजनं विस्तीर्णं निःसपन्नमकण्टकम् ॥
 त्रिःशतं मण्डलं भुङ्क्ते सायं वर्षशतं सुखी ।
 वित्तहीनोऽपि यो भक्त्या कृत्वा ताम्रमयं रथम् ॥
 दद्यात्† व्रतोपवासञ्च कृत्वा सर्व्वं यथोदितम् ।
 साशीतियोजनं भुङ्क्ते विस्तीर्णं मण्डलं भुवः ॥
 एवं पिष्टमयं योपि वित्तहीनोददेद्रथम् ।
 षाषष्टियोजनं भुङ्क्ते सायं वर्षशतं सुखी ॥
 सूर्य्यलोकञ्च कल्पान्ति सङ्गहेदमवाप्नुयात् ।

इति श्रीभविष्यत्पुराणोक्तं विजयायज्ञसप्तमीः व्रतम् ।

— ००० —

सुमन्तुरुवाच ।

क्षमासत्यं दयादानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ।
 सूर्य्यपूजाग्निहवनं सन्तोष स्तेयवर्जनं ॥
 सर्व्वव्रतैर्धैर्यं वक्तु सामान्येन सदा स्थितिः ।
 गृहीत्वा सप्तमीकल्पं ज्ञानतोयस्तु तामसः ॥
 त्यजेत्कामाद्गयाद्यापि सन्नेयः पतितो बुधैः ।
 सप्तम्यां सोपवासस्तु रात्रौ भुङ्क्ते तु यो नरः ॥
 कृतोपवासः षड्यां तु पञ्चम्यामेककालभुक् ।

* पुरुषः सप्तमेद्राजा कृत्वस्यातीवह्नभ इति पाठान्तरं ।

† दद्याद्ब्रतवसानेन इति पाठान्तरं ।

‡ विजयायज्ञमिति कश्चित् पाठः ।

दत्त्वा तु संस्कृतं श्राकं भक्ष्यभोज्यैः सुसंस्कृतम् ॥
 देवाय ब्राह्मणेभ्यश्च रामो भुञ्जीत वाग्वतः ।
 यावज्जीवं वरः कश्चि व्रतमेतच्चरिष्यति ॥
 तत्र श्रीविजयदेव विवर्गश्च विवर्धते ।
 व्रतः कर्मजवाप्नोति विनागवरमाश्रितः ॥
 सुखशीले स रमते* मन्वतरवङ्गमथ ।
 इह चावत्स काश्यान्ते रिपून् शस्ति समस्ततः ॥
 पुत्रपौत्रैः परिहृतीहातास्त्रात्रियतव्रतः ।
 स भुनक्ति परान् राजन् विग्रहैरजितः परैः ।
 यानि राजशाहूँश्च ब्राह्मणहारेण सप्तमीम् ।
 सप्तमी सप्तं तत्तीर्थं वैश्वं वै गवसंश्रितम् ॥
 कुक्ष्यां तत्र पूर्णैश्च ब्राह्मणहारेण वै तथा ।
 धर्मक्षेत्रं कुरुक्षेत्रं कृतं तेन विवस्वता ॥
 सप्तमी नवमी षष्ठी ष्ठीयापञ्चमी तथा ।
 कामदास्तित्रयोऽज्ञेता व्रतरत्न न योजिताम् ॥
 सप्तमी माघमासस्य नवम्यक्षत्रबुधे तथा ।
 षष्ठी भाद्रपदे धन्या वैशाखे तु ष्ठीयका ॥
 पुष्या भाद्रपदे ज्ञेया पञ्चमी नागपञ्चमी ।
 इत्येताः स्त्रेषु मासेषु विधिषास्तित्रयः शुभाः ॥
 श्राकं सुसंस्कृतं कृत्वा भक्ष्यभोज्यसमन्वितम् ।
 दत्त्वा विप्रे यथाशक्त्वापचाब्रुक्ते निशि व्रती ॥
 कार्त्तिके शुक्लपक्षस्य याज्ञीयं कुरुनन्दन ।

* मन्वतारव्रतानां चेति पुण्यकारे पाठः ।

चतुर्भिरपि मासैस्तु पारशं प्रथमं कृतम् ॥
अगस्तिकुष्ठमैवाप पूजा कार्या विभावसीः ।

विभावसीरिति सूर्यस्य ।

विसेपनं कुष्ठमत्र भूयैवैवापराजितः ।
ज्ञानं तु पञ्चगव्येन तदेव प्राग्ब्रूयथा ।
नैवेद्यं पात्रसं वाच पूजा कार्या विभावसीः ॥
तदेव देवं विप्राणां शाकं भक्ष्यमद्याजनः ।
शुभशक्तमाहुस्तं भक्ष्यपेवसमन्वितम् ॥

शुभं शाकः अनिषिद्धशाकः ।

द्वितीयपारशे राजन् शुभगन्धानि यानि वै ।
पुण्याणि तानि देवस्य तद्यान्ते तत्र चन्दनं ॥
अगुहवापि भूषोऽत्र नैवेद्यं गुह्यपूषकाः ।
ज्ञानं कुष्ठोद्देशेनात्र प्राशनं गोमयेन तु ॥
तृतीये कारवीराणि तथा रक्तच चन्दनम् ।
धूपानां गुग्गुलुवाच प्रियोदेवस्य सर्वदा ॥
प्राप्नोद्दं च नैवेद्यं दधिभिन्नं महामते ।
तमेव ब्राह्मणानां तु भक्ष्यसौहृदसमन्वितम् ॥
काशमात्रेण च विभी हुक्तं दत्त्वा विषयस्यः ।
गीरघर्षवस्तन्ने न ज्ञानं चात्र विदुर्बुधाः ॥
तस्मैव प्राशनं धन्यं सर्वपापहरं शुभम् ।
तृतीये पारशस्यान्ते ब्राह्मणानाञ्च भोजनम् ॥
आवस्य पुरावस्य वाचनवापि शक्यते ।
देवस्य पुरतः ज्ञातो ब्राह्मणानां तदग्रतः ॥

ब्राह्मणावाचकाच्छास्त्रं नाम्बवर्णसमुद्रवात् ।

त्रावयेत् ब्राह्मणान् सर्वान् शक्त्या भक्ता प्रपूजयेत् ।

वाचकस्यामले राजन् वाससौ संनिवेदयेत् ॥

वाचके पूजिते देवः सदा तुष्यति भास्करः ।

करवीरं यद्येष्टन्तु तत्रा रक्तञ्च चन्दनम् ॥

यद्येष्टं गुग्गुलं तस्य यद्येष्टञ्चैव भाजनम् ।

यद्येष्टं तु धृतं तस्य यद्येष्टो वाचकः सदा ॥

पारणञ्च यद्येष्टं वै सवितुः कुहनन्दन ।

इत्येषा सप्तमी पुण्या सुपिया गोपतेः सदा ॥

यामुपोष्ये ह पुत्रबोदीर्गत्वेन च युज्यते ।

चीर प्रतिपदि विशेषोऽवगन्तव्य इति

शाकसप्तमीव्रतम्

कार्तिकशुक्लसप्तम्यामारभ्य प्रतिमास कुर्वता पुनर्मास
चतुष्टयम् यावत्शुक्ल सप्तमी तस्यां तस्याञ्च पारणं कार्यम् ।
एकस्मिन् वर्षे वारचयं पारणं भवति एवमेव वर्षान्तरेषु तादृशं
व्रतं यावज्जीवं कर्त्तव्यम् ।

इति भविष्यपुराणोक्तं शाकसप्तमीव्रतम् ।

—ooo@ooo—

नारद उवाच ।

किसुरोगेऽङ्गते क्षत्यमलक्ष्मीः केन हन्यते ।

श्रुतवक्त्राभिषेकादिकार्यं किञ्च विधीयते ॥

शङ्करउवाच ।

पुराकृतानि पापानि फलं तत्र तपोधन ।
 रोगदौर्गत्यरूपेण तद्यैवेष्टवधेन च ॥
 तद्विधाताय वक्ष्यामि तदाकल्याणकारकम् ।
 सममीक्षणं नामव्याधिपीडाविनाशनम् ॥
 बालानां मरणं यत्र क्षीरपाणां च दृश्यते ।
 तद्बृहत्तराणां च यौवनं वापवर्तिनाम् ॥
 शान्तं यत्तत् प्रवक्ष्यामि स्रुतवक्त्राभिषेकतः ।
 एतदेवाद्भुते वेगे चित्तविभ्रमनाशनम् ॥
 भविष्यति महावाहो यदा कल्पस्तपोधन ।
 विवस्त्रतश्च तत्रापि यदा मनुरनुत्तमः ॥
 भविष्यति च तत्रापि पञ्चविंशतिमं यदा ।
 कृतं नाम युगं तत्र हैहयात्म्यवर्द्धनम् ॥
 भविता तु पतिर्वीरः कार्त्तवीर्यैः प्रतापवान् ।
 स समीपमखिलं पालयिष्यति भूतलम् ॥
 बाहवर्षसहस्राणि समसप्तानि नारद ।
 जातमात्रञ्च तस्याश्च यावत् पुत्रशतं तदा ॥
 चवनस्य तु शपेन विनाशमुपयास्यति ।
 सहस्रबाहुय यदा भविता तस्य वै सुतः ॥
 कृतवीर्यैः नमाराध्य सहस्रांशुं दिवाकरम् ॥
 उपवासैर्न तैर्द्विभ्यैः वेदसूक्तैश्च नारद ।
 पुत्रस्य जीवनायासमन्त्रज्ञानमवाप्स्यति ॥
 कृतवीर्यैश्च वै दृष्ट इदं च कतिभास्करः ।

अग्नेषु दुष्टशमनं सदा कल्पवनाशनं ॥
 अलंकेयेन महता पुत्रस्तव नराधिप ॥
 भविष्यति चिरञ्जीवी किञ्चु क्लिष्वनाशनम् ।
 सप्तमीक्षपनं वक्ष्ये सर्वलोकहिताय वै ॥
 जातस्य ज्ञतवत्सायाः सप्तमी मासि नारद ।
 अथवा शुक्लसप्तम्यामित्यर्थं प्रशस्यते ।
 गृह्यताराबलं लब्ध्वा कृत्वा ब्राह्मणवाचनं ॥
 अलंकेयेन महता पुत्रस्तव नराधिप ।
 बालस्य जन्मनक्षत्रं बर्जयेत्तान्तिष्ठिं बुधः ॥
 तद्बृहस्पतिराद्यान्तु कृत्वा तदितरेषु च ।
 गोमयेनोपलिप्तायां भूमावेव तु संस्थितः ॥
 तण्डुलैरक्तशास्त्रैश्चतुरः क्षीरसंयुतं ।
 निर्वपेत् सूर्यं ब्रह्माभ्यां मातृभ्यश्च विशेषतः ॥
 कीर्त्तयेत् सूर्यदेवत्वं सृक्तं पूर्वैः धृताहुतीः ।
 जुष्टयाद्बृहस्पतेन तद्बृहस्पतेः नारद ॥
 हीतव्या समिधश्चात्र तथैवाकपलाशयोः ।
 यवैः कृष्णतिलैर्होमः कर्त्तव्योऽष्टशतं पुनः ॥
 व्याहृतिभिरद्याज्येन तथैवाष्टशतं बुधाः ।
 हुत्वा ज्ञानञ्च कर्त्तव्यं मन्त्रैस्त्रैरेवधीमता ॥
 विप्रैश्च वेदविदुश्च विधिवद्दर्भपाणिना ॥
 स्वापयित्वा तु चतुरः कुम्भान् कीर्णेषु शोभनान् ।
 पञ्च पञ्च पुनर्मध्ये दध्यक्षतविभूषितान् ॥
 स्वापयेद्व्रणं कुम्भं सोरेणैवाभिमन्त्रितम् ।

पूरयेत्तीर्षतीयेन स्वर्णरत्नसमन्वितम् ॥
 सर्वान् सर्व्वीषधियुतान् पञ्चभङ्गजलान्वितान् ।
 पञ्चरत्नफलैर्मुक्तं वासोभिः परिवेष्टितान् ॥
 गजाश्वरथ्यावलीकसङ्गमन्नजगुक्तम् ।
 सङ्गत्य सृद्दमानोय सर्व्वेष्वेव विनिक्षिपेत् ॥
 सङ्गत्य एककीकृत्य । चतुर्ष्वपि च कुम्भेषु तीयगर्भेषु मध्वमम् ।
 गृह्णीत्वा ब्राह्मणस्तत्र सौराश्वान्दानुदीरयन् ॥
 नारीभिः सप्तसख्याभिरश्वङ्गाङ्गीभिरत्र च ।
 पूजिताभिर्यथाशक्त्या माख्यवस्त्रादिभूषणैः ॥
 सवस्त्राभिश्च कर्त्तव्यं सृतवत्साभिषेचनं ।
 दीर्घायुक्तवालीयं जीवपुत्रास्त्रियं तथा ॥
 आदित्ययन्द्रमा सार्धं ग्रहनक्षत्रतारकैः ।
 गन्तः सलीकपालो वै ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥
 एतेचान्येच देवोवाः सदा पान्तु कुमारकम् ।
 न शनिर्नात्र राहुश्च नात्र वालग्रहाः क्वचित् ॥
 पीडां कुर्व्वन्तु बालस्य समातुर्जनकस्य च ।
 ततःशुक्लाम्बुवधरा कुमारी पतिसंयुता ।
 त्राम्बकं पूजयेत्स्त्रीणांमाचार्य्यं सह भार्य्यया ॥
 काञ्चनीयां ततः कृत्वा ताम्ब्रपादोपरिष्ठितां ।
 प्रतिमां धर्मराजस्य गुरवे विनिवेदयेत् ॥

धर्मराजस्तु महिषश्यो दक्षिणकरे सम्पुण्डदण्डधरस्तादुपरि-
 खण्डे वामे फलकं अपराध भूम्बवर्णा अष्टीसवत् साःसङ्गता वामे
 भवा तर्दान्तिकाकरे गमयाश्व लेखनीयः ।

पञ्चकारः स्नानभारो चिन्नुतः प्रकसंध्यः ।
 वस्त्रेः काचन रत्नाद्यैर्भेषैः सङ्घतपायसैः ॥
 पूजयेद्ब्राह्मणांस्तत्र विसृष्टाठविबर्जितः ।
 भुक्त्वा च गुरुवाचैवतुष्ट्याम्बु मन्त्रसन्ततिः ॥
 दीर्घायुबलबालीयंयावद्दशमं सुखी ।
 यत्किञ्चिदस्व दुरितंतत् क्षिप्तम्बुडवामुखे ॥
 ब्रह्मारुद्रोवसुः स्नान्दोबिष्णुः शक्ती हुताशनः ।
 रक्षन्तु सर्वं दुष्टेभ्यो वरदाः सन्तु सर्वशः ॥
 एवमाद्यानि चैतानि वदन्तं पूजयेद्भुवि ।
 शक्तिः कपिलां चैव प्रश्लिपत्य विसर्जयेत् ॥
 गुरुश्च पुत्रसहितं प्रथम्य रविशङ्करौ ।
 हुतशेषं समश्रीयादादित्याय नमो स्त्विति ॥
 इदमेवाहुते वेगे दुःस्वप्नेषु च दृश्यते ॥
 कर्तुंर्जन्मदिनर्षश्च हित्वा संपूजयेत्तदा ।
 शास्त्रार्थं शुकुसप्तम्यामेतत् कुर्वन्न सीदति ॥
 पुण्यं विधत्तमायुष्यं सप्तमीस्तवनं रवेः ।
 कथयित्वा द्विजश्रेष्ठ तथैवान्तरधीयत ॥
 सवानेन विधानेन दीर्घायुरभवन्मृप ।
 संवत्सरप्रसूतीपि ससस्यां पृथिवीमिमाम् ॥
 एतत्ते सर्वमाख्यातं नप्तमीज्ञानमुत्तमम् ।
 सर्वदुष्टोपशमनं बालानां परमं हितम् ॥
 शारीर्यं भास्करादिच्छेदनमिच्छेदुसनात् ।
 शङ्करात् ज्ञानमन्त्रिच्छेद्व्रतिमिच्छेत्सनात् ॥

एतन्महापातकनाशनं स्नात् परंहितम्
 वालविवर्धनञ्च ।
 नृषीति यच्चैव मनश्चचेता
 स्तस्यापि सिद्धिं तुनवो वदन्ति ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं सप्तमीव्रतपत्रम् ।

—000—

सनत्कुमारश्चवाच ।

मङ्गल्यं परमिच्छन्ति मङ्गलायतनं हरिम् ।
 अर्चयेद्दिनता देवं सप्तम्यां समुपोषिता ॥
 मण्डलं चतुरस्रञ्च विधायाच्चतसंबुतम् ।
 तस्मिन्नावाहयेद्देवं श्रीशमिन्द्रिरया सह ॥
 पङ्कजैर्जातिकुसुमैर्नन्द्यावत्तं प्रसूनकैः ।
 एकपत्रैर्विस्वदलैर्दूर्ध्वार्तण्डुलकोसरैः ॥
 मधुरैः फलमूलैश्च पायसेन समर्चयेत् ।
 मृगमयं राजतन्तान्नं सौवर्णञ्च चतुष्टयम् ॥
 पात्रमन्नमसिद्धिं द्रोणपूर्णञ्च कारयेत् ।
 चतुरः कलशांस्तत्र मृगमयांश्च विचक्षणः ॥
 चतुःप्रस्थप्रमाणेन सहितान् वस्त्रसंबुतान् ।
 लवणञ्च तिलञ्चैव हरिद्राचूर्णधान्यकैः ॥
 मृत्पिष्टा राजतेष्वैवं शान्तिकुम्भे निधापयेत् ।
 सर्पिषा मधुना हृष्टा पयसा च प्रपूरितान् ॥
 स्थापयेत् कलशानये पात्राश्चपि महामतिः ।

● मङ्गल उवाचेति कथितं पुस्तके पाठः ।

योषितः पूजयेदष्टौ सपुत्राः पतिदेवताः ॥
 सर्वमङ्गलसंयुक्ताः सर्वाभरणभूषिताः ।
 ताभ्योदद्यात्तथायोगं मङ्गलार्थं विश्वस्य ॥
 तास्ततः पूजयेत्तासां दक्षिणां च प्रदापयेत् ।
 ततश्च सन्निधौ तासां प्रार्थयन्ते त्रिवःपतिम् ॥
 माङ्गल्यं परमन्देहि मङ्गलायतने नमः ।
 इन्दिराकान्तनवने श्रीकान्तनयनप्रिये ॥
 श्रीपते श्रीसताज्ञेप्रियचातुर्भुजइये ।
 माङ्गल्यं परमन्देहि मङ्गलावतलोचने ॥
 अथ ताभिश्च वनिता योषिभिः कृतमङ्गला ।
 अमुन्नाम्य हरिः पूजां समाप्य च विदुष्य ताः ॥
 आचार्य्यो दक्षिणां दद्यात् ब्राह्मणेभ्यो धनस्य य ।
 सङ्कल्प्यादौ विधिस्तथाः सुतो वा जनको पि वा ॥
 कुर्वीत स्वपुरे वा वै गुरुर्वा नृपतिः क्षत्रित् ।
 कार्य्यः पूजाविधिरयं मन्त्रेणाष्टाशरेण तु ॥
 अष्टम्याश्च ततः कुर्यात् पूर्व्ववद्देवपूजनम् ।
 अष्टाभिः सह योषिभिः कुर्यात्कन्देण पारणम् ॥
 उपवासश्च कर्त्तव्यः पतिना च सुखार्थिना ।
 अष्टम्यां पारणं कुर्याद्द्याद्ब्राह्मणभोजनम् ॥
 आचार्य्ये दक्षिणां दद्याद्भूतस्यैव समापयेत् ।
 इतश्चारीग्यजननमायुः पुष्टिः सुखावहम् ॥
 माङ्गल्यप्रभवः स्त्रीणां पुत्रपोषप्रदन्तथा ।
 सुतार्थिनी सुतन्विन्दे दायुषापि तदर्थिनी ॥

माङ्गल्यं परमिच्छन्ती व्रतेनानेन चाप्रयात् ।
 पुमानपि यशः कीर्त्तिं बलमायुश्च विन्दति ॥
 राज्ञामायुर्हिजाग्रयाश्च विद्याश्च विपुलामपि ।
 वैश्यानां विपुलां लक्ष्मीं शूद्राणाञ्च सुखश्रवित् ॥
 व्रतमेतत्सदाकार्यमाल्लनो जयमिच्छता ।
 युष्मानि चेहमानानामादौ कार्यमिदं व्रतम् ॥
 कन्यकापि पतिं विन्देत् कुर्वन्ती व्रतमुत्तमम् ।
 एवमेव परंप्रोक्तं सप्तमीव्रतमुत्तमम् ।
 सर्वंपुण्यप्रदं नृणां सर्व्वपुष्टिप्रदं भुवि ॥

इति गरुडपुराणोक्तं मङ्गल्यं*व्रतम् ।

अथ चर्य्यव्रतम् ।

— ००० —

मार्कण्डेय उवाच ।

चैत्रे शुक्लस्य पक्षे तु सम्यक् षष्ठ्यामुपोषितः ।
 सप्तम्यामर्चनं कुर्याद्देवदेवस्य भूपते ॥
 वह्निःस्नानं नरः कृत्वा गोमयेनीपलेपितः ।
 लेपयेत्स्थण्डिलं सम्यक् ततो गौरसृदा नृप ॥
 तत्राष्टदलकमलं वर्णकैस्तु, समं लिखेत् ।
 कार्णिकायां न्यसेत्तत्र देवदेवं विभावसुं ॥
 पूर्वपक्षे न्यसेद्देवीं राजन् द्रव्यानुचारकौ ।

● मङ्गल्यं व्रतमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† पूर्व पक्षे न्यसेद्देवीं द्यौराजन्, पुराजकौ इति पाठान्तरं ।

शाम्ने ये च न्यसेत्पत्रे गन्धर्वीं ऋतुकारकी ॥

दक्षिणे च न्यसेत्पत्रे तथैवाङ्गारकी शुभौ ।

नैर्ऋत्ये हो महाराज पश्चिनेर्ऋतकी न्यसेत् ॥

काद्रवेयौ महाभागौ पश्चिमे ऋतुचारिकौ ।

वायव्ये यातुधानी हो तथैव ऋपसप्तम ॥

उत्तरे च तथा पत्रे विन्ध्यसेच ऋषिद्वयं ।

ईशान्यां विन्ध्यसेत्पत्रे ब्रह्मेकं द्विजोत्तम ॥

एते च देवादयोयसन्तादिऋतुक्रमेण दर्शिताः ।

यस्मिन् यस्मिन्नृतौ ब्रह्मन् अनुयान्ति रविं प्रभुं ।

ये ये देवप्रभृतयस्तन्मे त्वं वक्तुमर्हसि ।

मार्कण्डेय उवाच ।

धातार्थ्यम्न च राजेन्द्र वसन्ते देवताद्वयं ।

भौ तुम्बुर्नारदश्चैव गन्धर्वीं गायताम्बरी ॥

ऋतुवेलाशराश्चैव तथा यापुष्पिकस्रला ।

ह्रीदप्रहोदश्च तथा रघोशामषिपुङ्गवो ॥

उरगोवासुकिश्चैव तथैव ऋषिसप्तमो ।

अनुयाति सितश्चैव शीशदेवो वसन्तिको ॥

ऋषिरत्रिर्वसिष्ठश्च तथा ह्रीदक्षतप्तको ।

मिनका सहजान्या च गन्धर्वीं च इहा वृष्टः ॥

रथचलश्च शामश्वीरथक्षत्रश्च तानुभौ ।

पोरुषादीवधश्चैव यातुधानीश्च तो ऋतौ ॥

अनुयाति कुजश्चैव निदाघे च तथा ब्रह्मः ।

येनुयान्ति रविं देवं प्राहृट्काले निबोध मे ॥

इन्द्रश्चैव विदस्तांश्च अङ्गिरा भृगुरेव च ।
 एलापचक्षुषासर्पः शङ्खपालश्च पन्नगः ॥
 ऋषिः सेनीष्वेनश्च व्रतश्चैवारुषिः सह ।
 प्रल्होचन्यप्सराश्चैव निष्क्रीचन्तीह ते उभे ॥
 यातुधानस्ताथा सर्पोऽप्यत्रश्च मनुजेश्वर ।
 प्राहृष्ट् काले तु यात्येनं ग्रहीदेवपुरीहितः ॥
 अतःपरं निबोध त्वं शरत्काले नराधिप ।
 पर्जन्यश्चैव पूषा च भरद्वाजश्च गौतमः ॥
 चित्रसेनश्च गन्धर्वस्तथा च सुकविः सह ।
 विष्वासी च हृताची च तथा देवाप्सरोहयं ॥
 नागस्यैरावतश्चैव विन्दुतश्च धनञ्जयः ।
 सेनजिश्च सुषेणश्च राक्षसी भूम विक्रमी ॥
 घातो ह्यी तो च तथा यातुधानी महाबली ।
 ग्रहः शनैश्चरश्चैव अनुयाति दिवाकरं ॥
 अतःपरं प्रवक्ष्यामि हेमन्ते तव पार्थिव ।
 अंशोभगश्च द्वाविती कश्यपश्च क्रतुः सह ॥
 भुजङ्गश्च महापन्नः सर्पः कर्कोटकस्ताथा ।
 चित्रसेनश्च गन्धर्वं जर्णायुश्च महाबलः ॥
 अप्सराः पूर्व्ववित्तिश्च गन्धर्व्वा उर्व्वशीवशाः ।
 तार्क्ष्यचारिष्टनेमिश्च राक्षसी भीमविक्रसी ॥
 विस्फूर्जतस्ताश्चैवाधोयातुधानी महाबली ।
 अनुयाति बुधश्चैव ग्रहीराजन् दिवाकरम् ॥
 अतःपरं च धर्मज्ञ मिश्रिरे गदतः ऋषु ।

त्वष्टा विष्णुर्जमदग्निर्विश्वामित्रस्तथैव च ॥
 काद्रवेयो तथा नागो कम्बलचतुरावुभौ ।
 तिलोत्तमाप्सराश्चैव देवो रश्मा मनोरमा ॥
 ग्रामणीरतिजाश्चैव सत्यजिह्व महायथाः ।
 ब्रह्मीपेतश्च वैरक्तोयज्ञीपेतस्तथैव च ॥
 गन्धर्वीधृतराष्ट्रश्च सूर्यवर्चास्तथापरः ।
 चन्द्रमा यद्द्वराजश्च प्रनुयाति दिवाकरं ॥
 सूर्यमाध्याययन्त्येते तेजसातेजसत्तमम् ।
 एवं हि विशिरे राजसुयानं प्रकुर्वन्ते ॥
 स्थानानिमानिनोद्धेते सप्तदादशका गणाः ।
 गणषट्कस्तथैवैकमनुयाति दिवाकरम् ॥
 सूर्यमारोपयन्तेजसोऽजसातिजसत्तमम् ।
 तथैतेस्तैर्ब्रह्मिणश्च कुर्वन्ति ऋषयस्तथं ॥
 गन्धर्वाप्सरसश्चैव सुगीताश्चैतपासते ।
 विद्याग्रामचिनश्चैव कुर्वन्त्यत्राभियुक्तम् ॥
 सर्पाविहन्ते वैसूर्यं यातुधानानुयान्ति च ।
 परिचाराग्रहाश्चैव नयन्त्य यथाविधि ॥
 एतेषामिव देवानां यथाह्यायां तथा तपः ।
 यथायोगं यथा धर्मं यथासत्त्वं यथावसन् ॥
 यथासत्त्वमसौसूर्यस्येषां सिद्धिस्तु तेजसा ।
 भूतानामशुभं कर्म विनाशयति तेजसा ॥
 योज्जेहिभि च वर्जास्तु विसृष्टमानी
 धर्मं हिमश्च वर्धं च निग्राहिनश्च ।

गच्छत्यसाहृतवशात्परिचर्तुमस्मिन्
 देवान् पितॄंश्च मनुजांश्च नतर्पयन्ति ॥
 तेषां सम्पूजनं कार्यं गन्धमात्रानुलोपनैः ।
 धूपदीपैः सनैवेद्यैः पृथक् पृथगरिन्दम ॥
 एवं संपूजनं कृत्वा सर्वेषां तदनन्तरम् ।
 हृतेन हीमं कुर्वीत सूर्यस्याष्टशतेन तु ॥
 अन्येषाञ्च तथा दद्यादष्टावष्टौ नरोत्तम ।
 अन्येषां कमलाविन्ध्यस्य देवानां अष्टावष्टौ षाडृतय इति शेषः ॥
 नास्मा तथैव सर्वेषां भेदैकं भोजयेद्द्विजं ।
 शक्या च दक्षिणां दद्यात्तेषामिव यदूत्तम ॥
 एवं संवत्सरं कृत्वा व्रतमेतन्नरोत्तम ।
 पौराणिकाय विप्राय व्रतस्यान्ते पयस्विनीं ॥
 विधिवच्च ततो दद्यात्सुवर्णं यदूत्तम ।
 सर्वकामप्रदं ह्येतत् व्रतमुक्तं स्वयम्भुवा ॥
 व्रतेनानेन चीर्येन सूर्यलोकमवाप्नुयात् ।
 अथ द्वादशवर्षाणि करोत्येनं महाव्रतम् ॥
 भित्वा कर्मण्डलं राजन् विष्णोः सायुज्यतां व्रजेत् ।
 एतद्व्रतं पापविनाशकारि
 धन्यं यशस्यं रिपुनाशकारि ।
 लोके तथास्त्रिंशदपरे च राजन्
 स्वर्गं तथा मोक्षकारं तथैव ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सूर्यव्रतम् ।

अथ मरुद्गतम् ।

—000—

मार्कण्डेय उवाच ।

चैत्रस्य शुक्लपक्षे तु सम्यक् षष्ठ्यामुपोषितः ।

सप्तम्यामर्चनं कुर्याद्दतूनां तत्र तत्र च ॥

तत्र श्रेणीगतं सप्तमण्डलं नृप कारयेत् ।

श्रेणी तथा कार्यसमा सप्तमण्डलकान्विता ॥

श्रेणीसप्तकम्बिधाय ततश्चैकस्यां श्रेण्यामण्डलसप्तकद्वय्यादित्यर्थः ।

गन्धैर्मण्डलकं कार्यं नामचिह्नं पृथक् पृथक् ॥

एकज्योतिश्द्विज्योतिस्त्रिज्योतिश्च महाबलः ।

एकद्वित्रि चतुः पञ्च क्रमेणैव तथा नृप ॥

विन्यसेत् प्रथमश्रेण्यां यथोक्तं नृपसत्तम ।

क्रमेणेति एकज्योतिःप्रभृति सप्तज्योतिपर्यन्तं सप्त नामानि
विन्यसेदित्यर्थः ॥

ईदृक् सदृक् वचोन्यादृक् ततः प्रतिसदृक् तथा ।

मितश्च संमितिश्चैव अमितश्च महाबलः ॥

द्वितीयायामथ श्रेण्यां क्रमेणेनैव च विन्यसेत् ।

ह्यतजित्सत्यजिश्चैव सुखेनःसेनजित्तथा ॥

श्रुतमितोनुमितश्च पुरुजिश्च तथैव च ।

तृतीयायां तथा श्रेण्यां देवानेतांश्च विन्यसेत् ॥

नृत्तश्च नृत्तवाद्दश्च विदग्धशरणो ध्रुवः ।

सत्योधाता वै चतुर्थ्यां श्रेण्यां च पार्थिवं न्यसेत् ॥

इदृक्ष्य सटृक्ष्य एतादृगमिताशनः ।
 क्रीडितः समहृक्ष्य सरभश्च महायथाः ॥
 विन्यसेत्पञ्चमश्रेण्यां सप्त देवाकराधिप ।
 धर्तादुर्व्योधिनिर्भीमो अनियुक्तः क्षयः सह ॥
 षष्ठ्याञ्च विन्यसेत् श्रेण्यां सप्तदेवान् यथाक्रमं ।
 *धृतिर्वपुरनाष्ट्यो वासः कामो जयो विराट् ॥
 सप्तम्याञ्च तथा श्रेण्यां विन्यसेत् सप्त पार्थिव ।
 प्रथमा तु भवेत् श्रेणी युक्तापार्थिवसप्तमी ॥
 द्वितीया पद्मपत्राभा तृतीया बधिरोपमा ।
 पीतवर्णा चतुर्थी स्यात् पञ्चमी शुकसन्निभा ॥
 आकाशसन्निभा षष्ठी कृष्णवर्णा च सप्तमी ।
 मात्यानुलेपनं देयं तासां वर्षसमं द्विज ॥
 एकीनास्तत्र दातव्या दीपाः† पञ्चाशदेव तु ।
 पृथक् पृथक् देवतानां नैवेद्यादि निवेदयेत् ॥
 छतश्च जुहुयादङ्गो नामभिश्च पृथक् पृथक् ।
 भोजयेत् ब्राह्मणांश्चात्र सुरसिद्धसमन्वितान् ॥
 संवत्सरमिदं कृत्वा व्रतं पुरुषसत्तम ।
 सुवर्णमहतं वासी गाञ्च दद्यात् पयस्विनीं ॥
 पौराणिकाय विप्राय व्रतान्ते विनिवेदयेत् ।
 व्रतस्यास्य तु राजेन्द्र सम्यक् विप्रो विधानवित् ॥
 आरोग्यकामः कुर्वीत व्रतमेतन्नरोत्तम ।

* धृतिर्दोऽत्ररनाष्ट्यो इति पुस्तकान्तरे प्राकः ।

† पञ्चदशैवैतानि पुस्तकान्तरे ।

पुत्रकामार्थकामश्च धनकामोऽपि वा पुनः ॥
 तथा विजयकामश्च व्रतमितत्समाचरेत् ।
 श्रीकामश्च तथा राजन् विद्याकामोऽपि वा पुनः ॥
 सर्व्वकामप्रदं ह्येतत् पवित्रं पापनाशनं ।
 माङ्गल्यं स्वर्गदं प्रीतिं व्रतानामुत्तमं व्रतम् ॥
 व्रतेनानेन चौर्येण चिरं स्वर्गं समनुते ।
 मानुष्यमासाद्य भवेत्स्वर्गभ्रष्टश्चाचिरात् ॥

धनेन रूपेण बलेन युक्तो
 जनाभिरामः प्रमदाप्रियश्च ।
 नोरोगदेहोद्धत शत्रुपक्षो
 वाग्मो तथा शास्त्रधनश्च लोके ॥
 इति विष्णुधर्मोक्तं मरुद्भ्रतम् ।

अथ तुरगसप्तमीव्रतम् ।

—000—

मार्कण्डेय उवाच ।

चैत्रमासस्य सप्तम्यां शुक्लपक्षे नराधिप ।
 गोमयेनोपलिते तु श्रद्धा जुर्व्यासु मण्डलं ॥
 तत्राष्टपत्रं कमलं कर्त्तव्यं वर्षकैः शुभैः ।
 कृतीपवासस्तत्राप्ये भास्करं पूजयेन्नरः ॥
 अरुणश्चैव पुष्पाकं निकुम्भश्च तथापरं* ॥
 यमुनाश्च यमं कालं द्वितीयममुमेवच ॥

* अरुणश्चैव रत्नाङ्गं निकुम्भापतिरिति पुलकाकारे पाठः ।

शनैश्चरं तथा राक्षीं ह्यायां रेवन्तमेव च ।
 सप्तच्छन्दांसि वर्षश्च याच पिङ्गलमेव च ॥
 केसरे पूजयेद्ग्राम पक्षे उक्ताश्च देवताः ।
 उक्ता देवता धातार्थमेत्याद्याः सूर्यसप्तमीव्रतोक्ताः ।
 दिक्कालपूजनं कार्यं वहिःपन्नस्य पार्थिव ॥
 गन्धमाख्यनमस्कारदीपधूपान्नसम्पदा ।
 व्रते समाप्ते दातव्यं तुरगान् ब्राह्मणाय तु ॥
 प्राप्याश्वमेधस्य फलं यथाव
 ह्योक्तानवाप्याथ पुरन्दरस्य* ।
 उपोथ्य राजन्-सुचिरश्च कालं
 चायोज्यमायाति दिवाकरस्य† ॥

इति विष्णु धर्म्मोत्तरोक्तं तुरगसप्तमीव्रतम् ।

अथ सितसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

मार्कण्डेय उवाच ।

मार्गशीर्षस्य मासस्य शुक्लपक्षे नराधिप ।
 सोपवासस्तु सप्तम्यां कमलैः पूजयेद्भुविम् ॥
 अर्चायां वा ख्यले वापि शुक्लैः पुष्पैर्यथाविधि ।
 चन्दनेन तु शुक्लेन वटकैः पूरणेन च ॥

* चन्दनेन सकारणं परामात्रेण पूरयेति पाठः ।

† चराजंति पुष्पकान्तरं पाठः ।

दद्यात्तान्ते द्विजपुङ्गवाय
 वस्त्रे सुशुक्ले रिपुनाशनेच्छुः ।
 सोभाग्यकामस्तु तथैव राजन्
 प्राप्नोति लोकान् सवितुस्तथान्ते* ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सितसप्तमीव्रतम् ।

अथ उभयसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

मार्कण्डेय उवाच ।

अनेनैव विधानेन प्रतिमासन्तु योनरः ।
 सप्तमीद्वितयं कुर्याद्यावत् सम्बत्सरं भवेत् ॥
 सोऽस्त्रमेधमवाप्नोति सूर्यलोकं च गच्छति ।
 कुलमुद्धरते राजन् सर्वान् कामानुपाश्रुते ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं उभयसप्तमीव्रतम् ।

अथ सूर्यव्रतम् ।

— ००० —

मार्कण्डेय उवाच ।

शिरसीवपनं कृत्वा योऽर्चयेत् दिवाकरम् ।
 तपनस्तोत्रमायाति वङ्गिष्टोमञ्च विन्दति ॥
 अपूपैः सगुहैर्भक्त्या तथा लवणपाचितैः ।
 सहिरण्यैः समभ्यर्च्य वङ्गिष्टोमफलं लभेत् ॥

* वास्तुविनयसंज्ञा नरक, वस्त्रं द्विज पुङ्गवान्ते वाड ।

सूर्याङ्गि यस्तु नक्ताशी संपूजयति भास्करम् ।
इष्टान् कामानवाप्नोति सूर्यलोकश्च गच्छति ॥

यथा यथा पूजयन्तस्तु सूर्यं
कामाः समद्याः सफला भवन्ति ।
आरोग्यमग्रश्च तथा नृवीर
मृतस्य लीकाः सवितुस्तथैव ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सूर्यव्रतम् ।

अथ मुक्तिदारव्रतम् ।

—०००—

शान्भवल्का उवाच ।

मुक्तिदारं यद्व्रतं मे तथोक्तं
दुःकर्म्मघ्नं रोगसंघांश्च हन्तुः ।
अक्षीणाख्यं मोक्षदं कर्म यत्स्या
त्तन्मे ब्रूहि त्वं सुरेश प्रसादात् ॥

सप्तद्वीपेषु यत् प्रोक्तं ब्रह्महत्याद्यघापहं ।
सर्वकर्मक्षयकरं सर्वकामैकधर्मवित् ॥
मुक्तिदारमिति प्रोक्तं देवानां तुष्टिदं तथा ।

भगवानुवाच ।

अश्वमेधादियज्ञानां लक्ष्मीटार्बुदैरपि ।
तत् फलं लभ्यते पुंसां मुक्तिदारव्रतेन यत् ॥
योगमार्गमनभ्यस्य यद्येष्टाचारवानपि ।
अथ युक्तोऽतश्चापि व्रतेनानेन मुच्यते ॥

गोब्राह्मणस्वामिवधे महार्णवे
 त्यस्त्वा शरीरस्य भयान्मुने नराः ।
 नारोगिणोयत्* परमार्थचिन्तकाः†
 फलं लभन्ते प्यमुना व्रतादिनाः‡ ॥
 मुने त्वमाकर्ष्य यदा न सम्यक्
 विधिं तदीयं तदहं वदामि ।
 यज्ञोपितोयं सततं मया प्राक्
 पुत्रे पि मित्रेपि तथा कलत्रे ॥

सप्तमीं प्राप्य हस्तेन दन्तधावनमाचरेत् ।
 नमोक्त्यायेत्युदीर्याद्य अर्ककाष्ठेन भक्तिमान् ॥
 अथवा पुष्यऋतेण जलेनाद्धानं तथा ।
 हुत्वा पवित्रं देवानां मन्त्रेणार्कसमित्स्थितम् ॥
 रत्नचन्दनपद्मन्तु लिखेन्नोमयवारिणा ।
 प्राङ्गणे षोडशदक्षं सगर्भदक्षकर्षिकम् ॥
 गोमयवारिणासिक्ते प्राङ्गणे रत्नचन्दनेन पद्मं
 प्रलिखेत् सगर्भदक्षकर्षिकाकर्षिकं गर्भं दक्षवतः वक्ष्यमाण-
 देवतावतः ।

तपनादित्यपूषार्थसूर्यमिन्द्रजलेश्वरान् ॥
 भानुश्चारक्ष विष्णुश्च समान्तं च विभक्तान् ।
 सहस्रांशुश्च पूर्व्वदिदिग्दक्षेषु गृहेत् क्रामात् ॥

* नोषोमिणोयं पठतीति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† तथार्ककोषवेदिति क्वचित् पाठः ।

‡ फलं लभन्ते इत्येतादृशादिभिरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

आरो मङ्गलः ।

भानुहंसार्थमत्रप्रविकर्त्तनदिवाकरान् ।
सप्ताश्वसप्तकिरणसमस्तग्रहनायकान् ॥
प्रभाकरं सुविषदं पतङ्गं लोकसाक्षिणम् ।
विवस्वन्निहिरो पूर्वं न्यसेन्नर्भदले यथा ॥
तमोन्नं द्वादशाब्जानं भास्करं लोकचक्षुषम् ।
द्विष्वकस्मान्मजरं परमाब्जानसुत्तमम् ॥
कर्त्तारमज्जतं दन्धं कर्णिकायान्तु षोडश ॥

कर्णिकायां कर्णिकालम्बेषु, परञ्च परमेश्वरम् एवमष्टाचत्वारिंशतीनामलेखनमेवावगन्तव्यं ।

ओं तन्मे नमः सविभेति क्रमाद्वाबाह्वनं नमः ॥
कुर्व्यादधासनं दद्यात् पाद्यार्घ्याचमनीयकम् ।
रक्तगन्धाक्षतान् दद्यात् रक्तपुष्पाणि धूपकं ॥

नमः नमस्कारः ।

दद्यात् सुगन्धपञ्चाङ्गदीपान् रक्ताम्बराणि च ।
अथवा रैत्ये तान्मे वा पात्रे प्रीक्ते सपङ्कजे ॥
रक्तगन्धाक्षतैर्हंसं मणिकुण्डलमण्डितम् ।
षडङ्गुलौघ्रयं स्थूलं पृथुलम्बितमालिनम् ॥
रक्तचन्दनपद्मस्य कर्णिकायां न्यसेद्बुधः ।
हेमं बारिरुहं चात्र वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥

कुर्व्यादिति शेषः ।

अथ हेमेश्चवा तान्मे पात्रे प्रीक्ते सपङ्कजे ।
रक्तगन्धाक्षतान् चिह्ना रक्तपुष्पाणि च द्विज ॥

पद्मरत्नफलेः सार्धमादायाञ्चलिना जलम् ।
 ललाटाञ्चलिमासाद्य जानुभ्यामवर्णौ गतः ॥
 वीच्यमाषीद्दिनकरं दद्यादूर्ध्वान्तु मन्त्रतः ।
 ॐ तुभ्यं नमः सकलकारणकारणाय
 विश्वात्मने तु भवनान्तविवर्जिताय* ।

विश्वेश्वराय सकलामरवन्दिताय
 वेदात्मने तरण्ये भवमोक्षदाय ॥
 नमामि देवासुरमौलिलालितान्
 सुरेश्चूडामणिवानुचुम्बितान् ।
 यदुच्यतेसारजलेश्वरालयान्
 पादोशरस्थे रममानहंसान् ।
 अनन्तशक्तसकलार्थसिद्धिं
 प्रसीद सर्वेश समस्तमव्ययम् ॥
 समपदृष्टे परमेश्वरेश्वर
 प्रयच्छ मे वाञ्छितकार्थं मुक्तिद ।
 उच्चार्यार्च्यं भास्करायाद्य दद्यात्
 धेन्वाज्याद्यं सूर्यतिथ्यर्चयोगौ
 रक्तां धेनुं शोभनोपस्कराठरां ।
 दत्त्वा क्षुर्द्याञ्चोपवासं तद्वि
 ध्यायेत् द्वितीयेपि दिने तु तिथ्य
 चयैर्युतिः स्यात् तदोपवासः,

* भवनधेति क्वचित् पाठः ।

पूर्वं प्रदद्याद्दिवसे द्वितीये
दिनेशभक्तौघ तदा व्रतार्थी ।

यदा द्वितीयेविहितेपि तिथ्या सह ऋक्षयोगमुपैतितदा पूर्वं
पूर्वदिवसे नोपवासोनाथ्यं दानञ्च किन्तु द्वितीयदिने व्रतं सम्ब-
धार्थ्यं दद्यादित्यर्थः ।

दिनेशः सूर्यः ।

उदयव्यापिनीयाद्या कुले तिथिरुपोषणैः ।
निम्बार्को भगवानेषां वाञ्छितार्थफलप्रदः ॥

इति भविष्यत्पुराणवचनात् ।

भोज्यान्ते वरं भुञ्जीत प्राश्याकं कुङ्कुमं भुवि ।
कृते व्रतेऽस्मिन् भवति मुक्तिमार्गान्मुदुर्लभान् ॥
मासि मास्यर्चत्र दानादि कुर्याद्द्विस्तन्वर्जितं ।
सर्वदानं परित्यज्य विशेषः श्रूयतामथ ॥
वर्ज्यं* कर्कन्धुन्यान्श्च यत्रपुष्पफलद्वयं ।
रसमेकैकमेवन्तु हादशार्कान् प्रपूजयेत् ॥
एला† गुग्गुलनागकेसरमुरादीन् द्वादशान् कुङ्कुमं ।
कर्पूरागुरुदेवदारुसरलान् जातीफलं यन्विकं ॥
मांसीचन्दनपत्रकेसजलदान् कम्बोलकस्तूरिकाः
सेरुं हंसरसञ्च बालकमलान्यस्यं मटोरं वचाः ।
यद्यद्देशु परिपूर्णं पुनस्तत्प्रदाय विनियोजयेत् स्वयं ॥

* धूर्जय्येति पुलकान्तरे पाठः ।

† एला गुग्गुलु नामकेसर द्वादशकानिति पुलकान्तरे पाठः ।

केतकीवकुलमल्लिकायुलं जातिपञ्चकुमुदानि यूथिकाः ।

पाटलाकुरुवकातिमुक्तकं कुञ्जकं तगरकर्णिका मुनिः ॥

रक्तपुष्पशतपत्रकदम्बा सिन्दुवारमुच्चकन्दजवाय ।

चम्पकं कुखकीरमशोकं सन्धजेच्चगुडमेषु यथोक्तैः ॥

कुखकीररक्तकुरण्टः, अतिमुक्तको माधवी, कर्णिकाः कर्णिकारः,
मुनिरगस्त्यः ॥

खर्जूरनारङ्गमधुकजम्बु

कवीरमेवाकंकपित्तघविल्वं ।

द्राभाक्तिका दाडिमतिन्दुकानि

भल्लातरामाफलचारुकाणि ।

वृन्ताककालिङ्गकनारिकेलैः

कूष्माण्डवात्रीफलविम्बकञ्च ।।

कर्कन्धुकोशातकमातुलङ्गतृथी

यथाकाल भवानि युग्मतः ।

शालिमाषतिलमुद्गसर्षपा

व्रीहिकंगुचणका स्तथावकी ॥

राजमाष चरकी इवातसी

पुष्टिकामसूरमर्कटान् ।

गोमूतवृन्ताकत्रिपुटञ्चक्षण

शमाकानौवारकूर्णकानि

त्यजेद्यथा सन्धवमेषु धान्ये

श्वर्ध्वं समासाद्य तु युग्मयुग्मम् ॥

(८८)

शीरेक्षुनिर्व्यामयुतश्च चुक्रं
 गुडं तथाज्यं नवमी तु शर्करा ।
 विवर्त्तयेद्द्वैतराजसंयुता
 दधीमथोपायसमित्यनुक्रमात् ॥

मधुरं खवणं तिक्तं कषायं कटुकं तथा ।
 अन्नञ्चैतानिवाश्रीयात् हौ हौ मासौ यथोदयम् ॥
 व्रयोदशं प्राप्य तथा समानं व्रतं तदानीञ्चैव सर्व्वशः ।
 समाप्यदत्त्वा कपिलां विधानतः ।
 प्रसादमाप्नोति तथात्वयं रवेः ॥
 देवराज्य महाराज्य विभोगादिमहत्फलम् ।
 सकामः सर्व्वमाप्नोति निष्कामो मोक्षमक्षयम् ॥
 स्वैसङ्ग्राने यथोद्भूती रजसान्तु यथा भुवि ।
 समुद्रे सिकतानाञ्च धारणा वारिवर्षणं ।
 मुक्तिद्वारस्य ते तद्वत् फलसङ्ग्रा न विद्यते ॥
 इति मत्स्यपुराणोक्तं मुक्तिद्वारसप्तमीव्रतम् ।

अथ भानुव्रतम् ।

— ००० —

पुलस्त्य उवाच ।

सप्तम्यां नक्षभुक् दद्यात्समान्ते गां सकाञ्चनां ।
 सूर्य्यलोकमवाप्नोति भानुव्रतसिद्धं अतम् ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं भानुव्रतम् ।

— ००० —

ब्रह्मीवाच ।

सप्तम्यां पूज्य ऋक्षेयं चित्रभानुं दिवाकरम् ।
 रक्षेद्य गन्धकुसुमैर्महदारोग्यमाप्नुयात् ॥
 मूलमन्त्राः स्वसंज्ञाभिरङ्गमन्त्राद्य क्लीर्त्विताः ।
 पद्मवत् पद्मपत्रस्य यथा शक्ति विधीयते ॥
 पूजाशठेन शठेन कृतापि तु फलप्रदा ।
 आज्यधारा समद्भिद्य दक्षिणीराजमावकैः ॥
 पूर्वोक्तफलदीप्तोमः कृतः शान्तेन चेतसा ।
 शतद्वैश्वानर व्रतं प्रतिपद्यस्वियम् ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं चित्रभानुव्रतम् ।

अथ सौरव्रतम् ।

— ००० —

यद्योपवासी सप्तम्यां समान्ते हेमपङ्कजम् ।
 गावश्च शक्तितोदयाहोमान्ते घटसंयुताः ।
 एतत् सौरव्रतं नाम सूर्यलोकप्रदायकं ॥

इति पद्मपुराणोक्तं सौरव्रतम् ।

अथ धान्यसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

संपूज्य सितसप्तम्यां भानुं धान्यानि सप्तच ।
 ददाति नक्तभुक् गार्ह्यं लवणेन समन्वितम् ॥

गार्हं गृह्योपकरणं ।

भ तारयतिसप्तान्यान् कुल्यानात्मान मेव च ।

एतन्नान्य व्रतं नाम व्रतं धान्यसुखप्रदम् ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं धान्यसप्तमीव्रतम् ।

अथ भास्करव्रतम् ।

— ००० —

कृतीपवासः षडगान् सप्तम्यां यस्तु मानवः ।

करोति विधितः आर्द्धं भास्करः प्रीयतामिति ॥

सर्व्वत्रोगविनिर्म्मक्तः स्वर्गलोकमवाप्नुयात् ॥

इति कालिकापुराणोक्तं भास्करव्रतम् ।

अथ तपोव्रतम् ।

— ००० —

माघे निशाईवासाः स्यात् सप्तम्यां गोप्रदो भवेत् ।

स्वर्गलोकमवाप्नोति तपोव्रतं सिद्धीच्यते ॥

इति पद्मपुराणोक्तं तपोव्रतम् ।

अथार्कसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

अर्कसंपुटसंयुक्तसदृशप्रभृतिं पिबेत् ।

कृत्वा ह्रिः चतुर्विंशं एकैकं क्षिपते पुनः ।

दाभ्यां संवत्सराभ्यां तु समाप्य नियमोभवेत् ॥

सर्वकामप्रदा ह्येषा प्रसीदत्यर्कसप्तमौ ॥

इति ब्रह्मपुराणोक्तं मर्कसप्तमीव्रतम् ।

अथ पुत्रीयसप्तमीव्रतम् ।

— ००० —

पुष्कर उवाच ।

मार्गशीर्षे शुभे मासि शुक्लपक्षे द्विजोत्तम ।

पुत्रीयां सप्तमीं राम ऋह्यौयात् प्रयतः शुचिः ॥

अथवा पुत्रकामञ्च विधिना तेन यत् शृणु ।

पुत्रीयां पुत्रदां ।

हविष्याग्री शिरःस्नानं कृत्वा भास्करपूजनम् ।

अधःशायी द्वितीयेऽङ्गि गोवृषाणोदकेन तु ॥

स्नात्वा च लिप्य च तथा शुभे देशे तु मण्डलम् ।

तत्राष्टपत्रकमलं विन्यसेत् वर्णकैः शुभैः ॥

तस्यैव कर्णिकामध्ये भास्करं चन्दनेन तु !

रत्नेन पूजयेद्देवं गन्धमाल्यानुलेपनैः ॥

भक्ष्यैर्भोज्यैस्तथापेयैर्धूपैर्दीपैश्च भास्करं ।

एवं संपूजनं कृत्वा सर्वकाम प्रदस्यतु ।

नक्तं भुञ्जीत सर्वज्ञ सर्वकामविवर्जितः ॥

दन्तोदूखलकोभूत्वा कृत्वा सम्बत्सरं व्रतम् ।

व्रतावसाने दातव्या शक्त्या ब्राह्मणदक्षिणा ॥

तथा त्रिमपुरप्रार्यं कर्त्तव्यं द्विजभोजनम् ।

अधःशायी निशान्ते च भूय एव तथा भवेत् ॥

पुत्रौयमेतद्गतमुत्तमन्ते

मयोदितं कल्पधनाशकारि ।

आराधनं देववरस्य राम

सर्वामयघ्नञ्च तथैतदुक्तम् ॥

इति विष्णुधर्मोक्तरोक्तं पुत्रीयसप्तमीव्रतम् ।

अथ कामव्रतम् ।

सप्तम्याञ्च तथाभ्यर्च्य सूर्यपत्नीं सुवर्चसाम् ।

इष्टान-कामान् वाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥

इति विष्णुधर्मोक्तं कामव्रतम् ।

अथ शैलव्रतम् ।

इष्टस्य पूजां शैलस्य तदा पूज्य सुखी भवेत् ।

पूजान्तु नाम मन्त्रेण ।

इति विष्णुधर्मोक्तरोक्तं शैलव्रतम् ।

अथ सरिद्धतम् ।

पूजयित्वा सदाभीष्टं सरितं पुष्पभाग्भवेत् ।

इति विष्णुधर्मोक्तरोक्तं सरिद्धतम् ।

अथ वक्त्रव्रतम् ।

वक्त्रसंपूजनं कृत्वा वक्त्रेणोममवाप्नुयात् ।

इति विष्णुधर्मोक्तं वक्त्रव्रतम् ।

अथ वायुव्रतम् ।

वायोः संपूजनं कृत्वा प्राप्नोति परमाङ्गतिम् ।

इति विष्णुधर्मोक्तरोक्तं वायुव्रतम् ।

अथ सप्तर्षिव्रतम् ।

—०००—

संपूज्य च ऋषीन् सप्त सोमसंस्था तया स्मृता ।

सप्त प्राप्नोति ते एव मतिमार्थं च विन्दति ॥

इति विष्णुधर्मोक्तरोक्तं सप्तर्षिव्रतम् ।

अथ मुनिव्रतम् ।

—०*०—

सप्तम्यां मुनिशार्दूल इष्टमभ्यर्चयेन्मुनीन् ।

साध्यायफलमाप्नोति तद्वामफलमश्रुते ॥

इति विष्णुधर्मोक्तरोक्तं मुनिव्रतम् ।

अथ अभीष्टसप्तमीव्रतम् ।

—०००११०००—

पूजयित्वा समुद्रांश्च दीपाक्षव तदा नरः ।

पातालान्श्च महाभाग भुव माप्नोत्यभीष्टितम् ॥

इति विष्णुधर्मोक्तरोक्तं अभीष्टसप्तमीव्रतम् ।

अथ सप्तमीलोकव्रतम् ।

—000—

समस्तांकांस्तत्र भूषणं पूजयित्वा सुखी भवेत् ।

तथैव महतीं प्रज्ञां गतिमप्रतिमां भवेत् ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सप्तमीलोकव्रतम् ।

अथ नदीव्रतम् ।

—♦♦♦♦—

सङ्गाः सप्तप्रकाराश्च तथा देवीं सरस्वतीम् ।

समज्ञानान्यवाप्नोति नरः पूजयति क्षुद्रम् ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं नदीव्रतम् ।

अथ सुगतिव्रतम् ।

—000—

सरेन्दूपूजनं कृत्वा गतिमयान्तु वे भवेत् ।

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सुगतिव्रतम् ।

अथ जयन्तव्रतम् ।

—000—

जयन्तं शक्रतनयं पूजयेच्च सुखी भवेत् ।

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं जयन्तव्रतम् ।

अथ विधानद्वादशमप्रमीव्रतम् ।

—♦♦♦♦—

निरुक्तसप्तमीनान्तु शृणु नारद निर्णयम् ।

यः शान्तिमधिगच्छंत स्मरणात् सर्वैकस्त्रिषु ॥

श्रातना सर्वपापानां श्रातनां नमतां विदुः ।
 तत्रोपवासविधिना धातारं य उपासते ॥
 चैत्रमासे तु सप्तम्यामतिरात्रफलं लभेत् ।
 वैशाखमासे सप्तम्यां पर्जन्यं यस्तु पूजयेत् ॥
 चातुर्मासस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोति तत्र वै ।
 विभा विभात्रमोर्द्ध्वा भाशब्दो व्याप्तिदीप्तिषु ॥
 विभा नाम निकृत्तञ्च स्वयमेव विभावसुः ।
 सप्तम्यां ज्यैष्ठ्यासन्तु वरुणं यः समर्चयेत् ॥
 आसीद्यामद्दानान्तु फलं विन्दति मानवः ।
 अमृतार्थं यदा देवा जयशब्देन निर्ययुः ॥
 पूजयन्ति त्रयां देवासुतमस्याश्च तत् स्मृतम् ।
 आषाढमासे सूर्यन्तु सप्तम्यां पूजयेन्नरः ॥
 अश्वमेधमवाप्नोति कुलञ्चैव समुद्धरेत् ।
 सप्तम्यां निर्जिता देवैरसुरा दानवास्तथा ॥
 समाराध्य सुरैः सेन्द्रैः सङ्ग्रामे तारकाभये ।
 चैलैर्क्यं विजयप्राप्ते तस्माद्विजयसप्तमी ॥
 यः पूजयति मां भक्त्या तस्मिन्नहनि मानवः ।
 ज्ञात्वा सप्तम्यगुपसृश्य शुक्रावामाः कृताञ्जलिः ॥
 सदा यज्ञोपवीतीच ब्रह्मचारो जितेन्द्रियः ।
 अक्रोधनो ह्यचपलः स्थिरचित्तः समाहितः ॥
 ध्यायमानं तथा सास्त्रं मत्परः संजितेन्द्रियः ।
 न च रजस्वलाश्चैव सूतिकां नाम न स्पृशेत् ॥
 स्त्रीवृन्दं नाभिभाषेत मुखवन्धञ्च सर्वशः ।

तथा सूत्र पुरीषश्च निष्ठीवश्च न लङ्घयेत् ॥
 मन्त्रपूतेनोदकेन प्राभ्युक्ष्य विधिवत्तदा ।
 सृत्तिकासुपलिम्बेत यजमानो वरार्थिकः ।
 यथाकालोदितैः पुष्पैर्धूपैश्चापि रविप्रियैः ॥
 दीपैर्लाजैर्यवैर्मृत्तैस्त्रिलैःसिद्धार्थकैस्तथा ।
 चन्दनैर्हृद्यगन्धैश्च* मण्डलैर्हृद्यैर्दुधैः ॥
 प्रथमे पिण्डिकास्थाने भूर्लोकश्च प्रकीर्तितः ।
 द्वितीये तु भुवर्लोकः स्वस्तृतीये प्रतिष्ठितः ॥
 सहर्लोकश्चतुर्थे तु जनलोकस्तु पञ्चमे ।
 तपोलोकस्तु षष्ठे सत्यलोकस्तु सप्तमे ॥
 मण्डलं ह्यर्षयेद्यस्तु अद्वाभक्तिसमन्वितः ।
 सप्तलोकावृता देवा भवेयुस्तेन पूजिताः ॥
 उपक्रीडाचाहलाभ्यां योऽर्चयेन्मित्रमण्डलम् ।
 सोऽपि स्वर्गसदैः साह्यं मोदते विगतज्वरः ॥
 शीलाचारदयावन्तोदमश्रीचसमन्विताः ।
 मङ्गलाचारसम्पन्ना वेदशास्त्रार्थचिन्तकाः ॥
 तेभ्योऽवनितले विप्र नद्याम्बा विविधैस्तथा ।
 यजनैरुपहारैश्च वलिपात्रैः सुसंस्कृतैः ॥
 पादसैःकण्ठरैर्भस्त्रैर्भासैश्च विविधैस्तथा ।
 फलमूलैस्तथाश्रेष्ठैः शाकैश्चापि मुनिप्रियैः ॥
 दध्ना पूर्णं पयःपूर्णं गुडपूर्णं तथैवच ।
 लाजापूर्णं च दातव्यं मन्त्रं जप्य पुनः पुनः ॥

* अथमन्त्रं चिति पञ्चकाकरे पाठः ।

सङ्गवे पूजयेद्भक्त्या देवज्ञानं शीलसम्मतान् ।
तैस्तुष्टैस्तुष्यते देवः सर्वान् कामान् ददाति च ॥
तस्य पुण्यफलञ्चैव शृणु क्लीर्त्तयतो मम ।
पुत्रपौत्रैः समृद्धन्ति भनधान्यगवेङ्कैः ॥
अम्ना हिरण्यवासांसि दासोदामथ लभ्यते ।
या नार्थ्यः पूजयिष्यन्ति सप्तम्यां भक्तितोरविं ॥
ता भास्वयुक्ताः श्रीमत्यः सर्वालङ्कारभूषिताः ।
प्रियास्ता हि भविष्यन्ति भर्तृणां स्वजनस्य च ॥
सूर्यलोके च मोदन्ते भर्तृभिः सहिताः सुखं ।
मानुष्यं पुनरागत्य महाधनपरिग्रहे ।
महाकुले हि जायन्ते मङ्गला वै भवन्ति च ॥
प्रीणयेत् प्रयच्छन्ती शुक्ला विजयसप्तमी ।
गार्वाहिरण्यवासांसि मणिमुक्तास्ततो धनं ।
अर्चयेतीपहारैश्च भक्त्या नानाविधैस्तथा ॥
पूर्णकाणि सुरादीनि व्यञ्जनानि मधूनि च ।
शाल्वोदनं तथा मांसं गाकानि विविधानि च ॥
फलानि च यथाकालं दधिक्षीरघृतं मधु ।
यत्किञ्चिद्दीयते दानं सप्तम्यामन्नयं ततः ।
त्रैलोक्यविजयप्राप्तिस्तस्माद्दिजयसप्तमी ॥
सप्तम्यां श्रावणे मासि भास्करं पूजयेन्नरः ।
सर्वपापविनिर्मुक्ता वाजिमेषफलं लभेत् ॥
श्रावणे मासि सप्तम्यां त्वष्टारं पूजयेन्नरः ।
शक्तिप्रोममवाप्नोति विन्दते च महत्प्रियं ॥

तपः सन्तपनं नाम तावतः प्रोक्तवानृषिः ।
 मरौचस्य तु योगेन प्रोक्ता मरौचसप्तमी ।
 फलं तस्याः प्रवक्ष्यामि धन्यं पुण्यं तथापि च ।
 ब्रह्मण्यामादितः कृत्वा पूर्वं देवाः सवासवाः ॥
 यक्ष गभ्र्वेपक्षाश्च महर्षिपन्नगा नगाः ।
 विद्याधराः पिढगणाः संहिताश्चाप्सरोगणैः ।
 उदीक्षन्ते भगवत उदयं भास्करस्य च ।
 चन्दनानां यथा तादृक् काष्ठकूटेर्महोजसः ॥
 हुताशनश्च भगवान् सप्तसप्तर्दिवाकरः ।
 निर्धूमोऽङ्गि समारुह्य सरथेऽरुणसारथिः ।
 समुत्तिष्ठति दीप्तांशुरंशुभिर्भासयन्नभः ॥
 जयशब्देन सहितः पूज्यमानस्तथासुरैः ।
 तथान्तरे वनं यच्च तदादित्यवनं स्मृतं ॥
 शतयोजनविस्तारमायामद्दशशो गुणैः ।
 तत्र ते बहवोवृक्षाः विषयैः पृथुभास्विनः ॥
 तस्माद्वायुः प्रभवति सर्वोविषयसाश्रयः ।
 प्राणिनां धीजयेद्ग्राधिं नित्यं नानाविधाकृतिं ॥
 यथामध्यस्थसत्त्वास्ते षण्णवत्या दिवाकरं ।
 शरणं देवदेवस्य पृथिव्यास्तापशान्तये ॥
 स नाशयति सत्त्वानां रोगं देहसमुद्भवम्* ।
 कुष्ठदद्रूस पिटकौ कण्डुः शिवाणि स्त्रीपदं ॥
 जलीदरं तथा गुल्मं अतिसारश्च विद्वधिं ।

* अथासुराणीति पुस्तकान्तरे पाठः ।

हृद्रोगं पाण्डुरोगञ्च आनाहं सगलग्रहं ॥
 गिरःशूलं पार्श्वशूलं अक्षिशूलं विसूचिकां ।
 आध्याख्यं वातमय्यम्बा सामं वाताख्यमेव च ॥
 क्षयाद्वितीयकाशश्च सान्निपातिकएव च ।
 नित्यं बलक्षर्षं व्याधिं प्रातस्त्रयं यदपाचकं ॥
 एतां-शान्यांश्च सुवह्णं न रोगान्-क्रमप्रणाशकान् ।
 मत्स्यनाशाय इति च आयुर्दीर्घं ददाति च ॥
 आशान्निमेषमात्रेण समतिक्रम्य भास्करः ।
 उदयं गिरिमारुह्य भासयन् सर्व्वतोदिशः ॥
 भगवान् सविषाणैश्च सुहृत्तं तिष्ठते रविः ।
 तस्मिन्नुदतिमात्रे तु शुचिः प्रयतमानसः ॥
 शुक्लपक्षस्य समम्यां व्रतं हादशमासिकं ।
 गृह्णीयान्नियतः ज्ञातः सर्व्वसत्त्वानुवाम्यकः ॥
 पूर्व्वामुखः शुचिर्भूत्वा मिहिराय महात्मने ।
 पुष्योपहारं दत्त्वा तु धूपं दद्यात्तु वेष्टतः ॥
 प्रणत्य देवं जानुभ्यामरिचं प्रक्षिपेन्मुखे ।
 उपसृश्य दिनं सम्यक् रात्रिं वीपवसेत्तरः ॥
 ततः कथं समुत्थाय शुचिः ज्ञातः सुवस्त्रधृक् ।
 प्राङ्मुखः प्रयतो भूत्वा हृदि कृत्वा दिवाकरं ॥
 पूजयेद्ब्रह्ममात्मैश्च धूपेन तु सुगन्धिना ।
 पूर्व्वोक्तेन विधानेन भास्कराय निवेदयेत् ॥
 उपहारैस्तथाभक्त्यैर्व्वसिपात्रैः सुसंस्कृतैः ।
 मन्त्रेण चैव दातव्यं जप्तव्यञ्च पुनः पुनः ॥

मन्त्रः । ॐ नमः सूर्यायेति ।

वर्षमानस्तु मरीचान्येवं मासांस्तु द्वादश ॥
 सप्तमीं शुक्लपक्षस्य यश्चरिष्यति मानवः ।
 तस्य पुण्यफलञ्चैव ऋण कौर्त्तयतोमम ॥
 सुवामा दर्शनीयश्च सुगन्धश्च स्त्रलङ्कृतः ।
 सुविषश्च सरूपश्च भूत्वा सूर्यप्रभो नरः ॥
 इह लोके च दीर्घायुः प्राप्य भोगांश्च पुष्कलान् ।
 पुत्र पीत्रैः परिहृतो दासौदाससमन्वितः ॥
 इतस्ततः स्वर्गलोके महत्सुखमवाप्नुयात् ।
 तस्माच्च पुनरावृत्य कुले महति जायते ॥
 आठ्यश्च बहुपुत्रश्च भोगवांश्च भवेन्नरः ।
 दीक्षितश्चापि पुरुषो भवेन्मासांस्तु द्वादश ॥
 मरीचस्य तु नाम्ना च प्रोक्ता मरीचसप्तमी ।
 यस्तु भाद्रपदे मासि सप्तम्यामिन्द्रमर्चयेत् ॥
 उपोष्य विधिवत्तत्र पौण्डरीकफलं लभेत् ।
 महर्षिभिस्तु भृग्वार्यैर्धर्मैर्लुब्धैस्तपोधनैः ॥
 आदित्यस्वर्चिर्तोयैस्तु शाकमूलपयःफलैः ।
 प्रत्यक्षं दर्शयामास सहस्राक्षस्तु गोपतिः ।
 वरेण ष्ण्डयामास प्रीतोऽस्मीति तपोधनात् ॥

ऋषय ऊचुः ।

अस्माकं वर एवाऽस्तु प्रीतो यदि दिवाकरः ।
 ईर्ष्यां विस्मयात् क्रोधात् तपो न क्षयतां व्रजेत् ॥

एवमस्त्विति तानुक्ता तत्रैवान्तरधीयत ।
 फलैर्यस्मात् सहस्रांशुस्तुष्टोऽस्माकं महाद्युतिः ॥
 फलेन महता युक्ता नामास्याः फलसप्तमी ।
 फलसप्तमी तु याचैव विधिं वक्ष्यामि तच्छृणु ॥
 पूर्वोक्तेन विधानेन उदयन्तं दिवाकरं ।
 ज्ञातः शुचिः शुक्लवासाः प्राञ्जुखः प्रयतः स्थितः ॥
 श्वेतस्त्रजा समायुक्ती भूमौ दत्त्वानुलेपनं ।
 स्त्रग्भिः पुष्पसुगन्धाभिरभ्युष्णाकं निरीक्ष्य च ॥
 जानुभ्यां पतितोभूत्वा वाग्भिः स्तुत्वा दिवाकरं ।
 दत्तोपहारपुष्पैस्तु पुष्पैः सुरभिगन्धिभिः ॥
 धूपं दत्त्वा तु अगुरुं फलानां पुञ्जमग्रतः ।
 यथालाभेन सम्भृत्य भास्कराय निवेदयेत् ॥
 आम्नाम्नातकजम्बूनां विस्वतिन्दुकशाखिनां ।
 परुषकीविदारणां खर्जूराणां तथैव च ॥
 फलानि चैव देयानि ह्यन्नं ज्ञानं विवर्जयेत् ।
 व्रती भुञ्जीत नियतः प्रयतः स्वाहिशेषतः ॥
 एवं द्वादशसामान्यैः फलवह्नीचयो नरः ।
 भवत्यरोगोद्युतिमान् वर्णरूपत्रिधाञ्जितः ॥
 धनधान्य समायुक्तः पुत्रपौत्रपरिव्रतः ।
 भुञ्जेह मानुषान् भोगान् सूर्यलोके महीयते ॥
 तस्मात्तु पुनरावृत्य माहात्म्यं प्रतिपद्यते ।
 बहुयोगिवहुधने कुले महति जायते ॥
 ब्राह्मणः सर्वदेवः स्यात् क्षत्रियो विजयो भवेत् ।

वैश्याऽपि लभते भागान् शूद्रः सुखमवाप्नुयात् ॥
 कृषिं कुर्याद्यादि नरस्त्वभ्यर्च्य फलसप्तमीं ।
 यवान् माषान् कान्त्याश्च शालिगोधूममेव च ॥
 यद्धान्यं वपते क्षेत्रे तत्तद्दुहुफलं भवेत् ।
 वाणिज्यं कुरुते दिग्भ्यस्तथा स्वविषये पुनः ।
 अक्षेत्रेणैव पश्यानि विक्रीणीते सुखं नरः ॥
 लाभो बहुफलं तस्य भवतीह यतः फलं ।
 यदि प्रयुञ्जीत धनं लाभार्थं मानवः क्षचित् ॥
 बहुलाभं भवेत्तस्य यत् प्रयुङ्क्ते तदाप्नुयात् ।
 नारीभिः फलमाप्नोति पुत्रान् दुहितरन्तथा ॥
 एषा ते कथिता तुष्टा फलदा फलसप्तमी ।
 ततश्चाश्वयुजे मासि त्रिवस्त्रान्मुपासते ॥
 भक्ष्यभोज्यान्नपानैश्च फलमूलरसैस्तथा ।
 एतैः सर्वैः समायुक्तं शकटं दापयेद्बुधः ॥
 अतः शकटमित्युक्तं धातुरेषोऽभिपद्यते ।
 अतोन्नमहेते यस्मात् तस्मात् सा तु अनोदना ॥
 वाजपेयमवाप्नोति आसप्तकुलमुद्धरेत् ।
 सर्व्ववौजीषधीः सर्व्वी आपातालागमाश्च याः ॥
 पृथी राजानुरूपेण काले तत्र ददाति वै ।
 पुष्ट्यर्थमीषधीनाश्च नराणां बलहृत्त्रये ॥
 अनोदना च या चैव शृणु तस्यापि निर्णयं ।
 सम्बन्धरं प्रयत्नेन पक्षीषीभी च मानवः ॥
 पूर्व्वीक्तेन विधानेन भास्करं चाश्च येन्नरः ।

उपवासकृताश्चैव तेषां पुण्यफलं शृणु ।
 यज्ञापि परिहर्त्तव्यं तस्मिन्निगदतः शृणु ॥
 मैथुनं मधुमांसञ्च गव्यमञ्जनमेव च ।
 अनृतं कुलसाध्यञ्च परद्रव्यञ्च वर्जयेत् ॥
 सूतकं मृतकञ्चैव वर्जयेच्च रजसलां ।
 हाविषे मासि रक्षेद्यः पितेव स्नसुतान् यथा ॥
 परिपाष्य प्रयत्नेन इह लोके परत्र च ।
 अनेन विधिना येन ये कुर्वन्ति च सप्तमीं ॥
 लभन्ते निखिलान् कामान् पत्नीञ्च प्राप्नुयान्नरः ।
 नद्यादिशत्रुशमनं भोगान् प्राप्नोति पुष्कलान् ॥
 तस्माच्च पुनरावृत्तः कुले महति जायते ।
 रत्नवैदूर्यरुचिरै र्वैष्णवीणाविनोदितैः ॥
 उपगीयमानोऽप्सोरोभिः सुखं वैशाश्वतं लभेत् ।
 दिव्यलक्षणसंयुक्तः सूर्यलोके महीयते ॥
 तस्मिन् तपसि क्षीने च नरः क्षितिमवाप्य च ।
 बहुभोगे बहुधने कुले महति तेजसा ॥
 सूर्यसङ्कासोलोकानां बालचन्द्र इव प्रियः ।
 तेनैवाभ्यासयोगेन त्वभ्यस्यति पुनः पुनः ॥
 योमां मित्रस्य दिवसे यजेहै मित्रतेजसा ।
 उपवासी शुचिर्भूत्वा ह्यभ्यर्चनपरायणः ॥
 ब्राह्मणान् भोजकाश्चैव यथाशक्त्वा च पूजयेत् ।

स तैस्तु तुष्यते देवः सर्वकामप्रदो भवेत् ॥
 ईषितान् लभते कामान् विशेषेण तु मानवः ।
 मिह्विरे त्रिविधं यच्च प्रतिमाव्योममण्डलं ॥
 सर्वाकृति भवेद्गोम चतुःशृङ्गसमन्वितं ।
 चतुरस्रं समं सारं तन्मध्ये व्योममण्डलम् ॥
 उच्छ्रयाद्यन्निभागेन हौ भागौ मध्यतः क्षिपेत् ।
 विस्तारश्च चतुर्भागं चतुःशृङ्गीकृतं शुभम् ॥
 चतुर्दशन्तु ये लोका ब्रह्माण्डस्य च मध्यतः ।
 गमागमे निवर्त्तन्त क्रियाकारणसंश्रयात् ॥
 कल्पितोऽयं यदा मध्ये मेरुलोकनियन्धनः ।
 नाभौवन्धनसम्भूता मेरुलोकान्तरेऽव्ययः ॥
 दिव्यधातुमयश्चित्तः सर्वदेवैरभिष्टुतः ।
 अजे चतुर्दशे दिक्षु कर्णिकेत्यभिष्टुतः ॥
 चतुर्वर्णः ससौवर्णश्चतुर्जातिसमन्वितः ।
 स्थिता तस्याम्बरः सिद्धा मुनिविद्याधरादयः ॥
 शक्रोयमोऽथ वरुणः कुबेरोग्नि पुरःसरः ।
 लोकपालाग्रहानागा स्तारकाद्यान्वदेवताः ॥
 देवपत्न्योमातरश्च त्रिदिव्याद्याः स्मृतास्तथा ।
 आतोद्यमृत्युगीतैस्तु मुदितश्च तथा भवेत् ॥
 स्वयम्भुर्भगवान् मेरुः पूजितो नात्र संशयः ।
 रसान् ददाति यस्माद्दे रसादन्ने नभः स्मृता ॥
 खगेषु दाता सप्रोक्तः पूज्यते ह्यर्थ्यमा ततः ।
 नार्चयिष्यन्ति ये मोहात् मोढोपहतचेतसः ॥

देवतस्तत्र यत्पापं भाग्यतस्तु लभेदिति ।
 तस्यां तिथौ तु यः कश्चिदादित्यार्चनतत्परः ॥
 सर्व्वतीर्थं भवेत् स्नातो गीसहस्रफलं लभेत् ।
 तथा मार्गशिरे मासि मत्तमी कौर्त्तिता शुभा ॥

तस्मिन्नयं याति जगत् समस्तं
 तैलोक्य संरक्षणउद्यतोयः ॥

स्फीतासमस्या वसुधा समया
 मित्रप्रसादाद्भवतेच्छरीगाः ।

पर्यायनाम्ना तु तत्रोपदिष्टा
 सूर्य्यस्य सा सप्तमि पूजनीया ॥
 व्रतोपवासं कुरुते तु कश्चित्
 दारिद्र्यपागं सच्छिनत्तिचाशु ।
 दशाश्वमेधा खलु तेन इष्टा
 विधानतो वै मुनयो वदन्ति ॥

पौषे पूषणमभ्यर्च्य सप्तम्यां नियतेन्द्रियः
 जातिस्मरत्वं लभते नरमेधं न संशयः ।
 पौषे प्रापुः सुपुष्टिं ते पितरो देवमानवाः ।
 पूषि वोत्यादिता घोषित् पुष्टिस्तेन तधीच्यते ॥
 माघमासे तु सप्तम्यां त्रिरात्रं नियतोभवेत् ।
 जपेत् षड्चरं मन्त्रं नाभिमात्रजलान्ततः ।
 जपेच्चाष्टसहस्राणि विष्णोरभिसुखस्थितः ॥

श्रीं नमः सूर्यायेति षड्चरमन्त्रः ।

ईषितान् लभते कामान् सर्व्वान् सम्पादयेद्भविः ।

ईशिता सा समाख्याता लोकानां विष्णुना स्वयम् ॥
 फलं बहुसुवर्णस्य नरः प्राप्नोति सर्वदा ।
 मासे तु द्वादशे यस्तु सप्तम्यां भगमर्चयेत् ॥
 राजसूयमवाप्नोति गच्छेद्दार्कसलोकताम् ।
 फागुने चैव सप्तम्यां सिद्धार्थाः सिद्धसम्पदः ॥
 वरं मे सिद्धवल्लोकसिद्धसङ्कल्पजाः कृताः ।
 जज्ञात् यथोरगः कृत्तिं तिमिरं भास्करो यथा ।
 व्याधिदारिद्र्यपञ्चत्वं तथैव त्यजते नरः ॥

द्वादशसप्तमीषु सूर्यः पूज्यः तद्रूपं आरोग्यं प्रतिपद्यते पूजा
 तु नाम मन्त्रेण ।

एवं द्वादशमासांस्तु चर्चयेत् सततं रविम् ।
 अष्टौ क्रतुसहस्राणि तेन सर्वसदक्षिणाः ॥
 सर्वतीर्थं भवेत् ज्ञातः सर्वदानानि यच्छति ।
 पक्षे पक्षे ह्यूपवसेत् सप्तम्यामर्कं पूजने ॥
 स्त्रीषु वल्लभतां याति वश्याद्यापि भवन्ति वै ।
 राजसूयमवाप्नोति गच्छेद्दार्कसलोकताम् ॥
 मोक्षहारमवाप्नोति भानुवच्चरतेदिवि ।
 विधिदृष्टो रहस्येन नारदेन महर्षिणा ॥

इत्यादित्यपुराणोक्तानि विविधानि द्वादशसप्तमीव्रतानि ।

अथ पुरश्चरणसप्तमीव्रतम् ।

—०%०—

ऋषय ऊचुः ।

पुरश्चरणसंज्ञां तु सप्तमीं वद सूतज ।
विधिना केन कर्त्तव्या कस्मिन् काले उपस्थिते ॥

सूत उवाच ।

अहन्ते कीर्त्तयिष्यामि रोहिताश्वस्य भूपतेः ।
मार्कण्डेयेन पुरा प्रोक्तं पृच्छमानेन भक्तितः ॥
सप्तकल्पस्मरौविप्रो मार्कण्डेयो महासुनिः ।
रोहिताश्वेन पृष्टः स हरिसन्द्रात्मजेन च ॥

रोहिताश्व उवाच ।

अज्ञानात् ज्ञानतो वापि यत् पापं कुरुते नरः ।
उपायश्चास्य नाशाय किञ्चिन्मे वद सन्धुने ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

मानसं वाचिकं चैव कायिकञ्च तृतीयकं ।
त्रिविधं पातकं लोके नराणामिह जायते ॥
पश्चान्तापे कृते तस्य तत्क्षणादेव नश्यति ।
मानसञ्चैव यत् पापं यदुत्तैः संप्रजायते ॥
गुरुणां वचनात्तच्च सर्व्वमेव प्रणश्यति ।

पुरश्चरणकार्यैवं सत्यमेतन्नयोदितं ॥
 नैवेद्यं ब्राह्मणेन्द्राणां तदुक्तं स समाचरेत् ।
 प्रायश्चित्तं यद्योक्तन्तु ततः शुद्धिमवाप्नुयात् ॥
 अथवा पार्थिवो ज्ञात्वा कुरुते तस्य नियहम् ।
 तेन शुद्धिमवाप्नोति यद्यपि स्याच्च किन्चिदपी ॥
 लज्जया ब्राह्मणेन्द्राणां योनं ब्रूते कथञ्चन ।
 न च राजा विजानाति शरीरस्थेन योन्त्रियेत् ॥
 तस्य नियहकर्त्ता च स्वयं वैवस्वतोयमः ।
 तस्मात् पापं प्रयत्नेन कृत्वा पापं विजानता ॥
 प्रायश्चित्तं तु कर्त्तव्यं यद्योक्तं ब्रह्मणोदितं ।
 सर्वेषामिव पापानां विहितानां मुनीश्वर ॥
 किञ्चिद्भूतं समाचक्ष्व दानं वा होममेव वा ।
 पिपासा जायते येन पुरश्चरणसेवनात् ॥
 व्रतानि कुरुते योवै नरः सूक्ष्माणि सर्वतः ।
 प्रायश्चित्तानि सर्वेषां कर्त्तुं शक्तः कथञ्चन ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

अस्ति राजन् व्रतं पुण्यं पुरश्चरणसंज्ञितम् ।
 पुरश्चरणसंज्ञां च सप्तमीं सूर्यवत्सभां ॥
 यथा सर्वात्मना राजन् कायस्थो यमसम्भवः ।
 विचित्रोमार्जयत्यत्र शतं पापस्य लेखनं ॥
 तस्मात् कुरु महाराज यथा बह्वचनं मम ।
 येन वा मुच्यते पापात् सर्वस्मात् कायसम्भवात् ॥

रोहिताश्व उवाच ।

पुरश्चरयसंश्रान्तु सप्तमीं मुनिसत्तम ।
विधिना केन कर्त्तव्या कस्मिन् काले वदस्व मे ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

माघमासे वरे पक्षे मकरस्थे दिवाकरे ।
सप्तम्यां सूर्यवारेण व्रतमेतत् समाचरेत् ॥
पाषण्डैः पण्डितैः सार्हं तस्मिन्नहनि वर्जयेत् ।
भक्षयित्वा नृपश्रेष्ठ प्रभाते दन्तधावनं ॥
मन्त्रेणानेन पश्चाच्च कर्त्तव्यो नियमो नृप ।
पुरश्चरणकृतं पापात् सप्तम्यां दिवसाधिप ॥
उवासां करिव्यामि श्रद्धा त्वं शरणं मम ।
ततोपराह्वयमये स्नात्वा धोताम्बरः शुचिः ॥
प्रतिमां पूजयेद्भक्त्या दिनाधिपमसुद्धवां ।
रक्तैः पुष्पैर्नहावोर पादौ सम्पूजयेत्ततः ॥
पतङ्गाय नमः पादौ मार्त्तण्डाय च जानुनी ।
गुह्यं दिवसनाथाय नाभिं दिवसमूर्त्तये ॥
बाहुषु पद्मदलाभीष्ट शिग्रन्तेजोमयाय च ॥
एवं सम्पूज्य विधिवत् रूपं कर्पूरमादहेत् ।
गुडोदनञ्च नैवेद्यं रक्तवस्त्राभिवेष्टितम् ॥
रक्तसूत्रेण दीपञ्च तथैवारत्रिकं नृप ।
शङ्खे तीर्थं समादाय रक्तचन्दनमिश्रितं ॥
सफलञ्च ततः कृत्वा अर्घ्यं दद्यात्ततः परं ।

दुष्कृतं यत् कृतं किञ्चिदज्ञानात् ज्ञानतोऽपि वा ॥
 प्रायश्चित्ते कृते देव ममार्घ्यं च प्रगृह्यतां ।
 ततः सम्पूजितं विप्रं गन्धधूपानुलेपनैः ॥
 दत्त्वा तु भोजनं तस्मै दक्षिणाञ्च स्वशक्तिः ।
 प्राशनं कायशुद्धार्थं पञ्चगव्यं समाचरेत् ॥
 कृताञ्जलिपुटीभूत्वा समुदीक्ष्य दिवाकरं ।
 दिवाकरं नतश्चैव मन्त्रमेतं समुच्चरेत् ॥
 इदं व्रतं मया देव गृह्येत पुरतस्तव ।
 अविघ्नसिद्धिमायातु प्रसादात्तव भास्कर ॥
 ततस्तु फल्लुगुणे मासि सम्प्राप्ते नृपनन्दन ।
 कुन्देन पूजयेद्देवं तेनैव विधिना ततः ॥
 धूपञ्च गुग्गुलं दद्यात् नैवेद्यं भक्तमेव च ।
 प्राशनं गीमयं प्रोक्तं सर्वपापविशुद्धये ॥
 चैत्रमासे तु सम्प्राप्ते सुरभ्या पूजयेत्तरिं ।
 नैवेद्यं गणकाः प्रोक्तं धूपं खर्जूरसोड्वयं ॥
 कुशीदकञ्च सम्प्राश्य कायशुद्धिमवाप्नुयात् ।
 वैशाखे किंशुकैः पूज्यं यथावच्च समाचरेत् ।
 घृताशनैश्च नैवेद्यं पुरामांसञ्च पूषकं ॥
 दधिप्राशनमेवाथ कर्त्तव्यं कायशोधनं ।
 ज्येष्ठे पाटलया पूजा विधातव्या रवेर्नृप ॥
 धूपञ्च गुग्गुलं चैव रवेः प्रीतिकरं परं ।
 नैवेद्ये सक्तवः प्रोक्ताः प्राशनञ्च घृतं स्मृतम् ॥
 घृतं प्रणाशनकरं कपिलाया विशुद्धये ।

आषाढे मुनिपुष्येषु पूजयेद्भास्करं नृप ॥
 धूपश्चैवागुरुं दद्यात् अङ्गुष्ठा परया नृप ।
 नैवेद्यं चारिका प्रेक्तं प्राशनं मधुनासह ॥
 श्रावणे तु कदम्बेन पूजनं तीक्ष्णदीधितेः ।
 नैवेद्यो मोदकाद्यैव तगरं धूपमाहरेत् ॥
 गोशुद्धोदकमासाद्य सर्वपापाद्दिमुच्यते ।
 जात्या भाद्रपदे पूर्वं शीरं नैवेद्यमाचरेत् ॥
 धूपं नखीसमुद्भूतं प्राशनं शीरमेव च ।
 आश्विने कमलैः पूजा नैवेद्यं घृतपूरिका ॥
 धूपं कुङ्कुमं संप्रोक्तं कर्पूरं प्राशनं स्मृतं ।
 तुलस्या कार्तिके पूजा भास्करस्य प्रकीर्तिता ॥
 नैवेद्यञ्चैव नृष्टान्नं धूपं कौसुम्भकं नृप ।
 प्राशनं चलिचङ्गाख्यं सर्वपापविशोधनं ॥
 भृङ्गराजेन पूजाञ्च सौम्ये मासि समाचरेत् ।
 नैवेद्यं कर्णिका देया धूपं गुडसमुद्भवम् ॥
 कक्कोलप्राशनञ्चैव भास्करस्य प्रतुष्टये ।
 शतपत्रचयैः पूजा पौषे मासि रवेः स्मृता ॥
 सहजं धूपमादिष्टं नैवेद्यं सकुलीयकं ।
 प्राशने पूर्वमुक्तानि सर्वाण्येव समाचरेत् ॥
 समाप्तौ तु ततीदद्यात्पञ्चाङ्गां गृहसम्भवां ।
 ब्राह्मणाय नृपश्रेष्ठ सर्वपापविशुद्धये ॥
 दृष्टमोक्षं ततः कार्यं स्वशक्त्या पार्थिवोत्तम ।
 एवमुत् कुरुते यस्तु सप्तमीं भास्करोद्भवाम् ॥

सर्वपापविनिर्मुक्तो निर्भयत्वञ्च गच्छति ।

ब्राह्मणा जचुः ।

एवं पुरा वै कथिता रोहिताश्वाय धीमते ।

मार्कण्डेयेन महाभाग तस्मात्त्वमपि तां कुरु ॥

इति स्कान्दे नागरखण्डोक्तं पुरश्चरणसप्तमीव्रतम् ।

इति श्रीमहाराजाधिराज-श्रीमहादेवस्य-समस्त-

करणाधीश्वर-सकलविद्याविशारदश्रीहेमाद्रि

विरचिते चतुर्वर्ग-चिन्तामणौ व्रतखण्डे

सप्तमीव्रतानि ।



अथ द्वादशोऽध्यायः ।



अथाष्टमीव्रतानि ।

जगन्नयोमण्डपमण्डयित्री यत्कीर्त्तिवल्लीजनमानसानां ।
निहन्ति सन्तापमशेषशोषा हेमाद्रिराह व्रतमष्टमीषु ॥

तत्र जयन्तीव्रतमुच्यते ।

विष्णुवर्मोत्तरे ।

पुलस्त्य उवाच ।

रोहिण्यस्य यदा लक्ष्णे पक्षेऽष्टम्यां द्विजोत्तम ।
जयन्ती नाम सा प्रोक्ता सर्वपापहरा तिथिः ॥
यद्वाक्ये यच्च कौमारे यौवने वार्द्धके तथा ।
बहुजन्मकृतं पापं हन्ति सोपोषिता तिथिः ॥

वङ्गपुराणे ।

वशिष्ठ उवाच ।

लक्ष्णाष्टम्यां भवेद्दृश्य कलौका रोहिणी तृप ।
जयन्ती नाम सा प्रोक्ता उपोष्या सा प्रयत्नतः ॥
सप्तजन्मकृतं राजन् जगत्यां त्रिविधं नृणाम् ।
तत् चालयति गोविन्दतिथौ तस्मिन् सुभावितः ।
उपवासश्च तत्रोक्तो महापातकनाशनः ॥

जगत्यां जगतीपाल विधिना नात्र संशयः ।
 त्रेतायां हापरेचैव राजन् कृतयुगे पुरा ॥
 रोहिणीसंयुता चयं विद्वद्भिः समुपोषिता ।
 वियोगे पारणं चक्रुर्मुनयो ब्रह्मवादिनः ॥
 सांगीगिके व्रते प्राप्ते यत्रैकोऽपि वियुज्यते ।
 तत्रैव पारणङ्ग्यादेवं वेदविदो विदुः ।
 अतः शृणु महीपाल सम्प्राप्ते तामसे कलौ ।
 जन्मती वासुदेवस्य भविता व्रतमुत्तमम् ॥

जन्मतीहेतौ पञ्चमी ।

भविता भविष्यति ।

आराधितस्तु देवक्या विष्णुः सर्वेश्वरः पुरा ॥
 समायोगे तु रोहिण्या निशीथे राजसत्तम ।
 समजायत गोविन्दो बालरूपयतुर्भुजः ॥
 तं दृष्ट्वा जगतात्राथं प्रणम्य गरुडध्वजम् ।
 देवकी प्राञ्जलिर्भूत्वा इदं वचनमब्रवीत् ॥

देवक्यवाच ।

न वियोगश्च संसोढुं सौहार्दात् पद्मलोचन ।
 तवदृशूपमालोक्य शङ्केह मधुसूदन ॥

वासुदेवउवाच ।

त्वं मां द्रक्ष्यस्यसन्दिग्धं दिनेऽस्मिंश्चैव भामिनि ।
 तवदर्शनमेथाणि बालरूपेण देवकि ॥
 समभौसंयुताटम्यां निशीथे रोहिणी यदि ।

भविता सप्तमी पुण्या यावच्चन्द्रदिवाकरो ॥
 ये त्वां पुष्यादिभिर्देवीं पूजयिष्यन्ति मानवाः ।
 दिनेऽस्मिन्मां महाभागा तवोत्सङ्गे व्यर्वास्थितम् ॥
 दास्यन्ति ये निशीथेऽर्घ्यं रोहिण्या सहिते विधौ ।
 रोहिण्या सहितं चेन्दुं कृत्वा रौप्यमयं बुधः ।
 द्वादशाङ्गुलविस्तारं तत्रार्घ्यं सन्निवेशयेत् ॥
 सुवर्णं कृते पात्रे राजते वा नरोत्तम ।
 सर्वान् कामानवाप्नोति इह लोके परत्र च ॥

शङ्के तीर्थं समादाय सपुष्पफलकाञ्चनम् ॥

जानुमेकं धरां कृत्वा चन्द्रार्घ्यं

निवेद्य लोकानामुपकारकम्

अनवन्वपदं सद्यः पुमान् सङ्कीर्त्तनादपि ।

कृष्णाष्टम्यां मार्गशीर्षे दाम्पत्यं दर्भनिर्मितम् ॥

अनघं वानघीञ्चैव बहुपुत्रैः समन्वितम् ।

स्थापयित्वा शुभे देशे गोमयेनानुलीपिते ॥

स्नात्वा समर्चयेत् पुष्यैः सुगन्धैरानुलीपनैः ।

ऋग्वेदेनोक्तमन्त्रैश्च दण्डकं मनसा स्मरन् ॥

अनघं वासुदेवन्तु पत्नी तस्यास्थिसम्भवा ।

प्रद्युम्नादिपुत्रवर्गं हरिवंशे यद्योदितम् ॥

ॐ अतोदेवा अवन्त्वादि मन्त्राः प्रोक्ता हिजातिषु ।

अतोदेवा अवन्त्वित्यादि बह्वृचप्रसिद्धाः ॥

नमस्कारेण मन्त्रेण स्त्रीशूद्राणां युधिष्ठिर ।

कालोद्भवैः फलैः कन्दैः शृङ्गारैस्तु नवैः शुभैः ॥

शृङ्गारं कलशः ।

विरूढधान्यैर्धूपैश्च दीपैर्गन्धैः सुधूपकैः ।
 ततो द्विजान् भोजयित्वा सुहृत्सम्बन्धिवान्धवान् ॥
 तेषां मध्येषु दृढवागनघव्रतपारगः ।
 भुक्त्वावसाने गृह्णीयात् किञ्चिदेकं महाव्रतम् ।
 इदं जीवन् न हनिष्ये सत्यं सत्यं मयोदितम् ॥
 वर्षमेकं ततः कृत्वा इदं तदनघं स्मृतम् ।
 रात्रौ प्रेक्षशिकं कार्यं नटनर्त्तक गायकैः ॥
 प्रभाते च नवम्याञ्च तीयमध्ये विसर्जयेत् ।
 एवं यः कुरुते पार्थ वर्षे वर्षेऽनघार्चनम् ॥
 भक्त्या परमया युक्तः सएवानघ उच्यते ।
 इह कीर्त्तमवाप्नोष्वैः मृतीयाति हरेः पदम् ॥
 आरोग्यं समजन्मानि पुत्रपौत्रैः समन्वितः ।
 अवाप्याष्टमयोगेन ततः सिद्धिमवाप्नुयान् ॥
 एतामघौघशमनीमनघाष्टमीति ।
 कौन्तेय सम्प्रति मया कथिता ह्यिताय ॥
 कुर्वन्तिनान्य मनसः स्वयमाभिहृद्दो ।
 वृद्धिं प्रयान्ति कृतवीर्य्य सुतानुरुपाम् ।

इति भविष्योत्तरे अनघाष्टमीव्रतं नाम ।

कृष्ण उवाच ।

कृष्णाष्टमीव्रतं पार्थ शृणु पापहरं परम् ।
 धर्मस्य जननं लोके रुद्रप्रीतिकरं परं ॥

मार्गशीर्षेऽथ वैमासि दन्तधावनपूर्वकं ।

उपवासस्य नियमं कुर्वन्नक्तस्य च व्रती ॥

समर्थासमर्थभेदेन व्यवस्थितो विकल्पः ।

अश्वत्थवटोदुम्बरप्लवजम्बूकदम्बकम् ॥

द्राक्षाकौस्तुभकाम्नातकरौरार्जुनजातिजम्* ।

दन्तधावनकं कुर्यात् प्रतिमासं यथा क्रमं ॥

करवीरं कुशपुष्पं मरुकं किंशुकं तथा ।

चन्दनं बिल्वपत्रञ्च पाटलाश्लोमल्लिकां ॥

जाती च शतपत्राणि स्वर्णपुष्पाणि वा क्रमात् ।

चीरीय कशरक्षैव मोदकामण्डकास्तथा ॥

वटकाघारिका पूपादधिभक्तं च पूरिका ।

गुडोदन शर्कराच नैवेद्यानि हृतं तथा ॥

कष्याष्टम्यां वर्षभेकं गुरोरग्रे शिवस्य च ।

ब्रह्मचारो जितक्रोधः शिवजल्पपरायणः ॥

विभागे दिवसस्येह कृत्वा ज्ञानादिकाः क्रियाः ।

गत्वा शिवालयं पार्थं गुरोरग्रे शिवस्य च ॥

ब्रह्मचारौजित क्रोधः शिवार्चन परायणः ।

विभागे दिवसस्येह कृत्वा ज्ञानादिकाः क्रियाः ॥

गत्वा शिवालयं पार्थं पञ्चामृतपुरः सरम ।

अपनं कारयित्वाथ लिङ्गस्य वरवारिणा ॥

चन्दनेनानुलिप्याथ पूजयेत् कुसुमोत्तमैः ।

धूपं वागुहमिन्द्रश्च देवदेवस्य भक्तितः ॥

• ज्ञानादिकाया प्रकाशानेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

शिवसूत्रेण कर्त्तव्यं शिवसूत्रैर्दिजीत्तमैः ।
 मार्गशीर्षे तथा मासि शङ्करेत्यभि पूजयेत् ॥
 गोमयं प्रागगित्वा च स्वपेद्रात्रौ जितेन्द्रियः ।
 प्रतिमासं शिवस्याग्रे होमं कृणातिलैः नृप ॥
 अतिरात्रस्य यज्ञस्य फलमाप्नोति मानवः ॥
 एवं पुष्ये तु सम्पूज्य शशुं नाम महेश्वरम् ।
 कृणाष्टम्यां हृतं प्राश्य वाजपेयफलं लभेत् ॥
 गोमूत्रं प्रागगित्वा च स्वपेद्रूमौ जितेन्द्रियः ।
 माघे महेश्वरं नाम देवदेवस्य पूजयेत् ॥
 गोचीरं निशि सम्प्राश्य गोमेषफलमाप्नुयात् ।
 फाल्गुने च महादेवं सम्पूज्य प्रागयेत्तिलान् ।
 राजसूयस्य यज्ञस्य प्राप्नोत्यविकलं फलं ।
 चैत्रे स्थाणुं समभ्यर्च्य यवान् सन्ध्यास्य भक्तितः ॥
 अश्वमेधस्य यज्ञस्य फलं प्राप्नोत्यसंग्रहं ।
 वैशाखे शिवमभ्यर्च्य प्रागयेच्च कुशोदकम् ॥
 फलमेधात् फलं यज्ञात् भक्तितः प्राप्नुयान्नरः ।
 ज्येष्ठे पशुपतिं पूज्यगवां ऋङ्गीदकं पिबेत् ॥
 गोसहस्रप्रदानस्य फलमाप्नोत्यनुत्तमं ।
 आषाढे चीथनामानं पूजयेद्भक्तितत्परः ॥
 गोमयं प्रागयेद्रात्रौ सौत्रामणिकफलं लभेत् ।
 श्रावणे सर्वनामानं पूजयित्वा जितेन्द्रियः ॥
 प्रागयेदकपत्राय तस्मिन् सर्वेश्वरं यजेत् ।
 बहुस्वर्णस्य यज्ञस्य फलमाप्नोत्यसंग्रहम् ॥

मासि भाद्रपदेऽष्टम्यां त्राम्बकं नाम पूजयेत् ।
 विख्यपत्रं निशि प्राश्य ग्रामदानफलं लभेत् ॥
 आश्विने भवनामानं पूजयेन्नक्तितत्परः ।
 प्राशयेत् तण्डुलजलमग्निहीनफलं लभेत् ॥
 कार्तिके रुद्रनामानं सम्पूज्य प्राशयेद्दपः ।
 चतुर्णामपि वेदानामध्यापनफलं लभेत् ॥
 आपोशानवदश्रीयाद्भवद्द्रव्यं सकृद्भृती ।
 अङ्गुष्ठोपकनिष्ठाभ्यां गृहीत्वा पतितोदकम् ॥
 इत्युक्तैश्च तथैवान्यैः पुष्याद्यैश्च यथाक्रमात् ।
 सम्पूज्य प्रार्थयेद्दीशं मन्त्रेणानेन भक्तिमान् ॥
 विश्वात्मन् सुमहादेव व्रते वास्मिन् त्वयोदितं ।
 दन्तधावननैवेद्य कुसुमप्राशनादिकं ।
 मोहाहा यदि वा लोभासक्तं यदमन्त्रवत् ।
 प्रसादात्तव तच्छ्रेयोः परिपूर्णं महासुने ॥
 मासि मासि यजेदेवं लिङ्गमूर्त्तिं महेश्वरम् ।
 अथचार्चाकृतिं रुद्रं सोमं कुम्भोपरिस्थितं ॥

सोमं उमासहितं ।

रूपनिर्माणन्तु विष्णुधर्मोत्तरे ।
 वामार्धे पार्वती कार्या शिवः कार्य्येषतुर्भुजः ।
 अक्षमासां त्रिशूलश्च तस्य दक्षिणहस्तयोः ॥
 दर्पणेन्दीवरौ कार्थी वामयोर्दुनन्दन ।
 एकवक्त्रीभवेच्छम्भुर्दाता च दयितातनुः ॥
 त्रिनेत्रश्च महादेवः सर्वाभरणभूषितः ।

मन्त्रपूर्वन्तु विधिवत्पूजयेच्छङ्करं व्रतौ ॥
 कृष्णाष्टमीषु सर्वासु शिवभक्तान् यतीन् सदा ।
 भोजयेद्वाङ्मणान् शक्त्या दद्यात्तेभ्यश्च दक्षिणाम् ॥
 व्रतान्ते शङ्करं कृत्वा मौवर्णम्प्रतिमाकृतम् ।

शङ्करं उमासहिममिति शेषः ।

कृष्णाष्टम्यां तथा रात्रौ देवं समधिवासयेत् ॥
 गन्धैः पुष्पैः फलैर्धूपैर्नैवेद्यैर्विविधैः शुभैः ।
 पूजा स्तुतिकथाभिस्तु कारयेच्च महोत्सवम् ॥
 निवेद्येत्तथेशाय शय्यां सोपस्करान्विताम् ।
 वितानं व्यजनं कृत्वा घण्टाभारत्रिकादिकम् ॥
 ततः प्रभातसमये स्नात्वा चाभ्यर्च्य शूलिनम् ।
 कृत्वाभिकार्य्यैर्विप्राय शिवायै तत्समर्पयेत् ।
 वस्त्रालङ्कारसंयुक्तां गाञ्च कृष्णतिलैर्युताम् ।
 प्रीयतां मे शिवो नित्यमित्युक्त्वा विधिवत्ततः ॥
 ततस्तु भोजयेद्दिप्रान् शिवभक्तान् स्वभक्तितः ।
 पायसेनाव्ययुक्तेन दद्यात्तेषाञ्च दक्षिणाम् ॥
 शक्त्या हिरण्यवासांसि शिवध्यानैकमानसः ।
 लिखाप्य शिवशस्त्राणि दद्याच्च शिवतुष्टये* ॥
 सजलाः कृष्णकलशास्तिलैर्भक्ष्यैः समन्विताः ।
 द्वादशाक्षं प्रदातव्यं कृत्रोपानद्द्युगान्वितं ॥
 वाचकाय प्रदातव्या गौः कृष्णा तु पयस्विनी ।
 सोपस्करा तु रुद्रीमे प्रीयतामिति कीर्त्तयेत् ॥

* शिवशस्त्राणीति पुस्तकान्तरे पाठः ।

रुद्राय कृष्णकलशान् लङ्कुकांश्च वितानकम् ।
 ध्वजं किङ्किणिसंयुक्तं कृष्णमेवाथ कल्पयेत् ॥
 एवं यः कुरुते पार्थ व्रतमेतदनुत्तमम् ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते ॥
 इन्द्रायैस्त्रिदशैर्शीर्षं व्रतमेतन्महाफलम् ।
 देवत्वमापुः सर्वे ते व्रतस्यास्य गभावतः ॥

गुणत्वमायुश्च गणाधिराजतां ।

गुणग्रहत्वञ्च तथागुणग्रहः ॥

बहुनात् किमुक्तेन तीषमायाति शङ्करः ।
 कृष्णाष्टमीव्रतेनेह भक्त्याचीर्णेन पाण्डव ॥
 न तथा तपसा दत्तैर्व्रतैस्तीर्थाभिषेचनैः ।
 इत्येतत्ते समाख्यातं पार्थ कृष्णाष्टमीव्रतम् ॥
 यच्छ्रुत्वा सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात् संशयः ॥

कृष्णाष्टमी व्रतमिदं शिवभावितात्मा

सम्प्राप्त्यनैरुदितनामयुतैरुपोथ ।

कृष्णान् ददाति कलशान्* नृप गाञ्च कृष्णां

योऽसौप्रयाति पदमुत्तममिन्दुमौलेः ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं कृष्णाष्टमीव्रतं ।

पुलस्त्यउवाच ।

शृणु दाक्ष भ परं काव्यं व्रतं सन्ततिदं नृणाम् ।
 यस्मिन् शीर्षं न विच्छेदः पितृपिण्डस्य जायते ॥

● सतिशामिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

कृष्णाष्टम्यां चैत्रमासे स्नातो नियतमानसः ।
 कृष्णमभ्यर्च्य पूजाञ्च देवक्यां कुरुते तु यः ॥
 निराहारो जपनाम कृष्णस्य जगतः पतेः ।
 उपविष्टो जपन् स्नातः क्षुतप्रखलितदिग्धु ।
 पूजायाश्चापि कृष्णस्य समवारान् प्रकीर्त्तयेत् ॥
 पाषण्डिनो विकर्षस्थान् नालपेत्रैव नार्त्तिकान् ।
 प्रभाते वाम्बुना स्नातो दद्याद्विप्राय दक्षिणाम् ॥
 भुञ्जीत कृतपूजस्य कृष्णस्यैव जगत्पतेः ।
 वैशाखशुक्लैष्टम्यौषैव पारणं हि त्रिमासिकम् ॥
 उपोष्य देवदेवेशं घृतेन स्नापयेत् हरिं ।
 आषाढे श्रावणे चैव मासि भाद्रपदे तथा ॥
 तथैवाश्वयुजे मासि कृत्वा मासत्रयं तथा ।
 उपोष्य तु द्वितीयं वै पारणं पूर्ववत्तथा ॥
 उपोष्य पूजयेद्देवं* हविषा पारणे गते ।
 पीषमाघे फाल्गुने च नरस्तदुपोषितः ॥
 चतुर्थे पारणे पूर्णे घृतेन स्नापयेत् हरिं ।
 एवं कृतोपवासस्य पुरुषस्य तथा स्त्रियः ॥
 न सन्ततेः परिच्छेदः कदाचिदपि जायते ।
 कृष्णाष्टमीमिमां यस्तु नरोयोषिदद्यापि वा ॥
 उपोष्यति च साङ्गादं त्रिसोप्यां प्राप्य निर्हृतिं ।
 पुत्रपौत्रसमृद्धिं च मृतः स्वर्गं महीयते ॥

* स्नापयेदिति गुणज्ञानकरे पाठः ।

इत्येतत्कथितं दासभ मया कृष्णाष्टमीव्रतं ।
इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं कृष्णाष्टमीव्रतं ।

विष्णुरुवाच ।

कन्यागते सवितरि कृष्णपक्षेऽष्टमी तु या ।
सा च पापहरा पुण्या शिवस्यानन्दवर्धिनी ॥
स्नानं दानं जपोहोमः पितृदेवाभिपूजनम् ।
सर्व्वप्रीतिकरं स्याद्वि व्रतं तस्यां त्रिसोचने ॥
विशेषतः कृतं आद्यं होमश्च विधिवन्मुने ।
तस्मात् आद्यं प्रयत्नेन तस्यां कुर्यात् प्रयत्नतः ॥
एकभक्तान्तु पञ्चम्यां षष्ठ्यां नक्तं त्रिदुर्बुधाः ।
उपवासन्तु सप्तम्यामष्टम्यां पूजयेच्छिवम् ॥
पूजयित्वा शिवं भक्त्या पितुः आद्यन्तु कल्पयेत् ।
कृत्वा तु विधिवच्छ्राद्धं भुञ्जीत पितृदेवितं ॥
यस्त्वस्यां कुरुते आद्यं पूजयित्वा त्रिसोचनं ।
तस्य वर्षाणि तप्ता स्युः पितरोद्दशपञ्च च ।
एवं व्रतमिदं कृत्वा स्वमेकं चैवमाद्रात् ॥

स्वमेकं सम्बत्सरं ।

नामभिः पूजयेद्देवं त्रिपुरान्तकरं परं ।
मासि भाद्रपदे शशुं शङ्करन्तु तथा परे ॥
शिवन्तु कार्तिके मासि सर्व्वं मार्गशिरि तथा ।
पौषे मासि तथैशानसुद्यं माघे प्रकीर्त्तितम् ॥
फाल्गुने तु इनामानं चैत्रे वृद्धं प्रकीर्त्तयेत् ।
वैशाखे नीलकण्ठन्तु ज्येष्ठे नाम भवं परम् ॥

महादेवं तथावाढे आबणं चाम्बकं द्विज ।
 एतानि मासनामानि प्राशनानि निबोध मे ॥
 गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधि सर्पिः कुशोदकम् ।
 गोरोचनां पञ्चगव्यं मन्दरोन्मृत्तिकां तथा^० ॥
 तिलाक्षत्तु तथा क्षीरं प्राशयेत् कायशुद्धये ।
 वस्त्रिपुष्याणि ते वीर देवदेवस्य प्रीतये ॥
 करवीरन्तद्याजातं पिप्पलातिकदम्बकम् ।
 लक्ष्मणकं तथा विस्वं शमीपत्रं कदम्बकर्ण^१ ॥
 मालतीकुसुमं विप्र तथा मुद्गरकस्य च ॥
 कुशपुष्यं तथा पुष्कमगस्तिकुसुमं तथा ।
 सिद्धकं विजयं धूपं महिषाथं च गुग्गुलुम् ॥
 य एवं पूजयेद्देवं शङ्करं त्रिपुरान्तकम् ।
 स्वमेकमेकं विघ्नेन्द्र स याति परमं पदम् ॥
 ब्राह्मणान् पूजयेद्यस्तु वाचकं च विशेषतः ।
 महादेवस्य वै भक्तान् भक्त्या पाशुपतान् द्विजान् ॥
 एवं यः कुरुते आहमष्टम्यामष्टकासु च ।
 पूजयित्वा सुरेशानं शिवविघ्नैर्मनीषिभिः ॥
 तृप्यन्ति पितरस्तस्य वर्षाणि दशपञ्चकम् ।
 दिव्यानि मुनिशार्ङ्गल सप्तसप्त च सप्त च ॥
 य एवं पालयेद्भक्त्या कृष्णाष्टम्यां व्रतं परं ।
 यं यं काममभीष्टेत तं तं प्राप्नोति मानवः ॥

० द्वारोन्मृत्तिका, तथेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† वकनार्थेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

पुत्रकामो लभेत् पुत्रं धनकामो धनानि च ।
 विद्यार्थी लभते विद्यां कन्यार्थी कन्यकां पराम् ॥
 इति भविष्यपुराणोक्तं शिवकृष्णाष्टमीव्रतम् ।
 अथ कृष्णाष्टमीव्रतम् ।

देव्युवाच ।

कृष्णाष्टम्यां विधानं वै निखिलं क्रियते तथा ।
 क्रमिण मे तथा ब्रूहि तत् कर्त्तव्यं सुरेश्वर ॥
 ईश्वर उवाच ।

हेमन्ते त्वय सम्प्राप्ते मासि मार्गशिरे तथा ।
 नक्तं कृत्वा शचिर्भूत्वा गोमूत्रं प्राशयेन्निशि ॥
 नक्तं कृत्वा नक्तकल्पः ।

आहरेद्दाशनं यत्र यथाशक्तं तथाशयेत् ।
 तेन नक्तं समुद्दिष्टं प्राशितेनाशितेनचेति ॥
 तेन नक्तं समुद्दिष्टं प्राशितेनचेति ।
 क्वचित्प्राशितेन क्वचिदप्राशितेनेत्यर्थः ॥

कृष्णाष्टम्यां विधानं वै शङ्करं पूज्य भक्तितः ।
 अतिरात्रस्य यज्ञस्य फलमष्टगुणं भवेत् ॥
 अरेख शङ्करं नाम सायं रात्रौ दिवा यथा ।
 पीप्ते गव्यं घृतं प्राश्य नक्तं कृत्वा तु मानवः ॥
 भक्त्या तु पूजयेच्छम्भुं भावितस्तुतितत्परः ।
 बाजपेयाष्टकं पुष्पं लभते नात्र संशयः ॥
 माघे माङ्गेश्वरं नाम शीरप्राशनमादिशेत् ।

अनाहारः स्वपेद्रात्रौ शङ्करं पूज्य भक्तिः ॥
 नाम जम्बा महेशस्य गोमेधाष्टकमाप्नुयात् ।
 फालगुने तु महादेवं कृशायां परिकीर्त्तयेत् ॥
 तिलान् प्राश्य अनाहारो निशि जम्बा* समाहितः ।
 जपन्नामाद्य देवस्य संस्मरन् शङ्करं तथा ॥
 राजसूयस्य यज्ञस्य फलमष्टगुणं भवेत् ।
 जपन्नामानि† पूर्वञ्च महादेविति कथ्यते ॥
 चैत्रे स्थाणुं समभ्यर्च्य पूजयन् भक्षयन्भु ।
 रात्रौ सम्प्राश्य विधिवदनाहारः स्वपेन्निशि ॥
 स्थाणुं जया महामन्त्रमश्वमेधाष्टकं भवेत् ।
 कुशोदकं वै वैशाखे शिवं देवं प्रपूजयेत् ॥
 मन्त्रं तत्र शिवं जम्बा नरमेधफलं लभेत् ।
 ज्येष्ठे पशुपतिं नाम गवां शृङ्गोदकं पिबेत् ॥
 जम्बा पशुपतिं विप्र गवां कीटिफलं लभेत् ।
 कृष्णाष्टम्यामथाषाढे उग्रं नाम प्रकीर्त्तयेत् ॥
 प्राशयेद्गोमयं तत्र सौत्रामण्यफलं लभेत् ।
 उग्रं जपति योमन्त्रं सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥
 नक्तन्तु प्राशयेदर्घ्यं स्मरन् मन्त्रं सुभावितः ।
 सर्व्वेति यावणे प्रोक्तः सर्व्वकामक्षयं फलम् ।
 चतुर्व्वकन्तु जपेदकं स्मरन् मन्त्रं सुभावितः ॥
 वर्ष्वकीटिशतंसायं रुद्रलोके महीयते ।
 अम्बकश्च जपेद्योवै मासि भाद्रे तथाष्टमी ॥

* उग्रं नि पुण्ड्रकान्तरे पाठः । † नामनपूर्व्वेति पुण्ड्रकान्तरे पाठः ।

प्राग्भवेद्विष्वपव्रन्तु श्रुतिदीक्षाफलं लभेत् ।
 भस्वकं संस्मरेत्तत्र एकचित्तः सुभावितः ॥
 मासि चाश्वयुजे वीर प्राशनं तण्डुलोदकम् ।
 नाम्ना ईशं स्मरेद्देवं पुण्डरीकाष्टकं लभेत् ॥
 रुद्रन्तु कार्तिके मासि दधि प्राश्नं सुभावितः ।
 रात्रौ संस्मरते रुद्रं सर्वपापप्रणाशनम् ॥
 अग्निष्टोमस्य यज्ञस्य फलाष्टकमवाप्नुयात् ।
 मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं न सिध्यति ॥
 मन्त्रेण हि विना देवि यत्नेनापि वृथा भवेत् ।
 तत्सर्वं च प्रयत्नेन मन्त्रमेतमुदीरयेत् ॥
 समाप्ते तु व्रते देवि वर्षान्ते तु महाफलम् ।
 यस्यैव तु प्रसादेन पदं याति निरामयम् ॥

यस्य मन्त्रस्येतिशेषः ।

हेमन्ते शिशिरेचैव तथा शरदि शोभने ।
 व्रतं निवेदयेत् शशौ त्वत्प्रसादात् सुरेश्वर ॥
 सम्पूर्णं हि व्रतं देव कृतं परमपूजितम् ।
 एवं निवेद्या देवेश साविध्यो भव शङ्कर ॥
 त्वत्प्रसादात् सुरेशान यथा शक्ति जपास्यहम् ।
 कन्दमूलफलैर्वापि वर्षान्ते तर्पणं कृतम् ॥
 ब्राह्मणांश्च यथा शक्त्या शिवभक्तान् दृढव्रतान् ।
 अर्चयेत्परया भक्त्या क्रियतां मे अनुग्रहः ॥
 व्रतस्य तर्पणं पुष्पं कारिष्ये शिवचोदितम् ।

(१०४)

तर्पणं, पूरणं॥

इति सम्पूजयेत्प्रयात् भव्यभोज्यै रनेकशः ॥
 दातव्या चार्जुनी कृष्णा सुरूपा तु पयस्विनी ।
 हेमशृङ्गी रोप्यखुरा घण्टाभरणभूषिता ॥
 वस्त्रयुग्मपरीधाना पुष्पमाख्यान्विता शुभा ।
 गुरवे गौः प्रदातव्या श्रेयोऽर्घं सुरसुन्दरि ॥
 आचार्यन्तु शिवं विन्द्याच्छिवमाचार्यं रूपिणं ।
 उभयोरन्तरं नास्ति आचार्यस्य शिवस्य च ॥
 एतन्मात् कारणाद्देवि गुरुं पूज्य तदा नृणां ।
 यः समुद्धरते नित्यं घोरान् संसारसागरात् ॥
 न तेन सदृशो माता न पिता न च बान्धवाः ।
 यद्गुरो दीयते दानं तद्दृष्ट्वाति सदा शिवः ॥
 तस्मात्सर्वप्रयत्नेन पूजनीयो गुरुः सदा ।
 इत्येतत् कथितं सर्वं कृष्णाष्टम्यां विधिः परः ॥
 अनेन विधिना यस्तु कुरुते वत्सरं नरः ।
 सर्वकाम सुसम्पन्नः प्रयाति परमं पदम् ॥

इति देवीपुराणोक्तं कृष्णाष्टमीव्रतम् ।

अथ लक्ष्मणाद्राव्रतम् ।

स्काद् उवाच ।

श्रुतानि देव देवश व्रतानि भवतो मया ।

रूपसौभाग्यदानोह स्वर्गमोक्षप्रदानि च ॥
येन धर्मार्थकामांश्च रूपञ्च गुणवद्भिर्भो ।
स्वल्पवित्तप्रदानेन जायते तद्दत्तं वद ॥

ईश्वर उवाच ।

अस्ति वक्तुं व्रतञ्चैकं तिथिनञ्चत्रयोगतः ।
नभस्त्रे मासि राजेन्द्र यदाद्रा जायते तदा ॥
व्रतमेतद्विधातव्यमुमामाहेश्वरं भूमि ।
आरोग्यैश्वर्यसौभाग्यरूपसम्पत्प्रदायकम् ॥
कारयित्वा यथा शक्तिं सौवर्णं मिथुनं तयोः ।
गौरीगिरिशयोभक्त्या नक्तं सङ्ख्या पूजयेत् ॥
उमामहेश्वररूपन्तु प्रथमं कृष्णाष्टम्यां अभिहितं वेदितव्यम् ।
पयोदधिघृतचौद्रशर्करावारिभिः क्लृप्तात् ॥
संस्त्राप्य चार्चयेद्भस्त्रैः पूजयेत् कुसुमोत्कारैः ।
रक्तैर्वाप्यथवा पीतैः श्वेतैर्वा रक्तमिश्रितैः ॥
संवेष्ट्य वस्त्रयुग्मेन मन्त्रैरिभिः प्रण्वयेत् ।
शङ्कराय नमस्तुभ्य विमलाय धिवाय च ॥
स्वयम्भुवे ह्यनन्ताय भवाय त्राविने नमः ।
सर्वार्थ विश्वरूपाय सर्वज्ञाय नमो नमः ।
ईशानाय शम्भवेऽथ विरूपाद्याय शम्भवे ॥
वसुधाय महादेवि विख्याते ललिते शिवे ।
गान्ते रौद्रे महावक्त्रे दुर्गे गोरी नमोस्तु ते ॥
सपद्मपद्मपताञ्च सुमुखे पिशुनोमुखौ ।
ईश्वरीन्द्राणि रुद्राणि रश्मि देवि नमो नमः ॥

शर्वाय विश्वरूपाय सर्वज्ञाय नमोनमः !

पत्रं पुष्पं पयः पत्रं फलं चन्दनपङ्कजैः ॥

पूर्णं कृत्वाम्बिकेशाभ्यां मन्त्रमेतमुदीरयेत् ।

नमोगौर्यै स्कन्दमात्रे विष्णुमूर्त्यै नमो नमः ॥

नमोभूताधिपतये रूपाधिपतये नमः ॥

गृह्णाणार्घ्यं विरूपाक्ष रूपायऽभ्यर्चितीमया ।

स भार्यया महादेव देववैव नमोऽस्तु ते ॥

अर्घ्यं दत्त्वा ततोधूपं दद्यादगुरुमित्रितम् ।

दीपं नैवेद्यताम्बूलफलानि विविधानि च ॥

ततो हात्रिंशताधूपैः सूर्यस्य रचितैर्दृढम् ।

तत्सङ्क्राम्यै गोधूमैर्ग्रीहिपिष्टमयैः शुभैः ॥

पूर्णं तल्लक्षणैः कृत्वा संदीपं सूत्रवेष्टितम् ।

रसपञ्चकयुक्तेन शुष्कान्नेन समन्वितम् ॥

गोधूमैर्गोधूमपिष्टमयैः, लक्षणेभ्यस्त्स्यादिसुद्राङ्कितैर्भक्ष्यैः ।

रसा दधिदुग्धघृतमधुशर्कराः, शुष्कान्नं मोदकं ।

उमामहेशयोर्नान्दियुतेत्युद्दिश्य चार्पयेत् ।

विप्राय दक्षिणां पूर्वं सौवर्णं मिथुनञ्च तत् ॥

भक्ताय याचमानाय सुविधाय कुटुम्बिने ।

आत्मज्ञानेकनिष्ठाय वेदवेदाङ्गवेदिने ॥

कुलशीलसदाचारलक्षणैर्लक्षिताय च ।

नास्तिक्वाय न दातव्यं नात्रते नाजितेन्द्रिये ॥

दत्त्वाचेश्वरभक्तः प्रणिपत्य विसर्जयेत् ।

सन्त्रणालोष तावन्ति भुक्ताचान्नं सुष्टुतणे ॥

सार्धं नक्तं ततः सोमं शिवं ध्यायन् सुरेश्वरीम् ।
 तावन्ति ज्ञानिंशत् ।
 नभस्ये बहुलाष्टम्यामिवं यः कुरुते व्रतम् ॥
 लक्षणाईतिविख्यातमिदं तस्य फलं शृणु ।
 सर्वपापविशुद्धात्मा सर्वश्रेष्ठसमन्वितः ॥
 भुक्त्वा भोगान्महेनेन ततः कालविपर्यये ।
 राजा भवति धर्मात्मा बलवीर्यसमन्वितः ॥
 रूपसौभाग्यलावण्यधनायुःकीर्त्तिमान् भवेत् ।
 प्राप्य कालक्षयं तस्मात् उमाङ्गप्रसादतः ॥
 चतुर्युगसहस्रान्तं स्वर्गलोके महीयते ।
 मास्वाङ्गर्षयुताष्टमी भवति या लक्षणा नभस्ये तदा ।
 सौवर्णं मिष्टानुं शिवागिरिशयो रूपं तयोर्लक्षणैः ॥
 पूर्णं पिष्टमयैर्ददाति गुरवे सार्धं रसैर्भोजनं ।
 भुक्त्वा योगयुतीक्ष्वं सभुवनं शश्वोत्रं जेच्छाश्वतम् ॥
 इति मत्स्यपुराणोक्तं लक्षणाद्राव्रतम् ।

अथ सोमव्रतम् ।

—०००—

अनिलाद् उवाच ।

अथान्यत्सम्प्रवक्ष्यामि व्रतं श्रेयस्करं परं ।
 तस्योदाहरणं पुण्यं विधिवत् प्रनिबोधत ॥
 वारिसोमस्यवाश्रम्यां पद्मोभौ सोममर्चयेत् ।

विधिनाचन्द्रचूडाम्ने प्राज्यानेन सचन्द्रकम् ॥
 पक्षोभौ अतीभयत्र पक्षे नियमोऽष्टमीसीमवारयोः
 संयोगमात्रं विवक्षितं, प्राज्यान्नं प्राज्यवहुलमन्नं ।
 दक्षिणाद्यं हरभ्यायेदामोर्द्धन्तु हरिं विभुम् ।
 सोमसचन्द्रकवामार्द्धहरिमिति विशेषणत्रयेण चन्द्रहरिरूप
 त्वं वामार्द्धस्योक्तं ।

छृताद्यैरेक्षवानैश्च लिङ्गं स्नाप्य तु पूर्ववत् ।

छृताद्यैः पञ्चामृतसंज्ञकैः ।

चन्दनेनेन्दुयुक्तेन दक्षिणाद्यं विलेपयेत् ।

कुङ्कुमागुरुणा वामं घनमर्ष्यं तथैवच ॥

इन्दुयुक्तेन कर्पूरयुक्तेन, घन-सुशीरम् ।

काञ्चनेन सचन्द्रेण हरभागं तथार्चयेत् ॥

समौक्तिकेन नीलेन हरेर्भागं विशेषतः ।

चन्द्रेण हीरकयुक्तेन ।

पञ्चात्पुष्पैः शुभैर्बन्धैश्च कारयेत् पुष्पमण्डपम् ।

नीराजनं पुनः कुर्वात्यश्चबिंशतिपञ्चकैः ॥

उभाभ्याश्चित्तदत्तेन प्रथमेन सुदुर्मुहुः ।

उभाभ्यां देवी देवाभ्यां चित्तदत्तेन हरि

हरध्यायिना विधिना नीराजनस्य ।

प्राज्यसिद्धेः शुभैर्बन्धैर्नैवेद्यश्च निवेदयेत् ।

व्रतिनो ब्राह्मणांसैव पूजयित्वा विभावसुम् ॥

विभावसुरग्निः ।

मिथुनानि च सञ्जीव्य यथाशक्त्या च दक्षयेत् ।
अष्टम्यां पितरावध्वरं विधिनानेन सुव्रत ॥

पितरौतावेव देवीदेवौ ।

वत्सरन्तु तदन्ते तु कर्त्तव्यं यन्निबोधत ।
प्रागुक्तविधिना पूष्य सितं पीतं युगद्वयम् ॥
दद्याद्वितानके चैव पताकाघण्टिके तथा ।
धूपसञ्चारणे वापि दीपहृत्तौ शुश्रीभिर्नौ ॥

धूपसञ्चारणा धूपदहनया यौ दीपहृत्तौ हृत्ताकारौदीपाधारौ ।

एवमादि नियोज्यैव पूर्ववङ्गोजमाचरेत् ॥
अब्दपञ्चकमेवं हि यः करिष्यत्यसंशयम् ।
उंभाभ्यां लोकमासाद्य पदं यास्यत्यनामयम् ॥
असंशयस्था जीवन्ति नियमेन समाचरेत् ।
इहैव सरितः साक्षान्नररूपीति लक्षयेत् ॥
न स्पृशेत् पापदञ्चानं नच दुःखी भवेत् खलु ।
ज्वरग्रहादिभिर्नैव पीब्यतेऽसौ कदाचन ॥

तत्र व्रते नाममन्त्रैः पूजाहीमौ ।

इति कालिकापुराणोक्तं सोमव्रतम् ।

अथ शङ्करार्कव्रतम् ।

— ००० —

अग्निनाह उवाच ।

अथ चानेन मानेन च ह्यभान्तानिव चाष्टमी ।

सम्प्राप्यादित्ययोगेन प्राग्विधानेन वा नरः ॥
 किन्तु दक्षिणनेत्रस्यं भास्करश्चार्चयेद्बुधः ।
 पद्मरागेन हैमैतु योज्येदं लेपनं शृणु ॥
 नेत्रे न्यस्य ललाटाधः कुङ्कुमं रक्तचन्दनम् ।
 वृत्तन्तु योज्य मध्ये तु हरं पूर्व्वदर्शयेत् ॥
 अर्धचन्द्राकारं तन्मध्ये वृत्तञ्च लेपनं
 कृत्वा हेमनिवहं पद्मरागं वृत्तमध्ये निधाय सूर्य्यरूपनेत्र
 कुर्यादित्यर्थः ।

अभावे पद्मरागादेहेमं सर्व्वत्र योजयेत् ॥
 रुद्रबीजं परं पूतं यतस्तत्रैव सर्व्वदा ।
 शुकं माल्यां बरं* वल्कं नैवेद्यं च घृतप्लुतम् ॥
 शेषः पूर्व्वविधानेन कर्त्तव्यो विधिविस्तरः ।
 किन्त्वत्रोथ प्रकुर्व्वीत सप्तम्यां विजितेन्द्रियः ॥
 शङ्करार्कयुतः पूज्य-घृतं गव्यञ्च पारयेत् ।
 उथ उपोथ

एतत् प्राग्विधिना कार्य्यं पञ्चवृत्तायणो विधौ ।
 कुर्व्वन् सूर्यादिलोकेषु भुक्त्वा भोगान् व्रजेत्परम् ॥
 एतत्तीर्त्वा प्रतापी स्याद्दीनः स्वजनप्रियः ।
 अस्मिन् लोके च धनवान् लोकवाञ्छ भवेत् पुनः ॥
 इति कालिकापुराणोक्तं शङ्करार्कव्रतम् ।

* सर्व्ववहोनामिति पुण्यवाक्ये वाच्यः ।

अथ सोमाष्टमीव्रतम् ।

— ००० —

मन्थुवाच ।

अथान्यत्संप्रवक्ष्यामि व्रतं श्रेयस्कृतं परं ।
 शिवलोकव्रतं पूज्यं सर्वसम्पत्कारं कृत्वा ॥
 वारे सोमस्य चाष्टम्यां पञ्चदशमबोरपि ।
 विधिवच्चन्द्रचूडाभं सोमं मन्थुजवेदिषि ॥
 सोमं उमासहितम् ।

रूपन्तु कृष्णाष्टम्यामेव व्याख्यातं ।
 तिलमर्घपकण्ठे न स्नातोऽमलजलाशये ।
 गृहे वायतने वापि शिवैकाहितमानसः ॥
 ब्रह्मकूर्चं देवेशं प्राशयित्वा ततोव्रती ।
 ब्रह्मकूर्चं पञ्चगव्यं ।

वामादिनाममन्त्रैश्च देवं देवीं तथार्चयेत् ॥
 चन्दनेनेन्दुसुक्तेन दक्षिणार्धं विलेपयेत् ।
 इन्दुःकर्पूरं ।

वामार्धं कुङ्कुमेनाद्य सतुरक्त्वेण मन्थवत् ।
 तुबष्कः सिद्धकं ।

देव्यामूर्ध्नि न्यसेज्जीवं शिवस्त्रीपरि मीलिकम् ॥
 पश्चात् पुष्यैः समभ्यर्च्य मितरत्नैस्त्वनुत्तमैः ।
 नीराजनं पुनः कुर्यात् पञ्चविंशतिदीपकैः ॥

(१०५)

घृतसिद्धान्* शुभान् शुक्तान् फलानि च निवेदयेत् ।
 सम्यज्जैवं शिवं सोमं स्तुत्वा पश्चात् समापयेत् ॥
 दीक्षितस्यैवमन्थोऽपि नाममन्तेण भक्तिमान् ।
 ततोविधिवदव्यघोत्रद्वाकूर्चश्रुतांस्तलान् ॥
 सन्धोजातेन सुहृद्यात्मवृद्धेऽग्नौ सुभाषितः ।
 सम्प्राप्यद्वाष्टमेवायं प्रभाते नैव तत्क्षयः† ॥

तत् ब्रह्मकूर्चं ।

सन्धोजयेत् सपत्नीकान् ब्राह्मणान् संश्रितव्रतान् ।
 सर्वर्षश्च तथा शक्त्या रौप्यं दत्त्वा विसर्जयेत् ॥
 प्रीयतां मे शिवो नित्यमुमा देवी च सर्वदा ।
 एवमारारुध्य गौरीशन्दशक्त्योमुने शिवम् ॥
 व्रतस्यान्ते प्रकर्त्तव्यं यशस्तर्क्यं शृणुष्व तत् ।
 कृत्वामहोक्तव्यं प्राप्य पूजयेत्परमेश्वरम् ॥
 पुष्पैः शुक्लैस्तथा धूपैर्नैवेद्यैश्च फलैः शुभैः ।
 वितानं वामलं ह्रत्वं घण्टाभ्याप्युपयोगवत् ॥
 पूजाप्रकरणं शम्भोर्यथाशक्ति समर्थयेत् ।
 ततोवस्त्रै रत्नङ्कारैः स्वर्णरौप्यमयैर्गुणम् ॥
 सभार्यमर्चयेद्भक्त्या शिवभक्तञ्च मानयेत् ।
 रौप्यखुरीं स्वर्णशृङ्गीं सचेलीं कांस्यदीहनीं ॥
 दद्याद्विनुं सवत्साञ्च वृषभञ्च सुलक्षणम् ।
 पूजयेच्च व्रती साधून् भोजनाच्छादनाशनैः ॥

* घृतसिद्धान्तानि पुस्तकाकारे पाठः ।

† संश्रिताः कश्चिदेवायं व्रतानि तत्क्षय इति पुस्तकाकारे पाठः ।

यन्नशिष्टाशनं पद्याङ्गुलीयात् प्रयती द्यौः ॥
 य एवं कुरुते भक्त्या पार्थ सोमाष्टमीव्रतं ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोकमवाप्नुयात् ॥
 कुरुचेत्रादिदानेन* यत् फलं लभते नरः !
 तत् फलं लभते विद्वान् पूज्येमां विधिवत्परः ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं सोमाष्टमीव्रतम् ।

अथ अर्काष्टमीव्रतम् ।

— ००० —

स्रष्टु उवाच ।

अथान्यदपि ते वचिन् व्रतं कामफलप्रदम् ।
 सर्वपुण्यप्रदं लोके महापातकनाशनम् ॥
 यदाष्टम्यां शुक्लपक्षे रविवारोऽभिजायते ।
 उपोष्या सा प्रयत्नेन तेनैव विधिना नृप ॥
 अर्चयेद्देवदेवेशं सह देव्या महेश्वरम् ।
 विशिष्य एव एवात्र शिवस्य नयनेस्मितम्* ॥
 भानुं सम्पूजयेद्भक्त्या गन्धपुष्पाक्षतैः शुभैः ।
 शिवश्च सितपुष्पैस्तु रक्तपुष्पैस्तथाश्लिष्यकाम ॥
 रत्नैरक्षतैर्दिव्यैर्भक्तिमानर्चयेद्द्विभुम् ।
 कुङ्कुमेनालभेद्देवीं चन्द्रमेव महेश्वरम् ॥

* अर्चां शतसप्तचाचि दशदत्ताद्येति पुष्पकान्तरे पाठः ।

* शिवश्चतनतेस्मितमिति पुष्पकान्तरे पाठः ।

अभावे सर्व्वरत्नानां काञ्चनं तत्र दापयेत् ।
 बहुवीजं जपन् मृत्तं प्रियं बहुस्य सर्व्वदा ॥
 सितरक्तं वस्त्रयुग्मं नैवेद्यं दृष्टपाचितम् ।
 शेषः पूर्व्वविधानेन कर्त्तव्योविधिविस्तरः ॥
 किं त्वत्रोपोष्य कर्त्तव्यं गोजलं प्राश्य पारशं ।
 गोजलं गोमूत्रं पूर्व्वविधाने नेति
 एतस्य व्रतस्य भविष्योत्तरोक्तविधानेत्यर्थः ।
 हविषाग्नेन संहृतो बान्धवै रर्घिभिस्तथा ।
 एतत्प्राग्बिधिना यस्तु कुर्यात् सूर्याष्टमीव्रतम् ॥
 सर्व्वपापविनिर्मुक्तः सूर्य्यलोके महीयते ।
 पूर्व्वविधानेनेति एतस्य व्रतस्य भविष्योत्तरोक्तविधानेन
 अत्र यद्यपि भविष्योत्तरोक्तसोमाष्टमीविधिर्नैरन्तर्याद्याद्यद्वा
 स्तथापि सल्लाधर्म्याग्निसिद्धिः ।

स्कन्दपुराणोक्त सोमाष्टमीव्रतस्य विधि
 ग्रहणे विशेषाभावान्नकश्चिद्गोषरति ।
 हविषाग्नेनसंहृतोबान्धवैरर्घिभिस्तथा ॥
 एतत् प्राग्बिधिना यस्तु कुर्यात् सूर्याष्टमीव्रतम् ।
 सर्व्वपापविनिर्मुक्तः सूर्य्यलोके महीयते ॥
 इहवाभ्येत्य स स्याद्द्वैपार्थिवः पृथिवीपतिः ।
 आरोग्यसर्व्वसौख्यैकभाजनो भानुभावितः ॥
 प्रतापी भानुवद्भाति दीनानुग्रहकृत्तवेत् ।
 यद्यष्टमी भवति सोमयुताकदाचि
 दक्षेण वा कुरुकुलोद्दह तामुपोष्य ।

पूज्योमया सह हरं हरिणाङ्गचूर्णं
भक्त्या पुमान् परमुपैति पदं सुरारेः ॥

इति श्रीभविष्योत्तरोक्तमर्काष्टमीव्रतम् ।

अथ पुष्याष्टमीव्रतम् ।

—000—

महादेव उवाच ।

शृणु देवि महापुण्यं मामपूजाफलं शुभम् ।
श्रावणे शुक्लपक्षस्य सप्तम्यां य उपोषितः ॥
स्नापयेत् छतचीराभ्यां करवीरैश्च पूजयेत् ।
कृत्वाग्निकार्यं विधिवद्दधौ ब्राह्मणभोजनम् ॥
कन्याकर्णितसूत्रेण[†] कारयित्वा पवित्रकम् ।
कृत्वा विचित्रगन्धैश्च कुङ्कुमागुरुचन्दनैः ॥
कृतोपवासं सप्तम्यामष्टम्यां विप्रभोजनम् ।
श्रापयति योभक्त्या सोऽग्निष्टोमफलं लभेत् ॥
पुनर्भवति वै राजा भूतले नाच संशयः ।
मासि भाद्रपदेऽष्टम्यां शुक्लपक्षे वरानने ॥
स्नापयित्वा तु मां भक्त्या पयसा वा छृतेन वा ।
अपामार्गेण पूजान्तु कृत्वा देवि विधानतः ॥
हंसयानसमारूढो ममलोकं व्रजेदिति ।

० हरिकाकदाचिदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† कन्यार्णि तत्पुत्रे चेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

मासिवाङ्मनुजेऽष्टम्यां सर्वपुष्पैश्च० पूजयेत् ॥

गैरिकं यानमारूढो ध्वजमालाकुलं शुभम् ।

गैरिकं सौवर्णं ।

युक्तो मयूखप्रवरैर्भूमयाति स मन्दिरं ॥

कार्तिकस्य तु मासस्य शुक्लाष्टम्यान्तु यो नरः ।

स्नापयेन्मधुक्षीराभ्यां जातीपुष्पैस्तु पूजयेत् ॥

काञ्चनं यानमारुह्य किङ्किणीजालमालिनं ।

स याति परमं देवि गन्धर्व्याम्बरसां प्रियः ॥

मार्गशीर्षे च वै मासि पञ्चगव्येन यो नरः ।

स्नापयित्वा च तं भक्त्या रक्तपुष्पैस्तु पूजयेत् ॥

स्नापयेत् दक्षिणीरेण कुङ्कुमैर्न विलेपयेत् ।

कृत्वीपवासं सप्तम्यामष्टम्यां विधिवन्नरः ॥

स त्रैलोक्यमतिह्वय यथाहं तत्र गच्छति ।

पौषे मासे तु योऽष्टम्यां भक्त्या मां पूजयेन्नरः ॥

उत्सक्तस्य पुष्पैस्तु स्नापयित्वा हृतेन तु ।

स यानं दिव्यमारूढः पुष्पकं नामनामतः ॥

ममालयं समासाद्य मोदते शाश्वतौः ससाः ।

माघमासे तथाष्टम्यां विल्वपत्रेण योऽर्चयेत् ॥

स्नापयित्वा तु मां भक्त्या दिव्यहस्तुरसेन वा ।

प्रतप्तार्कसमं यानङ्कान्द्यापेयसमस्तथा ॥

स्मारुढो मोदते नित्यं मम लोके न संशयः ।

फाल्गुनस्य तु मासस्य गन्धतोयेन यो नरः ॥
 अर्चयेद्दीर्घपुष्पैस्तु इन्द्रस्यावासनं लभेत् ।
 चैत्रे मासि तथा देवि पुष्यतोयेन यो नरः ॥
 ज्ञापयित्वा र्चयेद्भक्त्या अर्कपुष्पैस्तु सुन्दरि ।
 बहुस्वर्णस्य यज्ञस्य विन्दते स फलं महत् ॥
 वैशाखे तु यथा मासि अष्टम्यां यस्तु मानवः ।
 कर्पूरागुरुतोयेन ज्ञापयित्वा विधानतः ॥
 अर्चयेच्छुभगन्धेन* सोऽश्वमेधफलं लभेत् ।
 ज्येष्ठे मासि तथाष्टम्यां दध्ना यः ज्ञापयेत्तन्नाम् ॥
 अर्चयेत्पुष्पपुष्पैश्च सगच्छेत्परमाङ्गतिम् ।
 आषाढे यो नरोऽष्टम्यां नानातीर्थीदकैर्नवैः ॥
 ज्ञापयित्वा च यद्भक्त्या पचैर्धुम्सूरकस्य तु ।
 गन्धर्वीरगयच्चैस्तु पूज्यमानो नरोदिवि ॥
 क्रीडते च मया सार्धं यावदिन्द्राश्चतुर्दश ।
 य एवं वत्सरे देवि कारयेदष्टमीव्रतम् ॥
 न तस्य पुनरावृत्तिः सत्यमेतद्ब्रवीम्यहम् ।
 नीलकण्ठश्च शशुश्च सर्वं भीमं महेश्वरम् ॥
 विरूपाक्षं महादेवं उषं चाम्बकमेव च ।
 ईश्वरश्च शिवं देवि सर्वलोकेषु पूजितम् ।
 एतानि मासनामानि मासेष्वेतेषु कौर्त्तयेत् ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं पुष्याष्टमीव्रतम् ।

* अर्चयेच्छुभगन्धेनेति पुलकाकारे पाठः ।

अथ तिन्दुकाष्टकाष्टमीव्रतम् ।

— ००० —

ज्यैष्ठेमासि द्विजश्रेष्ठ गुणाष्टम्यां त्रिसोत्तमम् ।

यः पूजयति देवेशमीशलोकां त्रजेन्तरः ॥

ज्यैष्ठेमासि तथाषाढे श्रावणे च तथा परे ।

पूजयेच्चतुरोमासान् नीलोत्पलकदम्बकैः ॥

त्रिपुरान्तकरं शम्भुं चाम्बकाम्बकसूदनम् ।

गन्धानाञ्च कदम्बेन पूजयेत् गुग्गुलेन च ॥

टेम्बुककफलां विप्र प्राशयेत् कायशोधनम् ।

टेम्बुककान्तिन्दुकफलां ।

देवस्य कौर्त्तयेनाम भास्करेति पुनःपुनः ।

मासि चाश्वयुजे विप्र कार्तिके च तथा द्विज ॥

मार्गशीर्षे तथा मासि पौषे मासि तथा हरम् ।

पूजयेद्द्विधिवद्गत्या उन्मत्तकुसुमे र्विभुं ॥

उन्मत्तकुसुमेर्धुस्तूरपुष्पैः ।

कर्पूरागुरुधूपेन देवेशं पूजयेद्भरिम् ।

विक्रपाप्नेति वै नाम प्राशयेद्द्विधिवत् यवान् ॥

माघे च फाल्गुने चैव कृष्णाष्टम्यां त्रिसोत्तमम् ।

चैत्रवैशाखयोर्भक्त्या शतपत्रैः समर्चयेत् ॥

महाधूपेन धूपेन विधिवत्कल्पितेन च ॥

पूजयेद्द्विधिवद्देवं त्रिपुरान्तकरं हरम् ।

ककीलागुरुकर्पूरदर्पकुङ्कुमचन्दनैः ।

चतुर्जातेन च महान् यत्कर्म एव च ॥
 इत्युक्तः, नैवेद्यैः खण्डत्रयैश्च नाम ईशेति पूजयेत् ।
 य एवं पूजयेद्देवं कृष्णाष्टम्यां महेश्वरम् ॥
 स्वमेकमेकं त्रिप्रेन्द्र स याति परमाङ्गतिम् ।
 यदिष्टं देवदेवस्य शृणु तत् द्विजसत्तम ॥
 उन्मत्तेन पुष्पेण धूपे कृष्णाशुक्लः सदा ।
 श्रीखण्डः सर्वगन्धेषु नवेद्यं पायसं सदा ॥
 पूजाकारः पाशुपतः* सर्वभोगविवर्जितः ।
 कल्पघ्नो ब्राह्मणानाम्नुवाचकस्तस्य वज्रभः ॥
 एवं सम्पूज्य नृपते रुद्रेण विधिना हरिम्† ॥
 पूजा लिङ्गैश्च शङ्करादिनाम्ना ।
 वत्सरान्ते वलिं पुण्यं तथा पुस्तकवाचनम् ॥
 यः कारयति वै भक्ता तस्य पुण्यफलं शृणु ।
 स्वर्गलोकमवाप्नोति तेजसा शुक्रमन्त्रिभिः‡ ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं तिन्दुकाष्टकाष्टमीव्रतम् ।

अथ दाम्पत्याष्टमीव्रतम् ।

— . . . —

कार्तिके मासि विप्रेन्द्र पुत्रकामो नरोमने ।
 अष्टम्यां कृष्णपक्षस्य पूजयेद्विधिवद्विज ।

* पूजाकारः पशुपतिरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† शार्ङ्गेण विधिनाचरन्तिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ शक्रमन्त्रिभ इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

उमया सहितं देवं कृत्वा दर्भमयं विभुं ॥
 राश्वपुष्पोपहारैस्तु याभोभिर्भूषणैस्तथा ।
 नीलवैदूर्यसङ्काशान्* समूलान् पुष्पवर्जितान् ॥
 बैतस्तिकान् तथा सायातृजून् दर्भान् द्विजोत्तम ।
 गृहीत्वा कारयेद्देवं नीलकण्ठमुमापतिं ॥
 उमाञ्च तां सतीं देवीं विधिवद्ब्रह्मसत्तम ।
 पूजयेद्ब्रह्मपुष्पैस्तु फलैर्भस्त्रैरनेकशः ।
 नानाप्रेक्षणकैश्चैव मुखबाद्यैश्च सुव्रत ॥
 य एवं कुरुते भक्त्या उमामाहेश्वरं व्रतम् ।
 स्वमेकमेकं विप्रेन्द्र स याति परमां गतिं ॥

स्वमेकः सम्बन्धरः ।

चतुर्भिः पारशैरेवं स्वमेकं कौर्त्तितं बुधैः ।
 प्रथमन्तु त्रिभिर्मासैः पारणं कार्तिकादिभिः ॥
 कार्तिके मार्गशीर्षे तु पौषे मासि तथा परे ।
 उन्मत्तकस्य पुष्पैस्तु फलैर्भस्त्रैरनेकशः ॥

उन्मत्तकस्य धूसूरकस्य ।

श्रीखण्डचन्दनेनेशं श्वेतेन तु विलेपयेत् ।
 साज्यन्तु गुग्गुलं दद्यान्नैवेद्यं पायसं परं ।
 स्नानन्तु पञ्चगव्येन प्राशनन्तु प्रवर्त्तयेत् ॥
 महादेवेति वै नाम गोरीदेवीति पठति ।
 माघे च फाल्गुने मासि तथा चैत्रे द्विजोत्तम ॥
 मालतीकुसुमैर्द्देवं कुसुमैर्द्युङ्गुरस्य च ।

* कुशान् वैदूर्यसङ्काशानिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

विरूपाक्षेति वैनाम देव्यानाम उमेति च ॥
 पूजयेद्द्विधिवद्देवं धूपेनागुरुणा विभुं ।
 कुङ्कुमेन तथा भक्त्या विधिवत्सौ विलेपयेत् ॥
 दध्ना शाल्बीदनं दद्यान्नैवेद्यं शूलपाणये ।
 कुशोदकं तथाश्रीयादात्मनः कायशुद्धये ॥
 वैशाखे तु तथा ज्येष्ठे आषाढे पूजयेद्भरं ।
 करवीरैश्च पुष्पैश्च तथा रक्तोत्पलैर्मुने ॥
 प्राजापत्येन धूपेन रसालामोदकैस्तथा ।

रसाला शिखरिणी ।

शिवः शिवा च वैनाम्नौ तयोर्विप्र प्रकीर्त्तिते ।
 ज्ञानप्राशनयोःशस्ता घृतकृष्णतिला बुधैः ॥
 अगुरुं सिद्धकं धूपं प्राजापत्यमिति स्मृतम् ।
 आवणादिषु मासेषु जातीपुष्पकदम्बकैः ॥
 पूजयेद्द्विधिवद्देवीं त्रिपुरात्मकरं हरं ।
 चतुःसमेन देवेशमर्षयेद्द्विधिवन्मुने ॥
 धूपेनागुरुमिश्रेण कथरापूपपायसैः ।

चतुःसमेन त्वकपतैलाकिसरेण ।

एभिर्द्यैः पूजयेद्देवं चतुर्भिः पारणैर्हरम् ॥
 चतुर्वर्गमवाप्नोति कामयानो न संशयः ।
 प्रकामयानश्च पुनस्तुरीयं केवलं लभेत् ॥

तुरीयोमोक्षः ।

कामयानो यथा मोक्षं कामं प्राप्नोति मानवः ।
 पुत्रकामोलभेत् पुत्रं धनकामो लभेद्द्वनम् ॥

विद्यार्थी लभते विद्याबूनं प्राप्नोति शङ्करात् ।
 कृत्वेवं वर्षमेकन्तु वर्षान्ते प्रीणयेद्हरिं ॥
 नानाप्रेक्षणकैर्ब्रह्मन् ब्राह्मणांश्चान्तर्पणैः ।
 दाम्पत्यं भोजयेद्दिप्रं प्रीतये शङ्करस्य तु ॥
 कल्पस्यं वाचकं विप्रं सपत्नीकं विचक्षणः ।
 वाचकं कल्पयेत् शशुं स्वपत्नीं ललितां मुने ॥
 प्रीणयित्वा तु दाम्पत्यं भक्ष्यभोज्यैरनेकशः ।
 कुसुम्भं रक्तवस्त्राणि ताभ्यां दद्याद्द्विजोत्तम ।
 नानाविधैर्गन्धपुष्पैः पूजयित्वा द्विजोत्तमं ॥
 दक्षिणाञ्च पुनर्दद्यात्सौवर्णप्रतिमाद्वयं ।
 वाचकाय महादेवं तत्पत्नीं ललितां मुने ।
 य एवं पूजयेद्देवं हरं श्रद्धासमन्वितः ॥
 स दिव्यं यानमारूढः सुवर्णोद्भवसुत्तमं ।
 तेजसा शुक्रसङ्काशः प्रभया हरिसन्निभः ॥
 स गच्छेत्परमं स्थानमचलं शूलपाणिनः ।
 तस्मादेत्य भवेद्राजा भूतले भूतलेश्वरः ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं दाम्पत्याष्टमीव्रतम् ।

अथ पुत्रीयव्रतम् ।

— ००० —

पुलस्त्य उवाच ।

प्रोहपद्यामतीतायां कृष्णपक्षाष्टमी तु या ।
 सोपवासो नरोऽष्टम्यां योषिदा तनयार्थिनी ॥

ज्ञाता सरसि धर्मज्ञा तीयेवाप्यथ सारसे ।
 पूजनं वासुदेवस्य यथा कुर्यात्तथा मृणु ॥
 घृतप्रस्थेन गोविन्दं ज्ञापयित्वा जगद्गुरुं ।
 क्षीरेण च ततः पञ्चाह्वना वा ज्ञापयेत्ततः ॥
 क्षीरेण जपनं कृत्वा ततः पद्याद्विरुक्षयेत् ।
 सर्व्वीषधैश्च सजलैः सर्व्वबीजफलैस्तथा ॥
 ज्ञापयित्वागुलिमा च चन्दनागुरुकुङ्कुमैः ।
 कर्पूरेण तथा राम तथा जातीफलैः शुभैः ॥
 ततः कालोद्भवैः पुथैः पूजयित्वा जगद्गुरुम् ।
 धूपं वागुरुणा धूपं कृत्वा नैवेद्यमीषितम् ॥
 विश्वेषाहोरसम्याश्च पुत्रागैरन्वितं फलम् ।
 पौरुषेण च सूक्तेन कृत्वा वानन्तरं ध्रुवम् ।
 शूद्रोवाप्यथवा नारी नाम्ना कृत्वा जगद्गुरोः ॥
 यवपात्राणि* दत्त्वा तु फलानि कनकं तथा ।
 पुत्रार्थं प्राशनं कुर्यात् फलैः पुत्रामभिः शुभैः ॥
 स्त्रीनामभिश्च कन्यार्थी ततो भुक्त्वा यथेष्टितं ।
 पुत्रकन्यामवाप्नोति तथा सर्व्वानभीषितान् ॥
 इविष्यं देवदेवस्य भूमिपानाम्नु कारयेत् ।
 संवत्सरमिदं कृत्वा व्रतमाप्नोत्यभीषितं ॥

पुत्रीयमेतद्भूतमुत्तमन्ते मयेरितं यद्यपि धर्मनित्यं ।
 तथाप्यनेनैव समस्तकामान् कृतेन लीके पुरुषा लभन्ते ॥

इति विष्णुधर्मोक्तं पुत्रीयव्रतम् ।

अथ सन्तानाष्टमीव्रतम् ।

— ००० —

पुलस्त्य उवाच ।

शृणु दाल्भ परं काम्यं व्रतं सन्ततिदं नृणां ।
 यदुपोष्य न विच्छेदः पुत्रपिण्डस्य जायते ॥
 कृष्णाष्टम्यां चैत्रमासे ज्ञातो नियतमानसः ।
 कृष्णमभ्यर्च्य पूजाञ्च देवक्याः कुरुते च यः ॥
 निराहारीनरः पञ्चाकृष्णस्य जगतः पतेः ।
 उपोषितोजपन्मन्त्रं रात्रौ प्रयतमानसः ॥
 पूजायाश्चापि कृष्णस्य सप्तवारान् प्रकीर्त्तयेत् ।
 पाखण्डिनो विकर्मस्थान् वैडालान् वकनास्त्रिकान् ॥
 प्रभाते च ततः ज्ञातो दत्त्वा विप्राय दक्षिणाम् ।
 भुञ्जीत कृतपूजस्तु कृष्णस्यैव जगत्पतेः ॥
 वैशाखज्येष्ठयोश्चैव पारणं द्वि विमाधिकम् ।
 उपोष्य देवदेवेशं घृतेन ज्ञापयेत्परिम् ॥
 आषाढे श्रावणे चैव मासि भाद्रपदे तथा ।
 उपोषितो द्वितीयं वै पारणं पूर्ववद्भवेत् ॥
 आश्विने कार्तिके सौम्ये तृतीयं पारणं तथा ।
 पौषे माघे फाल्गुने च चतुर्थं द्विजसत्तम ॥
 पारणे पारणे पूर्णे घृतेन ज्ञापयेत्परिम्
 ब्राह्मणेभ्यो घृतं दद्यात्तथैव प्रतिपारणम् ॥

कृत्वाव्रतं नाकमनुप्रयाति
मानुष्यमासाद्य च निर्हतिः स्यात् ।
सन्तानवृद्धिञ्च तथाप्नुतेऽसौ
यावन्मही सागरमेखलान्ताम् ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं सन्तानाष्टमीव्रतम् ।

अथ मधेश्वराष्टमीव्रतम् ।

—०००—

मार्कण्डेय उवाच ।

शुक्लपक्षात्तद्यारभ्य सौम्याष्टम्यां नराधिप ।
पूजयेत्सोपवासस्तु देवदेवं त्रिलोचनम् ॥
सौम्याष्टम्यां गार्गशीर्षाष्टम्यां ।

लिङ्गेवाप्यथ चार्चायां कमले यदिवा स्थले ।
ष्टतक्षीराभिषेकेण स्नातेन विविधेन वा ॥
गन्धमाख्यनमस्कारदौपधूपान्नसम्पदा ।
गीतेन नृत्यवाद्येन वङ्गिसन्तर्पणेन च ॥
ब्राह्मणानाञ्च पूजाभिर्यथावन्मनुजोत्तम ।
व्रतावसाने दत्त्वा तु तथा धेनुं पयस्विनीं ॥
पौण्डरीकमवाप्नोति स्वर्गलोकञ्च गच्छति ।
पौण्डरीको नाम यज्ञविशेषः तस्य फलमवाप्नोतीत्यर्थः ।
अष्टमीद्वितयं कृत्वा तथा संवत्सरं नरः ॥

प्राप्याश्वमेधस्य फलं यथाव
 हुक्त्वा च भोगान् सुरनाकलोके ।
 लोकानवाप्याथ महेश्वरस्य
 सायोज्यमाप्नोत्यचिरेण तस्य ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं महेश्वराष्टमीव्रतम् ।

अथ वसुव्रतम् ।

—०००—

मार्कण्डेय उवाच ।

ध्रुवोऽध्रुवश्च सोमश्च आपश्चैवानिलोऽनलः ।
 प्रत्यूषश्च प्रभावश्च अष्टौ ते वसवः स्मृताः ॥
 अष्टात्मा वासुदेवाऽयं प्रभाविनादयेन च ।
 अष्टम्यां पूजयेद्यस्तु सोपवासी नराधिप ॥
 चैत्रमासादथारभ्य शुक्लपक्षाच्च यादव ।
 मण्डले प्यथवार्चासु जपेच्च मनुजाधिप ॥
 गन्धमाख्यनमस्कारदीपधूपान्नसम्पदा ।
 वह्निःस्नानेन राजेन्द्र तथाधःशयनेन च ॥
 व्रतान्ते तु सदा दद्याद्धेनुं विप्राय शक्तितः ।
 व्रतमेतन्नरः स्नात्वा सर्वान् कामानवाप्नुते ॥
 पुण्डरीकमवाप्नोति कुलमुत्तरते स्वकम् ।
 वसूनां लोकमासाद्य मोदतेऽक्षरसन्निभः ॥
 महातेजाः सत्यपरोक्षरोगोविजितेन्द्रियः ।

सत्यपरोविनीतः ।

धनेन धान्येन तथान्वितः स्यात् ।

स्त्रीणामभीष्टञ्च तथा भवेच्च ॥

इति विष्णुधर्म्मोक्तरोक्तं वसुव्रतम् ।

अथ कालाष्टमीव्रतम् ।

—०%०—

पुलस्त्य उवाच ।

नभस्त्रे मामि च तथा यास्यात् कृष्णाष्टमी शुभा ।

युक्ता ऋगगिरैश्चैव सा तु कालाष्टमीस्मृता ॥

तस्यां सर्वकलिङ्गेषु तिथौ स्वपति शङ्करः ।

वसन्तसन्निधाने तु तत्र पूजाक्षया स्मृता ॥

एकलिङ्गानि वृषभगणपतिमहितानि पश्चिमाभिसुम्नानि
प्रसिद्धानि ।

तत्र स्नायीत विद्वान् द्वि गोमूत्रेण जलेन च ॥

स्नात्वा सम्यज्जयेत् पुष्यैर्धूस्तरस्य त्रिलोचनम् ।

धूपः केशरनिर्यासैर्नवेद्यं मधुसर्पिषा ॥

केशरीवकुलः ।

प्रीयतां मे विरूपाक्ष इत्युच्चार्य्य च दक्षिणां ।

विप्राय दद्यान्नैवेद्यं सहिरण्यं द्विजोत्तम ॥

तद्ददाश्वयुजे मासि श्लोपपासो जितेन्द्रियः ।

नवम्यां गोमयस्नानं कृत्वा पूजाञ्च पङ्कजैः ॥

तद्ददाश्वयुजे मामि श्लोपवासइत्यभिधानात्

(१०७)

पूर्वमासेष्यपवामोबोद्धव्यः ।

धूपयेत्सर्जनिर्यासेनैवेद्यं मधुमादकान् ॥
 छत्वीपवासमष्टम्यां नवम्यां-ज्ञानमाचरेत् ।
 प्रीयतां मे विरूपाक्ष दक्षिणा च तिलैः स्मृता ॥
 कार्तिके पयसा ज्ञानं करवीरेण चाञ्चनं ।
 धूपं श्रीवासनिर्यासेनैवेद्यं मधुपायसैः ॥
 सनैवेद्यञ्च रजतं दातव्यं दानमग्रजे ।

श्रीवासः, सरलहृत्क्षः, अग्रजे ब्राह्मणे ॥

प्रीयतां भगवांस्थाणुरिति वाच्यमनन्तरम् ।
 छत्वीपवाममष्टम्यां नवम्यां ज्ञानमाचरेत् ॥
 मासि मार्गशिरे ज्ञानं तत्रार्चा रुद्रजा स्मृता ।
 अर्चा पूजा रुद्रजा शमीपुष्पजा ।
 धूपः श्रीहृत्क्षनिर्यासो नैवेद्यं मधुमादकं ।

श्रीहृत्क्षोवित्त्वः ।

नैवेद्यं रक्तशालिष्य दक्षिणा परिकीर्त्तिता ॥
 नमोस्तु प्रीयतां सर्व्व इति वाच्यञ्च पण्डितैः ।
 पौषे ज्ञानञ्च हविषा पूजा स्यात्पारणेन तु ॥

हविषा हृतेन ।

धूपीयं मधुकनिर्यासो नैवेद्यं मधुशष्कुली ।
 सामुद्रं दक्षिणा प्रोक्ता प्रीणनाय अगदगुकोः ॥
 वाच्यं नमोऽस्तु देवेश त्रयम्बकेति प्रकीर्त्तयेत् ।
 प्राप्ते कुशीदकज्ञानं शृगमदेन वाञ्छनम् ॥

वृगमदीक्षताकस्तूरी ।

धूपः कदम्बनिर्घासो नैवेद्यं सतिसोदनं ।
 पयः कुम्भेन नैवेद्यं सरस्वतं प्रतिपादयेत् ॥
 प्रीयतां मे महादेव उमापतिरितीरयेत् ।
 एवमेकं समुद्दिष्टं षड्भिर्मासैस्तु पारणम ॥
 पारणान्ते त्रिगोत्रस्य* स्रपनङ्कारयेत् क्रमात् ।

गोरीचनां चन्दनकुम्भेन
 देवं समालभ्य च पूजयेच्च ।
 चायम्न दीनोष्णि भवन्तमीश
 शशाङ्कनाथ प्रणतोऽस्मि नित्यं ॥

ततस्तु फाल्गुने मामि कृष्णाष्टम्यां यतव्रतः ।
 उपवासः समुदितः कर्त्तव्यो द्विजसत्तम ॥
 द्वितीयेऽङ्कि ततः ज्ञानं पञ्चगव्येन कारयेत् ।
 पूजयेत् कुन्दपुष्पैस्तु धूपयेच्चन्दनेन तु ॥
 नैवेद्यं सष्टतं दद्यात्ताम्रपात्रे गुडोदनं ।
 दक्षिणाञ्च द्विजातिभ्यो नैवेद्यसद्वितां मुने ॥
 ब्राह्मणेभ्यः प्रदद्याच्च रुद्रमभ्यर्च्य नामतः ।
 शैवे चेन्दुम्बरफलैः ज्ञानं मन्दारकार्चनं ॥
 गुग्गुलं महिषाख्यञ्च घृताक्तं घूपयेद्बुधः ।
 समोदकं तथा सर्पिः प्रीणनं विनिवेदयेत् ॥
 दक्षिणाञ्चैव नैवेद्यमुमाकान्ताय दापयेत्† ।

* त्रिनेत्रस्त्रीति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† चामाजिनमुदाहरेदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

नमोऽक्षर नमसोऽस्तु इदमुच्चार्य नारद ॥
 प्रीणनं देवनाथाय कुर्याच्च अक्षयान्वितः ।
 वैशाखे ज्ञानमुदितं सुगन्धिकुङ्कुमाश्रया ॥
 पूजनं शङ्करस्योक्तं भूतमन्त्ररिभिर्विभी ।
 धूपं सूर्याख्यपुष्पैस्तु नैवेद्यं सफलं हृतं ॥
 सूर्याख्यं, अर्कपुष्पं ।

नाम जप्तव्यमीशेति कालज्ञेति विपश्चिता* ॥
 जलकुम्भान् सनैवेद्यान् ब्राह्मणेभ्यो निवेदयेत् ।
 उपानदयुगलं क्वचं दानं दद्याच्च शक्तितः ॥
 नमस्ते भगनेऽन्न पुष्पदन्तविनाशन ।
 इदमुच्चारयेत्तथा प्रीणनाय जगत्पतेः ॥
 आषाढे ज्ञानमुद्दिष्टं श्रीफलैरर्चनं तथा ।
 धूसूरकस्य कुसुमैर्धूपार्थं सिद्धकं तथा ॥
 नैवेद्यं सष्टताः पूपाः दक्षिणा सष्टतास्तथा ।
 नमस्ते दक्षयज्ञे इदमुच्चारयेत्ततः ॥
 आवणे सृगमदेन ज्ञानं कृत्वाचयेद्दरिं ।
 श्रीवृक्षपत्रैः सफलैर्धूपं दद्यात्तथागुहं ॥
 नैवेद्यं सष्टतं दद्याद्दधिपूर्णास्तु मीदकान् ।
 दध्योदनं कृशरकाः कटिधानाः सशक्नुताः ॥
 दक्षिणा श्वेतवृषभं धेनुञ्च कपिलां शुभां ।
 कानकं रत्नवसनं प्रदद्याद्ब्राह्मणाय तु ॥

* नामपुष्पं इदं कालज्ञेति विपश्चिता इति पुष्पकान्दरे पाठः ।

गङ्गाधरेति वक्तव्यं नाम शम्भोश्च पण्डितैः
 प्रभोभिः षड्विंशद्विंशतैः पारणसुत्तमं ॥
 एवं सम्बत्सरं पूर्णं सम्पूज्य वृषभध्वजम् ।
 अक्षयान् लभते लोकान् महेश्वरपरी नरः ॥
 इदमुक्तं व्रतं पुण्यं सर्वाक्षयकारं शुभम् ।
 स्वयं वज्रेण देवर्षे तत्तथा न तदन्यथा ॥

इति वामनपुराणोक्तं कालाष्टमीव्रतम् ।

अथ रुक्मिण्यष्टमीव्रतम् ।

— ००० —

स्कन्द उवाच ।

भगवन् कथितं सर्वं यद्भीष्टं मम प्रभो ।
 साम्प्रतं श्रोतुमिच्छामि भुवि जातस्य वास्यचित् ॥
 येन पुत्रविद्योगेन भवेच्चैवं कदाचन ।
 गृहे हि वसतां केन नित्यं श्रीः परिकीर्तिता ॥

शङ्कर उवाच ।

शृणु पुत्र प्रवक्ष्यामि व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
 येन शीर्षेण मानेन नारी वा पुरुषोऽपि वा ॥
 न पुत्रविरहं कापि न च भर्तुस्तथा क्वचित् ।
 गृहस्थोपस्कारैर्द्रव्यैर्हीनता न प्रजायते ॥
 मासि मार्गशिरे कृष्णपक्षेऽष्टम्यां षड्दानन ।
 रुक्मिण्यष्टमिसंज्ञा सा सर्वकामफलप्रदा ॥

तस्यां प्रातः शुचिभूत्वा गारी नियमकारिणी ।
 वर्षे च प्रथमे कुर्यादेकवारं गृहं शुद्धा ॥
 गृहोपकरणं सर्वं तस्मिन्निष्पिष्य सादरम् ।
 त्रीहीन् स्तूपप्रकाराभैर्घृतादींश्च रसांस्तथा ॥
 वस्त्रैः काष्ठैस्तथा दन्तैश्चिनेन लिखितास्तथा ॥
 कार्याः पुस्तलिकास्तत्र तासां नामानि मे शृणु ।
 कृष्णश्च रुक्मिणीश्चैव वस्तुदेवस्त्वदन्वती ॥
 प्रद्युम्नश्चैव तद्भार्या अनिरुद्ध उवा तथा ।
 देवकीवसुदेवादीन् सर्वांस्तत्र प्रकल्पयेत् ॥
 ततोऽगुपूजयेत् सर्वांश्चैष्टधूपान्चतादिभिः ।
 चन्द्रोदये तु सञ्जाते दद्यादर्घ्यं तदिन्द्रि ॥
 शङ्खकुन्दप्रतीकाश्च गगनाङ्गणदीपक ।
 गृह्णाणार्घ्यं मया दत्तं शङ्कराय नमोऽस्तु ते ॥

इति चन्द्रार्घ्यमन्त्रः ।

अर्घ्यं दत्त्वा तु भुञ्जीत मित्रस्वजनवन्धुभिः ।
 ततः प्रभातसमये कुमार्यै तद्गृहं शुभं ॥
 दद्यात् प्रीतेन मनसा सर्व्ववस्तु प्रपूरितम् ।
 ततो द्वितीये अष्टे तु कुर्याद्देि सुखमन्दिरम् ॥
 पूर्व्ववत् पूरितं कृत्वा कुमार्यै विनिवेदयेत् ।
 ततस्तृतीये अष्टे तु कृत्वाभिसुखमन्दिरं ॥
 सम्पूर्णं पूर्व्ववत् कृत्वा कुमार्यै विनिवेदयेत् ।
 ततश्चतुर्थे अष्टे तु कृत्वा सुखचतुष्टयम् ॥
 पञ्चमैऽष्टे पञ्चवारं षष्ठे षण्णसुखसंयुतम् ।

कृत्वा दद्यात् प्रयत्नेन कुमार्यै मुखचतुष्टयम् ।
 पञ्चमिन्द्रे, पञ्चद्वारं षष्ठे षष्मुखसंयुतम् ॥
 कृत्वा दद्यात् प्रयत्नेन कुमार्यै सप्तमन्दिरम्* ।
 ततस्तु सप्तमे वर्षे कुर्यादुद्यापनं शुभम् ॥
 सप्तद्वारं गृहं कृत्वा सुधाधवलितं महत् ।
 शय्यां तूलीश्रयानं च हनीपानहनिव च ॥
 आदर्शं चामरश्चैव मुगलीलूखलं तथा ।
 कांस्यभाजनपात्राणि तान्मस्य तु महान्ति च ॥
 नानाविधानि वस्त्राणि तथैवाभरणानि च ।
 गृहोपकरणं सर्वं गृहे निक्षिप्य सर्व्वतः ॥
 कृत्वा च रुक्मिणीश्चैव प्रद्युम्नश्च मनोहरं ।
 कृत्वा स्वर्णमयान् शय्या पीतवस्त्रावगुण्ठितान् ।
 पूजयित्स्त्रीपवासेन रात्रिजागरणेन च ॥
 ततः प्रभातसमये तद्गृहे समुपागतम् ।
 सपत्नीकं द्विजं पूज्य वस्त्रालङ्कारभूषणैः ।
 तस्मादेतद्गृहं दद्यागाश्चैवाथ सुशीलिनीं ॥
 एवं कृते व्रते पुत्र न दुःखानि व्रजेन्नरः ।
 नारी वा पुत्रदुःखार्ता भवेन्नैव षडानन ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं रुक्मिण्यष्टमीव्रतम् ।

अथ दुर्गाव्रतम् ।

— ००० —

ब्रह्मीवाच ।

देवीव्रतं प्रवक्ष्यामि सर्व्वं कामप्रसाधनं ।
 आवये शुक्लपक्षे तु अष्टम्यां वायुभोजनः ॥
 ज्ञात्वा सार्धपुटीभूत्वा जितक्रोधः* क्रियान्वितः ।
 देवीं सखाय्य तोयेन पुनः क्षीरेण वारिणा ॥
 ततो गुग्गुलधूपञ्च सतुरुक्कन्तु दापयेत् ।

तुरस्कः मिङ्गकः ।

ततो गन्धीदकस्नानं पुनः स्नानञ्च वारिणा ॥
 श्रीखण्डेन समालभ्य बिम्बपत्रैः प्रपूजयेत् ।
 पायसं दापयेद्देव्या नैवेद्यन्तेन भोजयेत् ।
 कन्याद्विजांसं शक्त्या तु तेषां दद्याच्च दक्षिणां ॥
 कात्यायनीति चोच्चार्थं प्रीयतां मम सर्व्वदा ।
 आत्मनः पारणं तच्च ज्ञत्वा प्राप्नोति भार्गव ॥
 अग्नमेधफलञ्चाग्रं देव्या लोकाश्च गच्छति ।
 तथा गत्व इमां भूमिं पृथिव्यां जायते नृपः ॥
 तेन संलभते योगं शिवप्राप्तिकरं परं ।
 मासे प्रौष्ठपदे शुक्ले गोमृङ्गापग्रहौ तथा ।
 सृष्ट्या ह्यात्मनो ह्यङ्गसुपलिप्तन्तु कारयेत् ॥

* जमान्वित इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† शुक्लपक्षे इति द्वितीयः अष्टम्यामिति सम्बन्धत इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

शुक्ले तु शुक्लपत्रे तु अष्टम्या मित्यनुषङ्गः ।

तदा वामलकैः स्नात्वा शुचिः सङ्गविवर्जितः ।

पूजयेद्यूधिकापुष्पैर्देवीं क्षीरेण स्नापयेत् ।

चन्दनोदकमिश्रेण कुङ्कुमेन विलेपयेत् ॥

ततः पूषकनैवेद्यं कर्णवेष्टाञ्च दापयेत् ।

अगुरुं धूपनैवेद्यं तिलतैलेन दीपकान् ।

तेन ता भोजयेत्कन्या द्विजान् सदृत्तवर्जिनः ॥

तेन पूषकादिनैवेद्यान्नेन ।

पाषण्डान्नावलीकेत न च शास्त्रवह्निष्कृतान् ।

दक्षिणाः शक्तितीर्थ्याः स्वस्तिवाच्यं च मङ्गलम् ।

पारणं चात्मनः कृत्वा सौत्रामणिफलं लभेत् ॥

प्रयाति विष्णुलोकञ्च तथा विप्रोऽभिजायते ।

धनाढ्यीमहतां गोत्रे वेदवेदाङ्गपारगः ।

पुत्रवान् धनवान् भोगी सुखं प्राप्य शिवीभवेत् ॥

शुक्लाष्टम्यामाग्निने च मृदा स्नानं समाचरेत् ।

ततीदेवीं स्नपेद्वत्स दध्ना वेत्सूदकेन च ॥

भालभ्य रोचनां चन्द्रेर्द्वैद्द्वेषूपञ्च बालकं ।

सनखं सितया मिश्रं पद्मपत्रैस्तथार्चयेत् ॥

नैवेद्ये रोहितं मांसं समानं शल्यजं तथा* ।

गोधूमविल्लतान् भस्वान् घृतपक्वान्निवेदयेत् ।

तेन कन्यास्तु सन्भोज्य द्विजांश्चापि क्षमापयेत् ॥

* मांसं शास्त्रकञ्जं तथेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

शक्तितोदक्षिणा देया आत्मनस्तच्च भोजनं ।
 गीसहस्रप्रदानस्य फलं प्राप्नोति मानवः ॥
 अरोगी सुखवान् धन्यो जायते चेह मानवः ।
 दुर्गानामानि सङ्गीत्य तस्या लोके महीयते ॥
 कार्तिके दर्भमूलानि मृद्भिः स्नायीत भार्गव ।
 देवीं गन्धोदकैः स्नाप्य उशीरैः पूज्य लेपयेत् ॥
 धूपं पञ्चरसन्देयन्तिलतैलेन दीपकाः ।
 पञ्चरसं, बोलरालकुन्दुर्बुश्रीविष्टगुग्गुलुक्तं ।

नैवेद्यं यावकं सर्पिःकन्याविशेषु चात्मनि ॥
 भोजनं स्वस्तिवाच्यैव दक्षिणा प्रीयतां शिव ।
 अनेन विधिना वल्ल विद्यादानफलं लभेत् ॥
 वेदवीदाङ्गतस्त्रस्तदन्ते शिवतां व्रजेत् ।
 मार्गशीर्षे तथा मासि अष्टम्याङ्गिरिच्युत्सया ॥
 स्नात्वा देवीं ततः स्नाप्य तीर्थतोयेन भार्गव ।
 लेपयेदालकैः कुष्ठैः पूजा जातो गजाङ्गयैः ॥

गजाङ्गयैर्नागकेसरैः ।

धूपं कण्ठागुरुं दद्यात् घृतैर्दीपान् प्रवीधयेत् ।
 दधिभक्तान्तु नैवेद्यं कन्यास्नेनैव भोजयेत् ॥
 शक्तितोदक्षिणा देया आत्मनस्तच्च पारणं ।
 उमा मे प्रीयतां वाच्यं वाजपेयफलं लभेत् ॥
 इष्टैव धनवान् भोगी देहान्ते ब्रह्मणः पदम् ।
 पीषाष्टम्यान्तु दूर्वायैः स्नात्वा शुक्लपरिच्छदः ।

जितक्रोधः स्नापयेच्च देवीं कर्पूरवारिणा ॥
विलेपयेत् कुङ्कुमिन् मांसी वालकचन्दनैः ।
धूपञ्च निर्दहेत् प्राग्गः पूजनीया कुरुण्टकैः ॥
कृशरं गुडनैवेद्यं कन्या भोज्याश्च तेन वै ।
आत्मनः पारथं तच्च शक्त्या वै दक्षयेत् द्विजान् ॥
नारायणो सदा प्रीता मम देवी प्रसीदतु ।
कृतेन ग्रहराजेन्द्र भूमिदानफलं लभेत् ॥
सुभगोधनसम्पन्नः परञ्च शिवमाप्नुयात् ।
माघमासे गवां ऋङ्गच्छिः स्नात्वा तु भार्गव ॥
देवीं तीयेन संस्त्राप्य तथा क्षीरघृतेन च ।
स्नापयेत् पुनस्तोत्रैः कुङ्कुमेन विलेपयेत् ॥
धूपं देवदलं दद्यात् कुन्दपुष्पैस्तु पूजयेत् ।
घृतपूर्णञ्च नैवेद्यं कन्या विप्राञ्च तेन वै ॥
भोजयेदात्मनस्तच्च दक्षिणा प्रीयतां जया ।
सर्वथागफलं पुण्यं लभते नात्र संशयः ॥
फाल्गुने सर्वपैः स्नात्वा देवीनाम्ना फलाम्बुना ।
तथाद्दक्षरसेनैव भूयस्तेनोदकेन च ॥
रोचनालेपने पूजा शतपत्रिकया गुह्य ।
दीपोद्यतेन धूपस्तु चन्दनं नतु शर्करा* ॥
नैवेद्येऽशोकवर्त्तिञ्च भोजनं कन्यकास्तु च ।
आत्मनस्तच्च कुर्वीत दक्षिणां स्मस्ति वाचयेत् ॥

* नक्षशर्करा इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

विजया सुखदा नित्यं सुसुखा चेतनेति च* ।
 अनेन विधिना युक्त राजसूयफलं समम् ॥
 लभते अद्यया युक्तो ततो देवीमयं जगत् ।
 चैवाष्टम्यां तु स्नायीत मातृस्नाने मृदास्त्रुतिः॥ ।
 देवीं तीर्थजलैः स्नाप्य मदलेपेन लेपयेत् ॥
 धूपं तु रक्षसौशीरं† ह्यतिमुक्तैस्तु पूजयेत् ।
 नैवेद्यं शालिजं भक्तं शर्करा कन्यकास्तपि ॥
 आत्मनस्तच्च वै भोज्यं शक्तितोदक्षिणा ददेत् ।
 अजिता सर्वकामानाम् पूरणाय सुखाय वै ॥
 विप्रकन्याः समाच्छाद्य हेमदानफलं लभेत् ।
 सहकारफलैः स्नानं वैशाखे ह्यष्टमीं शुचिः ॥
 आत्मानं देवताः स्नाप्य मांसीवालकवारिभिः ।
 लेपनं मृगकपूरं धूपं पञ्चसुगन्धिकम् ॥
 देव्याः पूजां प्रकुर्वीति केतव्या चम्पकेन तु ।
 शर्कराक्षीरनैवेद्यं कन्याविप्रेषु भोजनं ॥
 आत्मनः पारणं तच्च दक्षिणां शक्तितोददेत् ।
 अपराजिता भवानी च शिवा नाम्ना च वाचयेत् ॥
 प्रीयतां सर्वकालं मे ईप्सितं तु प्रयच्छतु ।
 सर्वतोर्थाभिषेकं तु अनेनाप्नोति भागव ॥
 सूर्यलोकं व्रजेदन्ते तत्तुल्योजायते सदा ।
 अष्टम्यां त्रैव ज्यैष्ठस्य तिलैः स्नायाद्द्विचक्षणः ।

* संमुभेधिनितानिर्चति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† रक्षसौशीरमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

सर्वसङ्गपरित्यागी देवीं जातिफलासुना ॥

स्नापयेत्पयस्ताभिश्चन्दनेन सुगन्धिना ।

ततोविजयपुष्पैस्तु पूजयेद्दग्रहसप्तम ॥

विजयः कुशकः ।

नैवेद्येशक्तवी देयाः शर्करा कन्यकास्वपि ।

दक्षिणा शक्तितोदेया चर्चिकां प्रति वाचयेत् * ॥

लभते शुक्र यज्ञस्य सौत्रामणिसमं फलम् ।

अष्टम्यां च तथाषाढे निशातोयेन स्नापयेत् ॥

ततोदेवीं जलैः कुष्ठैर्वरदामधुकेन च ।

जलैःकालकैः ।

मधुकेन यष्टिमधुना ।

स्नात्वा विलिप्य कर्पूरं चन्दनैरोचनाम्बुभिः ।

धूपश्चन्दनकर्पूरैर्वाङ्गीकः सितसिङ्गकैः ॥

सिताशर्करा ।

भक्ष्यान्नशर्करापूपान् पानकानि शुभानि च ।

दापयेत् कन्यकां विप्र भोजनं चालनस्तथा ॥

शक्तितोदक्षिणां दद्यात् महिषघ्नीति कीर्त्तयेत् ।

टीपमाला छृतेनैव सर्वकामान् प्रयच्छति ॥

नैवेद्यं शुभ्रकंसारं कन्याविप्रांश्च भोजयेत् ।

सर्वं यज्ञमह्वीदानसर्वतीर्थफलं लभेत् ।

एतद्दत्तवरं शुक्र मया तद्रेण विष्णुना ॥

जगतोद्धितमिच्छन्निशीर्षन्दुर्गाव्रतं महत् ।
 भानुना ग्रहविध्वंससमरे च कृतं पुरा० ॥
 यथादेवासुरैर्यज्ञनागकिन्नरमानवैः ।
 अप्सरोभिस्तथास्त्रीभिः सौभाम्यस्य विद्वद्वये ॥
 कृतं वै ग्रहमार्दूलं यच्च कुर्याद्यथाविधि ।
 श्रवणादस्य चाप्नोति सर्वकामसुखानि च ॥
 दृष्टानि लभतेमर्त्या बन्ध्यापुत्रं प्रसूयते ।

इति देवीपुराणोक्तं दुर्गाव्रतम् ।

अथाशोकाष्टमीव्रतम् ।

— ००० —

कृष्ण उवाच ।

लिङ्गपुराणात् ।

अशोक कलिकाशाष्टी ये पिबन्ति पुनर्व्वसौ ।
 चैत्रे मासं तथाष्टम्यां न ते शोकमवाप्नुयुरिति ॥

कूर्मपुराणेऽपि ।

चैत्रेमासि सिताष्टम्यां बुधवारि पुनर्व्वसौ ।
 अशोककुसुमैरुद्रमर्च्चयित्वा विधानतः ॥
 अशोकस्याष्टकलिका मन्त्रेणोक्तेन भक्षयेत् ।
 शोकं नैवाप्नुयान्मर्त्या रूपवानपि जायते ॥

अथ बुधपुनर्व्वसुयोगः प्रागस्त्यार्थः ।

३ भानुनाशोमिधिवत्समरे चेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

अतएव सिद्धपुराणे ।

अशोककलिकापान, मशोकतरुपूजनम् ।

उक्ताष्टम्यान्तु चैत्रस्य कृत्वा प्राप्नोति निर्घृतिमिति ॥

प्राशनमन्त्रस्तौ सिद्धपुराणे

त्वा, मशोकहरा, भौष्ट मधुमाससमुद्रव ।

पिबामि शोकसन्तप्तो मामशोकं सदा कुर्विति ।

कूर्मपुराणोक्तस्तु त्वामशोकं नमाम्भेनं मधुमासेति शोभितं ॥

शोकार्तः कलिकाः प्राग्ने मामशोकं सदा कुर्विति ॥

इत्यशोकाष्टमीव्रतम् ।

अथ सोमव्रतम् ।

—०००—

छाण्ड उवाच ।

चन्द्राष्टम्यां रोहिणीस्यात्तदा चन्द्रव्रतचरेत् ।

शिवं सम्पूज्य विधिवत् ज्ञानैः पञ्चाशतादिभिः* ॥

विलेपनन्तु चन्द्रेण चन्दनेन तु वा हितं ।

शक्तवस्त्रैस्तथापुष्पैः पूजयेत्परमेश्वरं ॥

नैवेद्यं क्षीरकुम्भन्तु सितशर्करया युतं ।

प्राशनं चन्दनेनैव रात्रौ जागरणं हितं ।

आयुःकामैः सदा कार्यं कौर्त्तिञ्चीसाधने हितं ।

इति चन्द्रव्रतं नाम दारदानेन† जायते ॥

इति कात्यायनरोक्तं सोमव्रतम् ।

* रविमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† दारदानेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

अथ राजराजेश्वरव्रतम् ।

—०००—

बुधस्वात्यात्मिकोयोगो यदाष्टम्यां प्रजायते ।
 उपोषितस्तु विधिना महास्नानपुरःसरं ॥
 सम्पूजयेद्विरूपाक्ष मङ्गरागचतुःसमं ।
 महावर्तिहयं दीर्घदीपं साष्टोत्तरं शतं ॥
 लघुकुङ्कुमधूपन्तु सितपुष्पैस्तु पूजयेत् ।
 खण्डखाद्यान्यनेकानि नैवेद्यान्तु प्रकल्पयेत् ॥
 आचार्याय शिवस्वाये प्रैवेयमुकुटादिकं ।
 रसनाकुण्डलेचैव कङ्कणं मुद्रिकाहयं ॥
 वाहनन्तु गजस्यैव तद्भावाद्युत्तम ।
 सम्पूज्य परया भक्त्या धनञ्च शर्कराष्टतं ॥
 राजराजेश्वरपदं प्राप्नुयाद्रीमसङ्गरया ।
 राजराजेश्वरं तेन व्रतमेतत् प्रकाशितम् ॥

इति कालोत्तरोक्तं राजराजेश्वरव्रतम् ।

अथ महाव्रतम् ।

—०००—

ऋक्शावषयोगस्तु यदाष्टम्यां प्रजायते ।
 चतुर्दश्यामथो वत्स तदा व्रतं समाचरेत् ॥
 उपोषितस्तु विधिना महास्नानं समाचरेत् ।

अगुरुदन्तनेत्रैव रोचनाकुण्डुनेत्र* ॥
 महादीपचतुष्केषु धूपं कृष्णागुरुं शिवं ।
 तैवेद्यं पृथग्भूयिष्ठं यावत्केन समन्वितं ॥
 भोगास्तु विधिना तत्र शिवस्याग्ने प्रकल्पयेत् ।
 आचार्यं पूजयित्वा तु ब्रह्महेमाचभूषणैः ॥
 प्रत्यग्रं कुङ्कुमं पुष्पैः शिवस्याग्ने प्रकल्पयेत् ॥
 ऋग्यजुःसामाबर्च्यैरामिकैकं तद्देव हि ॥
 इमं महाव्रतं नाम मया ते परिकीर्तितं ।
 विलसेद्देवर्षी सर्वां सप्तद्वीपां ससागरां ॥
 रात्रौ जागरणं कार्यं महाविभवसम्भवेः ।
 पितॄन् पितामहाञ्चैव तथैव प्रपितामहान् ॥
 पुत्रान् पौत्रान् प्रपौत्राञ्च शिवलोकेषु यत्फलं ।
 इदं महाव्रतं नाम कर्त्तव्यं पृथिवीश्वरैः ॥
 इति कालोत्तरोक्तं महाव्रतम् ।

अथ विश्वरूपव्रतम् ।

—000—

रेवतीश्रनियोगस्तुः सितपृष्ठां यदा भवेत् ।
 भूतायां वा महाश्वेन तदा जातमिदं शृणु ॥
 महाज्ञानं प्रकर्त्तव्यं नित्यज्ञत्यादनन्तरम् ।

* अङ्गराजमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† नक्षी इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ नवनीति कश्चित् पाठः ।

चन्द्रेयैवाङ्गरागन्तु रत्नपूजान्तु कल्पयेत् ॥
 शितपद्मानि देयानि भूषणानि बह्वन्यपि ।
 चन्द्रमेवं दहेत्पुं नैवेद्यं पायसकृतम् ॥
 श्वेताश्वत्थरुणं* सौम्यं शिवाय विनिवेदयेत् ।
 अश्वत्थं कुङ्कुमं चाचार्याय प्रदापयेत् ॥
 ऋग्यजुःसामाद्यर्च्यं प्रत्यश्वं कुङ्कुमं तथा ।
 रात्र्यर्घ्यं लभते रात्र्यं यावदाहृतसंप्रवम् ॥
 पुत्रार्घ्यं लभते पुत्रान् वायुतुल्यपराक्रमः ।
 भोगार्घ्यं लभते भोगान् विद्यातत्त्वेन ग्राह्यतान् ॥
 यान् यान् कामयते कामान् तांस्तान् कामानवाप्नुयात् ।
 विश्वरूपमिदन्तेन व्रतमेतदुदाहृतम् ॥
 कुशोदकप्राशनन्तु रात्रौ जागरणं ततः ।

इति कालोत्तरोक्तं विश्वरूपव्रतम् ।

अथ बुधाष्टमीव्रतम् ।

—000—

श्रीकृष्ण उवाच ।

बुधाष्टमीव्रतं भूप त्रयोमि शृणु पाण्डव ।
 येन चीर्येण नरकं नरः पश्यति न क्वचित् ॥
 पुराकृतसुगन्धादी इलोराजा बभूव ह ।
 बहुभृत्ययुतोमिशमन्त्रिभिः परिवारितः ॥

* अहम्याभिति पुलकान्तरे पाठः ।

जगाम हिमवत्पार्श्वे महादेवानिवाहितः ।
योऽसौ प्रविशते भूमौ सा स्त्री भवति निश्चितं ॥
स राजा खगसङ्घे न प्रविशेत्तदुभाषणे ।
एकाकी तुरगोपेतः श्वात्स्नीत्वं जगत्तु ॥
सा वभ्राम बने शून्धेपीनोन्नतपयोधरा ।
का त्वं कस्य कुतः प्राप्ता अनुरोधोऽस्ति किञ्चन ॥
तां ददर्श बुधस्तन्वीं रूपीदार्यगुणान्वितां ।
अष्टम्यां बुधवारेण तस्मात्सृष्टी बुधोपहः ॥
ददौ गृह्णाश्रमन्तस्त्रा मानीयत प्रतीषितां ।
पुत्रसुत्पादयामास योऽसौ ख्यातः पुरुरवाः ॥
चन्द्रवंशकरोराजा भाष्यः सर्वमह्वीचितां ।
ततः प्रभृति पूज्येयमष्टमी बुधसंयुता ॥
सर्वपापप्रशमनी सर्वोपद्रवनाभिनी ।
अज्ञानदयिते बन्धिम कर्म राजकथामलं ॥
आसौद्राजा विदेहानां मिथिलामनु वैरिभिः ।
संग्रामिनाहतोवौरस्तस्य भार्यादरिद्रिणी ॥
उर्ध्विला नाम वभ्राम महीं बालकसंयुता ।
अवन्तिविषयप्राप्तौ ब्राह्मणस्य निवेशने ॥
आकारोद्गरपूर्णां गित्यं कण्ठनपेषणं ।
कृत्वा सा स्तोकगोधूमं ददौ बालकयोस्तदा ॥
कार्पण्यान्नाहवास्तस्यात्सुखासम्पीडमानयोः ।
कालेन बहुधा साध्वी पञ्चत्वमगमच्छुभा ॥
पुत्रस्तस्या विदेहाख्यं गत्वा स पितुरासने ।

उपविष्टः सत्वयोगात् बुभुजे जमनाकुलम् ॥
 अन्विष्य धर्मराजोऽसौ सा कन्या मिथिवंशजा ।
 विवाहिता हिता भर्तुः सामहानायिका भवत् ॥
 श्यामला नाम चाव्यङ्गी प्रसिद्धा श्रूयते श्रुतौ ।
 तामुवाच वरारोहं धर्मराजः स्वयं प्रियां ॥
 बहस्र सर्व्वव्यापारं श्यामले त्वं गृहे मम ।
 कुर्व्व स्वजनभृत्यानां दानाद्येपं यथेक्षितं ॥
 किं त्वेते पञ्चराः सप्त नालोक्या अतियन्त्रिताः ।
 कदाचिदपि घोरासु त्वया वैदेहनन्दिनि ॥
 एवमस्वितिसाप्युक्ता निजं कर्म चकार ह ।
 कदाचिद्द्वयकुलीभृता ब्रह्मराजविदेहजा ॥
 उदघाटयित्वा प्रथमं ददर्श जननीं स्वकां ।
 सा पञ्चमाना क्रन्दन्ती भीषणैर्यमकिङ्करैः ॥
 हेलयाच्चिप्यते बध्वा तप्ततैले पुनः पुनः ।
 तथैव तां समालोक्य व्रीडिता सा मनस्विनी ॥
 द्वितीये पञ्चरेतद्वन्मातामेव ददर्श ह ।
 सुधावत् पित्र्यमाणान्तां शिलापात्याष्टकेतुना ॥
 तृतीये पञ्चरेतद्वन्तां ददर्श स्वमातरम् ।
 क्रकचैः पाटयते मूर्ध्नि घण्टायुक्तैः करोत्वपैः ॥
 चतुर्थपञ्चरे स्थाने भीषणैः स्वरूपाननैः ।
 भूष्यमानैः स्नापदैश्च क्रन्दतीं तां पुनः पुनः ॥
 पञ्चमे निहतां भूमौकण्ठं पादेन पीडितां ।

सदृशैर्घनचद्वैद्य विदीर्णा क्रियते तु सा ॥
 षष्ठे भुर्येचमध्यस्था मस्तकेसुहराहतां ।
 सम्पीड्यमानामनिशं सुदृढं खण्डखण्डवत् ॥
 सप्तमे पञ्चरेचार्त्तस्त्रनां पूति सुगन्धिना ।
 दृष्ट्वा तथागतां तां तु मातरं दुःखकर्षितां ॥
 श्यामला स्नानवदना किञ्च नीवाच भामिनी ।
 अथागतयमं प्राह सरोषा श्यामला पतिं ॥
 किन्तवापहृतं राजन् ममत्वाशंस दारुणम् ।
 येनत्वं विविधैर्घातैर्वध्यते बहुधाचया ॥
 यमः प्राह प्रिये दृष्ट्वा भद्रेनोदघटिता त्वया ।
 एते पिञ्जरकाः सप्त निषिद्धा त्वं मया पुरा ॥
 तवमात्रा सुतस्त्रेहाज्ञोधूमोऽपहृतः किल ।
 किञ्चजानासि तेभद्रे धेन तुष्ट्यापयोपरि ॥
 ब्रह्मस्त्रं प्रणयाद्भूतं दहत्यासप्तमं कुलं ।
 तदेव चौर्यरूपेण क्लिन्नात्पाचन्द्रतारकं ॥
 गोधृमास्तदिमे भूताः कृमिरूपाः सुदारुणाः ।
 ये पुरा ब्राह्मणगृहेऽहता तवकृते मया ॥

श्यामलोवाच ।

जानामि तदहं सर्व्वं यन्मे मात्राकृतं पुरा ।
 तथापित्वां समासाद्य त्वाञ्च जामातरं शुभम् ॥
 मुच्यते कृमिराशित्वाद्यथावदधुना कुरु ।
 तच्छ्रुत्वाचिन्त्याविष्ट द्वादशोऽवस्थितचिरं ॥
 बुधाष्टमो सुसम्पूर्णा यथोक्तफलदायिनी ।

तत् फलं वञ्चतीवेयं कुर्व शीघ्रं जगाद् तां ॥
 धर्मराजः सदासीनां प्रियां प्राचघनेच्छरीं ।
 व्रतञ्च सप्तमे, तीतेज्जनि ब्राह्मणी शुभा ॥
 चार्त्तासि च त्वयासङ्गात्सखीनां पर्युपासिता ।
 बुधाष्टमी सुसम्पूर्वायद्योक्तफलदायिनी ॥
 तत् फलं वञ्चती वाचं सत्यां कृत्वा ममापतः ।
 येन मुञ्चेत तेमाता नरकात् पापसङ्घटात् ॥
 तच्छुत्वात्वरितं क्वात्वा ददौ पुण्याहवाचकम् ।
 समातुः श्यामला तुष्टा तेन मीचं जगाम सा ॥
 उर्ध्विला रूपसम्बन्धा दिव्यदेहधरा शुभा ।
 विमानवरमाकृष्टादिव्यमास्याम्बराहता ॥
 भर्तुः समीपे स्वर्गस्था इच्छतेऽद्यापि सा जनेः ।
 बुधस्य पार्श्वे नभसि मिथिराजसमीपतः ॥
 विस्तुरति महाराज बुधाष्टम्याः प्रभावतः ।

बुधिष्ठिर उवाच ।

यद्येवं प्रवराह्या तिस्रिर्वेका बुधाष्टमी ।
 तस्माएव विधिं ब्रूहि विधानञ्च विशेषतः ॥
 तस्या एव विधिं ब्रूहि यदि तुष्टीसि मे प्रभो ।

श्रीकृष्ण उवाच ।

नृणु पाण्डव गज्जेन बुधाष्टम्यां विधिं शुभं ।
 यदा यदा सिताष्टम्यां बुधवारो भवेन्नदि ॥
 तदा तदैव सा याञ्चा एकभक्ताशनैर्नृभिः ।
 क्वात्वा नद्यां तु पूर्वाङ्गे गृहीत्वा करकं नवं ॥

जलपूर्णं सहेमानं कृत्वा खाद्यैः समन्वितम् ।
 दद्याद्विप्राय तं जत्वा गृहं चैव क्रमेण तु ॥
 अष्टम्यष्टविधानेन विचित्राक्षैः पृथक् पृथक् ।
 प्रथमा मोदकैर्भक्ष्यैः द्वितीया धानकैस्तथा ॥
 तृतीया घृतपूरैश्च चतुर्थी घटकैर्नृप ।
 पञ्चमी शुभ्रकासारैः षष्ठीसोहासकैः शुभैः ॥
 अशोकवर्जिभिः शुभ्रैः नप्तमी चातिवाहयेत् ।
 अष्टमी फाषितापूर्णैः खण्डवेष्टैर्युधिष्ठिर ॥
 एवं क्रमेण कर्त्तव्याः सुहृत्स्वजन बान्धवैः ।
 सहेकत्र स्थितैर्भोज्यं भोक्तव्यं प्रीतिपूर्वकम् ॥
 उपास्यानमिदं पार्थ भोजनं सहसा त्यजेत् ।
 तावदेव हि भोक्तव्यं यावन्ना कथ्यते कथा ॥
 ततोभुत्वावुधस्यापि वाचम्य च समाहितः ।
 विप्राय वेदविदुषे वाचकाय प्रदापयेत् ॥
 साक्षतं सहिरण्यं च जातरूपमयं शुभम् ।
 अर्चितं चर्चितं गन्धैः पुष्पैर्धूपैः सुगन्धिभिः ॥
 पीतवस्त्रैः समाच्छ्रितं बुधं सोमात्मजाकृतिं ।
 माषकेन सुवर्चस्व तदर्चाहेन वा कृतां ॥

बुधरूपसुक्तं मत्स्यपुराणे ।

पीतमास्याम्बरधरः कर्णिकारसमद्युतिः ।
 खड्गचर्मगदापाणिः सिंहस्त्रीवरदीबुध इति ॥
 भक्तियुक्तस्तु कौन्तेय दद्याद्देवं समुच्चरन् ।

ॐ बुधाय नमः । श्रीं सोमात्मजाय नमः । श्रीं दुर्बुद्धिनाशाय
नमः । श्रीं सुबुद्धिप्रदाय नमः । श्रीं ताराजातभ्य नमः ।
श्रीं पीताम्बराय नमः । श्रीं सौम्यग्रहाय नमः । श्रीं सर्वसौख्यप्रदाय
नमः ।

इति पूजामन्त्राः ।

श्रीं बुधोयं प्रतिगृह्णाति द्रव्यस्यस्तु पुनः स्वयं ।
दीयते बुधरूपेण तुष्यतां मे बुधोत्तमः ॥

दानमन्त्रः ।

श्रीं दुर्बुद्धिविधोष दुरितं नाशयत्वावधोर्वुधः ।
सौख्यं सौमनसं नित्यं करोतु यशिनन्दनः ॥
इत्युच्चार्य गृहोत्वा तु दत्त्वा मन्त्रपुरस्कृतम् ।
सप्तजन्मनि राजेन्द्र भवेज्जातिस्मरीभुवि ॥
धनधान्यसमायुक्तः पुत्रपौत्रसमृद्धिमान् ।
दीर्घायुर्विपुलान् भोगान् बहून् भुक्त्वा महीतले ॥
ततः सुतीर्थमरणं ध्यात्वा नारायणं लभेत् ।
मृतोऽसौ स्वर्गमाप्नोति पुरन्दरपुरीं नृप ॥
तत्रास्ते यावदासृष्टे र्यावदाभूतसंप्रवम् ।
एवमेवा समाख्याता शुद्धा पार्थ बुधाष्टमी ॥
यां शुक्ला ब्रह्महा गोघ्नः सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
यथाष्टमीं बुधयुतां समवाप्य भक्त्या
सम्पूजयेच्छशिसुतं करकीपरिस्थम् ।
पक्वान्नपानसहितं सहिरण्यवस्त्रं

पश्यत्यसौ यमसुखं न कदाचि देव ॥
इति भविष्योत्तरे बुधाष्टमीव्रतम् ।
अथ दूर्वाष्टमीव्रतम् ।

—000—

विष्णुसवाच ।

ब्रह्मान् भाद्रपदे मासि शुक्लाष्टम्यामुपोषितः ।
पूजयेच्छङ्करं भक्त्या योनरः अक्षयान्वितः ॥
स याति परमं स्थानं यत्र देवस्त्रिलोचनः ।
गणेशं पूजयेद्दशस्तु दूर्व्या या हितं मुने ॥

गणेशोमहेश्वरः ।

फलानां सकलैर्दिव्यै गन्धपुष्पैर्विलेपनैः ।
दूर्वां पूज्य तपेक्षानं मुच्यते सर्वपातकैः ॥
शुचौ देशे प्रजातायां दुर्वायां ब्राह्मणीत्तमः ।
स्नाप्य लिङ्गन्ततो गन्धैः पुष्पैर्धूपैः समर्चयेत्* ॥
खर्जूरैर्नारिकेलैश्च मातुलिङ्गफलैस्तथा ।
पूजयेच्छङ्करं भक्त्या दूर्व्या विधिवद्भिज ॥
दध्यक्षतैर्हिजयेष्ठ प्रदद्यात्तु त्रिलोचने ।
दूर्वा शमीभ्यां सम्पूज्य मानवः अक्षयान्वितः ॥
स वै सुकृतजन्मा स्यात् सर्वदेवैस्तु वन्दितः ।
विद्यां प्राप्नोति विद्यार्थी पुत्रार्थी पुत्रमाप्नुयात् ॥

● चमपंचेदिति ह्यपि पाठः ।

धर्मार्थी धर्ममाप्नोति कन्यार्थी लभते च तां ।
 मनसा यदयदिच्छेत तत्तदाप्नोति मानवः ॥
 य एवं पूजयेद्दूर्वां भूतेषां मानवः फलैः ।
 सप्तजन्मनि पापौघैर्मुच्यते नात्र संशयः ॥
 जालोपवासं सप्तम्यामष्टम्यां पूजयेच्छिवम् ।
 दूर्वासमेतं विप्रेन्द्र दध्यक्षतफलैः शुभैः ॥
 त्वं दूर्वैः ऽष्टजन्मासि वन्दितासि सुरासुरैः ।
 सौभाग्यं सन्ततिं देहि सर्वकार्यकरौ भव ॥
 यथा शाखाप्रशाखाभिर्विस्तृतासि महीतले ।
 तथा ममापि सन्तानं देहि त्वमजरामरेण ॥

दूर्वापूजनमन्त्रः ।

सलिङ्गमन्त्रे रीशानमर्चयेत् प्रयतः शुचिः ।
 ततः सम्पूजयेद्दिप्रान् फलैर्नानाविधैर्द्विज ॥
 अन्नमिपक्कमश्रीयादन्नं दधि फलं तथा ।
 अक्षरसवणं ब्रह्मन् नाश्रीयान्मधुनान्वितं ॥
 दद्यात् फलानि विप्रेषु फलाहारः स्वयं भवेत् ।
 प्रणम्य शिरसा दूर्वां शिवं शिवमवाप्नुते ॥
 य एवं कुरुते भक्त्या महादेवस्य पूजनम् ।
 गणत्वं यात्यसौ ब्रह्मन् मुच्यते ब्रह्महत्याया ॥
 एवं पुञ्जा पापहरा अष्टमीदेवसंज्ञिता ।

* भाव्यासिनि पुण्ड्रान्तरे पाठः ।

† मन्वाविद्य तदन्तानमिति पाठान्तरं ।

चतुर्णामपि वर्णानां स्त्रीजनानां विशेषतः ॥
इति भविष्यपुराणोक्तं दूर्वाष्टमीव्रतम् ।
अथ दूर्वाष्टमीव्रतम् ।

—०००—

शुक्लाष्टम्यां तु सम्प्राप्ते मासि भाद्रपदे तथा ।
दूर्वाप्रतानं सुश्वेतसुत्तराशाभिगामिनं ॥
पूजयेद्दृष्टमान्नीयं गन्धमाल्यानुलेपनैः ।
फलमूलैस्तथाचैव दीपं धूपैर्विसर्जयेत् ॥
अग्निपक्वं तथा सर्वां निवेद्यच्च कथञ्चन ।
भोक्तव्यञ्च तथा ब्रह्मन् वक्रपक्वविवर्जितम् ॥
दूर्वाङ्कुरस्थां सम्पूज्य विधिना यौवने प्रियम् ।
यौवनं स्थिरमाप्नोति यत्र यत्राभिजायते ॥
इति आदित्यपुराणोक्तं दूर्वाष्टमीव्रतम् ।

अथाशोकाष्टमीव्रतम् ।

—०००—

भानुववाच ।

अष्टमीषु च सर्वासु पूजनयोग्यशोका ।
गन्धमाल्यनमस्कारदीपधूपान्नसम्प्लवा ॥
तस्मिन्नहनि या भुङ्क्ते नक्तमिन्दुविवर्जिते ।
भक्त्यशोविशोका सा यत्र यत्राभिजायते ॥
अष्टमीषुच सर्वासु नचेच्छुक्तेति वै मुने ।

प्रोष्ठयद्यामतीतायां या स्यात् कृष्णाष्टमी द्विजाः ॥

तस्यामवश्यं कर्त्तव्यं देवीं पूज्य यथाविधि ।

इत्यादित्यपुराणोक्तमशोकाष्टमीव्रतम् ।

अथ मातृव्रतम् ।

— ००० —

मातृणामष्टमी दत्ता ब्रह्मणा तिथिरुत्तमा ।

एतांः क्षमापयेद्भक्त्या निराहारो नरः सदा ॥

तस्य ताः परितुष्टास्तु क्षेममारोग्यं ददन्ति च ।

इति वाराहपुराणोक्तं मातृव्रतम् ।

अथ नरसिंहव्रतम् ।

— ००० —

सनत्कुमार उवाच ।

अथाष्टमीव्रतं ब्रह्मन् प्रीच्यमानमिदं शृणु ।

भवविध्वंसनं नृणां सर्वार्तिहरणं परं* ॥

राजा वा राजपुत्री वा यदि चेद्भिषुनाशनं ।

तदष्टम्यान्तु सुस्नातो यथायश्च प्रकाशयेत् ॥

कुर्व्यादष्टदक्षं पद्मं तन्दुलैर्वाप्रसूनकैः ।

कार्षिकायामथेशानं नरसिंहाकृतिं स्मरेत् ॥

उग्ररूपं महादंष्ट्रं गन्धोराध्वानगर्जितम् ।

* उपवासव्यकारवेदिति पाठान्तरं ।

लहद्रजततुङ्गादिप्रवराहतमुद्यति ।
 चलत्करालकुटिल भ्रूभङ्गनिहताहितं ॥
 वक्त्रान्तवृत्तिज्वलितस्फुरत्पद्मबिलोचनं ।
 दंष्ट्राप्रान्त विनिर्झूतञ्जालाव्याप्तदिगन्तरम् ॥
 नखरागविनिर्भ्रंशवैरिबन्धः क्षत श्रुतिः ।
 दैत्योरस्थलबिन्दोदक्षतजानुकाराखुजः* ॥
 रक्तपुष्पगुडान्नेन फलमूलेन चार्चयेत् ।
 तत् प्रकाशे महाकुम्भमव्रणं भारसन्धितं ॥
 तीर्थोदकेन श्चिना मन्थवृत्तेन पूरितम् ।
 वस्त्रयुग्मेन सच्छत्रं कुशकूर्चसमन्वितं ॥
 सर्वौषधिसमायुक्तं सर्वरत्नसमन्वितं ।
 धान्यपूगेऽथ वा श्वेततण्डुले स्थापयेत् सुधीः ॥
 दिक्षु वा कलसानष्टे शुभवंस्त्रादिसंयुतान्† ।
 पूर्वार्दिकमयोगेन स्थापयेदेकमग्रतः ॥
 हारप्रदेशे संस्थाप्य कलयानां हयं हयं ।
 हारपालान् प्रतिष्ठाप्य कलशेषु वह्नि क्रमात् ॥
 रथाङ्गं पाञ्चजन्यश्च श्राङ्गं‡ नन्दकमेव च ।
 स्मरन् प्रतीचीपर्यन्तं कलशेषु यथाक्रमं ॥
 शरांश्च सुगलं चन्द्रं स्मरन् क्षीणेषु वै गर्दाङ्गः ।
 अनन्तरश्च वै तार्क्ष्यं वेदात्मानश्च संस्मरन् ॥

* चाक्षयेदिति पाठान्तरम् ।

† भवत्स्वयमानवीति पाठान्तरं ।

‡ मङ्गलिति पाठान्तरम् ।

तत्र तत्र च वै नास्मा पूजयेत्सुसमाहितः ।
 रक्ताशुलेपनैः पुष्पैः फलमूलैः समर्चयेत् ॥
 तत्र तत्र च तन्मन्त्रं जपेदष्टसहस्रकम् ।
 अष्टोत्तरसहस्रं वा शतम्वापि सशक्तितः ॥
 वृसिंहैकाक्षरं मन्त्रं जपेद्दानुष्टुभं परं ।
 जपान्ते कल्पयेत् कुण्डमग्रतः शास्त्रसम्मतम् ॥
 द्विहस्तायामविस्तारं योनिनाभिसमन्वितम् ।
 चतुर्भुजलकं वास्य त्रिभुजलकं मेव वा ॥
 उन्मत्तपुष्पसदृशं योनिरन्ध्रं विदुर्बुधाः ।
 एवं कृत्वा ततः कुर्यात् सभिवं जातवेदसम् ॥
 तन्मध्ये संस्मरेद्देवं नरसिंहमनुत्तमं* ।
 सुदर्शनाद्यायुधानि यथा स्थानं च संस्मरेत् ॥
 विधायान्निप्रतिष्ठानं प्रणवेनैव मन्त्रवित् ।
 आदौ कुण्डञ्च संशोध्य कुर्यादग्निनिमन्त्रणं† ॥
 पश्चादग्निं परिस्तीर्य प्रागग्रैर्वा कुशैरपि ।
 ततः संशोध्य पात्राणि प्रीक्षयेत् क्रमशस्ततः ॥
 प्रणीतामपि संशोध्य कुर्यात्तत्परिषेचनं ।
 संशोध्यहीमद्रव्याणि‡ कुण्डस्यैवापसव्यतः ॥
 विधायान्यस्य संस्कारं पात्रादीन् परिधाप्य च ।
 निधाप्य सम्यक् पात्राणि वाज्यभागौ तथैव च ॥

* नरसिंहमनुत्तमं तत इति पाठान्तरं ।

† भूमिविशोषमिति पाठान्तरं ।

‡ पात्राणि इति पाठान्तरं ।

देवतावाहने पञ्चाहविषस समर्पणं ।
 आयुः कामस्तु दूर्वाभिः श्रीकामो विष्वसम्भवे ॥
 आरोग्यकामोऽपामार्गैस्त्रिसैर्वापि हृतेन च ।
 सृत्वोर्विजयमन्विच्छन् मध्याह्नैः कमलैर्नवैः ॥
 पुष्पैश्च चम्पकभवेर्धनार्घीं जातिसम्भवेः ।
 यत्रोर्ध्वरश्माकाङ्क्षाश्चैर्वापि विभीतकैः ॥
 वश्यार्घीं लवणोद्भूतैः सर्षपैः समरीचकैः ।
 तुषैर्वा निम्बपत्रैर्वा तैलेनापि च साधयेत् ॥
 उन्मत्तकैस्तुभोग्नादैर्बोहने स्तम्भनेऽपि च ।
 तद्बीजैस्तत्फलैर्वापि तत्काष्ठैर्ज्वलितानलैः ॥
 अम्बुजैः त्रियमन्विच्छन् सितैरध्याकुलं यदि ।
 श्रीसताकुसुमैश्चापि तत्पत्रै रघतैरपि ॥
 तद्बीजैरङ्गुरैश्चापि भिमघ्नाह्नैश्च तन्दुलैः ।
 चन्दनचोदसंयुक्तै रत्पलैः कुसुदैरपि ॥
 तथा चन्दनकाष्ठेन गन्धेन पयसापि वा ।
 एकपत्रैः परां पुष्टिं सहदेव्याध्यरोगतां ॥
 धान्यैरायुस्तथारोग्यमद्यतैः कदलीफलैः ।
 यं यं कामयते मन्त्री तेन तेनैव साधयेत् ॥
 साधारणोविधिरयं लभते वच्मि तं पुनः ।
 जुहुयाद्दशसाहस्रं द्रव्यैर्बाध यथाविधि ॥
 यावत्काध्यगरीयस्त्वं साहस्रं वा यथा विधि ।
 यावत्काध्या गरीयस्त्वं तावत्संस्थानदर्शनम् ॥
 श्रीनिवास नमस्तेऽस्तु श्रीवृक्ष शिवबल्लभ ॥

ममामिलषितावासिं कृत्वा विज्ञहरोभव ॥
 समकृत्व क्षतीभ्यर्थं श्रीवृक्षं प्रणिपत्य च ।
 ब्राह्मणान् भीजयेद्भक्त्या श्रीदेवी प्रीयतां व्रत ॥
 ततो भुञ्जीत मौनेन तैलक्षारविवर्जितम् ।
 अन्ननिपकं मृत्पात्रे दधिधान्यफलं शुभम् ॥
 एवं यः कुरुते पाद्यं श्रीवृक्षाभ्यर्चनं नरः ।
 नारी वा दुःखशोकाभ्यां सुच्यते नात्र संशयः ॥
 समजन्मान्तरं यावत् सुखसौभाग्यसंयुता ।
 श्रीमती फलिनौसत्या मर्त्यलोके महीयते ॥
 श्रीवृक्ष मन्नतफलं वरदं नवम्यां
 नैवेद्यदिव्यफल वस्त्रविरुद्ध धान्यैः ।
 पूज्य प्रभात समये पुरुषोत्तमा ये
 ते प्राप्नुवन्ति कमलां पुरुषेन्द्रचन्दाः ॥
 अथदेवस्य पुरतः साध्यं कृत्वासनेस्त्रितः ।
 कुम्भतोयेन कलशैर्मन्त्रे चैवाभिषेचयेत् ॥
 दक्षिणां गुरवे दत्त्वा कुर्याद्ब्राह्मणभोजनम् ।
 युष्कारभोजनघोषे राट्टयाचारिपौडने* ॥
 भये व्याधिपरिक्लेशे स कुर्यादष्टमीव्रतं ।
 विद्यार्थी विद्यामतुलां त्रियमिच्छन्नाश्रियम्† ॥
 यद्यदिच्छति तप्तस्य पुण्यात्वेतं व्रतं परं ।
 इति गरुडपुराणोक्तं नरसिंहव्रतम् ॥

* राष्ट्रनाम्नोरिपौडने इति पुरुषानन्दे पाठः ।

† त्रियमावुच्यन्तीति पुरुषानन्दे पाठः ।

अथ हरव्रतम् ।

—:०:—

ब्रह्मोवाच ।

भष्टम्यां पूजितो देवो गोश्रुताभरणो हरः ।
 ज्ञानं ददाति विपुलां कान्तिं^{*} जातिं बलं तथा ॥
 गोश्रुताभरणः चक्षुःश्रवोभूषः गिव इत्यर्थः ॥
 स्रस्युहा ज्ञानदञ्चैव पापहा च प्रपूजितः ।
 मूलमन्त्रस्त्रसन्नाभिरङ्गमन्त्राय कौर्त्तिताः ॥
 पूर्वोक्तपत्रस्यः कर्त्तव्यव्यातिथीश्वरः ।
 गन्धपुष्पोषहारैश्च यथाशक्ति विधीयते ॥
 पूजाभाठेन श्राठेन कृतापि तु फलप्रदा ।
 आञ्जधारासमिद्धिश्च दधिचीरान्नमाक्षिकैः ॥
 पूर्वोक्तफलदीप्तोमः कृतः शान्तेन चेतसा ।
 एतद्ब्रतं वैखानरप्रतिपद्ब्रते व्याख्येयम् ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं हरव्रतम् ।

अथ सुगतिव्रतम् ।

—०*०—

नक्ताशी त्वष्टमीपुम्बादत्सरान्ते तु गोप्रदः ।
 पौरन्दरपदं याति सुगतिव्रतमुच्यते ॥
 अथ पुरन्दरोदेवता ।

इति पद्मपुराणोक्तं सुगतिव्रतम् ।

* कान्तिमिति क्वचित्पाठः ।

अथ वृषभव्रतम् ।

— ००० —

सिताष्टम्यां सोपवासोवृषभं यः प्रपश्यति* ।
 सितवस्त्रयुगच्छत्रं यदाभरणभूषितम् ॥
 शिवलोके चिरं खित्वा ततो राजा भवेद्दिह ।
 वृषव्रतमिदं प्रोक्तं सर्वपापप्रणाशनम् ॥
 सोपवासव्रति पूर्वदिने कृतोपवास इत्यर्थः ।
 अथ शिवीदेवता ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं वृषभव्रतम् ।

अथ गुर्वष्टमीव्रतम् ।

— ००० —

युधिष्ठिर उवाच ।

ब्रूहि कृष्ण व्रतं किञ्चित् सर्वपापप्रणाशनम् ।
 प्रेतत्वनाशनञ्चैव भुक्ति मुक्ति फल प्रदम् ॥

कृष्ण उवाच ।

मासि भाद्रपदे राजन् शुक्लपक्षे यदाष्टमी ।
 गुह्यवारेण संयुक्ता सा तिथिर्षर्मवर्द्धनी ॥
 सम्यग्नां सर्वपापघ्नी प्रेतयोनिविनाशनी ।
 षट्श्रीयात्रियमं सम्यक् दन्तधावनपूर्वकम् ॥

* यच्छतीति पाठान्तरं ।

† वष्टाभरण भूषितमिति पाठान्तरं ।

एकभक्तेन राजेन्द्र तस्यां देवी वृहस्पतिः ।
 ज्ञानं नद्यान्तडागे वा गृहे वा नियमात्मना ॥
 सोवर्णं कारयेज्जीवं राजतं वा नरोत्तम ।
 तस्याभावे यथाशक्त्या श्रीखण्डेनापि कारयेत् ॥
 शाख्योदनञ्च भोक्तव्यं षष्टिकान्तमथापि वा ।
 पात्रे तु शालिं संस्थाप्य परिपूर्णं यथाभवेत् ॥
 कपिला गौः प्रदातव्या व्रतसम्पूर्णं हेतवे ।
 जलपूर्णं तु सद्व्ये स्थापयेद्वाङ्गणो घटे ।
 नमस्ते ज्ञानिनां श्रेष्ठ नमोनीतिविशारद ।
 त्रिदशो देवदेवेश देवराज नमोऽस्तुते ॥
 त्रिदशाभिषं संपूज्य प्रारभ्ये गिरिशस्तुतः ।
 गृह्णाणार्घमिदं देव नमस्तुभ्यं वृहस्पते ॥

अर्घमन्त्रः ।

बुद्धिं देहि त्रियं देहि गतिं देहि शरार्चित ।
 वृहस्पते विधिश्चैवः परिपूर्णं कुरुष्व मे ॥

प्रार्थनामन्त्रः ।

अत्रैवोदाहरिष्यामि इतिहासं पुरातनं ।
 प्रेतमोक्षप्रदं पुण्यं तच्छृणुष्व महामते ॥
 शृणु राजन् महाबाहो सकले क्षितिमण्डले ।
 सुरथोनाम राजाभूत्सोमवंशसमुद्भवः ॥
 स कदाचिद्गतोऽरस्ये प्रविष्टो गह्वरे वने ।

शास्त्रसीवृक्षमेकञ्च निर्जले सूर्यतापिते ॥
 निर्जीवि निर्जले रौद्रे सर्वप्राणभयङ्करे ।
 स ददर्श नृपस्तत्र दुष्टरोद्रनिभान्तकान् ॥
 अस्थिचर्मावरीकांश्च ऊर्ध्वकेशभयावहान् ।
 दंष्ट्रा करालरक्ताच्चान् पूर्व्वपापफलव्रतान् ॥
 तानुवाच नृपः पार्थ सुरथोविगतज्वरः ।
 के यूयं निर्जनेऽरण्ये कथञ्चो भीषणाननाः ॥
 ततस्त मूचः सम्प्रीताः सुरथं प्रेतसत्तमाः ।
 राजन् कर्मविपाकेन वयं प्रेतत्वमागताः ॥
 अथोवाच नृपः प्रेतान् कर्मणा केन कथ्यतां ।
 निर्जने येन वारण्ये तिष्ठन्ति प्रेतभीषणाः ॥
 अथ चैकेन तन्मध्यादुक्तो राजा यथा क्रमम् ।
 कृतं परस्त्रीगमनमसत्यं भाषितं मया ॥
 तेन कर्मविपाकेन प्रेतत्वमहमागतः ।
 द्वितीयोऽथा ब्रवीद्वाजन् अस्मादीयं कृतं शृणु ॥
 कुर्वन्तीनां गवां पानं जले विघ्नं मया कृतम् ।
 तृतीयोऽथा ब्रवीद्वाजन् पैशून्यं कृतवानहम् ॥
 तेन कर्मविपाकेन प्रेतत्वं प्रगतोऽहम् ।
 एतस्मिन् कथिते राजा प्रोवाच सुरथो नृपः ॥
 कथं वो भोजनं पानं शयनं स्वस्ति ते कथम् ॥
 प्रेत उवाच ।

यत्रोच्छिष्टं स्थितं भूमौ श्लेष्मा नासाविनिर्गतं ।
 रज्जोविनिःसृतं धीनौ स्त्रीणां तदपि भोजनं ॥

नान्यथा भोजनं राजन् तेन लज्जामहे वयम् ।
न प्रष्टव्यं महावाहोपानीयं न लभामहे ॥

सुरथ उवाच ।

किं यज्ञैः किं तपोदानैः किं वा तीर्थावगाहनैः ।
युष्माकञ्च भवेन्मोक्षो व्रतमेकं विना प्रभो ॥

राजोवाच ।

किं व्रतं कथ्यतां शीघ्रं कोविधिः का च देवता ।
कस्मिन् वारे दिने मासे येन मोक्षो भवेच्च वः ॥

प्रेत उवाच ।

मासि भाद्रपदे राजन् शुक्लपक्षे यदाष्टमी ।
गुरुवारेण सम्पूर्णा लभ्यते च महाव्रतम् ॥
गुर्वष्टमी महापुण्या सर्वपापप्रणाशिनी ।
वुधाष्टमी सहस्रस्य फलमाप्नोति मानवः ॥
दिङ्मूढोऽहं वने प्रेता भवन्तो दर्शयन्तु मे ।
भूपस्य दर्शयामासुस्ते च मार्गं सुगामिनं ॥
राजा च स्वपुरं गत्वा कृत्वा च व्रतमुत्तमं ।
प्रेतान् नरेण विधिना ददौ पुण्यं त्रिवाचकम् ॥
प्रेतत्वादथ मुक्तास्ते विमानवरमाश्रिताः ।
सूर्ययुग्मसमं हृष्टासुरथं नृपसत्तमं ॥
एवं यः कुरुते पार्थ हृष्टस्ततिशुभव्रतं ।
तस्मिन् वंशे च न प्रेता भविष्यन्ति कदाचन ॥
सर्वपापविनिर्मुक्तः पदं गच्छत्यनामयं ।

एतत्ते कथितं पार्थ गुह्यं गुह्यंष्टमीव्रतम् ॥

यः श्रुत्वा सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ।

इति श्रीभविष्यत्पुराणोक्तं गुह्यंष्टमीव्रतम् ।

इति श्रीमहाराधिराज-श्रीमहादेवस्य समस्तकारणाधी-

श्वर-सकल-विद्या-विशारद-श्रीहेमाद्रि-विरचिते

चतुर्ध्वर्गचिन्तामणौ-व्रतखण्डे

अष्टमीव्रतानि ॥

—————

अथ त्रयोदशोऽध्यायः ।

—ooo@ooo—

अथ नवमी व्रतानि ।

अवाप्य यदुपाश्रयं गुणिगणः परं ज्ञासते
पवित्रितजगत्त्रयं जयति यस्य कान्तं यशः ।
क्रमागतमद्योष्यते सकललोकश्रीकापहं
समस्तनवमीतिधिप्रत मनेन हेमाद्रिणा ॥

अथ श्रीवृक्षनवमीव्रतम् ।

कृष्ण उवाच ।

समुत्पन्नेषु रत्नेषु श्रीरोदमथने पुरा ।
विव्वहृच्चगणं गत्वा विश्रान्ता कमलालया ॥
ममेयमिति चान्धीन्धं युयुधुर्ह्वदानवाः ।
असुरा निर्जिताः सर्व्वे युध्ने चक्रोण चक्रिणा ॥
पातालं गमिता दैत्याः सश्रीकः स्वयमावभौ ।
श्रीकामावासितो यस्मात् श्रीवृक्षस्तेन स स्मृतः ॥
तस्माद्भाद्रपदेचैव शुक्लपक्षे कुरुत्तम ।
नवम्यामर्चयेन्नया ईषत्सूर्य्योदयेऽनघ ॥
श्रीवृक्षं विविधैरत्नैरनग्निपतितैः फलैः ।
तिलपिष्टान्नगोधूमैर्धूपगन्धानुलेपनैः ॥
ईषद्भानुकरान्ता श्रीकृता वै नभस्तले ।
मन्त्रे चानेन राजेन्द्र पूजयेन्नक्तिसंयुतः ॥

श्रीनिवास नमस्तेऽस्तु श्रीवृक्ष शिववत्सलम् ।
 ममापि सत्तमां तृप्तिं* कृत्वा विघ्नहरो भव ॥
 समकृत्वस्ततोऽभ्यर्च्य श्रीवृक्षं प्रणिपत्य च ।
 ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या श्रीदेवी प्रीयतां मम ॥
 ततो भुञ्जीत मौनेन तैलक्षारबिवर्जितम् ।
 अनग्निपक्वं सृत्पात्रे दधिधान्यफलं शुभम् ॥
 एवं यः कुरुते पार्थ श्रीवृक्षाभ्यर्चनं नरः ।
 नारी वा दुःखशोकाभ्यां मुच्यते नात्र मंशयः ॥
 समजन्मान्तरं यावत् सुखसौभाग्यसंयुता ।
 श्रीमतीद्युतिनीचेव† मर्त्यलोके महीयते ॥
 श्रीवृक्ष मक्षतफलं वरदं नवभ्यां
 नैवेद्य पुष्पफलरत्न विरुद्धधान्यैः ।
 पूज्य प्रभातसमये पुरुषोत्तमोऽस्यां
 ते प्राप्रवन्ति कमलां पुरुषेन्द्रचन्द्र ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तं श्रीवृक्षनवमीव्रतम् ।

अथ ध्वजनवमीव्रतम् ।

—000—

कृष्ण उवाच ।

उल्कास्यां नवमीं राजन् कथयामि निबोध ताम् ।
 या काश्यपेन कथिता तारकस्यार्त्तिनाशिनी ॥

* ममाभिसृष्टितावाग्निमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† श्रीमतीफलिनोचत्या इति पुस्तकान्तरेपाठः ।

अश्वयुक् शकपत्ने या नवमीति च विद्युता ॥
 नद्या स्नात्वा तमभ्यर्च्य भगवत्या महासुरैः ।
 पूर्व्वर मनुष्मृत्य संग्रामे वद्ववः कृताः ॥
 नानारूपधरा देवी अवतीर्थ्य पुनः पुनः ।
 धर्मसंस्थापनार्थाय पतिभ्ये दैत्यसत्तमान् ॥
 अथ रक्तासुरीनाम महिषस्य सुतोमहान् ।
 आसीत्तेन तपस्तप्तं वर्षाणामयुतानि षट् ॥
 तस्मै ददौ चतुर्वक्त्रो राज्यं त्रैलोक्यमण्डले ।
 तेन लब्धवरेणाथ ह्यलपित्वा दनोः सुतान् ॥
 प्रारब्धं सह शक्रेण युषं गत्वामरावतीं ।
 तं दृष्ट्वा दानवबलं सबन्ध्वोद्धतध्वजं ॥
 युयुधे दानवः साङ्गं सुरैः शक्रपुरःसरैः ।
 तत्र प्रावर्त्तत नदी शोणितौघतरङ्गिणी
 परमस्य गदाप्राह वसुलं दन्तकच्छपा ।
 वहन्ती पित्तलेकायिसुरासुरभटानकाः ॥
 अथ रक्तासुरीरोषात् युयुधे विबुधैः सह ।
 ते ह्यन्यमाना विबुधा रक्ताक्षेण महारणे ॥
 भ्रष्टाः स्वर्गम्यरिष्वज्य त्यक्तप्राहरणाद्भुतं ।
 कटच्छत्रां पुरीं प्राप्ता यथास्ते भवबलभां ॥
 दुर्गा चासुण्डया साङ्गं नवदुर्गासमन्विता ।
 आद्या तावन्महालक्ष्मीर्नन्दा च्चेमङ्करी तथा ॥
 शिवदूती महातुण्डा भ्रामरी चन्द्रमङ्गला ।
 देवती हरिसिद्धिस्तु नवैताः परिकीर्त्तिताः ॥

य स्तासां ते स्तुतिं चक्रे त्रिदशाः प्रफुता मताः ॥

अमरमुकुट चम्बित चरणाब्जजाः सकल भुवन सुखजननी ।

जपन्ती जगदीशं मुदिता सकलनिष्कलादुर्गा ॥ १ ॥

विष्णते नम्र दशन भूषण कषिरवसाञ्छ्रित क्रतरङ्गहस्ता ।

जयति नररुद्र मण्डित पिशाचानुचरहारकन्दरी ॥ २ ॥

प्रखलितशिखिगण्ठीत्वण विकाटजटावहचन्द्रमणि शोभा ।

जयति दिग्म्बरे भूषासिद्धवटे मा लक्ष्मीः ॥ ३ ॥

करकमलजनितशोभाविप्रावबहपद्मवचना च ।

जयति कामण्डलुहस्ता नन्दादेवी न नन्दिहर ॥ ४ ॥

दिवसना विकृतमुखा फेत्कारोहामपूरितदिक्शोभा ।

जयति विकारणदेहा क्षेमङ्करी रौद्रभावस्था ॥ ५ ॥

क्रोशत ब्रह्माण्डोदरमुखरमुखरमुखहृङ्गतनिनादा ।

जयति महातिहस्ता शिवदूती प्रथमशिवभक्तितः ॥ ६ ॥

मुक्ताट्टहासभैरवदुःमह उच्चकितमकलदिव्यक्ता ।

जयति भुजगेन्द्रबन्धनशोभित कर्णामदातुण्डा ॥ ७ ॥

पटहसुरजमर्हल कुम्भरिक्तानर्त्तितावयवा ।

जयति मधुव्रतात्तपादैत्यहरी भ्रामरी देवी ॥ ८ ॥

शान्ता प्रशान्तवदना सिद्धन्व्याध्यानयोगगतिनिष्ठा ।

जयति चतुर्भुजदेहा चन्द्रकला चन्द्रमण्डला देवी ॥ ९ ॥

पञ्चपुटचञ्चुघातैः सचूर्णित विविधशत्रुसङ्घाता ।

जयति शिवशूलहस्ता बहुरूपा रेचती भद्रा ॥ १० ॥

पर्यन्ति जगतिदुष्टा पिष्टवननिलयेषु योगिनी सहिता ।

जयति हरसिद्धि नागां हरसिद्धिर्विन्दता सिद्धैः ॥ ११ ॥

इति दुर्गा सृष्ट्यानुषम मर्यादातिरमरराट् कृत्वा इदमूचे
सहृदेवैः सापह्यस्मात्सर्वभौतिभ्यः ।

पुनः पुनः प्रणम्याःपुर्भवानां सिंहवाहिनीं ।

अस्माकं भवभीतानां श्रुत्वा तेभ्योभयं ततः ॥

सिंहाक्षस्य विनिर्गत्य दुर्गाभिः सहिता पुरात् ।

युयुधे दानवैः सार्धं महासमरदुर्ईनम् ॥

कुमारी विंशतिभुजा घनविद्युत्क्षतीपमा ।

तेपि तत्रासुराप्राप्ताः प्रचण्डा रौद्ररूपिणः ॥

सर्वं लघुवरः स्रुता सुतप्त तपसस्तथा ।

महाग्रहापक्रान्ताश्च क्षमायाविनिर्णये ॥

आब्रह्मण्याश्चधमिषानामतश्च निवोधिनाम् ।

इन्द्रमारी मगुकेशां प्रलम्बो नरकः कुतः ॥

कुष्ठःपुलोमाशरभः सम्बरो दुन्दुभिः खरः ।

इत्सलीनमुचिर्भौमीवातायं धेनुकः कलिः ॥

मायाव्रतो बलौ बन्धु मधुकैटभ कालवित् ।

रहः पौण्ड्रदिदैत्येन्द्राः प्राधान्यात् ये प्रकीर्त्तिताः ॥

धनगोभिर्जनाः सर्वे सन्नद्धा स्तोक्कृतोध्वजः ।

रूपतीवर्णितथैव ध्वजास्तेषां पृथक् पृथक् ॥

प्रत्यदृश्यन्त राजेन्द्र ज्वलिता इव पावकाः ।

काञ्चनाः काञ्चनापीडाः काञ्चनास्त्रगलङ्कृताः ॥

पताका विद्विधैर्गलै रस्थिता लक्षणाश्रिताः ।

नीलाः पीताः सिता रक्ता कृष्णाभाः पञ्चवर्णकाः ॥

तत्र पद्मपटौ सौषा कृतबुद्बुदकवुरा ।

पताका कान्तिवलला कर्त्तव्या इव शोभनाः ॥
 ततोहलहलारावञ्चक्रुस्ते दानवोत्तमाः ।
 प्रास्कालयन्ति पणवा भेरीमुरजगोमुखाः ॥
 तान् वादयत्यानकन्द्ये शङ्खाडम्बरडिण्डिमान्
 एव ते समयुध्यन्त भवानी दैत्यदानवाः ॥
 तमाजन्तुः शरैः शूलैः परिवैः शक्तिमैः ।
 कणायैरिव तैः कुन्तैः शतघ्नीकूटमुद्गरैः ॥
 आहत्यमाषीरोषेण जज्वाल समरेऽधिकं ।
 सिंहारूढा द्रुतं देवी रणमध्ये प्रधाविता ॥
 अच्छिवाच्छ प्रचिह्नानि ध्वजानानाविधास्तथा ।
 बलात्कारेण दैत्यानामनाथसमरेतु वा ॥
 चिह्नकानि ददौ तुष्टा देवेभ्यः शीघ्रचारिणी ।
 सर्वैरपि गृहीतानि जपे हेवीतिवादिभिः ॥
 अविव्यातु भृशन्तुष्टा तेषाञ्चक्रे क्षणात्क्षयं ।
 कालरात्रिर्दानवानां मरीचिनिपपात सा ॥
 जीवितानि च जयाह दैत्यानान्दवनन्दिनी ।
 अथरत्नासुरङ्गणे गृहीत्वापात्य भूतले ॥
 देवी जयाह तीक्ष्णेन त्रिशूलेन भृशन्दिवि ।
 संभिनहृदयेमासायक्रे दैत्यसुदारुणाः ॥
 तथापि देव्याभिहतः पपात च ममार च ।
 देवस्तानसुराञ्जित्वा जित्वाशत्रुपुरे जितं ॥
 ददृशुस्ते क्रणप्रान्ते लम्बमाना महाध्वजाः ।
 यात्राञ्चक्रुः सम्पृहत्यान् नवम्यां ध्वजचिह्नितां ॥

अतोद्यां पीड भूपालैर्जयलक्ष्मिणाः ।

उपेयते नरैर्भक्तैः नारीभिश्चैवपाण्डव ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

कीदृग्विधानं तस्यास्तु नवम्यां ब्रूहि मे प्रभो ।

सरहस्यञ्च मन्त्रञ्च तुष्यते येन चण्डिका ॥

कृष्ण उवाच ।

पौषस्य शुक्लपक्षे या नवमी शम्बरी श्रुता ।

तस्यां स्नात्वा शुभैः पुष्पैरर्चनीया हरेश्वरा ॥

कुमारी भगवान् देवी सिंहस्यन्दनगामिनी ।

धजान् नानाविधान्कृत्वा पुरतस्तच्च पूजयेत् ॥

मालती कुसुमैर्दीपैर्गन्धधूपविलेपनैः ।

बलिभिः पशुभिर्मध्ये सुरामांसस्रपितृभ्यः ॥

दधिचन्दनचूर्णैश्च फलैश्चान्निपाचितैः ।

देवीं स्वर्णमयीं कृत्वा सिंहारूढां चतुर्भुजां ॥

खड्गशक्तिधरां शूलधरां नेत्रत्रयान्वितां ।

मन्त्रेणानेन कौन्तेय ब्राह्मणे पृथवा न तु ॥

भद्रां भगवतीं कृष्णां विश्वस्य जगतोहितां ।

प्रवेशनीं संवमनीं ग्रहनक्षत्रमालिनीं ॥

प्रपन्नोहं शिवां रात्रीं भद्रेमापाङ्गिसर्वदा ।

सर्वभूतपिशाचेभ्यः सर्वसत्वसरीसृपेः ॥

देवेभ्यो मानुषेभ्यश्चीभयेभ्यो रक्ष मां मनः ।

यक्षरक्षः पिशाचेभ्यो नागेभ्यो हृयिकेष्वपि ॥

चौरादिदुष्टसत्त्वभ्यो हिंसेभ्यो रक्ष सर्व्वतः ।
 इत्युच्चार्य्य प्रधान्येकं ध्वजकिङ्किणिमालिनं ॥
 ततश्शारीपयेद्राजा देवीनां भवने तथा ।
 भोजयेच्च कुमारोच्च प्रणिपत्य चमापयेत् ॥
 वाचकं पूरयित्वा थ परिप्राप्य चमाप्य च ।
 उपवासेन कुर्व्वीति एकभक्तेन वा पुनः ।
 भक्त्या नरेण दृढया भक्तिस्तत्र गरीयसी ॥
 एवं ये पूजयिष्यन्ति ध्वजैर्भगवतीं नरः* ।
 तेषां दुर्गा दुर्गमार्गं चौरव्यालान्निसङ्घटे ॥
 रणे राजकुले गेहे युद्धमध्ये जले स्थले ।
 रक्षाङ्करोति सततं भद्रानी सर्व्वमङ्गला ॥
 अस्यां बभूव विजयो नवम्यां पाण्डुनन्दन ।
 भगवत्यास्तु तेनैषां नवमी सततं प्रियां ॥
 धन्या पुण्या पापहरा सर्व्वोपद्रवनाशिनी ।
 अनुष्ठेया प्रयत्नेन सर्व्वकामानभीष्टितान् ॥
 देव्यार्चनं हितमिदं मनुजो नवम्यां
 हेमस्तजं ध्वजवरां स हि रोपयेद्यः ।
 कामानदाप्य मनसोपिहितान् विहाय
 देहं प्रायाति परमेश्वरि पादमूलम् ॥
 इति भविष्योत्तरे ध्वजनवमीव्रतम् ।

* ध्वजमालाभिरन्विकामिति पुलकान्तरे पाठः ।

अथ उक्त्वा नवमीव्रतम् ।

—000—

उष्ण उवाच ।

उक्त्वास्था नवमी राजन् कथयामि निबोध तां ।
या काश्यपेन कथिता तारकस्यार्तिनाशिनो ॥
अश्वयुक्शुक्लपत्रे या नवमी स्त्रीकविश्रुता ।
तदां स्नात्वा समभ्यर्च्य पितृदेवान् यथाविधि ॥
पश्चात् संपूजयेद्देवीं चामुण्डां भैरवीं प्रियां ।
पुष्पैर्धूपैः सनैवेद्यैः मांसमत्स्यसुरासवैः ॥
पूजयित्वा स्तवं कुर्यान्मन्त्रे णानेन मानवः ।
समारोप्याञ्जलिं मूर्ध्नि जानुभ्यामवनीं गतः ।
महिषघ्निं महामाये चामुण्डे मण्डमालिनि ॥
द्रव्यमारोग्यं विजयन्देहिदेवि नमो स्तु ते ।
भूतप्रेतपिशाचेभ्यो रक्षोभ्यश्च महेश्वरि ॥
देवेभ्यो मानुषेभ्यश्च भयेभ्यो रक्ष मां सदा ।
सर्वमङ्गल माङ्गल्ये शिवे सर्वार्थं साधिके ॥
उमे ब्रह्माणि कौमारी विश्वरूपे प्रसीद मे ।
कुमारीर्भोजयेत्पश्चात् नवम्यां नीलकण्ठकेः ॥
परिधानैर्भूषणैश्च भूषयित्वा क्षमापयेत् ।
सप्तपञ्चमयैषां वा वित्तवृत्तानुरूपतः ॥
अहया तुष्यते देवी इति वीरानुशासनम् ।
अभ्युच्य मण्डलं कृत्वा गोमयेन शुचिः स्मृतः ॥

दत्त्वासनं चोपविशेत् पात्रञ्च पुरतीव्यमेत् ।
 ततः सुसिद्धमन्नं च तत्सर्वं परिवेषयेत् ॥
 सष्टतं पायसन्तेऽपि स्वयञ्चापात्रसन्निधौ ।
 तृणानि पुष्टिमादाय ह्यादाय ग्रामकं तथा ॥
 प्रज्वालयेत्ततो भोज्ययावज्ज्वलति पावकः ।
 प्रशान्ते भोजनं त्यक्त्वा समाचम्य प्रसन्नधीः ॥
 चामुण्डां हृदये ध्यात्वा गृह्णत्यपरो भवेत् ।
 अनेन विधिना सर्वं मासि मासि समाचरेत् ॥
 ततः सम्बन्धरस्यान्ते भोजयित्वा कुमारिकाः ।
 वस्त्रैराभरणैः पूज्य प्रणिपत्य क्षमाययेत् ॥
 सुवर्णशक्तिनोदद्याद्वाञ्छ विप्राय शोभनाम् ।
 य एवं कुरुते पार्थ पुरुषो नवमीव्रतम् ॥
 न तस्य शत्रवो नार्तिं न राज्ञा नापि तस्करः ।
 भूताः प्रेताः पिशाचाश्च जनयन्ति भयं गुह्य ॥
 समुद्यतेषु शास्त्रेषु हता तस्य न विद्यते ।
 रक्षते जयदीयुक्ता सर्वास्त्वचच्छिङ्का ॥
 नरोवा यदिवा नारीव्रतमेतत्समाचरेत् ।
 उल्कावत्स सपत्नानां ज्वलगस्तो सदा हृदि ॥
 तां शुष्कवीडरसुखी प्रकटी सु दंष्ट्रा
 कामाकिनीं समबलं चित्तिमुण्डमालम् ।
 उल्कव्रतेषु पुरुषो नवमीषु षण्डो
 संपूज्य कस्य हृदयं न च शङ्करोति ॥
 इति श्रीभविव्योत्तरे उत्कानवमीव्रतम् ।

अथ उल्कानवमीव्रतम् ।

—000—

ऋषय ऊचुः ।

व्रतेन येन देवेन्द्र प्रसीदत्याशुपार्ष्वती ।
 तच्चोल्का नवमीसंज्ञं शृणु सर्वफलप्रदम् ॥
 तस्यां नवम्यां सर्वाणी महिषादीन् महासुरान् ।
 जघान समरे शत्रून् तेन सा नवमी प्रिया ॥
 अश्वपुक् शुक्लपक्षस्य नवम्यां प्रयताम्नवान् ।
 स्नात्वाभ्यर्च्य पिबृन् देवान् मनुष्यांश्च यथाक्रमम् ॥
 जपेत् पञ्चाक्षहादेवीं महिषासुरघातिनीं ।
 पुष्यै धूपैः सनैवेद्यैः पयोदधिफलादिभिः ॥
 भक्त्यासम्युजयित्वैव देवीं सम्प्रार्षयेत्ततः ।
 मन्त्रेणानेन वृषारिं अहया परया व्रती ॥
 महिषघ्नं महामाये चामुण्डे मुण्डमालिनि ।
 दिव्यमारोग्यविजयं देहि देवि नमोऽस्तु ते ॥
 भूतप्रेतपिशाचेभ्योरक्षीभ्यश्च महेश्वरि ।
 देवेभ्योमानुषेभ्यश्च भयेभ्योरक्ष मां सदा ॥
 सर्वमङ्गलमाङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
 उभे ब्राह्माणि कौमारि विश्वरूपे प्रसीद मे ॥
 कुमारीर्जाजयित्वा च भोजयित्वा क्षमापयेत्* ।
 न च समाष्टक्षत्रैकं बाल वित्तानुसारतः ॥

* दयावाष्पादनदिकमिति पुलकान्तरे पाठः ।

अहया प्रीतिमाप्नोति देवी भगवती शिवा ।
 शास्त्रवयस्यजज्ञैव स तं यत्नेन पूजयेत् ॥
 यतः शास्त्रेषु सा देवी निवसत्येव सन्ततं ।
 अभ्युष्य मण्डलं कृत्वा गोमयेन सुविस्तरं ॥
 दत्त्वा समं चौपविशेत् पात्रञ्च पुरतोऽन्यसेत् ।
 तस्यां संसिद्धमन्त्राद्यन्तस्तर्ज्वं मुपवेधयेत् ॥
 प्राक् च सर्व्वं समुद्धृत्यतायसेभ्यो निवेदयेत् ।
 षण्णानां मुष्टिमादाय हस्तमात्रं सुयन्त्रितं ॥
 अन्यहस्तस्थितं क्षात्य स्वयं भुञ्जीत वाग्यतः ।
 प्रशान्तेऽग्नौ समाचम्य श्चिस्तद्गतमानसः ॥
 चामुण्डां हृदये ध्यात्वा गृहकृत्यपरोभवेत् ।
 अनेन विधिना वर्षे मासि मासि समाचरेत् ॥
 ततः सम्बत्सरस्यान्ते भोजयित्वा कुमारिकाः ।
 वस्त्रैराभरणैः पूज्य प्रणिपत्य विसर्ज्जयेत् ॥
 सरकामृद्गीर्दद्याच्च गास्तु विप्राय शोभनाः ।
 नरोवा यदि वा नारी व्रतमेतत् करोति यः ॥
 उष्णैवसा सपत्नीनां तेजसा भाति भूतले ।
 श्रीमहानवमी त्येषा ख्यातासुरथ तेऽधुना ॥
 सर्व्वसिद्धिकरी पुण्या सर्व्वोपद्रवनाशिनी ।
 नाध्यात्मिकं भयं तस्य दैवं स्यान्नाधिभौतिकम् ॥
 रक्षते हि सदा शक्र सर्व्वोपत्सुच चण्डिका ।
 शान्तिपुष्टिकरी धन्या पुत्रारोग्यार्थलाभदा ॥
 अनुष्ठेया सदा पुंभिसत्सुर्वर्गफलार्थिभिः ।

यन्मन्त्रनापि कुरुते व्रतमेतदित्यं
 चञ्चलीप्रियं सुरस्य ते मुनिसिद्धशुभं ।
 बद्राङ्गनाकुलवराकुलितं विमान
 मारुतं याति सुमुखेन शिवस्य लोकं ॥
 इति सौरपुराणोक्तं उल्कानवमीव्रतम् ।
 अथ प्रदीपनवमीव्रतम् ।

—०*०—

हस्तमानं त्वत् कार्यमङ्गुष्ठतर्जनीगतम् ।
 प्रदीपं यावन्नोहीतं तावद्भोजनमाचरेत् ॥
 आग्निमशक्तनवम्बामिति शेषः ।
 देवीं सम्पूयित्वा तु षोडशार्घ्येन भावितः ।
 ओं महाभगवत्यै महिषाक्षुरमर्हिन्यै
 नाम्ना हुं फटिति षोडशाक्षरम् ।
 हेमपुष्पैस्तथागन्धैरजैश्चै यैश्चाविधि ॥
 सन्मत्तरं यथा न्यायं सर्वान् कामानवाप्नुयात् ।
 प्रदीप्ता नवमी वक्तु हेमगोदृष्टिषा मता ॥
 आद्या सन्मगता शुद्धा संधामेष्वपराजिता ।
 भवते शत्रुसङ्घस्य यथा देवी महेश्वरः ॥
 अनेनैव विधानेन गुग्गुलीर्गुटिकान्दधन् ।
 पूजयित्वा शिवं मन्त्रैः प्रदीप्तां होमयेद्दिधी ॥
 पूर्वोक्ते न विधानेन शिवं पूजयित्वा गुग्गुलीर्गुटिकां होमये-
 दित्यन्वयः ।

नमोर्दुर्गामन्यैः

प्रदीतेष्विधौ प्रौढे चन्द्रे प्रदीपान्त इत्थर्षः ॥

पूर्वोक्ता इधिया वाच फलं वाजिमखोदितं ।

इति देवीपुराणोक्तं प्रदीपनवमीव्रतम् ।

अथ नवरात्रिव्रतम् ।

—000—

देवा ऊचुः ।

वावङ्गूर्वायुराकाशं* जलं वक्रिशशियहाः ।

तावहै चण्डिकापूजा भविष्यति सदा भुवि ॥

ग्राह्यकाले विशेषेण आश्विने छष्टमीषु च ।

नवरात्रन्दी नवम्यां च लोके ख्यातिं गमिष्यति ॥

ब्रह्मोवाच ।

एतस्मै देवराजेन्द्र स्वर्गवासफलप्रदम् ।

नरावरविभागन्तु क्रियायोगेन कीर्तितम् ॥

एवं नवावसं शक्यं पुरा देवारिकण्टकम् ।

इत्या देवीं वरं दध्युर्विद्याव्यास प्रतोषिताः ॥

शक्यं उवाच ।

आश्विने चातिते चोरे नवम्यां प्रतिवत्सरं ।

चोतु निष्काम्बहं तात उपवासजपादिकम् ॥

चोरे चौरनाम्नि दैत्ये चातिते मारिते सतीत्थर्षः ।

* अक्षयज्योतिषिणोः पुस्तकान्तरेषुः ।

ब्रह्मोवच ।

मृच्छ यत्न प्रवक्ष्यामि यथा त्वं पृच्छसि स्वयम् ।
 महासिद्धिप्रदं धन्यं सर्वशत्रुनिवर्हणम् ॥
 सर्वलोकोपकारार्थं विशेषादतिवृष्टिषु ।
 ज्ञत्वर्थं ब्राह्मणाद्यैश्च क्षत्रियैर्भूमिपालने ॥
 गोधनार्थं विद्या वक्तुं शूद्रैः पुत्रसुखार्थिभिः ।
 सौभाग्यार्थं क्षिप्रा कार्य्यमाट्टैश्च धनकाक्षिभिः ॥
 महाव्रतं महापुष्पं शङ्कराद्यैरनुष्ठितम् ।
 कर्त्तव्यं देवराजेन्द्र देवीभक्तिसमन्वितैः ॥
 कन्यासंस्ले* गुरौ यत्न शक्तादारभ्य नन्दिकां ।

नन्दिकां प्रतिपत् ।

यथाश्रीत्यथैकाश्री नक्ताश्रीत्यथवा पुनः ।
 प्रातःप्रायी जितहन्वस्त्रिकालं शिवपूजकः ।
 जपहोमसभासक्तः कन्यकाभोजयेत्सदा ॥
 अष्टम्यां नवगेहानि दारुजानि शुभानि च ।
 एकं वा द्वि त्रिभावेन कारयेत् सुरसप्तम ॥
 तस्मिन् देवी प्रकर्त्तव्या हैमी वा राजती पि वा ।
 बुधकालक्षणीपेतच्छुभमूलेन पूजयेत् ॥
 सर्वोपहार सन्मन्ना वस्त्र रत्नफलादिभिः ।
 कारवेद्भद्रदीप्तादिपूजाश्च बलिदैविकीं ।
 बलिवाहिनी देवा बलिदेवा विनायकादयः ।

तस्मिन्निनीं बलि दैवकीं ।

पुष्पैश्चक्रेण विस्वाम्जजातीपुत्राग, चम्पकैः ।

द्रोणः कुरुवकः ।

विचित्रां रचयेत् पूजां अष्टम्यासुपवासयेत् ।

दुर्गायतो जपे कन्धमेकचित्तः सुभावितः ॥

तदर्हयाग्निनीशे विजयार्धं शृपोत्तम ।

पञ्चाब्दं सप्तशोपेतं महिषश्च सुपूजितम् ॥

विधिबत् कालकालीति जप्ता खड्गेन चातयेत् ।

तस्योत्सवं चभिरं मांसं गृहीत्वा पूजनादिषु ॥

नैर्ऋताय प्रदातव्यं महाकौशिकमन्त्रितम् ।

तस्यायतो शृपः आयाच्छतुं कृत्वा सुपिष्टजम् ॥

खड्गेन चातपित्वा तु दद्यात् स्कन्दविशाखयोः ।

ततो देवीं सुसृत्याचे क्षीरसर्पिर्जलादिभिः ॥

कुङ्कुमागुहकपूर्वचन्दनैश्चाथं धूपयेत् ।

शेमाद्रिपुष्करजादिवासांसि आहृतानि च ॥

नैवेद्यं सुप्रभृतन्तु देयं देव्या सुभावितैः ।

देवीभक्ताश्च पूजेत कन्धकाः प्रमदादिकाः ॥

द्विजातीनश्चाप्यष्टानन्नदानेन प्रीचयेत् ।

नन्दाभक्ता नरा ये तु महाव्रतधराश्च ये ॥

रघयाचावसिक्षिपं जयवाद्यरवाकुलम् ।

कारवेत्तुचते येन देवी वस्तुनिघातनैः ॥

अश्वमेधमवाप्नोति भक्तितः सुरसत्तम ।

महानवम्बां पूजेयं सर्वकामप्रदायिका ॥

सर्वेषु वस्तुषु तव भक्ताः प्रकीर्त्तिताः ।
कृत्वाप्नोति यशोराज्यं पुत्रापुर्धनसम्पदः ॥

इति देवीपुराणोक्तं नवरात्रि व्रतम् ।

अथ महानवम्युत्सवविधिम् ।

— ००० —

कुमारीपूजनमध्यशेषे शीतं स्कन्दपुराणे ।
एकैकां पूजयेत् कन्यामिकहृष्टया तत्रैव च ॥
द्विगुणां त्रिगुणां चापि पूजयेन्नवम्याया ।
नवभिर्लक्षते* भूमिमैश्वर्यं द्विगुणेन च ॥
एकहृष्टया लभेत् क्षेममैकैकेन प्रियं लभेत् ।
एकवर्षा तु या कन्या पूजार्थिनां विवर्जयेत् ॥
गन्धपुष्पफलादीनां प्रीतिस्तस्य न विद्यते ।
द्विवर्षकन्यामारभ्य दशवर्षावधि क्रमात् ॥
पूजयेत्सर्वकार्येषु यथाविध्युक्तमार्गतः ।
कुमारिका द्विवर्षा तु त्रिवर्षा च त्रिमूर्त्तिनी ॥
चतुर्वर्षा तु कल्याणी पञ्चवर्षा तु रोहिणी ।
षड्वर्षा तु भवेत् काली सप्तवर्षा तु चण्डिका ॥
अष्टवर्षा शान्भवी तु दुर्गा तु नवमी स्मृता ।
दशवर्षा सुभद्रेति नामभिः परिकीर्त्तिताः ॥
अत ऊर्ध्वन्तुयाः कन्याः सर्वकार्येषु वर्जिताः ।

* लभते इति पाठान्तरं ।

दुःखदारिद्र्यनाशाय शत्रूणां नाशनाथ च ।
 आयुष्यवत्तुष्टार्थं कुमारीः पूजयेन्नरः ॥
 भाग्युष्णानस्त्रिमूर्त्तिन्तु त्रिवर्गस्य फलाप्तये ।
 अपस्तुत्यन्वाधिपीडा दुःखानामपनुत्तये ॥
 सौख्यधान्यधनारोग्यपुत्रपौत्राधिहृदये ॥
 कल्याणीं पूजयेद्दीमान्त्रित्यं कल्याणहृदये ।
 चारोन्मसुखकामी च जयकामी तथैव च ।
 वसुधामतीनरोनित्यं रोहिणीं परिपूजयेत् ॥
 विद्याधीं च जयाधीं च राज्याधीं च विशेषतः ।
 शत्रूणाञ्च विनाशार्थी कालिकां पूजयेन्नरः ।
 संया मेजयकामी च चण्डिकां परिपूजयेत् ॥
 दुःखदारिद्र्यनाशाय नृपसंमोहनाथ च ।
 महापापविनाशाय शान्भवीञ्च प्रपूजयेत् ॥
 स चेत् कुलाटशत्रूणां सुखसाधनकर्म्मणि ।
 दुर्गां दुर्गतिनाशाय पूजयेद्यत्नतो बुधः ॥
 सौभाग्यधनधान्यादि वाञ्छिताद्यफलाप्तये ।
 सुभद्रां पूजयेन्नर्त्वीं दासीदासविहृदये ।
 कुमारीपूजाप्रकारश्च तत्रैवोक्तः ।
 प्रातःकाले विशेषेण कृताभ्यङ्गो विशेषतः ॥
 आवाहयेत्ततः कन्यां मन्त्रेणानेन भार्गव ।
 आवाहन मन्त्रः ।
 मन्त्राक्षरमयी लक्ष्मी मूर्त्तृणां रूपधारिणी ।
 नवदुर्गात्मिकां साक्षात् कन्यानावाहयाम्यहं ॥

त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिबर्गां ज्ञानरुचिणीं ।
 त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्बहम् ॥
 कलात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवां ।
 कल्याणजननीं मित्यां कल्याणीं पूजयाम्बहम् ॥
 अग्निमादिगुणाधारां जकाराण्यचरात्मिकाम् ।
 अनन्तशक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्बहम् ॥
 कामचारीं शुभां कामां वाचचक्रलक्ष्मिणीं ।
 कामदां करुणोदारां कालीं सम्पूजयाम्बहम् ॥
 चण्डवीराचण्डमायाचण्डमुण्डप्रभञ्जनीं ।
 पूजयामि सदा देवीं चण्डिकां चण्डबिम्बनां ॥
 बदामन्दकरीं शान्तां सर्वदेवगमस्तृतां ।
 सर्वभूतात्मिकां लक्ष्मीं शान्धवीं पूजयाम्बहम् ॥
 दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भवदुःखविनाशिनीम् ।
 पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गास्तिनाशिनीम् ॥
 सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुखसोभाम्बदायिनीम् ।
 सुभद्रां जननीं देवीं सुभद्रां पूजयाम्बहम् ॥
 एवमभ्यर्चनं कुर्यात् कुमारिकां प्रयत्नतः ।
 कालकुक्षैव वस्त्रैश्च गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ।
 नानाविधैर्भक्ष्यभोज्यैर्भोजयेत्स्वायत्तादिभिः ।
 हीनाधिकार्जुनीं कुष्ठादिविकारां कुक्षुस्नानघा ॥
 अग्निस्फुटितगर्भाङ्गीं * रत्नपूषत्रचाङ्गितान् ।
 आत्मन्यां केकरीं काशीं कुरुषान्तपुरोत्तमां ॥

* श्रीर्वाङ्गोभिति पुष्पकानरे वाचः ।

मन्यजेद्रोगिणीं कन्यां दामोर्गर्भमसुद्धवां ।
 भ्रूरोगिणीं सुपुष्टाङ्गीं सुरूपां व्रणवर्जितां ॥
 एकवंगमसुद्धतां कन्यां सम्यक् प्रपूजयेत् ।
 ब्राह्मणीं सर्वकार्येषु जयार्थं नृपवंशजाम् ॥
 दारुणेचान्यजातीयां पूजयेद्विधिना नर इति* ॥

अत्र चाश्वस्य पूजनसूक्तं देवीपुराणे ।

अश्वयुक् शुक्लप्रतिपत्तिधियोगे शुभे दिने ।
 पूर्वमुच्चैःश्रवा नाम प्रथमं त्रियमावहन् ॥
 तस्मात् सोऽश्वीनरैस्तत्र पूज्योऽसौ अहया सह ।
 पूजनीयाश्च तुरगा नवमीं यावदेव हि ॥
 शान्तिः स्वस्थयनं कार्या तदा तेषां दिने दिने ।
 धान्यभक्ष्णातकं कुष्ठं वचां सिद्धार्थकांस्तथा ॥
 पञ्चवर्णेन सूत्रेण ग्रन्थिस्तेषान्तु बन्धयेत् ।
 वायव्यैर्व्वारुणेः सौरैः शक्तैर्मन्त्रैश्च वैष्णवैः ॥
 वैश्वदेवैस्तथाम्नेयैर्होमः कुर्याद्दिने दिने ।
 तुरङ्गा रक्षणीयास्तु पुरुषैः शस्त्रपाणिभिः ॥
 दारिद्र्यातः क्वचित्तत्र नच वाद्याः कथञ्चन इति ।
 अस्मिन्नवरात्रे षष्ठ्यां विस्वशाखादिमन्त्रणं कार्यं तथा
 लिङ्गपुराणे ॥

* साभाषे वैष्णवैरुष्यां सुताये शुद्धवंशजां ।

दारुणे चान्यजातानां पूजयेद्विधिना नरः । इति पुरुषकामरे पाठः ।

एं रावत्स्य बधार्थाय रामस्यानुग्रहाय च ।
 अकाले ब्रह्मणा बोधोदेव्यास्वयि कृतः पुरा ॥
 अहमप्याश्रितः* षष्ठ्यां सायाङ्गे बोधयाम्यतः ।
 श्रीशैलशिखरेजात श्रीफल श्रीनिकेतन ॥
 नेतव्योऽसि मया गच्छ पूज्योदुर्गास्वरूपतः ।
 सप्तम्यां प्रातस्तां शाखां गृहं च्छित्वा प्रवेशयेत् ॥
 तथा च तत्रैव । मूलाभावेऽपि सप्तम्यां केवलायां प्रवेशयेत् ।
 उभाभ्यां नवबिम्बस्य फलाभ्यां शाखिकान्तयेति ॥
 अष्टम्यां पूजाविशेषी विहितो ब्रह्मपुराणे ।
 अत्राष्टम्यां भद्रकाली दक्षयज्ञविनाशिनी ॥
 प्रादुर्भूता महाघोरा योगिनीकीटिभिः सह ।
 अतोऽर्थं पूजनीया सा तस्मिन्नहनि मानवैः ॥
 उपोषितैर्वस्त्रधूपैर्दीपैर्भास्वाशुलेपनैः ।
 आमिषैर्विविधैः शाकैर्होमनाम्नस्यतर्पणैः ॥
 बिम्बपत्रैः श्रीफलैश्च चन्दनेन घृतेन च ।
 नवम्यां तु कृतस्नानैः सर्वैः पूज्यास्तु ब्राह्मणा इति ॥
 प्रतिपदादिषु नवसु प्रतिदिनं दुर्गापूजादिकरणासामर्थ्ये
 सप्तम्यादिदिनत्रयेण कर्त्तव्यम् ।

तदाह धौम्यः ॥

आश्विने मासि शुक्ले तु कर्त्तव्यं नवरात्रकं ।
 प्रतिपदादिक्रमेणैव यावच्च नवमी भवेत् ॥

* अहमप्याश्रिते इति पुस्तकान्तरं पाठः ।

निरात्रं वापि कर्त्तव्यं सप्तम्यादि यथाक्रममिति ।

श्रीकृष्ण उवाच ।

पुष्पा महानवम्यस्ति तिष्ठीनामुत्तमा तिथिः ।

शानुष्ठेया सुरैः सर्वैः प्रजापालैर्बिम्बितः ॥

भवानीतुष्टये पार्थ सम्बन्तरसुखाय च ।

भूतप्रेतपिशाचानां प्रीत्यर्थं तूत्सवाय च* ॥

बुधिष्ठिरउवाच ।

कक्षात् कालात् प्रहृत्तेयं नवमी महशब्दिता ।

किमादावपि कक्षासीङ्गवत्याः प्रिया तिथिः ॥

बभ्रोद्दागर्भसम्भूता भूतयाचा प्रवर्त्तते ।

उताष्टी पूर्वमेवास्तीत् कृतत्रेतायुगादिषु ॥

त्रे चान्धे प्राचिनः केचिद्वन्दन्ते घातयन्ति वा ।

इतानां प्राचिनां तेषां का गतिः पारलौकिकी ॥

स्वयं ज्ञतां घातयतामनुमोदयतां तथा ।

इत्यन्ते संशयं सर्वं च्छेत्तुमर्हसि केशव ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

वाचं वा परमा शक्तिरनन्ता लोकपूजिता ।

आद्या सर्वगत्या शुद्धा भावगन्धा जनोद्धरा ॥

अर्धाष्टमी कालिकायाः सुपुत्रा सर्वमङ्गला ।

माया काल्यावनी दुर्गा चानुष्ठा शङ्करप्रिया ॥

* नाशार्थं शोच्यतेति पुस्तकान्तरे वाचः ।

ध्यायन्ति यां योगरताः सा देवी परमेश्वरी ।
 रूपभेदेर्नामभेदेर्भवानी पूज्यते शिवा ॥
 नवम्यां तु महाराज देवदानवराक्षसैः ।
 गन्धर्वैश्चरुगैर्यक्षैः पूज्यते किन्नरैर्नरैः ॥
 अन्यैरपि मन्त्रीपालैः ऋष्टिपूर्वं प्रकीर्तिता ।
 पूजितेषु पुरा देवैस्तेभ्यः पूर्वतरैः शुभैः ॥
 अश्वयुक् शुकपचस्य अष्टमी मूलसंयुता ।
 सा महानवमी नाम त्रैलोक्येऽपि सुदुर्लभा ॥
 कन्यागते सवितरि शुकपचोऽष्टमी तु या ।
 मूलनक्षत्रसंयुक्ता सा महानवमी कृता ।
 अष्टम्यां च नवम्यां च जन्ममोक्षप्रदास्त्रिजां ॥
 षजयित्वाश्विने मासि विशोकीजायते नरः ।
 सन्तर्जयन्ती हुङ्कारैर्विघ्नौघच्छेदकृत्परा ॥
 नवम्यां पूजिता देवीः ददात्यनुपमं फलं ।
 सा पुण्या सा पवित्रा च सुधर्मसुखदायिनी ॥
 तस्यां सदा पूजनीया चानुगृह्या सुखमालिनी ।
 तस्यै ये ह्युपयुज्यन्ते प्राणिनो महिषादयः ।
 सर्वे ते स्वर्गतिं यान्ति घ्नतां पापं न विद्यते ॥
 न तथा वलिदानेन पुण्यधूपविलेपनैः ।
 ब्रह्मा सन्तुष्यते भेषैर्माहिषैर्विभ्रवांसिनी ॥
 उद्दिश्य दुर्गां हन्यन्ते विविधा यत्र जन्तवः ।
 ते यान्ति स्वर्गं कौन्तेय चातवन्तोयशस्विनः ॥
 भवानी प्राङ्मुखे प्राणां देवां वाता युधिष्ठिर ।

तेषां स्वर्गे भुवं वासीनरास्तेऽप्सरसांप्रियाः ।
 मन्वन्तरेषु सर्वेषु कल्पेषु कुरुनन्दन ॥
 तेषु सर्वेषु चैवासीन्नवमीयं सुरार्चिता ।
 प्रसिद्धानादिनिधना वर्षे वर्षे युधिष्ठिर ॥
 भूमीभयोऽवतारेषु भवानी पूज्यते सुरैः ।
 अक्षतीर्षावतीर्षा च भुवि दैत्यनिवर्हिणी ॥
 स्वर्गदातास्तनूर्त्विषु करोत्यतिधिपालनं ।
 सैषा काले भङ्गादेवी यशोदागर्भमन्वावा ।
 कंसार्जुनरक्षोत्तमाङ्गि पादं गत्वा गता दिवं ॥
 ततः प्रभृति दैत्यघ्नी यशोदानन्दिनी मया ।
 विन्ध्याचले स्थापयित्वा पुनः पूज्याप्रवर्तिता ॥
 पूर्वप्रसिद्धापि पुनर्भगिन्या महिमाकृते ।
 भुवि सत्त्वोपकाराय सर्व्वोपद्रवशान्तये ॥
 एवञ्च विन्ध्यवासिन्यां नवरात्रोपवासितः ।
 एकभक्तेन नक्तो न स्वशक्त्यायाचितेन वा ।
 पूजनीया जनैर्देवी स्थाने स्थाने पुरे पुरे ।
 गृहे गृहे शक्तिपरैर्ग्रामे ग्रामे वने वने ॥
 स्नातैः प्रमुदितैर्हृष्टैर्ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्नृपैः ।
 ततः संपूजयेद्द्वीमान् मन्त्रैरेव पृथक् पृथक् ।
 वैश्यैः शूद्रैर्भक्तियुक्तैर्त्वेच्छेरन्धेय मानवैः ।
 स्त्रीभियं कुरुगार्दूल तद्दिधानमिदं शृणु ॥
 जयाभिलाषी नृपतिः प्रतिप्रतुप्रभृति क्रमात् ।
 नीह्याभिमारिकं कर्म कारयेत् यावद्दृष्टमीं ॥

प्रागुदक्प्रवणे देशे पताकाभिरलंकृतम् ।
 मण्डपं कारयेद्विध्यं नवसप्तकरं शुभम् ॥
 भान्नेय्यां कारयेत् कुण्डं हस्तमात्रं सुशोभनम् ।
 मेखलाचयसंयुक्तं योन्मण्डपदलालया ।
 राजचिह्नानि सर्वाणि शस्त्राण्यस्त्राणि यानि च ॥
 आनीय मण्डपे तानि सर्वाण्येवाभिवानयेत् ।
 ततस्तु ब्राह्मणैः ज्ञातः शलाघ्वरधरः शुचिः ॥
 श्रींकारपूर्वकैर्भस्मै स्तस्त्रिंशुर्जुहुयात् घृतं ।
 लोहनामाभवत् पूर्वं दानवः सुमहाबलः ॥
 स देवैः समरे क्रूरेर्वहुधा शकलीकृतः ।
 तदङ्गसम्भवं सर्वं लोहं यद्दृश्यते च्छिती ।
 लोहाभिसारिकं कर्म तेनैतद्विषया अतम् ॥
 हुतशेषानुरङ्गाणां राजानसुपहारयेत् ।
 शस्त्रास्त्रमन्त्रैर्हीतव्यं पायसं घृतसंयुतम् ॥
 केवलं घृतहोमस्तु राजचिह्नं सुमन्त्रकैः ।
 वह्नानालानकैस्तत्र गजाश्वान् समलङ्कृतान् ॥
 भ्रामयन्नगरे नित्यं नन्दिघोषपुरःसरान्* ।
 प्रत्यङ्गं नृपतिः स्नात्वा संपूज्य पितृदेवतां ॥
 पूजयेद्वाजचिह्नानि फलमाभ्यानुलेपनैः ।
 हस्तशेषं प्रदातव्यमौपनायनिके द्विजे ॥
 तस्याभिह्वरणाद्वाग्नीविजयः समुदाहृतः ।

पूजामन्वान् प्रवक्ष्यामि पुराचीत्तानहं तव ॥
 यैः पूजिताः प्रयच्छन्ति कौर्त्तिं मातुर्बुधैर्वलम् ।
 यथा चन्द्रम्* द्यति प्रियावेमां बभूवुरान् ॥
 तथा च्छाद्य राजानं विजयारीम्बृहद्वे ॥

छत्रमन्त्रः ।

गन्धर्वकुलजातस्त्वं माभूयाः कुलदूषकः ।
 ब्राह्मणान् सत्यवाक्त्रेण सोमस्य वरुणस्य च ॥
 प्रभावाच्च बुताशस्य वर्षयस्य तुरङ्गम ।
 तेजसाचैव सूर्यस्य तुनीनां तपसा तथा ॥
 बद्धस्य ब्रह्मचर्य्येण पवनस्य बलेन च ।
 स्मर त्वं राजपुत्रश्च कौस्तुभश्च मणिं स्मर ॥
 यां गतिं पिष्टहा गच्छेद्ब्रह्महा माष्टहा तथा ।
 शूणहातृतवाहीच चत्रियश्च पराङ्मुखः ॥
 सूर्याचन्द्रमसो वायुर्ध्यावत्पश्यन्ति दुष्कृतिं ।
 ब्रज त्वं ताङ्गतिं क्षिप्रं तव पापं भवेत्तदा ॥
 विकृतिं यदि वाञ्छन्तो युष्मद्भ्यनि तुरङ्गम ।
 रिपून् विजित्य नमरे सह भर्ता सुखी भव ॥

अश्वमन्त्राः ।

शक्रजेतो महावीर्य्यं श्यामवर्णाश्वयाम्यहं ।
 पतञ्च वैनतेय त्वं तथा नारायणध्वज ॥
 काश्यपेशारुणभ्रातर्नागारे विष्णुवाहन ॥

* यथाश्वः श्राव्यतीति पुंसकान्तरे ।

अप्रमेय दुराचर्षं रणे देवारिसूदन ।
 गरुडान्माराहतगतिरूपयि मन्निहितोयतः ॥
 अस्रक्षन्मार्गुधान् पत्रं रक्ष त्वं च रिपून् दह ।

ध्वजमन्त्रः ।

कुमुदैरावणो पद्मः पुष्पदन्तोऽथ वामनः ।
 सुप्रतीकोच्चनो नील एतेष्टौ देवयोनयः ॥
 तेषां पुत्राश्च पौत्राश्च वनान्यष्टौ समान्विताः ।
 भद्रोमन्दीन्द्रगर्भैव राजसङ्घीर्ष एव च ॥
 वने वने प्रसृतास्ते स्मर योनिं महागज ।
 पान्तु त्वां वसवोरुद्रा आदित्याः समरुहणाः ॥
 भर्तारं रक्ष नागेन्द्र स्वामिवत् प्रतिपाल्यतां ॥
 अवाप्नुहि जयं युद्धे गमने स्वस्ति ना व्रज ।
 श्रोस्ते सोमाहलं विश्वोस्तेजः सूर्याञ्जवोऽनितात् ।
 स्वैर्यं मेरोर्जयो रुद्राहौर्यं देवात् पुरन्दरात् ॥
 युद्धे रक्षन्तु नागास्त्वां दिग्गज सप्त देवतैः ॥
 अश्विनौ मह गन्धर्वैः पान्तु त्वां तर्कतः सदा ।

गजमन्त्रः ।

दुतभुग्वसवोरुद्रा वायुःसोमो महर्षयः ।
 नाग, किन्नर, गन्धर्वा, यक्षभूतगणप्रजाः ॥
 प्रमथास्तुःसहादित्वैर्भूतेशोमातृभिः सह ।
 शक्रसेनापतिस्त्रान्दोवदणःपार्श्वदास्त्रिह ॥

• प्रथमान् महादित्वैरिति पक्षकाले ।

प्रदहन्तु रिपून् सर्वान् राजा विजयसृञ्चतु ।
 यानि प्रयुक्तान्यरिभिर्भूषणानि समन्ततः ॥
 पतन्सूपरि शत्रूणां हतानि तव तेजसा ।
 कालनेमिबधे यद्वत्तद्विपुलघातने ॥
 द्विरस्यकशिपोर्युं देयुषे देवासुरे तथा ।
 शोभितासि तथैवाद्य शोभयास्मांश्च संस्मर ॥
 नीलां श्वेतामिमां दृष्ट्वा नश्यन्वाशु नृपारयः ।
 व्याधिभिर्विबिधैर्घोरैःशस्त्रैश्च युधिनिर्जिताः ॥
 सद्यःस्वस्वा भवन्स्वस्वास्वहातेनापमार्जिताः ।
 पूतना रेवती गौरी कालरात्रिश्च या स्मृता ॥

पताकामन्त्रः ।

असिर्विशसनः खड्गो' विकर्मा च दुरासदः ।
 त्रीगर्भो विजयश्चैव धर्माधारस्तथैव च ॥
 इत्यष्टौ तव नामानि स्वयमुक्तानि वेधसा ।
 नक्षत्रं क्षत्तिका ते तु गुरुर्देवो महेश्वरः ॥
 द्विरस्यश्च शरीरन्ते धाता देवो जनार्दनः ।
 पिता पितामहोदेवस्तस्मां पालय सर्वदा ॥

सङ्गमन्त्रः ।

श्रीं शर्माप्रदं त्वं समरेषुसर्वार्थसो द्रदि ।
 रक्ष मां रक्षणीयोऽहं न हन्तव्योममोस्तु ते ॥

* राक्षसातीति पुस्तकालये पाठः ।

† श्रींक्षयादीन्दायद इति पुस्तकालये पाठः ।

वन्द्यमन्त्रः ।

दुन्दुभे त्वं प्रपन्नानां रोषाद्भयकम्पनः ।
 भव भूमिपत्नीन्धानां तथा विजयवर्धनः ।
 यथा जीमूतघोषेण प्रहृषन्ति तु बर्हिषः ॥
 तथास्तु तव शब्देन हवींऽस्त्राकं सुदावह ।
 यथा जीमूतशब्देन स्त्रीणां भासोऽभिजायते ॥
 तथा वादिशब्देन भासोऽस्त्राद्रिपीरथे ।

दुन्दुभिमन्त्रः ।

सर्वायुधमहामात्र सर्वदेवारिसुदन ।
 शिवभूमासि सैन्धानां तथा विजयवर्धनः ॥
 चाप मां सर्वं हा रथ साकं सायकसत्तमैः ।

चापमन्त्रः ।

पुष्करं गङ्गाशब्दानां मङ्गलानाञ्च मङ्गलम् ।
 विष्णुना विधृतीनित्यमतः शक्तिप्रदी भव ॥

गङ्गामन्त्रः ।

शशाङ्करसहाय हिमशिखीरपाङ्कुर ।
 प्रोक्षारथाय सुदित चामरामरवत्तम ॥

चामरमन्त्रः ।

सर्वायुधानां प्रथमा निर्मितासि पिनाकिना ।
 शूलायुधादिनिष्कृष्य ज्ञत्वा सुष्टिग्रहं शुभम् ॥
 चण्डिकायाः शिवासि त्वं सर्वं दुष्टनिवर्हणी ।
 त्वया विस्तारिता वासि देवानां प्रतिपादिता ॥

सर्वं सत्त्वाङ्गभूतासि* शुभासुरनिवर्हणी ।
हुरिके रक्ष मां नित्यं शान्तिं यच्छ नमोस्तु ते ॥

हुरिकामन्त्रः ।

प्रोक्त्वा रथाय दुष्टानां साधुसंघश्चाथ च ।
ब्रह्मणा निर्मितचापि व्यवहारप्रसिद्धये ॥
यशोदेहि सुखं देहि जयदो भव भूपतेः ।
ताडयाह रिपून् सर्वान् हेमदण्ड नमोस्तु ते ॥

सनकादण्डमन्त्रः ।

विजयो जयदो नाम रिपुघाति प्रियहर ।
दुःखहा धर्मदः शान्तः सर्वारिष्टविनाशन ॥
एतेष्टौ सचिधौ प्रोक्त्वास्तवसिंहा मन्त्रावसाः ।
तेन सिंहासनोऽसि त्वं विप्रैर्बन्धेषु गीयसे ॥
त्वयि स्मितः शिवः साक्षात् त्वयि शक्तः सुरेश्वरः ।
त्वयि स्मितो हरिर्देवस्वर्द्धर्षे तप्यते तपः ।
नमस्ये सर्वतीभद्र भद्रदो भव भूपतेः ॥
चैलोक्यजयसर्वस्य सिंहासन नमोस्तु ते ॥

सिंहासनमन्त्रः ।

सीहाभिसारिकं कर्म कृत्यैवं मन्त्रपूर्वकम् ।
फल्गुनैवेद्यकुसुमैर्धूपदीपविलेपनैः ॥
षष्ट्या निवसं कृत्वा पूर्वाङ्गे खानमाचरेत् ।
दुर्गां काञ्चनमूर्तिं स्नां रौप्यां वा सुवर्णवीमज ॥

* सर्वोद्गमपिवर्हणीति उक्तवानरे शाठः ।

शैलीं वार्चीं च रैतीं वा ताम्बीं विभवतः कृत्वा ।
 दारुविचित्रतोरणे म्यस्ता श्रीभने स्वाने ।
 पुरतो विन्ध्यस्तदेशां विचित्रमृद्वमध्यां देवीम् ॥
 चन्दन कुङ्कुम चम्पकचतुःसमैः शैलपिष्टैश्च ।
 चर्चितगात्रां देवीं कुसुमेरभ्यर्चितां* बहुभिः ॥
 कुसुदैः सपद्मपुष्पैः सुदीपधूपैः सुनैवेद्यैः ।
 मांसैर्बन्धुपहारैर्भक्ष्यैश्चैवैः समुचक्षितैः ॥
 विजयद्वयैर्यानेः सन्दनसितशस्त्रधारिजमलीकैः ।
 तुष्टैर्वरवस्त्रादि सुनिवेद्यते सर्वमेव भगवत्स्यै ॥
 जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कृपासिनी ।
 दुर्गा चमा शिवा धात्री† स्वाहा स्वधा नमोस्तु ते ॥
 अस्तौद्वय श्रीद्वय महादेवप्रियं सदा ।
 विश्वपत्रं प्रयच्छामि पवित्रं ते सुरेश्वरि ॥
 दुर्गां सम्पूजयेच्चैव तद्दिने द्वीचपुष्पकैः ।
 साचाभीष्टा सुरेश्यास्यास्तथाऋतुप्रतोद्यतः‡ ।
 ततः खड्गं नमस्कृत्य शस्त्रं चाद्यैव मर्दयेत् ॥
 इच्छेत विजयं राज्यं सुभिन्नं चामनो मृतः ।
 पुनः पुनः प्रयस्यासिं संस्मरन् हृदये शिवाम् ॥
 महिषघ्नी महाभुजां कुमारीं हिंद्वाहिनीम् ।
 दानवांस्तर्जयन्तीं च खड्गोद्यतकरां शुभाम् ।
 घण्टाञ्जसम्भरां दुर्गां रघारणे व्यवस्थिताम् ॥

* कुसुमेरभ्यर्चयेदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† शिवाचनेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ततो जवजवासापैक्षवं कुर्वाद्दिगन्ततः ।
 सर्वं नङ्कसमाह्वये शिवे सर्वार्थसाधिके ॥
 शरणां चान्यके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ।
 कुङ्कुमेन समास्रभ्ये चन्द्रेण विलेपिते ॥
 विल्वपत्रमहाभासे दुर्गेऽहं शरचङ्गतः ।
 हस्तैवमद्य कौरव्य अष्टम्बा जागरं निशि ॥
 मटनर्तकगीतैश्च कारयेत्सुमहोत्सवम् ।
 एवं हृष्टोनिशां नीत्वा प्रभाते अरुचोदये ॥
 घातयेत्कश्चिदास्त्रैश्चानघतो मतकम्बरान् ।
 शतमर्हशतंवापि तदहं वा वधेऽप्यथा ॥
 सुरासवधतेः कुम्भैस्तर्पयेत्परमेश्वरीम् ।
 कपासिकेभ्यस्तर्पेत् तत्रा दुष्टजनेभ्यपि* ॥
 विभज्य सर्वं कौन्तेय सुहृद्व्यम्भिवन्सु ।
 ततोपराज्जसमवे नवम्बां चन्द्रेस्त्रितां ॥
 भवानीं भ्रामयेद्ग्राह्ये स्वयं राजा स्वसैन्यवान् ।
 सुविदग्धैः पूरयेत्पारशुराजैः सुपूजितैः ॥
 शनैः शनैरम्बिकायाज्यकश्चिर्दीपहं चणैः ।
 पाण्डवस्यै वैशेष्येण धानुष्यैः सुप्रवसगितैः ॥
 नदग्निः शरपट्टैश्चैतन्निर्बहुवारवैः ।
 कश्चिद्योषोषितो गौरीविहृतोऽप्येव चङ्गिना ॥
 भूतेभ्यस्तु वधिं हृद्यान्त्ये चानेन चामिषं ।
 सरसं सजसं चासं नम्यन्नुच्चाचतेर्भुतं ॥

* दासोदाचने नवेति पुस्तकान्तरे ।

त्रींस्त्रीन् वारांश्चिद्वृत्तान् द्विन्द्विद्विषु चिदेद्विं ।
 वसिं गृह्णन्निभं देवा चाद्विन्ना वसवस्तथा ।
 महतयाश्विनो वद्वः सुपर्णाः वसवा वद्वः* ।
 असुरा यातुधानाश्च पित्राश्च मातरोरमाः ।
 षास्त्रिन्वो यश्चेतासां नीमिन्वः पूतनास्तथा ।
 जूश्वकाः सिद्धगन्धर्वा मासाविष्वाधरा नगाः ।
 दिक्पाला सौम्यपालाश्च ये च विद्मविनायकाः ॥
 जगतां शान्तिकर्तारो ब्रह्माणाश्च महर्षयः ।
 मा विद्मं मा च मे पापं मा सन्तु परिपन्थिनः ॥
 सौम्या भवन्तु उद्याश्च भूतप्रेताः सुखावहाः ।
 इत्येवं भ्रामयेद्वाङ्मे दुर्मादेवीं रक्षस्मिता ॥
 न रद्यानेन वा पापं ततोविद्मं समाचरेत् ।
 अशोत्यग्नेषु विद्मेषु भूतशान्तिं समाचरेत् ॥
 येन विद्वा न जायन्ते वाग्ना सम्पूर्वतां क्रमेत् ।
 एवं ये कुर्वन्ते वाचां राजानोन्वेऽपि मानवाः ॥
 महानवन्वाजन्वावाः सुचिन्वा वष्टमानवाः ।
 ते सर्वे पापनिस्तुं वा शान्तिं भागवतीं कुरीं ॥
 न तेषां अश्विनोनाश्विनं चोरो न विनायकाः ॥
 विद्मं कुर्वन्ति राजेन्द्र देवां तुष्टा नरेन्दरो ।
 निवृत्ताः सुचिन्वो भोगान् सुज्ञा रोगविषिर्जिताः ॥
 भवन्ति सुखा भक्ता भगवत्पाः क्लिप्तचेते ।
 इत्येतन्ने समाख्यातं दुर्मादेव्या महोत्तमम् ॥

* विद्वापोरनाश्विनानि सुखाकरे ।

पठतां श्रुन्तां चैव सर्वाद्यभविनाशनम् ।
 श्रुत्वाद्यभिन्नमहिषासुरपृष्ठपीठ
 मध्यास्य तन्मुखचिराद्गदवाहुदंष्ट्रां ।
 अभ्यर्च्य चन्द्रवदनानुगतां नवम्बां
 दुर्गान्तु दुर्गगहनानि तरन्ति मर्त्याः ॥

इति भविष्योत्तरपुराणोक्तो महानवम्यत्सुवविधिः ।

अथ महानवम्यत्सुवविधिः ।

—000@000—

अथाथर्व्वचगीपद्यन्नाह्नात् ।

अथ नवम्बामपराङ्गे वाहनानि स्तपयित्वा आहृतवामा
 ब्राह्मणोद्गाद्गन्तुमिति वेदं कृत्वा अथ तन्ममित्युक्तां शान्तिं
 कृत्वा तद्ब्रूयन्वाहनानि त्रिःप्रीष्य परिधोशान् निशान्तामिति
 सूक्तं जपन् प्रत्येत्याभिषेचयेत् । यदेतेनाश्वलङ्गे* कृतं मध्वल
 कण्टकं

कृत्वोपस्थाय निदध्यादेभयैरपराजितैः

स्वपुण्ड्रैः† स्वस्वयनैरप्रतिरथेन च हुत्वा संख्याप्य अग्ने रक्षांमि
 अपाहतेति वासोभिः प्रच्छाद्या रसैः कुम्भानौडुम्बरान् पृ-
 यित्वा प्रतिदिवसमवस्थाप्य निदध्यादेवमन्यान्पुदपात्राणि संमित्या
 धान्याष्टपात्राण्यष्टासु दिक्षु तत्रैव देवताः यजेताग्निवायुवरुण
 सोममश्विनाविति पयसि ख्यालीपाकं अपयित्वा समन्वारम्भाऽग्ने

* यदेतेनश्वगतं कृतं मध्वलकण्टकमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† स्वपुण्ड्रैरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

त्वस्रो अतम ममापे वचोविह्वेषस्तु उदत्तमं वरुषपाशमस्मान्
सदस्यतिमद्भूत अस्मिन्नावाचमिति पञ्चभिर्षु ह्युयात्पोषमासौ
प्रब्रमेति सुहृद्याहुन्दुभिमाह्व्यादिलुक्तं उपव्यासपरतिः* तत्रैवा-
नुमन्मन्

सर्वाणि च वादिनाणि वाहनानि च सन्तं स्यात् प्रतिहर्ष-
यन्ति पञ्चमीनधिहापयेतश्च पञ्चैरुदेव इति सुगुणक कुष्ठ धूपं
दद्यात् यस्तो गन्धबाहुजं इति भूतिं प्रयच्छेत् दुष्प्राभूवितरसीति
प्रतिसरमवध्वनार्तः पुस्तादिति† प्रतिसंक्षिपेद्वह्निर्मिच्छत्वोत्तरे च
गत्वा वाह्योतापनिःक्रम्य सुहृदे कुर्यात् अहधते कुर्यात् हतानाम-
भयं कर्म विवर्जित पञ्चयोर्नवमीं यज्ञात् कुर्याच्च भयकर्माणि ।

इति गोपब्रह्मण्ये महानवमीविधिः ।

इति महानवम्युत्सवविधिः ।

अथ उभयनवमीव्रतम् ।

—०००—

त्रैसुमन्तुर्वाच ।

योऽन्दिमेकं प्रकुर्वीत नवम्यां नक्तमादरात् ।

इह भोगानवाध्यापयान् परत्र च दिवं व्रजेत् ।

पौषे मासे च सम्प्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनं ॥

जितेन्द्रियः सत्यवादी कामक्रोधविवर्जितः ।

पञ्चयोर्नवमीं यज्ञादुपवासेन पालयेत् ॥

* उक्त्वास्यपरति पुण्ड्रकान्तरे पाठः ।

† प्रसवमाधवेध्वनार्त इति पुण्ड्रकान्तरे पाठः ।

चिकानं पूजये दार्यां गन्धपुष्पीपहारतः ।
 ज्ञत्वाम्निकार्यं विधिवद्भूमौ शय्यां प्रकल्पयेत् ॥
 मासान्ते क्षपनं ज्ञत्वा भवान्धे च वृतादिभिः ।
 ज्ञत्वा ध्यानं महापूर्णां चण्डिकायै प्रकल्पयेत् ॥
 भीषेद्यं तच्छुक्लप्रसन्नं वीरसिद्धं निवेदयेत् ।
 कुमारीर्भीजयेच्छाष्टौ विप्रान् भागवतास्तथा ॥

भागवतान् भगवतीभक्तान् ।

ज्ञत्वा पिष्टमयीं देवीं नाम्ना आर्येति पूजयेत् ।
 चतुर्भुजां शूलधरां कुन्दपुष्पैः सगुग्गुलैः ॥
 ज्ञानं ज्ञत्वा तिस्रैर्विप्रैस्त्रिस्तानां प्राशनं तथा ।
 य एवं पूजयेदार्यां तस्य पुण्यफलं श्रुत्वा ॥
 सूर्यकोटिप्रतीकायं विमानवरमास्थितः ।
 शीघ्रयमानश्चमरैः स्तूयमानः सुरासुरैः ॥
 गच्छेद्दुर्गापुरं रम्यं यत्रास्ते चण्डिका क्षयम् ।
 क्रीडते देवगन्धर्व्यैर्यावदाङ्गतसंभवम् ॥
 चिःसप्तकुलजैः सार्धं भोगान् भुक्त्वा यथेष्टितान् ।
 पुनरेत्थ भुवं वीर राजा भवति भूतसे ॥
 माघे माघे तु संप्राप्ते यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ।
 क्षयरां वृत्तसंयुक्तां भुञ्जानः संयतेन्द्रियः ॥
 उपवासपरोष्ठम्यां पञ्चयोद्धभयोरपि ।
 पूजयेद्विधिवद्दुर्गां * नाम्ना गौरौति वै श्रुप ॥

* पूजयेद्विधिवद्दुर्गां ज्ञत्वामोक्षं पूर्वकापिति पुण्यकारे वाक्यः ।

विमानवरमाहूयः सूर्यलोके महीयते ।
 प्राप्ते तु फाल्गुने मासि यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥
 यवाद्यं भुञ्जमानस्तु त्यक्त्वा दूरेण योषितं ।
 कृत्वोपवासमष्टम्यां पञ्चयोदशयोर्द्वयम् ॥

उपवासं मनसि कृत्वा पूजयेद्दिधिवदुर्गां नवम्युपवासं
 मनसि निधायाष्टम्यां नक्तं

पूजयेत्प्रवकां भक्त्या कृत्वा गोधूमचूर्णतः ।
 दुर्गामष्टभुजां वीर चाम्बकामिति नामतः ।
 गन्धपुष्पीपहारैस्तु सर्वैरत्नैस्तु पूजयेत् ॥
 धूपं कृत्वागुहं दद्यात् मांसं दद्याच्च मांसिकम् ।
 धान्यं सिद्धार्थकाः ज्ञाने प्राग्ने वा यवाः क्षुताः ॥
 च एवं माघमासे च पूजयेत्प्रवकां नृप ।
 कृत्वा ताम्रमयीं वीर दानिंशार्द्धभुजां शुभां ।
 पीतेस्तु पूजयेत् पुष्पैश्चन्दनागुरुमिन्द्रितैः ।
 दध्नीदनस्तु नैवेद्यं धूपोऽयं सिद्धकः परः ॥
 ज्ञानप्राग्नेयोर्धान्यं* गोमूत्रं कायशोधनम् ।
 नवम्यां च महादेवीं ज्ञानं कृत्वा हृतादिभिः ॥
 कुमारोर्भोजयेद्भक्त्या ब्राह्मणांश्च स्वयत्कृतः ।
 च एवं पूजयेद्भक्त्या दुर्गादेवीं वृषोत्तम ॥
 च याति परमं ज्ञानं यत्र सा चण्डिका स्मिता ।
 वैचे मासे तु संप्राप्ते चः कुर्यान्नक्तभोजनं ॥
 पिष्टकं पत्रसा युक्तं भुञ्जानः शासिसम्भवम् ।

* अन्नमिति पुत्रसाकरेणः ।

पूजयेद्भगवतीं भक्त्या कृत्वा वै चन्दनस्य च ॥
 गन्धपुष्पोपहारैश्च विंशतिभुजसन्निता ।
 न्नाम्नासुखीति वै नाम्ना कुङ्कुमागुहचन्दनैः ॥
 धूपं सागुहकर्पूरं भगवत्यै निवेदयेत् ।
 दद्यात्पद्मसुखं भक्त्या नैवेद्यं विधिवत् ॥
 ज्ञाने कुशीदकं धर्म्यं प्राशने च नराधिप ।
 इत्थं सम्भोज्य* देवेशीं कुमारीं भोजयेत्ततः ॥
 ब्राह्मणांश्च तथा शक्त्या ततो भुञ्जीत वास्यतः ।
 पद्मरागणैर्युक्तं सौवर्णमणिवेदिकं ॥
 विमानवरमारुढी ब्रह्मलोके महीयते ।
 वैशाखे मासि राजेन्द्र पञ्चयोहभयोर्हयोः ॥
 उपवासपरोभक्त्या पूजयामास चण्डिका ।

अष्टम्यां नक्तं नवभ्यामुपवासप्रकाराद्देदितव्यसुत्तरेऽपि मासेषु ।

नाम्ना भगवतीत्येषं कृत्वा पञ्चमयीं विभो ।
 रूपेणाष्टभुजां शुभ्रां पूर्णचन्द्रनिभानना ।
 सुन्नराणां प्रजाभिस्तु पूजयेच्छिवनाथिकां ॥
 नानागुहककर्पूरधूपेन विजयेन च ॥
 नैवेद्यं गुह्यपूपाश्च भगवा गुग्गुलुं नृप ।
 एवं संपूज्य विधिवत् कुमारीर्भोजयेत्ततः ॥
 पुष्पेषुतनुसङ्गाश्यां स्नेजस्वी भुवसन्निभः ।
 विमानवरमारुढीदेवीलोके महीयते ॥

* सम्पूज्येति पुस्तकान्तरे वाचः ।

† पुष्पेषुतनुसङ्गाश्या इति पुस्तकान्तरे वाचः ।

ज्येष्ठे मासि वृषश्रेष्ठे यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ।
 श्राव्युत्तमं श्रुतं शुभ्रं* भुञ्जानः पयसा सह ॥
 उपवासपरो भक्त्या नवम्यां पूजयेद्दुहुमं* ।
 कुङ्कुमागुहकर्पूरैर्धूपे सागरुषाद्यथा ।
 अशोकवर्तिप्रसुखैर्नानाभक्षैस्तु पूजयेत् ।
 आषाढे मासि राजेन्द्र यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ।
 भुञ्जानः खण्डखाद्यानि पायसं च नराधिप ॥
 उपवासपरो भक्त्या नवम्यां पञ्चयोर्द्वयोः ।
 पूजयेच्छ्रद्धया दुर्गामैन्द्रीनाम्ना तु नामतः ॥
 ऐरावणगतिं शुभ्रां श्वेतरूपेण पक्षिणीं ।
 कृत्वा स्वर्णमयीं भक्त्या नानानयनभूषितां ॥
 नानापुष्पविशेषैस्तु भक्ष्यैर्नानाविधैस्तथा ।
 यक्षकर्दमगन्धैश्च धूपैः सागरुषन्दनैः ।
 एवं संपूज्य इन्द्राणीं कुमारीं भोजयेत्ततः ॥
 स्त्रियो विप्रान् यथा भक्त्या ततो भुञ्जीत वाग्यतः ।
 पञ्चगव्यकृतज्ञातः पञ्चगव्यकृताशनः ॥
 ध्यायमानस्तथा चैन्द्रीं स्वयं भूमौ नराधिप ।
 य एवं पूजयेत् दुर्गां भक्त्या अहासमन्वितः ॥
 उपवासपरो वीर नवम्यां पञ्चयोर्द्वयोः ।
 पूजयेद् ब्राह्मणं भक्त्या अहया चण्डिकां वृष ॥

श्राव्युत्तममघोपेतमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† अथ नक्षत्राणीं मन्त्ररूपिणो पश्यन्ते चण्डां भक्त्या नक्षत्रैर्ध्विधेरपीति पुस्तकान्तरे पाठोक्तिः ।

कौमारीमिति वै भाष्या नामतः पूजयेत्तदा ।
 कृत्वा रौप्यमयीं भक्त्या योगं वै पाशनाग्निनीं ॥
 करवीरैस्तु, पुष्पैस्तु, गन्धैश्चागदचन्दनैः ।
 नरो भाद्रपदे मासि यः कुर्वाणस्तभोजनम् ॥
 भुञ्जानः पायसं वीर कासप्राक्च अथवा ।
 उपवासपरोनित्यं नवम्बां पञ्चदोर्ध्वयोः ॥
 पूजयेद्देव्यैर्भक्त्या यद्दत्तमासिधारिणीम् ।
 आतीपुष्पैर्महाबाहो गन्धैः त्रीशङ्कमिश्रितैः ॥
 त्रीशङ्कागुणधर्पूरैः सिद्धमेव च धूपवेत् ।
 नैवेद्यं पावसं कुंठं यथाशक्त्या निवेदयेत् ॥
 मासि न प्रीचनं तस्या स्ततः पूज्याश्च कन्यकाः ।
 गीसक्त्याश्च विधिवत् ततो भुञ्जीत वाय्वतः ॥
 प्रीणयित्वा द्विजान् यत्नवा बोधितश्च नराधिप ।
 य एवं पूजयेन्नत्वा वैश्वरीं सततं नृप ॥
 विमानवरमारुढो विष्णुसौम्ये महीवते ।
 राजसङ्घदुजे मासि यः कुर्वाणस्तभोजनम् ॥
 गुह्योद्गमं प्रभुञ्जानोजितात्मा संवतेन्द्रिवः ।
 उपवासपरोभूत्वा नवम्बां पञ्चदोर्ध्वयोः ।
 मासेश्वरीं पूजयेच्च कृत्वा रौप्यमयीं हृभां ॥
 हृषभश्च तथा वीर ज्योतपुष्पोपसेपनैः ।
 धूपनश्च महाश्रेण चण्डबाद्यादिभोजनैः ॥
 यजामां महिषाद्याश्च नैवाद्याश्च यथावधात् ।
 प्रीणयेत् विधिवद्देवीं मांसप्रीणितपावसैः ॥

कुमारीं भोजयेत्तया ब्राह्मणान् वीक्षितस्तथा ।
 भक्तभोज्यैरनेकैश्च समासैर्षिर्धिवन्नृप ।
 पञ्चमिषसहस्रस्य फलं प्राप्य द्विषं व्रजेत् ॥
 द्विजेन्द्रप्रभया तुल्यः कामया पुण्याशुधस्य च ।
 पुण्यकं यानमाकृदोमीदृते प्राण्यतीः समाः ॥
 कार्तिके मासि राजेन्द्र यः कुर्यान्नक्तभोजनम् ।
 श्रीरोदनम् भुञ्जानः सत्यवादी जितेन्द्रियः ॥
 यथाचं पयसा कुतं भुञ्जानः संयतेन्द्रियः ।
 पूजयेच्छ्रद्धया देवीं वाराहीं चक्रधारिणीम् ॥
 यतपचभ्रजाभिश्च कुटुमेन विलीपयेत् ।
 कण्ठागदं सिल्हकच धूपं देव्यै निवेदयेत् ॥
 नैवेद्यं चण्डवेद्यास्तु नवम्यां पञ्चबोर्हवीः ।
 एवं संपूज्य वाराहीं कुमारीं भोजयेत्ततः ॥
 ब्राह्मणांश्च तथा यत्नया ततो भुञ्जीत वाण्यतः ।
 प्राशयित्वा तिस्रान्बीर दृष्ट्वा द्रुत्वा च यत्नितः ॥
 एवं संपूजयित्वा तु वाराहीं स्वर्गमाप्नुयात् ।
 क्रीडते विष्णुना सार्धं क्रीडमानैः सुरासुरैः ॥
 पुनरेत्य भुवं राजा स्वर्गभोगभवेन्नृप ।
 राजन् मार्गशिरे नाति वः कुर्यान्नक्तभोजनम् ॥
 भुञ्जानः शम्भुश्रीं नित्यं जिताम्ना च जितेन्द्रियः ।
 पूजयेद्विधिवन्नगा चानुष्ठां मुक्तनामनीं ॥
 नीलोत्पलैस्तथा पद्मैर्जिस्वपचैः सहस्रकैः ।
 चन्दनाशुद्धापूर्वगुग्गुलीन तथा द्रुपः ॥

भस्त्रेभींश्चै रनेकैश्च सुरामासैरनेकशः ।
 रुधिरेश तथा वीर गिरोभिर्विधैर्नृप ॥
 गजाविमहिषाणां च खदेहस्य च भेदनात् ।
 नवम्यां विधिवद्भक्ता पञ्चसोऽभयोरपि ॥
 कुमारीभींश्चैवापि ब्राह्मणान् योजितस्तथा ।
 पञ्चगव्यकृतस्नातः सम्यक् प्राश्य विधानतः ॥
 ततो भुञ्जीत राजेन्द्र भूमिं कृत्वा तु भाजनं ।
 य एवं पूजयेत् भक्त्वा चानुष्ठां सततं नरः ।
 स याति परमं स्वानं यत्र सा परमा कृपा ।
 सौवर्चं यानमावृत्त भजमालाकृतं शुभम् ॥
 मोदते देवतैः सार्धं यावदिन्द्राश्चतुर्दश ।
 पुनरेत्थ महीं वीर राजा भवति भूतले ॥
 प्रभवा भृगुसङ्घामस्तेजसा रविसन्निभः ।
 कान्त्वा चन्द्रसमीवीर बुधे चेन्द्रसमी भवेत् ॥
 रुचा यमसमीवीर बुध्या धिवचस्यकृषोः ।
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं उभयनवमीव्रतम् ।

अथ नामनवमीव्रतम् ।

—000—

सुमन्तुहवाच ।

नवम्यां शक्यपते तु कृते नत्ते विशिषतः ।
 मासि चाश्वयुजे वीर दुर्गादेवीति पूजयेत् ॥
 विश्वपते स्तथाग्निश्च द्वीशपुष्पैस्तु सर्वशः ।

गुग्गुलेनाद्य दग्धेन भस्मभोज्यैरनेकशः ॥
 परमाग्नेन रत्नेन भजमहिषैर्विघातितैः ।
 सम्प्रीणनं तथा कुर्याद्दिव्या वै भक्तिमाचरन् ।
 भोजयित्वा नवम्यां तु ब्राह्मणानां तु कन्यकाः ।
 ब्राह्मणानां स्त्रियश्च यथा भवति शक्तितः ॥
 पञ्चगव्यं ततः प्राश्य नक्तं भुञ्जीत वाग्यतः ।
 य एवं पूजयेद्दत्त दुर्गां भक्त्या समन्वितः ॥
 सोऽश्वमेधसहस्रस्य फलं प्राप्य दिवं व्रजेत् ।
 कार्यमाशिनवत्सर्वं कार्त्तिकेऽपि हि सत्तम ॥
 कृत्वोपवासमष्टम्यां मासि मार्गशिरे नृप ।
 नवम्यां पूजयेद्यस्तु शक्त्या भगवतीं बुधः ॥
 नाम्ना भगवतीत्येवं जातीपुष्पैर्नराधिप ।
 कर्पूरागरुधूपेन मधुना पायसेन च ॥
 भोजयित्वा कुमारीं च स्त्रियोविप्रांश्च शक्तितः ।
 गोमयं प्राश्य विधिवत्ततोभुञ्जीत वाग्यतः ॥
 य एवं पूजयेद्भक्त्या नरोभगवतीं नृप ।
 राजसूयफलं प्राप्य ततः शिवपुरं व्रजेत् ॥
 पुष्येष्ट्येवं महाबाहो नवम्यां संजितेन्द्रियः ।
 पूजयेच्चंद्रमाश्चैव नाम्ना तात नरः शिवां ॥
 करवीरस्य पुष्ये च कुङ्कुमेन तु केसरैः ।
 निवेद्य सिद्धकं धूपं नैवेद्यं मांसपूरिकम् ॥
 पूजयेद्दिप्रकन्याश्च स्त्रियोविप्रांश्च शक्तितः ।
 विधिवत् प्राश्य गोमूत्रं ततो भुञ्जीत वाग्यतः ॥

य एवं पूजयेन्मूर्त्तीं वाजपेयशतं लभेत् ।
 माघे शक्यनवम्याश्च पूजयेच्चण्डिकां बुधः ॥
 सर्वमङ्गलनामास्तां यूजिष्याद्गुह्यमैर्नृप ।
 प्रबोधास्त्रेण धूपेण अथवा गुग्गुलेन च ॥
 नैवेद्यञ्चैव पूपाश्च मङ्गलमाश्च भारत ।
 पूजयित्वा नरोच्चेवं विधिवत्सर्वमङ्गलां ॥
 कुमारीर्भोजयेत्पश्चात् प्रीयतां सर्वमङ्गला ।
 गोधूमानां* शतं सन्ध्यां गीतोक्ते च महीवते ॥
 फाल्गुने मासि राजेन्द्र चण्डिकेति चर्चयेत् ।
 नाका भगवतीं देवीं कुम्भपुष्पे च पूजयेत् ॥
 धूपेनागवत्पा वीर सिद्धकेनापि चर्चयेत् ।
 नैवेद्यं मोदकान् दद्यान्मधुमांसन्यवस्तथा ॥
 गोक्षीरप्राशनान्पूतः पूतोभुञ्जीत दाम्बतः ।
 पूज्योक्तान् भोजयित्वा च यथा शक्या विधानतः ॥
 एवं सज्जन् विधिवच्चण्डिकां सुकनकना ।
 अज्जिष्टोमस्य वज्रस्य फलं शतगुणं भवेत् ॥
 चैत्रे मासि महाबाहो पार्थ्या भगवतीं कृतं ॥
 पूजयेद्विधिवत्शक्या पुष्पैर्लङ्गराजस्य च ।
 धूपेनागवत्पुष्पे च सिद्धकेनापि चर्चयेत् ॥
 धूपेण कुसुमीधेन कासारिण्ये च पूजयेत् ।
 वैशाखे मासि राजेन्द्र नाका भगवतीं यजेत् ॥
 प्राशयेत् पुष्पतोबन्धु ततो भुञ्जीत दाम्बतः ।

कुमारीर्भोजयेत्तथा पालाशकुसुमैरिमम् ।
 धूपं क्वागुरुचैव नैवेद्यं घृतपूपकान् ॥
 ज्येष्ठे मासि नृपत्रे ह पूजयेदम्बिकासुमां ।
 कुग्रपुण्योदकं प्राश्य ततो भुञ्जीत् वाग्यतः ॥
 कुमारीर्घोषितो विप्रान् पूजयेद्विधिवनृप ।
 यूपिकाकुसुमैर्भक्त्या धूपेनाश्वत्थिनम् ॥
 शाल्वोदरजलाजात्रं त्रिंशै नैवेद्यमादिशेत् ।
 एवं पूज्य त्रिंशं देवीं विष्णुलोके महीयते ।
 भाषाके क्लृप्तवचस्य नवम्यां पूजयेदुमां ॥
 कर्णमौढीति नाम्ना तु सन्ध्याकर्षीं प्रकीर्त्तिता ।
 शमीपत्रकदम्बैस्त पूजयेद्विधिवनृप ॥
 कर्पूरागवमिश्रेण धूपेन च कपालिनां ।
 पूजयित्वा भगवतीं कुमारीं भोजयेत्ततः ॥
 स्त्रियश्चापि यथा शक्त्वा ब्राह्मणांश्च नराधिप ।
 शमीपत्रं ततः प्राश्य ततो भुञ्जीत् वाग्यतः ॥
 एवं पूज्य महाकालीं राजस्यफलं लभेत् ।
 श्रावणे मासि राजेन्द्र नवम्यां चण्डमहिनीम् ॥
 नारायणीति वै नाम्ना पूजयेत् सततम्बुधः ।
 रत्नैस्त्रिलैः सबकुलैः सकदम्बैस्तथा नृप ॥
 सघृतं गुग्गुलं धूपं नैवेद्यं घृतपायसम् ।
 एवं सम्युज्य विधिवत् कुमारीर्भोजयेत्ततः ॥
 घोषितश्च तथा विप्रान् शक्त्वा च विधिवनृप ।

शाल्वोदरजात्रेण पञ्चमाश्वत्थः ।

भोजयित्वा हृतं प्राञ्ज नवम्यां विधिवन्नृप ॥
 एवं सम्पूजयेद्देवीं स गच्छेत् परमम्पदम् ।
 मासि भाद्रपदे शक्ते नवम्यां चन्द्रिका सदा ॥
 महानन्देति वै नाम्ना पूजयेद्विधिवन्नृप ।
 श्वेतरत्नैस्तथा पीतैः सर्वपुष्पैश्च भारत ॥
 कर्पूरागन्धधूपेन गुग्गुलेन विशेषतः ।
 भस्मभीष्मैरनेकैश्च मोदकैर्लोपिकादिभिः ॥
 एवं सम्पूज्य विधिग्राह्यादेवीं नराधिप ।

क्षीपिका गोधूमचूर्णपिष्टिका ॥

कुमारीभोजयेद्भक्त्या योषितो ब्राह्मणांस्तथा ।
 भोजयित्वा ततोवित्त्वं प्राशयेत् कायशोधनम् ॥
 भूमिं तु भाजनं कृत्वा ततो भुञ्जीत वाग्यमः ।
 एवं त्रिः पूजयित्वा वै ब्रह्मलोके महीयते ॥
 वर्षान्ते भोजयेद्विप्रान् दुर्गाभक्तिपरायणान् ।
 पायसं मधुसंयुक्तं हृतेनच पवित्रकम् ॥
 कुमारीः पूजयित्वा तु दद्याच्चान् वडङ्गिनीम् ।
 कपिलां कुङ्कुमाकूलं शीलयुक्तां पयस्विनीम् ॥

वडङ्गिनीङ्गा ।

करोति वै वर्षभक्तैरन्तर्येण योनरः ।
 नामाख्यनवमीं भक्त्या तस्य पुण्यफलं ऋषु ॥
 सब्धं पाप विनिर्मुक्तः सर्वैर्भक्त्यसमन्वितः ।
 ववेर्द्गापुरन्निवन् नवेहायाति वा पुनः ।
 य एवं श्रुवते पुण्यां नवमीं नामसङ्गिकां ॥

स हि कामानवाप्याथ ब्रह्मलोके महीयते ।
 अपुत्रोऽलभते पुत्रान् निर्धनश्च धनं लभेत् ॥
 कन्यार्थी लभते कन्यां ययोऽर्थी लभते ययः ।
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं नामनवमीव्रतम् ।
 अथ रूपनवमीव्रतम् ।

— ००० —

सुमन्तुववाच ।

शूलं पिष्टमयं कृत्वा मार्गं मासि नराधिप ।
 कृत्वा सुराजतं पद्मं सौवर्णं कृतकर्षिकम् ॥
 निवेद्य ऋषया वीर भगवत्यै प्रपूजितम् ।
 कामतोऽपि कृतं पापं भ्रूणहत्यादि यद्भवेत् ॥
 तत् सर्व्वं शूलदानेन देवो नाशयति ध्रुवम् ।
 विमानवरमारूढो देवगन्धर्व्वपूजितः ॥
 कल्पकोटिशतं सायं दुर्गालोके महीयते ।
 चण्डिकाप्रीतिमाप्नोति यदिच्छेदिपुलां त्रियम् ॥
 पौषे मासि महाबाहो चतुर्दशं गजं शुभम् ।
 कृत्वा रुक्ममयं भक्त्या न्यस्य पात्रे द्विरक्षये ॥
 इन्द्राण्यै विधिवद्दद्यान्नामानमणिविभूषितं ।
 एवं पूजयते भक्त्या इन्द्राणो विधिवत्ततः ॥
 स ऐरावतमारूढः सोमलोके महीयते ।
 वर्षकोटिशतं सायं देवगन्धर्व्वपूजितं ॥
 माघे कृत्वा तु वै मेघं सर्व्वसौवर्णसुत्तमं ।

* चतुर्दशयन्त्रेण परति पुष्पकान्तरे पाठः ।

कृत्वा रुक्ममये पात्रे स्वाहायै विनिवेदयेत् ॥
 भक्तगन्धैः* समायुक्तं नानापुष्पोपशोभितं ।
 विनिवेद्य नरोभक्त्या अग्निलोके महीयते ॥
 दिव्यं विमानमारुढो ध्वजमालाकुलं शुभम् ।
 पुनरेत्य महीं राजा मण्डलाधिपतिर्भवेत् ॥
 मयूरं फाल्गुने मासि कृत्वा पिष्टमयं नृप ।
 गन्धमास्थैरलङ्कृत्य कुमार्यै विनिवेदयेत् ॥
 निवेद्य विधिवद्गन्ध्या विमानवरमास्थितः ।
 क्रीडते देवगन्धर्वैर्गुह्येन च महात्मना ॥
 चैत्रे मासि महावाहो गरुडं पिष्टञ्च ऋतम् ।
 संपूजयित्वा विधिवद्दैव्यै विनिवेदयेत् ॥
 स्रजाभिर्विषुधै वीर गन्धमास्थैश्च शोभितं ।
 तं निवेद्य महानाहो विष्णुलोके महीयते ।
 चित्रं यानं समाह्वय्य नानान्नीदकदम्बकैः ॥
 वर्षकोटिशतं सायं ज्वलन्निव सुतेजसा ।
 कृत्वामचिमयं वीर वाराहं लोकपूजितं ॥
 गन्धमास्थोपहारैस्तु पूजयित्वा विधानतः ।
 चित्रैस्तु कुसुमैरेव गुग्गुलेन सुगन्धिना ।
 चामुष्णवेति नैवेद्यैर्हविष्यान्वैर्भेत् फलम् ।
 प्रयाति च परं लोकं यत्र सा चण्डिका स्थिता ॥
 पलायते च चीरादि सर्व्वशत्रुर्भयङ्करः ।
 कृत्वा विष्टजयं ज्वहे कच्छपं रत्नभूषितम् ॥

* नानागन्धैः चनाचुम्बमिति पुलकाकरे पाठः ।

भूषयित्वा रत्नोभिश्च पुण्याणां चन्दनेन च ।
 निवेश्य भक्त्या वाक्स्थै बद्रत्नलोके महीयते ॥
 शङ्खकुन्देन्दुसङ्काशं विमानवरमातरेत् ।
 वर्षकोटिशतं चाद्यं क्रीडयित्वा नराधिप ॥
 पुनरेत्य महाराजो मच्छलाधिपतिर्भवेत् ।
 कृत्वा नृगं पिष्टमयं चापःके रत्नभूषितम् ।
 स्वर्णशृङ्गं रौप्यसुरं वायव्ये विनिवेद्येत् ॥
 पूजयित्वा सुविधिवत् पुष्पधूपविलेपनैः ।
 नैवेद्येन महाबाहो वायुलोके महीयते ॥
 नरयानं* पिष्टमयं कृत्वा राजन् सुगोभितं ।
 अनेकावरकोपेतं त्रावणे मासि भूपते ॥
 पुष्पमात्स्यकुलं दिव्यं धनमात्स्यकुलं तथा ।
 गन्धपुष्पोपहारैश्च पूजयित्वा विधानतः ॥
 कौबेर्यै विनिवेद्यो ह्यश्वमेधफलं लभेत् ।
 प्रयाति परमं स्थानं दुर्गालोके महीयते ॥
 कृत्वा भाद्रपदे मासि सर्व्वहेममयं विभो ।
 महिषं दिव्यसंस्थानं गन्धमात्स्योपगोभितम् ॥
 यास्यै निवेद्येत्तत्रा भगवत्यै विधानतः ।
 एकं निवेद्येत्तत्रा सूर्य्यलोके महीयते ।
 तथा चाश्वयुजे मासि भगवत्यै विधानतः ॥
 सुस्निग्धैश्चैव गोधूमैर्भक्ष्यभीष्यैरनेकशः ।
 नामावस्त्रसमायुक्तं कृत्वा पुष्पमयं द्विज ॥

* नरवाचनिति पुस्तकान्तरे राठः ।

विचित्रयानमारुह्यो रुद्रलोके महीयते ।
 वर्षकोटिशतं सायं क्रीडयित्वा गणैः सह ॥
 क्रमादागत्य लोकेऽस्मिन् प्राप्नो भवति भूतले ।
 सप्तधातुसमायुक्तं सर्वबीजरसादिभिः ॥
 बाहुले बहुलं वीर वितानच्छत्रशीभितम् ।

बाहुले कार्तिके

गन्धमास्यैश्च बहुभिः पूजिते च तथा शुचिः ।
 कृत्वा हस्तमयं शक्त्या विधिवच्चन्द्रमण्डलं ।
 सुवर्णं मणिसुक्ताढं रोहिण्यां विनिवेदयेत् ॥
 य एवं कुरुते भक्त्या तस्य पुण्यफलं शृणु ।
 वेदान्तेषु च यत् पुण्यं कथितं मुनिभिः पुरा ॥
 तत् पुण्यं कोटिशुणितं प्राप्नुयान्नात्र संशयः ।
 स याति परमं स्थानं चण्डिका वरदा यतः# ॥
 देवदानवगन्धर्वैस्तूयमानो गणादिभिः ।
 कल्पकोटिशतं सायं क्रीडते सह देवतैः ॥
 चन्द्रलोकादिलोकेषु भोगान् भुङ्क्ता यष्टेष्ठितान् ।
 पुण्यश्चवादिनागत्य राजा भवति भूतले ॥
 स्वरूपः सुभगोमित्यं चन्द्रिकावरदानतः ।
 कल्पकोटिं समुद्दिश्य नरनारीनपुंसकः ।
 भगवत्यै यष्टं दत्त्वा सर्वान् कामानवाप्नुयात् ॥
 एवं कुरुते नक्तनिकभक्तनवापि वा ।

॥ चण्डिकास्त्रितेति पुस्तकान्तरे वाक्यः ।

नवम्यामुपवासन्तु कुर्वाणो विधिवन्मृप ॥
 रूपाणि यच्छमानस्तु पूर्वोक्तानि नराधिप ।
 अश्वमेधसहस्रस्य राजसूयशतस्य च ॥
 सन्ध्या फलं महाबाहो ब्रह्मलोके महीयते ।
 कल्पकोटिसहस्राणि पूज्यमानः सुरासुरैः ॥
 पुण्यक्षयादिहागत्य पुनरेव महीपतिः ।
 राजा भवति दुर्धर्षः सप्तद्वीपाधिपो नृप ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं रूपनवमीव्रतम् ।

अथ वरव्रतम् ।

— ००० —

सुमन्तुसवाच ।

नवम्यां नववर्षाणि राजन् पिष्टाग्रानो भवेत् ।
 तस्य तुष्टा भवेद्देवी सर्व्वं कामफलप्रदा ॥
 अग्निपक्कमभुञ्जानोयावज्जीवं व्रती भवेत् ।
 इह चामुच वरदा तस्मानन्तफलं ददेत् ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं वरव्रतम् ।

अथ दुर्गानवमीव्रतम् ।

— ००० —

सुमन्तुसवाच ।

नवम्यां तु क्षिते षष्ठे निवसतः संमितेन्द्रिवः ।
 मासि चाष्टयुजे वीर कार्तिके कार्तिकीक्षरे ॥

(११८)

कार्तिकोत्तरे मार्गशीर्षे ।

पुष्पे च पूजयेद्गर्गां जातिपुष्पैर्विधानतः ।
 धूपार्थं गुग्गुलं दद्यान्नैवेद्यं गुडपूपकान् ॥
 दुर्गेति नाम जप्तव्यं प्रथतोऽष्टयतं नृप ।
 माघे च फाल्गुने मासि चैत्रे चैत्रोत्तरे नृप ॥
 शुकपक्षे तु अष्टम्यामुपवासपरायणः ॥

चैत्रोत्तरे, वैशाखे ।

मालतीकरवीरेण विस्वपत्रैश्च पूजयेत् ।
 घूपेनागरुकर्पूरसिद्धकैर्घृपणेन च ॥

सिद्धकस्तुकस्तः ।

वृषणं कस्तूरिका ।

नैवेद्यं पायसम्भांसम्ब्रह्मण्यै निवेदयेत् ।
 सर्वमङ्गलद्वयैव जप्तव्यन्नाम भारत ।
 ज्येष्ठे मासे तथाषाढे आवणे आवणोत्तरे ॥

आवणोत्तरे भाद्रे ।

चण्डिकां पूजयेत् भाद्रे चण्डमुखप्रणाशिनीम् ।
 विस्वपत्रैर्मुहुरकैः गातपत्रिकया तथा ॥
 प्रबोधेनैव धूपेन नैवेद्यं मोदकान्यसेत् ।
 स्वमेकमेकं यस्त्वेवं पूजयेदम्बिकां नरः ॥
 नवम्यां शुकपक्षे तु सोपवासो जितेन्द्रियः ।
 अश्वमेधसहस्रस्य राजसूयशतस्य च ॥

फलमाप्नोति राजेन्द्र सूर्यलोकश्च गच्छति ।
 विमानं दिव्यमारूढः सौवर्णकिङ्किणीचितं ॥
 क्रीडित्वेवं महाराजसामौ भवति भूतले ।
 प्रथमे पारणे दुर्गा द्वितीये सर्व्वमङ्गला ।
 तृतीये चण्डिका प्रीक्ता राजन् भगवती बुध ॥
 प्रथमं पञ्चगव्यञ्च स्नानप्राशनयोर्भ्रतं ।
 द्वितीयं बिल्वपत्रैश्च तृतीयं मधुमर्षिषा ॥
 मासि मासि महाबाहो कुमारीर्ब्राह्मणान् नृप ।
 स्वशक्त्या भोजयेद्वाजन् भक्ष्यभोज्यैरनेकशः ॥
 पारणान्ते महाभोज्यं कर्त्तव्यं विधिवन्नृप ।
 गन्धपुष्पोपहारैश्च चण्डिकां पूजयेत्ततः ॥
 नानाप्रेक्षणकैर्बिरि ब्राह्मणानाञ्च तर्पणैः ।
 एवमेकं स्वमेकन्तु सुव्रतेनार्चयेन्नरः ॥
 महानवमोसंप्रे न दुर्गाभक्तान् नराधिप ।
 स याति परमं स्थानं विमानवरमास्थितः ॥
 यत्र साक्षाद्भगवतो पूज्या मान्य तिलैरसैः ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं दुर्गानवमीव्रतम् ।

अथ गोपालनवमीव्रतम् ।

— ००० —

अतः परं त्वञ्च कृष्ण नवमौ व्रतमुत्तमम् ।
 माङ्गल्यं परमं भाणं सर्व्वपापप्रणाशनम् ॥
 तथा समुद्गामिन्नां नवम्यां स्नानमाचरेत् ॥

शुचौ तत्पुलिने तीरे सिक्ताभिः समलङ्कृते ।
 वसुदेवसुतं विष्णुं गोपीगणनिषेवितम् ॥
 वनमालाचितोरस्तं वन्यपुष्पैरलङ्कृतम् ।
 बहिर्भयकृतापीडं पीतकौशेयवाससम् ॥
 समानवेधैरतुल्यैक्रीडिन्निरितरेतरं ।
 हृतं गोपकुमारैश्च नीलाकुञ्चितमूर्धजम् ॥
 ध्यात्वा देवं परं विष्णुं सर्वलोकेष्वरे श्वरम् ।
 वन्यपुष्पैश्च वहुभिः पायसेन समर्चयेत् ॥
 फलमूलैश्च गन्धार्धैः शुचिभिश्च यथाविधि ।
 सुभगं पतिमिच्छन्ती कन्यका मृणुयात् व्रतम् ॥
 गोपीजनमनःकान्त गोविन्दगरुडध्वजः ।
 वरं प्रयच्छ सुभगं सुवेषं दयितं मम ॥
 ततस्तु सर्पिषा पूर्णं हरिद्राचूर्णंपूरितम् ।
 कुलाङ्गनाभ्यस्तु दद्यात् पात्रं वीजप्रपूरितम् ॥
 गुरवे च वरं दद्यात्तथा ब्राह्मणतर्पणम् ।
 एवमग्न्यञ्जनं नाम नवमीव्रतमुत्तमं ॥
 एवं स्वस्वयनं स्त्रीणां उक्तं सर्वं मुखप्रदं ।
 भ्राता पिता च कन्यार्थी व्रतमेतत्कमाचरेत् ॥
 अङ्गनानां व्रतञ्चैव अर्चनीयः त्रियः पतिः ।
 पतिर्विश्वस्य भगवान् सर्वान् कामान् प्रवर्षति ॥
 वं यं कामयते कश्चित् सिद्धिर्भवति तस्य तं ।
 अलं ददाति भगवान् अर्पितः किमुबोधितः ॥
 परिपूर्णा हि भगवान् अन्धै यत्किञ्चिदीहितं ।

साक्षाद्देव ददात्येते तेभ्यः प्रीतो ददेत्फलं* ॥
इति गारुडपुराणोक्तं गौपालनवमीव्रतम् ।
अथ रामनवमीव्रतम् ।

— ००० —

अगस्त्य उवाच ।

सर्वानुष्ठानसारथे सर्वदानोत्तमोत्तमं ।
रहस्यं कथयिष्यामि सुतीक्ष्णं शृणु सत्तम ॥
चैत्रे नवम्यां प्राकृपक्षे दिवा पुष्ये पुनर्वसो ।
उदये गुरुगौराश्वोः स्त्रीश्चस्ये ग्रहपञ्चके ॥
मेघे पूषणि सम्प्राप्ते लग्ने कर्काटकाङ्गये ।
आविरासीत्सकला गौश्रयायां परः पुमान् ॥
तस्मिन् दिने तु कर्त्तव्यमुवाचव्रतं सदा ।
तत्र जागरणं कुर्याद्गुणानुपरोभुवि ॥
प्रातर्हृशम्यां कृत्वा तु सन्ध्याद्याः कालिकीः क्रियाः ।
संपूज्य विधिवद्भ्रामं भक्त्या विज्ञानुमारतः ॥
ब्राह्मणान् भोजयेद्भक्त्या दक्षिणाभिश्च तोषयेत् ।
गोभूतिलहिरस्ताद्यैर्वस्त्रालङ्कारैस्तथा ॥
रामभक्तान् प्रथमेन प्रीणयेत्परया सुदा ।
एवं यः कुरुते भक्त्या श्रीरामनवमीव्रतम् ॥
अनेकजन्मसिद्धानि पातकानि बह्वन्यपि ।
भस्मी कृत्व ब्रह्मण्येव तद्दिण्योः परमं पदं ॥

* साक्षादेव ददात्येते तेभ्यः प्रीतो ददेत्फलं ।

सर्वेषामप्ययत्नार्थीभुक्तिं मुक्त्यैकसाधनम् ।
 अशुचिर्वापि पापिष्ठः कृत्वेदं व्रतसुप्तमम् ॥
 पूज्यः स्यात् सर्वभूतानां यथा रामस्तथैव सः ।
 यस्तु रामनवम्यान्तु भुङ्क्ते स च नराधमः ॥
 कुम्भीपाकेषु घोरेषु पच्यते नात्र संशयः ।
 अकृत्वा रामनवमीव्रतं सर्वव्रतीक्षमं ।
 व्रतान्यन्यानि कुरुते न तेषां फलभाग्भवेत् ॥
 रहस्यकृतपापानि प्रख्यातानि बह्वन्यपि ।
 महान्ति च प्रणश्यन्ति श्रीरामनवमीव्रतम् ॥
 एकामपि नरो भक्त्या श्रीरामनवमीं मुने ।
 उपोष्य कृतकृत्यः स्यात् सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥
 नरोरामनवम्यां तु श्रीरामप्रतिमाप्रदः ।
 विधानेन मुनिश्चेष्ट स मुक्तो नात्र संशयः ॥

सुमन्तुरुवाच ।

श्रीरामप्रतिमादानविधानं वा कथं मुने ।
 कथय त्वच्चरामेपि भक्तस्य मम विस्तरात् ॥

अगस्त्य उवाच ।

कथयिष्यामि तद्दि श्रीप्रतिमादानसुप्तमं ।
 त्रिधानञ्चापि यत्नेन यतस्त्वं वैष्णवीक्षमः ॥
 अष्टम्यां चैव मासेषु शुक्लपक्षे जितेन्द्रियः ।
 दन्तधावनपूर्व्वन्तु प्रातस्त्राशयथाविधि ॥
 नद्यां तङ्गागे कूपे वा हृदे प्रस्रवणेऽपि वा ।

ततः सख्यादिकाः कार्याः संस्मरन् राघवं हृदि ॥
गृहमासाद्य विप्रेन्द्र कुर्व्यादौपासनादिकम् ।
दानं कुटुम्बिनं विप्रं वेदशास्त्रपरं सदा ॥
श्रीरामपूजानिरतं सुशीलं दम्भवर्जितम् ।
विधिज्ञं राममन्त्राणां राममन्त्रैकसाधनम् ॥
आङ्गय भक्त्या संपूज्य हृणुयात् प्रार्थयन्निति ।
श्रीरामप्रतिमादानं करिष्येऽहं द्विजोत्तम ॥
मत्तया चार्थ्यं भव प्रीतः श्रीरामोऽसि त्वमेव च ।
इत्युक्त्वा पूज्य विप्रं तं स्नापयित्वा ततः परं ॥
तैलेनाभ्यञ्ज्य वस्त्राद्यान् चिन्तयन् राघवं हृदि ।
श्वेताम्बरधरः श्वेतगन्धमाख्यानि वारयेत् ॥
आर्चिती भूषितश्चैवं कृतमाध्याह्निकक्रियः ।
आचार्यं भोजयेत्तथा सात्विकान्नैः सुविस्तरं ॥
भुञ्जीत स्वयमप्येवं हृदि राममनुस्मरन् ।
एकभक्तव्रती तत्र सहाचार्यो जितेन्द्रियः ॥
शृणुन् रामकथां दिव्यामहःशेषं नयेत् पुते ।
सायंसख्यादिकाः कुर्व्यां क्रिया राममनुस्मरन् ॥
आचार्यसहितोरात्राबधःशायी जितेन्द्रियः ।
वसेत् स्वयं नचैकान्ते श्रीरामार्पितमानसः ॥
ततः प्रातः समुत्थाय स्नात्वा सख्यां यथाविधि ।
प्रातः सर्वाणि कर्माणि शीघ्रमेव समापयेत् ॥
ततः स्वस्वमना भूत्वा विद्वन्निः सहितोऽनघः ।
स्वगृहेचोत्तरे देशे दानस्वीज्वलमण्डपं ॥

चतुर्द्वारं पताकाढ्यसंवितानं सतीरणम् ।
 मनीमयं महोत्सवेषु पुष्पाद्यैः समलङ्कृतम् ॥
 शङ्खचक्रहनुमद्भिः प्राग्द्वारे समलङ्कृतम् ।
 गरुडान् शार्ङ्गवाणैश्च दक्षिणं समलङ्कृतं ॥
 गदाखड्गाङ्गदैवैश्च पश्चिमेषु विभूषितं ।
 पद्मस्रस्त्रिकनीलैश्च कौबेरे समलङ्कृतं ॥
 मध्ये हस्ताचतुष्काण्डं वेदिकायुक्तमायतं ।
 पवित्रमृत्युगीतैश्च वाद्यैश्चापि सुसंयुतम् ॥
 पुण्याहं वाचयेत्तत्र विद्वद्भिः प्रीतमानसः ।
 ततः संकल्पयेद्देवं राममेव स्मरन्मुने ॥
 अस्यां रामनवम्याञ्च रामाराधनतत्परः ।
 उपोष्याष्टसु ग्रामेषु पूजयित्वा यथाविधि ।
 इमां स्मर्णमयीं रामप्रतिमाञ्च प्रयत्नतः ॥
 श्रीरामप्रीतये दास्ये रामभक्त्या विधीयते ।
 प्रीतीरामहरत्वाश्च पापानि सुबद्धानि मे ॥
 अनेकजन्मसंसिद्धान्यभ्यस्तानि महान्ति च ।
 ततः स्मर्णमयीं रामप्रतिमां पलमाचतः ।
 निर्भिन्तां द्विभुजां दिव्यां वामाङ्घ्रितजानकीं ॥
 बिभ्रतीं दक्षिणकरे ज्ञानमुद्रां महासुने ।
 वामे नाभःकरेणात्र देवीमालिङ्गा संस्थितां ॥
 सिंहासने राजवेदं पलहयविनिर्भितं ॥
 पश्चान्मृतस्नानपूर्व्वं संपूज्य विधिवत्ततम् ।
 मूलमन्त्रेण नियतोन्वासपूर्व्वं मतन्द्रितः ॥

दिव्यं विधिवत् कृत्वा रात्रौ जागरणं ततः ।
 दिव्यां रात्रकक्षां कृत्वा रामभक्तैः समन्वितः ॥
 नृत्यगीतादिभिश्चैव रामस्तोत्रै रनेकधा ।
 रामाष्टकं तत्राध्याप्य गन्धपुष्पाक्षतादिभिः ॥
 कर्पूरगङ्गकस्तूरीकङ्काराशैरनेकशः ।
 पूजयन् विधिवद्भक्त्या दिवारान्नं नयेद्बुधः ॥
 ततः प्रातः समुत्थाय ज्ञानसम्बन्धादिकाः क्रियाः ।
 समाप्य विधिवद्भ्रामं पूजयेत् विधिवन्मुने ॥
 ततो होमं प्रकुर्वीत मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ।
 पूर्वीक्तपद्मकुण्डे वा स्थण्डिले वा समाहितः ॥
 लौकिकाम्नी विधानेन शतमष्टोत्तरं ततः ।
 सान्धेन पायसेनैव स्मरन् राममनन्यधीः ॥
 ततोभक्त्या सुसम्प्राप्य आचार्यं पूजयेन्मुने ।
 कुण्डलाभ्यां सरस्वाभ्यामङ्गुलीयैरनेकधा ॥
 गन्धपुष्पाक्षतैर्वस्त्रैर्विधिभिः सुमनोहरैः ।
 ततो रामं स्मरन् दद्यादेवं मन्त्रमुदीरयेत् ॥
 इमां स्पर्शमयीं राम प्रतिमां समलङ्कृतां ।
 चित्रवस्त्रयुगल्लक्षां रामाहं राघवाय ते ॥
 श्रीरामप्रीतये दाय्ये तुष्टो भवतु राघवः ।
 इति दत्त्वा विधानेन दद्याद्दक्षिणां ध्रुवं ॥
 अन्धेभ्यश्च यवान्यायङ्गोद्दिरण्णादि शक्तिः ।
 दद्याद्दासीयुगन्धान्यं यथाविभवमाहृतः ॥

ब्राह्मणैः सह भुञ्जीत तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणां ।
 ब्राह्मणहत्यादिपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ।
 तुलापुरुषदानादिफलं प्राप्नोति सुव्रत ।
 अनेकजन्मसंसिद्धपापेभ्यो मुच्यते ध्रुवम् ॥
 बहुना किमिहोक्तेन मुक्तिस्तस्य करे स्थिता ।
 कुरुक्षेत्रे महापुण्ये सूर्यपर्वण्यशेषतः ॥
 तुलापुरुषदानाद्यैः कर्तैर्यज्ञभ्यते फलम् ।
 तत्फलं लभते मर्षी दानेनानेन सुव्रत ॥
 इति अगस्त्यसंहितायां रामनवमीव्रतम् ।

अथ रथनवमीव्रतम् ।

—:○:—

सुमन्तुरुवाच ।

कृत्वैवाश्वयुजे मासि कृष्णपक्षे नराधिप ।
 नवम्यामुपवासन्तु दुर्गादेवीं प्रपूजयेत् ॥
 पुष्पधूपोपहारैस्तु ब्राह्मणानां च तर्प्यैः ।
 पूजयित्वा रथं कृत्वा नानावस्त्रोपशोभितम् ॥
 शोभितं ध्वजमाद्याभिः कृत्रचामरदर्पणैः* ।
 नानापुष्पस्रजाभिश्च सिंहैर्युक्तं मनोरमं ॥
 कृत्वा स्वर्णमयीं दुर्गां महिषासनशोभिताम् ।
 दुर्गारूपन्तु विश्वधर्मोत्तरात् ।

* कृत्रचामरदर्पणैरिति पृथक्कारे पाठः ।

भालीङ्गस्थानसंख्यानां तथा राजन् चतुर्भुजाम् ।
 स्तुचः पात्रकरां देवीं शूलच्छाधरां तथा ॥
 चतुर्थं च करस्तस्यास्तथा कार्यं स्तु सामिष इति ।
 विन्यस्य रथमध्ये तु पूजयेत् कृतलक्षणम् ॥
 तं रथं राजमार्गेषु शङ्खभेर्यादिनिस्स्रजेः ।
 नवम्यां भ्रामयित्वा तु नयेत् दुर्गात्पदं नृप ॥
 तत्र जागरपूर्वन्तु प्रदीपाद्युपशोभितम् ।
 नानापक्षेपकैर्वीरं नृत्यमानैश्च बालकैः ॥
 जागरं कारयेत्तत्र पूजयानश्च चण्डिकाम् ।
 प्रभाते जपनं कृत्वा तद्गङ्गानाश्च भोजनम् ।
 रथं शोभासमायुक्तं भगवत्यै निवेदयेत् ॥
 भुक्त्वा च बान्धवैः सार्धं प्रणम्यार्यां गृहं व्रजेत् ।
 सर्व्वव्रतानां प्रवरं सर्व्वपापप्रणाशनम् ॥
 नवम्यां रथव्रताख्यं सर्व्वकामार्थसाधनम् ।
 सर्व्वयज्ञेषु यत्पुण्यं सर्व्वतीर्थेषु यत् फलम् ।
 तत् फलं लभते विद्वान् नवमीव्रतपालनात् ॥
 कल्पकोटिशतं सार्धं विष्णुलोके महीयते ।
 पुनरेत्य महीं राजा सार्व्वभौमो भवेदिति ॥
 रक्तीपकरणैर्युक्तां देवदारुमयीं शुभाम् ।
 शय्यां निवेदयेद्यस्तु भगवत्यै नराधिप ॥
 संपूज्य गन्धपुष्पाद्यैर्विधिवच्चण्डिकां नृप ।
 दुकूलवस्त्रसूतानां परिसंख्या च यावती ॥

● वजनसंख्यामिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

तावद्दर्भसहस्राणि दुर्गालोके महीयते ।
 इषं गृह्णाङ्कितं यच्च भगवत्यै निवेद्येत् ॥
 आसप्तमं स तु कुलं महादेवालयं व्रजेत् ।
 यद्योभयमुखीं गङ्गां भगवत्यै सुप्रोभितां ॥
 सप्तह्रीपात्भरां दत्त्वा यत् फलं तद्वाप्नुयात् ।
 पद्दह्यं शिरोर्ध्वं यावद्दत्तस्य निर्गतम् ॥
 तावद्भौः द्यधिवी ज्ञेया तद्दाता स्यात् महीप्रदः ॥

इति भविष्यत्पुराणे रथनवमी व्रतम् ।

अथ आनन्दनवमीव्रतम् ।

—०००—

सुमन्तुर्वाच ।

अनन्दा नन्दिनी नन्दा महानन्दा महीपते ।
 तद्याद्या नवमी पुण्या पञ्चमी महती-कृता ॥
 फाल्गुनामसप्तमस्य नवमी या महीपते ।
 अनन्दा सा महापुण्या सर्वपापहरा शुभा ॥
 कृत्वैकभक्तं पञ्चम्यां षष्ठ्याकृतं तद्यानृतम् ।
 अयाचितन्तु सप्तम्यामुपवासः परेऽहनि ॥
 य एवं पूजयेद्भक्त्या नवम्यां विधिवन्तुप ।
 सोपवासोऽर्चयेद्देवो धूपं दद्यात्तत्रागुरुम् ।
 सुहराणां कृजाभिस्तु पुष्पैरन्यैश्च पूजयेत् ॥
 नैवेद्यं पायसन्दद्यात् रसाक्षामोदनं तथा ।

पञ्चगव्यं प्रशस्तं हि ज्ञान प्राशनयोर्नृप ॥
जप्तव्यं नाम देव्यास्तु आरूपाख्यभयापहं ।
इत्येतत् प्रथमं प्रोक्तं पारणं पापनाशनम् ॥
मासैश्चतुर्भिरादीयं द्वितीयं पारणं ऋणु ।
आदीयं आहं ।

भोजयेद्विप्रकन्याश्च नवम्यां ब्राह्मणस्त्रियः ।
मासि मासि महावाहो यथाशक्त्या यथा विधि ॥
आषाढे श्रावणे मासि मासि भाद्रपदे तथा ।
तथावाश्वयुजे मासि पूज्या भगवती विभी ॥
कत्वैकभक्तं पञ्चम्यां षष्ठां नक्तं तथा नृप ।
श्रायावितं तु सप्तम्यामुपवासः परेऽहनि ॥
सोपवासी नवम्यां तु पूजयेद्विधिवच्छिवाम ।
सोऽश्वमेधफलं प्राप्य विष्णुलोके महीयते
जातिपुण्यस्त्रजाभिस्तु तथा रक्तैश्च चन्दनैः ।
कस्तूरिकाक्षतैर्गन्धै देवीमालेपयेत्तथा ॥
माहिष्याख्यं गुग्गुलुश्च धूपं परमपूजितम् ।
नैवेद्यं गुडपूपाश्च खण्डचेष्टाश्च शक्तितः ॥
विश्वपत्नीदकस्नानं प्राशने च प्रकीर्तितम् ।
दुर्गाख्यं नाम जप्तव्यं सर्वपापभयापहम् ॥
इत्येवं पूजयित्वाऽप्यपूजयित्वा गुहं तथा ।
कुमारीर्भोजयेद्दत्ता ब्राह्मणान् योषितस्तथा ॥
एवं यः पूजयेद्दत्ता यथाविभवमात्मनः ।
स सिंहासनमारूढो ब्रह्मलोकं प्रयाति वै ॥

तृतीयं पारणं तस्मिन् सर्वपापविनाशनम् ॥
 ध्यायेच्छिवं सदा शान्तं सच्चिदानन्दविग्रहम् ।
 कार्तिकादि महापुण्यं दुर्गायाः प्रीतिवर्धनम् ॥
 नानाविधानां पुण्याणां* जलजानां विशेषतः ।
 स्रजाभिरर्चयेद्देवीं त्र्यम्बकां जगतोऽम्बिकां ॥
 कुङ्कुमागरुकपूर्वरैः सुगन्धैश्च प्रलेपयेत् ।
 मांसगर्भैस्तथाभक्ष्यैः श्रीवैष्टैश्चापि पूजयेत् ॥
 धूपोबिल्वागुरुःशस्तःसष्टतो गुग्गुलस्तथा ।
 तिलञ्जानं तिलैर्हीमस्तिलानां प्राशनं वरम् ॥
 जपेन्नाम तथा देव्याः सर्वपापक्षयङ्करम् ।
 अपराजिताख्यमतुलं जपेदन्ते व्रतं नृणाम् ॥
 एवं यः कञ्चुपादेन नवमीं तामुपासते ।
 मासि मासि महावाहो यावदेव हि वत्सरम् ॥
 स हि पुत्रानराध्याग्रान् धनं धान्यं बलं यशः ।
 विपुलां च तथा कीर्त्तिमारोग्यमतुलां त्रियम् ॥
 ततस्त्रिन्द्रपुरं याति सिंहासनसमन्वितः ।
 तेजसास्वजसङ्काशः प्रभयास्बुजसन्निभः ॥
 य इदं शृणुयान्नित्यमनन्दाकल्पमादितः ।
 स हि कामानवाप्याश्रान् ब्रह्मलोको महीयते ॥
 इत्यनन्दानवमीव्रतम् ।

— 000 —

* पुष्पाकारिणि पुष्पकारे पाठः ।

† तत्र, पाठते इति पुष्पकारे ।

अथ मातृव्रतम् ।

—०००—

राजा विजयमाप्नोति भुक्त्वा राज्यमकण्ठकम् ।
 ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या येचान्ये मन्दजातयः* ॥
 सर्वत्र जयमायान्ति भयेभ्योऽपि विवर्जिताः ।
 मातरश्चैव संपूज्याः यथा शक्त्या प्रयत्नतः ॥
 तद्गमे शिवभक्तांस्तु व्रताचार्यं विशेषतः ।
 एवं कृत्वा विधानेन सर्वत्र जयमाप्नुयात् ॥
 ब्रह्माणींश्चैव माहेरीं कौमारीं वैष्णवीं तथा ।
 वाराहीं नारसिंहीं च शिवसेमजयां महीं ॥
 ऐन्द्रीञ्चामुल्हां योगेशीं गौरीं चैव तथाम्बिकां ।
 आम्नेयीं वारुणीं चैव वायव्यां व्योमसंज्ञिकां ॥
 लम्पटां गजवक्त्राञ्च गाह्वरीं च जयां यजेत् ।
 विजयां च जम्बतीं च तथा न्यां त्वपराजितां ॥
 सिंहवक्त्रां तथा शुक्लां उत्पलां पूजयेत्तथा ।
 गरुडाञ्च तथा राशिं सुराशिं च तथा पुनः ॥
 हंसवक्त्राञ्चवक्त्राञ्च सिंह व्याघ्रमुखीं तथा ।
 जम्बूलकमुखारावींमार्जारीं ऋक्षवानरीं ॥
 उष्ट्रवक्त्रां श्याममुखीं गोमुखीं सुमुखीं तथा ।
 भैरवीं चैव संपूज्या तथा वै कृष्णरेदती ॥
 शुक्लरेवनिसंज्ञा च तथा शकुनिरेवती ।
 लक्ष्मेश्वरी भद्रकर्णा श्रीशीघ्रा सिद्धिरेव च ॥

* चन्द्रजातयदिति पुस्तकाकारे पाठः ।

घण्टाकर्षी तथा निद्रा मातरः परिकीर्त्तिताः ।
 नवम्यां पूजयेद्यस्तु मासि चाश्वयुजे सदा ॥
 अखण्डितप्रभावस्तु भवते नात्र संशयः ।
 अहन्यहनि योनित्यं भक्त्या पूजावसानतः ॥
 यहदीषा न वाधन्ते परकृत्या विशेषतः ।
 दुःस्वप्नो व्याधयो भूता हिंसकाश्च विनायकाः ॥
 स्वप्नहाः पूतनायण्डा डाकिन्यो मारिकास्तथा ।
 नश्यन्ति स्मरणात्तस्य सर्वदुर्भिक्षकल्मषाः ॥
 मृततोकाः काकबन्ध्या सुप्रजा वै प्रजायते ।

इति मातृव्रतम् ।

अथ वैशाखनवम्योर्भविष्योत्तरोक्तं नवमीव्रतम् ।

—000—

वैशाखे मासि राजेन्द्र नवम्यां पञ्चयोर्द्वयोः ।
 उपवासपरोभक्त्या पूजयानस्तु चण्डिकां ॥
 विमानवरमारूढो देवलोके महीयते ।

इति वैशाखनवमीव्रतम् ।

अथ नन्दानवमीव्रतम् ।

—000—

सुमन्तुर्वाच ।

मासि भाद्रपदे या तु नवमी बहुलेतरा ।
 मातृनन्दा महापुण्या कौन्तिता पापनाशनी ॥

बहुलः कृष्णपद्मः तदितरा शक्ता ।

तस्यां यः पूजयेद्गुर्गां विधिवत् कुरुनन्दन ॥
 सोऽम्बुमेधफलं विन्द्याद्विष्णुलोकं स गच्छति ।
 एकभक्तं तु सप्तम्यामष्टम्यां समुपोषितः ॥
 जातीपुष्पैः कदम्बैश्च पूजयेद्विधिवच्छिवं ।
 दूर्वां परिस्थितां देवीं यथा शास्त्रविनिर्दितां* ॥
 खजूरनालिकेरैश्च तपुसामलकैस्तथा ।
 पूजयेत्सप्तधान्येन पिण्याकेन च सुव्रत ॥
 दध्ना साज्येन धूपेन दूर्वाङ्कुरैश्च धूपयेत् ।
 प्रजागरं ततो रात्रौ नन्दायाः पुरतो नृप ॥
 नानाप्रेक्षकैः कुर्यात् ब्रह्मघ्नैश्च पुष्कलैः ।
 नन्दाख्यं च जपेन्नन्ममष्टीत्तरशतं विभो ॥

विभोनन्दाख्यः ।

श्रीं नन्दायै नमः स्नाह्यं हुं फ चिति ।
 प्रभाते तु नवस्यान्तु पूजां कृत्वा तु चण्डिकां ॥
 प्रीणयित्वा गुहं यत्तथा कुमारीर्भोजयेत्ततः ॥
 एवञ्चाश्वयुजे मासि कार्तिके कार्तिकीत्तरि ।
 कार्तिकीत्तरि, मार्गशीर्षे ।

पूजयेत्तुरोमासान् नन्दां भगवतीं विभो ॥
 खाने कुशीदकं प्रोक्तं प्राग्ने च नराधिप ।

* यथामार्गविनिर्दितामिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

इति ते कथितं वीर प्रथमं पारणं शुभम् ॥
 द्वितीये ऋषे मे पीषे पारणास्नानप्राशनं * ।
 शण्डिकां पूजयेदत्र नाम्ना कनकनन्दिनीं ॥
 नानास्त्रजाभिः क्लृप्तैः कुङ्कुमागरुचर्चितां ।
 नानाविधैर्भस्मभोज्यैर्धूपे नागुरुणा तथा ॥
 पञ्चगव्यकृतस्नानः सोपवासीजितेन्द्रियः ।
 पूजयित्वा महादेवीं रात्रौ स्वपिति भूतले ॥
 पुनर्नवम्यां संपूज्य विधिवत् कनकनन्दिनीं ।
 इत्वा तु शाण्डिलीपुत्रं कुमारीं भीजयेत्ततः ॥

शाण्डिलीपुत्र मग्निं ।

वैशाखादिषु मासेषु पूजयेद्विधिनाशुतम् ।
 सुहुराणां स्त्रजाभिस्तु अशोकानां च भारत ॥
 कुङ्कुमागरुकर्पूरैश्चन्दनेन विलेपयेत् ।
 धूपेनागुरुमित्रेण पयसा पायसेन च ॥
 अशुताख्यं जपेन्नाम सर्वपापहरं शिवं ।
 गीरोचनाम्बुना स्नानं प्राशनं गोमयस्य तु ॥
 कृत्वोपवासमष्टम्यां पूजयित्वा तथाशुतम् ।
 नवम्यां भोजयेच्छक्त्या कुमारीं प्रीत्याणान् स्त्रियः ॥
 य एवं कुरुत नन्दा नवमीं विधिवद्विभो ।
 स्वभक्तिकेकं विधिवच्चिन्तितं लभते फलम् ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं नन्दानवमीव्रतम् ।

अथास्त्रामेव भविष्यत्पुराणोक्तं दुर्गापूजनम् ।

—000—

मासि भाद्रपदे या स्यान्नवमी बहुलेतरा ।
 माहनन्दा महापुण्या कीर्तिता पापनाशिनी ॥
 तस्यां यः पूजयेत् दुर्गां विधिवत् कुरुनन्दन ।
 मोऽस्रमेधफलं पाप्य विष्णुलोकश्च गच्छति ॥
 अथ भाद्रपदकृष्णनवम्यां देवीपुराणोक्तं दुर्गाबोधनम्
 कन्यायां कृष्णपक्षे तु पूजयित्वा उभेऽपि वा ॥
 नवम्यां बोधयेद्देवीं गीतवादित्रनिस्त्रनैरिति ।
 कन्यायां दर्शान्तभाद्रपदे ॥

इति नाना पुराणोक्तं दुर्गापूजनम् ।

अथ महानवमीव्रतम् ।

—000—

सुमन्तुरुवाच ।

माघमासे तु या शक्ता नवमी लोकपूजिता ।
 महानन्देति सा प्रोक्तं सदानन्दऋतौ नृणाम् ॥
 'स्यां ज्ञानं तथा दानं तथा होम उपोषितम् ।
 सर्वं तदक्षयं प्रोक्तं यदस्यां क्रियते नरैः ॥
 श्वेतपुष्पस्रजाभिस्तु नन्दा भगवतीं यजेत् ।
 कुङ्कुमेन तथा वीर धूनेनागरुषा तथा ॥
 मोदकैर्विधिवैर्वीर फलैर्नानाविधैस्तथा ।
 तिलकक्कळतस्त्रानो होमयेद्विधिवत्तिसाम् ॥

पूजयेच्चतुरोमासान् नन्दां भगवतीं शिवाम् ।
 कुमारीं भोजयेद्भक्त्या घोषितो ब्राह्मणांस्तथा ॥
 ज्यैष्ठादिपारणे वीर जातीपुष्पकदम्बकैः ।
 पूजयेद्द्विधिवद्दुर्गां नाम्ना विन्ध्यनिवासिनीम् ॥
 प्राशयेत्पञ्चगव्यं तु ज्ञानं तेनैव पुण्यदम् ।
 पायसान् मधुसर्पिभ्यां तथा दध्नीदनं परम् ॥
 कार्तिकादिषु मासेषु पूजयेद्दि स्मिताननाम् ।
 कुन्दपुष्पस्रजाभिस्तु करवीरैश्च सुव्रत ॥
 कसूरिकाकृतैर्गन्धैर्धूपैर्नागरुणा तथा ।
 घृतपूरैः खण्डवेष्टैः श्रीफलैश्चापि पूजयेत् ॥
 गोशृङ्गचालनस्नानात् पूतदेहो नराधिप ।
 पूजयेद्द्विधिवद्देवीं भक्त्या श्वेतमुखीं विभो ॥
 य एवं पूजयेद्दशं चण्डिकां समुपोषितः ।
 सर्वान् कामानवाप्स्याद्यान् ब्रह्मलोके महीयते ॥
 क्रीडित्वा ब्रह्मणः साक्षरात् तत्र प्रपूजितः ।
 पूजयेद्द्विधिवद्देवीं भक्त्या भवति भूतले ।
 धनधान्यसमृद्धस्तु पुत्रवान् कौर्त्तिमान् भवेत् ॥

इति भविष्यत्पुराणे महानवमीव्रतम् ।

अथ दुर्गानवमीव्रतम् ।

—०००@०००—

ब्रह्मोवाच ।

दुर्गां संपूज्य दुर्गाणि नवम्यां तरति तथा ।

संग्रामे व्यवहारे च सदा विजयमाप्नुयात् ॥
 मूलमन्त्राः स्वसंज्ञाभिरङ्गमन्त्राश्च कीर्त्तिताः ।
 पूर्ववत् पद्मपत्रस्या कर्त्तव्या च तिथीश्वरा ॥
 तिथीश्वरात् दुर्गा तद्रूपन्तु रथनवमीव्रते ।
 गन्धपुष्पोपहारैश्च यथाशक्ति विधीयते ॥
 पूजाशाठान् शाठेन कृत्वापि तु फलप्रदा ।
 आज्यधारासमिद्धिश्च दधिचीरान्नमाक्षिकैः ।
 पूर्वोक्तफलदोहोमःपयसा तेन वै कृतः ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं दुर्गानवमीव्रतम् ।

अथश्रीर्यं व्रतम् ।

अगस्त्य उवाच ।

अतःपरं प्रब्रूयामि श्रीर्यं व्रतमनुत्तमम् ।
 येन भीरीरपि महत् श्रीर्यं भवति तत्क्षणात् ॥
 मासि चाश्वयुजे शुद्धा नवमी ससुपोषिता ।
 सप्तम्यां कृतसङ्कल्पःस्त्रिवाष्टम्यां निरोदनः ॥
 नवम्यां प्राशयेत् पिष्टं प्रथमं भक्तितो नृप ॥
 नाह्मणान् भोजयेद्गन्ध्या देवीश्चैव तु पूजयेत् ।
 दुर्गां देवीं महाभागां महामायां महाप्रभाम् ॥
 एवं सम्बत्सरं यावदुपोष्य विधिवन्नृप ।

व्रतान्ते भोजयेद्दीमान् यथाशक्त्या कुमारवान् ॥
 हेमवस्त्रादिभिः स्नातुं पूजयित्वा तु शक्तितः ।
 पश्चात् क्षमापयेत्क्षान्तुं देवी मे प्रीयतामिति ॥
 एवं कृत्वा भ्रष्टराज्योत्संभेद्भ्राज्यं न संशयः ।
 अविद्यो लभते विद्यां भौहः शौर्येण विन्दति ॥

इति वाराहपुराणोक्तं शौर्यव्रतम् ।

अथ वीरव्रतम् ।

नवम्यामेकभक्तं तु कृत्वा कन्याः स्वशक्तितः ।
 भोजयित्वा समां दद्याद्देमकुम्भश्च वाससी ॥
 समां संवत्सरं, यावन्नवम्यामेव भोजयेत् ।
 तथाद्देमन्तु दातव्यं मृतो शिवपुरं व्रजेत् ।
 प्रतिजन्म सुरूपः स्याच्छत्रुभिसापराजितः ॥
 एतद्दीरव्रतं नाम नारीणाञ्च सुखप्रदम् ॥

इति पद्मपुराणोक्तं वीरव्रतम् ।

अथ आग्नेयव्रतम् ।

कृत्वा उवाच ।

सक्तन्नवम्यां भक्तेन पूजयेद्दिग्भवासिनीम् ।

पुष्पं धूपैस्ततोदीपैर्नैवेद्यैर्विधैरपि ॥
 पूजयित्वा ततोविद्यात् पञ्चरं सुकसंयुतम् ।
 हेमं विप्राय दद्याद्यः स वाग्मी जायते नरः ॥
 सकृद्भक्तो न नक्तो न अग्निर्लोकप्रदायकम् ॥

इति भविष्योक्तोक्तं आग्नेयव्रतम् ।

अथ वर्षव्रतम् ।

—:—

मार्कण्डेय उवाच ।

हिमवान् हेमकूटश्च शृङ्गावान् मेरुमाखवान् ।
 गन्धमादनएवैतान् पूजयेत् पार्थिवर्षभः ॥
 शैलान् नृप नवम्यात्तु चैत्रमारभ्य पार्थिव ।
 सोपवासेन धर्मञ्च गन्धमाख्याप्तसम्पदा ॥
 जम्बूद्वीपस्य संख्यानं व्रतान्ते राजतं नरः ।
 तुलाप्रमाणां दद्यात्सुसर्वाङ्गान् कामानवाप्नुते ॥

तुलाप्रलयव्रतम् ।

अश्वमेधमवाप्नोति स्वर्गलोकश्च गच्छति ।
 मानुष्यमानाद्यंस्त ततोश्चक्रवर्त्ती नृपो भवेत् ॥
 चिरञ्च कलं वसुधां प्रशशुलोकवाप्नोति ततोधि लोकान् ॥

इति विष्णुधर्म्मोक्तोक्तं वर्षव्रतम् ।

—

अथ भद्रकालीव्रतम् ।

—०००—

मार्कण्डेय उवाच ।

नवम्यां सोपवासस्तु भद्रकालीं प्रपूजयेत् ।
 शुकपत्रे महाराज कार्तिकात् प्रभृति क्रमात् ॥
 गन्धमाख्य नमस्कार धूपदीपान्न सम्यदा ।
 सम्बत्सरान्ते सम्युज्ज्व व्रतान्ते ब्राह्मणाय तु ॥
 वस्त्रयुग्मं नरोदत्त्वा यथेष्टं काममाप्नुयात् ।
 रोगार्त्तामुच्यते रोगात् बन्धो मुच्येत वन्धनात् ॥
 राजकार्य्याभिसुखञ्च मुच्यते च महाभयात् ।
 नामरेभ्यो भयं तस्मान्नररेभ्यः कथञ्चन ॥

पुत्रानवाप्नोति धनं यथेष्टं

यत्र च पुण्यं विविधं च कुप्यम् ।

पूजां च क्त्वाविधिवत् भवान्याः

कामानवाप्नोति तथादि भूतान् ।

हेमरूप्यव्यतिरिक्तं धनं कुप्यं ॥

इति विष्णु धर्म्मोत्तरोक्तं भद्रकालीव्रतम् ।

राजोवाच ।

विधिना पूजयेत् कन्यां भद्रकालीं नराधिप ।

नवम्यामाश्विने मासि शुकपत्रे नरोत्तम ॥

पुस्कार उवाच ।

पूर्वोत्तरे तु दिग्भागे लिखेत् वास्तुमनोहरे ।

भद्रकालीं नृपगृहं चित्त वस्त्रैरसङ्गतम् ॥

भद्रकालीं पटे कृत्वा तत्र सम्पूजयेद्द्विज ।
 भद्रकालीरूपनिर्माणं तत्रैव दर्शितम् ॥
 अष्टादशभुजा कार्या भद्रकाली मनोहरा ।
 आसीढस्थानसंस्थाना चतुःसिंहे रथे स्थिता ॥
 अक्षमालां त्रिशूलञ्च खड्गश्चन्द्राख्य* एव च ।
 वाण, वापीच कर्त्तव्यौ शङ्खपद्मौ तथैव च ॥
 शुक्लशुक्लौ च तथा कार्या तथा वैदिकमण्डलं ।
 दण्डशक्ती च कर्त्तव्ये तथा शक्तिहस्ताशने ॥
 हस्तानां भद्रकाल्या स्तु तारकानिकरः† करः ।
 एकश्चैव महाभाग रत्नपात्रं भवेदिति ॥
 आश्विने शुक्लपक्षस्य अष्टम्यां प्रयतःशुचिः ।
 तत्रैवायुधचर्माद्यं क्वचं वस्त्रञ्च पूजयेत् ॥
 राजलिङ्गानि सर्वाणि तथा शस्त्राणि पूजयेत् ।
 फलैर्भक्ष्यैस्तथा भक्ष्यैर्भोज्यैश्च सुमनोहरैः‡ ॥
 वलिभिश्च विचित्रैश्च प्रेक्ष्यादानैस्तथैव च ।
 रात्रौ जागरणं कुर्यात् तत्रैव वसुधाधिप ॥
 उपोषितो द्वितीयेऽङ्गि पूजयेत् पुनरेव ताः ।
 आयुधानाञ्च सकलं पूजयेद्वसुधाधिप ॥
 एवं सपूजयेद्देवीं वरदां भक्तवत्सलां ।
 कात्यायनीं कामगमां बहुरूपां वरप्रदां ॥

* खड्गश्चन्द्रश्च यादव इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† तारकानिकर इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ एवैर्भक्ष्यैरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

पूजिता सर्वकार्यैः सा युनक्ति वसुधाधिप* ।
 एवं हि संपूज्य जत्प्रधानां
 याचासु देव्या वसुधाधिपेन ॥
 प्राप्नोति सिद्धिं परभां महेशा
 जनस्तथान्योऽपि च विसृजत्या ॥

इति विष्णुधर्म्मोत्तरोक्तं भद्रकालीव्रतम् ।

इति श्रीमहराजाधिराजश्रीमहादेवस्य समस्तकरणा-
 धीश्वर-सकल-विद्या-विशारद-श्रीहेमाद्रि-विर-
 चिते-चतुर्वर्ग-चिन्तामणौ व्रतखण्डे
 नवमीव्रतानि समाप्तानि ॥

* एवं हि संपूज्य जगत्प्रधानाया शत्रुदेव्या वसुधाधिपेन । प्राप्नोति सिद्धिं परमाप्तेशाचित्तत्तथान्योऽपि जनःसृजत्या इति मुक्तकान्ते पाठः ।

अथ चतुर्दशोऽध्यायः ।

—ooo@ooo—

अथ दशमीव्रतानि ।

अन्यं नवेत्ति विषयान्तरमन्तरायं
यच्चन्द्रचूडचरणार्पितचित्तवृत्तिः ।
सत्यव्रतः सकलशैलसमूहसूर्योः*
हेमाद्रिरथ दशमीव्रतवन्दमाह ॥

सनत्कुमार उवाच ।

अथ त्वं शृणु विप्रर्षे दशमीव्रतमुत्तमं ।
सर्वरोगार्त्तिशमनं सत्त्वपुष्टिप्रदं शुभम् ॥
व्रतमेतन्नहावुष्टे कार्यमारोग्यमिच्छता ।
सर्वकार्यार्थमेतच्च लिप्सुना जीवितं चिरं ॥
उपवासश्च कर्त्तव्यो नवम्यामिह सुव्रत ।
दशम्यां तु ज्ञातस्नानो मङ्गलायतनं हरिं ॥
देवमिन्दिरया सार्द्धं ध्यात्वा च जगतां पतिं ।
शङ्खचक्रगदापद्मशाखांसि, धरमुत्तमं ॥

इन्दिरया लक्ष्म्या ।

फलैश्च धूपैश्च पुष्पैश्च पायसेन समर्चयेत् ।
अथतः स्थापयेत् कुम्भन्तीर्थतोयेन पूरितं ॥

अस्मिन्नावाहयेत्यन्नं, चक्राद्यान्यायुधान्यपि ।
 पूजयेद्भक्तपुष्पैस्तु, गुडाग्नेन समाहितः ॥
 द्रोणमात्रतिलैः कृष्ण कारयेदजिनोपरि ।
 तस्मिन्नष्टदलं पद्मं सौवर्णं च निधाय वै ॥
 मनःषष्ठानीन्द्रियाणि प्राणान् बुद्धिं दलेष्वपि ।
 कर्णिकायां तथा कालं क्रमेणैवमथार्चयेत् ॥
 अनामयानीन्द्रियाणि प्राणञ्च चिरसंस्थितः* ।
 अनाकृतासना बुद्धिः सर्वेषु निरुपद्रवा† ॥
 मनसा कर्मणा वाचा मया जन्मनि जन्मनि ।
 सञ्चितं क्षयत्वेनः कालात्मा भगवान् हरिः ॥
 इत्येवं प्रार्थितं कृत्वा देवदेवस्य चाग्रतः ।
 हरिद्राय सपुत्राय सत्पुत्राय द्विजन्मने ॥
 ब्रह्मापूर्त्तविधिज्ञाय दद्यात् सर्वमतन्द्रितः ।
 गुरवे दक्षिणां दद्याद्वाङ्मन्त्रेभ्यश्च भोजनं ॥
 आचार्यैः साधकं पश्चात् स्नापयेत् कुम्भवारिणा ।
 अवशिष्टेन चाग्नेन गुर्व्भुक्त्वापुरः सरं ॥
 बान्धवैः सह भुञ्जीत नियमानुत्सृजेत्ततः ।
 जज्ञाद्वाधिकातां पीडां स्वप्नोक्तामपि सुव्रत ॥
 व्रतेनानेन वै मर्त्यः सकृत्स्त्रिभेन संयुतः ।
 पुत्र पीत्र सुव्रह्मभु पश्चाद्दीनपि नित्यशः ॥

* प्राचक्षिचिरसंस्थितिरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† अनाकृतासनेबुद्धिः सर्वेषु निरुपद्रवा इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

आरोग्यं चिरजौवित्वं व्रतमेतत् प्रयच्छति ।
 राजघ्नमस्त्रीहाष्टीलागुल्मशूलभगन्दराः ॥
 नश्यन्ति च महामूर्खे वृतिनीनाञ्च मंगयः ।
 अनपत्यः सुतं देवि दीर्घं मायुश्च विन्दति ॥
 अन्तरामरणं जह्यादानन्दारोग्यमृच्छति ।
 अन्तरामरणं, जह्यादित्यपमृत्युं नाप्नोतीत्यर्थः ॥

इति गरुडपुराणोक्तमारोग्यव्रतम् ।

अथ राज्याग्निदशमीव्रतम् ।

—:—:—

मार्कण्डेय उवाच ।

ऋतुर्दक्षो मुनिः सत्यःकालः कामोवसस्तथा ।
 कुरवान् मनुजोविप्र रोमसारथ्य ते दश ॥
 विश्वेदेवाः समाख्याता दशात्मा केगवो विभुः ।
 तस्य संपूजनं कार्यं मितपत्ने नराधिप ॥
 आरभ्य कालिकान्मासाद्दशम्यां नृपपुङ्गव ।
 मण्डलेष्वथ पुण्येषु यद्विवाचांसु यादव ॥
 गन्ध, माल्य, नभस्कार, दीप, धूपान्न, सम्पदा ।
 अर्चा प्रतिमा साच यथासम्भवं सुवर्णादिधातुमयी विधेया ।
 व्रतान्ते कनकं दद्याद्यथाशक्ति द्विजातये ॥

कृत्वा व्रतं केवलमेतदिष्टं
 प्राप्नोति तेषां सुचिरन्तु लीकान् ।
 तत्रोथ लोके पुरुषोत्तमस्य
 राजा भवेद्वाङ्मणपुङ्गवो वा ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं राज्याग्निदशमीव्रतम् ।

अथ ब्रह्मावाप्तिव्रतं ।

— ००० —

मार्कण्डेय उवाच ।

आत्माह्यायुर्मनीदक्षीमदः प्राणस्तथैव च ।
 हविष्मोक्ष गतिस्तस्य* दक्षः प्रत्यय ते दश ॥
 देवास्वङ्गिरसोनामदशम्यां पूजयेन्नरः ॥
 सोपवासःपूर्वपक्षे पूर्वोक्तविधिना चिरं ।
 पूर्वोक्त विधिना अनन्तरोक्तविधिना ।
 कृत्वाव्रतं वत्सरमेत दिष्टं
 प्राप्नोति तेषां सुचिरं हि लीकान् ।
 तत्रोथ कालं पुरुषत्वमेत्य
 राजा भवेद्वाङ्मणपुङ्गवो वा ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं ब्रह्मावाप्तिव्रतं ।

* सचदत्तं सत्यय ते दश इति पुलकान्तरे पाठः ।

अथ पदार्थव्रतं ।

—०००—

मार्कण्डेय उवाच ।

शुक्लपक्षे दशम्यां तु सोपवासस्तथानरः ।
 मार्गशीर्षे तद्यारभ्य यावत्सम्बत्सरं भवेत् ॥
 गन्धमाख्यनमस्कार धूपदीपाद्यसम्पदा ।
 दिक्पालपूजनं कुर्याद्दिशां संपूजनं तथा ॥
 गां वत्सरान्ते दद्याच्च तथैवच पयस्त्रिनीं ।
 ब्राह्मणाय महाभाग यथा च मनुजोत्तम ॥
 एतद्व्रतं नरः कृत्वा यत्र क्वचन गच्छति ।
 तत्रेष्टं काम्यमाप्नोति पुत्रेष्टिफलमश्नुते* ॥

वाणिज्यकण्ठस्य नरस्य सिद्धं
 यावान् तद्यान्वां विजोगीषवच्च ।
 विद्यार्थिनो वा रिपुनाशनं वा
 हितं पदार्थं व्रतमेतद्विष्टं ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरे पदार्थव्रतम् ।

अथ धर्मव्रतम् ।

—०००—

मार्कण्डेय उवाच ।

शुक्लपक्षे दशम्यां तु सोपवासस्तु मानवः ।
 धर्मं सम्पूजयेद्देवं सर्व्वलोकमुखावहं ॥

* पुत्रीचिमपिपामुते इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

मार्गशीर्षादथारभ्य नित्यमेवमरिन्दम ।
 गन्धमाल्यनमस्कारदीपधूपान्नसम्पदा ॥
 घृतेन जुहुयादङ्गिं ब्राह्मणांश्चात्र पूजयेत् ।
 व्रतावसाने दद्याच्च तथा धेनुं पयस्विनीं ॥
 व्रतमेतद्विनिर्द्दिष्टमश्वमेधफलप्रदम् ।
 कृष्णपक्षे तथाप्येतत् कार्यं मनुजसत्तम ॥
 राजसूयाश्वमेधाभ्यां फलं प्राप्नोत्यसंशयम् ।
 स्वर्गलोकमवाप्नोति कुलमुदरति स्वकम्* ॥
 धर्मेति च भवेत्तस्य धर्मं प्राप्नोति मानवः ।
 यत्र यत्नाभिजायेत तत्र धर्मपरो भवेत् ॥
 व्रतेनानेन सर्वत्र नरो धर्मपरो भवेत् ।

आपुष्पमारोग्यशशस्करन्तत्
 स्थानप्रदं पापविनाशकारि ।
 कर्त्तव्यमेतत् पुरुषीयथावत्
 पूज्याहि विष्णुर्भगवान् स धर्मः ॥

इति विष्णु धर्मात्तरोक्तं धर्मव्रतम् ।

अथापराजितदशमौविधिः ।

-----०००-----

आथर्वणगोपथब्राह्मणे अथापराजितदशम्यां पूज्योक्तं विजय
 मुहूर्त्ते उक्तं प्रास्थानिकं एतानि खलु प्रास्थानिकं एतानि खलु
 प्राग्वा हाराण्योत्वादि येते पन्थान इत्यादि नक्षत्रचौमद्य दधी-

* आथर्वणमारोग्यकरं यशस्वसिति पुनःकालरे पाठः ।

दनं भुक्त्वा क्षत्तिकासु अभ्युदियात्सिद्धार्थोः* हि पुनरागच्छति
तृटित मांसैर्भुक्त्वा पूर्वयोः फाल्गुन्योरभ्युदियाद्रसै रभयोः प्रियं
गवहस्ते पवित्रं भक्तं भुक्त्वा चिन्वाभ्युदियानि शस्तानि फलजा-
तानि तेषां भुक्त्वोच्छादतिश्च भूरिपायसपूपान् विशाखयोर्धैतानि
खलु दक्षिणद्वाराणि भवन्ति ॥

तत्रैव दक्षिणादिशमभ्युदितः ।

वराहहस्तेन जालहस्तेन वा मत्स्यसम्बन्धेन वा समेयानि वर्षै-
तार्वाक् खलु एतेज्जीघादार्वाक् द्यानुकर्मैश्च भवन्ति खलु गुडैर्भुक्त्वा
नुराधाभिरभ्युदियाच्छस्त्रानामोदनं भुक्त्वा अश्वेनाभ्युदियादे-
तानि पादेतानि खलु पश्चिमद्वाराणि स यत्रैव दिग्गमभ्युत्थितः ।
श्रयनहस्तेन वा दक्षहस्तेन वा आसन्दीहस्तेन वा

नीबीहस्तेन वा जानुहस्तेन वा

समेयान्निवृत्तोत्तार्वाक् खल्वेतन्नाभ्यादूर्ध्वं क्रोशादार्वाक्
घातुकथमस्य भवति । विदलन्तपेन भुक्त्वा अविष्टास्त्रभ्युदयाद्रा
सैरुत्तरयोर्गृह्णीषीभक्तं भुक्त्वा रेवतीभिरभ्युदयातिरभ्युदयात्सि-
लान् भक्षयित्वा भरणीभिरभ्युदियात् एतानिखलूत्तरदिक्द्वाराणि

० 'सैव पुनरागत्यार्थमेव मासिन् रोचिष्वां क्षमसासैर्धर्मिरसि दधिरसाद्रांवां यद-
पतिभक्तं भुक्त्वा पुनर्वसुं तपायसान् पुष्यः सर्पमासेरक्षेत्राणां रनाभि खलु प्राक्
द्वारा भवन्ति स यत्रैव प्राची' दिग्गमभ्युत्थितः ब्राह्मणहस्तेन वा कन्युहस्तेन वा सामधान्
निर्बन्धार्थाः खल्वेतत् क्रोशादार्वाक् घातुकथमस्य भवन्ति तेषाम् छत्ररा भुक्त्वा
मघाभिरभ्युदयात् सिद्धार्थाः सैव पुनरागच्छति पक्षिभारैर्भुक्त्वा पूर्वयोः फाल्गुन्योरभ्यु-
दियाद्रसैः छत्रराशान् प्रियङ्गवहस्ते चित्रं भक्तं भुक्त्वा चिन्वादिभ्युदियाभि सस्तानि
फलजातानि इत्यादि पुष्ककान्तरे पाठः ।

भवन्ति सम्पन्नैर्वीदेवीं दिशमभ्युत्थितः । पानहंसेनवा किण्व
हस्तेनवा क्षीरेण वा सयेपाग्निभर्त्तितावाक् खख्वे तत् क्रौशा-
दर्वाक् भाकुशं कुमर्थस्य भवति । अनिजनिवेज्योजनिः सनिग-
र्भहोजनि ब्रह्माजनि चर्यं समजनि । सर्वेषां लोकानां सर्वेषां
वेदानां सर्वेषां भूतानां सर्वासां अत्रन्तीनां अधिपतिः स्यादिति
तस्मादेतस्मिन्नक्षत्रएवं कुर्यात् प्राञ्चरुमिधमपमासाधया प्रस्तौर्य
वहिरसान् वहिष्याध्यायत्वालाय जुहुयात् पवित्राणि साकं
द्वि रोचनानि स्वाहेत्यग्नौ हुत्वा रक्षेषु संपातनानानीय संस्थाप्य
होमस्तु क्षपनं प्राशय निरसानि ववैतस्मै करोति सर्वेषां लोहानां
सर्वेषां देवानां सर्वेषां भूतानां सर्वासां अत्रन्तीनां जनिता-
धिपतिरजनिर्भवति । चित्राणि साकं दधिरोचनानि सरी-
सृपाणि भवने जनानि । तूनीशशमितिष्छमोहनिगाभिं सप-
र्याणि नाकमुहत्वमये कान्तिकारोहिणी वास्तु प्राशयति । रशा-
नेवं चैनचैनस्मै सौवुभद्रेऽश्रुतिरः समुद्रापुनर्वस्वीस्तु शून्यता वातुष
चाक्षुषो भाशुमन्नेषां यमं गया मे पुष्यं सर्वफासुशानुहस्ता-
श्विनाश्रिवाति सुखी मेस्तु शून्यताचानुराधे विशाखासहवानु-
राधा ज्येष्ठानु नक्षत्रमरिष्ठमूलं अन्नपूर्णां रसन्तां मे स्वाहा
जहं पूर्व्यादित्युक्तरावाह उक्तं प्रास्थानिकमित्युपपन्नम् ।

तदप्येते श्लोकाः ।

अक्षहृतो भूषितमृत्यवर्गः परिष्कृतीत्तुङ्गतुरङ्गमार्गः ।
वादिचनादप्रतिनादिताशः सुमङ्गलाचारपरम्पराशीः ॥
राजा निर्गल्य भवनात् पुरोहितपुरोगमाः ।
प्रास्थानिकं विधिं कृत्वा प्रतिष्टेत् पूर्वतो दिशि ॥

गत्वा नगरसौमानं वास्तुपूजां समारभेत् ।
 सम्यज्च चार्थदिकपालान् पूजयेत् पथि देवताः ॥
 मन्त्रैः सर्वैर्दिकपौराणैः पूजयेच्च शमीतर्क* ।
 भ्रमङ्गलानां शमनीं शमनीं दुष्कृतस्य च ॥
 दुःस्वप्नशमनीं† धन्यां प्रपद्येऽहं शमीं शुभाम् ।
 सतताश्रीः पूर्वं स्यां दिशि विष्णुक्रमात् क्रमेत् ॥
 रिपोः प्रतिकृतिं कृत्वा ध्यात्वा वा मनसा तथा ।
 शरेण स्वर्णपुङ्गेन विद्धोद्दयमर्भणि ।
 दिशां विजयमन्त्राच्च पठितव्याः पुरोधसा ॥
 एवमेव विधिं कुर्यादक्षिणादिदिशास्वपि ॥
 पूज्यान् हिजांश्च संपूज्य सम्बत्सरं पुरोहितः ।
 गजवाजिपदातीनां प्रेक्षाकौतुकमाचरेत् ॥
 जयमङ्गलशब्देन ततः स्वभवनं विज्ञेत् ।
 नीराज्यमानः पुण्याभिर्गणिकाभिः सुमङ्गलम् ॥
 य एवं कुरुते राजा वर्षे वर्षे सुमङ्गलम् ।
 आयुरारोग्यमैश्वर्यं विजयं च स गच्छति ॥
 नाधयोव्याधयस्तस्य भवन्ति न पराजयः ।
 त्रियं पुण्यामवाप्नोति विजयश्च सदा भुवीति ॥
 उक्तं प्रास्थानिकमिति विवाहमुद्दिश्य यदुक्तं
 प्रास्थानिकं तदिहापि ज्ञातव्यमित्यर्थः ।

* नौपयनाक्षरे इति पुस्तकाकरे पाठः ।

† दुःस्वप्ननाशिनौमिति पुस्तकाकरे पाठः ।

तच्च प्रास्थानिकं यथा ।

अथातः प्रास्थानिकं व्याख्यास्यामीजनेषु गमिष्यत्सु पार्थिवा
वा तस्य त्वां दुन्दुभयःस्युर्वीणासोपवादयेरन् कृष्टालकृताचार
वदन्त उदगयने पूर्वपक्षे पुण्यनक्षत्रे केशश्मशूरोमनखानि
वापयित्वा संधारानुपकल्पयित्वा मुहूर्त्तमुपसमाधाय शान्तिप्रतिभरं
कारयित्वा वीठारस्तेनाभिषिञ्चेदन्यथोक्तमञ्जनाभ्यञ्जनानुलेपनं
कारयित्वा वासो गन्धान् स्रज्जवावध्य पुरःस्थातारं स्थापयित्वा
कर्त्तान्वालभ्यञ्जुहोत्यभयैरपि राजितेरापुष्पैः स्वस्वयनैः शर्भ
वर्मभिजनैश्च हुत्वा पार्थिवस्येतिभाप्रगामेति बहुधा आगच्छता
गतस्येतीस्येतीन्द्रं स्थालीपाकेनेष्टा आतिष्ठाजिष्णुरनृचरात्तज्जेव
इति पन्थानमस्याप्य जपेदिमौ पादौ यतइन्द्रजातारमिन्द्रं मानो
विदन्नभयंसीमोऽहस्यतिर्नः परिपांतु पश्चादिति त्रीन्विष्णुकामान्
क्रान्त्वा विवाहं कारयेन्नहरात्प्रतिष्ठेन्नपरिवसेत् सद्यएव कुर्या
दिति ।

पुराणसमुच्चयेत्वस्यामेवापराजिता पूजोक्ता ।

आश्विनशुक्लपक्षं प्रक्रम्य दशम्याञ्च नरैःसम्यक् पूजनीया
पराजिता ।

ऐशानीन्द्रिशमाश्रित्य अपराक्ते प्रयत्नत इति ।

द्वयंतिथिद्वैधेः परदिने श्रवणाभावे पूर्वोक्ता

आश्विनशुक्लपक्षं प्रक्रम्य दशम्याञ्च नरैः

सम्यक् पूजनीयापराजिता ।

० अद्वयपूजोक्ता इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

यदा* अवणयुक्ता तदा सैव कार्या ।

तदुक्तं कल्पेन ।

उदये दशमी किञ्चित् संपूर्णैकादशी यदि ।

अवणर्चं यदाकाले सा तिथिर्विजयाभिधा ॥

अवणर्चे तु पूर्णायां काकुत्स्थः प्रस्थितो यतः ।

उल्लङ्घयेयुःसीमान्तं तद्दिनेर्चे ततो नरा इति ॥

अन्येषु सर्वेषु पक्षेषु नवमीयुक्ता आद्या ॥

तदुक्तं पुराणसमुच्चये ।

या पूर्णा नवमीयुक्ता तस्यां पूज्यापराजिता ।

चेमार्थं विजयार्थञ्च प्रसिद्धविधिना नरैः* ॥

नवमी शेषसंयुक्ता दशम्यामपराजिता ।

ददाति विजयं देवी पूजिता जयबर्हनी ॥

तथा आश्विने शुक्लपक्षे तु दशम्यां पूजयेन्नरः ।

एकादश्यां न कुर्वीत पूजनं चापराजितमिति ॥

स्कन्दपुराणेऽपि ।

दशमीं यः समुल्लङ्घ्य प्रस्थानं कुरुते नृपः ।

तस्य संवत्सरं राज्ये न ज्ञापि विजयो भवेदिति ॥

इत्यपराजितादशमीविधिः ।

कृष्ण उवाच ।

पूर्वं कृतयुगस्यादौ भृगोर्भाष्या महासती ।

दिव्ये रामाश्रमे रम्ये गृहकार्येषु तत्परा ॥

* देवार्चनेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† पूर्वोक्तविधिनेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

बभूव सा भृगोर्नित्यं हृदयेष्वितकारिणी ।
 तस्यां मुनिर्गृह्णातेजा अग्निहोत्रं निधाय च ॥
 विष्णोस्त्रासोदानवानां कुत्रालणसमाकुलम् ।
 मुक्त्वा युद्धस्थितं पार्श्वं समर्प्य मुनिपुङ्गवः ॥
 दत्त्वा निक्षेपकं सर्व्यं दिव्यया सुमहातपाः ।
 जगाम हिमवत्पार्श्वं हरन्तोषयितुं हरः ॥
 सञ्जीवनीकृते नित्यं कणैर्धूममधोमुखः ।
 ययौ दानवराजस्य विजयाय पुरोहितः ॥
 आजगाम गते तस्मिन् गरुडैः नाश्रयो हरिः ।
 अभ्येत्य तत्स्थलं चक्रे चक्रेण कृतकन्धरं* ॥
 गलद्रुधिर पल्ललोचैः नोहितार्णवसन्निभं ।
 दृष्ट्वासुरबलं सर्व्वं निहतं विष्णुना तदा ॥
 दिव्यास्त संयुक्तामोभूत् विष्णुमस्त्राविलेक्षणं ।
 यावन्नीचरते वाचं चक्रेण कृतकन्धरम् ।
 तावन्निपातयामास शिरस्तस्य सकुण्डलम् ॥
 प्राप्य सञ्जीवनीं विद्यां यावदायात्यमौ मुनिः ॥
 तावत्सदैव्य दैव्यान् हि पश्यतिस्म निपातितान् ।
 रोषाच्छाप च हरिं भृकुटीकुटिलाननः ॥
 अवश्यभावभावित्वाद्दिग्दस्य हितकारणात् ।
 यस्मात्त्वया हता दैव्या ब्राह्मणी भ्यपरिग्रहा ।
 तस्मात्त्वं मानुषे लोके दशवारं गमिष्यसि ॥
 अतीर्थं मानुषे लोके रचार्थं च महीभृतां ।

* निपातयामास शिरस्तस्य रुधिर पल्लोचैः लोचिनाभं च कृत्य इति पुस्तककारे ।

अवतारोदयाकारो भूयो भूयः पृथग्विधः ॥
पूर्वोक्तकारणैः पार्थ अवतीर्णं महीतले ।
मानरा येऽर्चयिष्यन्ति तेषां वासस्त्रिपिष्ठपे ॥

युधिष्ठिरउवाच ।

व्रतं दशवताराख्यं कृष्ण ब्रूहि सविस्तरम् ।
समन्त्रं सरहस्यञ्च सर्वपापप्रणाशनं ॥

कृष्ण उवाच ।

प्रोष्ठपदे सिते पक्षे दशम्यां नियतः शुचिः ।
ज्ञात्वा जलाशये स्नच्छे पिष्टदेवादितर्पणम् ॥
कृत्वा कुरुकुलश्रेष्ठ गृहमागत्य मानवः ।
गृह्णीयात् धान्यचूर्णस्य द्विहस्तप्रसूतित्रयम् ॥
क्रमेण पाचयेत्तत्तु पुंसंघृष्टसंयुतम् ।
वर्षं वर्षं दिने तस्मिन् यावद्वर्षाणि वै दश ॥
प्रथमे पूरिकां वर्षे द्वितीये घृतपूरिकान् ।
तृतीये शुक्लकासारं चतुर्थे मोदकान् शुभान् ॥
सोहालकान् पञ्चमेऽध्वे षष्ठेऽध्वे खण्डवेष्टकान् ।
सप्तमेऽध्वे कोक्करखलकापुष्टस्थाद्यध्वे ॥
नवमे कर्णवेष्टांस्तु दशमे खण्डकान् शुभान् ।
दशात्मनो दशहरे दगविप्राय दापयेत् ॥
क्रमेण भक्षयित्वा च यथोक्तं भरतर्षभ ।
अर्षार्धं विष्णवे देयं अर्षार्धं वा हिजातये ।
स्वतएवार्धमग्नीयात् गत्वा रम्ये जलाशये ॥
दशवतारानभ्यर्च्य पुष्पधूपविलेपनैः ।

मन्त्रे णानेन मेधावी हरिमभ्युत्थ वारिणा ॥
 मत्स्यं कूर्मं नृसिंहं वराहं त्रिविक्रमं रामं
 रामं रामञ्च बुधैव सकल्किकं ।
 गतोस्मि शरणं देवं हरिं नारायणं प्रभुम् ॥
 प्रचतोस्मि जगन्नाथ स मे विष्णुः प्रसीदतु ।
 कृत्वा तु वैष्णवीं मायां भग्नां प्रीतीजनार्दनः ॥
 श्वेतद्वीपं नयत्वस्मात् मयात्मा विनिवेदयेत् ।
 एवं यः कुरुते पार्थ विधिनानेन सुव्रतम् ॥
 दशावतारनामाख्यं तस्य पुण्यफलं श्रुतु ।
 श्रूयते यास्त्विमा लोके पुरुषाणां दशा दश ॥
 तांश्चिन्तन्ति न सन्देहश्चक्रप्रहरणैर्हरिः ।
 संसारसागरा घोरा तत जर्जरते हरिः ॥
 श्वेतद्वीपं नयत्याद्य व्रतेनानेन तोषितः ।
 किं तस्य न भवेज्जाके यस्य तुष्ठीजनार्दनः ॥
 सोऽहं जनार्दनो राजन् कालरूपोररास्यतः ।
 मर्त्यलोकेऽभयं पार्थ चरिष्यति मयोदितं ॥
 सलक्ष्मणा चलया भक्त्या भर्तुं पुत्रसमन्विता ।
 मर्त्यलोके चिरं स्थित्वा विष्णुलोके महीयते ॥
 विष्णुलोकादिन्द्रलोकं ततो याति परं पदम् ।
 ये पूजयन्ति पुरुषाः पुरुषोत्तमस्य
 मत्स्यादिकान् दशमीषु दशावतारान् ।
 मर्त्ये दशस्यपि दशासु सुखं विहृत्य
 ते यान्ति यानमधिरुद्य सुरेश्लोकान् ॥
 इति भविष्योत्तरेदशावतारं नाम ।

अथ सोद्यापनमाशादशमीव्रतम् ।

—000—

कृष्ण उवाच ।

पार्थ पथि विवर्द्धन्तमुखपङ्कज सद्रवे ।
 गृणुष्यावहितो वच्मि तवाशादशमीव्रतम् ॥
 नलतापोभवेत्पूर्व्वं निषधेषु महीपते ।
 स भ्रात्रा विजितो राजन् निष्करेणाति निष्कृतिः ॥
 अर्चैर्दूतेन राजेन्द्र निर्ययौ भार्यया सह ।
 वनं भयप्रतिभयं शून्यं शिल्लीतगणनादितः ॥
 स गत्वा प्रीतिहोत्रान्नजलमात्रेण वर्त्तयेत् ।
 ददर्श वनमध्यस्थांश्चकुनीन् काञ्चनश्चवीन् ॥
 यहीतु मिच्छुस्तान् राजन् समाच्छाद्य स्ववाससा ।
 समीपे तु खगास्यं गृहीत्वा वसनं शुभम् ॥
 आससाद् सभां काञ्चित् धृतवासा सुदुःखितः ।
 दमयन्ती सभां प्राप्य निद्रयापङ्कता तदा ॥
 दुःखादुत्सृज्य गतवान् चान्यत्र प्रधनेश्वरम् ।
 गते तु नैषधे भैमी प्रवृत्ता चर्चितानना ॥
 अपश्यन्ती नलं वीर भैमी सुतं पतिं वने ।
 इतश्चेतश्च बभ्राम हाञ्चेति रुदती मुहुः ॥
 दुःखशोकसमाक्रान्ता नलदर्शनलालसा ।
 आससाद् वनेकैश्चिन्वाचैद्यपुरपुञ्जसा ॥
 उन्नतवत्परिहृताग्निशुभिः कौतकाकुलैः ।

(१२३)

दृष्ट्वा च चेदिराजस्य जननी जनचेष्टिता ॥
 चन्द्रलेखेव पतिता भूमौ भासितदिक्षुखा ।
 आरोप्य सा स्वभवनं पृच्छका त्वं वरानने ॥
 उवाच भैमी सत्रीडं सैरिन्धीं मां निबोधत ।
 न धावयेयं चरणौ नोच्छिष्टं भक्षयाम्यहं ॥
 यदि प्रार्थयते कश्चिदण्डस्ते साम्प्रतं भवेत् ।
 प्रतिज्ञया तया देवि तिष्ठेऽहं तव वेश्मनि ॥
 एवमस्त्वनवद्याङ्गिं राजमाताप्सुवाच तां ।
 एवं वै दासभवने क्वञ्चित् कालमनिन्दिता ॥
 उवाच वत्सराज्ञेन* प्रवृत्तातेकिलद्विज ।
 अनयामासमुदितादमयन्तीगृहं पितुः ॥
 मात्रा पित्रा समायुक्ता सुतैर्भ्रातृभिरेव च ।
 दमयन्ती तद्याप्यास्ते दुःखं नैषधवर्जिते ॥
 प्रोवाच विप्रानाञ्जय व्रतं दानमथापि वा ।
 कथयध्वं यथा मे स्यादिष्टेन सहसङ्गमः ॥
 तत्रेतिहासकुशलो विप्रः प्रोवाच बुद्धिमान् ।
 भद्रे त्वमाशादशमीं कुरुष्वेष्ठतसिद्धिदम् ॥
 चकार सर्व्वं तन्वह्नी यत्पुराणविदा तदा ।
 ख्यातमाख्यानविदुषा दमनेन पुरोधसा ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेन दमयन्त्या नरोत्तम
 सञ्जातः सुखदोत्पर्थं भर्ता सह समागमः ॥
 युधिष्ठिर उवाच ।
 कथमाशादशम्येषा गोविन्द क्रियते कदा ।

* वसुनाज्ञेनेति पुस्तकान्तरेपाठः ।

सर्वमेतत् समाचक्ष मासतिथ्यादि* यादव ॥

कृष्ण उवाच ।

राज्याशया राजपुत्रः कथ्यन्तु कृषीवलः ।
 भार्यार्थं तु वणिकपुत्रः पुत्रार्थं गुर्विषी तथा ॥
 धर्मार्थकामसंसिद्धौ लोके कन्या वरार्थिनी ।
 यष्टुकामोद्विज्वरीरोगी रोगापनुत्तये ॥
 धीर प्रवसिते कान्ते तदार्त्ततापपीडिता ।
 एतेष्वन्येषु कर्त्तव्यमाशा व्रतमिदं तदा ॥
 यदा यस्य भवेदार्त्तकार्यं तैन तदा व्रतं ।
 शुक्लपक्षे दशम्यां तु स्नात्वा संपूज्य देवताः ॥
 नक्तं दशम्यां संपूज्यः पुष्पालक्तकचन्दनैः ।
 गृहीगणो लेखयित्वा यत्रैः पिष्टालकेन वा ॥
 स्त्रीरूपाद्याधिपूज्यास्तु स्वचिह्ने नैव चिह्निताः ।
 यथा देवस्य शक्रादेः शस्त्रवाहनलक्षणम् ॥
 दत्त्वा घृताक्तं नैवेद्यं पृथक् दीपांश्च दापयेत् ।
 फलानि कालजातानि ततः कार्यं निवेदयेत् ॥
 आशास्वाशा सदा सन्तु विद्यन्तां मे मनोरथाः ।
 भवानोनां प्रसादेन सदाकल्याणमस्त्विति ॥
 एवं संपूज्य भुञ्जीत दत्त्वा विप्राय दक्षिणाम् ।
 अनेन क्रमयोगेन मासि मासि समाचरेत् ॥
 धावन्ननोरथः पूर्णं स्ततः पद्यात्समुद्यमान् ।
 मासिपूर्णे च प्रशामे वर्षे वर्षद्वये गते ॥

* मासपोष्यासिषादवः इति पुलकान्तरे पाठः ।

सौवर्णीं कारयेदाशाः रोष्या पिष्टातकेन वा ।
 प्रातिवम्भुजनेः सार्द्धं ज्ञातः सम्यगलंजतः ॥
 पूजयेन्मन्त्रसन्दर्भं रेभिर्ध्यात्वा गृह्णाङ्गणे ।
 तव संनिहितः शक्रः सुरासुरनमस्कृतः ॥
 पूर्वं चन्द्रेण सङ्घिता ऐन्द्रीदिग्देवतेनमः ।
 अग्नेः परिग्रहाचार्य्यत्वमग्नेयी समुच्यसे ॥
 तेजोघ्नापां पराशक्तिराम्नेयी वरदा भव ।
 देवराजं समासाद्य लोकः संयमयत्यसौ ।
 तेन संयमिनौयासि ग्राम्ये कामप्रदा भव ॥
 खड्गं सहेति विकृतानैर्ऋतिस्त्वामुष्मासृतं ।
 तेन नैर्ऋतनाम्नि त्वं ज्ञतवान् भवतः सदा ॥
 त्वयास्ते भवनाधार वरुणोयादसां पतिः ।
 इष्टकामार्थसिद्धार्थं वारुणिप्रभवो भव ॥
 अधित्वासिच यस्मात्त्वं वायुदा जगतां पुनः ।
 वायव्ये त्वमतःशान्तिं नित्यं यच्छे नमोनमः ॥
 कौबेरोवशिसौम्या च प्राभ्यासा त्वमथोत्तरा ।
 निरुत्तरा भवास्मासु दत्त्वा सद्योमनोरथान् ॥
 ये पानीजगदीशेन शम्भुना त्वमलङ्कृता ।
 अतस्त्वं शिवसांनिध्यं द्भिव्याहि शिवे नमः ॥
 सर्पाटक कुलेन त्वं देवितासि तथाप्यधः ।
 नागाङ्गनाभिः सङ्घितोताङ्घिता न सर्व्वदा भव ॥
 सप्तशोकेः परिगतः सर्व्वदा त्वं शिवाय तु ॥
 सप्तशोकेः परिहृतात्प्राज्ञजिज्ञानपांजुह ।

नक्षत्राणि च सर्वाणि ग्रहास्ताराग्रहास्तथा ॥
 नक्षत्रमातरो ये च भूतप्रेतविनायकाः ।
 सर्वे ममैष्टसिद्ध्यर्थं भवन्तु प्रणता सदा ॥
 एभिर्मन्त्रैः समभ्यर्च्य पुष्पधूपादिना ततः ।
 आपोभिरभिसंख्याप्य फलानि विनिवेदयेत् ॥
 तत्सूर्यध्वनिघोषेण गीतमङ्गलनिस्वनैः ।
 दृश्यतीभिः क्षुमाप्यम्ना स्नां रात्रिमतिवाहयेत् ॥
 कुङ्कुमचीदतीत्रेण दानमानादिभिः सुखम् ।
 प्रभाते वेदविदुषे सर्वं तत् प्रतिपादयेत् ॥
 अनेन दिधिना सर्वं क्षमाप्य प्रश्रियस्य च ।
 भुञ्जीत मित्रसहितः सुहृदन्वजनैरपि ॥
 य एवं कुरुते पार्थ दगमीव्रतमाद्रात् ।
 स सर्वकाममाप्नोति मनसा भीषितं नरः ॥
 स्त्रीभिर्विशेषतः कार्यं व्रतमेतद्युधिष्ठिर ।
 लघुवित्तपते नार्थं सदा काम परायणाः ॥
 धन्यं यगस्यमायुष्यं सर्वं कामफलप्रदम् ।
 कथितं ते महाराज मया व्रतमनुत्तमम् ॥
 ये मानवा मनुजपुङ्गवकामकामाः
 संपूजयन्ति दगभीषु सदा दशाशाः ।
 तेषां विशेषनिहिता हृदये प्रकाम
 माशाः फलं हलमलं बहुनोदितेन ॥

इति भविष्योत्तरे सोद्यापनमाशादशमीव्रतम् ।

अथ यमव्रतम् ।

—०००—

ब्रह्मोवाच ।

दशम्यां यमराडिष्टः सर्व्व्याधिहरो ध्रुवम् ।
 मूलमन्त्राः स्वसंज्ञाभिरङ्गमन्त्राश्च कीर्त्तिताः ॥
 पूर्व्ववत् पद्मपत्रस्थः कर्त्तव्यश्च तिथीश्वरः ।
 नमोस्तु पञ्चसुभुजीवरदण्डपाशाभयङ्करोमहोष पृष्ठवर सुरार्थ्यः ।
 गन्ध पुष्पोपहारैश्च यथाशक्ति विधीयते ।
 पूजाशाठेन शाठेन कृतापितु फलप्रदा ॥
 आन्यधारासमिद्भिश्च दधिक्षीरान्नमाक्षिकैः ।
 पूर्व्वोक्त फलदो होमः पायसान्नेन वा कृतः ॥
 इदं व्रतं वैश्वानर प्रतिपन्नतवद्ग्राह्येयम् ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं यमव्रतम् ।

अथ भौमव्रतम् ।

—:○:—

अगस्त्य उवाच ।

सार्वभौमव्रतं चान्यत् कथयामि समासतः ।
 येन सम्यक् कृतेनाश सार्वभौमी भवेन्नरः ॥
 कार्त्तिकस्य तु मासस्य दशमी शुक्लपक्षगा ।
 तस्यां नक्ताशनोमर्त्योदिक्षु सुहवलिं हरेत् ॥
 शुहवलिः पवित्रद्रव्यैः पूजोपहारः ।

विचित्रैर्कुसुमैर्भस्त्रैः पूजयेच्च द्विजांस्तथा ॥
 सर्वा भवत्यः सिध्यन्तु मम जन्मनि जन्मनि ।
 एवमुक्त्वा बलिं तासु दत्त्वा शब्देन चेतसा ॥
 ततोद्विशत्रे भुञ्जीत दध्यन्नञ्च सुसंस्कृतं ।
 सर्व्वं पञ्चाद्यष्टञ्च एवं संवत्सरं नृपः ।
 यः करोति नृपो नित्यं तस्य दिग्विजयो भवेत् ॥

इति श्रीवाराहपुराणोक्तं सार्व्वभौमव्रतम् ।

अथ विश्वव्रतम् ।

—०००—

पुलस्त्य उवाच ।

दशम्यामेकभक्ताग्नी समांते दशधेनवः ।
 दिशस्तु काञ्चनीर्दद्याद्यहारुष्या* महीपतिः ॥
 तिलद्रोणीपरिगताः सार्वभौमो भवेन्नृप ।
 एतद्विश्वव्रतं नाम महापातकनाशनम् ॥

इति पद्मपुराणोक्तं विश्वव्रतम् ।

इति श्रीमहाराजाधिराजश्रीमहादेवस्य समस्तकर-
 णाधीश्वर समस्तविद्याविशारद हेमाद्रि विर-
 चिते चतुर्वर्गचिन्तामणौ व्रतखण्डे
 दशमीव्रतानि ।

* नागाख्या इति पुलस्तके पाठः ।

अथ पञ्चदशोऽध्यायः ।

—000—

अथैकादशी व्रतानि ।

लोकानुग्रहविग्रही स भगवान् चित्तेयदीये वसन्
क्षीरोदं मनसापि नेच्छति नवा वैकुण्ठमुत्कण्ठितः ।
सोऽयं सम्प्रति सुप्रतीतचरितः श्रीविष्णुभक्तायणो
हेमाद्रिर्व्रतजातमत्र कथयत्येकादशीसंश्रितम् ॥

तत्रैकादश्यां जागरणगीतनर्त्तनभगवत्
पूजनीत्ववमाहात्म्यम् ।

—000—

ब्रह्मपुराणे ।

एकादश्यां नरोयस्तु कुरुते जागरं नरः ।
गीतैर्दृष्ट्यैस्तथावाद्यैः प्रेक्षणीयैः पृथक्विधैः ॥
स याति वैष्णवं लोकं यं गत्वा न निवर्त्तते ।

हत्यायुतानोह सुसंचितानि स्तेयानि रुक्मस्य वसूनि सद्यः ॥
निहृत्य ते नैव निराकृतानि सर्वाणि भद्राणि निशिजागरेण ।
मार्गं भयं प्रेतपुरं नदूतात्त्वनन्ततः स्वःवरखड्गपत्रम् ॥
स्वप्ने न पश्यन्ति च ते मनुष्या येषां गताजागरणेन भद्रा ।
काभासहस्रं विधिवद्दाति रत्नै रलङ्क्य सधर्ममेव ॥
गवां सहस्रं कुरुज दत्तं जागरिण विष्णोः* ।

* कुरुजां मन्त्रेण जागरणंति पुस्तककारे पठः ।

तथा । एकादश्यां निराहारः पूज्य दामोदरं हरिम् ।
 रात्रौ जागरणं कृत्वा मुच्यते सर्वपातकैः ॥
 ननु ये पापकर्माणः समायाताः प्रजागरे ।
 संसारसागरेतीव्र न ते यान्ति हरेः पुरम् ।

-यथा यथा याति निशाप्रजागरै
 स्तथा तथा विष्णुपुरे विचिन्वते ।
 वासः पुरी वैष्णवलोकहेतवे
 मद्भृगौतध्वनिनादिते गृहे ॥
 गदासिम्हारधरघुतुर्भुजो
 दैतेयदर्पापहरास्त्रधारी ।
 प्रगीयमानः सुरसुन्दरीभिः
 स याति खं खेचरगात्रसङ्गी ॥
 ब्रह्मवैवर्ते ।

द्वादश्यां जागरं रात्रौ अथवा श्रीपतिं स्तुवन् ।
 कुरुते कुरुते तस्य नारको नैव वासना ।

यमः, पापानि विप्रेन्द्र स्वपटात्प्रापत्कृता ॥

वाराहपुराणे ।

योगयति विशालाक्षि ज्ञानतो ज्ञानतो पि वा ।

मम प्रजागरे गीतैर्नित्यं मत्तथा व्यवस्थितः ॥

यावन्तच्च स्वराः केचिद्वायमाना यश्चिन्ति ।

तावदर्धसहस्राणि शकल्लोके महीयते ॥

मद्भक्तैव जायेत शकल्लोकसुपास्थितः ।

सर्वकर्मागुणश्रेष्ठस्तथापि मम पूजकः ॥

(१२४)

इन्द्रलोकपरिभ्रष्टो ममपूजापरायणः ।
 प्रसुक्तः सर्वसंसारात् मम लोकायगच्छति ॥
 तथा ऋणत तस्त्वेन मे भूमिं कथ्यमानय ।
 मम गाथाप्रभावेण* सिद्धिं प्राप्सोमहौजसीं ॥
 तत्रैव चात्रमे कश्चिच्चण्डालः कृतनिययः ।
 दूरात् जागरणेगायेन्ममभक्तिव्यवस्थितः ॥
 एवन्तु गायतस्तस्य जग्मुर्ब्ध्वाष्यनेकयः ।
 स्वपाकः सुगुणः सोऽथ मङ्गलस्य वसुन्धरे ॥
 कोमुदस्य तु मासस्य शुक्लपक्षस्य द्वादशीं ।
 सुसङ्गते जने याते वीणामादाय जागरं ॥
 ततोर्ध्वमार्गेचण्डालो गृहीतो ब्रह्मराक्षसैः ।
 अल्पप्राणः श्वपाको वै बलवान् ब्रह्मराक्षसः ॥
 दुःखेन चैव सन्मत्तो न शक्नोति विचेष्टितं ।
 सवै प्रोक्तः स्वपाकेन बलवान् ब्रह्मराक्षसः ॥
 किन्त्वया चेष्टितं मङ्गं यस्त्वेवं परिधावसि ।
 श्वपाकवचनं श्रुत्वा† तदा वै ब्रह्मराक्षसः ॥
 उवाच मधुरं वाक्यं मानुषीद्वारलीलुपः ।
 अद्य मे दशरात्रोऽयं निराहारस्य गच्छति ॥
 धात्रा सुविहितोसि त्वमाहारार्थं पुरस्थितः ।
 अद्य ते भक्तत्रिण्यामि नरमांसस्य शीणितं ॥
 पीत्वा त्वैव यथान्द्यायं यथावा तव रोचते ।

* नद्योपजायान्प्रभावेणेति पुस्तकाकारे पाठः ।

† इदंति पुस्तकाकारे पाठः ।

ब्रह्मरक्षोवचःश्रुत्वा श्वपाको गीतलालसः ॥
 राक्षसं छन्द्यामास मम भक्त्या व्यवस्थितः ।
 एवमेतन्महाभाग भक्षाय समुपागतः ॥
 अक्षयमेव कर्त्तव्यं धात्रा दत्तं यथा तव ।
 पश्चात् खादसि मां रक्षो जागरे विनिवर्त्तिते ॥
 विष्णोः सन्तोषणार्थाय ममैतत् व्रतमुत्तमम् ।
 संरक्ष व्रतभङ्गाद्दे देवनारायणं प्रति ॥
 जागरे विनिवृत्ते तु मां भक्षय यदिच्छसि ।
 श्वपाकस्य वचः श्रुत्वा ब्रह्मरक्षः क्षुधादितम् ॥
 उवाच मधुरं वाक्यं श्वपाकं तदनन्तरम् ।
 मिथ्या वदसि चाण्डाल त्वं कथं पुनरेष्यसि ॥
 कोहि रक्षोमुखाद्गृष्टो मानवी विनिवर्त्तिते ।
 तथा ! राक्षसस्य वचः श्रुत्वा चाण्डालो धर्मसंस्थितः ॥
 उवाच मधुरं वाक्यं राक्षसं पिप्रिताशनम् ।
 यद्यप्यलं हि चाण्डालः पूर्व्वं कर्मैवदूषितः ॥
 प्राप्तोऽस्मि मानुषं जन्म गर्हतेनान्तरात्मना ।
 शृणु तत्समयं रक्षो येन मे पुनरागमः ॥
 दूरस्थं जागरं कृत्वा लोकनाथस्य रात्रितः ।
 सत्यमूलं जगत् सर्व्वं लोके सत्यं प्रतिष्ठितम् ॥
 सत्येन लेभिरे सिद्धिमृषयो ब्रह्मवादिनः ।
 नाहं सत्यात् प्रमुष्येय तस्यौ ब्रह्मीश्वतेन्द्रियः ॥
 स याति चैव सत्येन नागमिष्यामि यद्यद्दम् ।
 ब्रह्मघ्ने च सुरापे च ह्रीरे भ्रमव्रते तथा ।

तेषां गतिं प्रपद्ये यं नागमिष्यामि यद्यहम् ॥
 ब्रह्मराक्षसमुक्तस्तु श्वपाकः कृतनिश्चयः ॥
 पुनर्गायति मत्स्थं वै मम भक्त्या व्यवस्थितः ।
 अथ प्रभाते विमले गीतं नृत्यञ्च जागरे ॥
 नाम्ना श्वपाका गायन्ति श्वपाकोऽन निवर्त्तते ।
 ततः स्वरितमागत्य पुरुषोदात्तरुपभाक् ॥
 उवाच मधुरं वाक्यं श्वपाकं तदनन्तरम् ।
 कुतो गच्छति तत्वेन द्रुतं गमननिश्चितः ॥
 एकदा चङ्गुमेकस्त्वं यत्र तत्र प्रवर्त्तने ।
 तस्य तच्चचनं श्रुत्वा श्वपाकः सत्यसङ्करः ।
 उवाच मधुरं वाक्यं पुरुषादस्य संसदि ।
 समयो मे कृतः पूर्वमग्रतो ब्रह्मरक्षसः ॥
 तत्राहं गन्तुमिच्छामि नात्र कार्या विचारणा ।
 ततो राक्षससाविध्यं श्वपाकइत्युवाच ह ॥
 गच्छ चण्डाल भद्रं ते गन्तुं तत्र नचार्हसि ।
 यत्रासौ राक्षसः प्राप्तः पिशितासनसंसदः* ॥
 अथोवाच श्वपाकोऽसौ मरणे कृतनिश्चयः ।
 नाहमेवं करिष्यामि यथात्वं वदसेऽनघ ॥
 नचाहं नाशये सत्यमेतन्मे निश्चितं व्रतम् ।
 नाहं समयमुत्सृज्य शपथांश्च कदाचन ॥
 सत्यमित्थं करिष्यामि गच्छ तावन्नमोस्तु ते† ॥

● पिशितासिद्धिरासद् इति पुस्तकान्तरे पाठः

† गच्छता च नमोस्तु इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

एवं प्रचारणं तस्मिन्वै श्वपाके सत्यवादिनि ॥
 ब्रह्मरक्षसि सत्यत्वात् सत्यवाक्यप्रभाषणात् ।
 दृष्ट्वा तु राक्षसं तत्र श्वपाकस्तमुवाच ह ॥
 आगतोस्मि महाभाग गीत्वा गाथां यथेक्षिताम् ।
 विष्णोर्वै लोकनाथस्य मम पूर्णा मनोरथाः ॥
 एच्छेहि मम गात्राणि भक्षयस्व यथेक्षितम् ।
 श्वपाकस्य वचः श्रुत्वा प्रोवाच ब्रह्मराक्षसः ॥
 तव तुष्टीक्याहं वत्स सत्यधर्मानुपालनात् ।
 चाण्डालस्य विधिद्वयस्य वै बुद्धिरीदृशी ॥
 ततः प्रोवास रात्रौ च विष्णुज्ये जागरः कृतः ।
 फलं गीतस्य मे देहि यदि जीवितुमिच्छसि ॥
 अथोवाच श्वपाकस्तु मया सत्यं वचः कृतम् ।
 खाद् राक्षस मांसानि न दद्यां गीतजं फलम् ॥
 उवाच राक्षसी गीतं दीयतामर्हैराधिकम् ।
 ततोमोक्ष्यामि कल्याण राक्षसत्वाच्च भाषणात् ॥
 अथोवाच श्वपाकोऽसौ त्वं पाहि ब्रह्मराक्षसः ।
 त्वां भक्षयामीत्येवोक्तं गीतेपुण्यं किमिच्छसि ॥
 श्वपाकस्य वचः श्रुत्वा ब्रह्मरक्षी जगाद् ह ।
 एकयामस्य मे देहि पुण्यं शान्तस्य वै फलम् ॥
 तं राक्षसमुवाचाद्य चाण्डालो गीतलुब्धकः ।
 नच याम्यफलं दद्वि ब्रह्मरक्षस्तवेक्षितम् ॥
 पिवस्व शीणितं मेऽद्य यत्त्वया पूर्वभाषितम् ।
 श्वपाकस्य वचः श्रुत्वा राक्षसः प्रत्यभाषत ॥

एकगीतस्य मे देहि यत् फलं विष्णुसंसदि ।
 आत्मानं तारयिष्यामि तव गीतफलेन तु ॥
 नाम्नाहं सोमशर्मेति ब्राह्मणो ब्रह्मयोनिना ।
 सूत्रयंत्रपरिभ्रष्टो यज्ञकर्त्तृसु निष्ठितः ॥
 ततोऽस्मि कृतवाग्यज्ञं लोभमोहप्रपीडितः ।
 तस्य यज्ञस्य दीषेण जातोऽस्मि ब्रह्मराक्षसः ॥
 मन्त्रहीनश्च यद्दत्तं स्वरहीनश्च यत्कृतम् ।
 यदिष्टं पुत्रहीनेन विध्वस्तं कर्त्तृजन्यया ॥
 परिमाणश्च रूपश्च मया नात्रोपलक्षितम् ।
 लाभलोभस्य दीषेण योनिं प्राप्तोऽस्मि राक्षसीम् ॥
 त्वं तु गीतप्रदानेन मां तारयितुमर्हसि ।
 युज्येयं राक्षसत्वाच्च विष्णुगीतप्रसादतः ॥
 ब्रह्मरक्षीवचः श्रुत्वा श्लपाकः संशितव्रतः ।
 वादुर्बित्येव तद्वाक्ये ब्रह्मराक्षसमव्रवीत् ॥
 गीतवानस्मि यत्पद्यात् स्वरमेकमनुत्तमं ।
 फलेन तस्य भद्रं त्वां राक्षसत्वादमोचयम् ॥
 सल्लहायति संयुक्तः कौशिकं विष्णुसन्निधौ ।
 स तारयति दुर्गाणि श्लपाको राक्षसं तथा ॥
 एवं तत्र वरं लब्ध्वा स तदा ब्रह्मराक्षसः ।
 जातस्तु विमलो भद्रे शरद्वीव निशाकरः ॥
 यज्ञशापाद्धिनिर्मुक्तः सोमशर्मा द्विजस्तदा ।
 जातो भागवतो भूमिच्छेने दत्तो महायशः ॥
 श्लपाकश्चापि सुयोषि ममत्प्रीपगायनात् ।

ज्ञात्वा सुविमलं कर्णं सोऽपि ब्रह्मत्वमागतः ॥
एतद्भूमिकाद्यां सर्वां कथितं तव सुन्दरि ॥
ब्रह्मपुराणे ।

देवस्थोपरि कुर्वीत अहया सुसमाहितः ।
नानापुण्यैर्मुनिभिश्च विचित्रपुण्यमण्डपं ॥
ज्ञात्वा वावरणं पश्चात् जागरं कारयेन्निशि ।
कथां च वासुदेवस्य गीतकं वापि कारयेत् ॥
ध्यायन् पठन् स्तवन् देवं प्रेरयेद्दर्शनीं बुधः ।
मम जागरणे गीतस्वरसङ्घैकनिश्चितं ॥

यस्तु गायति सुश्रोणि कौमुदहादशीनिशि ।
स सर्वसङ्घं सन्धयन् मम लोकायगच्छति ॥
यस्तु गायति गीतानि मम जागरणे सदा ।
युक्तमन्तस्थिरोभूत्वा* ब्रह्मभूयं स गच्छति ॥
यस्तु गायति गीतानि मम जागरणे† सदा ।
युक्तमन्तस्थितीभूत्वा ब्रह्मभूयं स गच्छति ॥

एतत्ते कथितं भूमिगायने मम जागरे ।
नित्यं तु गायनेनैव तरेत्संसारसागरात् ॥
वादिभ्यश्च प्रवक्ष्यामि तच्छृणु त्वं वसुन्धरे ।
सप्तवस्तुः फलं यस्मात् वादिनात् धर्मसंस्थितः ॥
सम्यक् कालप्रयोगेण सन्निपातेन वा पुनः ।

* युक्तमन्तस्थिरो रति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† अन्तरणे सरेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ अन्तवन्तरति पुस्तकान्तरे पाठः ।

नववर्षसहस्राणि नववर्षशतानि च ॥
 कुबेरभवनं गत्वा मोदते ऽसौ यदृच्छया ।
 कुबेरभवनाद्गुह्यः स्वच्छन्दो धनवान् सुखी ॥
 सम्यक्कालनिपातेन भम लोकाय गच्छति ।
 नर्त्तनस्य प्रवक्ष्यामि तच्छृणु त्वं वसुधरे ॥
 मनुजा येन गच्छन्ति क्लिप्त्वा संसारसागरं ।
 त्रिंशद्द्वर्षसहस्राणि त्रिंशद्द्वर्षशतानि च ॥
 पुष्करद्वीपमासाद्य स्वच्छन्दगमनीभवेत् ।
 नृत्यंस्तु जागरे देवि मम कर्मपरायणः ॥
 रूपवान् गुणवाञ्छैव शीलवाञ्छैव जायते ।
 मद्भक्तञ्चैव जायेत संसारादपि मुच्यते ॥
 यस्तु जागरणे नृत्ये मम कर्मपरायणः ।
 जम्बूद्वीपं समासाद्य राजराजः स जायते ॥
 सर्वकर्मसमायुक्तो रक्षिता पृथिवीतले ।
 मद्भक्तञ्चैव जायेत शूरः सर्वगुणान्वितः ॥
 उपगच्छेत्तु मामन्तेः मम कर्मपथे स्थितः ।
 एतत्ते कथितं भूमि गीतवादित्रनर्त्तनं ॥
 मद्भक्तानां सुखार्थाय सर्वसंसारमोक्षणं ।

इह खलु निखिलस्मृतिपुराणनिगमाद्विहितमेकादशौव्रतं ।

तत्र वहवो विप्रतिपद्यन्ते ॥

* उपमन्त्रमामन्त्रे इति पञ्चकान्तरे पाठः ।

† एकादशौव्रतमिति विधेयमित्येके । उपमन्त्रमिति न्यपरे । व्रतत्वे च नित्यं
 काम्यमिति द्वेषास्थितिः । तत्र नित्यमधिक्यं कालाचनद्वयौ इति पञ्चकान्तरे पाठः ।

एकादश्यामुपवसेत्पक्षयोरुभयोरपि ।

विष्णुरहस्यस्कन्दपुराणयोः ।

उपोष्यैकादशीं सम्यक् पक्षयोरुभयोरपि ।

गरुडपुराणे ।

उपोष्यैकादशीं नित्यं पक्षयोरुभयोरपि ।

सनत्कुमारप्रोक्तं ।

एकादशीं सदापोष्या पक्षयोः शुक्लकृष्णयोः

तथा । एकादश्यामुपवसेत् न कदाचिदतिक्रमेत् ॥

मत्स्यभविष्यपुराणयोः ।

एकादश्यां निराहारो यो भुङ्क्ते द्वादशीदिने ।

शक्ते वा यदिवा कृष्णे तद्ब्रतं वैष्णवं महत् ॥

आग्नेयपुराणे ।

एकादश्यां न भुञ्जीत व्रतमेतद्धि वैष्णवं ।

उपवासपरमिदं वचनं युगलं, व्रतमिति वाक्यशेषात् ॥

विष्णुधर्मोत्तरे कूर्मपुराणे च* ।

न शङ्के न पिबेत्तृतीयं न खादेत् कूर्मशूकरौ ।

एकादश्यां न भुञ्जीत पक्षयोरुभयोरपि ॥

नारदीयपुराणे ।

परहोरटतेत्यथं मृगारिरिपुमस्तके ।

अभुक्त्वा दशमीं लोका ममत्वेन विवर्जिताः ॥

प्राणवाधेषु कार्येषु देवेशश्चिन्तयतां हरिः ।

* पद्मपुराणेष्वेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

रटन्तीह पुराणानि भूयो भूयो वरानने ॥
न भीक्तव्यं न भीक्तव्यं सस्त्राप्ते हरिवासरे ।

विष्णुस्मृतौ ।

एकादश्यां न भुञ्जीत कदाचिदपि मानवः ।

एतान्यपि वचनानि नादित्यभीक्षतेति च वदत उपवासव्रत
पराख्येव क्वचित् क्वचिदुपवासप्रतिपादनाच्च ।

अर्थविधौ मूलभूतवेदान्तर कल्पनाप्रसङ्गात्तन्नामप्रसङ्गाच्च
एकमूलत्वाय लक्षणात्वमुतैव ।

यद्देकादश्यामुपवसेदित्युपक्रम्य एकादश्यां न भुञ्जीतेति देव-
लादिवचनं तदुप संहारार्थं गुणविधानार्थं वा तथा चोपवास-
प्रकरणपठनमप्युचितं* भवति ।

तेन स्वतन्त्रं नार्थविधिपरमेव मादिवचनमितिमतमपास्तं ॥

तथाच सिद्धोपवासीव्रतरूप. सच नित्यः फलाश्रवणात्
कल्पनायां प्रमाणाभावात् विहितत्वाच्च सदाकरणं न कदाचिद-
तिक्रमेदिति वचनात् अकरणे प्रत्यवायस्मरणाच्च ।

तथा हि सनत्कुमारप्रोक्ते ।

न करोति हि यो मूढ एकादश्यामुपोषणम् ।

स नरोनरकं याति रौरवं तमसाहृतम् ॥

तथा । एकादश्यां मुनिश्चेष्ट यो भुङ्क्ते द्विजपुङ्गवः† ।

* सद्युचितमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† द्विजजन्मवातिनि पुस्तकान्तरे पाठः ।

प्रतिपासं स भुङ्क्ते च मत्सं कुडीसमुद्रवमिति* ॥
 निष्कृतिर्ब्रह्मप्रोक्ता धर्मशास्त्रे मन्वीषिभिः ।
 एकादशब्रह्मकामस्य निष्कृतिः कापि नोदिता ॥
 मद्यपानान्मुनिश्रेष्ठ पापी च नरकं व्रजेत् ॥
 एकादशब्रह्मकामस्तु पिबेभिः सह मज्जति ॥
 नारदीये ।

सोऽग्राति पार्थिवं पापं योऽग्राति मधुभिर्दिने ।
 तथा । यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यासमानि च ॥
 असमाश्रित्य तिष्ठन्ति संप्राप्ते हरिवासरे ।
 तानि पापानि बाध्नाति भुञ्जानो हरिवासरे ॥
 स्वाम्दपुराणे ।

मादृहा पिबेहा चैव भादृहा गुहृहा तथा ।
 एकादशां तु भुञ्जानो विष्णुलोकात् च्युतो भवेत् ॥
 स्त्रीकृतव्रतपरित्यागे च पापं कृतं ।
 विष्णुरहस्ये ।

समादाय विधानेन द्वादशीव्रतसुप्तमम् ।
 तस्य भङ्गं नरः कृत्वा रीवरं नरकं व्रजेत् ॥
 तथा द्वादशी व्रतमादाय व्रतभङ्गं करोति यः ।
 द्वादशाम्द्व्रतं चीर्षमफलं तस्य जायते ॥
 पंरिगृह्य व्रतं सम्यगेकादशादिकं वदि ।
 न समापयते तस्य गतिः पापा गरीयसी ॥

* पृथीसमुद्रवमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

* पाताचेति पुस्तकान्तरेपाठः ।

नारदीये ।

एकादश्यां विना रण्डा यतिषु सुमहामते ।

पच्यते ह्यन्यतामित्रे यावदाभूतसंग्रवम् ॥

कात्यायनः ।

विधवा या भवेन्नारी भूष्नीतैकादशीदिने ।

तस्यास्तु सुकृतं नश्येत् ब्रह्महत्यादिने दिनेः ॥

विष्णुरहस्ये ।

द्वादशी न प्रमोक्तव्या यावदायुःसुवृत्तिभिः ।

धन्निपुराणे ।

उपोष्यैकादशी राजन् यावदायुःसुवृत्तिभिः ।

विष्णुरहस्यस्कन्दपुराणयोः ।

परमापदमापन्नोर्ध्वेवा समुपस्थिते ।

सूतके सूतके वापि न त्याज्यं द्वादशीव्रतम् ॥

ऋष्यशृङ्गः ।

एकादश्यां न भूष्नीत नारी दृष्टे रजस्यपि ।

पुस्तस्योऽपि ।

संप्रवृत्तेऽपि रजसि न त्याज्यं द्वादशीव्रतम् ।

सूतकादानुपवासमात्रं कार्यं न पुनरर्चनादि ।

विष्णुरहस्यस्कन्दपुराणे ।

सूतकोऽपि नरः काला प्रणम्य मनसा हरिं ।

एकादश्यां न भूष्नीत व्रतनिषं न लुप्यते ॥

सूतकोऽपि न भूष्नीत एकादश्यां सदा नरः ।

• भूष्णन्वेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

द्वादश्यां तु समश्रीयाकोवा विष्णुं प्रथम्य च ॥
 केचित्तु पुनवतोऽद्विषः कृष्णैकादश्यामुपवासे नाधिकार
 इत्याहुः ।

यदाह पैठीनसिः ।

कृष्णैकादश्यां संक्रान्त्यां यद्वये चापि वा पुमान् ।
 उपवासं न कुर्वीत सर्वबन्धुधनक्षयात् ॥
 संक्रान्त्यां कृष्णपक्षे च रविशुक्लदिने तथा ।
 एकादश्यां न कुर्वीत उपवासश्च पारथम् ॥

गीतमः ।

आदित्ये ऽहनि संक्रान्तावसितैकादशीसु च ।
 व्यतीपाते कृते त्राघ्ने पुषी नोपवसेद्गृहो ॥

जात्यायनः ।

एकादशीषु कृष्णासु रविसंक्रमणे तथा ।
 चन्द्रसूर्योपरागे च न कुर्यात् पुत्रवान् षड्ही ॥

उपवासमितिशेषः ।

नैतन्नाधीयः, कृष्णैकादशादिनिमित्तकाभ्योपवासप्रतिषेध
 परत्वाद्देशां वचनानां ।

तथा च जात्यायनः ।

तन्निमित्तोपवासस्य निषेधोऽयमुदाहृतः ।
 प्रसुकान्तरयुक्तस्य न विधिर्न निषेधनम् ॥
 स्मृतिमीमांसायां जैमिनिः ।
 तन्निमित्तोपवासस्य निषेधोऽयमुदाहृतः ।

नानुवङ्गहतो ग्राह्योयतो नित्यसुपीषचम् ॥

अयमर्थः ।

तन्निमित्तस्य भानुद्दिनदिनादिनिमि

तस्वीपवासस्वायमुदाहृतोनिषेधः ॥

नतु भानुवाराद्यनुपल्लेकाद्बुपवास विषयः ।

यत एकादश्यासुपीषचं नित्यमवश्यकर्तव्यं

तथा विहितं, न च तस्य निषेधः कल्प्यते विकल्पापत्तेः ।

न च संक्रान्त्यादीनामेकादशीविशेषत्वं ।

चन्द्रसूर्यग्रहणसाहचर्यात् असमानविभक्तिनिर्देशात् तथा
पदप्रयोगाच्च संक्रान्त्यादियुक्ताया मध्ये काश्यपवासविधानाच्च ।

तथा सनत्कुमारप्रोक्ते ॥

भानुवारेण या युक्ता तथा संक्रान्तिसंयुता ।

एकादशी सदोपीष्या सम्बन्धसम्पत्करो तिथिः ।

कात्यायनः ।

संक्रान्ती रविवारो वा एकादश्यां यदा भवेत् ।

उपीष्या सा मन्त्रापुष्पां सर्वपापहरा हि सा ॥

तथा । व्यतीपातो वैष्टतिर्वा एकादश्यां यदा भवेत् ।

उपीष्या सा तु विज्ञेया पुत्रसम्पत्विषङ्गिणी ॥

आहदिनेषु विशेषमाह कात्यायनः ।

उपवासी यदा नित्यं आहं नैमित्तिकं भवेत् ॥

उपवासं तदा कुर्यादात्राय पिष्टसेवितं ।

असौत्रव गृह्णितः पुत्रवती वक्त्राङ्गदादेः

कृष्णैकादशपवासश्रवणं ।

किञ्च । स्त्रीकृतउभयैकादशीव्रतोपावसः पुत्रजनानि कृष्णै-
कादशीपरित्यागप्रसङ्गः ।

तथा च । समादाय विधानेन द्वादशीव्रतमित्यादिवचन
विरोधात् ।

अपरन्त्वे कादश्यां न भुञ्जीत पक्षयोर्द्वयोरपि ।

वनस्थयतिधर्माऽयं शुकामिवं सदा गृही ॥

गौतमवचनबलाद्गृहीतः ।

शुक्लायामेवोपवासः तद्गतवैष्णवं महद्विदितिवचनविरोधः
स्यात् ।

अपरथा वैष्णवोवाच शैवो वा कुर्याद्वैकादशीव्रतमिति मन्त्र-
पुराणवचनविरोधः स्यात् ।

अतः सर्वेषां उभयैकादशपवासेऽधिकारइति युक्तम् ।

तथा च स्कान्दकूर्मपुराणयोः ।

यथा शुक्या तथा कृष्णा न विभेद्योस्ति कश्चन ॥

सनत्कुमारप्रोक्ते ।

यथा शुक्या तथा कृष्णा यथा कृष्णा तथेतरा ।

नारदीयपुराणे ।

तस्मात् त्रयो पुरस्तात् कृष्णे शुक्ये हरिर्दिने ।

पूजयेज्जगतां वीज सोपवाशोजनार्दनं ॥

सद्योगैर्यत्पदं सांख्यैः प्राप्यते वा नथा द्विज ।

अनायासेन यत् प्राप्यं पदं हरिर्दिनामुगैः ॥

तस्य देवस्य नेद्विष्टं मूर्तिर्द्वयमिदं स्मृतं ।

पावकीं ब्रह्मण्येति तच्च ज्ञेयानुभावतः ॥

भविष्यत् पुराणे ।

शुक्ला वा यदि वा कृष्णा विशेषेणास्ति कृष्णः ।

सौरधर्मेषु, एकादशौ सदोषोष्ठा शुक्ला कृष्णा तथैव च ।

मत्स्य पुराणे ।

यथा सुपूजितोगोरः कृष्णो वा वेदविद्विजः ।

सन्तारयति दातारमेकादशौ तथा स्मृते ॥

तैत्तिरे शुक्लेतराणां वै तिस्रानां सट्त्रयं यथा ।

कृष्णायाश्च सितायाश्च गोर्गन्धं सट्त्रयं यथा ॥

द्वादश्याः सट्त्रयं तद्यत् पुण्यं स्वाङ्कुलकृष्णयोः ।

दर्शश्च पूर्णमासी च पुण्यतस्तु यथा समे ॥

तथा तथा सिते पुण्ये द्वादशौ सुनिभिः स्मृते ।

यद्योत्तरदक्षिणश्च अयने च प्रकीर्तितम् ॥

तुल्यं पुण्यमवाप्नोति द्वादशौ शुक्लकृष्णयोः ।

पद्म पुराणे ।

सोम सूर्यग्रहौ पुण्यो तथैव सुनिभिः स्मृता ॥

तथा तथा सिते पुण्ये द्वादश्यां धर्मतः समे ।

यथा विष्णुः शिवश्चैव सम्पूज्यौ सुनिभिः स्मृता ॥

तथा पूज्यतमि प्रोक्ते द्वादशौ शुक्लकृष्णके ।

इति शुक्लकृष्णविवेके पापस्मरणात् ।

तथा च धर्मपुराणे, विष्णुधर्मोत्तरे च ।

सुब्रह्महा सुरापः स्वात् कृतज्ञो शुद्धतल्पगः ।

स्कन्दपुराणे ।

सुवह्महा सगोब्रह्म सुरापो गुरुतल्पगः ।

कालिकापुराणे ।

सर्व्वेषामिह पापानामाश्रयः स तु कौर्त्तित इति
तेषामुत्तरार्ध' विवेचयति ।

यथ मोहादेकादशौ शुक्लकण्ठे सिताक्षिते ।

भविष्यत् पुराणे ।

एवं ज्ञात्वा सदोषोष्वा हादशौ शुक्लकृष्णजा ।

तयोर्भेदं न कुर्व्वीत तद्भेदाक्षरकं व्रजेत् ॥

गारुडपुराणे ।

शुक्ला वा यदि वा कृष्णा यावदाङ्गतसंभव' ।

अथैकादशीव्रताकरणेन निन्दा । सनत्कुमारप्रोक्ते

शुक्ला वा यदि वा कृष्णा विशेषो नास्ति कश्चन'

विशेषं कुरुते यस्तु पितृहा स तु कौर्त्तितः ॥

सनत् कुमारप्रोक्ते ।

एकादशोर्हयोर्यस्तु विशेषं कुरुते नरः ।

तस्योच्चारं न पश्यामि यावदाङ्गतसंभवम् ॥

अथैकादशीव्रताकरणनिन्दा । सनत्कुमारप्रोक्ते ।

न करोति हि यो मूढ एकादश्यामुपोषणं ।

स नरोनरकं याति रौरवं तमसावृतम् ॥

तथा तथा मुनिश्चे छ योभुङ्क्ते द्विजजन्मवान् ॥

तथा । प्रतिघासं स भुङ्क्ते तु क्लिष्टं श्लादिविट्समं ।

निष्कृतिर्भयपस्योक्ता धर्मशास्त्रे सनीविभिः ॥

एकादश्यत्रकामस्य निष्कृतिः कापि नोदिता ।

मद्यपानान्मुनिश्रेष्ठ पातैव नरकं व्रजेत् ॥

एकादश्यत्रकामस्तु पितृभिः सह मज्जति ।

नारदीयपुराणे ।

सोऽत्राति पार्थिवं पापं योऽत्राति मधुभिर्हिने ।

तथा । यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यासमानि च ॥

अत्रमात्रित्य तिष्ठन्ति सम्प्राप्ते हरिवासरे ।

तानि पापान्यपाप्नोति भुञ्जानो हरिवासरं ॥

दिने च सर्वपापानि भवन्त्यत्र स्थितानि तु ।

तानि मोहेन योऽत्राति न स पापैः प्रमुच्यते ॥

तस्मादवश्यं कर्तव्या द्वादशी सोमकामजा ।

स जेवलं मलं भुङ्क्ते योभुङ्क्ते हरिवासरे ॥

स्नानपुराणे ।

मातृहा पित्रहा चैव भ्रातृहा गुरुहा तथा ।

एकादश्यां तु भुञ्जानो विश्वस्त्रीकाश्रुती भवेत् ॥

नारदीयपुराणे ।

दण्डा, यतीनामिकादशीव्रतस्त्राकरणे प्रत्यवायविशेषार्थमाह ।

एकादशीं विना दण्डा यतिश्च सुमहामते ।

पच्यते ज्ञान्धतामिश्रे यावदाहृतसंप्रवम् ॥

काल्याणनय ।

विधवा या भवेकारी भुञ्जीतेकादशीहिने ।

तस्मात्सु सुकृतं मध्येद्भूणहत्या दिने दिने ॥

स्त्रीकृतव्रतपरित्यागे पापसुकृतम् ।

विष्णुरहस्ये ।

समादाय विधानेन द्वादशीव्रतमुत्तमम् ।

तस्य भङ्गं नरः कृत्वा रौरवं नरकं व्रजेत् ॥

नद्या । द्वादशीव्रतमादाय व्रतभङ्गं करोति यः ।

द्वादशाब्दं व्रतं चीर्णमफलं तस्य जायते ॥

तथा । परिगृह्य व्रतं सम्यगेकादश्यादिकं यदि ।

न समापयते तस्य गतिः पापा गरीयसी ॥

अथास्मिन् दिने अधिकारिणमाह कात्यायनः ।

अष्टवर्षाधिकोमर्त्यो ह्यपूर्णाशीतिवत्सरः ।

एकादश्यामुपवसेत्पञ्चयोद्भयोरपि ।

नारदीयपुराणे ।

अष्टवर्षाधिकोमर्त्यो अशीतिर्न हि पूर्यते ।

यो भुङ्क्ते मामके राद्रे विष्णोरहनि पापकृत् ॥

स मे बध्यश्च दण्ड्यश्चु विवास्योदेशतः स मे ।

कात्यायनः ।

एतस्माद् कारणाद्दिप्र एकादश्यामुपोषणं ।

कुर्यान्नरोवा नारीवा पञ्चयोद्भयोरपि ॥

अत्रानुकल्पे सर्वेष्वधिकारी ज्ञातव्यः ।]

यथाह ब्रह्मवैवर्ते ।

एकादर्शीं विना विप्रं न संसाराद्दिभोक्षणम् ।

तत्राप्ययं विशेषोऽस्ति कार्यशक्तिमताश्च सः ॥

न तु देहं विदुः प्राज्ञोपीडयानो महायहात् ।

शरीरं पीडयते येन सुशुभेनापि कर्मणा ॥

अत्यन्तं तत्रकुर्वीत* अनायासः स उच्यते ।
 धर्मसाधनमाद्यं यः शरीरं बहुपुण्यकृतं ॥
 यथाकथञ्चिन्मूर्खान् पीडयेदेव हेलया† ।
 गूढग्राह्येणात्मनो यः पीडया कुरुते तपः ॥
 न स निश्चिन्मवाप्नोति न सुखं न परां गतिं ।
 अधिकारिणोऽसामर्थ्यं प्रतिनिधिमाह ।

वाराहपुराणे ।

असामर्थ्यं शरीरस्य व्रते तु समुपस्थिते ।
 कारयेद्धर्मपत्नीं वा पुत्रं वा विनयान्वितम् ॥
 भगिनीं भ्रातरं वापि व्रतमस्य न लप्स्यते ।
 शृणु योवान्यमुद्दिश्य एकादश्यामुपोषति ॥
 यमुद्दिश्य कृतो विप्रस्तस्य पूर्णफलं भवेत् ।
 कर्त्ता दशगुणं पुण्यं प्राप्नोत्यस्य न संशयः ॥

अथोपवासव्रतानुष्ठानक्रमः ।

तत्रोपवासस्य सामान्येन स्वरूपं ।

यथाह वसिष्ठः ।

उपाहृतस्य पापेभ्यो यस्तु वासो गुणैः सह ।
 उपवासः स विज्ञेयः सर्व्वभोगविवर्जितः‡ ॥

पापेभ्यो उपाहृतस्य वर्ज्येभ्यो निवृत्तस्य, गुणैर्विष्णुनामकीर्त्त-
 नादिभिः ।

* अत्यल्पमिति पुलकान्तरे पाठः ।

† पप वेदेकहेलयेति पुलकान्तरे पाठः ।

‡ न शरीरविशोषणमिति पुलकान्तरे पाठः ।

एतदुपवासव्रतं द्विविधं नित्यं फलार्थञ्च ।

नित्ये तु यथाकथञ्चिदेकादश्यां भोजनद्वयपरिहाररूपेणोप-
वासव्रतेन प्रत्यवायपरिहारः ।

तथाच ब्रह्मवैवर्ते ।

इति विज्ञाय कुर्वतावश्यमेकादशीव्रतम् ।

विशेषनिग्रमाशक्तोऽहोरात्रं भुक्तिवर्जितः ॥

निगृहीतेन्द्रियः अहासहायोविष्णुतत्परः ।

उपोष्यैकादशीं पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥

कात्यायनश्च ।

अथ नित्योपवासी चेत्सायम्प्रातर्भुजिक्रियां ।

सप्तजन्मेति मान्देवि संप्राप्ते हरिवासरे ॥

अथ फलार्थमुपवासव्रतस्वरूपं तत्रैवाह ।

शक्तिमांस्तु पुनः कुर्यान्नियमं सविशेषणं ।

सायमाद्यन्तयोरङ्गोः प्रातःसायञ्च मध्यमे ।

उपवासफलं प्रेष्यज्ञात् भक्तचतुष्टयम् ॥

इति नित्यकाम्ययोरुपवासव्रतयोरन्यतरमारम्भमाणः प्रथम-

द्दशम्यां भोजनानन्तरं दन्तधावनं कुर्यात् ।

तदाह । दशम्यां दन्तकाष्ठेन जिह्वां लेढि[†] यथायथा ।

हादशीनिग्रमार्थाय निराशः स्योद्यमस्तथा ॥

निश्चार्जयति तत्पापं तटस्थं दीनमानसः ।

अभक्तकर्म्या यद्याति पातकी वैष्णवं पदम् ॥

० नर्भक्तचतुष्टयमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† जिह्वामिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ततो दशम्यां रात्रौ नियमग्रहणाय सङ्कल्पदुर्व्यात् ।

ब्रह्मवैवर्ते ।

प्राप्ते हरिदिने सम्यक् विधाय नियमं निशि ।

दशम्यामुपवासस्य प्रकुर्याद्दैव्यं व्रतम् ॥

सङ्कल्प मन्त्रहेतु दैवतान्याह ।

एकादश्यां निराहारः स्थित्वाहमपरेऽहनि ।

भोष्यामि पुण्डरीकाक्ष तारणं* मे भवाच्युत ॥

इति संकल्पं विधाय एकादशीदिने देवस्य पुष्यमण्डपं
विरचयेत् ।

यथाह ब्रह्मपुराणे ।

देवस्योपरि कुर्वीत अथवा सुसमाहितः ।

नानापुष्पैर्भूमिश्रेष्ठा विचित्रं दुष्यमण्डपं ॥

कृत्वा चावरणं पद्मज्जागरं कारयेन्नशि ।

एवं मण्डपं विधाय रात्रौ देवं पूजयेत् ।

तथा भविष्यत्पुराणे ।

एकादशुपवासेन रात्रौ संपूजयेत्हरिं ।

तां च रात्रिं यथाशक्ति पुराणश्रवणादिना ॥

नीत्विति शेषः ।

ब्रह्मवैवर्ते ।

तस्माच्छुद्धां पुरस्कृत्य शुक्लां कृष्णाञ्च द्वादशीम् ।

संप्राप्य पूजयेद्देवं सोपवासी जनार्दनम् ॥

* शरच्च मे भवाच्युतेति पुष्पकान्तरे पाठः ।

ब्रह्मपुराणे । व्यास उवाच ।

एकादश्यामुभे पक्षे निराहारः समाहितः ।
 ज्ञात्वा सस्यन्विधानेन सोपवासो जितेन्द्रियः ॥
 सम्पूज्य विधिवत् विष्णुं श्रद्धया सुसमाहितः ।
 पुष्यैर्गन्धैस्तथाधूपैर्दीपैर्नैवेद्यकैः परैः ।
 उपवासैर्बहुविधैर्जप्यहोमप्रदक्षिणैः ॥
 स्तोत्रैर्नानाविधैर्दिव्यैर्गीतवाद्यमनोहरैः ।
 दण्डवत्प्रणिपातैश्च जयशब्दैस्तद्योत्तमैः ॥

एवं संपूज्य जागरं कुर्यात् ।

अत्रैवाह । एवं संपूज्य विधिवद्वाचो कुर्यात् प्रजागरं ।

अत्रैवाह ।

कथां च गीतिकां विष्णोर्षाहयन्विष्णुपरायणः ॥
 याति विष्णोः परं स्थानं नरोनास्यत्र संग्रयः ।
 कथां च वासुदेवस्य गीतकं वापि कारयेत् ।
 ध्यायन् पठंस्तुवन् देवं पूजयेद्भजनीं बुधः ॥

एवं जागरं निर्वर्त्य द्वादश्यां प्रभाते ज्ञात्वा विष्णुं संपूज्य
 उपवासं समर्पयेत् ।

अज्ञानतिमिरान्धस्य व्रतेनानेन केशव ।

प्रसीद सुसुखो नाथ ज्ञानदृष्टिप्रदो भव ॥

इति मन्त्रेण देवाय उपवासं संकल्पयेत् ततः पारणं कुर्यात् ।

तथा । पारणन्तु ततः कुर्याद्यथासम्भवमार्गतः ।

एतच्च पारणं तुलसीमित्रं कुर्यादित्याह ।

स्कन्दपुराणे ।

कृत्वा वै वोपवासन्तु योऽभ्राति द्वादशीदिने ।

नैवेद्यं तुलसीमित्रं हृत्याकोटिविनाशनम् ॥

एवं दशमीमारभ्य पारणान्तं सर्व्वं नियमयुक्तं व्रतं निवर्त्तयेत् ।

ते च नियमा उच्यन्ते विष्णुधर्मीक्षरे ।

क्षमा सत्यं दया दानं शौचमिन्द्रियनिग्रहः ॥

शिवपूजाग्निहोत्रञ्च सन्तोषास्तेयभावनाः ।

सर्व्वव्रतेश्चयं कर्मसामान्यं दशधा स्मृतः ॥

तान्याह मनुः ।

विहितस्यानुष्ठानमिद्रियाणामनिग्रहः* ।

निषिद्धसेवनं नित्यं वर्जनोयं प्रयत्नतः ॥

कूर्मपुराणे ।

कांस्यं माषं मसूरञ्च चणकं कोरदूषकान् ।

शाकं मधु पराजञ्च वर्जयेदुपवसन्निति ॥

मत्स्यपुराणे ।

कांस्यं मांसं मसूरञ्च क्षौद्रं तैलं वितथभाषणम् ।

व्याग्रामञ्च प्रवासञ्च दिवास्त्रप्रमथाञ्जनम् ॥

शिलापिष्टं मसूरञ्च द्वादशैतानि वैष्णवः ।

त्यजेदिति शेषः ।

हारीतः ।

पतित, पाण्डुखण्डि नास्त्रिकादिसम्भाषणानृत्यूतादिकमुप-
वासद्दिने वर्जनोयमिति ।

● मन्वितस्य च भेषजनादिति पुस्तकाकारे पाठः ।

विष्णुधर्मोत्सरे ।

तज्जप्यजापी तद्भानतत्कथाश्रवणादिकं ।

तदर्चनञ्च तन्नामकीर्त्तनश्रवणादयः ।

उपवासकृतोद्धृते गुणाः प्रोक्ताः मनीषिभिरिति ॥

विष्णुरहस्ये ।

प्रह्लावाच ।

मनसा कर्मणा वाचा पूजयेन्नरुद्ध्वजं ।

कुर्यान्नरस्त्रिषवणं ब्रह्मक्तिर्जितेन्द्रियः ॥

नामावलोकनालापं* विष्णोः कुर्याद्ब्रह्मनिर्गं ।

भक्त्या विष्णोस्तुतिर्वाष्वासृष्टावाहं विवर्जयेत् ॥

सर्वसर्वदयायुक्तः शान्तिवृत्तिरहिंसकः ।

सुप्रीवा शयनस्थो वा वासुदेवं प्रकीर्त्तयेत् ।

स्मृत्यालोचनगन्धादिलेपनं† परिकीर्त्तनम् ॥

पन्न्यस्य वर्जयेत्सर्वं भंगानां चाभिकांक्षणम् ।

गात्राभ्यङ्गं शिरोऽभ्यङ्गन्ताम्बूलं सविलेपनम् ॥

व्रतस्थोवर्जयेत्सर्वं यच्चान्यञ्च निराकृतम् ।

व्रतस्थो न गृहे किञ्चिद्विकर्मस्थैर्नचालपेत् ।

देवतायने तिष्ठन् न गृहस्थसरेद्भूतम् ॥

ब्रह्मपुराणे ।

उपवासे तथाश्राद्धे नखादेहन्तधावनम् ।

दन्तानां काष्ठसंयोगी हन्ति सप्त कुलानि वै ॥

* नामानेवलेवालापमिति पुलकान्तरे पाठः ।

† गन्धादिस्नानमिति पुलकान्तरे पाठः ।

विष्णुधर्मेषु ।

पान्थिभिरसंख्यिं ह्यसम्भ्राण्यमेव च ।

विष्णीराराधनं यत्र नरैः कार्यमुपोषितम् ॥

धनुपुराणात् ।

इत्योषधं परावच पुनर्भोजनमैधुनम् ।

शौद्रं तिस्रामिकंचैव द्वादशं स्म कर्जयेत् ॥

यते नियमा ह्यल्पपारशान्तमेव विधेयाः ।

पारथेनैव व्रतवरिसमाप्तेः ।

अत उर्ध्वं यथेच्छया पारथेन यथा कचीति कात्यायनीकस्वाम् ।

उपवासव्रतामस्तस्य नक्तादिकमाह ।

मन्वित्पुराणे ।

एकादश्यामुपवसेत्तत्र वापि समाचरेत् ।

कूर्मपुराणे ।

एकभक्तेन नक्तेन शीणवृक्षात्तुरीक्षिपेत् ।

नातिक्रमेद्वादश्यां तु उपवासव्रतेन तु ॥

नारकण्डेयपुराणे ।

एकभक्तेन नक्तेन तथैवायाचितेन च ।

उपवासेन दानेन न निर्हादश्रिकी मयेत् ॥

नित्यैकादश्रीविधिः । वक्ष्येऽवच ।

अकामिन कथं ब्रह्मन् द्वादशीषु जनार्दन ।

पूजनीशोद्विजयेष्ठ तस्मैचाक्षयपुच्छतः ॥

मार्कण्डेयउवाच ।

धार्मशीर्षस्य मासस्य श्रुत्वा सर्वं त्वया बुध ।
 अश्रीयात्प्राप्तिमासं बं कुर्यात्सर्वकारं व्रती ॥
 नामानि देवदेवस्य केशवस्य पृथक् पृथक् ।
 लक्ष्मीऽनन्तोऽश्रुतचक्री वैकुण्ठोऽथ जनार्दनः ॥
 लपेन्द्रो यज्ञपुरुषो वासुदेवस्तथा हरिः ।
 योगेशः पुण्डरीकाक्षोमासनामान्यनुक्तमात् ॥
 एतानि प्रातश्चर्याय यः स्मरेत् पुरुषः वदा ।
 अपि दुर्गतिक्लास्तस्य पितरः सर्वमाद्भुयुः ॥
 तिस्रषास्रं द्वादशकं योदद्यात् प्रत्यहं द्विजे ।
 गावश्च कपिला दद्यात् अपेत् नामानि वै समाः ॥
 मासोपवासिनां पुष्पां बन्धनां तीर्थशयिनां ।
 पूज्यते देवदेवस्य प्रत्यहं मासनामभिः ॥
 प्रतिमासं सनात्सर्वं पूजादानादिकं हरेः ।
 नामयस्मिन् मासे च यत् प्रोक्तं तेनैवेत्यर्थः ।
 कृत्वान्ते च ततो हीमः कार्यस्तेवैवतापदे ।

अन्ते व्रतान्ते ।

अग्निप्रदयथाद्दूहं द्वादशैताननुस्मरेत् ॥
 द्वादशाक्षर्यपत्रे पु स्वापवेदुक्ततण्डुलैः ।
 भो तस्मै नमः आयातु स इत्यावाहयेत् पृथक् ।
 संख्याप्याग्निं ततः प्राच्यां ध्यायेन्नानात्मसंमुखान् ।
 आसनं पादमर्च्यञ्च गन्धपुष्पाञ्चानानि च ।

धूपदीपांश्च वासांसि होमशेषं समापयेत् ॥
 दत्त्वा वाचमनं पश्चाद्दोमशेषं निवेदयेत् ।
 अष्टाष्टसमिधः पूर्वं हुत्वाष्टौ च घृताहुतीः ॥
 कशराहुतिकैका च यवाद्याष्टौ तिलाहुतीः ।
 देवोपहारशेषेण दत्त्वा स्विष्टकृतं ततः ॥
 अग्निप्रतिष्ठान्तहोमं कृत्वा देवेभ्य

आसनाद्याचमनं दत्त्वा शेषहोमं समाप्य हुतशेषं देवेभ्यो-
 निवेद्य तच्छेषेण स्विष्टकृतं दद्यात् ।

पूर्णाहुत्या भवेन्मन्त्रस्तद्विष्णोः परमं पदम् ।
 एवं कृते तु होमान्ते गाः कृष्णा द्वादशाष्ट वा ॥
 षट्चतस्त्रीऽथ वा देया एकावापि पयस्विनी ।
 हेमशृङ्गीं रौप्यखुरां सघण्टाभरणाम्बराम् ॥
 कांस्यपृष्ठां तथा दीग्भ्रीं सुवर्णान्तरदक्षिणाम् ।
 सवत्सां द्विजमुख्याय पूजयित्वा समर्पयेत् ॥
 कृष्णभक्ताय शान्ताय विधिन्याय महात्मने ।
 ते प्रीयन्तामिति प्रोक्त्वा देवहादशमासिकाः ॥
 मामेवमुत्तरस्वेतिचेत्यायाञ्च प्रतिशुद्धाः ।
 मासि मासि च दत्तेषु तिस्रपात्रेषु तैर्घटैः ॥

सहायं तृतीया न केवलमस्मिन् दाने प्रतिमासं घटदानेऽप्ययं
 मन्त्रइत्यर्थः ।

तस्मिन् काले प्रदातव्यास्ते घटा मासनामभिः ।

समानं तद्गतं पुण्यं तस्मादर्घ्यं समर्पयेत् ॥

चर्चयेति शेषः ।

समासेस्मिन्* व्रते भूमे यद्भीष्टमवाप्यते ।
 महारौरवपूर्णेभ्यो नरकेभ्योऽथ तारयेत् ॥
 स्वपितृस्तपतेर्याभ्यो न स्यात् कल्पशतैरपि ।
 ब्रह्महत्यादिपापानामश्रमेधैर्भवेत् स्वयः ॥
 स्वकृतानां न वै भूमे कृतानां पितृभिःस्वकैः ।
 अश्रमेधाहयायादाद्गतमेतद्विशिष्यते ॥
 पितृणामात्मनश्चैव तारकं सर्वकामदम् ।
 नरकस्याथ ये केचिद्भवासे रणे च ये ।
 ये बाह्ये नरणेनापि भूत प्रेतत्वमागताः ॥
 नेच्छन्ति सन्ततिं ये च मुच्यन्ते ते च किल्बिषैः ।
 उदारयेत्पितृगणान् दशपूर्वान् दशापरान् ।
 आत्मानमेकविंशच्च कृष्णद्वादश्युषणात् ॥
 इति वाराहपुराणोक्तं कृष्णद्वादशीव्रतम् ।

अथ कृष्णद्वादशीव्रतम् ।

—000—

युधिष्ठिर उवाच ।

कृष्ण कृष्ण न मे स्याता द्वादशी केन हेतुना ।
 किं सा न ते प्रिया देव किं वाख्यातुं न युज्यते ।

कृष्ण उवाच ।

न कस्यचिन्मयाख्यातं गुह्यमेतदनुत्तमं ।

* समासेस्मिन् इति पुलकान्तरे पाठः ।

महापुण्यप्रदं पार्थ महापातकनाशनम् ॥
 बाण्डितार्थप्रदं कृष्णं श्रुतं पापापहारकम् ।
 श्रेष्ठं व्रतानां सर्वथासुभवहादशीव्रतम् ॥
 तस्मिंश्च सम्प्रवक्ष्यामि समाहितमनः शृणु ।
 ततोऽपराह्णे सप्तम्यं कृतसम्बन्धादिकः शुचिः ॥
 प्राप्यान्नां वेदविदुषः पुराणान्नात् जितेन्द्रियात् ।
 संपूज्य देवदेवशन्दन्तधावनपूर्वकम् ॥
 कुर्व्याच्च नियमं पार्थ गुरुदेवान्निसन्निधौ ।
 एकादश्यां निराहारः शिवत्वाहमपरेऽहनि ॥
 भोज्यामि पुण्डरीकाक्षं शरभं मे भवाश्रुत ।
 इत्युक्त्वाथ गुरुवत्त्वा पूजयित्वा जनार्दनं ॥
 भूमौ स्वपेज्जितक्रोधः शब्दादिविषयोऽभितः ।
 ततः प्रभाते विमले केशवार्पितमानसः ॥
 केशवेति तदा वाक्यं श्रुतप्रखलितदिशु ।
 पावण्यादिभिरालापं दर्शनस्पर्शनादिना ॥
 त्वजेहिनत्रयं पार्थ व्रतवैकल्यकारकम् ।
 ततोमध्याह्नसमये नद्यादौ विमले जले ॥
 ज्ञानं कुर्व्याज्जितक्रोधः पञ्चगव्यपुरःसरं ।
 ज्ञानं क्लृप्तैकचित्तस्तु प्रपूतात्मा दयान्वितः ॥
 आदित्याय नमस्कृत्य केशवं कारवं व्रजेत् ।
 उत्तीर्य परिधायीतकुक्कुटैश्चिद्रे च वाससी ॥
 पिष्टदेवमनुष्याणां दत्त्वातोयाञ्जलींस्ततः ।
 स्ववर्षाचारविधिना कृतकृत्योऽगृहं व्रजेत् ॥

पूजयेत्तत्र गोविन्दं केशवेति जपन् बुधः ।
 पुष्पधूपैस्ताद्यादीपैर्नैवेद्यैर्विविधैरपि ।
 गीतवाद्यैः कक्षाभिश्च जागरं कारयेन्निधिम् ॥
 कुम्भं संस्थापयित्वा तु रत्नगर्भं सकाञ्चनम् ।
 ह्यदितं वस्त्रयुग्मेन श्रितचन्दनचर्चितं ॥
 गन्धमाख्यसमायुक्तं दीपैर्द्विस्तु खलं कृतम् ।
 कुम्भस्यैकाङ्गदेशे तु श्रितचन्दनचर्चिताम् ॥
 प्रतिमां देवदेवस्य शङ्खचक्रगदाभृतम् ।
 कृत्वाभ्यर्च्य यथान्यायं प्रभाते विमले सति ॥
 हादृश्यां कृतकृत्यस्तु समभ्यर्च्य जगद्गुरुम् ।
 विप्राय दद्यात् कलशं दक्षिणोपस्करान्वितम् ॥
 सञ्जीव्य विप्रमुखाय दद्यात्कृत्वा च दक्षिणां ।
 भृत्यान् सञ्जीजयित्वा तु दत्त्वा गोषु गवाङ्गिकं
 पञ्चगव्यन्तु सम्प्राश्य स्वयं भुञ्जीत वाग्यतः ।
 अनेन विधिना मासि तस्मिन् कृत्वा मुपोषयेत् ॥
 हादृशीं पुरुषव्याघ्रं ध्यायन् सङ्कर्षणं विभुं ।
 प्राग्बल्लवं ततः कृत्वा ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 भोजयित्वा द्विजत्रेष्ठं दद्यात्तेभ्यश्च दक्षिणां ।
 भुञ्जीत वाग्यतः पश्चात् पञ्चगव्यहुताशनं ॥
 एवं पौषे तु सङ्कल्प्य हादृश्यां शुक्लपक्षतः ।
 नारायणं जपन् प्राङ्गः सर्वं प्राग्विधिमाचरेत् ॥
 ज्ञानप्राशनदानानि भोजनं तद्दाचरेत् ।
 ब्राह्मणेभ्यस्ताद्या दद्याद्दक्षिणां यदुनन्दनम् ॥

नारायणः प्रीयतां मे इत्याचार्यं क्षमापयेत् ।
 अथैव पुष्यमासस्य द्वादश्यां कृष्णपक्षतः ॥
 वासुदेवेति सम्पूज्य प्रागुक्तविधिना नृप ।
 देवदेवं जगन्नाथं सर्वकारणकारणम् ॥
 ततो दद्याद्द्विजातिभ्यो दक्षिणां अहयान्वितः ।
 भोजनं पूर्व्ववत् कुर्व्याद्दानं पूजादिकं ततः ॥
 शुक्लायां माघमासस्य द्वादश्यां तु विश्राम्यते ।
 माघवेति जपनाम पूजयेत् पूर्व्ववद्वरिं ॥
 रात्रौ जागरणं तद्वत्पुष्पधूपप्रदीपकैः ।
 पूजयित्वा-क्षिप्रं चैतान् माघवः प्रीयतामिति ॥
 प्राशनादिकमेवान् पूर्व्वोक्तविधिना स्मृतम् ।
 अथैवः माघमासस्य द्वादश्यां कृष्णपक्षतः ॥
 प्रद्युम्नेति जपन् प्राञ्जः सर्व्वं प्राग्विधिमाचरेत् ।
 स्नानप्राशनदानानि भोजनं तद्वदेव हि ॥
 ब्राह्मणेभ्यस्तत्रा दद्याद्दक्षिणां पाण्डुनन्दन ।
 फाल्गुनामलपक्षस्य द्वादश्यां नियतः शुचिः ॥
 गोविन्देति जपन्विष्णोः पूजयेत् प्रतिमास्ररः ।
 विप्राय दक्षिणां दद्याद्गोविन्दः प्रीयतामिति ॥
 जपपूजनदानानि पूर्व्वेण विधिनाचरेत् ।
 फाल्गुनस्य तथा कृष्णद्वादश्यां नियतेन्द्रियः ॥
 अनिरुद्धेति कृष्णस्य जपन् पूर्व्ववदाचरेत् ।
 तेनैव विधिना पार्थ सर्व्वपापापहारणं ॥
 पुष्पधूपनैवेद्यैश्च गृन्धदीपादिशोभया ।

नैवेद्याद्युपचारैस्तु पूर्व्वं दानं समाचरेत् ॥
 अतिरुहः प्रीयतां मे दानकाले ह्युदीरयेत् ।
 चैत्रस्नानसप्तमे तु द्वादश्यां पाण्डुनन्दन ॥
 पञ्चमव्यजलैः स्नात्वा विष्णुनामानुक्तीर्त्तयेत् ।
 उपस्थानं तु कुर्व्वीत भास्करस्य विष्वक् ॥
 य एव भास्करो देवः स वै विष्णुः प्रकीर्त्तितः ।
 विष्णुर्भवतु सुप्रीतो देवदेवः सनातनः ॥
 भुक्तिमुक्तिप्रदानाय तव दत्तो मयाञ्जलिः ।
 इत्युच्चार्याञ्जलिं क्षिप्त्वा गन्धपुष्पाक्षतैर्युतम् ॥
 पूर्व्वं वहेवमभ्यर्च्य दानं दद्याच्च शक्तितः ।
 विष्णुर्मे प्रीयतां देवो जगद्योनिः सनातनः ॥
 अस्मिन्नासि तथा कृष्णां द्वादशीं विधिना क्षिपेत्
 ज्ञानभोजनकाले तु जपन्वै पुरुषोत्तमं ॥
 तेनैव विधिना पार्श्वे ज्ञानदानं समाचरेत् ।
 वैशाखस्यामले पक्षे द्वादश्यां विधिवत् ॥
 कृत्वा ज्ञानादिकं सर्व्वं पूजयेन्मधुसूदनम् ।
 पूर्व्वं वत् पुष्पधूपार्घ्यैर्गन्धदीपं निवेदयेत् ॥
 दक्षिणां गुरवे दद्यात् प्रीयतां मधुसूदनः ।
 इत्युच्चार्य्य महावाहो सर्व्वं निष्पादयेद्दिदम् ॥
 मार्गेश्छिन् कृष्णपक्षे तु द्वादश्यां भरतर्षभ ।
 कृत्वा प्राग्विधिना सर्व्वं जपन् देवमधीक्ष्य ॥
 पूजयन् प्रतिमां विष्णोः सुगन्धैः पुष्पचन्दनैः ।
 ततो दद्याद्विजातिभ्यो दक्षिणां वित्तसारतः ॥

ज्यैष्ठमासामले पक्षे द्वादश्यां पूर्ववत् ।
 स्नानादिसर्वं निर्वर्त्य पूजयेच्च त्रिविक्रमम् ॥
 पुष्यधूपादिनैवेद्यैः प्रभाते विमले सति ।
 प्राज्यक्षीराज्यसंभोज्यैर्भोजयित्वा द्विजोत्तमान् ॥
 ज्यैष्ठमासामले पक्षे द्वादश्यां पूर्ववत् ।
 स्नानादिसर्वं निर्वर्त्य पूजयेच्च त्रिविक्रमं ॥
 पुष्यधूपादिनैवेद्यैः प्रभाते विमले सति ।
 प्राज्यक्षीराज्यसंभोज्यैर्भोजयित्वा द्विजोत्तमान् ॥
 तेभ्यश्च दक्षिणां दद्यात् प्रीयतां मे त्रिविक्रमः ।
 इत्युच्चार्य नरव्याघ्र स्वर्यं भुञ्जीत पूर्ववत् ।
 ज्यैष्ठस्यैव हि कृष्णायां द्वादश्यां तु विशाम्यते ॥
 स्नात्वा प्राग्विधिना भक्त्या नृसिंहं पूजयेद्विभुम् ।
 पुष्यैर्धूपैस्तथादीपैर्गन्धैर्नैवेद्यकैरपि ॥
 वामनः प्रीयतां देवो मम नित्यं सनातनः ।
 भोजनं प्राग्विधानेन कर्त्तव्यं व्रतिना तदा ॥
 आषाढस्यैव कृष्णायां द्वादश्यां नियतः शुचिः ।
 पूजयेदद्भुतं देवं ते नैव विधिना नृप ।
 निर्वर्त्य पूर्ववत्सर्वं प्रभाते निमले रवौ ।
 विप्राय दक्षिणां दद्याद्भुतः प्रीयतामिति ॥
 आषाढस्य तु मासस्य द्वादश्यां शुक्लपक्षतः ।
 स्नात्वा पूर्वविधानेन औधरेति जपन् बुधः ॥
 पूजयेद्देवदेवगं शङ्खचक्रगदाधरम् ।
 ततो विप्राय दातव्या दक्षिणा शक्त्यपेक्षया ।

विशेषान्नवनीतन्तु तदा देयं द्विजातये ॥
 श्रीधरः प्रीयतामित्य त्रियं पुण्यात्वमुत्तमां ॥
 इत्युचार्य कुरुश्रेष्ठ ततो विप्रान् विसर्जयेत् ॥
 ततो भुञ्जीत पूर्वोक्तविधिना सुसमाहितः ।
 आ वणस्यैव कृष्णार्यां द्वादश्यां कुरुनन्दन ॥
 स्नात्वाभ्यर्च्य देवेगं तूर्ध्वोक्तविधिना ततः ।
 जनार्दनेति संपूज्य प्रतिमाञ्चक्रपाणिनः ॥
 ततो विप्रेषु दातव्यं भोजनं सहदक्षिणम् ।
 जनार्दनः प्रीयतां मे वाक्यमेतदुदीरयेत् ॥
 स्वयं श्रुत्वैस्ततः सार्धं भुञ्जीयात्पूर्ववन्नृप ।
 मासि भाद्रपदे भद्र द्वादश्यां शुक्लपक्षतः ॥
 पूर्ववत्कल्पयेत् सर्वं देवमभ्यर्चयेत्ततः ।
 हृषीकेशेति संकल्प्य क्षुतप्रखलसितादिषु ॥
 प्राङ्मुखान् भोजयेच्छ्रद्धया तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणाम् ।
 विशेषेणार्चयेद्देवं क्षीरं विप्रेषु पाण्डव ॥
 हृषीकेशः प्रीयतां मे वाक्यमेतदुदीरयेत् ।
 क्षमापणं ततः पार्थ भुञ्जीयात् पूर्ववद्दृष्ट्वै ॥
 कृष्णार्प्येवं हि कर्षीव्या मासि भाद्रपदे नृप ।
 उपेन्द्रेति च संपूज्य प्रतिमां गार्ङ्गप्रन्विनः ॥
 पूर्ववदक्षिणां दद्याद्विप्राणां भक्तितत्परः ।
 प्रीतये देवदेवस्य ममैव पाण्डुनन्दन ॥
 अश्वयुक्त्क्षुत्पक्षे तु द्वादश्यां नियतः शुचिः ।
 स्नात्वा पूर्वविधानेन कृत्वा देवाय तर्पणम् ॥

पद्मनाभेति नाम्ना वै पूजयेत् प्रतिमां हरेः ॥
 पूर्वोक्तविधिना सर्व्वं कृत्वा जारणादिकम् ।
 ततः प्रभाते विमले कृतस्नानादिकोऽगृही ॥
 विप्रान् संभोजयित्वा च तेभ्यो हेम स्मरन्निवृतः ।
 ततः प्रदक्षिणं कुर्यात् प्रणित्य चमापयेत् ॥
 प्रीयतां पद्मनाभाय इति वाचसुदीरयेत् ।
 अक्षयुक्शुक्लपत्रे तु द्वादशीं भक्तिमाकरः ॥
 उपोष्य विधिना तेन हरिरित्यपि पूजयेत् ।
 विप्राय दक्षिणां दद्याद्यथाशक्त्या नृपोत्तम ॥
 हरिर्मे प्रीयतां देवो मन्त्रमेतमुदीरयेत् ।
 कार्त्तिकस्य तु मासस्य द्वादश्यां शुक्लपक्षतः ॥
 आद्येन विधिना सर्व्वं स्नानादि विनियतं च ।
 शुक्लमाख्याम्वरधरः पाषण्डालापवर्जितः ॥
 गृहमभ्येत्य मेधावी विधिदृष्टेन कर्मणा ।
 कुर्याच्छ्रीभादिकं सर्व्वं पुष्पधूपनिवेदनम् ॥
 वंशपात्रे च कर्त्तव्या सर्व्वं कर्मसु भारत ।
 दामोदरायेति संपूज्य नाम देवस्य चक्रिणः ॥
 विशेषादुक्तं कृत्वा गीतवाद्यादिभिर्द्वैप ।
 कृत्वाप्येवंतु निर्व्वर्त्य द्वादशी कार्त्तिके तदा ॥
 कृच्छेति नाम संपूज्य देवदेवस्य चक्रिणः ।
 प्रमुक्तस्य विधिः पार्थ विशेषान्न विधीयते ॥
 अग्निन् व्रते केशवाद्या चतुर्विंशत्पूर्त्तयः पूजनीयाः ।
 अत्र देवानि नामानि बोद्धव्यैव विधीयते ॥

गोलक्षं गौसहस्रं वा गोशतं द्वादशैव गाः ।
 तुलापुरुषदानानि मुख्यानि विधिवत्तदा ॥
 देयानि विप्रमुख्यानां व्रतान्ते समुपस्थिते ।
 सूर्योपरागे यदा तु कुक्षेत्रे कुक्षुत्तम ॥
 हेमवाससमं दत्त्वा तत्फलं तद्धिने भवेत् ।
 प्रभासं नाधिकं पार्थ न गया नव पुष्करं ॥
 वाराणसी न वा तद्वत् प्रयागमथ वापि च ।
 तीर्थानि च ततः पूर्वं पश्चिमानि जनेश्वर ॥
 सर्वाश्वेव नृपश्रेष्ठ उदीचिदिग्भवानि च ।
 न समानि महावाही व्रतान्ते कार्तिकस्य च ।
 उभयद्वादशीयोगाच्छ्रद्धधानो नरोत्तम ।
 वित्तश्राठं न कुर्वीत कृष्यैकगतमानसः ॥
 सर्वदयादिसंयुक्तः पुराणार्थकनिष्ठितः ।
 कुलान्मुद्गृह्य समैव विध्योः सायुज्यतां व्रजेत् ॥
 एतदुद्देशतः प्रोक्तमुभयद्वादशीफलम् ।
 अह्वानस्य यत्पुण्यं पार्थ तत् केन वर्धते ॥
 एतत् पुण्यं पवित्रं च व्रतानामुत्तमं परम् ।
 नाग्निचाय प्रदातव्यं नचाशुश्रूषवे क्वचित् ॥
 नावैष्णवाय राजेन्द्र अन्यथा नरकं व्रजेत् ।
 सुसुश्रूषामिदं ब्रह्मन् तुभुश्रूषामियं गतिः ॥
 इदं हि यः पार्थ नरोमहात्मा श्रूणोति यो भक्तिपरः स्मरेद्वा ।
 विसृक्तपापः स विहाय दुःखं प्रयाति सान्निध्यमनन्तमूर्त्तः ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तमुभयद्वादशीव्रतम् ।

अथ मत्स्यदादशौव्रतम् ।

—000—

सत्यपा उवाच ।

कोमौ धरण्यां संचीर्णं उपवासो महामुने ।
कानि व्रतानि च तथा एतन्मे वक्तुमर्हसि ॥

दुर्व्वासा उवाच ।

मार्गस्य शुक्लपक्षे तु दशम्यां निशिताम्भवान् ।
स्नात्वा देवाचर्चनं कृत्वा अग्निकार्यं यथाविधि ॥
शुचिवासाः प्रसन्नात्मा हृद्यं चान्नं सुसंस्कृतम् ।
भुक्त्वा पञ्चपदं गत्वा पुनः शौचं तु पादयोः ॥
कृत्वाष्टाङ्गुलमानन्तु क्षीरद्वयसमुद्भवम् ।
भक्षयेदन्तकाष्ठं तु ततश्चाचम्य यत्नतः ॥
स्यृष्ट्वा खानि तथाद्भिद्य चिरं ध्यात्वा जनार्दनम् ।

खानीन्द्रियाणि ।

शङ्खचक्रगदापाणिं पीतवस्त्रं किरीटिनं ।
प्रसन्नवदनं देवं सर्व्वलक्षणलक्षितम् ॥
ध्यात्वा जलं* गृहीत्वा तु भानुरूपस्त्रनार्दनम् ।
दृष्ट्वा र्घ्यं दापयेत्पश्चात्करतोयेन मानवः ॥
एवमुच्चारयेद्वाचं तस्मिन् काले महामुने ।
एकादश्यां निराहारो भूत्वाहमपरेऽहनि ।
भोक्ष्यामि पुण्डरीकाक्षं शरणं मे भवाच्युत ॥

* पक्षमिति पुलकाकटे पाठः ।

एवमुक्त्वा ततो रात्रौ देवदेवस्य सन्निधौ ।
जपकारायणायेति स्वयं भूमौ विधानतः ॥
ततः प्रभाते विमले नदीं गत्वा समुद्रगां ।
इतरां वा तडागं वा गृहे वा नियतात्मवान् ॥
आनीय मृत्तिकां शुद्धां मन्त्रेणानेन मानवः ।
धारणं पीषणं त्वत्तोभूतानां* देवि सर्व्वदा ॥
तेन सत्येन मां दिव्ये पापाश्चोचय मृत्तिके ।

मृत्तिकामन्त्रः ।

ब्रह्माण्डीदरतीर्थानि करैस्त्वृष्टानि ते रवेः ।
भवन्ति पूतानि यतो मृत्तिकामात्मभेत्ततः ॥

आदित्यस्य मृत्तिकादर्शनमन्त्रः ।

त्वयि सर्व्वेस्थितान्नित्यं स्थिता वरुण सर्व्वदा ।
तेन मां मृत्तिकां प्राप्य मां पूतं कुरु माचिरम् ॥

मृत्तिकाभ्युक्षणमन्त्रः ।

एवं मृदं रविं तोयं प्रासाद्यात्मानमात्मभेत् ।
त्रिःकृत्वामेषमृदया कुण्डमालिख्य वै जले ॥
ततः स्नात्वा नरः सम्यक् मन्त्रवचोपचारतः† ।
आचम्यावश्यकं कृत्वा पुनर्देवगृहं व्रजेत् ॥
तत्राराध्य महायोगं देवं नारायणं विभुम् ।
केशवाय नमः पादौ कटिं दामोदराय च ॥
जह्युग्मं नृसिंहाय उरः त्रीवक्त्रधारिणे ।

* क्लमेति पुलकानरे पाठः ।

† वेदवचोपचारत इति पुलकानरे पाठः ।

कण्ठं कौस्तुभनावाय वचः श्रीपतये तथा ॥

चै लोकाविजयायेति वाङ्ग सर्वात्मने गिरः ।

रवाङ्गधारिणे वक्त्रं शङ्करायेति वारिजम् ॥

वारिजं शङ्गम् ।

गभीरायेति च कट्यान्तु कजयान्तचिन्मूर्त्तये* ।

एवमभ्यर्च्य देवेशं देवं नारायणं प्रभुं ॥

पुनस्तस्यापतः कुष्माञ्चतुरः स्थापयेद्बुधः ।

जलपूर्वाङ्गं समाख्याञ्च सितचन्दनलेपितान् ॥

चतुर्भिस्त्रिलपात्रैश्च खगितान् रत्नगर्भिणः ।

चत्वारस्ते समुद्रास्तु कलयाः परिकीर्त्तिताः ॥

तेषां मध्ये द्युभं पीठं स्थापयेद्दक्षसंयुतम् ।

तस्मिञ्च रौप्यं सौवर्णं ताम्रं वा दारवं तथा ॥

अलाभतस्तोयपूर्णं कृत्वा पात्रं ततो न्यसेत् ।

अलाभतः सौवर्णादीनामलाभे दारवमपि कुर्यादित्यर्थः ॥

सौवर्णं मत्स्यरूपेण कृत्वा देवं जनार्दनम् ।

वेदवेदाङ्गसंयुक्तं श्रुतिस्मृतिविभूषणं ॥

तोयपूर्णं पात्रं कृत्वा तत्र मत्स्यरूपं जनार्दनं न्यसेदित्यन्वयः ।

तत्रानेकविधैर्भक्ष्यैः फलैः पुष्पैश्च शोभितम् ।

गन्धैर्मन्त्रैश्च धूपैश्च अर्चयित्वा यथाविधि ॥

रसातलगता वेदा यथा देव त्वयाहृताः ।

मत्स्यरूपेण तद्वत्सां भवादुद्धर क्षेयव ॥

* चङ्ककानामूर्त्तये इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† मन्त्रैश्चेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

एवमुच्चार्य तस्याग्ने जागरं तत्र कारयेत् ।
 यथाविभवसारेण प्रमाते विमले तथा ॥
 चतुर्णां ब्राह्मणानां च चतुरोदापयेत् घटान् ।
 पूर्व्यं च बह्वृषे दद्याच्छन्दोगे दक्षिणां तथा ॥
 यजुः शाखांश्चिते दद्यात् पश्चिमं घटमुत्तमम् ।
 उत्तरेऽथर्वणे दद्यादेषएव विधिः स्मृतः ॥
 ऋग्वेदः प्रीयतां पूर्व्यं सामवेदस्तु दक्षिणे ।
 पश्चिमे तु यजुर्वेदेऽथर्ववेदस्तथोत्तरे ॥
 ताम्रपात्रैस्तु सतिलैः स्युगितान् कारयेद्घटान् ।
 ततस्तु जलपात्रं वै ब्राह्मणाय कुटुम्बिने ॥
 दद्यादेव महाभाग ततः पश्चात्तु भोजयेत् ।
 ब्राह्मणान् पायसेनाग्रान् ततः पश्चात् स्वयं नरः ॥
 भुञ्जीत सहितो भृत्यैर्वाग्यतः संयतेन्द्रियः ।
 यः सकृद्वाद्दशीमेतां करोति विधिवन्मुने ॥
 स ब्रह्मलोकमाप्नोति तत्कालं चैव तिष्ठति ।
 हादशीदोषधरणीव्रतेष्वेकादशीपरः ॥

तत्कालं ब्रह्मकालं ।

ततो ब्रह्मोपसंहारे तस्यस्तिष्ठतेऽचिरं ।
 पुनः सृष्टौ भवेद्देवोवैराजो नामनामतः ॥
 ब्रह्महत्यादिपापानि इह लोके कृतान्यपि ।
 अकामतः कामतोवा तानि नश्यन्ति तत्क्षणात् ॥
 इह लोके दरिद्रोवा राज्ञंभ्रष्टो भवेन्नृपः ।
 उपोष्य तु विधानेन मीश्वरो राज्यभाग्भवेत् ॥

मेघरः लक्ष्मीश्वरः ।

वन्ध्या नारी भवेद्यातु धनेन विधिना शुभा ।
 उपोष्यति भवेत्तस्याः पुत्रः परमधार्मिकः ॥
 भगव्यागमनं येन जानताजानता कृतम् ।
 स इमं विधिमास्थाय तस्मात्पापाद्दिसुच्यते ।
 ब्रह्माक्रियाया लोपेन बहुवर्षकृतेन च ॥
 उपोष्ये मां सकृद्भक्त्या वेदसंस्कारमाप्नुयात् ।
 किञ्चात्र बहुनोक्तेन न तदस्ति महामुने ॥
 प्राप्यं वा प्राप्यते नैव पापवान् यत्र पश्यति ।
 अदीक्षिताय नो देयं विधानं नास्ति क्वाय च ॥
 देववेदद्विषे वापि न श्राव्यन्तु कदाचन ।
 गुरुभक्ताय दातव्यं सर्व्वपापप्रणाशनम् ॥
 इह जन्मनि वारोग्यं धनं धान्यं वरस्त्रियः ।
 भवन्ति विविधा यस्तु उपोष्यति विधानतः ॥
 इति धरणीव्रतमन्त्रस्याद्दशीव्रतं ।

अथ कूर्मस्याद्दशीव्रतम् ।

— 000 —

दुर्वासा उवाच ।

पुष्यमासस्य या पुष्या द्वादशी शुक्लपक्षतः ।
 तस्यां प्रागिव सङ्कल्पं कुर्यात् स्नानादिकाः क्रियाः ॥
 निर्वर्त्यैराधयेद्भ्रात्रावेकादश्यां जनार्दनम् ।
 पृथक्कर्मन्वै हि जज्ञेष्ट देवदेवं जनार्दनम् ॥

कूर्म्याय पादौ प्रथमन्तु पूज्य नारायणायेति कटिं हरेस्तु ।
 सङ्कर्षणायेत्युदरं हरेस्तु उरोविमोकाय भवाय कण्ठम् ॥
 सुवाहवेत्येव भुजौ गिरथ नमो विगालाय रथाङ्गशङ्को ।
 खनाममन्त्रैश्च सुधूपगन्धैर्नानानिवेद्यैर्विविधैःफलैश्च ॥
 अभ्यर्च्य देवं कलशं तदग्रे संस्थाप्य मात्यास्तुतदामकण्ठं ।
 तं रत्नगर्भन्तु पुरेव कृत्वा स्वयत्कृतीहेममयञ्च देवम् ॥
 समन्दरं कूर्मरूपेण कृत्वासंस्थापयेत्तान्त्रपात्रे छतस्य ।
 पूर्णे घटे पर्य्यथ सन्निवेश्याद्योत्राङ्गणायैव सर्व्वं तु दद्यात् ॥
 छतस्य पूर्णे तान्त्रपात्रे समन्दरं कूर्मरूपं निधाय घटो-
 परि निवेश्य प्रभाते दद्यादित्यर्थः ।

श्वो ब्राह्मणान् भोज्य सदक्षिणांश्च यथाशक्त्या प्रीणयेद्देवदेवं ।
 नारायणं कूर्मपुराणे पश्चात् स्वयं भुञ्जीत सभृत्यवर्गः ॥
 एवं कृते वै त्रिविधं हि पापं विनश्यते नात्र विचारणास्ति ।
 संसारचक्रन्तु विहाय शृङ्गं प्राप्नोति लोकं तु हरेः पुराणम् ॥
 अनेकजन्मान्तरसञ्चितानि नश्यन्ति पापानि नरस्य भक्त्या ।
 प्रागुक्तं तु फलं लभेत नारायणस्तुष्टि सुपैति सद्यः ॥

इति धरणीव्रते कूर्महादशीव्रतम् ।

अथ वाराहहादशीव्रतम् ।

— ००० —

दुर्वासा उवाच ।

एवं माघे सिते पक्षे हादशीधरणीभृतः ।

वाराहस्य शृणुष्वान्यां पुण्यां परमधार्मिकः ॥

प्रागुक्तेन विधत्तेन सहस्रज्ञानमेव च ।
 कृत्वा देवं समभ्यर्च्य एकादश्यां विचक्षणः ॥
 पुष्यैर्नैवेद्यगन्धैश्च ह्यर्चयित्वाश्रुतं नरः ।
 पश्चात्तस्मात्प्रतः कुम्भजलपूर्णंस्तु विन्यसेत् ॥
 वराहस्येति पादौ तु माधवायेति वै कटिं ।
 क्षेत्रज्ञायेति जठरं विश्वरूपं पुरोहितः ॥
 सर्वज्ञायेति वैकण्ठं प्रजानांपतये शिरः ।
 प्रद्युम्नायेति च भुजौ दिव्यास्त्राय सुदर्शनम् ॥
 अमृतोद्भवाय शङ्खश्च एष एवार्चने विधिः ।
 एवमभ्यर्च्यैभिर्धात्री तस्मिन् कुम्भे तु विन्यसेत् ॥
 सौवर्णं रौप्यं ताम्रं वा वाराहं कारयेद्बुधः ।
 दंष्ट्राशेषोद्धृतां पृथ्वीं सपर्वतवनद्रुमां ॥
 माधवं मधुहन्तारं वाराहं रूपमास्थितम् ।
 सर्ववीजशृते पात्रे रत्नगर्भघटोपरि ॥
 स्थापयेत्परमं देवं जातरूपमयं हरिं ।
 सितवस्त्रयुगच्छत्रं तत्राभावे तु वैश्वे ॥
 स्थाप्याश्चरं गन्धपुष्यैश्च नैवेद्यैर्बिम्बैः फलैः ।
 पुष्यमण्डलिकां कृत्वा जागरं तत्र कारयेत् ॥
 प्रादुर्भावान् हरेस्तत्र वाचयेत्त्रायद्बुधः ।
 एवं संस्तूयमानस्य प्रभातेऽद्भुदिते रवौ ॥
 शुचिः स्नातोहरिं पूज्य ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 वेदवेदाङ्गविदुषे साधुहन्ताय धीमते ॥
 विश्वभक्ताय विप्रर्षे विश्वेशेण तु दापयेत् ।

एवं विधानतीदृशा हरिं वाराहकृपिणम् ॥
 ब्राह्मणाय च तद्द्यात् फलं तस्य निशामय ।
 इह जन्मनि सौभाग्यं श्रीः कान्तिस्तुष्टिरेव च ॥
 ज्ञानवान् वित्तवान् भोगी अपुत्रः पुत्रवान् भवेत् ।
 योगी अपुत्रः पुत्रवान् भवेत् ।

इति धरणीव्रते वाराहदादशीव्रतम् ।
 अथ नृसिंहदादशीव्रतम् ।

— ००० —

दुर्म्मासा उवाच ।

तद्वत् फाल्गुने मासि कृष्णपक्षे तु द्वादशी ।
 उपोष्या प्रोक्तविधिना हरिमावाहयेद्बुधः ॥
 नरसिंहाय पादौ तु गोविन्दायोदरं तदा ।
 कटिं विश्वभुजे तद्दक्षिणरुद्धेत्युरस्तथा ॥
 कण्ठन्तु श्रितिकण्ठाय पिङ्गकेशाय वै शिरः ।
 असुरध्वसनायेति चक्रवीट्प्रालम्बे तथा ।
 शङ्कमित्येव सम्पूज्य गन्धपुष्पफलेस्तथा ॥
 तदग्रे स्थाप्य तु घटं सितवस्त्रयुगान्वितम् ।
 तत्रोपरि नृसिंहन्तु सौवर्णं ताम्बभाजने ॥
 सौवर्णं शक्तितः कृत्वा दारुवंशमयोऽपि वा ।
 नृसिंहरूपन्तु विष्णुधर्मोत्तरेऽभिहितं ।
 पीनस्त्रान्धकटिशैवः कृशमध्यः कृशोदरः ।
 सिंहासनो नृदेहय नीलवासा प्रभान्वितः ॥

आलीडस्थानसंस्थानः सर्वाभरणभूषणः ।
 ज्वालामालाकुलसुखीज्वालाकेसरमण्डलः ॥
 हिरण्यकशिपीर्वक्षःपाटयन्खरैः खरैः ।
 नीलोत्पलाभःकर्त्तव्यो देवतानुगतस्तथा ॥
 हिरण्यकशिपुर्देव्यःसंहृतोयमिति ध्रुवमिति ।
 रत्नगर्भघटे स्थाप्य तं सम्पूज्य विधानतः ॥
 द्वादश्यां वेदविदुषे ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 एवं कृते फलं प्राप्तं यत् पुरा पार्थिवेन च ॥
 वत्सनाम्ना तु तत्तेऽहं प्रवक्ष्यामि महासुने ।
 तस्य व्रतान्ते भगवान् नरसिंहस्तुतोष च ॥
 चक्रं प्रादात्तु शत्रूणां विध्वंसनकरं मृधदति ।
 तेनास्त्रेण स्वकं राज्यं जितवान् स तृपोत्तमः ॥
 राज्ये स्थित्वाश्वमेधानां सहस्रमकरोत् प्रभुः ।
 अन्तेच ब्रह्मलीकास्थं पद्मागाच्च सत्तम ॥
 एषा धन्या पापहृता द्वादशी भवती सुने ।
 कथितेमां प्रयत्नेन श्रुत्वा कुरु यथेच्छसि ॥

इति धरणीव्रते नृसिंहद्वादशीव्रतम् ।

अथ वामनद्वादशीव्रतम् ।

— ००० —

दुर्व्यासा उवाच ।

एवमेव सुने मासि चैत्रे संकल्प्य द्वादशी ।
 उपोष्य धारयेद्ब्रह्मया देवदेवं जनार्दनम् ॥

वामनायेति पादौ तु विष्णवे कटिमर्चयेत् ।
 वासुदेवेति जठरं उरः सङ्कर्षणाय च ॥
 कण्ठं विश्वभृते पूज्य शिरोवै व्योमरूपिणे ।
 बाह्वु विश्वजिने पूज्य स्वनाम्ना शङ्खचक्रके ॥
 अनेन विधिनाभ्यर्च्य देवदेवं जनार्दनम् ।
 प्राग्बंशेनीदरं कुम्भं सयुग्मं पुरतीव्यवेत् ॥
 युग्मं वस्त्रयुग्मं ।

प्रागुक्तपात्रे संस्थाप्य वामनं काञ्चनं वुधः ।
 यथाशक्ति कृतं ऋष्वंसितयज्ञीपवीतिनम् ॥
 कुण्डिकां स्थापयेत् पात्रे ह्यत्रिकापादुके तथा ।
 अक्षमासाञ्च संस्थाप्य शट्टिकां च विशेषतः ॥
 एतैरुपस्करैर्युक्तं प्रभाते ब्राह्मणाय तु ।
 दापयेत् प्रीयतां विष्णुः ऋष्वरूपीति क्लीर्त्तयेत् ॥
 मासनाम्ना तु संयुक्तं प्रादुर्भावाभिधानकम् ।
 प्रीयतामिति सर्वत्र विधिरेव प्रकीर्त्तितः ।

मासनाम्ना मामंशीर्षादिमासकेशवादिनाम्ना प्रादुर्भावाभि-
 धानकं मन्त्ररूपी कूर्मरूपीत्येवमादि ।

श्रूयते च पुरा राजा हृद्यंश्वः पृथिवीपतिः ।
 अयुतः स तपस्तेपे पुत्रमिच्छन् स्तपोधनम् ॥
 तस्यैवं कुर्वन्तस्त्रिंशत् पुत्रार्थं मुनिसत्तम ।
 आजगाम हरिर्देवोद्दिजरूपसमन्वितः ॥
 स उवाच नृपं राजन् किं ते व्यवसितम्बिति ।
 पुत्रार्थमिति शोवाच न च तं प्रत्युवाच ह ॥

इदमेव विधानं तु कुरु राजन् प्रयत्नतः ।
 स विप्र एवमुक्त्वा च ज्ञप्त्वा दन्तर्हितस्ततः ॥
 राजा च तच्चकाराथ मन्त्रवित्तु द्विजातये ।
 दरिद्राय तथा प्रादाज्जगोतिर्गर्भाय धीमते ॥
 यथा दितेरपुत्रायाः त्रयं पुत्रत्वमागतः ।
 भगवंस्तेन सत्वेन ममाप्यस्तु सुतीवरः ॥

इदमेव विधानं वामनद्वादशीव्रतम् ।

विधिमन्त्रवित् यथा दितेरपुत्राया इत्यादिमन्त्रज्ञः ।

तं वामनम् ।

अनेन विधिनोक्तेन तस्य पुत्रोभवन्मुने ।
 उद्याश्वइति विख्यातश्चक्रवर्त्ती महाबलः ॥
 अपुत्रो लभते पुत्रान् धनहीनोऽनुभेदनम् ।
 अष्टराज्यो लभेद्राज्यं मृतो विष्णुपुरं व्रजेत् ॥

इति धरणीव्रते वामनद्वादशीव्रतम् ।

अथ जामदग्न्यव्रतम् ।

— ००० —

दुर्वासा उवाच ।

वैशाखस्यैवमेवन्तु संकल्पविधिना नरः ।
 तद्वत् स्नानं मृदा कृत्वा ततोदेवालयं व्रजेत् ॥
 तत्राराध्य हरिं भक्त्या एभिर्मन्त्रैर्विचक्षणः ।
 जामदग्न्याय पादौ तु उदरं सर्वधारिणे ॥

मधुसूदनायेति कटिं उरः श्रीवत्सधारिणे ।
 चचान्तकायं बाहू च मणिकण्ठाय कण्ठकम् ॥
 स्वनाम्ना शंखचक्रे तु शिरो ब्रह्माण्डधारिणे ।
 एवमभ्यर्च्य मीधावी प्राक्ससस्त्रापतो घटम् ॥
 विन्यसेत् स्वर्गितं बल्लभुगेन च विप्रमतः ।
 वैणवेन च पात्रेषु तस्मिन् संस्त्रावसेचरिम् ॥
 जामदग्नेन रूपेण कृत्वा सौवर्चमक्षतः ।
 दक्षिणे परशुं हृष्टो तस्य देवस्य कारयेत् ॥
 सर्व्वगन्धैश्च संपूज्य पुष्यैर्नानाविधैस्तथा ।
 ततस्तस्याग्रतः कुर्याज्जागरं शक्तिमाकरः* ॥

प्रीयतां मधुसूदनोजामर्दन्यरूपीतिमन्त्रः ।
 प्रभाते विमले सूर्य्ये ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 एवं नियमयुक्तस्य यत् फलं तन्निबोध मे ॥
 आसीद्राजा महाभागो वीरसेनो महाबलः ।
 अमुत्रः स पुरा तीव्रन्तपस्तेपे महाबलः ॥
 चरतस्तप्तपीधोरं यान्नवल्कगो महासुनिः ।
 आजगाम महायोगी तं द्रष्टुं वानियोगतः ॥

राजोवाच ।

कथं मे भविता पुत्रः स्वख्यायासेन वै द्विज ।
 एतस्मै कथय प्रीत्या भगवान् प्रणतस्य मे ॥
 एवमुक्त्वा सुनिस्सेन पाद्भिर्वेन यशस्विना ।
 आचक्षौ द्वादशीसेमां वैशाखे सितपञ्चजां ॥

* शक्तिमात्रिणि पुस्तकाकरे पाठः ।

स हि राजा विधानेन पुत्रकामो विशेषतः ।
 उपीथ लक्ष्मवान् पुत्रं नलं परमधार्मिकम् ॥
 योऽद्यापि कीर्त्तयते लोके पुण्यश्लोको नृपोत्तमः ।
 प्रासङ्गिकं फलं ह्येतत् व्रतस्यास्य महात्मने ॥
 सपुत्रो जायते वित्तविद्यावान् कीर्त्तिमांस्तथा* ।
 इह जन्मनि किं चित्रं परलोके शृणुष्व मे ॥
 कल्पमेकं ब्रह्मलोकमुषित्वाप्सरसाङ्गणैः ।
 श्रीङ्गतेऽतः पुनः सृष्टौ जायते चक्रवर्त्तिनः ।
 शिंशत्कल्पसहस्राणि जायते नात्र संशयः ॥
 इति धरणीव्रते जामदग्न्यदादशीव्रतम् ।

अथ राघवदादशीव्रतम् ।

— ००० —

दुर्वासो उवाच ।

ज्येष्ठमासेषु वसिष्ठं संकल्प्य विधिना नरैः ।
 अर्चयेत् परमं देवं पुष्पैर्नानाविधैःशुभैः ॥
 ॐ नमोराघवायेति पादौ पूर्वं समर्चयेत् ।
 त्रिविक्रमायेति कटिं धृतवस्त्राय वै हरम् ॥
 उरःसंबन्धरायेति कण्ठं संबन्धकाय च ।
 सर्वाङ्गधारिणे बाहू स्नानान्नामरथाङ्गके† ॥
 सहस्रशिरसेऽभ्यर्च्य शिरस्तस्य महात्मनः ।
 चक्रवर्त्तिकायै शंखचक्रके ॥

* श्रीभिर्बलरैति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† चक्रवर्त्तिकायै इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

एवमभ्यर्च्य विधिवत् घृतकुम्भं प्रकल्पयेत् ।

प्राग्वदस्त्रयुगच्छत्रौ सौवर्णौ रामलक्षणौ ॥

अनयोः स्वरूपं विष्णुधर्मोत्तरात् ।

रामो दाशरथिर्मौली राजलक्ष्मणश्चितः ॥

मौली मुकुटवान् ।

भरतो लक्ष्मणश्चैव शत्रुघ्नश्च धनुर्धरः ।

तथैव नूनं कर्त्तव्याः किन्तु मौलिविवर्जिता इति ।

अर्चयित्वा विधानेन प्रभाते ब्राह्मणाय तो ।

दातव्यौ मनसा काममीहता पुरुषेण तु ॥

अपुत्रेण पुरा पृष्टे राज्ञा दशरथेन तु ।

वशिष्ठः पुत्रकामाय प्रोवाच परमार्थतः ॥

इदमेव विधानन्तु कथयामास स द्विजः ॥

प्रायहस्यं विदित्वा तु स राजा कृतवानिदम् ।

तस्य पुत्रः स्वयं जन्ने रामाख्यो मधुसूदनः ॥

चतुरंगोप्यभूद्विष्णुः परितोषात्सहासुने ।

एतदेव हि चाख्यातं पारत्रिकमतः श्रुणु ॥

दिव्यान् भोगान् भुञ्जते स्वर्गसंख्यो यावद्विद्रा दशच द्विद्विसंख्याः

अतीतकाले पुनरेत्य मर्त्या राजराजो जायते यन्नयाजी ॥

दश द्विद्विसंख्याः चतुर्दशैस्त्वर्थः ।

नश्यन्ति पापानि च तस्य पुंसः कामानवाप्नोति यथासमीहान् ।

निष्काम एतद्भूतमेव चोर्त्वा प्राप्नोति निर्घ्वाणफलं स्थितं तत् ॥

एतद्भूतमेव निर्घ्वाणसाधनान्तरमनुष्ठायापीत्यर्थः ।

इति धरणीव्रते राघवद्वादशो व्रतम् ।

अथ वासुदेवदादशौघतम् ।

—000—

दुर्वासा उवाच ।

आषाढे प्येवमेवन्तु सङ्कल्प्य विधिना ततः ।
 अर्चयेत्परमं देवं गन्धपुष्पैर्विधानतः ॥
 वासुदेवाय पादो तु कटिं संकर्षणाय च ॥
 प्रद्युम्नायेति जठरमनिरुद्धाय वै उरः ।
 चक्रपाणयेति भुजौ कण्ठं भूपतये तथा ॥
 स्वनाम्ना शङ्खचक्रे तु पुरुषायेति वै शिरः ।
 एवमभ्यर्च्य मेधावी प्राग्वत्तस्याश्रतोघटम् ॥
 विन्ध्यसेहस्त्रयुग्मं तु तस्योपरि ततोन्मयेत् ।
 काञ्चनं वासुदेवं तु चतुर्धाङ्गं सनातनम् ॥
 तमभ्यर्च्य विधानेन गन्धपुष्पादिभिः क्रमात् ।
 प्राग्वत्तु द्वाप्रागे दद्याद्देवादिनि सुव्रते ॥
 एवं नियमयुक्तस्य यत् पुष्पं तच्छृणुष्व मे ।
 वसुदेवो भवेद्भ्राजा यदुबंशविवर्द्धनः ॥
 देवकी तस्य भार्यासीत्समानव्रतचारिणी ।
 सात्वयुवा भवेत्काञ्ची पतिधर्मपरायणा ॥
 तस्याः कालेन महता नारदोभ्यागमद्गृहम् ।
 वसुदेवेन तद्गत्या पूजितो वाक्यमब्रवीत् ॥
 कवयामास धर्मज्ञो देवकीवसुदेवयोः ।
 तावप्येवं विधिं भक्त्या चक्रतुः अद्यान्वितौ ॥

तयोस्तुष्टः स्वयं विष्णुः पुत्रत्वञ्च जगाम ह ।
 एवमेवा पापहरा द्वादशी पुत्रदा कृता ॥
 इमामुपोषेह सुतान्विद्यावित्तं लभेत च ।
 राज्ञश्च भ्रष्टराज्यस्तु पापिनः पापसंक्षयम् ॥
 यथा भावोपनीतस्तु धरण्यां केशवेन वै ।
 मृतो विष्णुपुरे रम्ये मीदते कालसंक्षयम् ॥
 मन्वन्तराणि षट्त्रिंशत्ततः कालाख्ये पुनः ।
 इह लोके भवेद्राजा समवर्षायुतानि तु ॥
 दाता यज्वाक्षमायुक्तस्ततो* निर्वाणमाप्नुयात् ।
 इति धरणीव्रते वासुदेवद्वादशीव्रतम् ।

अथ बृहद्वादशीव्रतम् ।

— . . . —

दुर्वासा उवाच ।

एवमेव त्रावणे तु मासि संकल्प्य द्वादशीम् ।
 अर्चयेत्परमं देवं गन्धपुष्पनिवेदनैः ॥
 वृहाय पादौ संपूज्य औधरायेति वै कटिम् ।
 पद्मोद्गवाय जठरमुरः संवत्सराय वै ॥
 सुप्रोवायेति कण्ठं तु भुजो ह्यौ विश्ववाहनः ।
 प्राग्ब्रह्मस्त्राणि संपूज्य शिरो वै परमात्मने ॥
 एवमभ्यर्च्य मेधावी तस्मात्ते पूर्ववष्टम् ।

* दातायज्जमेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

स्थापयेत्तत्र सौवर्णं बुद्धं कृत्वा विचक्षणः ॥

बुद्धस्वरूपमुक्त्वा पुराणान्तरे ।

बुद्धस्तु द्विभुजः कार्थीध्यानस्तिमितलोचन इति ॥

तमध्ये वन्तु संपूज्य ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।

अनेन विधिना पूर्वं हादशी समुपोषिता ॥

शुद्धोदनेन बुद्धोऽभूत् स्वयं पुत्रो जनार्दनः ।

महतीञ्च त्रियं प्राप्तः पुत्र पौत्र समन्वितः ।

भुक्त्वा राज्यत्रियं सोऽथ गतिं परमिकां गतः ॥

इति धरणीव्रते बुद्धहादशीव्रतम् ।

अथ कल्किहादशी व्रतम् ।

—०००—

दुर्वासा उवाच ।

तद्ब्रह्माद्रपदे मासि शुकपक्षे तु हादशीम् ।

सङ्कल्प्य विधिना देवमर्चयेत्परमेश्वरम् ॥

नमोस्तु कल्किने पादौ हृषीकेशाय वै कटिं ॥

स्नेच्छूर्ध्वसनायोरु जगन्मूर्त्तिस्तथोदरम् ।

श्रीकण्ठायेति कण्ठन्तु खड्गपाणीति वै भुजौ ॥

स्वनाम्ना शङ्खचक्रे तु विश्वमूर्त्तौस्तथा शिरः

एवमभ्यर्च्य मेधावो प्राग्बलस्वायतो घटम् ॥

विन्यस्य कल्किनं देवं सौवर्णं तत्र धारयेत् ।

कल्किस्वरूपं पुराणान्तरात् ।

क्षपाणपाणिः कर्त्तव्यः कल्की तुरगवाहन इति ।
 सितवस्त्रयुगच्छन्नं गन्धपुष्पोपशीभितग् ॥
 क्त्वा प्रभाते विप्राय प्रदेयं शास्त्रवित्तमे ।
 पूर्वं राजा विशालोऽभूत् काशीपुर्थ्या महाबलः ॥
 द्वादशीं कृतवान् मोऽपि चक्रवर्त्ती बभूव ह ।
 यज्ञैश्च विविधैरिष्ट्वा परं निर्वाणमाप्तवान् ॥
 पूज्यते मत्सररूपेण सर्वं ज्ञत्वमभीष्टुभिः ।
 स्ववंशीहरणार्थाय कूर्मरूपी तु पूज्यते ॥
 भवोद्धिनिमग्नेन वराहः पूज्यते नरैः* ।
 नरसिंहस्वरूपेण सर्वं पापभयातुरैः ।
 वामनीमोहनार्थाय वित्तार्थे जमदग्निजः ॥
 क्रूरशत्रुविनाशाय यजेद्दाशरथिं बुधः ।
 दलकण्ठ्यो यजेद्द्वीमान् पुत्रकामो न संशयः †
 रूपकामो यजेद्बुधं कस्किनं शत्रुघातने ।

इति धरणीव्रते कल्किद्वादशीव्रतम् ।

अथ पद्मनाम द्वादशी व्रतम् ।

—:○:—

दुर्वासा उवाच ।

तद्ददाश्वयुजे मामि द्वादशीं शुक्लपक्षिणीम्* ।

* द्वादश्यायैति पुस्तकाकारे पाठः ।

† पञ्चजामिति पुस्तकाकारे पाठः ।

सङ्कल्प्याभ्यर्चयेद्देवं पद्मनाभं सनातनम् ॥
 पद्मनाभाय पादौ तु कटिं वै पद्मयोनयेः ॥
 उदरं सर्वदेवाय पुष्कराक्षाय वै उरः ॥
 अव्यग्राय तथा बाहू प्राग्वदस्त्राणि पूजयेत् ॥
 प्रभवाय शिरः पूज्य प्राग्वदग्रे घटं न्यमेत् ॥
 तस्मिन् हेममयं देवं पद्मनाभं तु विन्यसेत् ॥

पद्मनाभस्तु दक्षिणाधीहस्तादारभ्य सव्येन शङ्खपद्मगदा
 धारी कार्यः ।

तं देवदेवं संपूज्य गन्धपुष्पादिभिः क्रमात् ।
 प्रभातायान्तु शर्व्वीर्थां ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 आसीत् कृतयुगे राजा भद्राश्वी नाम वीर्यवान् ।
 यस्य नाम्ना भवेद्वर्षं भद्राश्वं नामनामतः ॥
 तस्यागस्त्यः कदाचित्तु गृहमागमत् भूपते ।
 उवाच पञ्चरात्रं तु वसामि भवतो गृहे ।
 तं राजा शिरसा नत्वा स्वीयतामित्यभाषत ॥
 तस्य कान्तिमती नाम्ना भार्या परमशोभना ।
 तामगस्त्यस्तथा दृष्ट्वा रूपतेजोन्वितां श्रुत्वा ॥
 सपत्न्या भयात् सर्वाः कुर्वन्त्यः कुर्म्यं शोभनम् ।
 साधु पार्थ जगन्नाथ स्त्री शूद्रः साधुसाध्विति ॥
 एवमुक्त्वा ननर्त्तौ चै रगस्त्यीराजसन्निधौ ।

राजीवाज ।

किं वर्षकारणं ब्रह्मन् येनैवं नृत्यते भवान् ।

अगस्त्य उवाच ॥

इयं राक्षी त्वदीयाभूहामी वैश्यस्य वैदिशि ।
 नगरे हरिदत्तस्य त्वमस्याः पतिरेव च ॥
 तस्मैव कर्मकारोऽभूत् शूद्रो विधेति नामतः ।
 स वैश्योऽश्वयुजे मासि द्वादश्यां नियतः शुचिः ॥
 स्वयं विष्णुालयं गत्वा गन्धपुष्पादिभिर्हरिम् ।
 अभ्यर्च्य स्वगृहे प्रायाङ्गवन्तौ रज पालकौ ॥
 स्थाप्य द्वावपि दीपानां ज्वालनार्थं महामते ।
 गते तस्मिन् भवने तद्दीपप्रज्वालने स्थितौ ॥
 यावत् प्रभाता रजनी निःशाठेन नरोत्तम ।
 ततः कालेन महता मृतौ द्वावपि दम्पती ॥
 तेन पुण्येन ते जन्म प्रियव्रतगृहेऽभवत् ।
 इयञ्च पत्नी ते जाता वैश्यदास्यभवत् पुरा ॥
 पारक्यस्यापि दीपस्य ज्वलितस्य गृहे हरेः ।
 इयं व्युष्टिः परा जाता भक्तियुक्तस्य ते पुरा ॥
 स्नेहयः पुनरर्थेन विष्णुमभ्यर्च्य दीपकम् ।
 ज्वालयेत्तस्व यत्पुण्यं तत्सङ्घातुं न शक्यते ॥
 इति श्रीधरणीव्रते पद्मनाभद्वादशोव्रतम् ।
 अथ योगेश्वरव्रतम् । अथ धरणीव्रतम् ।

— ००० —

अगस्त्य उवाच ।

शृणुष्व भक्तितोराजन् कार्त्तिकैकादशीं तथा ।

(१३१)

उपोष्य विधिना येन सर्वासां प्राप्नुयात् फलम् ॥
 प्राग्विधानेन संकल्प्य तद्वत् स्नानं समर्चयेत् ।
 विलोमेनार्चयेद्देवं नारायणमकल्पयन् ॥
 नमः सहस्रशिरसे शिरः संपूज्य वै हरेः ।
 पुरुषायेति च भुजौ कण्ठे वै विश्वरूपिणे ॥
 ज्ञानात्मनेति चास्त्राणि श्रीवत्साय तथा उरः ।
 जगद्वसिष्ठावे पूज्य उदरं विश्वमूर्त्तये ॥
 कटिं सहस्रपादाय पादौ देवस्य पूजयेत् ।
 अनुलोमेन देवेशं पूजयित्वा विचक्षणः ॥
 नमो दामोदरायेति सर्वाङ्गं पूजयेद्वरिम् ।
 एवं संपूज्य विधिना तस्याग्रे चतुरो घटान् ॥
 स्थापयेद्ब्रह्मगर्भांस्तु सितचन्दनचर्चितान् ।
 स्रग्दामवदधीवांस्तु सितवस्त्रावगुण्डितान् ॥
 स्थगितान् ताम्रपात्रैस्तु तिलपूर्णैः सकाञ्चनैः ।
 चत्वारः सागराश्चैते कल्पिता द्विजसत्तम ॥
 तन्मध्ये प्राग्विधानेन सौवर्णं स्थापयेद्द्वरिम् ;
 योगेश्वरं योगनिद्राशायिनं पीतवाससम् ॥
 तमध्ये वं तु संपूज्य जागरं तत्र कारयेत् ।
 कुर्यात्तु वैष्णवं यागं जपेत् योगेश्वरं ह्वरिम् ॥
 षोडशारे रथाङ्गे तु रजोभिर्बहुभिः कृते ।
 षोडशारे रथाङ्गे षोडशारचक्रे ।
 एवं कृत्वा प्रभाते तु ब्राह्मणान् पञ्च वानयेत् ।
 चत्वारः कलशा देयाश्चतुर्णां पञ्चमस्य तु ॥

सौवर्षं प्रदद्यात् प्रयतः शुचिः ।

वेदाध्येन्ने समं दत्तं तद्विदे द्विगुणं तथा ॥
 आचार्ये पञ्चरात्राणां सङ्ख्यगुणितं भवेत् ।
 यस्त्विमं सरहस्यन्तु समन्त्रं शोपपादयेत् ।
 विधानं तस्य भक्त्या वै दत्तं कोटिगुणोत्तरम् ॥
 योग्ये तिष्ठति यस्त्वन्यमासत्रं पूजयेत्क्षुधीः ,
 दुर्गतिं समवाप्नोति दत्तं तस्य च निष्कलम् ॥
 एवं दत्त्वा विधानेन तत्त्वतो विष्णुमर्ष्यं च ।
 विप्राणां भोजनं दद्याद्यथाशक्त्या च दक्षिणाम् ॥
 धरणीव्रतमेतच्च पुरा कृत्वा प्रजापतिः ।
 प्रजां^० लेभे तथा मुक्तिं ब्राह्मण्यं विमलं शुभं ॥
 युवनाम्नश्च राजर्षिरनेन विधिना पुरा ।
 मान्वातारं सुतं लेभे परं ब्रह्म च शाश्वतम् ॥
 तथा हैहयदायादः कृतवीर्यो नराधिपः ।
 कार्त्तवीर्यं सुतं लेभे परं ब्रह्म च शाश्वतम् ॥
 शकुन्तलाप्ये वनेव व्रतं शीर्त्वा महामुने ।
 लेभे शाकुन्तलं पुत्रं दौषन्तं चक्रवर्त्तिनम् ॥
 अनेन विधिना प्राप्तं चक्रवर्त्तित्वसुखमम् ।
 धरणा अपि पाताले पद्मया तु कृतं पुरा ।
 व्रतमेतत्ततोनाम्ना धरणीव्रतमुच्यते ॥
 सुतेष्विन्दु धरा देवो हरिणा क्रोडरूपिणा ।

उद्धृताद्यापि तुष्टेन धारिता नीरिवाश्वसि ॥
 धरणीव्रतमेतच्च कीर्तितं तन्मया मुने ।
 य इदं शृणुयाद्भक्त्या यच्च कुर्यान्नरीक्षतः ॥
 सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुसालोक्यतां व्रजेत् ।
 एकैकयापि वापत्सु राज्यमेकैव यच्छति ।
 किं पुनर्हादशैतास्तु यत्रेदं न ददुः परं ॥

इति योगेश्वरद्वादशी ।

इति वाराहपुराणोक्तं धरणीव्रतम् ।

अथ भीमद्वादशीव्रतम् ।

— ००० —

गुल्लस्य उवाच ।

कृष्णः कदाचिदासीनः स्वपुत्र्याममितद्युतिः ।
 प्रवृत्तासु पुराणीषु धर्मसम्बन्धिनीषु च ॥
 कदासु भीमसेनेन परिपृष्टः प्रतापवान् ।
 धार्मिकस्याप्यशक्तस्य तीव्राम्नित्वादुपोषणे ॥
 किञ्चिद्व्रतमशेषाणां व्रतानामधिकं मम ।
 निरूपयतु विश्वात्मा वासुदेवोजगद्गुरुः ॥
 अशेषयज्ञफलदमशेषाद्यविनाशनं ।
 अशेषदुष्टदमनमशेषसुरपूजितम् ॥
 पवित्राणां पवित्रञ्च मङ्गलानाञ्च मङ्गलम् ।
 वासुदेव उवाच ।
 यद्यष्टम्यां चतुर्दश्यां द्वादशीञ्च भारत ।

अग्रेष्वपि दिनेषु न शक्तस्वमुपोषितुं ॥
 ततः पुण्यामिमाभैर्मी* सर्वपापप्रणाशनीं ।
 उपोष्य विधिमानेन गच्छ विष्णोः परं पदम् ॥
 माघमासस्य दशमी यदा शुक्ला भवेत्तदा ।
 वृतेनाभ्यञ्जनं कृत्वा तिलैः स्नानं समाचरेत् ॥
 तद्यैव विष्णुमभ्यर्च्य नमो नारायणेति व ।
 कृष्णाय पादौ सम्पूज्य शिरः सर्वाङ्गाने नमः ॥
 त्रैकुण्डायेति वै कण्ठमुरः त्रीवत्सधारिणे ।
 शङ्खिने चक्रिणे तद्द्वन्द्वेन वरदाय वै ॥
 सर्वे नारायणस्त्रैत्रं सम्पूज्या वाङ्मवः क्रमात् ।
 दामोदरायैत्युदरं मेढ्रं पञ्चशराय वै ॥
 ऊरु सौभाग्यनाभय जानुनी भूतधारिणे ।
 नमो नीलाय वै जङ्घे पादौ विश्वसृजे नमः ॥
 नमो देव्यै नमः शान्ध्वै नमो लक्ष्म्यै नमः श्रिये ।
 नमः पुष्यै नमस्तुष्यै नमस्तुष्यै तथा प्रिये ॥
 नमो विहङ्गनाभाय वायुवेगाय पञ्चणे ।
 विषप्रभाषिणे नित्यं गरुडश्चाभिपूजयेत् ॥
 एवं सम्पूज्य गोविन्दमुन्नापतिविनायकौ ।
 गन्धमाश्लेस्तथा धूपैर्भस्मैर्नानाविधैस्तथा ॥
 गव्येन पयसा सिद्धां कशरांस्त्वद्य वाग्वतः ।
 सर्पिणां सङ्घं भुञ्जानो गत्वा व्रतपदं बुधः ॥

* पुण्यामिमां भोजनविधितिं पुण्यकारे पाठः ।

चतुर्भिर्ब्रह्मैहीमस्तातः कार्यं उदङ्मुखैः ।

रुद्रजापश्चतुर्भिश्च यजुर्वेदपरायणैः ॥

वैष्णवानि च सामानि चत्वारः सामवेदिनः ।

अरिष्टवर्गसहितान्यभितः परिपाठयेत् ॥

अरिष्टवर्गः, तपसूपुवाजिनमित्यस्यासृक्तुत्पन्नसामद्वयं ।

एवं द्वादशविधास्तान् वस्त्रमाख्यानुलेपनैः ।

पूजयेद्दङ्गुलीयैश्च कटकैर्हंसूत्रकैः ॥

वासीभिः शमनीयैश्च वित्तशाठविवर्जितः ।

पञ्चचपातिवाद्या वै गीतमङ्गलनिस्त्रनेः ॥

उपाध्यायस्य च पुनर्द्विगुणं सर्वमेव तु ।

ततः प्रभाते विमले समुत्थाय त्रयोदश ॥

गाद्यद्यात् कुरुत्रेष्ठ सोवर्णमुखसंयुताः ।

पयस्विनीः शीलवतीः कांस्यदाहसमन्विताः ॥

रीप्यसुराः सबस्त्राश्च चन्दनेनाभिषेविताः ।

तास्तु तेषां ततो दत्त्वा भक्ष्यभोज्यान्पिण्डितान् ॥

कृत्वा वै ब्राह्मणान् सर्वान् रक्षैर्नानाविधैर्युतान् ।

भुक्त्वा वाच्यारलक्षणमात्मना च विसर्जयेत् ॥

अनुगम्य पदान्यश्रो पुत्रभार्यासमन्वितः ।

प्रीयतामत्र देवेशः केशवः क्लेगनाशनः ॥

शिवस्य हृदयं विष्णुः विष्णोश्च हृदयं शिवः ।

यद्योत्तरं न पश्यामि तथा मे स्वस्ति वायुधः ॥

एवमुच्चार्य तान् कुम्भान् गायै वं शंघनानि च ।

वासांसि चैव सर्वेषां गृहाणि प्रापयेद्बुधः ।
 अभावे बहुशय्यानामेकामपि सुसंस्कृतां ॥
 शय्यां दद्याद्गृही भीम* सर्वोपस्कारसंयुतां ।
 इतिहासपुराणानि वाचयित्वातिवाहयेत् ॥
 तद्दिनं नरशार्ङ्गं य इच्छेद्दिपुलां त्रियम् ।
 तस्मात्त्वं सत्वमालम्ब्य भीमसेनोविमत्सरः ॥
 कुत व्रतमिदं सम्यक् ज्ञेहाद्गुह्यं मयोद्दिनं ।
 त्वया कृतमिदं वीर त्वन्नामकां भविष्यति ॥
 सा भैमी हादशी श्लेषा सर्वपापहरा शुभा ।
 या तु कल्याणिनी नाम पुरा कल्पेषु पठ्यते ॥

ज्ञातः पुरा मण्डलमेध तद्वत्तेजोमयं वेदशरारमाप ।

अस्याञ्च कल्याणतिथौ विवस्वान् महस्त्रधारेण सहस्त्ररश्मिः ॥

इदमिह ऽहं कृतं महेन्द्रमुख्यैर्वसुभिरथासुरदेवकोटिभिश्च ।

फलमिह हि न शक्यतेऽनुवक्तुं यदि जिह्वायुतकोटयो मुखेषु ।

कलिकलुषविदारिणीमतस्तामितिकथयिष्यति यादवेन्द्रते ।

अपि नरकगतान् पितृनशेषानलमुहर्त्तुमिष्टैव यः कंरोति ॥

इति श्रीपद्मपुराणे भीमहादशीव्रतम् ।

अथ भीमहादशीव्रतम् ।

—०००—

कृष्ण उवाच ।

विदर्भाधिपतिः श्रीमानासीत् पूज्यः सुधार्मिकः ।

* भाममिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† तन्नामकमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

दमयन्त्या पिता पूर्वं नलस्य श्वशुरी मुनि ॥
 सत्यवदनशीलश्च प्रजापालनतत्परः ।
 चात्रधर्मरतः श्रीमान् संयामेष्वपराजितः ।
 तस्यापि कुर्वतीराज्यं शास्त्रदृष्टेन कर्मणा ।
 भ्राजगाम महाभागः पुलस्त्योन्नद्धश्च सुतः ॥
 सर्वज्ञानविधिः श्रीमांस्तीर्थयात्राप्रसङ्गतः ।
 तमाद्यतमथो दृष्ट्वा ब्रह्मयोनिमकल्पयाम् ॥
 उत्थाय प्रददौ राजा स्वमासनमभीष्टितम् ।
 अर्थैः पाद्यैश्च यत् किञ्चित् तत्तस्मै प्रददेत् स्वयम् ॥
 राज्यश्चैवात्मना साधं निवेद्य स ह्यताञ्जलिः ।
 तेनचैवाभ्यनुज्ञातो निससाद् च आसनं ॥
 यमच्छ कुशलं प्रश्नं तपस्यध्ययने तथा ।
 तथेति चीकः समुनिस्तं राजानमभाषत ॥

पुलस्त्य उवाच ।

कथितं कुशलं राजन् क्रीये जनपदेपुरे ।
 धर्मं च ते मतिर्नित्यं तस्मात् पार्थिव वर्त्यते ॥

भीम उवाच ।

सर्वत्र कुशलं ब्रह्मन् येषां कुशलमिच्छति ।
 तवागमनतोनाहं प्रचितः सङ्गचारिणः ॥
 एवन्तो सर्वदा कृत्वा सभाष्येऽपि परस्परं ।
 रसानैः पूर्वं वृत्तानैः कथाभिरितरेतरं ॥
 ततः कथान्ते राजेन्द्र पुलस्त्यो याति विश्वयं ।
 यमच्छ सर्वं लोकस्य हिताय जगतः पतिः ॥

भगवन् प्राचिनः सर्वसंसारार्थवमध्यगाः ।
 दृश्यन्ते विविधैर्दुःखैः पीड्यमानां दिवानिशं ॥
 नरके गर्भवासे च व्याधिभिर्जनपा तथा ।
 तथाचेष्टवियोगादिदुःखैर्दौर्गत्यसम्भवैः ॥
 बलापचयमापन्नान्* परिपीडोपजीविनः ।
 एवं विधान्यनेकानि दुःखानि मुनिपुङ्गव ॥
 दैवान्येतानि तान्येव भृशं मे व्यथितं मनः ।
 तेषां दुःखानि भूतानां प्राचिनां भूमिमापदा† ॥
 उपकारकरं ब्रूहि ममानुग्रहकाम्यया ।
 स्वत्यायासेन सुमहत्कायते सुमहत् फलम् ॥

पुलस्त्य उवाच ।

शृणु राजन् प्रवक्ष्यामि व्रतानामुत्तमं व्रतम् ।
 यामुपोष्य न दुःखानां भाजनं भजतेजनः‡ ॥
 माघमासे सिते पक्षे द्वादशी पावना स्मृतम् ।
 तस्यां जलार्द्रवसन उपोष्य सुखभाग्भवेत् ॥

भीम उवाच ।

कथं सा मुनिशार्दूल उपोष्या द्वादशी भवेत् ।
 विधिना केन विप्रेन्द्र तन्मे ब्रूहि यथाक्रमम् ॥

पुलस्त्य उवाच ।

शृणु राजन्वदितोव्रतं पापप्रणाशनम् ।

* बलापचयपरमानादिति पुलस्त्यकारे पाठः ।

† भूमिमातदिति पुलस्त्यकारेपाठः ।

‡ ओजनेवजनोजनइति पुलस्त्यकारेपाठः ।

तव शुश्रूषणाहास्यं मयाप्येतत् न संशयः ॥
 अदीक्षिताय नो देया नाग्निष्याय कदाचन ॥
 विष्णुभक्ताय शान्ताय धर्मनिष्ठाय चैव हि ।
 वाच्यमेतन्महाराज भवतान्यस्य* कस्यचित् ॥
 ब्रह्महा गुरुघाती च सोमस्त्रीघातकस्तथा ।
 कृतघ्नो मितभुक् चौरःक्षुद्रोभम्बव्रतस्तथा ॥
 मुच्यते पातकैः सर्वैर्व्रतेनानेन भूपते ।
 शुद्धे तिथौ मुहूर्त्ते च मण्डपं कारयेत्ततः ॥
 दशहस्तप्रमाणेन देशे पूर्वोत्तरद्वये ।
 तन्मध्ये पञ्चहस्तां तु वेदिकां परिकल्पयेत् ॥
 शुक्रां† सकर्हमां भूमिं वेदीं कृत्वा प्रयत्नतः ।
 विलिखेन्मण्डलं तत्र पञ्चवर्णविधानतः ॥
 ब्राह्मणो वेदसम्पन्नो विष्णुभक्तोजितेन्द्रियः ।
 पञ्चविंशतितत्त्वज्ञः स्वाचाराभिरतस्तथा ।
 कुण्डानि कल्पयेत्तत्र अष्टौ चत्वारि वा पुनः ॥
 ब्राह्मणास्तेन युञ्जीत चातुश्चरणिकाः शुभाः ।
 मध्ये च मण्डलस्याथ कर्णिकायां जनार्दनम् ॥
 प्राङ्मुखं तु न्यसेद्देवं चतुर्बाहुमरिन्दम ।
 पूजयेत् विधानेन शास्त्रोक्तेन विचक्षणः ॥
 गन्धपुष्पैस्तथा धूपैर्नैवेद्यैर्विधैरेषि ॥
 एवं संपूज्य देवेशं ब्राह्मणैः सह देविकः ॥

* भवतान्यस्यकस्यचिदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† सुकुदिमामिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

न्यसेस्तम्बहयं पञ्चाशिम्बकाष्ठसमन्वितम् ।
 देवस्याभिमुखं तत्र पीठस्योपरि कल्पयेत् ॥
 षड्त्रिंशद्ङ्कुलं श्रेष्ठं चतुरस्रं समन्ततः ।
 तत्र शिलां समालम्ब्य सुवृत्तं सुदृढं नवं ॥
 आरीपयेद्दृष्टं तत्र यादृशं तु शृणुष्व मे ।
 कलधोतं तथा रौप्यं ताम्रं वाप्यथ मृगमयं ॥
 सर्वलक्षणसम्पूर्णं सुदृढं व्यङ्गवर्जितं ।
 तं महस्त्रयतं कुर्यादच्छिद्रमथवापि वा ।
 स्वकुलत्वानुरूपेण पार्श्वैकच्छिद्रमेव वा ॥
 सन्निधाने ततः कुर्यात् मलिलं वस्त्रमातलं ।
 होमार्थं कल्पयेच्चापि पलाशाः समिधः शुभाः ॥
 तिला घृतं तथा क्षीरं शमोपचाणि चैव हि ।
 वेद्याः पूर्वोत्तरे भागे ग्रहपोठं प्रकल्पयेत् ॥
 तत्र पूज्या ग्रहाः सर्वा ग्रहयज्ञविधानतः ।
 पूर्वस्यां दिशि शक्रस्य पूजां कुर्वीत यत्नतः ॥
 दक्षिणस्यां यमस्याथ प्रतीक्षां वरुणस्य च ।
 कुबेरस्य तथोदीक्षां वलिं कुर्यात् फलाक्षतैः ॥
 एवं सम्भृत्य सम्भारं शुक्लाश्वरधरस्तथा ।
 समलम्ब्य शुभैर्गन्धैर्दर्भपाणिरतन्द्रितः ॥
 पीठमारोपयेद्युक्ते यजमानं दिजोत्तमाः ।
 यजमानोऽपि देवस्य सम्मुखः प्रयतः शुचिः ॥
 उपविश्य पठन्मन्त्रं पुराणोक्तमिदं शृणु ।
 नमस्ते देवदेवसा नमस्ते अवनैश्चर ।

व्रतेनानेन माम्नाहि परमात्मा नमोऽस्तु ते ॥
 तिस्रोदकस्य धारास्ताः प्रतिसम्भ्यासमन्वितः ।
 शिरसा धारयेत्सूचीं तदृष्टेनाम्तरात्मना ॥
 होमं कुर्युस्ततो विप्रा दिक्षु सर्वांसु तत्पराः ।
 पठेयुः शान्तिकाध्यायं विष्णुसंज्ञानि यानि च ॥
 वादित्रैस्ताड्यमानैश्च शङ्कगेयस्त्रनैस्तथा ।
 पुण्याहं जयशब्दैश्च वेदध्वनिविमिश्रितैः ॥
 मङ्गलैस्तुतिसंयुक्तैः कारयेत्तु महोत्सवम् ।
 देवदेवस्य चरितं केशवस्य महात्मनः ॥
 हरिवंशादिकं सर्वं श्रावयेत् ब्राह्मणोवरः ।
 सौवर्णिकमद्याख्यानं भारताख्यानमेव च ॥
 व्याख्यानकुशलः कश्चिच्छ्रावयेत् पुरतस्त्रितः ।
 अनेन विधिनासाद्य तां* रात्रीं प्रत्यवर्तिनीं ॥
 यजमानो नयेद्गीमान् यावत् सृष्ट्यादयोभवेत् ।
 ब्राह्मणाद्यापि तां रात्रिं सुकृतो जातवेदसम् ॥
 मन्त्रैस्तु वैष्णवैर्दिव्यैः क्षपयेद्युर्महोपते ।
 वासुदेवस्य शिरसोधारां तत्र प्रपातयेत् ॥
 क्षीरेणाज्येन वा राजन् सर्व्वं सिद्धिप्रदायिनीं ।
 ततः प्रभातममये यजमानोद्विजैः सह ॥
 स्नानं कुर्यात् नृपत्रेष्ठ नद्यां सरसि वा पुनः ।
 अथ वा शक्तिहीनस्त, यजमानोष्णवारिणा ॥
 ततः शक्तानि वस्त्राणि परिधाय यतव्रतः ।

* माध्वमिति पुष्पकान्तरे पाठः ।

अर्घ्यं दत्त्वा भास्करस्य सविधानं प्रसवधीः ॥
 पुष्पं धूपैः सनैवेद्यैः पूजयेत् पुरुषोत्तमं ।
 हुत्वा हुताग्र्यं भक्त्या दत्त्वा पूर्णाहुतिं ततः ॥
 दक्षयेत् ब्राह्मणान् सर्वान् होतारोऽपि कल्पिताः ।
 शय्यालाजैश्च गोदानैर्वस्त्रैराभरणैस्तथा ॥
 आचार्यैः पूजनीयोऽत्र सर्वस्वेनापि भारत ।
 येन वा तुष्टिः स्यादेव देवतुल्यो गुरुर्द्यतः ॥
 वित्तशक्तिविहीनस्तु भक्तिशक्तिसमन्वितः ।
 हीनानाद्यभिषिष्टेभ्यो बन्दिनश्च समागताः ॥
 तेषामत्र हिरण्यञ्च दद्याच्छुभेन चेतसा ।
 एवं सम्पूज्य विप्राय भोजयित्वा यथेष्टितम् ॥
 यथाविभवसारेण पञ्चाहुतीत वाग्यतः ।
 हविश्चमच्च यज्ञेन न हविष्यातिलस्तथा ॥
 एष यज्ञो महाराजन् श्रीक्तो यस्ते प्रकीर्तितः ।
 यत्कृत्वा* सर्वपापेभ्यो मुच्यते नात्र संशयः ॥
 वाजपेयातिरात्राभ्यां याजयन्ति शतं वसाः ।
 सर्वे ते विहिं यागस्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥
 सप्तजन्मनि सौभाग्यमायुरारोग्यसंपदः ।
 प्राप्नोति द्वादशीमेतां यामुपोष्य विधानतः ॥
 ऋतो विष्णुपुरं याति विष्णुना सह भोदते ।
 षतुर्भुगानि द्वात्रिंशद्विष्णुरूपधरस्तथा ।
 चन्द्रलोके तद्या राजन् युगानि द्वादशैव तु ॥

ब्रह्मलोके तथा त्रीणि सूर्यलोके युगे तथा ।
 पुण्यक्षयादिहाभ्येत्य राजा भवति धार्मिकः ॥
 पृथिव्यधिपतिः श्रीमान् विजितारिः प्रतापवान् ।
 व्रतमेतत्पुरा चीर्णं सगरेण महात्मना ॥
 षजेन धन्वुमारेण दिलीपेन ययातिना ।
 अन्वेष्य पृथिवीपक्षपालितैरिह भूतले* ॥
 स्त्रीभिर्वैश्वैस्तथाशूद्रैः धर्मकामैः सदा नृप ।
 भृन्वाद्यैर्मुनिसंघैश्च ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ॥
 त्वया च पृष्टेन मया कथितं तस्मिन्नाधिप ।
 अद्यप्रभृति चैवेतिख्यातिं यास्यति भूतले ॥
 भीमाख्या हादशीचेति कृतकृत्या नरा यतः ।
 एषा पुलस्तसुनिना कथिता कुरुनन्दन ॥
 यच्चैनां कथितां यद्वात् कुर्व्याहा भक्तिभावितः ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोके महीयते ॥
 दरिद्रे चापि वा पार्थ वित्तयातं विवर्जयेत् ।
 विष्णुभक्तेन कर्त्तव्या संनारभयभीरुणा ॥
 भीमेन या किल पुरा समुपोषितत्वा
 द्राघौगलत्स्थिरसुशौतलवारिधारा ॥
 तां हादशीं चिदश्वेषामुखां स्मरेद्यः
 सम्यक् समाचरति याति च विष्णुलोकम् ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं भोमहादशीव्रतम् ।

* पृथिवीपक्षपालितादीपभूतले इति पुलकाकरे पाठः ।

नन्दिकेश्वर उवाच ।

ऋणु राजन् प्रवक्ष्यामि विष्णोर्व्रतमनुत्तमम् ।
 विभूतिहादशी नाम सर्वाभरणभूषिता ॥
 कार्तिके वाद्य वैशाखे मार्गशीर्षेऽथ फाल्गुने ।
 आषाढे वा दशम्यान्तु शक्तायां लघुसुकुरः ॥
 कृत्वा सायन्तनीं सन्धां गृह्णीयान्नियमं बुधः ।
 एकादश्यां निराहारः समभ्यर्च्य जनार्दनम् ॥
 द्वादश्यां द्विजसंयुक्तः करिष्ये भोजनं ततः ।
 तद्विघ्नेन मे यातु साफल्यं मधुसूदन ॥
 ततः प्रभाते शीतघाय कृत्वा स्नानजपं शुचिः ।
 पूजयेत् पुण्डरीकाक्षं शक्तमास्यानुत्सेपनैः ॥
 विभूतिदे नमः पादौ विकीर्षायेति जानुनी ॥
 नमः शिवायेति चोक्तं कटिं वै विश्वरूपिणे ।
 कन्दर्पाय नमोमेढ्रं आदित्याय नमः करौ ॥
 दामोदरायेत्युदरं वासुदेवाय च स्तनी ॥
 माधवायेत्युरोविष्णो कण्ठसुतकण्ठिने नमः ।
 श्रीधराय सुखं केशान् केशवायेतिना रहः ॥
 धृतशार्ङ्गधरायेति श्वशरे वरदाय वै ।
 स्वनाम्ना शङ्ख, चक्रा, सि, गदा, वरद, पाण्डवः ॥
 शिरः सर्वाङ्गने ब्रह्मन् नम इत्यभिपूजयेत् ।
 मङ्गलमुत्फुल्लसंयुक्तं शैमं कृत्वा तु शक्तितः ॥
 उदङ्मुखसमायुक्तमपतः स्थापयेद्विभीः ।

• 'सत्त्वप्रदुत्पुल्लसंयुक्तं' शैमविति पुस्तकान्तरे पाठः ।

शुद्धपात्रान्तिलैर्युक्तं सितवस्त्राभिषेष्टितम् ॥
 रात्रौ च जागरं कुर्व्यादितिहासकथादिकम् ।
 प्रभातायां तु शर्ब्यां ब्राह्मणाय कुटुम्बिने ।
 सकाशनीत्यलं देवंसोदकुम्भं निवेदयेत् ॥
 यथा ना शोचते विष्णो सदा सर्वं विभूतिभिः ।
 तथा मासुषराशेषदुःख संसारकर्ममात् ॥
 दशावताररूपाणि प्रतिमासकामान्भुजे ।
 दत्तात्रेयं तथा व्यासमुत्पलैर्न समन्वितम् ॥
 प्रतिमासं तु कर्त्तव्या मूर्त्तयः काशनेन वै ।
 काशनेनैव पद्मस्य संख्याष्वोपरिपूजयेत् ॥
 पुष्य धूपादिनैवेद्यैर्भेष्यभोग्यैः सदीपकैः ।
 वस्त्रैराभरणैश्चैव यथाविभवसारतः ॥
 रात्रौ जागरणं कुर्व्याद्गीतकृत्यादिभिर्नरैः ।
 ततः प्रभाते विमले कृतज्ञानादिकान्त्रयः ॥
 उपदेष्टे तु दातव्यं सर्वमेतत् समाहृतम् ।
 प्रतिमासं पुराणैर्विद्वेदवेदाङ्गपारमैः ॥
 ततः संवत्सरस्यान्ते पित्रेणं शक्तिपूर्वकम् ।
 शक्तिपूर्वकं विभूतिपुरःसरम् ।
 कृत्वाऽस्यैव सवशपर्वते न समन्वितं ।
 सवशपर्वत्तदानविधिस्तु दानखण्डे विलोकनीय
 शय्यां सोपस्करां श्रेष्ठां गाश्वेदीपस्करान्वितां ।
 ग्रामं देशपतिर्दद्यात् शेषं ग्रामाधिपस्तथा ।
 निवर्त्तनं क्षेत्रपतिर्भवनञ्च सञ्चक्षिमत् ॥

एवं विभवसारेण पूजयित्वेदृशं गुरुम् ।
 अन्यानपि यथाशक्त्वा तर्पयित्वा द्विजोक्तमान् ॥
 वस्त्रान्नगोहिरण्यादिसत्वमास्थाय चोत्तमम् ।
 यत्र सत्त्वं तत्र हरिस्तोषमायात्यसंशयम् ॥
 यच्चातिनिष्ठः पुरुषो भक्तिमान् माधवं प्रति ।
 पुष्पाञ्जनविधानेन स कुर्यादक्षरद्वयम्* ॥

यज्ञपुराणात् ।

शेषे गास्तु प्रदातव्या मीधमे भूमिरुत्तमा ।
 कन्या सकाञ्चना देया† द्वीत्येषा दक्षिणा स्मृता ॥
 प्रथमं ब्रह्मदेवत्यं द्वितीयं वैष्णवं तथा ।
 तृतीयं बृहद्देवत्यं त्रयो देवाः त्रिषु स्थिताः ॥

मत्स्यपुराणात् ।

अनेन विधिना यस्तु विभूतिहादशीव्रतम् ।
 कुर्यात् स पापनिर्मुक्तो गुरुणांऽतारवेच्छतम् ।
 सप्तजन्मान्धसौ मर्त्यो विभूतिं प्राप्नुयात्परम् ।
 रोगदौर्गत्यपापानां भाजनं नोपजायते ॥
 भक्तिश्च यज्ञपुरुषे तस्य जन्मनि जन्मनि ।
 प्राप्नुयादश्रुतं स्वानमश्रुतस्य प्रसादतः ॥
 इयच्चाखण्डिता कार्या विभूतिहादगी नरैः ।
 सर्वपापोपशमनी फलमीदृक्प्रदायिनी ॥

* बत्तरदशमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† कन्यासकाञ्चनं देव मिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

+ पित्रणां तारवेच्छतमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

इति कलुषविदारणं जनानां
 पठति सदा शृणोति यच्च भक्त्या ।
 मतिमपि च ददाति देवलोके
 वसति चिरं च स पूज्यतेऽमरोऽपि ॥

इति मत्स्यपुराणोक्तं विभूतिद्वादशीव्रतम् ।

वज्रमुवाच ।

द्वादशीषु कथं विष्णुः सोपवासेन पूजितः ।
 राज्यप्रदः स्यात्कर्मज्ञ तन्मे त्वं ब्रूहि तत्त्वतः ॥
 ब्रह्मचारी गृहस्थश्च वानप्रस्थीप्यभिक्षुकः ।
 राज्ञा संरक्षिताः सर्व्वे शक्नुवन्ति निषेवितुम् ॥
 मानुषेण शरीरेण राजा देववपुर्द्धरः ।
 क्षत्रियोऽपि सतां पूज्यो ब्राह्मणानां महात्मनां ॥
 विना राज्यं हि या लक्ष्मीः परतन्त्रा हि सा मता ।
 तस्माद्वाज्यं प्रशंसन्ति तत्राज्ञानं विद्वन्वते ॥
 तुल्यधातुशरीराणां तुल्यावयवधारिणां ।
 नरेन्द्राणां नरैर्ब्रह्मदेववद्भुवि वर्त्तते ॥
 राज्यदां द्वादशीं* तस्माद्ब्रह्ममर्हति मे भवान् ।
 यासुपीष्य महद्वाज्यं प्राप्तवान् स तु वै द्विज ॥

मर्कण्डेय उवाच ।

शृणुष्यावहितो राजन् द्वादशीं राज्यदां शिवां ।

* नीराज्यद्वादशीमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

यामुपोष्य नरोल्लोके राज्यमाप्नोत्यकण्टकम् ॥
 मार्गशीर्षस्य मासस्य शुक्लपक्षे नराधिप ।
 दशम्यां प्रयतः शुद्धः स्नानमभ्यङ्गपूर्वकं ॥
 हविष्यभुक् प्रशान्तात्मा दन्तधावनपूर्वकं ।
 उपवासस्य सङ्कल्पं श्लोभूतस्य तु कारयेत् ॥
 देवाङ्गणे कुशस्त्रीर्णामेकवस्त्रीतरच्छर्दा ।
 अध्यासीत महीं तत्र तां रात्रीं संयतो नयेत् ॥
 द्वितीयेऽङ्गि ततः कुर्यादङ्गिः स्नानमतन्द्रितः ।
 पूजनं चैव सर्वं स्य* सर्वं मुक्तेन कारयेत् ॥
 कपूरं चन्दनं देयं मल्लिका श्वेतयूथिका ।
 जात्यञ्च शुक्ला राजेन्द्र धूपं कुन्दुहमेव च ॥
 छतेन दीपा दातव्या शुक्लवर्त्तनमन्विताः ।
 छतीदनं दधिक्षीरे परमान्नं तथैव च ॥
 इच्छुमिच्छुविकारं वा देवदेवे निवेदयेत् ।
 कालोद्भवं मूलफलं पर्णं तत्र न चिर्कीयेत् ॥
 यथालाभेन तद्देयं शुक्लं वा स्याद्विशेषतः ।
 हवनञ्च ततः कार्यं परमाग्नेन पार्थिव ॥
 तद्विष्णोः परमित्येवं ह्योममन्त्रोऽभिधीयते ।
 द्वादशः क्षरकं मन्त्रं स्त्रीशूद्रेषु विधीयते ।
 ततोऽग्निहवनं कृत्वा शक्त्या संपूष्य च द्विजान् ।

* सर्वं शुक्लमेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† पर्णं नव निवेदयेदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

सितरङ्गिण कर्त्तव्या भूमिशोभा सुराशये ॥
 रात्रौ जागरणं कार्यं गीतं नृत्यञ्च पार्थिव ।
 कर्मणा देवदेवस्य कर्त्तव्यं श्रवणं तथा ॥
 हादृश्यां विधिनैतेन पुनः पूज्यः सनातनः* ।
 राज्यलिङ्गं प्रदातव्यमेकं विप्राय दक्षिणा ॥
 ततश्च पयाङ्गोक्तव्यं हविष्यं पार्थिवोत्तम ।
 एकादशौ यथा मध्ये ज्ञानयोर्व्वर्त्तते नृप ॥

तथा भोक्तव्यमिति शेषः हिवचनबलादेकभक्तज्ञानमनुकथ्यते
 अग्रमर्थः एकादश्यामनागतायां यो मे विप्राय दक्षिणां तम
 भुक्तमतीतायां पारणं, ज्ञानग्रहणं दूरतो वर्जनार्थं ।

कार्त्तं मौनञ्च कर्त्तव्यं जप्यं कार्यन्तु मानसम् ।
 हादृशीष्वथ शुक्तासु सर्वास्त्रिव विशेषतः ॥
 विधिस्तवायं निर्दिष्टः कृष्णाश्वेषु कारयेत् ।
 विशेषं तासु वक्ष्यामि तन्मे निगदतः शृणु ॥
 रक्तवस्त्रेण कर्त्तव्या देवपूजा यथाविधि ।
 रक्तञ्च देयं नैवेद्यं पुष्यगन्धानुलेपनं ॥
 तिलतैलेन दीपाश्च महारजतरङ्गिताः ।
 दीपेषु वर्त्तयोदेया होमः कार्यस्तथा तिलैः ॥
 भूमिशोभा च कर्त्तव्या रक्तैर्भूपालवर्णकैः ।
 अनेन विधिना पूज्य राजन् संवत्सरं प्रभुं ॥
 कार्त्तिक्यां समतीतायां कृष्णा या हादृशी भवेत् ।
 व्रतावसाने तस्यां तु महावर्त्तिं प्रदापयेत् ॥

* जनादेन इति पुण्यकारे पाठः ।

वाससा च समयेण तुलया च वृत्तस्य च ।
 ब्राह्मणाय च दातव्या धेनुः कांस्योपदीहना ॥
 हेमशुद्धैः खुरैरीष्यैर्मुक्तालाङ्गूलभूषिताः ।
 वस्त्रोत्तरीया दातव्या यत्नया द्रविणसंयुता ॥
 संवत्सरेण राजा स्यान्नरः पर्व्वतगङ्गरे ।
 त्रिभिः सवत्सरैः पुण्यैर्जायते मण्डलेश्वरः ॥
 तथा द्वादशभिः पुण्यैः राजा भवति पार्थिवः ।
 राज्यप्रदा तेऽभिहिता मयेषा
 स्याद्द्वादशौ पापहरावसिष्टा ।
 उपाध्य यां भूमितले नरेन्द्रो
 भवत्यजेयस्तु रणेऽरिसंघैः ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं राज्यद्वादशीव्रतम् ।

अम्बरीष उवाच ।

कथं सुनामभिर्हेवो द्वादश्यां मुनिसत्तम ।
 पूज्यते केशवा मर्त्ये मुक्तिशामफलार्थिभिः* ॥
 वसिष्ठ उवाच ॥

शृणुष्वैकमना भूप सुनामद्वादशौ शुभा ।
 सर्व्वपापहरा स्तर्ग्या भुक्तिमुक्तिप्रदायिका ॥
 मनसा च चिकीर्षन्ति द्वादशौ ये नरोत्तमाः ।
 तेऽपि क्षीरं न पश्यन्ति पुनः संसारसागरं ॥

* क. मफलातिभि रिति पुस्तकानरे पाठः ।

आयं सर्व्वव्रतानां तु वैष्णवानां नृपोत्तम ।
 नरैस्त्रिभिश्च कर्त्तव्यं विष्णोस्तुष्टिकारं परम् ॥
 मार्गशीर्षे शुभे मासि शुक्लपक्षे यतव्रतः ।
 प्रथमश्चैव गृह्णीयाद्वादशीं विधिवत्परः ॥
 मनोवाक्कायचेष्टाभिः सुविशुद्धो जितेन्द्रियः ।
 दशम्यां नियतः स्नात्वा प्रणिपत्य जनार्दनम् ॥
 हविष्यान्नक्तताहारः श्रुचिभूत्वा भवेद्भृती ।
 उपतिष्ठे शुची देशे भक्षयेद्दन्तधावनं ॥
 उपोष्यैकादशीं* सम्यक् पूजयित्वा जनार्दनम् ।
 सुनामद्वादशीं देव अहं भोष्ये परेऽहनि ॥
 एवं सकल्प्य नियमं प्रणम्य गरुडध्वजम् ।
 दशम्यामेकभक्ताशी संयतः संवसेत्रिशां ॥
 एकादश्यां ततः प्रातरेकचित्तः समाहितः ।
 पूर्व्वं संपूजयेत् सूर्य्यं ततो देवं प्रपूजयेत् ॥
 देवं विष्णुं ।

नमस्ते देवदेवेश नमस्ते भक्तवत्सल ।
 भास्कराय नमस्तुभ्यं रवये त्वयि भानवे ॥
 नमः सूर्य्याय देवाय नमस्ते सप्तसप्तये ।
 एकस्मै हि नमस्तुभ्यमीकचक्ररथाय च ॥
 षोडश्यां पतये नित्यं सर्व्वतेजोहराय च ।
 द्विवाकर नमस्तेस्तु प्रभाकर नमोस्तु ते ।
 एवं संपूज्य विधिवत् पुष्यधूपानुलेपनैः ।

* श्रद्धामिति पुस्तकाकरे पठः ।

दीपैर्वस्त्रैः सनैवेद्यैस्ततो विष्णुगृहं व्रजेत् ॥
 अच्युतं चार्चयेद्भक्त्या मालतीकुसुमैर्धुं शम् ।
 गुग्गुलं घृतसंयुक्तं दीपं दद्यादहर्निशम् ॥
 पायसापूपसंघावकरश्चादिकदम्बकैः ।
 नैवेद्यं हरये दद्यात् फलमोदकाफाणितैः ॥
 गीतवाद्यैर्हरैरिष्टैः प्रणमेषु सुहृर्मुहुः ।
 एषं पूजां हरैः कृत्वा द्विजं ज्ञानप्रदायकम् ॥
 पूजयेदन्तरं नास्ति विप्रकेशवयोरिव ।
 ततो व्रतं समालभ्य चन्दनेन नवं घटम् ॥
 स्वग्विणं तोयसंपूर्णं न्यसेद्देवस्य सन्निधौ ।
 सुनीलमौक्तिकाख्यन्तु वज्रं रत्नसुवर्णकं ॥
 न्यस्तागर्भं सवस्त्रं* तु पूजयेत्तत्र केशवं ।

केशवमूर्त्तिंस्तु दक्षिणाधीहस्तादारभ्य प्रदक्षिणं पद्म शङ्ख
 चक्र गदा धारिणी सा च स्वर्णमयी विधेया ।

यस्य रोचिस्थिता मेघाः सर्व्वे सविषपन्नगाः ॥
 सागराः कुक्षिदेशस्थाः सोत्रासनजगत्पतिः† ।
 वनस्पतिरसो दिव्यः सर्व्वगन्धेषु शोचनः ॥
 घृतेन सहसंमिश्रः धूपोऽयं अतिगृह्णातां ।
 केशवं केशिहा दुष्टकांसदैत्यनिषूदनः ॥
 सर्व्वकामप्रदोदेवः स मे पापं व्यपोहति ।
 एवमभ्यर्च्य देवेशं प्रणिपत्य क्षमापयेत् ॥

* न्यस्तागर्भं सवस्त्रं इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† शोचनोऽजगत्पते इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

द्वादश्यां गन्धतोयेन स्नापयित्वेह माधवं ।
 सर्वपापविनिर्मुक्तो वैष्णवी लभते तद्गुं ॥
 कृताभिक्षेकः पुण्यात्मा सम्यग्भ्यर्च्य केशवं ।
 नवसूतां तथा धेनुं ब्राह्मणायोपपादयेत् ॥
 केशवः प्रीयतां देवः केशिहस्ता महाद्युतिः ।
 स च मे भगवान् प्रीत इष्टान् कामान् प्रयच्छतु ॥
 एवं प्रदक्षिणं कृत्वा शृणु तस्यापि यत् फलं ।
 त्रिंशदष्टकतं पापं हत्वा स त्रिविधं नरः ॥
 षष्टिर्षष्टस्त्राणि स्वर्गं मोदति देववत् ॥
 यदा कालादिह्यायति स धर्माधनवान् भवेत् ॥
 अथवा दशधेनूनां* तन्नाम कल्पयेन्नरः ।
 तत्फलं हि विनिर्दिष्टं यथा शक्त्या तु दक्षिणा ॥
 विभक्त्या फलमाप्नोति भक्तिरेवात्र कारकम् ।
 योषे चैव तु मासे वा यथैवं कुरुते नरः ॥
 समाहितमना भूप रसं तु विप्रदायकः ।
 आपो नरा इति प्रोक्ता आपो वै नरमूनवः ॥
 अयनं* वर्त्तयेत् स्नाकारायश्च इति स्मृतः ।
 नारायणः प्रीयतां मे देवो नरप्रियः सदा ॥
 इष्टकामप्रदं नित्यं स मे पापं व्यपोहतु ।
 ततः प्रदक्षिणं कृत्वा ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥
 एवं हि यजमानस्य तस्य पुण्यफलं शृणु ।

* स्नाकारायश्च इति पुण्यकारे वाक्यः ।

। वा चदस्त्रायनं पुण्यं तेनेति पुण्यकारे वाक्यः ।

षष्टिवर्षकृतं पापं क्षय्यं वा यदि वा बहु ॥
 दत्त्वा स्वर्गमवाप्नोति बर्षाणामयुतं शुभं ।
 माघस्यैव तु मासस्य द्वादश्यां शुक्लपक्षतः ॥
 यः क्षपेद्विष्टचिर्मूत्वा एकचिभः समाहितः ।
 तपने पूजने नित्यं ब्राह्मणानां च तर्पणैः ॥
 प्रदाने नृपयार्दूल इमं मन्त्रसुदीरयेत् ।
 महालक्ष्मीः पुरात्रेयी भगिनी शशिनोऽनुजा ॥
 धवस्वमपि तस्यास्तु सर्व्वकामद माधव ।
 प्रीयतां देवदेवी मे मधुकैटभसूदनः ॥
 कंसकेशिनिरुहता च मम पापं व्यपोहतु ।
 एवं यः कुरुते नूनं तस्य पुण्यफलं शृणु ॥
 यावज्जन्मकृतं पापं हत्वा सर्व्वमशेषतः ।
 दिव्यवर्षसहस्राच्च स्वर्गं वसति षोडश ॥
 गुडधेतुप्रदोमात्रे इहायातः सदा सुखी ।
 भवेद्भ्राजनिरातङ्गः सर्व्वैश्वर्य्यसमन्वितः ॥
 तत्र विष्णुपरोभूत्वा क्लृप्ताश्चोक्षमवाप्नुयात् ।
 फालगुनामसपक्षस्य दशम्यां नियतः ऋषिः ॥
 पूजयित्वा विधानेन गन्धपुष्पादिना हरिं ।
 तिलधेतुं ततो दद्याद्गुणं चापि सुभक्तितः ॥
 मन्त्रेणानेन राजेन्द्र गोविन्दः प्रीयतामिति ।
 गवां भक्तोस्ति गोस्वामी गोवासी गोकुतालयः ॥
 सर्व्वकामप्रदो नित्यं स मे पापं व्यपोहतु ।
 ततः प्रदक्षिणं कृत्वा शृणु पुण्यं यथातथं ॥

बलीवर्षसहस्राणां दशानां धुरवाहिनी ।
 न तैस्तत्फलमाप्नोति द्वादश्यां यद्भवेन्नृप ।
 दिव्यवर्षसहस्राणि स्वर्गं तिष्ठति स्वर्गिवत् ॥
 चैत्रस्य द्वादशी शुक्ला समुपोत्था नृपोत्तम ।
 ज्ञात्वा सम्पूजयेद्दिष्णुं जगतान्तरचारिणं ॥
 पूर्वोक्तविधिवत् ज्ञात्वा गोमूत्रैर्गोमयेन वा ।
 ज्ञापयित्वा मृते नैव पश्यानां गव्यसंयुतैः ॥
 जलैः पश्चात्तु पूज्यैवं गन्धधूपविलेपनैः ।
 पुष्पवासोभिरेवं हि मन्त्रेणानेन बुद्धिमान् ॥
 प्रवेशनो सदाशीलो* भगवान् रक्षणाय च ।
 उर्ध्वं चांशुं विनिर्जेतुं मासि विष्णुरतो हरेः ॥
 विष्णुर्भवतु मे प्रीतो विष्णुर्देवः सनातनः ।
 सर्वपापविनाशाय विष्णुर्मै प्रीयतामिति ॥
 मधुधेनुमभावाच्च शक्तितः पात्रमेव च ।
 दत्त्वा यत् फलमाप्नोति तदिहैकमनाः शृणु ॥
 सर्वजन्मानि यत्पापमिह जन्मानि साम्प्रतं ।
 वर्त्तते सकलं हत्वा स्वर्गलोके महीयते ॥
 वैशाखस्य तु मासस्य पूजयेन्मधुसूदनं ।
 पूर्वोक्तविधिना राजन् सौवर्षं मधुसूदनं ॥
 जलकुम्भेन संस्थाप्य मन्त्रेणानेन पूजयेत् ।
 एकार्णवे जले धातर्हता वेदाः पुरा हरे ॥
 मधुनामा हतः सोऽपि तेनानुमधुसूदनः ।

* प्रवेशनैः सदेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

स मे भवतु सुप्रोतो देवदेवः सनातनः ॥
 सर्वपापापनोदाय प्रीयतां मधुसूदनः ।
 छृतमन्नमथो दत्त्वा ब्राह्मणान् भोजयेत्ततः ॥
 ततः प्रदक्षिणं कृत्वा दत्त्वादेयां तथैव गां ।
 एवन्तु रक्षमाणस्य तस्य पुण्यमतः शृणु ॥
 कपिलायाः सहस्रस्य सम्यक्दत्तस्य यत् फलं* ।
 तत्फलं समवाप्नोति भक्तियुक्तो न संशयः ॥
 यावदिन्द्रो वसेत् स्वर्गे तावदेव स तिष्ठति ।
 ज्यैष्ठस्यैव तु मासस्य शुक्लपक्षे तु द्वादशीं ॥
 पूजयेद्विधिवद्भक्त्या समुपोष्य त्रिविक्रमं ।
 जलधेगुमथोदद्याद्विप्राय नियतः शुचिः ॥
 यज्ञभागभुजोदैत्यान् सन्नहृत्य क्रमैस्त्रिभिः ।
 त्रैलोक्यमाहृतं तस्मात्तेनासि त्वं त्रिविक्रमः ॥
 त्रिविक्रमं त्रिलोकेशं प्रीणयामि त्रिविक्रमं ।
 ततः प्रदक्षिणं कृत्वा ब्राह्मणेभ्यश्च दक्षिणां ॥
 दत्त्वा तु भोजयेत्तांस्तु शृणु तस्यापि यत्फलं ।
 वाजपेयस्य यज्ञस्य सम्यग्गिष्टस्य पार्थिव ॥
 तत्फलं लभते मर्त्यो परत्रैव सुखी भवेत् ।
 वामनन्तु यथाघाटे समुपोष्य प्रयत्नतः ॥
 द्वादश्यां नियमाहारी वामनं तत्र पूजयेत् ।
 हृिताय सर्वदेवानामादित्यः कामदो यथा ॥
 तथा त्वं भव मे देव वामनो बलिबन्धनः ।

* अथां दशमपक्षे पाठदत्तेन यत्फलं इति पुस्तकाकारे पाठः ।

तिलधेनुं ततो दद्याद्दामनः प्रीयतामिति ॥
 इन्द्रस्थानाच्च सरसस्ताषा पर्वतमस्तकान् ।
 एताभिः स्नाप्य देवेशं दद्याद्गोरोचनां शुभां ॥
 ततस्तु कलशा देया यथावत्तमलङ्कृताः ।
 जातीपल्लवसंयुक्ताः सफलाश्च सकाञ्चनाः ॥
 पुण्याह्वेदशब्देन वीणाविष्णुरवेष च ।
 शब्देन मधुरेषैव स्रुतमागधवन्दिनां ॥
 एवं संस्थाप्य गोविन्दं स्वनुलितं स्तलङ्कृतं ।
 सुवाससम्पूजयेत्संसुमनीभिश्च कुङ्कुमैः ॥
 धूपैर्दीपैर्मनोज्ञैश्च पायसेन तु भूरिणा ।
 मात्रारत्नप्रदानैश्च ह्येभिः पुष्पैः सदक्षिणैः ॥
 वासोभिर्भूषणैर्ह्ये गोभिरश्वगजैरपि ।
 ब्राह्मणाः पूजनीयाश्च विष्णोराद्याः सुमूर्त्तयः ॥
 विष्णोराज्ञो प्रसृतस्य दामोदरगतस्य च ।
 ब्रह्माण्डस्य सुतोसि त्वं दामोदर इति स्मृतः ॥
 दामोदर इमां धेनुं गृह्णातु स्वयमेव हि ।
 द्विजरूपेण ते विष्णो प्रकृत्येषा सनातनी ॥
 इत्येवं पृथिवीदानात् फलं प्राप्नोति मानवः ।
 सुवर्णस्य महाधेनुं दत्त्वा वरं नृपोत्तम ॥
 हत्वा पापान्यशेषाणि शतजन्मान्तराणि वै ।
 वेष्णवं लोकमाप्नोति यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥
 सम्यगत्र व्रतेषीर्णे समजन्मानुगं फलं ।
 ददाति भगवान् विष्णुः क्रमात् मोक्षं नरेभ्यः ॥

ब्राह्मणान् भोजयेन्नृत्वा भक्ष्यस्तूत्रावचैरपि ।
 ततः प्रदक्षिणं कृत्वा यथाशक्त्या च हृत्विणां ॥
 कलशान् हादशांश्चैव ब्राह्मणेभ्यः प्रदापयेत् ।
 वज्रेण वेष्टतेषीद्वान् होमगर्भोपशोभितान् ॥
 दधिक्षीरयुतांश्चैव सगुणान् नृप भूरिशः ।
 शक्तिर्यथा तथा दद्याद्भक्तिरेवात्र कारणं ॥
 प्रसङ्गेनापि यो राजन् सुनामहादर्शी नरः ।
 करोति पुण्यभागी स यथा दद्याद्भवेद्वलिः ॥
 एवं यः कुरुते राजन् सुनामहादर्शी नरः ।
 राजसूयस्य यज्ञस्य फलं समधिकं भवेत् ॥
 सर्व्वदानेषु यत्पुण्यं यच्च पुण्यं तपोवने ।
 सर्व्वतीर्थेषु यत्पुण्यं तत्पुण्यं समुदाहृतम् ॥
 गावो द्वादश दातव्या वस्त्रयुग्मानि काश्चन ।
 अलाभाश्चैव गामेकां पात्रञ्च स्वर्णसंयुतं ॥
 समासेनाथवा प्येवं चञ्चलं जीवितं ततः ।
 बहुविद्भानि धर्मस्य कर्तुः छिद्रं न जायते ॥
 एतज्ज्ञात्वा तु मेधावी व्रते युग्मेन यत्नतः ।
 न तस्य वित्तलोभोस्ति भक्तिपात्रोऽस्ति केशवः ॥
 अनेन विधिना यस्तु हादर्शी परिवत्सरं ।
 कृत्वा नरः परं याति विष्णुलोकमनामयं ॥
 सुनामहादर्शीचैषा व्रतानामुत्तमं व्रतं ।
 आद्या नरेस्तु कर्त्तव्या तोषयद्भिर्जनार्हिनं ॥
 यच्चैर्मा कौत्सयेत् पुण्यां शृणुयाद्वादशीं नरः ।

तावभौ गच्छतः स्वर्गं कर्त्ता विष्णुपुरं व्रजेत् ॥

इति वक्रिपुराणोक्तं सुनामद्वादशीव्रतम् ।

पुलस्त्य उवाच ।

फाल्गुनामलपक्षस्य एकादश्यामुपोषितः ।

नरोवा यदि वा नारी समभ्यर्च्यं जगत्पतिं ॥

हरेर्नाम जपन् भक्त्या सप्तवारान् जनेश्वर ।

उत्तिष्ठन् प्रस्वपंश्चैव हरिमेवाशु कौर्त्तयेत् ॥

अतः प्रभाते विमले द्वादश्यां नियतो हरिं ।

स्नात्वा सम्यक् समभ्यर्च्यं दत्त्वा विप्राय दक्षिणां ॥

हरिसुद्दिश्य चैवाग्नौ द्युतद्वोमं समाचरेत् ।

प्रणिपत्य जगन्नाथमिति वाणीमुदीरयेत् ॥

पातालसंख्या वसुधा प्रसाद्य च मनोरथान् ।

अवाप वासुदेवोमे स ददातु मनोरथान् ॥

यमभ्यर्च्यं दिति प्राप्ता सकलांश्च मनोरथान् ।

भ्रष्टराज्यय देवेन्द्रो यमभ्यर्च्यं जगत्पतिं ॥

मनोरथानवाप्याशु स ददातु मनोरथान् ।

एवमभ्यर्च्यं पूजाश्च निष्पाद्य हरये ततः ॥

सम्भोज्य तिग्धिभृत्वांश्च हविष्याग्नेन वाग्यतः ।

स्वयम्भुञ्जीत च नरोहरिं ध्यात्वा विमत्सरः ॥

फाल्गुनश्चैत्रवैशाखौ ज्यैष्ठमासश्च पार्थिव ।

चतुर्भिः पारणं मासै रेभिर्निष्पादितं भवेत् ॥

रक्तपुष्पैश्च चतुरोमासान् कुर्वीत वार्चनं ।

दहेच्च गुग्गुलं प्राश्य गोमृगक्षालनं परं* ॥
 हविष्यासञ्च नैवेद्यमात्मनसापि भोजनं ।
 तदस्तु श्रूयतामन्या आषाढादिषु वा क्रिया ॥
 जाती† पुष्याणि धूपञ्च शस्तः सर्जरसेन तु ।
 प्राश्य दर्भोदकं चात्र शाल्यन्नं च निवेदयेत् ॥
 स्वयमेव तदश्रियाच्छेषं पूर्व्ववदाचरेत् ।
 कार्तिकादिषु मासेषु गोमूत्रं कायशोधनं ॥
 सुगन्धं स्वेच्छया धूपं पूजां भृङ्गारकेण च ।
 भृङ्गारको माकन्दः ।
 कासारं वात्र नैवेद्यं भुञ्जीयात्तच्च वै स्वयं ।
 प्रतिमासञ्च विप्राय दातव्या दक्षिणा तथा ॥
 प्रीणनं देवदेवस्य पारणे पारणे गते ।
 यथा शक्त्या च कुर्व्वीत वित्तश्राठगविवर्जितः ॥
 सङ्गावेनैव गोविन्दः प्रीतिमाप्नोत्यनुत्तमां ।
 अतोर्धं पारणस्यान्ते प्रीणनीयो जनाईनः ॥
 प्रीणीतश्चेषितान् कामान्ददात्यव्याहतान् भुवि ।
 वर्षान्ते प्रतिमां विष्णोः कारयित्वा सुशोभनां ॥
 सुवर्णं न यथा शक्त्या गदा शङ्खांसि भूषितांः † ।
 शक्यवस्त्रयुगच्छन्नां ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 हादश ब्राह्मणांस्तत्र भोजयित्वा क्षमापयेत् ।

* जलमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† आसीपुष्याचिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ गदाशङ्खानि भूमिमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

द्वादशाल प्रदातव्याः कुम्भाः सान्नजलाक्षताः ॥
 कृषोपानद्युगेः सार्धं दक्षिणाभिश्च सप्तम ।
 गाक्षैवात्र प्रदातव्या गुरवे च पयस्त्रिनीः ॥
 सर्वोपस्कारसंयुक्ताः सवल्गाः शीलसंयुताः ।
 यत्रा पुण्या पापहरा द्वादशी फलमिच्छतां ॥
 यथाभिलषितान् कामान् ददाति वृषसप्तम ।
 पूरयित्वाखिलान् भक्त्या यतश्चैषा मनोरथान् ॥
 मनोरथा द्वादशीयन्ततो लोकेषु विद्युता ।
 उपोष्येतां त्रिभुवनं प्राप्तमिन्द्रेण वै पुरा ॥
 आदित्या बेष्टितान् पुत्रान् धनमौशनसा तथा ।
 धीम्येनाध्ययनं प्राप्तमन्यैश्चाभिमतं फलं ॥
 अपुत्रो लभते पुत्रान् निर्धनो धनमाप्नुयात् ।
 रोगाभिभूतश्चारोग्यं कन्या प्राप्नोति सत्यतिं ॥
 समागमः प्रवसितैरुपोष्यैतद्वाप्यते !
 सर्वकामानवाप्नोति मृतः स्वर्गञ्च मोदते ॥
 नापुत्रो नापि निधनो विद्युक्तो न च निर्गुणः ।
 उपोष्यैतद्गतं मर्त्यः स्त्रीजितो वापि जायते ॥
 स्वर्गलोकं सहस्राणि वर्षाणां मनुजाधिप ।
 भोगानभिमतान् भुक्त्वा स्वर्गलोकेऽभिकाक्षितान् ॥
 इह पुण्यवतां नृणां धनिनां साधुशीलिनां ।
 गृहेषु जायते राजा सर्व्वव्याधिविबर्जितः ॥
 न द्वादशीमुपवसन्ति मनोरथास्थां
 नैवाश्च यन्ति पुरुषोत्तममादिदेवं ।

गोत्राङ्गत्वाच्च न नमन्ति न पूजयन्ति
 ये ते मनोभिरक्षितं कक्षमाप्नुवन्ति ॥
 इति श्रीपद्मपुराणोक्तं मनोरथदादशीव्रतम् ।

—०००—

भोक्त उवाच ।*

किममीष्टवियोगशोकसंघा
 नलसुहृत्सुपोषणं व्रतं वा ।
 विभवोद्भवकारि भूतलेऽस्मिन्
 भवभीतेरपि सूदनश्च पुंसां ॥

पुस्तक्य उवाच ।

परमिष्टमिदं जगत्प्रियन्ते
 विदुधानामपि दुर्लभं महत्वात् ।
 तव भक्तिमतस्त्वया च वक्ष्ये
 व्रतमिन्द्रादिसुरदानवेषु गुह्यं ॥

पुष्येवाश्वयुजे मासि विमोकाद्दशीव्रतं ।
 यश्चीर्त्सा शोकदीर्गत्वभाजनं न नरते भवेत् ॥
 दशम्यां सप्तभुक् राशौ कृत्वा वै दत्ताधावनं ।
 उदङ्मुखो प्राङ्मुखो वा वाक्वनेतदुदीरयेत् ॥
 एकादश्यां निराहारः समभ्यर्च्य च केयवं ।
 त्रिदशं च जगतां भूतिं भोक्त्वाभौत्वपरैः हनि ॥
 एवं निवृत्तमाश्वासं सुखा रात्रौ जितेन्द्रियः ।
 प्रभाते विमले गत्वा मध्याह्ने तु जलाशयं ॥

* भोक्त्य उवाचेति पुस्तकाकारे पाठः ।

ज्ञानं सर्वविधैः कुर्यात् पञ्चगव्यजलेन च ।
 शक्तमाख्याम्बरधरः समभ्येत्य गृहं ततः ॥
 पूजयेज्जगतां नाथं लक्ष्मीदयितसुत्पलैः ।
 केशवाय नमः* पादौ जज्ञे च वरदाय वै ॥
 श्रीशाय जागुनी तद्दूरु च जलशायिने ।
 कन्दर्पाय नमो गुह्यं माधवाय नमः कटिं ॥
 दामोदरायैत्युदरं पार्श्वं च विपुलाय वै ।
 नाभिञ्च पद्मनाभाय हृदयं मन्मथाय च ॥
 श्रीधराय विभोर्वचः करौ तु मधुघातिने ।
 चक्षिणे वामबाहुञ्च दक्षिणं गद्दिने नमः† ॥
 नासां श्रीकविनाशाय वासुदेवाय चाक्षिणी ॥
 सलाटं वामनाथेति हरये च पुन भ्रुवौ ।
 अलकान् साधनाथेति किरौटं विश्वरूपिणे ॥
 नमः सर्वाङ्गने तुभ्यं सर्वाङ्गान्यभिपूजयेत् ।
 एवं संपूज्य गोविन्दं गन्धमाख्यानुलेपनैः ॥
 तदस्तु मण्डपस्त्राग्ने स्वच्छिलं कारयेन्मृदा ।
 चतुरस्रं समन्ताच्च चिरत्रिमात्रमुच्छ्रयं ॥
 सूक्ष्मं द्वयञ्च पुरतीवप्रद्वयसमावृतं ।

वप्रप्रकारः ।

चिरङ्गुलीच्छ्रितं वप्रं तद्विस्तारोच्चिरङ्गुलः ।
 स्वच्छिलस्त्रीपरिष्ठात्तु भित्तिरष्टांगुला भवेत् ॥

* विप्रोक्तायेति पुस्तकाकारे पाठः ।

† गन्धमाख्यानप्रकाशने च चतुरस्रपुस्तकाकारे पाठोऽस्ति ।

नदी वासुकाया शूर्पे लक्ष्मणाः प्रतिकृतिं श्यसेत् ।
 स्थण्डिले शूर्पमारोप्य लक्ष्मीमित्यर्चयेद्बुधः ॥
 नमोदेष्यै नमः शान्धेयै नमस्तस्यै नमः त्रिये ।
 नमोस्तुष्यै नमः पुष्यै ऋष्यै वृष्यै नमोनमः ॥
 विशोका दुःखनाशाय विशोका वरदास्तु ते ।
 विशोका मेऽस्तु सन्तत्यै विशोका सर्वसिद्धये ॥
 शुक्याम्बरधरः सूर्य्यं वेष्ट्य संपूजयेत् फलैः ।
 भस्त्रैर्नानाविधैस्तद्दक्षीवर्णं कामलेन च ॥
 यथा विभवती भीष्म विस्रशाठ्यविवर्जितः ।
 दभौदकं प्रशंसन्ति रात्रावस्मिन् व्रते सदा ॥
 प्राशनं जागरणैव गीतकृत्यादिभिस्तथा ।
 यामत्रये व्यतीते तु सर्वोपस्कारसंयुतः ॥
 अभिगम्य च विप्राणां मिथुनानि समर्चयेत् ।
 शक्तिः स्त्रीषु चैकं वा वस्त्रमाख्यामुलेपनैः ॥
 शयनस्थानि पूज्यानि नमोस्तु जलशायिने ।
 ततस्तु गीतवाद्यादि निशाग्रेषु विवर्जयेत् ।
 प्रभाते कृतकृत्यस्तु दम्पत्यानि च भोजयेत् ।
 यथा शक्त्या कुरुश्रेष्ठ ततो सुशोभत वाग्वतः ॥
 दिवास्त्रं पराश्रय्य पुनर्भोजनमैद्युनं ।
 शौद्रन्तेषामिषचै व द्वादश्यां सप्त वर्जयेत् ॥
 अतोर्ध्वं पारणादूर्ध्वं पुराचरवथादिभिः ।
 सिद्धिनादैस्तथाचान्येस्तद्दिनं चातिवाहयेत् ॥
 अनेन विधिना सर्व्वं मासि मासि समाचरेत् ।

व्रतान्ते शयनं दद्यात् गुह्येषु समन्वितम् ॥
 सोपधानकविश्रामं सवस्त्राभरणं शुभं ।
 मन्त्रेष्वनेन राजेन्द्र विप्रेन्द्राय निवेदयेत् ॥
 यथा सङ्घीर्णं देवेश त्वां परित्यज्य तिष्ठति ।
 तथा रोग्यश्च रूपश्च विद्योक्तं वा स्तु मे सदा ॥
 यथा देवेन रक्षिता न सङ्घीर्जातु जायते ।
 तथा विद्योक्तता मीऽस्तु भक्तिरथवा च केशवे ॥
 विधिनामेन तत्सर्वं शूर्पं सकमलं तथा ।
 दातव्यं वेदविदुषे प्राक्तनो भूतिमिच्छता ॥
 उत्पलं करवीरश्च अन्नानकुसुमं तथाः ॥
 शृङ्गारं सिन्धुवारश्च मङ्गिकागन्धपाटलं ॥
 कदम्बकुसुमंजाती शस्तान्धेतानि पूजने ।
 विद्योक्तद्वादशौ चैवा सर्वं पापप्रणाशिनी ॥
 यानुषोश्च नरो भक्त्या शुभसौभाग्यभाग्भवेत् ।
 शुक्ला कामानशेषास्तु अन्ते अरण्यमाप्नुयात् ॥
 श्रुत्वाप्युतं ह्यन्तकाले याति तत्सममन्ततः ।
 इति पठति य इत्थं यः श्रुतोतीह सम्यक्
 अष्टमुरनरकारेणं चापि पश्येत् ।
 अतिमपि कुर्वते यो देवतास्त्रिन्द्रलोके
 वसति च ससुराद्यैः पूज्यमानः सदैव ॥
 इति पद्मपुराणोक्तं द्वादशीव्रतम् ॥

दास्य उवाच ।

अतीव भीषणा नित्यं शस्त्राग्निभयदाक्षर ।
 कथं न गच्छेन्न रक्षानेतन्नि वल्लमर्हसि ॥
 अहोतिकष्टं पापानां विपाकी नरकस्थितिः ।
 पुण्यैर्भुज्यते ब्रह्मन् तन्मोक्षं वद संसम ॥

पुलस्त्य उवाच ।

पुण्यस्य कार्येषु पाकः पुण्य एव द्विजोत्तम ।
 चेतसः परिचायार्थं स्वर्गस्थैर्भुज्यते नरैः ॥
 तद्यैव पाकः पापानां पुण्यैर्नरकस्थितैः ।
 भुज्यते तावद्विजो यावत् पापं क्षयं ब्रजेत् ॥
 यथेयं द्वादशी शस्ता नृषां सुकृतकार्येषां ।
 यासुपीष्य द्विजत्रेष्ठ न याति नरकं नरः ॥
 फाल्गुनामसपक्षस्य एकादश्यासुपीषितः ।
 द्वादश्यां च द्विजत्रेष्ठ पूजयेन्न धुत्तदनं ॥
 एकादश्यां स मुत्तिष्टन् विष्णोर्नामानुकीर्त्तनं ।
 पूजायां वासुदेवस्य कुर्वीत सुसमाहितः ॥
 नमो नारायणायेति वाक्यं वाक्यमहर्निशं ।
 त्रीधं पापं तद्वेष्याच्च दम्भलोभश्च वर्जयेत् ॥
 कामद्रीहं महं वापि मानमैश्वर्यमिव च
 सर्वमितत् परित्याज्यं विष्णुभक्तेन चेतसा ॥
 असारताच्च लोकेऽस्मिन् संसारे भावयन्निति ।
 तद्यैव कुर्याद्द्वादश्यां नाम्नामुच्चारणं द्विज ॥
 भविष्योत्तरात् ।

सौवर्णतान्त्रपात्राणि सृष्टमयान्यपि पाण्डव ।
 यवपात्रस्थानि कृत्वा प्रतिमासमुपोषितः ॥
 नामत्रयमशेषेण मासि मासि दिनद्वयं ।
 तथैवोच्चारयेदद्याद्वाद्दद्याच्च यद्योदितं ॥
 प्रणम्य च हृषीकेशं कृत्वा पूजां प्रसादयेत् ।
 विष्णो नमस्ते जगतः प्रसूते श्रीवासुदेवाय नमो नमस्ते ॥
 नारायणोस्तु धन्या मे जहि पापमशेषतः ।
 सर्वपापक्षयो मेऽस्तु महासुकृतकर्म्मभिः ॥
 अनेकजन्मजनितं बाह्ययौवनवार्द्धके ।
 पुण्यं विवृद्धिमायातु पापं च संक्षयं व्रजेत् ॥
 तत्प्रशान्तिवृद्धिमायातु पापानां पञ्चकक्षयं ।
 आकाशादिषु शब्दादौ श्रोत्रादिमहदादिषु ॥
 प्रकृति पुरुषो चैव ब्रह्मसंप्राप्तिमाप्नुते ।
 यथैक एव सर्वात्मा वासुदेवो व्यवस्थितः ॥
 तेन सत्येन मे पापं नरकार्त्तिप्रदक्षयं ।
 प्रयातु सुकृतस्यास्तु ममतुद्दिनसङ्क्षयं ॥
 पापस्य हानिं पुण्यं तु वृद्धिमभ्येत्स्वमुत्तमां ।
 एवमुच्चार्य विप्राय दत्त्वा वा कथितं तव ॥
 भुञ्जीत कृतकृत्यस्तु पारणे पारणे गते ।
 पारणान्ते च देवस्य प्रीणतां शक्तितीर्हिज ॥
 कुर्वीतास्त्रिलपावण्यैरस्नापञ्च विवर्जयेत् ।
 एवं संवत्सरस्यान्ते काञ्चनीं प्रतिमां हरेः ॥
 पूजयित्वा वस्त्रपुष्पहृतपात्रेण संयुतां ।

गां सवसां च विप्राय दद्यात् कृष्णां समाहितः ॥
 विलंबितञ्च यत्पूर्वं देवात्प्रात्रं भवेद्यदि ।
 तस्मिन्नहनि दातव्यं भोजनञ्चानिवारितं ॥
 इत्येषा कथिता दासभ्यःसुकृतस्य जयावहा ।
 हादशी नरकं मर्त्यायामुपोष्य न पश्यति ॥
 नाग्नयो न च शस्त्राणि नच लोहमुखाः खगाः ।
 नरकास्तं न वाधन्ते मतिर्यस्य जनार्दने ॥
 नामोच्चारणमात्रेण विष्णोः क्षीणावसञ्चयः ।
 भवत्यपास्तपापस्य नरके गमनं कुतः ॥
 नमो नारायणायैह वासुदेवेति कीर्त्तयेत् ।
 न यतिं नरकं मर्त्यः संक्षीणाशेषपातकः ॥
 तस्मात्पाषण्डिसंसर्गमकुर्वन् हादशीमिमां ।
 उपोष्य पुण्योपचयीं न याति नरकं नरः ॥

इति विष्णुधर्मोक्तं सुकृतहादशीव्रतम्

—000—

पुलस्त्य उवाच ।

एकादश्यां शुक्लपक्षे फाल्गुने मासि यो नरः ।
 जपन् कृष्येति देवस्य नाम भक्त्या पुनः पुनः ॥
 देवार्चनं वाष्टशतं कृत्वैतत्तु जपेक्षुचिः ॥
 ज्ञान, प्रख्यानकाले च उत्थाने स्वस्मिते चवे ।
 पाशुण्डान् पतितां, चैव तथैवान्यावसायिनः ॥
 नालपेक्षु, तथा देवमर्षयेच्छ्रियान्वितः ।
 इदक्षीदाहरेत् मन्त्रं मनसाधाय तत्परः ॥

(११६)

कृष्ण कृष्ण कृपालुस्त्वमगतीनां गतिर्भव ।
 संसारार्थवमन्नानां प्रसौद भद्रसुहृन् ॥
 एवं प्रसाद्योपवासं कृत्वा नियतमानसः ।
 पूर्वार्धे एव चान्येद्युर्गवां संप्राश्य वै सन्नत ॥
 आतोऽर्चयित्वा कृष्णेति पुनर्नाम प्रकीर्त्तयेत् ।
 वारिधारात्रयश्चैव विधिपेहे वपादयोः ॥
 चैत्रवैशाखयोश्चैवं तद्वज्रैश्चैव पूजयेत् ।
 मर्त्यलोके गतिं त्रेधां दास्य्य प्राप्नोति वै नरः ॥
 उत्क्रान्तिकाक्षे कृष्णस्य अरच्य तदाभुयात् ।
 आषाढे त्रावणे चैव मासि भाद्रपदे तथा ॥
 तथैवाश्वयुजे देवमनेन विधिना नरः ।
 उपोष्य संपूज्य तथा केशवेति च कीर्त्तयेत् ॥
 गोमूत्रप्राशनात् पूतः स्वर्गलोके मञ्जीयते ।
 आराधितस्व जगतामीश्वरस्व महात्मनः ।
 उत्क्रान्तिकाक्षे अरच्यं केशवस्य तथाभुयात् ॥
 क्षीरस्य प्राशनं श्रेष्ठं विधिनेहं यद्योदितं ।
 कार्तिकादि यथान्यासं कुर्यान्नास चतुष्टयं ॥
 तेनैव विधिना ब्रह्मान् तत्र विष्णुं प्रकीर्त्तयेत् ।
 स याति विष्णुसाक्षीक्यं विष्णुं अरति तत्क्षये ॥
 प्रतिमासं द्विजातिभ्यो दद्याद्दानं यथेच्छया ।
 चातुर्मास्ये च सम्पूये पुण्यत्रयकीर्त्तनं ॥
 कथाञ्च वासुदेवस्य तन्नोतं वापि कारयेत् ।
 एवमेव मतिं श्रेष्ठां देवानामनुकीर्त्तनात् ॥

कथितं पारशं शक्ते कुर्वाणासत्तुष्टयं ।
 आधिपत्यं तेन भोगान् दिव्यमाप्नोति मानवः ।
 द्वितीयेन तथा भोगान्नेन्द्रान् प्राप्नोति मानवः ॥
 विष्णुलोके तृतीयेन पारशं तु तथाप्नुयात् ।
 एवमेतत्समाख्यातं नतिप्रापकसुत्तमम् ॥
 विधानं द्विजशार्दूलं ज्ञान्तुष्टिप्रदं तृषां ।
 सुगतिहादशीमेतां श्रद्धधानश्च योनरः ॥
 उपोष्यति तथा नारी प्राप्नोति त्रिविधां गतिं ।
 एषा धन्या पापहरा तिथिर्भित्तुमुपासिता ।
 शाराधनाय श्लोषा देवदेवस्य चक्रियः ॥
 इति विष्णुधर्माक्तं सुगतिहादशीव्रतम् ।

—०००@०००—

सुधिष्ठिर उवाच ।

ऋषेस्त्रिभिः परिहृतः पुरुषो जायते क्लृप्तः ।
 ऋचयान् सुषेत पुरुषः पुत्रदर्शनात् ॥
 पुत्रामनरकायस्मात् पितरं जायते सुतः ।
 तस्मात् पुत्र इति प्रीतः स्वयमेव स्वयम्भुवा ॥
 दिग्म्बरं गतव्रीहं जटिलं धूलिधूसरं ।
 पुण्डरीकां न पश्यन्ति गङ्गाधरमिवात्मजं ॥
 तस्मात् पुत्रस्य साभासं व्रतमेतदुदीरयेत् ।

ज्ञान उवाच ।

एकादश्यां चाश्वसुजे स्नात्पोष्याश्चयेदरिं ।
 गां रात्रौ पूजयेद्दद्यात् सवस्त्राया गवाक्रिकं ॥

अपरेऽङ्गि तथाभ्यर्च्य निशि भुञ्जीत वाग्यतः ।
 मासे मासेऽथ चैतानि हरिनामानि कीर्त्तयेत् ॥
 अपराजितोऽजातशत्रुः पुरुङ्गतः पुरन्दरः ।
 वर्षमानः सुरेश्च महाबाहुः प्रभुर्विभुः ॥
 सुभूतिः सुमनाश्चैव सुप्रचेता इतीरयेत् ।
 एवं द्वादशभिर्स्त्रीभ्योऽसैर्वा पारयेद्भृतं* ॥
 व्रतास्ते जह्युयाद्देवं नामभिर्घृतपायसं !
 ब्राह्मणान् भोजयेत्पश्चाद्दत्तं माससङ्ग्रहा ॥
 मासि मासि यथा शक्त्या दानं प्रार्थनमेव च ।
 यथा दिते भवान् पुत्रः गाश्वतश्चाक्षयोऽच्युतः ॥
 तथा भवतु मे देवः पुत्री जन्मनि जन्मनि ।
 वैष्णवी सुरभी माता ब्रह्मणा देवपूजिता ॥
 गृह्णाणेदं मया दत्तं पिण्डमानृष्यमूलकं† ॥
 वस्त्राभरणगोदानैर्ब्राह्मणं प्रीणयेद्भुवम् ॥
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं गोवत्सद्वादशी व्रतं ।

— ००० —

युधिष्ठिर उवाच ।

हत्वा भयङ्करं पापं युधिवीक्ष्यकारकं ।
 परिपृच्छामि गोविन्द त्वां नमस्कृत्य पादयोः ॥
 गुह्याद्गुह्यतरं ब्रूहि व्रतं किञ्चिदनुत्तमं ।
 तरामि येन पापौघं भीष्मद्रोणवधार्णवम् ॥

* एवं द्वादशभिर्स्त्रीभ्योऽसैरिति पुस्तकाकारे पाठः ।

† अनुत्तमं पञ्चकनिति पुस्तकारे पाठः ।

कृष्ण सवाच ।

आसीत् पुरा नरीनामा विदर्भायां कुशध्वजः ।
 ग्राम्तः पुरुसुतो येन षक्रोराष्ट्रमतन्द्रितः ॥
 जघान तापसं सोप्यप्रमादं मृगयाङ्गतः ।
 मृगं मत्वा महारण्ये ब्राह्मणं दैवमीहितः ॥
 तेन कर्मविप्राकेन देहान्तै गवयस्ततः ।
 तत्रासौ पतनहोराशु तु भूपातिपौडितं ॥
 तस्मादिहागतोमर्त्यैरौद्रो विषधरो भवेत् ।
 अदर्शकोऽपि राजेन्द्र ब्राह्मणश्चरणे तु षा ॥
 सलतां हतपञ्चत्वं जगाम द्विपसूनुतां ।
 विपन्नश्च ततः सिंही द्वितीयेऽभूत्क्षुद्रारुणः ॥
 विदारितमुखो हंसो नाम सत्वभयङ्करः ।
 जन्मान्ते सोऽभवत् श्रेष्ठराजन्यो मृगयागतः* ।
 ततोभि बहुभिः शस्त्रै राजालोकैर्निपातितः ॥
 पुनर्व्याघ्रो वभूवासौ तृतीयेऽपि भवान्तरे ॥
 तीक्ष्णपादनखाघातव्यापादितमृगान्वयः ।
 तेनापि वैश्यानिधनंगतः कश्चिन्नतान्तरे ॥
 सनीरङ्गमिराशित्वं लोकैः ख्यातनिपातनान् ।
 स जातस्तापकृद्द्रव्यो† नखराहतजन्तुभुक् ॥
 जघान वालं षण्डालादसौ मृत्युमवाप्नुयात् ।

* जन्मान्ते सोम पुनः श्रेष्ठराजन्यं मृगयः गतमिति पुलकान्तरे पाठः ।

† ताम्रदृष्ट इति पुलकान्तरे पाठः ।

पञ्चमे मकारोऽजातः समुद्भूति भयङ्करः ॥
 स्त्रियं जघान तरुणीं ज्ञातुकामां यथागतां ।
 प्रभाते शङ्करस्याग्रे शशाङ्कसङ्घे निधि ॥
 तत्रापि बहिसं दत्त्वा जनैः प्राणैर्वियोजयेत् ।
 पुनः षष्ठे भवेजातो पिशाचः पिशिताशनः ॥
 क्रूरः छिद्रपरः सुद्री नरप्राणवियोजकः ।
 सोऽवतीर्थी नरस्त्राङ्गहनामा स च कस्यचित् ॥
 मन्त्रेण पूयसिद्धेन वातिकेन व्यसः कृतः ।
 सप्तमे स पुनर्जातो दुश्चिरीचवपुर्भृशम् ॥
 क्रूरदंष्ट्रः करास्त्रास्त्रोमांसशोषितभोजनः ।
 दिव्यावा मनुभसीषु वासिष्ठो वज्रराक्षसः ॥
 राष्ट्रञ्च गीर्जरं शून्यं सर्व्यं चक्रे विषादिषु ।
 आक्रम्य भीमदासेन राजा राक्षसशत्रुणा ॥
 समारोप्य धनुः संख्ये ब्रह्मास्त्रेण निपातितः ।
 भूयोभवद्द्वान्नसमः स्याज्जन्म्यष्टमे भुवि ॥
 वनेतराणां कृद्गीगीवाह्याणां तर्षो निगन्धनं ।
 स तु हृस्वीजभङ्गेन मातङ्गेन धनुःशता ॥
 यकादेशेऽपि पाञ्चाली पञ्चमध्येतिभीषणः ।
 जर्ध्वकर्षीऽतिरक्ताचो जातो ऋक्षतनुर्दृढः ॥
 पापो धर्मध्वजोरक्षी देवतोजिनमाख्यष्टकं ।
 स दण्डपायिकेनैव वृक्षाग्रे ह्यवलम्बितः ॥
 चादशे स पुनर्जातः पुष्कयः क्लेशभाजनः ।

भस्मलोभाद्विलगतोव्याधेन विनिपातितः ॥
 तेन वासीत्कृतं पूर्वं तारकहादशी व्रतं ।
 तस्य प्रभावाज्जातोऽपि दुष्टयोर्नौ पुनःपुनः ॥
 अवाप शीघ्रं पक्षत्वं संसारभवसागरे ।
 पुनरेवाभवद्राजा विदर्भायां सुधार्मिकः ॥
 भूयः स्त्रीप्रीतिता तेन तारका हादशी शुभा ।
 पश्यतां व्रतमाहात्म्यं जातो जातो पुनः पुनः ॥
 व्रतप्रभावाद्भवने भुक्त्वा राज्यमकण्ठकं ।
 प्राप विष्णुपुरे स्थानं यावदाहृतसंज्ञकं ॥

सुधिष्ठिर उवाच ।

कथं तत् कृष्ण कर्त्तव्यं तारकहादशीव्रतम् ।
 पापोऽपि सङ्गतिं प्राप्तो यत्प्रभावात् शुशुभ्वजः ॥

कृष्ण उवाच ।

मार्गशीर्षे सिते पक्षे गृहीत्वा हादशीव्रतम् ।
 अकृत्स्निमे जले स्नानमपराह्णे समाचरेत् ॥
 प्रथम्य भास्करं भक्त्या कृत्वा देवाद्यैर्न तदा ।
 मौनेनैवावस्थातव्यं यावदस्तं व्रजेद्रविः ॥
 ततो सुक्ताफलैः पुष्यैर्गन्धधूपविलीपनैः ।
 सजलं साक्षतं युक्तं हिरण्याक्तफलैः शुभैः ॥
 रम्ये ताम्रमये पात्रे जानुभ्यां धरणीं गतः ।
 पूर्व्यासुखः प्रदोषायै मूर्ध्नि कृत्वाघ्नं भाजनं ॥
 भूमौ मण्डलिकं कृत्वा गोमयेन सताडितं ।
 चन्दनेन समाक्षिप्य ध्रुवश्च स्रगगोसुखं ॥

सहस्रश्रीर्षामन्त्रेण भूमौ ध्यात्वा जगद्गहनम् ।
 तारकानां कुबज्रे च दद्यादर्घ्यं जितेन्द्रियः ॥
 पर्युष्य धूपमुत्क्षिप्य दद्याद्विषाय दक्षिणां ।
 क्रमेण सर्व्यं निर्व्वर्त्य भोष्यं भोष्यं निशाग्रमे ॥
 मार्गशीर्षे खण्डखाद्यैः पुष्यैः शोवाणकैः शुभैः ।
 माघे तिलाभक्ष्यरैः फाःलग्ने गुडपूरकैः ॥
 वसन्ते मोदकैर्दिव्यैर्व्विशेषे खण्डवेष्टकैः ।
 ज्येष्ठे शक्तुभृतैः पानैराषाढे गुडपूरकैः ॥
 श्रावणे शष्क स्त्रीभिश्च नभस्वे प्रायज्ञेन च ।
 हृतपूरैरश्वयुजे कासारैः कार्तिके क्रमात् ॥
 एभिर्द्वादशभिर्भक्ष्यैर्भोजयित्वा द्विजान् स्वयम् ।
 भुञ्जीत वाग्यतः पार्थ पञ्चाह्विषान् चमापयेत् ॥
 समाप्ते तु व्रते कृत्वा राजतं तारकागणम् ।
 पैष्टं वा पूर्व्वविधिना पूजयित्वा चमापयेत् ॥
 कुम्भा द्वादश दातव्याः सोदका मोदकान्विताः ।
 ब्राह्मणानां परीधानं पद्मरागं सकञ्चुकं ॥
 श्वेताश्च गां ब्राह्मणाय चन्दनञ्चोपवीतकं ।
 कुङ्कुमाञ्जनताम्बूलं स्त्रीणां दत्त्वा चमापयेत् ॥
 अनेन विधिना राजन् यः करोति व्रतं नरः ।
 नारीवा भर्तृपरमा विधवा श्रीलभूषणा ॥
 नक्षत्रलीकं व्रजति विमानेनार्कवर्षसा ।
 अक्षरोगणगन्धर्व्वयश्च विद्याधरैः शुभैः ॥
 तीव्र तारावृतः स्वर्गे युगान्तमपि पूज्यते ।

एतद्गतं पुरा श्रीर्षं श्रीव्या राज्या त्रिधा मया ॥

यासीतया दमयन्त्या बन्धिष्या सत्वभामया ।

अन्याभिरपि नारीभिः पुरुषैश्च दृढबन्धिषैः ॥

श्रीर्षमेतद्गतं प्रार्थं सर्वपापभयापहम् ।

जन्मान्तरेष्वपि कृतानि दृष्टव्यघानि*

वासन्द्धान्त्यहरश्चः सुकृतीपयोगं ।

ताराभिधानमतिपातकतसकीला

तन्नास्ति यत्र विदधाति कृता मनुष्यैः ॥

इति भविष्यत्तरोक्ततारकादादशोऽक्षरम् ।

—000—

युधिष्ठिर उवाच ।

श्रुता मे मानवा धर्मा वासिष्ठाश्च मया श्रुताः ।

हेपायन यद्योद्विष्टा वैश्ववान् बल्लभर्षसि ॥

व्यास उवाच ।

श्रुतास्ते मानवा धर्मा वैदिकाश्च श्रुता मया ।

कसौ युगे न शक्यन्ते ते वै कर्तुं नराधिप ॥

सुखोपायमक्षयधनमल्पकेशं महाफलं ।

पुराणानाञ्च सर्वेषां सारभूतं वदामि ते ॥

एकादश्यां न भुञ्जीत पञ्चयोद्धभयोरपि ।

एकादश्यां न भुङ्क्ते यो न याति नरकान्तु सः ॥

• व्यासस्य वचनं श्रुत्वा कम्पितोऽन्तर्यामिणोऽपर्ववत् ।

* दृष्टव्यघर्षमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

भीमवेगो महाबाहुर्भीती वीर्यमभाषत ॥

भीम उवाच ।

पितामह न मत्तोऽहमुपवासं करोमि किं ।

भतो बहुफलं ब्रूहि व्रतमीकमपि प्रभो ॥

व्यास उवाच ।

वृषस्ये मिवुनस्येऽर्के दृक्काक्षेकादग्नी भवेत् ।

ज्यैष्ठे मासि प्रयत्नेन सोपीया जलवर्जितैः ॥

ज्ञाने वाचमने चैव वर्जयित्वाद्दकं बुधः ।

उपभुञ्जीत नैवान्धद्रुतभङ्गोन्मथा भवेत् ॥

उदयादुदयं यावद्वर्जयित्वाऽजलं बुधः ।

अप्रयत्नाद्वाप्नोति द्वादश्यां द्वादशीन्तरः* ॥

ततः प्रभति विमले द्वादश्यां ज्ञानमाचरेत् ।

जलं सुवर्षं दत्त्वा तु द्विजातिभ्यो यथाविधि ॥

भुञ्जीत कृतकत्वस्तु ब्राह्मणैः सहितो वशी ।

एवं कृते तु यत्पुष्पं भीमवेन ऋचञ्च तत् ॥

संवत्सरस्वया मध्ये एकादशो भवन्तुत ।

तासां फलमवाप्नोति अथ मे नास्ति संशयः ॥

इति मां ज्ञेयवः प्राह महद्गदाधरः ।

अस्य व्रतस्य यत् पुष्पं तस्मै ब्रूहि जगद्गन ॥

एकादश्यां सिते पक्षे ज्यैष्ठ्योदकवर्जितं ।

उपोष्य फलं प्राप्नोति यत्तु ऋचञ्च द्वयोद्दर ॥

सर्वतीर्थेषु यत् पुष्पं सर्वदानेषु यत् फलं ।

* उपवासस्य बुद्धीय द्विजातिभ्यो यथाविधि इति पुस्तकान्तरेणः ।

सर्व्वहीमेषु यत् पुच्छं तद्व्याः ससुपोषणात् ॥
 संवत्सरस्य वावत्स्यः कृत्वाः कृत्वा वृकोदरः ।
 उपोषितास्तु ताः सर्वा एकादश्यां न संशयः ॥
 धनधान्यवहाः पुण्याः पुष्यारोम्यप्रदास्तथा ।
 उपोषिता नरव्याघ्र इति सत्त्वं ब्रवीमि ते ॥
 यमदूता महाकाया कारासकण्यरूपिणः ।
 दण्डपायधरा रौद्रा मरुचे इष्टिगोचराः ॥
 न प्रयान्ति तरव्याघ्र एकादश्यामुपोषणात् ।
 पीताम्बरधराः सीम्बाचक्रहस्ता मनोजवाः ॥
 अन्तकाले नयत्येवं वैश्यावा वैश्यावीं पुरीं ।
 तस्मात्सर्व्वप्रयत्नेन उपोष्य जलवर्जितं ।
 जलधेनुं तथा दत्त्वा सर्व्वपापैः प्रमुच्यते ॥
 इति श्रीमहाभारतौक्तनिर्जलैकादशीव्रतम् ।

— ००० —

युधिष्ठिर उवाच ।

भगवन् ब्रूहि ते सम्यक् गणय द्वादशीव्रतम् ।
 सप्तशतं सोपवासं सरहस्यं समन्तकं ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

कीन्तेय यत्पुरा शीर्षं सीतला वनसंख्यया ।
 व्रतं राघववाक्येन भगवत्कथ्यमभिभाषितं ॥
 लोपासुद्रासये सर्वा मुनिपत्न्यो बहुप्रजाः ।
 भोजितासर्पिताः सर्व्वे राक्षसैः सर्व्वकारिण्यैः ।

तामिदृक्कमनाः पार्थ परस्वहादर्शीं शृणु ।
 मार्गशीर्षे सिंते पक्षे एकादश्यां दिनोदयं ॥
 स्नात्वा नरः सोपवासः कृत्वा पूजां जनार्दने ।
 गन्धपुष्पार्घ्यधूपैश्च दीपैर्जागरणादिभिः ॥
 निशां नीत्वा प्रभाते च वनोद्देशेऽतिशोभने ।
 सजले कृष्णान्निध्ये वेदवेदाङ्गपारगं ॥
 भोजयित्वा फलप्राशं स्नयं भुञ्जीत वाग्यतः ।
 पञ्चगव्यपूर्वमेव प्राशनं वाद्य तद्दिने ॥
 वर्षमेकं सुसंपूर्णं पारयित्वा युधिष्ठिर ।
 श्रावणे कार्तिके माघे चैत्रे वाद्य समुद्यमेत् ॥
 व्रती पक्षान्नसंपूर्णान् भाङ्गुकान् घृतपूरकान् ।
 अन्नं स्नादु च सुस्त्रिकं खण्डखाद्यादिसंयुतं ॥
 भक्ष्यर्नानाविधैः पार्थ संयुतं बहुशेषं तु ।
 व्यञ्जनैः पत्रशाकैश्च शुष्काङ्गैरतिशोभनैः ॥
 पानकैः पत्रसारैश्च सुगन्धैः स्नादुशीतलैः ।
 फलैः कालोद्भवैः सर्वैर्यथाविभवमात्मनः ॥
 गत्वा वनं सुस्तंजनं स्नादुतीयं धनञ्जय ॥
 तत्र विप्रान् सुखासीनान् प्रागुदीष्यमुखाञ्छुचीन् ।
 भोजयेद्दयं च द्वी च कृतपूजादिक्रियः ॥
 अस्मान्ने यतिमुख्यानां अहस्मानपि भोजयेत् ।
 सपत्नीकान् सदाचारानभियुक्तान् गुणप्रियान् ॥
 उद्दिश्य देवं गोविन्दं पृथक् हादयनामभिः ।
 वासुदेवं ऋषीकेयं विष्णुं दामोदरं हरिं ॥

त्रिविक्रमश्च गोविन्दं पद्मनाभश्चनार्दनं ।
 गीवर्धनधरं कृष्णं श्रीधरं क्लमयो नृप ॥
 प्रचवादिनमस्कारैर्नामभिः पूजयेद्विद्वान् ।
 गन्धपुष्पादिना पार्थ भक्त्या तद्भावितात्मना ॥
 भोजयित्वा शुभान्नानि स्वाचारांस्तान् सदक्षिणान् ।
 प्रणम्याद्यो विद्वन्मैतान् विष्णुर्ध्वं प्रीयतामिति ॥
 ततो भुञ्जीत सहितोभृत्यैर्वन्भुजनेन च ।
 आश्रितैरर्षिभिः पार्थ सामान्यैरथवाग्यतः ॥
 एवं यः कुरुते सम्यगरण्यद्वादशीं नरः ।
 स देहान्ते विमानस्यो दिव्यकन्यासमावृतः ॥
 उदृत्य स्नपितृवापि श्वेतद्वीपं हरः प्रियं ।
 यत्र लोकाः पीतवस्त्राः श्यामदेहाश्चतुर्भुजाः ।
 शङ्खचक्रगदापद्मव्यपहस्ताः सकौस्तुभाः ॥
 तार्क्ष्यासनाः समुद्रुटा दिव्यकुण्डलमण्डिताः ।
 नीलोत्पलमहापद्ममाक्षया ललितोरसः ॥
 लक्ष्मीधरा मेघवर्णाः केयूराङ्गदभूषणाः ।
 तिष्ठन्ति विष्णुसामान्या वावद्वाङ्गतसंग्रवं ॥
 तत्र भोगाशिरं भुञ्जा पश्यन् विष्णुं सनातनं ।
 पुण्यशेषात् समायातः पृथिव्यां पृथिवीपते ॥
 सार्वभौमः त्रिया युक्तीराजा स्वाद्वाजपूजितः ।
 तत्रापि पुनरेवेमामरण्यद्वादशीं शुभां ॥
 करोति द्वादशैवासौ जन्मानि हरितत्परः ।
 तदस्ते बन्धनिर्भुक्तो याति ब्रह्म सनातनं ॥

एकादशीसुपवसन्ति सितासरस्य
 नास्तीं वने द्विजवरा व्रतमाचरन्ति* ।
 साध्वस्त्रिवः शुचरिताभरणाश्च तेषां
 विष्णुः प्रसादसुपयान्ति ददाति मोक्षं ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तमपराद्वादशी व्रतम्† ।

—000—

याज्ञवल्क्य उवाच ।

कृष्णपक्षे तु पौषस्य संप्राप्तिद्वादशीं शृणु ।
 यासुपौष्य समाप्नोति सर्वानेव मनोरथान् ॥
 पाषण्डादिभिरास्त्रापमकुर्वन् विष्णुतत्परः ।
 पूजयेत् प्रयतो देवमिकाशमतिरक्षुतं ॥
 पौषादिपारणं मासैव त्रिज्यैष्ठान्तिकं स्मृतं ।
 प्रथमे पुण्डरीकाक्षनाम देवस्य गीयते ॥
 द्वितीये माधवाख्यन्तु विश्वरूपन्तु फाल्गुने ।
 पुरुषोत्तमाख्यश्च ततः पञ्चमेऽथु तसंज्ञितं ॥
 षष्ठे जयेति देवस्य शुद्धं नाम प्रकीर्त्तयेत् ।
 पूर्वेषु षट्सु मासेषु ज्ञानप्राप्तयेऽस्ति स्थाः ॥
 आषाढादिषु मासेषु पञ्चगव्यसुदाहृतं ।
 ज्ञानश्च प्राप्तयेऽथैव पञ्चगव्यं सदेवते ॥
 पूजयेत् पुण्डरीकाक्षं पुनस्तेनैव नामभिः ।

● द्विजवरापक्षजपन्तीति पुण्डरीकाक्षे पाठः ।

† इति विष्णुधर्मोत्तमखण्डद्वादशीव्रतमिति पुण्डरीकाक्षे पाठः ।

प्रतिमासञ्च देवस्य कृत्वा पूजां यथाविधि ॥
 विप्राय दक्षिणां दद्याच्छ्रद्धानः क्षयस्तितः ।
 पारशान्ते तु देवस्य प्रीत्यर्चनं भक्तिपूर्वकम् ॥
 कुर्वीत यत्तथा गोविन्दे सदा साभ्यर्चनं यतः ।
 नक्तं भुञ्जीत च नरस्यौलक्षारविवर्जितं ॥
 एकादश्यासुचित्वैवं द्वादश्यामथवा दिने ।
 एवमेकादश्यासुपीय्य द्वादशीनक्तं दिनं वा भुञ्जीतेन्वयः ॥
 एवं संवत्सरस्थान्ते ददाति प्रीतिमाप्नुतः ।
 धेनुं वस्त्रं हिरण्यञ्च धान्यं भोजनमासनं ॥
 शय्याञ्च ब्राह्मणे दद्यात् केशवः प्रीयतामिति
 एतासुपीय्य विधिवत् विश्वुप्रीत्यनतत्परः ॥
 सर्वान् कामानवाप्नोति सर्वपापैः प्रमुच्यते
 यतः सर्वमवाप्नोति यद्यदिच्छति चेतसा ॥
 ततो लोकेषु विख्यातं संप्राप्तिद्वादशीति वै ।
 कृताभिलाषिता इहा प्रारब्धा कर्मतत्परैः ।
 पूरयत्वाखिलान् कामान् संसृता च दिने दिने
 इति विष्णुधर्मोक्तं संप्राप्तिद्वादशीव्रतं ।

—000—

पीये कृष्णे विशाखासु युक्ताचैकादशी भवेत् ।
 तस्यां संपूजयेद्विष्णुसुपीय्य विधिवत्परः ॥
 सुगन्धपुष्पनैवेद्यैर्वस्त्रभूषणसम्भवैः ।
 मासानुमासम्पूजयेत् विधिना जगतीपतिं ॥

प्राशनद्वयशुद्धयं कार्यं मासक्रमेण तु ।
 गोमूत्रमुदकं सर्पिराचस्य कामतः परं ॥
 ततोदर्षादधिब्रोहितिसांशैव यवांस्तथा ।
 जलमर्ककरैस्तप्तं दर्भांश्च क्षीरमेव च ॥
 द्वादश्यां भोजयेद्विप्रान् दधिक्षीरगुड़ोदनैः ।
 मासक्रमेण विप्रेभ्यो दद्यात्सम्यक्कृते व्रती ॥
 घृतं तिलान् म्रीहिववसुवर्णसंयुतं घटम् ।
 मोदकैश्च युतं कुम्भमातपचन्तु पायसं ॥
 फाणितं चन्दनं मालाः सुगन्धाश्चेति दक्षिणाः ।
 व्रतमेतन्महापुण्यं दृष्टादृष्टफलपदं ॥
 कर्त्तव्यं धर्मनिरतैर्विष्णुपूजनतत्परैः* ।
 व्रतमेतन्नरः कृत्वा विप्रानां प्रवरे कुले ॥
 सुजन्मा जायते धीमान् वेदवेदाङ्गपारगः ।
 निरातङ्गोऽनन्तसुखः सुखतश्च तथारिहा† ॥
 ब्रह्मपुत्रीभवेद्धीमान् धनेश्च धनदोपमैः ।
 यद्यानरस्तथा नारी व्रतमेतत् समाचरेत् ।
 ब्रह्म प्राप्य परां लक्ष्मीं व्रतो विष्णुपुरं व्रजेत् ॥
 इति विष्णु रहस्योक्तं महाफलद्वादशीव्रतम् ।

द्वादश्यां भोजयेद्विप्रान् तेभ्यो दद्याच्च दक्षिणां ।
 प्रतिमासं तिस्रो तस्याङ्गीभ्योदद्यात्तवाङ्गिकं ॥

* विष्णुपूजनमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† सुतान्मथ तथारिहा इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

गवां क्षीरेण संयुक्तं दध्ना वाद्य घृतेन वा ।
 मृत्पात्रे च समश्रीयादक्षारलक्षणं व्रती ॥
 संवत्सरमुपोष्यैव गोविन्दहादशीं नरः ।
 पुनर्गोभ्यो यथा शक्त्या भूयोदद्याद्गवाङ्गिक ॥
 गोविन्दहादशीं यातु उपोष्य विधिवन्नरः ।
 प्राप्नोति विधिवद्भुत्वा गीसङ्गस्य यत्फलं ॥
 समुपोष्य मङ्गापुण्यां गोविन्दहादशीमिमां ।
 गवां लोकमवाप्नोति दधिक्षीरघृतप्लुतं ।
 तत्र भोगान्वरान् भुक्त्वा चिरकालं मनोरथान् ॥
 गोविन्दस्य सदानन्दं ततो लोकमवाप्नुयात् ॥
 तत्र तिष्ठेन्निरातङ्गी सुदा परमया युतः ।
 गोविन्दस्य प्रसादेन यावद्विन्द्रायतुर्हय ॥
 इति विष्णुरक्षस्योक्तं गोविन्दहादशीव्रतम् ।

नारद उवाच ।

हादशीविधिवित् प्रोक्तास्त्वया लोकपितामह ।
 अनुष्ठानविहीनानां तासां ब्रूहि क्षिणफलम् ॥
 प्रारभ्य च समाप्तिञ्च हादशीनां यथाविधि ।
 व्रतचर्याफलञ्चैव कथयस्व पितामह ॥

ब्रह्मोवाच ।

शृणुष्वैकमना विप्र विष्णोः प्रीतिकरं शुभं ।
 पुण्यं व्रतानां सर्वेषां हादशीव्रतमुत्तमं ॥
 मार्गशीर्षे शुभे मासि शुक्लपक्षे यतव्रतः ।

(१३८)

प्रथमश्चैव गृह्णीयात् द्वादशीं विधिवत्परः ।
 कारयेच्च हरेर्यज्ञमाचार्याद्यैर्बिधानतः ।
 अर्चयित्वा हरिं तत्र लब्धानुष्ठां विजस्ततः ॥
 अक्षतीर्थं हरिं दृष्ट्वा मधुरायाश्च केशवं ।
 दृष्ट्वाऽशोकवने विष्णुं कुशाग्रं च जनार्दनं ॥
 तत्फलं समवाप्नोति द्वादश्यां समुपोषणे ।
 मनोवाक्कायचेष्टाभिः शुचिः शुची दृढव्रतः ॥
 ततो बन्धून् गुरुन् विप्रान् प्रणम्यैवानुमन्य च ।
 धर्मकामो नरः कुर्यादेतैः कृच्छ्रैर्न कारयेत् ॥
 गुरोषामुपज्ञया तत्र भक्षयेदन्तकाष्ठकम् ।
 साक्षतश्चोदकं गृह्य व्रतस्थानुपकल्पयेत् ॥
 उपोष्यैकादशीं विष्णोर्यावच्च परिवत्सरं ।
 अविप्लसिद्धिमायातु त्वत्प्रसादात् जनार्दन ॥
 एवं सम्बल्य नियमं प्रणम्य गरुडध्वजम् ।
 त्रितेन्द्रियः शान्तमना दशम्यां निवसेन्निशां ॥
 एकादश्यां ततः प्रातःस्नानं कृत्वा विधानतः ।
 मधुना स्नाय्य देवेशं दक्षिणैरहृतादिभिः ॥
 सर्वोषधिजलैः पूर्यैः कुशैः पल्लवचन्दनैः ।
 कुङ्कुमीशीरकर्पूरैः स्रग्दामपरिशोभितैः ।
 तत्रार्चयेत् स्थितं भक्त्या मालतीकुसुमैः शुभैः ॥
 धूपं वसुदत्तसिद्धं गुग्गुलं वा हृतद्भुतं* ।
 दृष्टेद्देवाधिदेवाय दीपं दद्याद्दहर्निशं ॥

* वनं शून्यमिति पुष्पकान्तरे पाठः ।

पायसं पूपसंवावं फलैः सार्वहृत्श्रवणं ।

कारणा दधिसंमित्राः शक्तवः ।

नैवेद्यन्तु हरेर्दद्यात् भक्त्या चैव विधानतः ॥

गीतवाचं ततः कृत्वा यथाशक्त्या निशां नयेत् ।

एत्रं पूजां हरेः कृत्वा हिजश्चैवानुपूजयेत् ॥

योग्ये सति च नत्वन्यमासन्नं पूजयेद्यदि ।

स दुर्गतिमवाप्नोति खण्डश्चैव व्रतं नयेत् ॥

खण्डव्रताच्च निरयङ्गत्वा कल्पशतं स्थितः ।

यातीभवति देवर्षे खण्डस्थानान्मु भाजनं ॥

यथाशक्त्या नरोदद्यात् गुरवे दक्षिणां सुधीः ।

गुरुणा तच्च वै कुम्भे जपः कार्यः प्रयत्नतः ॥

एकाक्षरेण मन्त्रेण यत्तोयं चानुमन्त्रयेत् ।

अष्टोत्तरशतं जप्त्वा जलरूपं न्यसेद्रविं ॥

यस्य रोम्नि स्थिता मेघाः सर्वसन्धिषु निम्बगाः ।

समुद्राः कुक्षिमध्यस्थाः सर्वतीर्थानि पादयोः ॥

एवंन्यस्य जले विष्णुं तां रात्रिं वासयेद्ददन् ।

एवं वदन् जले न्यसेत्यन्वयः ।

द्वादशां तेन तोयेन तं शिष्यं स्नापयेद्गुरुः ॥

तेन स्नानेन विधिवन्मन्त्रपूतेन नारद ।

पुनर्तुं सर्वतीर्थानि सर्वदेवाः सवासवाः ॥

तोयेनाद्याभिविञ्चन्तु सर्वपापविमुक्तये ।

सर्वपापविनिर्मुक्तो वैष्णवीं तु लभेत्तनुं ॥

कृताभिषेकः पुण्यान्ना समभ्यर्चाथ केशवं ।

गुरुं ज्ञानप्रदञ्चैव भोजयेद्वाङ्मणैः सह ॥
 भोजयित्वा द्विजभ्योऽथ दक्षिणां प्रतिपादयेत् ।
 एवमभ्यर्च्य देवेशं प्रतिमासं द्विजोत्तमं ॥
 अर्चयेत् कौर्त्तरं नामानि मासि मासि तथा शृणु ।
 मार्गशीर्षे तु पुष्ये च नाम नारायणं तथा ॥
 माघे तु माधवं पूज्य गोविन्दं फाल्गुने तथा ।
 चैत्रे च केशवं विष्णुं वैशाखे मधुसूदनं ॥
 ज्येष्ठे त्रिविक्रमं देवमाषाढे वामनं मुने ।
 श्रावणे श्रीधराख्यं च हृषीकेशं नभस्यथ ॥
 पद्मनाभं चाश्वयुजे तस्माद्दामोदरं तथा ।
 एवं संकीर्त्तरं नामानि द्वादशैव यथाक्रमं ॥
 प्रीयतां मे हृषीकेश इत्युक्त्वा प्रणमेत्ततः ।
 ततो विप्राय शान्ताय सवक्त्रां गां पयस्विनीं ॥
 कृष्णस्य प्रीतये दद्याद्द्रव्यस्यास्य च सिद्धये ।
 उपानहौ च वस्त्राणि मुद्रिकाश्च कमण्डलुं ॥
 कर्णमात्रान् घटांस्तोयपूर्णान् सह मोदकैः ।
 द्वादश द्वादशैभ्यश्च विप्रेभ्यश्च सदक्षिणान् ॥
 अनेन विधिना यस्तु द्वादशीं समुपोषयेत् ।
 पूजयित्वा हरिं यान्ति विष्णीं लोकात्मनामयं ।
 नामाख्यद्वादशीच्छेतद्दृतानां प्रथमं मुने ॥
 नरैस्त्रिभिरनुष्ठेया तोषयद्भिर्जनार्दनं ।
 ॐकारः सर्ववेदानां यथादौ परिपठते ॥
 यज्ञैनां कौर्त्तयेद्भक्त्या शृणोति ब्रह्मयान्वितः ।

तत्सर्वपापनिर्मुक्तौ विष्णुलोके व्रजत्यसौ ॥

एवं कृते यच्च फलं लभते च तदुच्यते ।

मानी धनी ज्ञानयुतोऽथ विप्र

कुले प्रधाने धनधान्यपूर्णे ।

विवेकविन्यस्तसमस्तदुःखे

प्राप्नोति जन्माविकलेन्द्रियय ॥

तस्मात्त्वमप्येतदभोषविद्यो

नारायणाराधनमप्रमत्तः ।

कुत्स्य विष्णुं मगवन्तमीश

माराध्यमानश्च फलान्यपैहि ॥

धातेतदुक्त्वा ह्यभवत्स तूर्ण्यी

तदा स वाग्भिः परिपूजितः सन् ।

इति विष्णुरक्षस्योक्तनामदादश्रीव्रतम् ।

—000—

अगस्त्य उवाच ।

शृणु राजसहाभाग शुभव्रतमनुत्तमं ।

येन सम्प्राप्यते विष्णुः शुभेनैव न संग्रहः ॥

मासि मार्गशिरे पुण्ये प्रथमाब्दात्समाचरेत् ।

एकभक्तं सिते पक्षे यावत् स्याद्दशमी तिथिः ॥

ततो दशम्यां मध्याह्ने स्नात्वा केन्द्रमर्चयेत् ।

भुक्त्वा सङ्कल्पतः प्राग्वहादश्यां शुद्धमानसः ॥

केशवेति हरिं पूज्य दद्यात्तत्प्रोतये तिलान् ।

* व्रजत्रये इति पुरुषकारेपाठः ।

सहिरण्यं तथा कृष्णदादृशां प्रयतो नृप ॥
 तामप्येवमुचिता च यवान् दद्याद्दिजातये ।
 कृष्णयेति हरिर्वाण्यो दाने होमि तथार्चने ॥
 चातुर्भासामधैवन्तु अपित्वा राजसत्तम ।
 चैत्रादिषु पुनस्तदुपोष्य प्रयतः शुचिः ॥
 शकृत्पात्राणि विप्राणां सहिरण्यानि दापयेत् ।
 त्रावचादिषु मासेषु तद्दत्तोविन्दमर्चयेत् ॥
 त्रिषु मासेषु यावत्तु कार्तिकः स्याद्दिहागतः* ।
 तमप्येवं अपयित्वा दशम्यां प्रयतः शुचिः ॥
 अर्चयित्वा हरिं भक्त्या मासनाम्ना विष्वक्पथः ।
 प्रियदत्तेत्यादिमन्त्रे च ।

सङ्कल्प्य कारयेद्भक्त्या द्वादश्यां संयतेन्द्रियः ॥
 एकादश्यां यथा भक्त्या कारयेत् पृथिवीं नृप ।
 काञ्चनीं सप्तपातालकुलपर्वतसंयुतां ॥
 भूविन्द्यासविधानेन स्थापयेत्तां हरेः पुरः ।
 सितवस्त्रयुगच्छां सर्व्ववीजसमन्वितां ॥
 सम्युज्य प्रियदत्तेति पञ्चगव्यैर्बिच्चक्षयः ।
 जागरं तत्र कुर्व्वीत प्रभाते तु पुनर्द्विजान् ॥
 धामन्त्र्य सङ्ग्रया राजकेकाशिश्रितनामतः ।
 तेषामिकैकशो गाञ्च अनङ्गाहञ्च दापयेत् ॥
 एकैकं बज्रयुग्मञ्च एकैकं चाङ्गुलीयकं ।
 कटकश्चैव सौवर्चं कर्षाभरणमेव च ॥

* कार्तिकस्यादिनामत इति पुरुषकारे पाठः ।

एकैकं ग्राममेतेषां राजा राज्यप्रदीभवेत् ।
 यद्याविभवसारेण ततोर्गा सम्यदापयेत् ॥
 अथशतया करणे चैव दरिद्रोऽपि स्वशक्तितः ।
 यथाशक्त्या मर्ही कृत्वा काश्चर्नो गीयुगं तथा ॥
 वस्त्रयुग्ममथैकं वा दद्याद्विभवशक्तितः ।
 गीयुग्मासम्भवात्सर्वं हिरण्येनैव कारयेत् ॥
 एवं कृत्वा तथा कृष्णदादश्यामिवमेव तु ।
 रीप्याश्चेत् पृथिवीं कृत्वा यद्याविभवशक्तितः ॥
 प्रदद्याद्वाङ्गणानान्तु तथा तेषान्तु भोजनं ।
 उपानहो यद्या शक्त्या पादुके ष्छक्तिकान्तथा ।
 एवं दद्याद्देविदे कृष्णो दामोदरो मम ॥
 प्रीयतां सर्वदेवोऽपि विश्वरूपो हरिर्मम ।
 दाने च भोजने चैव मुक्ता यत्फलमश्रुते ॥
 न तच्छक्यं सहस्रेण वर्षाणामपि कीर्त्तितुं ।
 शुभव्रतमिदं यस्तु पुण्यं कुर्यान्नरेश्वरः ॥
 स सर्वसम्पदं प्राप्य ततो विष्णुपदं व्रजेत् ।
 इति वाराहपुराणोक्तं शुभदादश्रीव्रतम् ।

— ००० —

पुलस्त्य उवाच ।

शृणु राजन्महाभाग व्रतञ्चातुत्तमं शुभं ।
 मासि चाश्वयुजे ब्रह्मन् यदा पद्मजसन्निधिः ॥
 नाभ्यां निर्व्याति जगतामौशितुश्चक्रधारिणः ।
 तस्मिन् रम्ये शुभे काले या शुक्लैकादशी भवेत् ॥

तस्यां सम्यग्यजेद्दिणुं येन खण्डं प्रपूर्यते ।
येन विष्णुप्रपूजनेन खण्डमसम्पूर्णं धर्मादिभिः परिपूर्णं भवतीत्यर्थः ।

पुष्पैः पत्रैः फलैर्वापि गन्धवर्णसमन्वितैः ।

श्रीषधीभिश्च सर्वाभिर्यावत्स्थावरसम्भवैः* ॥

घृतं तिलान् ब्रीहियवान् हिरण्यङ्गनकादि च ।

मणिमुक्ताप्रवालानि वस्त्राणि विविधानि च ॥

रसाद्य स्वादुकटुक्लृषायलवणानि च ।

तिक्तानि च निवेद्यानि तान्यखण्डानि यानि हि ।

तत्पूजार्थम्यदातव्यं केशवाय महात्मने ॥

येन सम्बत्सरं पूर्णमखण्डं जायते गृहे ।

कृतोपवासो देवर्षे द्वितीयेऽहनि सर्व्वतः ॥

स्नानेन तेन स्नायीत येनाखण्डं हि वत्सरं ।

सिद्धार्थकैस्त्रिलैर्वापि तेनैवोद्दर्शनं स्मृतं ॥

हविषा पद्मनाभस्य स्नानमेव समाचरेत् ।

होमे तदेव गद्दिती दाने शक्त्या द्विजोत्तम ।

पूजयेच्चःथ कुसुमैः पादादारभ्य केशवं ॥

धूपयेद्द्विधिवह्नुपं येन स्यात्सत्सरं परं ।

हिरण्यरत्नवासीभिः पूजयेत्तं जगद्गुरुं ॥

सरसद्रवसूत्राणि हविष्याणि निवेदयेत् ।

प्रथमैकादश्यां येन द्रव्येण यत्कर्त्तव्यं निष्पादितं शेषास्त्रैकादशीषु तेनैव द्रव्येणान्यन्निष्पाद्यं ।

* यःवत्स्थावरदानम इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ततः सम्यक् देवेशं पद्मनाभस्त्रगङ्गुलं ।
 विज्ञाययेन्मुनिश्चेष्ट मन्त्रेणानेन सुव्रत ॥
 नमोस्तु पद्मनाभाय पद्मावह महाद्युते ।
 धर्मार्थकाममोक्षाणि अखण्डानि भवन्तु मे ॥
 विक्रासिपद्मपद्माक्ष यथाखण्डोसि सर्वतः ।
 तेन सर्वं च धर्माद्यास्त्वखण्डाः सन्तु केयव ॥
 एवं सम्यत्सरे पूर्णं सोपवासीजितेन्द्रियः ।
 अखण्डस्यारयेद्ब्रह्मन् व्रते वै सर्वं वस्तुषु ।
 अस्मिंश्चौर्ये व्रते व्यक्तं परितुष्यति माधवः ॥
 धर्मार्थकाममोक्षाद्याः स्नेह्या सन्भवन्ति च ।
 इति वामनपुराणोक्ताखण्डद्वादशीव्रतम् ।

—०००—

मुनय जपुः ।

कुम्भिकाव्रतमस्त्राकं प्रब्रूहि मुनिसत्तम ।
 यथा जागरणं तस्यां यथा वै देवपूजनम् ॥
 यद्देवं यत्फलं तस्यां तद्ब्रूहि मुनिसत्तम ।

श्रीमन्नक उवाच ।

अतिव्रतमिदं पुण्यं पवित्रं पापनाशन ।
 आचरेत् पुण्डरीकाक्षं देवानामपि दुर्लभं ॥
 एकादश्यां कार्त्तिकस्य शुक्लपक्षे तु कारयेत् ।
 कुम्भारादिनरकेभ्यस्तु उच्यते स्म शेषतः ॥
 प्रयत्नात् कार्त्तिके मासि विष्णोरप्ये तु जागरम् ।

(१३६)

सुयज्ञैकादशीं रात्रौ विशेषादर्शं यन्ति च ॥
 चतुरस्रं चतुर्द्वारङ्गोमयेनोपलिप्य च ।
 चतुर्भिः शालिगोधूमवर्णकैरुपशोभितम् ॥
 स्नात्वा नारायणं पूज्य स्वच्छिले प्रतिमासु च ।
 हृत्वा दिशां वलिं दत्त्वा विधानमवधारयेत् ॥
 दीपमालाम्बितं गन्धपुष्पाद्यैः पूजयेत्ततः ।
 कुम्भीं देवमयीं ध्यात्वा सुच्यते सर्व्वकिष्किषैः ॥

कुम्भीनाम प्रसिद्धा ।

यदा सुकुसुमोपेता कुम्भी कल्पवनाग्निनी ।
 तस्या मूले स्थितो विष्णुस्तदूर्ध्वं च पितामहः ॥
 स्कन्धे च संस्थितो रुद्र भन्ते च त्रिपुरान्तकः ।
 इन्द्रबाहुसमायुक्तशालासु ऋषयस्तथा ॥
 पर्णे चरन्ति देवाश्च मूलेषु महतः स्मृताः ।
 सर्व्वदेवनमस्कार्या सर्व्वव्रतकरौ स्मृता ॥
 तस्मात् सर्व्वप्रयत्नेन कार्य्यं वै कुम्भिकाव्रतम् ।
 सदा जागरणं कार्य्यं कृत्वगीतपुरःसरं ॥
 दम्पत्योः परिधानञ्च पूजा च मधुसूदन ।
 यथाशक्ति तद्या देया दक्षिणा पापनाशनी ॥
 य एवं कुरुते कश्चित् कुम्भीजागरणं शुभं ।
 मन्त्रेण पूजयेत् कुम्भीं कुम्भीपाकप्रथाशनी* ॥
 वल्लीं स्वर्णमयीं कृत्वा रीष्यञ्च पुष्पमेव च ।
 सोवर्णं केसरश्चैव नानाफलसमायुतम् ॥

* वाषप-कप्रशास्त्रमिति पुस्तकालये पाठः ।

लक्ष्मीं नारायणं चैव सौवर्णं कारयेद्बुधः ।
 पूजयेत् परया भक्त्या कुम्भीकायाः समीपतः ॥
 ईशे त्वं देवतैः पूर्व्यं प्रेषिता भुवनागता ।
 गृहाय पूजां भद्रन्ते सर्वकार्यार्थसिद्धये ॥
 पूजामन्त्रः ।

फलपुष्पाद्यतैस्तोयैः कर्पूरैश्चन्दनेन च ।
 रौप्यपात्रे च गृहे वा दद्यादर्घ्यं प्रयत्नतः ॥
 अर्घ्यं गृहाय मे देवि सर्वपापप्रणाशनी ।
 अर्घ्यं नुभ्यं मया दत्तं कुम्भीकायै नमोस्तुते# ॥
 अर्घ्यमन्त्रः ।

त्वन्माता सर्वभूतानां त्वमेव परमेश्वरी ।
 विद्या परमविद्यानां सर्वभूतवशङ्करी ॥
 पुत्रसौभाग्यदा देवी सर्वसौख्यदितैषिणी ।
 मत्स्वाय पादौ संपूज्य ऊरू कूर्माय वै तथा ॥
 वराहाय कटिं पूज्य नृसिंहाय उरस्ताया ।
 वामनाय च कण्ठञ्च भुजौ रामद्वयेन चणं ॥
 रामनाम्ना च नेत्रे तु बुधनाम्नः शिरस्ताया ।
 कल्किनाम्ना तथा केशान् वामनावेति सर्व्वतः ॥
 पूजामन्त्रः ।

जय विष्णो जयानन्त जय वामनरूपधृक् ।
 गृहाचार्यं मया दत्तमेकादश्यां तु कुम्भीके ॥

● वनोवसरति पुष्पकान्तरेपाठः ।

† वासुदेवेनचेति पुष्पकान्तरे पाठः ।

सवत्सां वस्त्रसम्बीतां शुभां यज्ञोपवीतिनीं ।
 स्वर्णशृङ्गीं रीप्यसुरां ताम्रपृष्ठां सघण्टिकां ॥
 कांस्योपदीहनयुतां सितचन्दनचर्चितां ।
 मुक्ताफलस्रजन्दिष्यां हिरण्योपरिसंस्थितां ॥
 हिरण्यं वाचयित्वाग्ने ब्राह्मणाय निवेदयेत् ।
 नन्द्यैवोपनन्द्या च सुग्रीला सुरभी तद्या ॥
 गावो मम गृहेऽसन्तु गावो मे लोकमातरः ।
 एवं सम्युज्ज्व विधिना नक्तं वास्यादुपोषणं ॥
 रात्रौ जागरणं कुर्व्यात् सकलं प्राप्नुयात् फलं ।
 स पुत्रपशुरत्नानि षष्ठयाषि पितामह ॥
 सप्तकल्पसहस्राणि सप्तकल्पशतानि च ।
 कर्त्वीत कुम्भीव्रतमिदं विष्णुलोकं महीयते ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं कुम्भीव्रतम् ।

—:०:—

दाक्ष्य उवाच ।

अल्पायासेन विप्रर्षे दानेनाल्पेन वा विभी ।
 पापप्रशमनायाति येन तद्दत्तमर्हसि ॥

पुलस्त्य उवाच ।

शृणु दाक्ष्य परां पुण्यां द्वादशीं पापनाशनीं ।
 यासुषीष्य परं पुण्यं प्राप्नुयाच्छ्रेयान्वितः ॥

मनापतरति पुण्यकान्तरेपाठः ।

मन्मथोत्तरति पुण्यकान्तरेपाठः ।

माघमासे तु सम्प्राप्ते चाषाढर्षं भवेद्यदि ।
 'मूलं वा कृष्णपक्षस्य द्वादश्यां नियतव्रतः ॥
 गृह्णीयात् पुष्पफलदं विधानं तस्य मे शृणु ।
 देवदेवं समभ्यर्च्य सुखातः प्रयतः शुचिः ॥
 कृष्णानाम्ना तु सम्पूज्य एकादश्यां महामतिः ।
 उपोषितो द्वितीयेऽङ्गि पुनः सम्पूज्य केशवम् ॥
 संस्तूय नाम्ना तेनैव कृष्णाख्येन पुनः पुनः ।
 दद्यात्तिलांस्तु विषय कृष्णो मे प्रीयतामिति ॥
 खानप्राशनयोः शस्तास्तथा कृष्णतिला मुने ।
 विष्णुप्रीचनमन्त्रैश्च समाप्ते वर्षपारणे ॥
 कृष्णकुम्भास्तिलैः सार्धं पक्वान्नेन च संयुताः ।
 हृत्पानद्युगैः सार्धं सञ्जीता रत्नगर्भिणः ॥
 ब्राह्मणानां प्रदेयास्ते यथावत्स सप्तं श्रया ।
 कृष्णाश्च मां ब्राह्मणाय पीतवस्त्रां पयस्विनीं ॥
 हृत्पानद्युगन्दद्यात् कृष्णो मे प्रीयतामिति ।
 तिलप्ररोहजाः क्षेपे यावत्सङ्गरास्तिला द्विजाः ॥
 तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ।
 अरोगो जायते नित्यं नरो जन्मनि जन्मनि ॥
 अश्वो न च विहीनाङ्गो न कुठी न च कुम्भितः ।
 भवत्येतामुषित्वा तु तिलाख्यां द्वादशीं नरः ॥
 विष्णुप्रीचनमन्त्रोक्त्वा समाप्ते वर्षपारणे ।
 पूजां च कुर्याद्विषय भूयोदद्यात्तथा तिलान् ॥
 अनेन विधिना दाल्भ्य तिलदानाच्चसंग्रयः ।

सुच्यते पातकेः सर्वैरनायासेन मानवः ॥
दानं विधिस्तथा अथा सर्वपातकशान्तये ।
नाशंप्रभूतीनायासः शरीरे सुनिसत्तमं ॥
इति विष्णुधर्म्मोक्तं तिलदादशीव्रतम् ।

— ००० —

कृष्ण उवाच ।

शरतल्पगतं भीष्मं पर्यपृच्छद्युधिष्ठिरः ।
व्रतेन येन पुण्येन यमसोको न दृश्यते ॥
नारी वा पुरुषो वापि शोकं चैव न पश्यति ।
तन्ममाचक्ष्व धर्मज्ञ पितामह कृपां कुरु ॥

भीष्म उवाच ।

एकादशी वैतरणी या तां कृत्वा सुखी भव ।
यमसोकं न पश्ये च शोकश्चैव न वन्दति ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

केन तात विधानेन कर्त्तव्या सा महाफला ।
पितामह समाख्याहि तद्विधानं मम प्रभो ॥

कृष्ण उवाच ।

एकादशी तिथिः कृष्णा मार्गशीर्षगता नृप ।
तामासाद्य नरः सम्यक् गृह्णीयाद्वियमं शुचिः ॥
एकादशी तिथिः कृष्णा नाम्ना वैतरणी शुभा ।
सा व्रतेन मया कार्या वर्षे नक्षत्रा सिता ॥
मध्याह्ने तु नरः ज्ञात्वा नित्यं निर्व्वर्त्तितक्रियः ॥

राशौ सुरभिमानोय कृष्णामर्षं त् यथाविधि ॥
 पूर्वाभिसुख्यभिधातव्या कृष्णागोर्लितभूतले ।
 अथपादादितः पूष्या यथात्पादद्वयावधि ॥
 गोपुच्छन्तु समासाद्य कुरु वै पिष्टतर्पणं ।
 ततः पूजा प्रकर्त्तव्या शास्त्रदृष्टविधानतः ॥
 गाश्चैव अथवा युक्तवन्दनेनागुलेपयेत् ।
 गन्धतोयेन चरणी शृङ्गे प्रक्षाल्य भक्षितः ॥
 ततो तु पूजयेद्भक्त्या पुष्पै र्गन्धादिवासितैः ।
 मन्त्रैः पुराणसम्प्रोक्तै र्यथास्नानं यथाविधि ॥

तत्र पूजामन्त्रः ।

गोरधरादाभ्यां नमः । गीरास्त्राय नमः । गोः शृङ्गाभ्यां
 नमः । गोः स्तम्भाभ्यां नमः । गोपुच्छाय नमः । गोयपादाभ्यां
 नमः । गोः सर्वाङ्गभ्यो नमः ।

स्थानेष्वेतेषु गन्धांश्च प्रक्षिपेच्छ्रद्धानसः ।
 पश्चात्प्रदापयेद्भूपं गौर्दीपं प्रतिगृह्यतां ।
 असिपत्रादिकं घोरं नदीवैतरणीं तथा ॥
 प्रसादात्ते तरिष्यामि गोमातस्ते नमोनमः ।
 सुखेन तीर्थते यस्मान्नदी वैतरणी भुवं ॥
 तस्मादेकादशीं कृत्वा नाष्वा वैतरणी भवेत् ।
 धानन्दकृत्स्नार्थं लोके देवानाञ्च सदा प्रिया ॥
 गोद्वयं पाहि जगन्नाथे दीपोऽयं प्रतिगृह्यतां ॥

दीपमन्त्रः ।

आञ्छादनं गवे दद्यात् सम्यक् शुचं सुनिर्मलं ।

सुरभिर्वस्त्रदानेन प्रीयतां परमेष्वरी ॥

आष्टादानमग्नः ।

मार्गशीर्षादिके भक्तं यावन्नासचतुष्टयं ।

अन्यन्नासचतुष्कन्तु यवकाशनमेवच० ॥

त्रावणादिषु मासेषु चतुर्ष्वद्याह पायसं ।

तदन्नस्य त्रयोभागाः गोशुद्ध स्नानमेव च^१ ॥

नैवेद्यं हि मया दत्तं सुरभि प्रीयतामिति ।

द्वितीयं गुरवे दद्यात् तृतीयं स्वयमेव च ॥

मासान्नासं प्रकुर्वीत मासद्वादशकं व्रतं ॥

एवापनन्ततः कुर्यात् पूर्णं सव्यक्षरे सदा ।

ग्रह्या सतूत्रिका कार्या दम्यत्योः परिधानकं ॥

सवत्साः कृष्णवर्णा तु धेनुः कार्या पयस्विनी ।

सौवर्णी सुरभी कृत्वा स्थापयेत्तूत्रिकोपरि ॥

सुरभीं पूजयेन्नमैः पूर्वोक्तैर्भक्तिसंयुतैः ।

ततस्तु गुरवे दद्यात्सर्वं तत्र चमापयेत् ॥

नारी वा पुरुषो वापि व्रतस्यास्य प्रभावतः ।

राज्यं बहुविधं भुक्त्वा स्वर्गलोके महीयते ॥

भारो लोहस्य दातव्यः कार्थीऽसौ द्रोचसन्धितः ।

वैतरण्यां समाख्यं ब्राह्मणाय कुटुम्बिने ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं वैतरणीव्रतम् ।

० यमकाशनमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† मोक्षः स्नानमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ स्वसेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

युधिष्ठिर उवाच ।

मिवावृतेऽम्बरे देव प्रावृट्काले ह्युपस्थिते ।
ददुरारावभूयिष्ठे केकानादनिनादिते ॥
किं व्रतं तत्र कर्त्तव्यं स्त्रीभिः पुंभिरथापि वा ।
ब्रूहि मे तत् सोपवास सर्वनामानि मन्त्रकं ॥

कृष्ण उवाच ।

प्रकृते आवणे मासि कृष्णपक्षे समाहितः ।
एकादश्यां शुचिर्भूत्वा स्नात्वा सर्वौषधीजलैः ॥
माषचूर्णेन राजेन्द्र कुर्व्यादिन्दुरिकाशतं ।
मीदकांश्च तद्या पञ्च छतप्रस्थः सुनिर्मलः ॥
आत्मीपयोगमुद्दिश्य ततो गत्वा जलाशयं ।
दुष्टयादोविरहितं अजोपेतजलैर्वृतं ॥
तस्यैव पुलिने रम्ये जलान्ते गोमयादिना ॥
कृत्वा मण्डलकं वृत्तं पिष्टकादिभिरर्चितं ।
चर्चितं गन्धकुसुमैर्धूपदीपाक्षतैः शुभैः ॥
तत्र चन्द्रं लिखेत्पार्श्वे रोहिण्या सहितं भुवि ।
अर्चयौत शुभार्थेन मन्त्रेणानेन भक्तितः ॥
सोमराज नमस्तुभ्यं रोहिण्या ते नमोनमः ।
महासति महादेवि सम्पादय ममेषितम् ॥
इत्थं सम्पूज्य तस्याग्रे नैवेद्यं देयमर्चितम् ॥
तच्चैवं ब्राह्मणे दद्यात् सोमो नः प्रीयतामिति ।
प्रीयतामिति मे देवि रोहिणी शशिनः प्रिया ॥
एवमुच्चार्य तद्वत्त्वा तज्जलं स्वयमाविशेत् ।

कण्ठान्तं जलमात्रं वा जानुगुल्फान्तमेव वा ॥
 ध्यायते सोमराजञ्च रोहिणीसहितं विभुम् ।
 जलस्थमेव भुञ्जीत स्वगमिन्दुरिकाशतम्* ॥
 पञ्च मोदकान् घृतप्रस्थस्येति शेषः ॥

यावत्समस्तं† तद्भुक्तं भुञ्ज्या तत्तटसंस्थितः ।
 निवेद्य वाचनं वाच्यं ततो विप्राय भोजनम् ॥
 दक्षिणासहितं दद्यात् स्वशक्त्या परिधानकम् ।
 भक्त्या परमया पार्थ वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥
 यः करोति नरो राजन्मारी वाथ कुमारिका ।
 वर्षे वर्षे विधानेन पार्थेदं रोहिणीव्रतम् ॥
 इहलोकैः‡ चिरं स्थित्वा धनधान्यसमाकुले ॥
 गृहाश्रमे शुभे पार्थ पुत्रपौत्रादिसंयुते ।
 ततः सतीर्थमरणं लब्ध्वा विष्णुपुरं व्रजेत् ॥
 दिव्यं वर्षशतं स्थित्वा भुञ्ज्या भोगाननुत्तमान् ।
 इह चाभ्येत्य राजासौ जायते जनवल्गवः ॥

ॐ रोहिणी शशिश्रिता विद्वता हिता
 यत् कारुणं गृह्य नरेन्द्र निवेदयामि ।
 सत्पितृमाषरचितेन्दुरिकाशतं य-
 द्भुक्तं जसे गुह्यहृतेन फलं तदेव ॥

गुह्यो, मोदकः ।

इति भविष्योत्तरोक्तं रोहिणीदादश्वीव्रतम् ।

* द्विष्टिरिका इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† यावत् समस्तमिति पुस्तकान्तर पाठः ।

‡ इन्द्रलोकमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

शुधिष्ठिर उवाच ।

शङ्ख चक्र गदापाशे श्रीवक्त्र गुरुङ्गासन ।
मङ्गाख्यद्वादशीं ब्रूहि किं विधानञ्च किं फलम् ॥

कृष्ण उवाच ।

मार्गशीर्षे शुभे मासि देवर्षिपितृसेविते ।
यदा च भङ्गीरवटे रमामि यमुनातटे ॥
गोपाक्षमध्ये गोवत्सैरष्टवर्षीभिः स्त्रीसया ।
कंसानुरवधार्थाय यमुनीपवने तदा ॥
अवलोवालरूपेण गोपमङ्गैर्बलीत्कटैः ।
त एव मङ्गगोपाय बलेन सह कानने ॥
आष्फोटयन्ति नृत्यन्ति त्रिदिवे त्रिदशा इव ।
सुभद्रो मन्दुलीगण्डस्तर्गोवर्द्धनगायनः ॥
पद्मेन्द्रभटइत्यादि तेषां नामानि गोकुले ।
गोपीनामपि नामानि प्राधान्येन च बोधयेत् ॥
गोपाली पालिका धन्या विशाखान्या विनिश्चिका ।
गन्धामुगन्धा सोमाभा तारका दशमी तथा ॥
इत्थेवमादिभिरहसुपवेश्य वरासने ।
पूजितोस्मि शुभैः पुष्पैर्दधिदूर्वाद्यतैस्तथा ॥
शतानां त्रौणि पुष्पाणि मङ्गानां पूजयन्ति मां ।
मङ्गैश्चैव सुरागैश्च रङ्गजा मरनर्त्तनैः ॥
मङ्गशुद्धैर्बहुविधैर्मत्तमङ्गभटैस्फुटैः ।
भक्ष्यैर्भीष्मैस्तथा पानैर्दधिदुग्धपृताशनैः ॥
स्नेहसङ्घर्षचैर्हास्यैः कर्षणक्रौडने मिथः ।

एवं हादश कर्त्तव्याः स्मर्त्तव्याः सुसमाहितैः ॥
 मङ्गैर्विशेषतः कार्यास्तथान्यैरपि भक्तितः ।
 पूजयन्ति क्रमेणैव मासि मासि तनूर्ध्वम् ॥
 मार्गशीर्षादिभिः पार्थ पूजयेन्नासनामभिः ।
 पारणे पारणे दद्यान्मङ्गिकानि द्विजातये ॥
 गन्धैः पुष्पैस्तथादीपैर्गीतवाद्यैर्भोज्यैः ।
 मङ्गयुक्तेषु विविधैर्जागरं कारयेन्निशि ॥
 घृतदानैः क्षीरदानैर्दधिदानैः पृथक् पृथक् ।
 सर्व्वं च देवदेवेशः कृष्णो मे प्रीयतामिति ॥
 एवमेव विधिः प्रोक्तो मन्त्रदानसमन्वितः ।
 हादशीयं मयाद्यापि क्रियते बलवृद्धये ॥
 मङ्गानां जयदा यस्मान्मङ्गहादशिसंज्ञिता ।
 तस्मान्मङ्गैः प्रकर्त्तव्या मङ्गयुद्धजयार्थिभिः ॥
 अन्येषामपि कौन्तेय सर्व्वार्थजयदायिनो ।
 इमां चीर्त्वा पापसङ्घैर्मुच्यते नात्र संशयः ॥
 अरण्येऽस्याद्यतोभोक्तं दत्तं तैस्तु परस्परं ॥
 क्रमेण पाण्डवश्रेष्ठ तेनैषारण्यहादशी ।
 एषैव मार्गशीर्षे तु गृहीता पार्थ मानवैः ॥
 हादशिसंज्ञा तु विख्याता हादशी भुवनत्रये ।
 यस्याः प्रभावात् राजेन्द्र गोपगोकुलसङ्कुलाः ॥
 अजाविगोमहिषादिधनधान्यसमृद्धिभिः ।
 इमां पापहरां पुण्यां नामाख्यहादशीं नृपः ॥
 ये करिष्यन्ति मङ्गलासोषां दास्यामि वृद्धतम् ।

पारोग्यं बलमैश्वर्यं विष्णुलोकञ्च शाश्वत
 भण्डोरपादपतले मिलितैर्भ्रष्ट-
 र्भ्रष्टैरनाकुलबाहुबलं नियुद्धैः ।
 सम्पूजितः सपदि यत्र तिथौ ततश्च
 सा द्वादशी भुवि गता बलमल्लसंज्ञा ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तं मल्लद्वादशीव्रतम् ।

— . . . —
मैत्रेय उवाच ।

उपवासव्रतानां तु वैकल्यं यन्महामते ।

दानकर्त्तव्यं तस्य विपाकी वद यादृशः ॥

याज्ञवल्कर उवाच ।

यज्ञानामुपवासानां व्रतानाञ्च यतव्रतः !

वैकल्यात्फलवैकल्यं यादृशं तच्छृणुष्व मे ।

उपवासादिना राज्ञ्यं प्राप्ताद्यान्ये तथा वसु ॥

अष्टैश्वर्या निर्धनाश्च भवन्ति पुरुषाः पुनः ।

रूपं तद्योत्तमं प्राप्य व्रतवैकल्यदोषतः ॥

काणाः कुलाश्च भूयस्ते भवन्त्यन्याश्च मानवाः ।

उपवासान्तरः पत्नीं नारी वापि तथा पतिं ॥

विद्योगव्रतवैकल्यादुभयं तदवाप्नुते ।

येऽपि ह्ये सत्यदारास्तथान्ये सत्यमन्यः ॥

कुले वसति दुःश्रीला दुष्कुले श्रीशिनश्च ये ।

वस्त्रानुलेपनैर्हीना भूषणेषातिरूपिणः ॥

विरूपरूपाश्च तथा प्रसाधनगुणाश्रिताः ।

सर्वे ते व्रतवैकल्यात् फलवैकल्यात्प्रताः ॥

तस्माद्भ्रते तथा दाने यज्ञे वोषोषिते तथा ।

वैकल्यं नैव कर्त्तव्यं वैकल्यादिकलं फलं ॥

मैत्रेय उवाच ।

कथञ्चिद्यदि वैकल्यमुपवासादिके भवेत् ।

किं तत्र वद् कर्त्तव्यं निश्चिद्रं येन जायते ॥

यान्नवस्का उवाच ।

अखण्डहादशीमितां समस्तेष्वेव कर्मसु ।

वैकल्यग्रमनायासं शृणुष्व गदतो मम ॥

मार्गशीर्षेऽमले पक्षे हादश्यां नियतः शुचिः ।

कृतोपवासो देवेशं समभ्यर्च्य जनार्दनं ॥

ज्जातो नारायणं वक्ति भुञ्जन् नारायणं तथा ।

भुञ्जन्नारायणं देवं स्रपन्नारायणं पुनः ॥

पञ्चगव्यजलज्जातो विष्णुं ध्यात्वा जितेन्द्रियः ।

यवत्रीहिभृतं पात्रं दत्त्वा विप्राय भक्तितः ॥

इदमुच्चारयेत् पश्चाद्देवेभ्यः पुरतो हरेः ।

सप्तजन्मनि यत् किञ्चिन्मया खण्डव्रतं कृतं ॥

भगवंस्त्वत्प्रसादेन तदखण्डमिहास्तु मे ।

यथाखण्डं जगत्सर्वं त्वमेव पुरुषोत्तम ॥

तथाखिलान्यखण्डानि व्रतानि मम सन्तु वै ।

एवं मे त्वत्प्रभावेण कामावाप्तिस्तु सान्प्रतं ॥

एवं मासानुमासञ्च चातुर्वर्ष्यविधिः स्मृतः ।

चतुर्भिरेव मासैस्तु पारणं प्रथमं स्मृतं ॥

प्रीणनञ्च हरेः कुर्थात् पारणे पारणे पुनः ।
 चैत्रादिषु-तु मासेषु चतुर्थेष्वेव पारणं ॥
 तथापि शक्तुपात्राणि दद्यात् अहासमन्वितः ।
 श्रावणादिषु मासेषु कार्त्तिकान्तेषु पारणं ॥
 तथापि धृतपात्राणि दद्याद्दिप्राय शङ्कितः ।
 सौवर्णं राजतं ताम्रं सृश्मयं पात्रमिष्यते ॥
 स्वशक्त्यपेक्षया राजन् पालाशम्बाथ कारयेत् ।
 एवं सम्बद्धरस्यान्ते ब्राह्मणान् संयतेन्द्रियान् ॥
 आमन्त्रितान् द्वादश वै भोजयेद्दृतपायसैः ।
 वस्त्राभरणदानैश्च प्रणिपत्य क्षमापयेत् ॥
 उपदेशारमपि च पूजयेद्द्विधिवद्गुरुन् ।
 गाञ्च दत्त्वा नृपश्रेष्ठ प्रणिपत्य क्षमापयेत् ॥
 एवं सम्यग्यथान्यायमखण्डद्वादशीं नरः ।
 समुपोथानखण्डस्य व्रतस्य फलमश्नुते ॥
 सप्तजन्मानि वैकल्यं यद्गतस्य कश्चित् कृतं ।
 करीत्यखण्डमखिलमखण्डद्वादशी यतः ॥
 तस्माद्देवा प्रयत्नेन नरेस्त्रीभिश्च सुव्रते ।
 अखण्डद्वादशीं सम्बुधोऽथ फलकाङ्क्षया ॥
 इति विष्णुधर्मोत्तरे अखण्डद्वादशीव्रतम् ।
 विष्णुधर्मोत्तरोक्तमुद्घापनम् ।

—000—

कृच्छ्रउवाच ।

नारदेन पुरा विष्णुरखण्डद्वादशीव्रतं ।

उद्यापनविधिं पृष्टः कथयामास तं शृणु ॥

नारद उवाच ।

भगवन् देवदेवेश पुराणपुरषोत्तम ।

कश्चित् पृच्छामि सन्देहं कावण्यात् कथय प्रभो ॥

अखण्डद्वादशी यासौ पुराणे कथिता तु या ।

सा सर्व्वव्रतखण्डानां पूरुषाय किं सुच्यते ॥

यथा सर्व्वव्रतानान्तु वैकल्पं पूर्य्यते प्रभो ।

तस्या उद्यापनविधिर्न सम्यक्कथितस्त्वया ॥

न तत्प्रश्नस्य वक्तास्ति श्रिता वापि सुदुर्लभः ।

विष्णु उवाच ।

मार्गशीर्षे शुभे मासि शुक्लपक्षे शुचिव्रतः ।

द्दशम्यां केशवं पूज्य हविष्यान्नकृताशनः ॥

निर्व्वर्त्य पश्चिमां सम्भ्यां षट्क्षीयाहन्तधावनं ।

उपसृष्ट्य यथान्यायं मन्त्रमेतमुदीरयेत् ॥

कृष्ण विष्णो ऋषीकेश केशव क्लेशनाशन ।

करिष्येऽहं व्रतारम्भं भवेद्यावद्दिनत्रयं ।

इति सम्प्रार्थ्य गोविन्दं मन्त्रेणादौ ततः स्वपेत् ॥

व्रतग्रहणमन्त्रः ।

ततः प्रभाते चोत्थाय यथोक्तं व्रतमाचरेत् ।

चतुर्भिः पारणं मासैः कथितं यत् द्विजोत्तम ॥

तत्पात्रदानविधिना भिद्यते नहि पारणं ।

एवं द्वादश निर्व्वर्त्य द्वादशीः पञ्चजोहव ॥

उद्यापनन्ततः कुर्याद्द्विधिमन्त्रपुरस्कृतं ।

एकादश्यां ऋषिः ज्ञातः शुक्लाम्बरधरोव्रती ॥
 सर्वतीर्थेषु यत्पुण्यं सर्वतीर्थेषु यत् फलं ।
 त्वत्पादपद्मतीयेन सर्वं मे भवतु प्रभो ॥

इति ज्ञानमन्त्रः ।

ज्ञानं कृत्वा ततो देवं पूजयेद्भद्रबुधजं ।
 एकत्रमूर्त्तिसम्बन्धं लक्ष्मीनारायणं प्रभुं ।
 यथाशक्त्या प्रकुर्वीत सौवर्णं रत्नभूषितं ॥
 सहस्रशीर्षामन्त्रेण ज्ञापयेद्भद्रवारिणा ।
 मधुवातादिभिर्घ्नैर्मधुना ज्ञापयेद्हरिं ॥
 यथार्थेतिमन्त्रेण क्षीरेण ज्ञापयेत्ततः ।
 एवं ज्ञाने कृते पश्चात् पूजां कर्तुं समारभेत् ॥
 चन्दनोशीरकर्पूरकुङ्कुमादिभिरर्चयेत् ।
 तैर्विलिप्य हरिं भक्त्या ततो मन्त्रमुदीरयेत् ॥
 यथाशक्त्या मया देव ज्ञापितस्तानुलेपितः ।
 न्यूनातिरिक्तं तत्सर्वं लक्ष्मीनारायणं चमेत् ॥

अनुलेपमन्त्रः ।

ततो वस्त्रयुगं श्रेष्ठमानीय परिधापयेत् ।
 पीतं वा लोहितं वापि श्वेतं नानाविधितं ॥
 परिधानं यथाशक्त्या तत्र देव समर्पितं ।
 न्यूनातिरिक्तं तत्सर्वं लक्ष्मीनारायणं चमेत् ॥

इति परिधानमन्त्रः ।

परिधाप्य ततो देवं पुष्पैर्नानाविधैः ऋभैः ।

संख्याय पुष्यमासाभिर्भस्ममेतमुदीरयेत् ॥
 पुष्यैरपि यथा भक्त्या पूजितोसि जनार्दन ।
 न्यूनातिरिक्तं तत्सर्वं लक्ष्मीनारायणः क्षमेत् ॥

इति पुष्यार्चनमन्त्रः ।

एवं कृत्वा विधानेन ग्रह्यां चैव निवेदयेत् ।
 तूलीपर्यङ्कयुक्तान्तु छेदप्रच्छेदगूढकैः ॥
 प्रतिपादसमारूढैः चतुःपादप्रतिष्ठितैः ।
 निवेश्य तत्र देवेशं लक्ष्मीनारायणं शुभं ॥
 नैवेद्यादि निवेद्यानि नानाभक्षयुतानि च ।
 लेह्यान्धभ्यवहार्याणि चूष्याणि चर्व्यानि च ॥
 पानकानि च वै यद्वात् यस्मिन् देशे यथा तथा ॥
 तानि सर्वाण्युपादाय देवाय विनिवेदयेत् ।
 फलानि च सुगन्धीनि पक्वान्नानि निवेदयेत् ॥
 एवं निवेश्य तत्सर्वं भक्त्या मन्त्रमुदीरयेत् ।
 यथाविसोपसंयुक्तं* मया तव निवेदितं ॥
 लक्ष्मीनारायण विभो भक्त्या तत् प्रतिगृह्यतां ॥
 इति नैवेद्यादानन्तु भक्त्या देवस्य कारयेत् ।
 देवस्य तु शिरः पूज्यं पादौ पद्मात् प्रकल्पयेत् ।
 शिरः स्थाने ततः कुम्भं बारिपूर्णं मनोहरं ॥
 स्थापयेत् कर्कटीयुक्तं सरलं वस्त्रभूषितं ।
 स्थापयित्वा तु तं कुम्भं ततोमन्त्रमुदीरयेत् ॥

* विसोपसंयुक्तमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

भुक्त्वा पीत्वा तत्राचम्य तोयेनाग्नेन केशव ।

मङ्गलया प्रीतितो देव सुदत्तः सुसुखः स्वयं ॥

इति स्थापनमन्त्रः* ।

शय्योपचारं यत्किञ्चित् तत्सर्वं विनिवेदयेत् ।

यावत्पूजा समारब्धा ज्ञानदानाग्रनान्तिकाः ॥

सष्टतं गुग्गुलुं तावद्द्वेद्देवाद्यतो निधि ।

ततो विप्रं समानीय भार्यया सहितं शुभं ॥

सर्वं दुर्लभ्यैर्हीनं साङ्गोपाङ्गसमन्वितं ।

वेदविद्याव्रतस्नातः पूजितः स्वङ्कुलोद्भवैः ॥

देवस्यान्ते ततो विप्रं भार्यया सहितं व्यसेत् ।

प्राङ्मुखं विमलं शुभं भक्त्या तं पूजयेत्ततः ॥

बहुना किं प्रलापेन कथितेनेह नारद ।

देवः संपूजितो यद्वत्तद्विप्रश्च पूजयेत् ॥

विष्णुब्राह्मणयोर्भेदं न कदाचिद्विकल्पयेत् ।

इति येषां हृदि सदा पूज्या विप्रा यतीश्वराः ॥

द्वादशान्यांस्तथा कुम्भान् पूर्णान् शुभेन वारिषा ।

ज्ञापयेद्देवपर्यङ्कीपरितः शुभचेतसा ॥

द्वादशैव तथा गावः सवत्साः कांस्यदोहनाः ।

क्षीरवत्सः सुशीलाश्च स्थापयेद्देवसन्निधौ ॥

अथवा विस्रवैकल्पे कुर्यात् गोपिनशकरः ।

दद्यात्तु सम्यक् भक्त्या तत्राशक्तिमतः सतः ॥

एकाम्बुमुत्तमगुणा तस्य सा द्वादशाधिका ।

स्रविस्तप्रत्तया यत्किञ्चिद्वातुसुत्सहते नरः ॥
 तत्सर्वं द्विजदेवाभ्यां सन्निधौ सम्प्रकल्पयेत् ।
 उपस्काराणि दानानि ह्यभोपानत्प्रपादुकाः ॥
 गोसङ्घादिदत्तं सर्वं दानं तस्मिन् प्रकल्पयेत् ।
 यदा दानेन गौरेककल्पा शक्तिप्रपूर्वकं ॥
 सा सम्पूर्णा तु कर्त्तव्या वत्सेन सह पूजिता ।
 स्वर्णशुक्ली रौप्यखुरां घण्टाभरत्संयुतां ।
 तद्वर्णवस्त्रसम्ब्रीतां वस्त्रेन सह पूजयेत् ॥
 एवं निर्बलं विधिना ज्ञानपूजादिना समं ।
 देवब्राह्मणयोर्भक्त्या ततो विप्रान् चमापयेत् ॥
 एतत् गृह्णाथ मे विप्र भार्गव्या सहितः प्रभो ।
 एतेनावाह्यं तं विप्रं तस्मिन् सर्वं निवेदयेत् ॥
 प्रतिग्रहीता दाता च व्रती विष्णुर्व्यथा तथा ।
 मया दत्तमिदं सर्वं गृह्णाथ त्वं द्विजोत्तम ॥

दानमन्त्रः ।

दाता च विष्णुर्भगवाननन्तः
 प्रतिग्रहीता स च एव विष्णुः ।
 तस्मात्त्वया दत्तमिदं हि सर्वं
 प्रतिग्रहीतश्च मया ह्यभाय ॥

ब्राह्मणमन्त्रः ।

अन्येभ्योऽपि यथा प्रत्तया तस्मिन् काले प्रदीयते ।
 दौनाम्बलपचादिभ्यस्तद्दत्तवफलं श्रुतम् ॥
 वित्तघाठ्यं न कुर्वीत समप्रफलमाप्नुयात् ॥

इत्यखण्डव्रतस्यैव उद्यापनविधिः स्मृतः ॥
 कथितस्ये मया वक्तुं तस्य पुण्यफलं नृणु ।
 यावज्जगज्जन्तुभिश्चैतन्निधरादि तावत्
 तत् सन्ततिर्भवति पुण्यफलोपभोग्नी ।
 तावन्न विष्णुभवनात्परिवर्त्ततेऽसौ
 अन्ते लयश्च परमात्मनि याति विष्णो ॥

इत्यखण्डहादस्या उपायनविधिः ।
 यतस्तर्लभं पुण्यं भुक्तिमुक्तिप्रदं नृणां ।
 नारदेन पुरा प्राप्तं सकाशात्तत्रपाणिनः ॥
 नच व्यूहं परं पात्रं* स्वयं देवेन भाषितम् ।
 तद्वदन्न गुरु त्वं मे कुर्वन्नुपहृष्टं मयि ॥
 मार्कण्डेयउवाच ।

श्वेतद्वीपस्थितो विष्णुः पुरा देवसुरर्षिणा ।
 धाराधितो हरिर्भक्त्या वर्षाणां क्रीटयस्तु षट् ॥
 प्रसन्नस्तस्य देवर्षेः शङ्खचक्रगदाधरः ।
 प्रादुर्भूत्वाप्रवीणात्वं नारदं मुनिसत्तमं ॥
 ब्रूहि नारद देवर्षे वरदोक्तिं तवानघ ।
 मन्त्रकाशाहरो यस्ये चिरान्तमभिकाङ्क्षितः ॥

नारद उवाच ।

विद्याशास्त्राणि वेदाङ्गधर्मशास्त्राणि वा प्रभो ।
 अधीतानि मया सम्यक् सकाशात्पद्योनिनः ॥

न श्रुतं हि मया देवपूजने नैतदुत्तमं ।
 तस्मान्नाश्च ससुहार्त्तं अङ्गानाश्च तदार्चनम् ॥
 यन्नं च विभवं यन्नि भुक्तिमुक्ति फलप्रदम् ।
 यदि तेहिं दद्या देव कृण्वन्मि तद्वद् प्रभा ॥
 श्रीभगवानुवाच ।

आदौ तु मण्डपं वक्ष्ये नृणाञ्चैकमना सुने ।
 यत् प्रविश्य नरोवाति तत् स्थानं परमं मम ॥
 कस्यचित् शुक्लपत्रः स्वादेकादश्यासुपीधितः ।
 पुष्टश्चसम्भसंयोगे यन्नं कुर्वीत वैश्वयं ॥
 फाल्गुनाषाढशुक्लायां कार्तिंकां अहृषेऽपि वा ।
 एकादश्याश्च सङ्क्रान्त्यौ कर्त्तव्यं यजनं मम ॥
 यथा चोपनतं शिष्यं अह्वानं जितेन्द्रियम् ।
 सर्व्वसत्वहितं विप्रभक्तं च सुपरीक्षितम् ॥
 यन्नस्तदैव कर्त्तव्यो भुक्तिमुक्तिप्रदायकः ।
 शैवाय चसवित्ताय हिंसकायाजितात्मने ॥
 मम यन्नो न दातव्यो प्रार्थमानस्य कस्यचित् ।
 परीक्ष्य भूमिं सगुणां यन्नार्थं प्रागुदक्त्रवां ॥
 मन्वयेत् प्रथमं तस्माद्गतः कुर्वीत मण्डप ।
 अङ्गारतुषकेयास्त्रिवस्त्रीकङ्कामिसङ्कुलाम् ॥
 सशस्त्रामूर्धरां भूमिं यज्ञेन परिवर्ज्ययेत् ।
 नीलां पीतां तथा रक्तां कृष्णवर्णां हि सन्वयेत् ॥
 आचार्य्यो वैश्वदो यन्नं कर्त्तुमर्हति धीगवित् ।
 अन्वदर्शनसंखीनं शूद्रं सहरजं मठं ।

अकार्यकारिणः सर्वानाचार्यान् दूरतस्थजेत् ॥
 ततः प्रवर्त्तयेत् सम्यक् मण्डपं मुक्तिदायकं ।
 आचार्यैः कवचं कृत्वा वैष्णवम्बभयप्रदं ॥
 प्रतिमायां कृतौ पूर्वं चतुःकोणपुरं लिखेत् ।
 द्वारैश्चतुर्भिः संयुक्तं समरेखाङ्कितं शुभं ॥
 तस्य मध्ये स्थितं पद्ममष्टपत्रम् वरुणं ।
 पीता सौवर्णिका तस्य रत्नकेसररञ्जिता ॥
 पुरद्वाराणि शक्तानि कोचान् रत्नेन रक्षयेत् ।
 चतुरो विन्ध्यवेष्टहान् शृङ्खान् पद्मस्य कोणगान् ॥
 पूरयेद्भक्तपुष्पैस्तु अन्तरं पुरपद्मयोः ।
 आयुधानि दिग्गीशानां बिलिखेद्दाम्बतः पुमान्* ॥
 वप्सं शक्तिं तथा दण्डं शङ्खं पाशं ध्वजं गदां ।
 शूलञ्चेति दिग्गीशानां स्नासु दिक्षु विनिर्द्दिशेत् ॥
 वर्षादि विन्ध्यवेत्तस्वं वासुदेवाख्यमव्ययं ।
 शङ्खस्तिकसङ्घायं कर्णिकायां महाप्रभुं ॥
 पूर्वोक्तानन्तरे वर्षे रत्नं पूर्वदले स्थितं ।
 तत्त्वं सङ्घर्षश्चैव सर्व्वलोकेषु पूजितं ॥
 आद्यं विन्दुसमायुक्तं विशुद्धकनकप्रभं ।
 आम्बेये तु दले तत्त्वं प्राङ्मुखम् विनिर्द्दिशेत् ॥
 सविसर्गं तथैवाद्यं भिन्नाङ्गनसमञ्जितम् ।
 खवर्णात् सप्तमं वर्षे याम्ये विन्दु विभूषितम् ॥
 तत्त्वं नारायणाख्यम् न्यसेन्नैष्टतिदिग्दले ।

सर्वं ब्रह्ममयं तत्त्वं रक्ताख्यं कुसुमप्रभम् ।
 ईशाने च दले पूज्यं वामनं तत्त्वमव्ययं ॥
 आकाराणि नवैतानि नमोन्तानि तपोधन ।
 श्यातानि नवतत्वानि नवव्यूहेति शब्दितं ॥
 अङ्गानि वास्य सुख्यानि नवव्यूहस्य सप्तम ।
 वाहनाभ्यामुधानाश्च सम्यग्भोगं यथादिशेत् ॥
 वैजतेयं गङ्गाम्नां पश्चिराजमनुत्तमं ।
 मण्डपस्य न्यसेद्द्वारि पूर्वं चैव तथापरे ॥
 तं शं रं हुं फङ्गिति चक्रं त्रैलोक्यशब्दितं ।
 सुदर्शनमहावीरं न्यसेत्पीठस्य दक्षिणे ।
 खं धं फं यं चं गदां देवीं मं शं शक्तिं सुदुर्लभां ॥
 उत्तरे तु न्यसेद्द्वारि पूर्वं चैव तथापरे ।
 बलवन्तं * महाशङ्खं कृष्णालरजतप्रभम् ।
 पीठस्य पश्चिमे भागे पाञ्चजन्यं विनिर्द्दिशेत् ॥
 पद्महस्तां श्रियं देवीं स्वाकारां पद्मभूषितां ।
 वामे चैनां पराकाम्तिं न्यसेत्पीठस्य दक्षिणे ॥
 मण्डपस्य चतुःषष्टिसत्ववीर्यबलप्रदं ।
 गणेशं गार्ग्यतीक्ष्णायां न्यसेत्पीठस्य चोत्तरे ॥
 वर्ध्वां श्रीमामासाञ्च भूवर्षाय ममोत्तमा ।
 पीठस्य पश्चिमे भागे न्यसेच्च ममसन्निधौ ॥
 द्युतं चक्रं ववं रुचं कौस्तुभं भूषणं मम ।
 पश्चिमे विन्यसेत्तत्र पश्चिमे मुनिसत्तम ॥

* बं स स चमिति पाठान्तर्ग ।

तं मं यं शं महाभोगं फलामषिविभूषणम् ।
 आधारः सर्वलोकानां तमप्यस्य विनिर्दिशितम् ।
 नवैतानि ममाङ्गानि साकाराणि यथाक्रमम् ।
 पीठमध्येऽर्चयेत्सम्यक् बहिः पद्मस्य सत्तमम् ॥
 नवव्यूहं तथाङ्गानि परिकल्प्य यथा पुरा* ।
 उपरिष्ठाहितानन्तु पताकाभिरलङ्कृतम् ॥
 दर्पणी पुष्पमालाभिर्यथाशोभं विभूषितौ ।
 एवमभ्यर्थं मान्तर आचार्यैः शिष्यसंघतः ॥
 अग्निकुण्डं ततो गच्छेत् प्रदीप्तं दक्षिणान्वितम् ।
 निविश्य सामतः शिष्यान् पूजयित्वा हुताग्रजम् ॥
 जुहुयात्सूक्तमन्त्रेण तिलान् ग्रीहिष्टतप्तान् ।
 लक्षमष्टोत्तरं हुत्वा सहस्रं शतमेव च ॥
 शिष्याणां कायशुद्धार्थं समयं वैष्णवं सुजे ।
 नवव्यूहस्य मूर्त्तानामङ्गानाञ्च यथाक्रमम् ॥
 शतं शतं तु सर्वेषां हुत्वा चाष्टोत्तरं पृथक् ।
 हुत्वा लक्षं सहस्रं वा अष्टधा तु विधानतः ॥
 ततः पूर्णाहुतिं दद्यात् समामौ च विशेषतः ।
 समामौ तु महायज्ञे तुष्ट्यर्थं त्रिदिवीकसां ॥
 वसोर्षारां ततः कुर्यात् प्रदीप्ते यज्ञवाटके ।
 शङ्खदुन्दुभिनिर्घोषैर्बृहस्पतयस्त्रयैः ॥
 कर्त्तव्यास्थानकुशलैः मनुजैर्जागरं त्रिभिः ।
 समाप्य विधिवद्यज्ञं प्रभूतं धनसन्धयम् ॥

* सहस्रवाहनानि तु इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ततोऽगुपूजयेद्भक्त्या गुरुं दीक्षाप्रदायकम् ।
 यः प्रकाशयते ज्ञानं निष्कलं विपुलं धनम् ॥
 स गुरुर्वन्दनीयो हि यथैवाहं तथा मुने ।
 दीक्षां प्राप्य गुरोः सम्यक् ज्ञानं वा मत्पूकाशकम् ॥
 गुरुं न प्रथमेद्यस्तु स पापी नरकं व्रजेत् ।
 अतः प्रथम्य शिरसा दद्याच्च गुरुदक्षिणां ॥
 भू-गाम्बैकाक्षनं धान्यवस्त्राख्याभरणानि च ।
 निवेद्य गुरवे सर्वमात्मानं विभवं गृहम् ॥
 तथा मिथः प्रकुर्वीति यथा सुप्रीतये गुरोः ।
 परितुष्टे गुरुस्तस्य तुष्टोऽहं नात्र संग्रयः ॥
 विमानिते भृशं क्रुधे गुरौ वाहं विमानितः ।
 ततो धान्यानि भूगावो भक्ष्य, भोज्य, मवारितम् ॥
 चतुर्थस्याश्रमेभ्यश्च शक्त्या देयं प्रियम्बद् ।
 यः कारयति मे यज्ञं यो विद्याङ्गतिमात्ररः ॥
 यः पश्यति विशुद्धात्मा स याति भवनं मम ।
 इमं यज्ञं महापुण्यं महापातकनाशनम् ॥
 नवव्यूहश्च ते पुत्र प्रोक्तं संसारमुक्तिदम् ।
 आधानं यो नवव्यूहं यज्ञे यस्मिन् प्रविश्य तु ॥
 विशुद्धो जन्मदुःखीवाप्नोति मयि मानवः ।

मार्कण्डेय उवाच ।

इति गुह्यतमं ज्ञानं नवव्यूहं कपिञ्जल ।
 भाषितं वासुदेवेन नारदाय महात्मने ॥
 ते नराः पश्यन्ती लोके किं तेषां जीवितैः फलम् ।

येर्लब्धा न हरेर्दीर्घां नाचिंती वा जनार्दनः ॥
 संसारेऽस्मिन्महाघोरे जन्मरोगभयाकुले ।
 स एवैको महाभागः पूजयेद्यो जनार्दनम् ॥
 स एवैकः कृती लोके कुलं तेनाप्यलङ्कृतम् ।
 आधारः सर्वलोकानां येन विष्णुः प्रसादितः ॥
 इति विष्णोर्भ्राह्मणं ये कुर्वन्ति नरा भुवि ।
 ते यान्ति शाश्वतं विष्णोरानन्दम्परमं पदम् ॥
 इति विष्णुधर्मात्तरोक्तं नवव्यूहार्चनं ।

—000—

स्कन्द उवाच ।

विष्णुं वैकुण्ठमासीनन्देवदेवं जनार्दनम् ।
 प्रणम्य गिरसा भक्त्या प्रह्लादो दैत्यसत्तमः ॥
 वासुदेव जगन्नाथ भक्तानामभयप्रद ।
 अहं हि मनुजैः पृष्टो लोकानाञ्च शुभाशुभम् ॥
 शुभगा मनुजाश्चैव केचिद्देवेश दुर्भगाः ।
 भवन्ति कर्मणा केन सुरूपा रूपवर्जिताः ॥
 तैस्तु सर्वैरहं पृष्टो न जानामि जनार्दन ।
 प्रणम्य गिरसा भक्त्या प्रह्लादो दैत्यसत्तमः ॥
 वासुदेव जगन्नाथ भक्तानामभयप्रद ।
 आशुष्टवान् जनान् सर्वान् प्रागतीक्ष्ण तवान्तिक्रमं ॥
 एवं सर्वं ततो मच्चं जनानां मम चैव हि ।
 श्रीभगवानुवाच ।
 पुरा ज्ञतयुगे तात न तेजोऽभत इतामने ।

ब्राह्मणस्य च श्रापेन तनुस्तास्य विरूपिता ॥
 ततो देवगणाः सर्वे ऋषिभिः किन्नरैः सह ।
 तेन दुःखेन सन्तप्ता ब्रह्माणं शरणं ययुः ॥

देवा उचुः ।

देवदेव जगत्कर्ता लोकाणां प्रपितामह ।
 हुतभुक् द्विजश्रापेन न च यज्ञेषु ह्ययते ॥

ब्रह्मोवाच ।

आसीत्पुरा व्रतं गोप्यन्तिलदाहीति संज्ञकम् ।
 तेन व्रतेन देवेन्द्र प्रेरयध्वं हुताशनम् ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेण पावकी ह्योच्यतेऽध्वरैः ।
 तथेति चोक्त्वा देवास्ते व्रतमग्निमकारयन् ॥
 तदा प्रभृति यज्ञेषु ह्ययते च यथा पुरा ।
 लोकपालेषु वैशित्वं दत्तञ्च ब्रह्मणा स्वयम् ॥
 तिलदाही तद्याप्येकाप्रसिद्धा दिवि दैवतैः ।
 तथा त्वमपि दैत्येन्द्र गच्छ शीघ्रं जनान् प्रति ॥

प्रह्लाद उवाच ।

विधिना केन कर्तव्यं तिलदाही व्रतोत्तमम् ।
 कस्मिन्नासे तिथौ चैव विधिना केन तद्भवेत् ॥

श्रीभगवानुवाच ।

पौषमासेषु या कृष्णतिथि रेकादशी शुभा ।
 तामुपोष्य तदा स्नानं कृत्वा नारायणं जपेत् ॥

पुण्यक्षेत्रे तु संगृह्य गोमयेन तु पिण्डकान् ।
 कारयेत्तिलसंयुक्तान् ध्यायेद्देवं जनार्दनम् ॥
 होमं कुर्याद्यथा शक्त्या मन्त्रेयागमसम्भवेः ।
 मण्डलं कारयेद्द्विष्वोः कुम्भान् स्थाप्य चतुर्दिशम् ॥
 सप्तध्यानमुदीच्याच्च वस्त्राणि च फलानि च ।
 तिलप्रस्थोपरि देवं सत्रियं स्मरणं सन्धवम् ॥
 नारायणं न्यसेत् पादौ जानुभ्यां विष्णुरुपिणम् ।
 जर्वास्त्रिविक्तमक्षैव मेढ्रे त्रैलोक्यरूपकम् ॥
 कट्याच्च ओधरं देवं पद्मास्थं नाभिमण्डले ।
 उदरे* नरसिंहश्च वैकुण्ठं कण्ठमण्डले ॥
 सर्वसाधारणं वाङ्मोक्षं विज्ञानविषयम् ।
 नेत्रे संसारदीपश्च सर्वाङ्गानं शिरस्तथा ॥
 एवं न्यासविधिं कृत्वा मन्त्रमुक्तिं प्रकल्पयेत् ।
 कृत्वा पूजां यथा योगं ततो ह्यर्घ्यं प्रपूजयेत् ॥
 फलरत्नसमायुक्तं पुष्पधूपदिधूपितम् ।
 मन्त्रेणानेन दैत्येन्द्र ततोऽहन्तीषमावहम् ॥
 कृष्ण कृष्ण कृपालुस्त्वं सर्व्वीषोषविनाशन ।
 देहि मे रूपसौभाग्यं स्वर्गं मोक्षं च देहि मे ॥
 तिलदाहीति ये केचित् व्रतं कुर्व्वन्ति मानवाः ।
 वरदोऽहं सदा तेषां ददामि विपुलां त्रियम् ॥
 एवं संश्रुत्य दैत्येन्द्री नमस्कृत्य जनार्दनम् ।
 भागतो यत्र सम्भवे जनानां संस्थितो भुवि ॥

* उदरे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

लौका जघुः ।

द्रुहि देत्सेन्द्र यङ्क्तं कथितं चक्रपाणिना ।
त्वया पृष्टेन लौकानां हितायाये तद्याल्लिङ्ग ॥

प्रह्लाद उवाच ।

अहो जना युष्मदर्धे गतोऽहं यत्र केयवः ।
मम दुःखतरं घोरं मर्हितं चक्रपाणिना ॥
यद्योपदिष्टं देवेन निर्घृयं कथयाम्यहम् ।
सविस्तरं ततो लोके व्याख्यानं दानवेन वै ॥
व्रतस्त्रास्य प्रभावेण पुरुषत्वं प्रजायते ।
अजरा जायते तत्र न च दुःखं प्रपश्यति ॥
मनोरथाः सुसम्पूर्णाः पुत्रपौत्रसमन्विताः ।
अवैधव्यं सदा स्त्रीषु सतीत्वं जायते जने ॥
भर्ता सह तथैकत्वं सुनिर्व्याणं ससृष्टति ।
पूर्वं तावत्कृतं शम्भा इन्द्रपत्न्या सुशीलया ॥
अनुसूयारन्धतीभ्यां सीतया च कृतं तथा ।
द्वीपद्यैतद्गतं सर्वं यावज्जीवमनुष्ठितम् ॥
सुखमारीन्वमैश्वर्यं रूपसौभाग्यबुद्धिदम् ।
सन्ध्या संस्तुतं सर्वं पाश्चात्या यदनुष्ठितम् ॥
तस्मै साध पप्रच्छ विष्णुपत्नी यशस्विनी ।
तिलदाहीव्रतं भद्रे द्रुहि त्वं सखि सुव्रते ॥
विधिसुस्थापनंचैव कथयस्व यथातथम् ।
द्वीपद्वी कथयामास व्रतस्त्रास्य विधिक्रमम् ॥
पोषे मासे तु या कृष्णा तिथिरेकादशी तथा ।

तामुपोष्य ततः स्नानं विधिपूर्वकं समाचरेत् ॥
 मौनं सङ्कल्प्य सञ्चित्य पुराणपुराणोत्तमं ।
 ततः पूजा विधातव्या मन्त्रैः स्वागमसम्भवैः ॥
 अर्घ्यं दत्त्वा विधानेन स्तुतिं कुर्यात् पुनः पुनः ।
 उद्यापनविधिं वच्मि शृणुष्वैकमनाः सति ॥
 तिलप्रस्त्रोपरिदेवं सन्त्रियं सुवर्णसम्भवम् ।
 पूजयेन्मण्डलं पञ्चाङ्गैराभरणैः फलैः ॥
 कुम्भाः सवस्त्राः कर्त्तव्यास्तारो मण्डपाद्वि-
 क्षतधान्यसुदीपान्तु प्राण्यं ह्योमं तु कारयेत् ॥
 आचार्यं सकलत्रयं वार्चयेत् कुसुमादिभिः ।
 वस्त्रैराभरणैः पुष्पैः फलैर्नानाविधोत्तमैः ॥
 एवं यः कुरुते भद्रे नारी वा पुरुषोऽपि वा ।
 वर्षे वर्षे तु शृणोषि गाञ्च दद्यात् सदक्षिणां ॥
 तिलदाहीव्रतं सम्यक् ये प्रकुर्वन्ति मानवाः ।
 तेषां सौभाग्यमतुलं सुन्दराङ्गः प्रजायते ॥
 एतद्व्रतं सविस्तारमुद्यापनसमन्वितम् ।
 यः करोति सदा भक्त्या स वैष्णवपुरं व्रजेत् ॥
 एवं यः कुरुते भद्रे नारी वा पुरुषोऽपि वा ।
 सर्वकामसम्पन्नं तु परं पदमवाप्नुयात् ॥

इति स्कन्दपुराणोक्तं तिलदाहीव्रतम् ।

भैषेय उवाच ।

विधानं शृणु राजेन्द्र ब्रह्मा दृष्टं मनीषिभिः ।
 यथोक्तं नियमं कुर्यादेवाद्भ्यासुपीधितः ॥
 दन्तकाष्ठं प्रगृह्णादी वास्यतो नियतेन्द्रियः ।
 श्रवणहादशीयोगे समुपीथ जनार्दनम् ॥
 अर्चयित्वा विधानेन अष्टं भोक्त्रे परेऽहनि ।
 नदीनां सङ्गमे ज्ञायादर्चयेत् यत्र वा मनः ॥
 सौवर्षं रक्तसंयुक्तं द्वादशाङ्गुलमुच्छ्रितम् ।
 पीतवस्त्रैः शुभैर्वेद्यैश्च भृङ्गारं निर्ब्रणं नवम् ।
 हिरण्ययेन पात्रेण अर्घ्यपात्रं प्रकल्पयेत् ॥
 दध्यक्षतफलैश्चैव सहिरण्यं सचन्दनम् ।
 नमस्ते प्रद्यनाभाय नमस्ते जलशायिने ॥
 तुभ्यमर्घ्यं प्रयच्छामि बालवामनरूपिणे ।
 नमः कमलकिञ्चल्कपीतनिर्भलवाससे ॥
 महाहररिपुस्तम्भे धृतचक्राय चक्रिणे ।
 नमः शार्ङ्गसिंशङ्काजपाणये वामनाय च ॥
 यज्ञाय यज्ञेश्वराय यज्ञोपकरणाय च ।
 यज्ञभुक् फलदात्रे च वामनाय नमोनमः ॥
 देवेश्वराय देवाय देवसन्भूतिकारिणे ।
 प्रभवे सर्वदेवानां वामनाय नमोनमः ॥
 मत्स्य, कूर्म, वराहाय नरसिंहस्वरूपिणे ।
 दानरामत्रिरामाय वामनाय नमोनमः ॥

● महाहररिपुस्तम्भ इति पुष्पकान्तरे पाठः ।

श्रीधराय नमस्तुभ्यं नमस्ते गरुडध्वज ।
 चतुर्बाहो नमस्तेस्तु नमस्ते धरणीधर ॥
 एवं पूज्य विधानेन नरः स्रक्चन्दनादिभिः ।
 रात्रौ जागरणं कुर्यात् पुरतो जलप्रायिनः* ॥
 धृत्वा जलमयं रूपं देवदेवस्य चक्रिणः ।
 ब्रह्माण्डसुदरे यस्य महद्भूतैरधिष्ठितं ॥
 मायावी वामनः श्रीशः सोढायातु जगत्पतिः ।
 एवं सम्पूजयित्वा तु द्वादशामुदये रवेः ॥
 शृङ्गारसहितं† वस्त्रं सम्बन्धरं प्रपूजयेत् ।
 वामनः प्रतिशृङ्गातु वामनोऽहं ददामि तम् ॥
 वामनं सर्वं तीभद्रं विजयार्थं निवेदयेत् ॥
 जलधेनुं तथा दद्याच्छत्रं चैव तु पादुक ।
 सहिरण्यानि वस्त्राणि धेनुं वानुहुहं नृप ॥
 यत्किञ्चिद्दीयते तत्र तदानन्धाय कल्पते ।
 अवणद्वादशीयोगे सम्पूज्य गरुडध्वजम् ॥
 दत्त्वा दानं द्विजातिभ्यो वियोगे पारणं ततः ।
 सिंहास्थिते तु मार्तण्डे अवणस्थे निशाकरे ।
 अवणद्वादशी ज्ञेया न स्वाहाद्रपदादृते ॥
 दशम्येकादशी यत्र साशुपोष्या भवेत्तिथिः ।
 अवणेन तु संयुक्ता सा शुभा सर्वकामदा ॥
 अवणेन युक्ता या दशमी साप्युपोष्येत्यर्थः ।

* सुरभ इति पुलकान्तरे पाठः ।

† भृङ्गारं देवसहितमिति पुलकान्तरे पाठः ।

पारणं तिष्ठित्तु तु द्वादशामुहुसंक्षयात् ॥
 तद्वौ कुर्यान्नयोदशां तत्र दोषो न विद्यते ।
 द्वादशीतौख्ये नक्षत्रे द्वादशां पारणं अधिके त्रयोदशा-
 मित्यर्थः ।

इत्येषा कथिता राजन् द्वादशां श्रवणे तथा ।
 कर्त्तव्या सा प्रयत्नेन इहामुत्रफलप्रदा ॥

इत्यग्निपुराणे विजयद्वादशीव्रतं ।

—:○:—

कृष्ण उवाच ।

द्वादश्यास्तु विधिः प्रोक्तः श्रवणेन युधिष्ठिर ।
 सर्वपापप्रशमनः सर्वसौख्यप्रदायकः ॥
 एकादशी यदा शुक्ला श्रवणेन समन्विता ।
 विजया सा तिथिः प्रोक्ता भक्तानां विजयप्रदा ॥
 पुरा देवगणैः सर्वैः समवेतैर्व्वरार्थिभिः ।
 नारदः प्रार्थितो विष्णुश्चन्द्रान्यनिलसंयुतः ॥
 बलवान् विजितो दैत्यो बलिर्नामा महाबलः ।
 तेन देवगणाः सर्वे त्याजिताः सुरमन्दिरम् ॥
 त्वं गतिः सर्वदेवानां शीघ्रमस्त्राकमुत्तर ।
 जहि दैत्यं महाबाहो बलिं बलवताम्बरम् ॥
 श्रुत्वा विष्णुस्तदा वाक्यं देवानां करुणोदयं ।
 उवाच वाक्यं वाक्यज्ञो देवानां हितकाम्यया ॥
 जानामि विरोचनेः पुत्रं बलिं चैलोक्यकण्टकं ।
 तपसा भावितात्मानं शान्तं दान्तं जितेन्द्रियं ॥

मङ्गलं महत्तप्राणं सत्यसन्धं महाबलं !
 प्रजापतिसमं ख्यात्या प्रजानां प्रियकारकं ॥
 तद्गुणा नहि शक्यन्ते वक्तुं कैरपि भूतले ।
 अवश्यं नावसेयोऽतीभीक्ष्ण्यं तपसः फलं ॥
 तपस्यान्तश्च बहुना कालेनास्य भविष्यति ।
 अथ काले बहुतिथे सादितिर्गुर्विष्णी भवेत् ॥
 सुषुप्ते नवमे मासि पुत्रं वालाकृतिं हरिं ।
 ऋष्यपादं ऋष्यकायं महाशिरसमर्भकं ॥
 पाणिपादोदरकृशमूर्ककम्बरकद्वयम् ।
 दृष्ट्वा सुवामनं जातमदितेयकितं मनः* ॥
 भयं वभूव दैत्यानां देवानां तोषमावभौ ।
 जातकर्मादिकस्तस्य संस्कारः स्वयमेव हि ॥
 चक्रे च कश्यपो धीमान् प्रजापतिसमन्वितः
 प्रायश्चित्तमेखलो दण्डो यतिर्यज्ञोपवीतिनां ॥
 कुशचर्माजिनधरः कमण्डलुविभूषितः ।
 वलेर्बलवतो यज्ञं जगाम बहुविस्तरं ॥
 दृष्ट्वा वलिं तु यज्वानं वामनो† भ्येव्य तत्क्षणम्
 अर्थं नाहं यज्ञपते दीयतां मम मेदिनी ।
 पदत्रयप्रमाणेन पठनार्थं स्थितोऽहसि ॥
 दत्ता दत्तास्तु च मया‡ वलिःप्राह द्विजोत्तमं ।

* मदिति मन्वेन क्विप्पमे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† मन्वीर्बलवतो इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ अथमेवेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ततोवदितुमारब्धं वामनोऽनन्तविक्रमः ॥
 पादौ भूमौ प्रतिष्टाप्य शिरसावृत्य रोदसी ।
 नाभ्यामिन्द्रादिकान् लोकान् ललाटे ब्रह्मणः पदम् ॥
 न ततोयं पदं लेभे ततो नेदुर्दिवोकसः ।
 तं दृष्ट्वा महदाश्चर्यं सिद्धाया ऋषयस्तथा ॥
 साधुसाध्विति देवेशं प्रशशंसुर्मुदान्विताः ।
 ततो दैत्यगणाः सर्व्वं जित्वा त्रिभुवनं वशी ॥
 वलिमाहृन्नधोगच्छे सुखं सवलवाहनः* ।
 तत्र त्वमीषिताम् भोगान् भुक्त्वा महाहृत्पालितः ॥
 अस्येन्द्रस्वावसाने तु त्वमेवेन्द्रो भविष्यसि ।
 एवमुक्त्वा वलिः प्रायात्समस्तस्य नरोत्तमं ।
 विसर्ज्यायं वलिं देवलोकापालानुवाच हृत्+
 स्वानि धिष्यानि गच्छध्वन्तिष्ठस्व विगतज्वराः ।
 देवेनोक्ता गता देवाः प्रहृष्टा पूज्य वामनं ।
 एवमुक्त्वाः जगत्कर्त्ता तत्रैवान्तरधीयत ॥
 एतत्सर्व्वं समभवदेकादश्यां नराधिप ।
 तेनेष्टा देवदेवस्य सर्व्वथा विजयाम्बितः ॥
 एषैव, फासगुणे मासि पुष्येण सहिता नृप ।
 विजया प्रोच्यते सद्भिः कौटिकोऽटिगुणोत्तरा ॥
 एषैवेति शक्यपक्षैकादशी परासृष्यते ।

* वलिमाहृन्नधोगच्छे सुखं सवलवानुम इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† कपिलापालानुवाच इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ एवं ज्ञानेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

एकादश्यां सोपवासो रात्रौ संपूजयेद्धरिं ।
 रौप्यसौवर्णपात्रे वा दारुवंशमयेऽपि वा ॥
 आच्छाद्य पात्रं वासोभिरहृतैः फलसंयुतैः ।
 मागचर्म्मणं गन्धैश्च भक्त्या वा शक्त्यपेक्षया ॥
 तिलादृकेन विसाढैः प्रस्थेन कुङ्कुमेव वा ।
 अलाभे यवगोधूमैः फलैः शक्तितलैर्भवेत् ।
 पुष्पैर्भक्ष्यैः फलैर्धूपैः कालोत्थैरर्चयेद्धरिं ॥
 नानाविधैश्च नैवेद्यैर्भक्ष्यभोज्यैर्गुण्डोदनैः ।
 स्ववित्तमनुसारेण सहिरष्यश्च कारयेत् ॥
 मन्त्रवते शतगुणं* भक्त्या लक्षगुणोत्तरम् ।
 भक्तिमन्त्रगुणोपेतं† कोटिकोटिगुणोत्तरम् ॥
 एभिर्भक्ष्यपदैस्तत्र पूजयेद्गृह्णध्वजम् ।
 उपहारैर्नरयेष्ट श्चिर्भूत्वा समाहितः ॥
 श्रीं जलोपमदेहाय जलजास्थाय शङ्किने ।
 जलराशिस्वरूपाय नमस्ते पुरुषोत्तम ॥
 नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने ।
 नमस्ते केशवानन्त वासुदेव नमोस्तु ते ॥

स्नानमन्त्रः ।

मलयेषु समुत्पन्नं गन्धाढां सुमनोहरं ।

मया निवेदितं तुभ्यं गृह्णाण परमेश्वर ॥

चन्दनमन्त्रः ।

* मन्त्रास्तत्रमुच्यन्ति पुराणकारे पाठः ।

† भक्तिमन्त्रसंज्ञितम् इति पुराणकारे पाठः ।

वनस्पतिसमुत्पन्नं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।
 मया निवेदितं पुष्पं गृह्णाथ पुरुषोत्तम ॥
 पुष्पमन्त्रः ।

नमः कमलकिञ्चलक पीतनिर्मलवाससे ।
 महाह्रवे रिपुस्तन्वष्टृचक्राद्य चक्रिणे ॥
 पूजामन्त्रः ।

मत्स्यकुर्मवराहश्च नारसिंहश्च वामनम् ।
 रामं रामश्च कृष्णश्च अर्चयामि नमीनमः* ॥
 अर्चनमन्त्रः ।

पादाद्यैकास्य पूजनं शीर्षमतः सर्वाङ्गपूजा ।
 धूपोऽयं देवदेवेश गङ्गचक्रगदाधर ।
 अश्रुतानन्द गोविन्द वासुदेव नमोस्तु ते ॥
 धूपमन्त्रः ।

त्वमेव पृथिवी ज्योतिर्वायुराकाशमेव च ।
 त्वमेव ज्योतिषां ज्योतिर्दीपोऽयं प्रतिगृह्णातां ।
 दीपमन्त्रः ।

अन्नश्चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम् ।
 मया निवेदितं देव प्रसीद परमेश्वर ॥
 अन्निर्यमो वैश्रवणः पापं मे हन्तु मेऽव्ययम् ॥
 नैवेद्यमन्त्रः ।

स्रगदादिर्जंगद्रूपीह्यनादिर्जंगदन्तकृत् ।

जलाशयजगद्योनिःप्रीयतां मे जनार्दनः ॥

प्रीणनमन्त्रः ।

अनेककार्मनिर्व्वन्ध्वंसिनं जलशायिनम् ।
नतोऽस्मि मधुरावासं माधवं मधुसूदनम् ॥
नमो वामनरूपाय नमस्ते स्तु त्रिविक्रम ।
नमस्ते मणिवन्ध्याय वासुदेव नमोस्तु ते ॥

नमस्कारमन्त्रः ।

नमो नमस्ते गोविन्द वामनेश त्रिविक्रम ।
अघौघसंचयं कृत्वा सर्व्वकामप्रदो भव ॥

प्रार्थना मन्त्रः ।

सर्व्वगः सर्व्वदेवैः श्रीधरः श्रीनिकेतनः ।
विश्वेश्वराय विष्णुश्च श्रीशायी च नमोनमः ॥

शयनमन्त्रः ।

सर्व्वं संपूजयेद्भारैकादश्यां तृप्तोत्तम ।
जागरं तत्र कुर्व्वीत गेयवादिभनिस्त्रयैः ॥
यात्रय श्रवणे युक्ता द्वादशी परमा तिथिः ।
तस्याहं सङ्गमे स्नात्वा सर्व्वपापैः प्रमुच्यते ।
एवं स नियमङ्कृत्वा प्रभाते विमले सति ॥
प्रदेयः शास्त्रविदूषि ब्राह्मणे मन्त्रतोदृप ।
ब्राह्मणश्यापि मन्त्रेण प्रतिगृह्णीत मन्त्रवित् ॥
वामनो बुद्धिदी दाता द्रव्यस्थोवामनःस्वयम् ।
वामनस्य प्रतिग्राही वामनाय नमस्तु ते ॥

श्रीं गुह्यं । श्रीं शिरसि । पुष्पफलनैवेद्यं सर्वमेतदर्चन
विधिना दद्यात् ।

एवमुपोष्य विधिवदेकादशां समन्त्रकं ।
पूर्वोक्तविधिना चैव प्रतिपक्षोभयङ्करः ॥
हस्ताश्वरथजातीनां दाता भीक्ता विमत्सरी ।
रूपसौभाग्यसंपन्नो दीर्घायुर्निर्जितो भवेत् ॥
पुत्रैः परितृतो जीवो जीवेच्च शरदः शतम् ॥
एषा व्युष्टिः समाख्याता एकादशां भया तन ॥
पूर्वमेव समाख्याता द्वादशी अत्रणान्विता ।
उपोष्यैकादशीं पञ्चाद्वादशीमप्युपोषयेत् ॥
नचात्र विधिलोपः स्यादुभयोर्देवता हरिः ॥

एकादशीद्वादशीचान्यतरस्यां वा अत्रणयुक्तायां अत्रणयुक्ती-
पवासेनैव व्रतद्वयसिद्धिः एकस्मिन् व्रते पूर्वमन्यां तिथिसुपोष्य
पञ्चादपारयित्वा नान्योपोष्या इति यो विधिलोपः स एव देवतै-
कत्वे न भवतीत्यर्थः ।

बुध अत्रणसंयुक्ता द्वादशी सङ्गमोदकम् ।
ज्ञानं* दध्योदनं सम्यगुपवासः परो विधिः ॥
सगरेण ककुत्स्तेन धुम्भुमारिण गाधिना ।
एतैशान्यैश्च राजेन्द्र कामाच्च द्वादशीव्रतम् ॥
सा द्वादशी बुध युता अत्रणेन साकं ।
स्याज्जायतेतिकथिता ऋषिभिर्नभस्ये ।

* दानमिति कथित्वाहः ।

तामादरेण समुपोष्य नरोऽमरत्व-
माप्नोति पार्थ अणिमादिगुणोपपन्नम् ॥

इति श्रीभविष्योत्तरे विजयदादश्रीश्रवणदादश्रीव्रतम् ।

— ००० —

ब्रह्मोवाच ।

एकादश्यां यद्योद्दिष्टा विश्वेदेवाः प्रपूजिताः ।
प्रजां पशून् धनं धान्यं प्रयच्छन्ति मर्ह्यं तथा ॥
मूलमन्त्रः स्वसंज्ञाभिरङ्गमन्त्राः प्रकीर्त्तिताः ।
पूर्व्यवत्यष्टपत्रस्थः कर्त्तव्यश्च तिथीश्वरः ॥

अत्र तिथिश्चरोविश्वेदेवाः ।

गन्धपुष्पोपहारैश्च यथा शक्तिं विधीयते ।
पूजाशठेन शठेन कृतापि तु फलप्रदा ॥
आण्यधारासमिन्निश्च दधिञ्चीरान्नमाशिकैः ।
पूर्व्योक्तफलदो ह्योमः कृतः शान्तेन चेतसा ॥

एतद्भूतं वैश्वानरप्रतिपद्भूतवद्भयाख्येयम् ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं विश्वव्रतम् ।

— . : . —

कृत्वा भूरितरं पापं ज्ञानतोऽज्ञानतोऽपि वा ।
तस्य पापस्य शान्त्यर्थं किं दानं किमथ व्रतम् ॥

ब्रह्मोवाच ।

महाव्रतमिदं वत्स सर्व्वपापप्रणाशनम् ।
कीर्त्तयिष्यामि ते वत्स सुखकीर्त्तिधनप्रदम् ॥

(१४४)

पुण्यैर्ज्ञेय समायुक्ता शुक्ला वै द्वादशी भवेत् ।
 सा प्रोक्ता वासुदेवेन सर्वपापप्रणाशिनी ॥
 येऽर्चयन्ति नरास्तस्यां भक्त्या देवं जनार्दनम् ।
 ससुपोष्य विमुच्यन्ते पापैस्ते शतजन्मजैः ॥
 कर्मणा मनसा वाचा यत्पापं ससुपार्जितम् ।
 तत् क्षालयति गोविन्द तिथौ तस्यां समर्चितः ॥
 स्नानं जपोऽथवा होमः ससुष्टिभ्य जनार्दनम् ।
 नरैर्यत् क्रियते तस्यां तदम्फलं भवेत् ॥
 यस्मान्नाशयते जन्तोः पापं जन्मशतोद्भवम् ।
 पुण्यैर्द्वादशी तस्मात् प्रोक्ता पापप्रणाशिनी ॥
 एवमेव पुरा प्राह भानुः सारथिनं प्रति ।

भानुरुवाच ।

द्वादशी या परा ब्रह्म पुण्यैव च संयुता ।
 उपोष्या तु प्रयत्नेन द्वादशी पापनाशनी ॥
 पुण्येण द्वादशीयुक्ता शुक्ला वै फाल्गुनस्य च ।
 जया सा द्वादशी प्रोक्ता स्वयं वा विष्णुना पुरा ॥
 तस्यां दत्तं तपस्तप्तं कौटिकौटिगुणोत्तरं ।
 एकादश्यां निराहारी द्वादश्यां विष्णुमर्चयेत् ॥
 रौप्य-सौवर्चं पात्रे वा दातुं शमयेऽपि वा ।
 आच्छाद्य पात्रं वासीभिरहृतैः सुपरौचितैः ॥
 मार्गैश्च नेदुजैश्चैव सिद्धिः स्वाहृत्यपेक्षया ।
 तिल्लाङ्गुकेन वित्ताढैः प्रत्येन क्लृप्तजेन वा ॥
 अलाम्बे चैव गोधूमैः फलं मुख्यं तिलैर्भवेत् ।

पुष्पैर्धूपैः फलेर्गन्धैः कालोत्थैरर्घ्यैश्चरिम् ॥
 नानाविधैश्च नैवेद्यैर्भक्ष्यैर्भोज्यैर्गुह्योदनैः ।
 जागरं तत्र कुर्वीत गेयवादित्रनिखनैः ॥
 एवं सनियमस्यास्य प्रभाति विमले सति ।
 भक्त्या वा विभक्तिसारेण सहिरण्यं प्रदापयेत् ॥
 समाप्ते तु व्रते ब्रह्मन् यत्पुण्यं तन्नबोध मे ।
 चतुर्युगानां विप्रेन्द्र एकसप्तति खेचर ॥
 तावद्विष्णुपुरे तत्र क्रौडते कालमचयम् ।
 इत्यादित्यपुराणोक्तं विजयाद्वादशीव्रतम् ।

—000—

पुलस्त्य उवाच ।

एकादश्यां शुक्लपक्षे यदा तु स्यात् पुनर्वसुः ।
 नाम्ना सा तिलजया ख्याता तिथीनामुत्तमा तिथिः ॥
 यो ददाति तिलप्रस्थं त्रिकालं वत्सरं नृप ।
 उपवासन्तु तस्यां यः करीत्यभ्येत्य तत्कमम् ॥
 तस्यां जगत्पतिर्देवः सर्व्वलोकेऽग्रो हरिः ।
 प्रत्यक्षतां प्रयात्यस्मात्तत्रानन्तफलं स्मृतम् ॥
 सगरेण ककुत्स्थेन धुम्भुमारिण गाधिना ।
 तस्यामाराधितः क्षणी दत्तवानखिलां भुवम् ॥
 इति विष्णु धर्म्मोत्तरोक्तमतिविजयैकादशीव्रतम् ।

—000—

वज्र उवाच ।

केवलं क्षणपक्षस्य द्वादशीषु जनार्दन ।

कदा प्रभृति धर्मज्ञ विधिना केन वाच्येत् ॥
मार्कण्डेय उवाच ।

माघ्यान्तु समतीतायां* द्वादशी या भवेत्कृप ।

ततः प्रभृति कर्त्तव्यं व्रतमेतदुपोषिता ॥

द्वादशीषु च कृष्णासु नाम कृष्णस्य कीर्त्तयेत् ॥

तेनैव नाम्ना कर्त्तव्यो जपहोमौ तथैव च ॥

तिलैर्निवेदनं कार्यं होमे कार्यन्तथा तिलैः ।

पौष्यान्तु समतीतायां कृष्णा या द्वादशी भवेत् ॥

तस्यां व्रतावसाने तु तिलान् दद्याद्द्विजातिषु ।

सुवर्णं च महीपाल रक्तवस्त्रं तथैव च ॥

सम्बन्धरमिदं कृत्वा व्रतं मनुजपुङ्गव ।

तिथ्यम्बोनिं नचाप्नोति स्वर्गलोकाश्च गच्छति ॥

यावज्जीवं व्रतमिदं यः करोति समाहितः ।

न स दुःखमवाप्नोति नारकं मनुजीप्तम ॥

यत्र वैतरणी दुर्गा क्षुरधारा सपर्वता ।

पापानां पावना यत्र तत्रासौ न गमिष्यति ॥

यस्या गथा भीमबला महीषा

दंष्ट्राकरालाघकरोधवेषा ।

विद्रावणाः पापकृतां नराणां

दृष्टेर्न तस्यानद्य भ्रान्ति मार्गम् ॥

इति विष्णुधर्मोत्तरोक्तं कृष्णद्वादशीव्रतम् ।

— 000 —

* मय्याहु सप्तमीतीचमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

वक्ष उवाच ।

एकासुपीथ कृष्णां यां द्वादशीं विधिना नरः ।

महाफलमवाप्नोति तन्ममाचक्ष्व भार्गव ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

माघ्यान्तु समतीतायां श्रवणेन तु संयुता ।

द्वादशी या भवेत् कृष्णा प्रोक्ता सा तिलद्वादशी ॥

तिलैः स्नानं तिलैर्ह्रीं नैवेद्यं तिलमोदकैः ।

दीपैश्च तिलतैलेन तथा देयं तिलोदकम् ॥

तिलाय देया विप्रेषु तस्मिन्नहनि पार्थिव ।

उपवासदिने राजन् होतव्याश्च तथा तिलाः ॥

उपोषितेनापरेऽङ्गि होतव्यश्च विशेषतः ।

इन्धनञ्च प्रदातव्यं ब्राह्मणेषु तथानघ ॥

तिलप्रस्थं तदा हुत्वा सोपवासो जितेन्द्रियः ।

न दुर्गतिमवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥

तद्विष्णोः परमं नित्यं सोममन्त्रः प्रकीर्तितः ।

पीरुषश्च तथासुक्तं श्रीसूक्तेन च संयुतम् ॥

होमः कार्थ्योश्च राजेन्द्र सावित्र्या परमात्मनः ।

एतत् प्रोक्तं द्विजातीनां स्त्रीशूद्रेषु च यत् शृणु ॥

द्वादशाक्षरो मन्त्रो च तेषां प्रोक्तो महात्मनां ।

द्विती तौ च द्विजातीनां मन्त्रश्रेष्ठौ नराधिप ॥

तेभ्योऽप्यधिक मन्त्रोऽपि विद्यते नहि कुत्रचित् ।

वक्ष उवाच ।

द्वादशाष्टाक्षरो मन्त्रो कथयन्मन्मानघ ।

पुण्यैः पवित्रो माङ्गल्यो सर्वपापप्रणाशनौ ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

श्रीं नमो भगवते वासुदेवाय । श्रीं नमो नारायणाय ।

एतौमयावः कथितौ पवित्रौ
मन्त्राविनौ पापहरो धरण्या ।
परायणौ सर्वतपस्विनां वरौ
वरस्य भूतौ भुवनेषु नित्यम् ॥
यथातिथिस्ते श्रवणेन युक्ता
माघस्य मासस्य तथा मयोक्ता ।
कार्यां तथेयं नृपतेर्विशेषाद्
योगे पवित्रे सरिताङ्गयस्य ॥

इति विष्णुधर्माङ्गं तिलदादशीव्रतम् ।

—••—

एकादशी तथा कृष्णां फाल्गुने मासि भार्गव ।

छन्दीदेवस्य कर्त्तव्यः पूजा धर्मभृताम्बर ॥

पूजनाच्छन्ददेवस्य येनायं गुणवर्जितम्* ।

न प्राप्नोति तथा प्रीतिं† गुणवर्ती न संशयम् ॥

इति धर्म्मोत्तरोक्तं कृष्णैकादशीव्रतम् ।

—000—

* तेन यं गुणवर्जितमिति पुण्यकारे वाचः ।

† न प्राप्नोति तथाप्राप्नोति पुण्यकारे वाचः ।

एकादशीं तथा प्राप्य चैत्रे शुकलस्य पूजयेत् ।
सम्यज्य तं महाभागं गृहमङ्गलमश्रुते* ॥
तमिति हृन्दोदेवम् ।

इति विष्णुधम्मोत्तरोक्तमवैधव्यशुक्लैकादशीव्रतम् ।

— 000 —

मार्कण्डेय उवाच ।

अङ्गारकं तथा सूर्यं निर्ऋतिं वापगेश्वरः ।
हवनं वेश्वरं सृत्युं कपालकषकिङ्किणीं ॥
तत्र वैकादशान् यस्तु देवान् त्रिभुवनेश्वरान् ।
एकादश्यां सोपवासः सोमं मम्यजयेत्तथा ॥
गन्धमाख्य नमस्कारदीपधूपान्नसम्यदाः ।
मार्गशीर्षादथारभ्य यावत् सम्बत्सरं भवेत् ॥
सम्बत्सरान्ते दद्याच्च ब्राह्मणाय पयस्विनीं ।

कृत्वाव्रतं वत्सरमेतदिष्टं

रुद्रत्वमाप्नोति नरस्तु राजन् ।

रुद्रेण सार्धं सुचिरं वसित्वा

कामानप्राप्नोति मनोऽभिरामान् ॥

तथा सर्वगतान् रुद्रान् मुदा सर्वत्रपूजयेत् ।

सर्वकामानवाप्नोति सर्वगानपराजितान् ॥

इति विष्णुधम्मोत्तरोक्तं सर्वकामव्रतम् ।

— 000 —

सनत्कुमार उवाच ।

मासि भाद्रपदे शुक्लपक्षे यदि हरेर्दिनम् ।
 बुध श्रवणयोगश्च प्राप्यते तत्र पूजितः ॥
 प्रयच्छति सुतान् कामान् वामनो मनसि स्थितान् ।
 विजया नाम सा प्रीक्षा तिथिः प्रीतिकरो हरेः ॥
 सङ्गमः सर्वतीर्थानां सङ्गमे तत्र जायते ।
 शुक्ला भाद्रपदे सर्गं कृष्णा कलुषसंचयम् ॥
 फाल्गुने कुरुते मोक्षं अपि ब्रह्मवधारणम् ।
 गङ्गायमुनयोः पुण्ये नर्मदासरित्सङ्गमे ॥
 सरस्त्यरुणयोश्चैव सङ्गमे पापनाशने ।
 ब्रह्मवल्मीकाभ्रामे सप्तधारेऽथवा द्विज ॥
 अन्येषु सङ्गमेष्वेव स्वयमायाति वामनः ।
 तत्र संपूज्यतीर्थास्ते जायते प्रेतमोचदः ।
 दध्नीदनसमायुक्तां वारिधानीं प्रदापयेत् ॥
 पूजय त्वं जगन्नाथं वामनः प्रीयतामिति ।
 महापुण्यप्रदा ह्येषा सङ्गमे विजया तिथिः ॥
 सर्वपापक्षयी नूनं जायते च उषोषणात् ।
 गृहीत्वा नियमं प्रातर्गत्वा नद्यादिसङ्गमे ॥
 सौवर्णं वामनं कृत्वा सौवर्णमाषकेण वा ।
 यथा शक्त्या तु विन्यस्य कुम्भीपरि जगत्पतिम् ॥
 पूर्णपात्रे स्नापयित्वा मन्त्रैरेतैः प्रपूजयेत् ।
 श्रीं वामनाय नमः पादौ कटिं दामोदराय च ।
 ऊरु श्रीपतये गुह्यं कामदेवाय पूजयेत् ॥

पूजयेत् जगतां पत्युरुदरं विश्वधारिणे ।
 हृदये योगिनाथाय कण्ठं श्रीपतये नमः ॥
 मुखञ्च पङ्कजस्थाय शिरः सर्वात्मने नमः ।
 इतरथं संपूज्य वासोभिराच्छाद्य च जगद्गुरुम् ॥
 दद्यात्सुश्रद्धया वार्धं नारिकेलादिभिः फलैः ।
 श्रीं नमोनमस्ते गोविन्द बुधश्रवणसंज्ञया ॥
 अघौघसंचयं कृत्वा प्रेतमोक्षप्रदी भव ॥

इत्यर्घ्यमन्त्रः ।

कृत्वापानद्युगं दानं दद्यादन्नं कमण्डलुम् ।
 विशेषेण द्विजाग्राय वामनः प्रीयतामिति ॥
 धेनुदानं प्रशंसन्ति सङ्गमे जगतां पतिम् ।
 उद्दिश्य कमलाकान्तं पुण्ड्रनद्यास्तु सङ्गमे ॥
 चीष्णाहुरतिदानानि गावः पृथ्वी सरस्वती ।
 आसप्तमं पुनात्येव दोह्वानिह वेदनैः ॥
 यथाशक्त्वा च दानानि द्विजाश्रेष्ठ्यः प्रदापयेत् ।
 कुर्याज्जागरणं कुर्याद्गीतं शास्त्रसमन्वितम् ॥
 अहया परया युक्तोनिशामनिमिषेक्षणः ।
 प्रभाते भोजयेद्विप्रान् द्वादश्यां पारणं ततः ॥
 कुर्यात्त्रयं अहया च सर्व्वं सफलतां व्रजेत् ।
 एवं कृते तु विजयाव्रतेऽग्निन् वै जयादिने ॥
 न दुर्लभतरं किञ्चिदिह लोके परम च ।
 दुर्लभा विजया नृणां दुर्लभस्तत्र सङ्गमः ॥

(१४५)

सुदुर्लभतरा अद्या तत्र गोविन्दपूजने ।
 सर्वं तीर्थेन भूयिष्ठे सङ्गमे याति सङ्गमम् ॥
 विजयावासरे सर्वं देवानां सङ्गमे भुवि ।
 अपि रथ्यीदकस्यात्र सङ्गमः पापनाशनः ॥
 आपगासङ्गमस्यात्र फलं वक्तुं न पार्यते ।
 इदं सर्वं पुराणेषु रहस्यं परिगीयते ॥
 सङ्गमे वामनं पूज्य प्रेतोयेन न जायते ।
 फलमस्य व्रतस्योक्तं देवपितृवरीत्तमः ॥
 वंशोद्धारकरं सुक्तिं याति पैवक्षणादपि ।
 नं पावनं न तत् किञ्चिदतः परमिहोच्यते ॥
 विजयाव्रततुल्यं यदपरं परिपद्यते ।
 वामासि वामनं वारिधानीं धेनुचतुष्टयं ॥
 दक्ष्याच्च सङ्गमे तात याति विष्णोः सलीकतां ।
 अक्षयो जायते मोहादेवानामतिथिक्लिया ॥
 कुर्वन्नेव मनुष्याणां पितृणां विजयाव्रतात् ।
 अश्रद्धया कृतं दत्तं तपस्तप्तं कृतञ्च यत् ॥
 विफलं जायते तावत् न च तत् प्रेत्य नो इह ।
 अद्या धर्मक्षुता देवी अद्या साधनसुत्तमं ॥
 अहामयोऽयं मनुजोयच्छ्रद्धाद्ः स एव सः ।
 यो योगेन गतिं याति याञ्च सांख्येन योगतः* ॥
 इष्टापूर्त्तंन यां याति तां कलौ वापनार्थनात् ।
 सुच्यते तस्य पूर्वेषु पित्रमातामहाः कुले ॥

प्रेतभावाः न जायन्ते तद्दंष्ट्रे प्रेतयोन्मयः ॥
 इदं रक्ष्यं परमं पवित्रं पुराणसंघेषु कुनिप्रचीतं ।
 विशेषकार्यं विजयाभिधानं वदन्ति सन्तः परमात्मनिष्ठाः ॥
 इति ब्रह्मवैवर्तीनां विजयाद्वादशोऽब्रतम् ।

—०००@०००—

देव्युवाच ।

कथमेतद्ब्रतं कार्यं वैष्णवं विष्णुवत्तमम् ।
 रात्रौ जागरणं कार्यं विधिना केन तद्दद ॥
 ईश्वर उवाच ।
 फाल्गुनस्य सिते पक्षे एकादश्यामुपोषितः ।
 स्नात्वा नद्यां तद्भाग्ये वा वाप्यां कूपे गृहेऽपि वा ॥
 गत्वा गिरी वने वापि यत्र सा प्राप्यते शिवा ।
 क्षीरोदे मथ्यमाने तु यदा वृषः समुत्थितः ॥
 ग्रामईन्द्रे वदैत्यानां तेन सामलक्ष्मीं स्मृता ।
 अस्मिन् वृक्षे स्थिता लक्ष्मीः सदा पितृगृहे नृप ॥
 शिवालक्ष्मीस्थिता वृक्षः सेव्यते सुरसत्तमैः ।
 देवैर्ब्रह्मादिभिः सर्वैर्द्विषोऽसौ वैष्णवः क्षतः ॥
 तत्र गत्वा हरिः पूज्यो वृक्षमूलोऽथवा शिवा ।
 पूज्या पुण्यैः शुभैरात्रौ कार्यं जागरणं नरैः ॥
 अष्टाधिकशतैः कार्य्यां फलैस्तस्याः प्रदक्षिणा ।
 प्रदक्षिणीकृत्य ततो भोक्तव्यं तु फलं नरैः ॥

• प्रेतयोऽपि विष्णुकाकारे पाठः ।

करकञ्जलपूर्वन्तु कर्त्तव्यं पापसंयुतं ।
 इविद्यान्तु कर्त्तव्यं हीपः कार्त्वी विधानतः ॥
 एवं जागरणं कार्यं यथा श्रवणतत्परेः ।
 मृष्यन्ते देहिनः पापैः कलिकैः कायसम्भवैः ॥
 देहान्ते ये नराः पूर्वं पूज्यन्ते हरिमन्दिरं ॥
 इति स्कन्दपुराणीयप्रभासखण्डोक्तं आमलकै
 कादमीव्रतम् ।

— ००० —

अथ गोदोहमन्त्रैस्तु विधिना केन वै मुने ।
 हरिं सम्पूजिता मीत्रं नराणां स प्रसीदति ॥
 वीरोद्रे मथ्यमाने च मुने पूर्वं सुरासुरैः ।
 षष्ठ गावः समुत्पन्नाः सर्व्वं लोकस्य मातरः ॥
 सर्व्वं लोकीपकारार्थं देवानां तर्पणाय च ।
 यज्ञानां दोहसम्पत्तौ तथा हरिहरस्य च ॥
 गोमयं रोचना चीरं मूत्रं दधिं घृतं गवां ।
 मङ्गलानि पवित्राणि तथा सिद्धिकराणि च ॥
 उच्छ्रितौ* विश्वद्वेषश्च गोमयाद्भुनि सत्तम ।
 तथासौ समते शस्त्रीं श्रीद्वेषस्तेन बोध्यते ॥
 गोरोचनायां भाङ्गव्याः सञ्जाताः सर्व्वं कामिकाः ।
 गुग्गुलस्तु ततो जातो गोमूत्राद्भुभर्ग्वनः ॥
 यत् किञ्चिज्जगतो वीर्यं तद्व्यञ्जं चीरसम्भवम् ।
 दंष्ट्रीं जातानि सर्वाणि मङ्गलार्थस्य सिद्धये ॥

* उतचित इति पुस्तकान्तरेपाठः ।

छंतादद्यतसम्भूति सुरासुरगिषो भुवम् ।
 हरिं सुखापयेत्तस्मात् पयोदधिदृष्टैस्तथा ॥
 गुग्गुलुं निहं हृत्पद्मेर्मन्त्रैः पौराण्यसम्भैः ।
 नैवेद्यैर्विधिधाकारैर्दीपैश्चैः सुग्रीभनैः ॥
 एवं पूज्य विधानेन ब्राह्मणांस्तर्पयेत्ततः ।
 मुनिपुण्याणि पूजार्घं यावत्सु तिष्ठिषुत्विह ॥
 तावद्गुणसहस्राणि स्वर्गलोके महीयते ।
 ततो विष्णुपदं याति यस्मात्तावत्तते पुनः ॥
 ये तस्य पितरः सन्ति पतिता नरकार्षणे ।
 तेऽपि स्वर्गं समासाद्य मोदन्ते विगतज्वराः ॥
 एवमभ्यर्च्य देवेशं ब्राह्मणेभ्यो यथापगां ।
 धेनुं सव्वं गुणोपेतां क्रमेण मुनिपुङ्गव ॥
 अनेन विधिना पञ्च शरदान्तदिनानि तु ।
 कर्त्तव्यमेकभक्ते न दिनान्ते लघुभुञ्जतः ॥
 जलान्यमंभुधेनुश्च तिलहृदमवतीं तथा ।
 दत्त्वा पुण्यमवाप्नोति न तत् सव्वं महामखैः ॥
 सव्वं यत् कुरुते सम्यक् महाहृदिप्रतं परं ।
 नावस्तिम्यति पापेन पद्मपत्रमिवाभसा ॥
 यत्र संकीर्त्तय कर्त्तारिणो मर्त्याः सन्ति महाधिषः ।
 प्रायश्चित्तानि निहंष्टं तेषां सुगतिकामिनां ॥
 ब्रह्महत्यादि पापानि अगम्यागमनानि च ।
 कृत्वा स्तेयं सुरापञ्च प्रसादं मुच्यते मुने ॥
 विक्रयं तिलधेनूनां कृत्वा व्रतमिदं शुचिः ।

सुच्यते पातकात् सद्यः कौत्सनात् क्षरणाश्रुने ॥
 एवं वा द्वादशाभ्यासानुषोष्यैकादशीं बुधः ।
 यद्यः करोति शुद्धात्मा कृतकृत्यः सुखी भवेत् ॥
 सुनामद्वादशीं पूज्या नाम्नाद्वादशभिस्तथा ।
 द्वादशा धेनवो देया हरिः कामान् प्रयच्छति ॥
 दिवि देवाः सदेवेन्द्राः कृत्वा कर्णास्थानेकयः ।
 पञ्चादाराभयन्तीह हरिं शुद्धव्रतेन हि ॥
 इति वज्रिपुराणोक्तं शुद्धिव्रतम् ।

—000—

एकादश्यां निराहारो द्वादश्यां पुरुषोत्तमं ।
 अर्चयेद्वाङ्गायसुखे स गच्छेत्परमं पदं ॥
 एषा तिथिर्व्यंश्वी स्वाद्द्वादशीशुक्लपक्षका ।
 तस्यामाराधयेद्देवं प्रयत्नेन जनार्दनम् ॥
 इति कूर्मपुराणोक्तं द्वादशीव्रतम् ।

—000@000—

एकादश्यां निराहारः समभ्यर्च्य जनार्दनम् ॥
 द्वादश्यां शुक्लपक्षेण महापापैः प्रमुच्यते ।
 इति कूर्मपुराणोक्तं द्वादशीव्रतम् ।

—000—

मार्गशीर्षे शिते पक्षे द्वादश्यां समजायत ।
 मन्थी विश्वः समाहात्म्यः तस्मिंश्चैवं सदा तिथिः ॥
 एकादश्यानुषोषादौ पठन् मन्त्रात्रतारकम् ।

शृणुन् सौवर्णं मन्त्रं च कारयित्वा वदेदिदम् ॥
विष्णुधर्मैः ।

प्रीयतां मन्त्र इत्युक्त्वा तं दद्याद्ब्राह्मणाय तु ।
यो दद्यात् स सुखी भूत्वा विष्णुलोके व्रजेद्भुजं ॥
पौषे मासि सिते पक्षे द्वादश्यां समजायत ।
कूर्मरूपी स भगवान् तस्येष्टेयं सदा तिथिः ॥
एकादश्यामुपोष्यादौ पठन् कूर्मश्च तारकं ।
शृणुन् सौवर्णं कूर्मश्च कारयित्वावदेदिदम् ॥
विष्णुर्मैः प्रीयतां कूर्म इत्युक्त्वा ब्राह्मणाय तु ।
यो दद्यात् सुखी भूत्वा विष्णुलोके महीयते ॥
यो मर्त्यो माघशुक्लपक्षे द्वादश्यां तु विशेषतः ।
उपोष्य भक्त्या चाभ्यर्च्य वराहं रुक्मनिर्मितम् ॥
दद्यात्पठेच्चरितं वाराहं हरिसुत्तमं ।
वराहजन्मदिवसे विप्राय श्रद्धयान्वितः ॥
सुतमेतं समासाद्य मोदते कालमक्षयं ।
वराहं विष्णु प्रीतिश्च कूर्मदेवं यथातथम् ॥
नारसिंहं फाल्गुने तु एकादश्यांसिते शुचिः ।
उपोष्याभ्यर्चयेद्भक्त्या नारसिंहभवे दिने ॥
सौवर्णं नारसिंहं च कृत्वा शक्त्या द्विजाय तु ।
दद्यात्कृसिंहचरितमिदं शृणुन् पठंश्च वा ॥
शत्रून् विजित्येह लक्ष्मीं प्राप्य नित्यं नरोत्तमः ।
पातालस्वर्णमाप्नोति नागदैत्याङ्गनायुतम् ॥
चैत्रे मासि सिते पक्षे एकादश्यामुपोषितः ।

वामनस्य दिनेऽभ्यर्च्यं वामनं पुण्डरीकम् ।
 सौवर्णं वामनं दद्यात् पठेन्नृत्त्या च यो नरः ॥
 स चिरं वामनस्येदं श्रुणुयाद्वाप्युपोषितः ।
 स धनैरन्वितो भुक्त्वा भोगानिह च मानुषान् ॥
 ब्रह्मलोकमवाप्नोति विद्वान्नामानुतत्परः ।
 वैशाखशुक्लैकादश्यामुपोष्याभ्यर्चयेद्धृत्तिः ॥
 जामदग्न्यं तथा रामं दद्याद्विप्राय इक्ष्वजम् ।
 इदं च रामचरितं श्रुणुयाद्वा पठेन्नरः ॥
 रामस्य जन्मदिवसे तथा द्वापरयेर्हिजः ।
 सौतारामन्तु सौवर्णं यो विप्राय प्रयच्छति ॥
 द्वादश्यां रामचरितमिदं श्रुत्वन् पठेन्नराः ।
 स इन्द्रलोकं लभते रामस्यैव प्रसादतः ॥
 इह कीर्त्तिमवाप्नोति धनं पुत्रांश्च जीवितं ।
 आषाढमासि शुक्लां य उपोष्यैकादशीं हिजः ॥
 द्वादश्यामर्चयेद्द्रामं रौहिणेयं महाबलं ।
 रौहिणेयस्य रामस्य तिथौ जन्मनि सत्तमे ॥
 सौवर्णं ब्राह्मणायापि रामं दद्यात्प्रपाचकम् ।
 स नागलोकमाप्नोति यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥
 इहस्त्रीभोगमाप्नोति वसुधाञ्चिरजो भवेत् ।
 आषाढे मासि शुक्लां य उपोष्यैकादशीं हिजः ॥
 द्वादश्यामर्चयेत् कृष्णं रुक्मिणीसहितं शुचिः ।
 इक्ष्वाकुरितकृतिं कृत्वा दद्याच्च ब्राह्मणाय च ॥
 पठेच्च कृष्णचरितं कृष्णजन्मदिने, शुचिः ।

श्रावणे श्रावणाहापि य इदं पुष्योत्तमः ॥
 स सुखतेऽस्मात् संसारात् मुक्ता भोगमनुत्तमं ।
 यस्तु भाद्रपदे मासि एकादश्यामुपोषितः ॥
 श्रद्धायामर्षयेत् कालं विष्णुं सौवर्षमश्रुतं ।
 द्वादश्यां जम्बूद्विपसे कल्किविष्णोः सुरेश्वरः ॥
 दद्याद्द्विप्राय तं वापि भक्त्यानुष्ठानतो मुदा ।
 पठेद्दिदं कल्किविष्णोश्चरितं श्रावणात्ततः ॥
 जनलोकमवाप्नोति कृते जम्बू लभेद्भगे ।
 तस्मिंस्तु तस्मिन्द्विपसे दत्तं विष्णुवतारकं ॥
 अर्चयन्तु सुराः सर्वे भवेयुः सर्वदर्शिताः ॥

इति विष्णुपुराणोक्तं दश्रावतारव्रतं ।

—000—

एकादश्यां तु नन्दाशौ यच्च नं विनिवेदयेत् ॥

विप्रायेति शेषः ।

कृत्वा मर्त्ये च सौवर्षं स विष्णोः पद्माश्रुयात् ।
 एतत् कृष्णव्रतं नाम* कल्पान्तैः सुखसाभक्तम् ॥

इति पद्मपुराणोक्तं कृष्णव्रतं ।

—000—

अगस्त्य उवाच ।

एकादश्यान्तु यत्नेन नक्तं कुर्याद्यथाविधि ।
 मार्गशीर्षेण कृष्णायामारभ्यादौ विचक्षणः ॥

* अन्तर्गते पद्मपुराणोक्तेति पुस्तकाख्यरे पाठः ।

तद्गतं धनदस्येहं कृतं विस्रं प्रयच्छति ॥

इति वाराहपुराणोक्तं धनदव्रतं ।

इति श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहादेवस्य समस्तकरणाधीश्वर
सकल विद्याविशारद श्रीहेमाद्रि विरचिते चतुर्वर्ग
चिन्तामणौ व्रतखण्डे एकादशीव्रतानि ।

अथ षोडशोऽध्यायः ।

— ०००@००० —

अथ द्वादशीव्रतानि ।

भक्ता विष्णोः स्मरिहेमाद्रिषेह
प्रस्तूयन्ते द्वादशीव्रतानि ।
ज्ञात्वा यानि प्राणिनोऽह्वयन्ति
तं दुर्वारासारसंसारपारं ॥
विष्णुधर्मोत्तरात् ।

राम उवाच ।

उपवासासमर्थानां किं स्यादेकमुपोषितं ।
महाफलं महादेव तन्ममाचक्ष्व पृच्छतः ॥

ज्ञान उवाच ।*

या रामश्रवणोपेता द्वादशी महती तु सा ॥
तस्यामुपोषितः स्नातः पूजयित्वा जनार्दनं ॥

* ब्रह्मर उवाचेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† भाद्रपदेतर्षेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

प्राप्तीत्यत्रात् धर्मज्ञ हादशहादशीफलं ।
 दध्योदनयुतं तस्यां जलपूर्णं घटं द्विजे ॥
 वस्त्रसंवेष्टितं दत्त्वा ह्युपोपानहमेव च ।
 न दुर्गतिमवाप्नोति जाति* मघ्नाश्च विन्दति ॥
 अक्षय्यं स्थानमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।
 श्रवणहादशीयोगे बुधवारो भवेद्यदि ॥
 अत्यन्तं महती नाम हादशी सा प्रकीर्तिता ।
 स्नानं जप्यं तथा दानं ह्रीमं श्राद्धं सुरार्चनं ॥
 सर्वमक्षयमाप्नोति तस्यां भृगुकुलीदृष्ट ।
 तस्मिन् दिने तथा स्नातो यत्र क्षयन सङ्गमे ॥
 स्वर्गज्ञानानजं राम फलं प्राप्नोत्यसंशयं ।
 श्रावणे सङ्गमाः सर्व्वं परपुष्टि† प्रदाः सदा ॥
 विशेषात् हादशीयुक्ते बुधयुक्ता विशेषतः ।
 तथैव हादशी प्रोक्ता बुधश्रवणसंयुता ॥
 तृतीया च तथा प्रोक्ता सर्व्वकामफलप्रदा ।
 तथा तृतीया धर्मज्ञ तथा पञ्चदशी शुभा ॥

ब्रह्मवैवर्त्तपुराणे ।

नमस्ये फाल्गुने मासि यदि वा हादशी भवेत् ।
 शुद्धश्रवणसंयुक्तासङ्गमी विजया स्मृता ॥
 वारिधानीप्रदानो स्वाहृष्योदनसमायुता ।

* नतिमिति पुलकान्तरे पाठः ।

† पञ्चपुष्पीति पाठान्तरं ।

प्रेतयोनौ न जायेत पूजयित्वा च वामनं ॥

वंशः मसुद्धृतस्येन सुक्तं पिष्टच्छब्दादसौ ।

भविष्योत्तरात् ।

युधिष्ठिर उवाच ।

उपवासासमर्धानां सदैव पुत्रवोत्तम ।

एकया द्वादशीं पुण्यां ता उपोष्य ममानघ ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

मासि भाद्रपदे शक्त्वा द्वादशीं श्रवणान्विता ।

सर्वकामप्रदा पुण्या उपवासे महाफला ॥

सङ्गमे सरितां ज्ञात्वा द्वादशीं समुपोषितः ।

समयं समवाप्नोति द्वादशद्वादशीफलं ॥

अथ द्वादशद्वादश्याभिवोपवासविधानं, वचनसामर्थ्यात् ।

तथाचोक्तं विष्णुरहस्ये ।

द्वादश्यामुपवासी च यो द्दश्यान्तु पारणं ।

निषिद्धमपि कर्त्तव्यमित्याज्ञा परमेश्वरी ॥

बुधश्रवणसंयुक्ता सैव चेत् द्वादशी भवेत् ।

अतीव महती तस्यां सर्वं कृतमिहाचर्यं ॥

द्वादशी श्रवणोपेता यदा भवति भारत ।

सङ्गमे सरितां ज्ञात्वा गङ्गादिज्ञानजं फलं ॥

सोपवासमवाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ।

जलपूर्णं तदा कुम्भं स्थापयित्वा विचक्षणः ॥

पञ्चरत्नसमोपेतं सोपवीतं ह्यङ्गुलितं ।

तस्य स्तम्भे सुषटितं स्थापयित्वा जगार्हणं ।
 यथा शक्त्या स्तम्भमयं शङ्खशङ्खं विभूषितं ॥
 स्थापयित्वा विधानेन सितचन्दनचर्चितं ।
 सितवस्त्रयुगलम् कृत्वा पानथ्युगान्वितं ॥
 श्रीं नमो वासुदेवाय शिरः संपूजयेत्ततः ।
 श्रीधराय मुखं तद्वत् वैकुण्ठाय हृद्ये नमः ॥
 नमः श्रीपतये वक्त्रं भुजौ सर्वास्त्रधारिणे ।
 व्यापकाय नमः कुक्षौ केशवायोदरं नमः ॥
 त्रैलोक्यजनकायेति मेढ्रं संपूजयेद्दरेः ।
 सर्वाधिपतये जङ्घे पादौ सर्वात्मने नमः ॥
 अनेन विधिना राजन् पुष्पैर्धूपैः समर्चयेत् ।
 ततस्तस्याप्रतो देयं नैवेद्यं घृतपाचितं ॥
 मोदकाद्यं नवान् कुम्भान् शक्त्या दद्याच्च दक्षिणां ।
 एवं संपूज्य गोविन्दं जागरं तच्च कारयेत् ॥
 प्रभाते विमले ज्ञात्वा संपूज्य गरुडध्वजं ।
 पुष्पधूपान्दि नैवेद्यैः फलैश्च स्त्री सुयोधनैः ॥
 पुष्पाञ्जलिं ततो दत्त्वा मन्त्रमीतसुदीरयेत् ।
 नमो नमस्ते गोविन्द बुधश्रवणसंज्ञक ॥
 अघोषसंज्ञयं कृत्वा सर्वसौख्यप्रदो भव ।
 अनन्तरं ब्राह्मणेद्दं वेदवेदाङ्गपारणे ॥
 पुराणज्ञे विशेषेण विधिवत्सं प्रदापयेत् ।
 प्रीयतां देवदेवेशीमम् नित्यं जगार्हण ॥

अनेनैव विधानेन नद्यास्तीरे नरोत्तम ।
सर्वं निवर्त्तयेन्न्यस्यगेकभङ्गरतोपि सन् ॥

कण्ठ उवाच ।

अत्राप्युदाहरन्तीममितिहासं पुरातनं ।
महत्परख्येयदृत्तं भूमिपाल शृणुष्व तत् ॥
देशो देशोरको नाम तस्य भागे तु पश्चिमे ।
अतिवाजन्मनुदेशो सर्वसत्वभयङ्करः ॥
सुतसप्तिकाता भूमिर्यत्र कष्टा महोरगाः ।
अल्पशायद्रुमाकीर्णाः सुतप्राणिसमाकुला ॥
शमीखदिरपालाशकरीरैः पीलुभिस्तथा ।
सत्पतत्रभीमद्रुमाः पार्थ कण्ठकौराविला दृढैः ॥
गन्धप्राणिगणाकीर्णा तत्रभूर्दृश्यन्ते क्वचित् ।
अतर्कतापविषमा भूस्तृणा पुरुषोःख्ग ॥
ज्वलितान्निसमश्चैव यत् किञ्चित्तत्र दृश्यते ।
तथापि जीवा जीवन्ति सर्वं कर्मनिबन्धनाः ॥
नोदकं नोत्पलाराजनुबन्त तत्र वलाहकाः ।
कदाचिदपि दृश्यन्ते प्रवमाना विहङ्गमाः ॥
सकान्तरगतिः कैश्चिच्छिशुभिस्तृपितैः समं ।
उत्तन्तजीविता राजन् दृश्यन्ते विहङ्गोत्तमाः ॥
उत्प्लुत्योत्प्लुत्यतरसा सृगः सैकसताङ्गतः ।
शक्यते चैव नश्यन्ति जलैः सैकतसेतुवत् ॥
तस्मिन्तथाविधे देशे कश्चिद्वैवश्यादणिक् ।
निजसार्धपरिभ्रष्टः प्रविष्टो महजङ्गले ॥

उक्तवाक्कलिनात्तथाचिर्मासान् भीमदर्शनात् ।
 बभ्रामोदुभ्रान्तद्वयः क्षुत्तृषाञ्चमकर्षिताः ।
 द्यु ग्रामद्यु जलाकाहं यास्यामि न बुधोपमः ।
 कथमेति ददर्शासौ दृष्ट्वाव्याकुलितेन्द्रियाः ॥
 स्त्रायुवद्व्यास्त्रिचरणा धावमानानितस्तत ।
 प्रेतस्त्वसमाकुरुमेकं विचित्रदर्शनं ॥
 ददर्शं बहुभिः प्रेतैः समन्तात्परिवारिनं ।
 भ्रागच्छमानमव्ययं स्तुतिशब्दपुरःसरं ॥
 प्रेतस्त्वन्मन्त्रही गत्वा तस्यान्तिकसुपागमत् ।
 सोभिवाद्य वणिक्श्रेष्ठमिदं वचनमब्रवीत् ॥
 अस्मिन् घोरतरं देशे भवतः कथमागमः ।
 तसुवाच वणिग्धीमान् सार्धभ्रष्टस्यमे वने ॥
 प्रवेशो दैवयोगेन पूर्वकर्मज्जतेन तु ।
 दृष्ट्वा मे वाधते सार्धं सुहृमोयं धृषं तथा ॥
 प्राणाः कण्ठमनुप्राप्ता वचनं नृपतीव मे ।
 असौपायं न पश्यामि जीवेयं नृप केनचित् ॥

कृष्ण उवाच ।

इत्येवमुक्ते प्रेतस्तं वणिजं वाक्यमब्रवीत् ।
 पुत्राममिदमुत्सृज्य प्रतीक्ष्य समुद्गर्भकं ।
 कृतप्रतिष्ठी मया राजन् अनिच्छसि यथासुखं ॥
 एवमुक्तस्तथा चक्रे स वणिक् दृष्ट्वायार्दितः ।
 मध्याह्नसमये प्राप्ते ततस्तद्दे शमागतः ॥
 सत्त्वासहस्राणांस्तोद्भिः वारिधाणी मनोरमा ।

दध्नीदनस्य युक्तेन वर्षमानेन संबुतान् ॥
 अवतीर्थं ततस्त्वया प्रददातीष्टये तदा ।
 तेषां गामक्षदानेन वपिक् ढमिसुपागतः ॥
 विद्वेषो विज्वरथै व क्षणेन समपद्यत ।
 ततस्तु मेतसं यश्च तस्मान्नागं समाहृदौ ॥
 दध्नीदनाक्षपानीयात्प्रेतास्तृप्तिं पराङ्गताः ।
 अतिथिं तर्पयित्वा च प्रेतसोकं च सर्वशः ॥
 ततः स्वयञ्च बुभुजे मुक्तशेषं यथासुखं ।
 तस्य भुक्तवतश्चैत्रं पानीयं चाचयं ययौ ॥
 प्रेताधिपतयस्तस्य वशिष्वाचनमब्रवीत् ।
 आश्चर्यं मेतत्परमं वनेस्त्रिंशतिभाति मे ॥
 अन्नपानस्य संप्राप्तिः परमस्य ह्युतस्तव ।
 स्तोत्रेण च तस्मान्नेन विभर्षि सुवहन् पृथक् ॥
 ढममस्ते कथं तत्त्वे निर्मासाभिन्नकुक्षयः ।
 अपरञ्च कथं ज्ञेह ममवापपरिच्छये ॥
 हस्तावलं वकं कस्त्वं सन्तप्तो निर्जले वने ।
 दृष्ट्वाशंसि कथं प्रासमाने गेभु भवानपि ॥
 कस्त्वमस्यां सुचीरायां सुव्रथां तुहतीक्षलः ।
 तदेतच्छंशयं छिन्धि परं क्रीतूहलं मम ॥
 एवमुक्तः स वशिजा प्रेती वचनमब्रवीत् ।
 शृणु भद्र प्रवक्ष्यामि दुष्कृतं कर्मचाम्ननः ॥
 शालके नगरे रम्ये अहमासं सुदुर्मतिः ।
 वपिक् सक्तः पुरा कालो तीतोर्व्यं दुर्धर्मयानघ ॥

साकले नगरे रम्ये नास्तिकस्य दुरात्मनः ।
 धनसौभाग्या तत्र न कदा वित्तभेदिता ॥
 न दत्ता भिक्षवे भिक्षा दृष्टाया जलदेन च ।
 प्रतिवेशस्तु तत्रासौद्वाङ्मयी गुणवान् मम ॥
 श्रवणद्वादशयोगे मासि भाद्रपदे तथा ।
 सह कश्चिन्नया सार्द्धं तोषीं नाम नदीं ययी ॥
 तस्याश्च सङ्गमं पुण्यं यत्रासौचन्द्रगङ्गया ।
 चन्द्रभागा सोमसुता तत्रासौचार्कानन्दिनी ॥
 तपःशीतोष्णसलिले सङ्गमे सुमनोहरे ।
 श्रवण द्वादशयोगे स्नानं चैव तद्योधितः ॥
 चन्द्रभागस्य तीर्थस्य वारिधान्पीतवान् दृढं ।
 दध्योदनयुतैः सार्द्धं संपूर्णैर्बर्हिमानकैः ॥
 कृत्रोपानद्युगं वस्त्रं प्रतिमां विधिवद्भरेः ।
 प्रददौ विप्रसुख्याय रहस्यज्ञो महामुनिः ॥
 वित्तसंरक्षणार्थाय तस्यापि च ततो मया ।
 सोपवासेन दत्ता वा परिधातिसुशोभना ॥
 चन्द्रभागस्य प्रददौ विप्र पुण्ययुता तदा ।
 एतत् कृत्वा गृहं प्राप्तः ततः कालेन केनचित् ॥
 पञ्चत्वमहमासाद्य नास्तिक्यात् प्रेततां गतः ।
 अस्वामटव्यां घोरायां तथा दृष्टास्त्वयानघ ॥
 ब्रह्मस्वहारिणस्त्वे ते पापाः प्रेतत्वमागताः ।
 परदाररताः केचित् स्नामिद्रोहरताः परे ॥
 मित्रद्वीहरताः केचिद्भिक्षांस्तु सुदास्ये ।

ममैते विपदो याता अन्नपानकृतेऽनघ ॥
 अक्षयो भगवान् विष्णुः परमात्मा सनातनः ।
 यद्दीयते तमुद्दिश्य अक्षयं तत् प्रकीर्तितं ॥
 मया विहीनाः किं तस्त्वं वनेऽस्मिन् ऋशदारुणे ।
 पीडामनुभविष्यन्ति दारुणां कर्षयोनिजां ॥
 एतेषां त्वं महाभाग ममानुग्रहकाम्यया ।
 अनेकनामगोत्राणि गृह्णीयास्वस्त्रिलेन च ॥
 अस्ति चोच्चागता चैव तव संपुटिका शुभा ।
 हिमवत्यां तथासाद्य यत्र त्वन्विष्यते निधिं ॥
 गयाशीर्षं ततो गत्वा आह्वं कुरु महामते ।
 एकमेकमथोद्दिश्य प्रेतं प्रेतं यथासुखं ॥
 एवं संभाष्यमाणोऽसौ तप्तजांबूनदप्रभः ।
 विमानवरमारुह्य स्वर्गलोकमिती गतः ॥
 स्वर्गं च प्रेतनाथेन प्रभावात्स वणिक् क्रमात् ।
 नामगोत्राणि संगृह्य प्रयातः स हिमाचलं ॥
 तत्र प्राप्य निधिं गत्वा विनिश्चिप्य स्वके गृहे ।
 धनभागसुपादाय गयाशीर्षं बटं ययौ ॥
 प्रेतानां क्रमशस्तत्र चक्रे आह्वं दिने दिने ।
 यस्य यस्य यथाआह्वं स करोति दिने वणिक् ॥
 स स तस्य सदा स्वप्ने दर्शयत्यात्मनस्तनुं ।
 प्रवीति च महाभाग प्रसादेन तवानघ ॥
 प्रेतभावं मया त्यक्तं प्राप्तोऽस्मि परमां गतिं ।
 सत्कृत्वा धनलाभस्य प्रेतानां सत्कृतिं वणिक् ॥

जगाम खगृहं तत्र मासि भाद्रपदे तथा ।
 श्रवणद्वादशीयोगे पूजयित्वा जनार्दनं ।
 दानञ्च दत्त्वा विप्रेभ्यः सोपवासो जितेन्द्रियः ॥
 महानदीसङ्गमेषु प्रतिवर्षं युधिष्ठिर ।
 चकार विधिवद्दानं ततो दृष्टान्तमागतः ॥
 श्रवाप परमं स्थानं दुर्लभं सर्वमानवैः ।
 तत्र कामफला वृक्षा नद्यः पायसकर्दमाः ॥
 शीतलामलपानीयाः पुष्करिस्थो मनोरमाः ।

तं देवमासाद्य वणिक् महात्मा
 सुमृष्टजाम्बूनदभूषिताङ्गः ।
 कल्पं समर्थं सह सुन्दरीभिः
 सार्धं सुहृद्भिर्मुदितः सदैव * ॥

बुधश्रवणसंयुक्ता द्वादशी सङ्गमोदके ।
 दानं दध्योदनं शस्तमुपवासपरोविधिः ॥
 सगरेण ककुत्स्थेन धुम्भुमारेण गाधिना ।
 एतैश्चान्येय राजेन्द्र कामदा द्वादशी कृता ॥

या द्वादशी बुधयुता श्रवणेन सार्धं
 सा वै जयेति कथिता मुनिभिर्नभस्ये ।
 तामादरेण समुपोष्य नरो हि सम्यक् ।
 प्राप्नोति सिद्धिमणिमाद्दिगुणोपपन्नां ॥

इति भविष्योत्तरोक्तं श्रवणद्वादशीव्रतम् ।

* कर्मं चरित्वा मुदितः सदैवेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ब्रह्मोवाच ।

त्रैलोक्यगामिनी देवी लक्ष्मीस्तेऽस्तु सदा प्रिया ।

हादशौ च तिथिस्तेऽस्तु कामरूपी च जायते ॥

हरिं प्रतीदं वचनं ।

धृताशनो भवेद्यस्तु हादश्यां तत्परायणः ।

स स्वर्गवासी भवतु पुमान् स्त्री वा विशेषतः ।

इति वाराहपुराणोक्तं हरिव्रतम् ।

—000—

मार्कण्डेय उवाच ।

भुवने भारतश्चैव सुजात्यः सुजनस्तथा ।

क्रतुः सर्वेषु मूर्धाष तेजः सत्यस्त्रवाः सदा ॥

प्रसवद्याव्ययश्चैव दक्षोद्वाद्दशकस्तथा ।

भगोवा नाम निर्दिष्टा देवा हादश यज्ञियाः* ॥

तेषां सम्पूजनं कुर्याद्वाद्दश्यां नियमेन तु ।

गन्धमाख्यनमस्कारधूपदीपाद्यसंपदाः ।

संवत्सरान्ते दद्याच्च ब्राह्मणाय पयस्विनीं ॥

कृत्वा व्रतं वत्सरमेतदिष्टं

प्राप्नोति तेषां तु सत्सोकमेष ।

तन्नीच्य कालं सुचिरं मनुष्यो

राजा भवेद्वा द्विजपुङ्गवो वा ॥

इति विष्णुधर्मीकं भृगुव्रतम् ।

—000@000—

* जस्यैव इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

मार्कण्डेय उवाच ।

मनोमनस्तथाप्राप्तो नरोजातश्च वीर्यवान् ।
 वीतिर्हृद्योनश्चैव हंसो नारायणस्तथा ॥
 विभुश्चापि प्रभुश्चैव स्वाध्या द्वादश कीर्त्तिताः ।
 पूजयेच्छुक्लपद्मे तान् द्वादशां मार्गशीर्षतः ॥
 कृत्वा व्रतं वत्सरमितदिष्टं
 प्राप्नोति तेषां तु स सलोकमेव ।
 तत्रोच्य कालं सुचिरं मनुष्यो
 राजा भवेद्वा द्विजपुङ्गवो वा ।
 इति विष्णुधर्माक्षरं साध्यव्रतम् ।

— ००० —

मार्कण्डेय उवाच ।

धाता मित्रोऽयं मा पूषा शक्रोऽश्विनश्चोभगः ।
 त्वष्टा विवस्वान् सविता विष्णुर्द्वाशकस्तथा ॥
 पूजयेद्द्वादशादित्यान् शुक्लपद्मे उपोषितः ।
 मार्गशीर्षाद्द्वारभ्य द्वादशां नियतव्रतः ॥
 दत्त्वा व्रतान्ते पुरुषः सुवर्णं
 प्राप्नोति लोकान् सवितु र्द्वैवीर ।
 मानुष्यमासाद्य भवत्सुरोगो
 जितेन्द्रियश्चैव धनान्वितश्च ॥
 इति विष्णुधर्माक्षरं द्वादशादित्यव्रतं ।

— ००० —

पुलस्त्य उवाच ।

पौषे मासि सिते पक्षे द्वादश्यां शक्रदैवते ।
नक्षत्रयोगगे विष्णुं प्रथमं तु समर्चयेत् ॥
ततः प्रभृति विप्रेन्द्र मासि मासि जनार्दनं
उपोषितः पूजयेत् यावत्संवत्सरं गतं ॥

मासेषु मासे विधिनोदितेन
तस्यां तिथौ दानमिति ब्रवीमि ।
प्राश्यं यथावद्विधिवत् क्रमेण
तदुच्यमानं निश्चिंतं निबोध ॥
घृतं यथात्रौहियवं हिरण्यं
यवान्नमन्थ यणकान्नपानं ।
छत्रं पयोन्नं गुह्यफाणितारुणं
सुचन्दनं वस्त्रमनुक्रमेण ॥
एकैकपादोक्तमेकैकदानं
गोमूत्रमश्वोघृतमामशाकं ।
दूर्वादधित्रीहियवं तिलांश्च
सूर्यांशुतप्तं जलमम्बुदारुभं ॥
शीरघ्न मासक्रमयः प्रयुक्तं
दारुभमम्बुजुशीदकं ।

कुसुमप्रधाने धनधान्यपूर्णे
विवेकवत्स्यस्तसमस्तदुःखे ।

प्राप्नोति जन्माविकलेन्द्रियत्र
भवत्यरोगो मतिमान् सुखी च ॥
इति विष्णुधर्म्मिरोक्तं सुजन्मदादशीव्रतं ।

— ००० —

ब्रह्मस्मतिरुवाच ।

कथं स राजा भाग्यस्थः सर्व्वलोकाधिकोविभुः ।
कथञ्च दिव्यतां प्राप्नोति विष्णुसायुष्यतां विभो ॥
सर्व्वदेवेश्वरस्तस्य कथं तुष्ट उमापतिः ।

ब्रह्मोवाच ।

भाग्यर्चंदादशी नाम सर्व्वभाग्यप्रदायिनी ।
तत्र कृत्वा हरेरर्चामिष्टा पद्मैर्यथाविधि ॥
सर्व्वलक्षणसम्पन्नां अष्टावक्रो महासुनिः ।

हरेरर्चा हरिरूपा प्रतिमा ।

शङ्करार्चं हरेः पुंस उभे संस्थापयेदशी ।
शङ्करार्चं हरेरित्यादि शङ्करस्यार्चं हरेषु पुरुषस्यार्चं सत्येवं
हरिहरमूर्त्तिसुभे संस्थापयेदित्यर्थः ।

भक्त्या सर्व्वोपहारेण द्वादशीरेणुमच्छले ।
आद्येन चक्रराजेन पूजितो मधुसूदनः ॥
ततोऽथ तस्य नृपतेस्तेन भाग्यत्वमाप्नुयात् ।
चक्रराजो महासुदर्शनमन्त्रः ।

तुष्टेन देवदेवेन वरो दत्तो द्विजोत्तम ।
अत उर्ध्वं भवान् वन्द्य मम तुष्टो भविष्यति ॥

भाग्यर्चद्वादशी तात अष्टम्यां वा तदर्चनं ।
 यागमण्डलपूजार्घं हरिसुहृद्भिश्च कारयेत् ॥
 आचार्याय प्रदातव्यं हेम गो भू तिलादिकं ।
 दक्षिणां वित्तसारेण पुनाति नरकार्णवात् ॥
 युगभाग्यप्रभावेन प्रयच्छति फलं हरिः ।
 युगभाग्यप्रभावेणेति युगस्य कृतादेर्भाग्यस्य कर्मणः प्रभावेणेत्यर्थः ।
 यथाकाले च क्षेत्रे च एकापि गणिका गता ।
 प्रयाति शतधा वृद्धिं तथाभाग्ययुगे द्विज ॥
 यथा भाग्ये तथा पौष्णे वासवे च द्विजोत्तम ।
 तुल्यरूपं विजानीयात् द्वादश्यामष्टमीषु च ॥
 भाग्यं भगदैवत्यं पूर्वफलंगुनी नक्षत्रं पौष्णं रेवती वासवं
 धनिष्ठा ।

तुष्यते देवदेवेशः शशाङ्कान्तशेखरः ।
 पुत्रायूराज्यसौभाग्यं प्रयच्छति जनार्दनः ॥
 मासि मासि च योमर्त्यः करोति हरिहरार्चनं ।
 पद्मे सुलक्ष्णोपेते सर्व्ववर्षोपशोभिते ॥
 तस्य तुष्यति देवेशसकृपाणिर्जनार्दनः ।
 इति देवीपुराणोक्तं भाग्यर्चद्वादशीव्रतं ।

— ००० —

पुष्यार्कद्वादशी पुष्या सर्व्वपापनिवर्हणी ।
 कृता वा केन सा शक्र छतपात्रप्रदायिना ॥
 तदा प्रत्यक्षतस्तस्य देवदेवी जनार्दनः ।

ददर्श स्वातकुंशुभ्रां पीताश्वैवतुर्भुजां ॥

इति देवीपुराणोक्तं पुष्यार्कदादशोव्रतं ।

—000—

ब्रह्मोवाच ।

हादृशां विष्णुमिद्वेह सर्वदा विजयो भवेत् ।

पूज्यश्च सर्वलोकानां यथागोपतिगोकरः ॥

गोपतिः सूर्यो गीकरो नेत्ररश्मिर्गर्भस्य स गोपतिगोकरो विष्णुः ।

मूलमन्त्राः स्वसंज्ञाभि रङ्गमन्त्राश्च कीर्तिताः ॥

पूर्व्ववत् पद्मपत्रस्थः कर्त्तव्यश्च तिथीश्वरः ।

गन्धपुष्पोपहारैश्च यथाशक्ति विधीयते ॥

पूजा शठेऽन शठेऽन कृतापि तु फलप्रदा ।

आज्यधारासमिद्धिश्च दधिचीरावसाधिकैः ॥

पूर्व्वोक्तफलदो होमः कृतः शास्त्रेण चेतसा ।

एतत्तुव्रतं वैश्यानरप्रतिपद्भूतवह्मराख्यं ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं विष्णुव्रतं ।

—000—

बुधिष्ठिर उवाच ।

अवियोगव्रतं ब्रूहि मम यादवनन्दन ।

विधानं तस्मै कीदृक्च किं पुष्यं काव्य देवता ॥

श्रीकृष्ण उवाच ।

शृणु पाण्डव यत्नेन कथ्यमानं मया खिलं ।

अवियोगव्रतं नाम व्रतानामुत्तमं व्रतं ॥

(१४८)

शुक्लं प्रोष्ठपदे मासि द्वादश्यां ससुपोषितः ।
 ज्ञात्वा जलाशये स्वच्छे शुक्लाम्बरधरः शुचिः ॥
 जलान्ते मण्डलं कृत्वा गोमयेनातिशोभनं ।
 गीधूमचूर्णैस्तन्मध्ये सलक्ष्मीकं जनादनं ॥
 लेपयित्वा हरं गौरीं सावित्रीं ब्रह्मणा सह ।
 राज्ञा सह रविं राजं स्त्रैलोक्योद्योतकारकं ॥
 गन्धपुष्पैस्तथाधूपैर्नवेद्येर्भक्तितोर्चयेत् ।
 अविद्योगव्रतं पार्थ मन्त्रेणानेन तद्व्रतः ॥
 अविद्योगा हृदमना चेतस्याधाय केशवं ।
 शङ्करं पद्मयोनिश्च रविं गगनभूषणं ॥
 ब्रह्मसुन्दारयेत् पार्थ कृत्वा तत्प्रणवं नमः ।
 सहस्रश्रीर्षापुरुषः पद्मनाभो जनार्दनः ॥
 व्यासर्विकपिलाचार्य्यैर्भगवान् पुरुषोत्तमः ।
 नारायणोऽथ मधुहा विष्णुर्दामोदरो हरिः ॥
 महावराहो गोविन्दः केशवो गरुडध्वजः ।
 श्रीधरः पुण्डरीकाक्षी विश्वरूपस्त्रिविक्रमः ॥
 उपेन्द्रो वामनो रामो वैकुण्ठो माधवो भ्रुवः ।
 वासुदेवो हृषीकेशः कृष्णः सहस्रर्षणोऽणुतः ॥
 अनिरुद्धो महायोगी प्रद्युम्नोऽनन्त एव च ।
 नित्यं ममास्तु सुप्रीतः श्रीकण्ठोऽरिनिघ्नूदनः ॥
 उमापतिर्नीलकण्ठः स्यात्तुः शम्भुर्भृगोऽरिहृदा ।
 ईशानो भैरवः शूलो चरम्बकस्त्रिपुरान्तकः ॥
 कपर्दी गोपतिर्ब्रह्मी महाकाशो वृषध्वजः ।

शिवः सर्वो महादेवो रुद्रो भूतगणेश्वरः ॥
ममास्तु सह पार्वत्या शङ्करः शङ्करः सदा ।
ब्रह्मा शम्भु विंशु स्रष्टा पौष्करः प्रपितामहः ॥
हिरण्यगर्भो वेदज्ञः परमेष्ठी प्रजापतिः ।
वेधाद्यतुर्मुखः कर्त्ता स्वयम्भूः कमलासनः ॥
विरिञ्चिः पद्मयोनिश्च ममास्तु वरदः सदा ।
आदित्यो भास्करो भानुः सूर्योऽर्कः सविता रविः ॥
मार्त्तण्डो मण्डलो द्योतो रश्मिमाली ग्रहाग्रणीः ।
प्रभाकरः सप्तसप्त स्तरणि द्युमणिः खगः ॥
दिवाकरो दिनकरः सहस्रांशु मरीचिमान् ।
पद्मप्रवोधनः पूषा जगच्चक्षु द्युभूषणः ॥
द्वादशाब्जा महातेजा मित्रः कालान्तको हरिः ।
निक्षुभावन्नभो देवः सुप्रीतोऽस्तु सदा मम ॥
लक्ष्मीः श्रीः कमला पद्मा विभूति ईरिवन्नभा ।
पार्वती ललिता गौरी उमा शम्भुप्रिया सती ॥
गायत्री प्रकृतिः सृष्टिः सावित्री देवसम्भवा ।
राज्ञी भानुमती संज्ञा निक्षुभा भास्करप्रिया ॥
दीप्ता सूर्या जया भद्रा विभूति र्विमला तथा ।
अमोघा विद्युति शैव इत्येते मूर्त्ति रूपा ततः ॥

इति खरूपोच्चेयः । सूर्यस्तु श्मश्रुल चतुर्विधु रुषकरद्वयद्वृत-
कमलः अधःकरद्वयद्वृतपुष्पमालः कर्त्तव्यः वामपार्श्वे स्वर्णपद्मज-
करा निक्षुभा कर्त्तव्या इति । पद्मनाभ शङ्कर पितामहाकार्दीन्-
सप्रियान् कृत्वा । दत्त्वा दानं गुरवे भुक्त्वा चान्ते व्रजेहे श्म-

यश्चरतिनरः कश्चिद्भ्रतमेतद्भक्तिभावितो लोको भवति च स
धनभागी सन्ततिमान् विगतसन्तापः ॥ हरिहरहरिहरख्यगर्भ-
प्रभाकराणां क्रमेण लोकेषु भुक्त्वा भोगान् विपुञ्जान वियोगी
अथ सुनिवृत्तो भवति* स्त्रीपुंसयोर्यदियुग्मं पुरुषोऽपि यदि
समाचरेत् कश्चित् यदि नारी वा व्रतमेतच्चोर्त्वा यात्यालयं विष्णोः ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तमवियोग द्वादशौव्रतं ।

—०००—

युधिष्ठिर उवाच ।

अचौहिण्यो दशाष्टौ च मद्राज्यार्थं चयंगताः ।
तेन पापेन मे चित्ते जुगुप्सातीव जायते ॥
तत्र ब्राह्मणराजन्यवैश्याः शूद्रादयो हताः ।
भीष्मद्रोणकलिङ्गादिकर्णग्रन्थसुयोधनाः ॥
त्रेषां वधेन यत्पापं तन्मे मर्माणि क्लन्तति ।
पापप्रक्षालनं किञ्चिद्वर्त्मं ब्रूहि जगत्पते १ ॥

कृष्ण उवाच ।

सुमहत्पुण्यजननं गोविन्दहादशौव्रतं † ॥
अस्ति पार्थ महाबाहो पाण्डवानां धुरन्धर ॥

युधिष्ठिर उवाच ।

येषां गोहादशौ नाम विधानं तत्र कौटुम्भं ।
कथमेषां ससुत्यन्ना कस्मिन् काले जदार्हण ॥

* अनाथ योको दुर्निर्भितो भवति इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† महापुण्य प्रदं कौर्मा गोवत्स द्वादशौव्रतमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ व्रतं ब्रूहि जगद्गर्हणरति पुस्तकान्तरे पाठः ॥

एतत्सर्वं हरे ब्रूहि मां तर नरकार्णवात् ।

कृष्ण उवाच ।

पुरा कृतयुगे पार्थ मुनिकोटिः समागताः ।

तपश्चचार विपुलं नानाव्रतधरा गिरी ॥

हर्षेण महताविष्टा देवदर्शनकाङ्क्षया ।

जम्बूमार्गं महापुण्ये नानातीर्थविभूषिते ॥

पारिपाते सिद्धपात्रे रम्ये बदरिकाश्रमे ।

घण्टारयीति विख्याते उत्तमे शिखरे नृपे ॥

तापसारण्यमतुलं दिव्यकाननमण्डितं ।

वसिष्ठ, शुक्राङ्गिरस, क्रतुदत्तादिभिर्वृतं ॥

वस्कुलाजिनसम्बीतै र्भृंगोराश्रममण्डलं ।

नानामृगगणैर्युष्टं शाखामृगगणैर्युतं ॥

प्रशान्तसिंहहरिणं वस्तुसर्वगतद्रुमं ।

गहनं निरतुसनं रम्यं तालसन्तान सङ्कुलं ॥

सिंहव्याघ्र गजैर्भिन्नं हरिणैः शंशरैःशरैः ।

वराह तुतुभिस्त्रिचैः समन्तादुपशोभितं ॥

तपस्यतां तत्र तेषां मुनीनां दर्शनार्थिनां ।

व्याजं चक्रे महीनाथ हादशार्धैर्षलोचनः ॥

वभूव ब्राह्मणो वृद्धो जरापाण्डुरमूर्ध्वजः ।

स्रथचर्मतनुः कुम्भो पाशपाणिः सवेपथुः ॥

उमा विचक्रे गोरूपं शृणुयात्पार्थ यादृशं ।

क्षीरोदतीयसम्भूताः याः पुरानृतमन्यने ॥

पञ्च गावः शुभाः पार्थ पञ्चकस्य च मातरः ।

नन्दा सुभद्रा सुरभी सुशीला बहुला सती ॥
 यतो लोकोपकाराय देवानां तर्पणाय च ।
 जमदग्निर्भरद्वाजवसिष्ठमिषगौतमाः ॥
 जगृहुः कामदाः पञ्च गावो दत्त्वा सुरैस्ततः ।
 गोमयं रोचना मूत्रं क्षीरं दधि घृतं गवां ॥
 घडङ्गानि पवित्राणि संशुद्धिकरणानि च ।
 गोमयादुत्थितः श्रीमान् विश्ववृक्षः शिवप्रियः ॥
 तत्रास्ते पद्महस्ता श्रीः श्रीहजस्ते न स स्मृतः ।
 वीजान्युत्पलपद्मनां पुनर्जातानि गोमयात् ॥
 गोरोचना च माङ्गल्या पवित्रा सर्वसाधिका ।
 गोमूत्राङ्गुष्ठेषु जातः सुगन्धः प्रियदर्शनः ॥
 आहारः सर्वदेवानां शिवस्य च विशेषतः ।
 जगद्बीजं जगत्किञ्चित् तज्ज्ञेयं क्षीरसम्भवम् ।
 दध्नः सर्वाणि जाताति मङ्गलान्यर्धसिद्धये ।
 घृतादमृतमुत्पन्नं देवानां श्लोषकारणम् ॥
 ब्राह्मणाश्चैव गावश्च कुलमेकं द्विधा ज्ञातम् ।
 एकत्र मन्त्रास्तिष्ठन्ति हविरन्यत्र तिष्ठति ।
 गोषु यज्ज्ञाः प्रवर्त्तन्ते गोषु देवाः प्रतिष्ठिताः ।
 गोषु वेदाः समुद्गीर्णाः स घडङ्गपदक्रमाः ॥
 ऋक्मूले गवां नित्यं ब्रह्मविष्णु समाश्रितौ ।
 ऋक्पाये सर्वतीर्थानि स्यावराणि चराणि च ॥
 शिरोमध्ये महादेवः सर्वकारणकारणम्* ॥

* सर्वभूतमयः स्थित इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

ललाटे संस्थिता गौरी नासारन्ध्रे * च षण्मुखः ॥
 कम्बलेऽम्बतरी नागो नासापुटसमाश्रितो ।
 कर्णयो रश्मिनी देवो चक्षुषोः शशिभास्करो ॥
 दन्तेषु वसवः† सर्व जिह्वायां वरुणः स्थितः ।
 सरस्वती च हृद्द्वारे यमयज्ञो च गण्डयोः ॥
 सन्ध्याद्वयं तन्नीलाभ्यां श्रीवाद्यां च पुरन्दरः ।
 रक्षांसि कुक्षीदेव्यो च पार्श्विकाये व्यवस्थितौ ॥
 चतुष्पात् सकलो धर्मो नित्यं जङ्घासु निष्ठति ।
 खुरमध्येषु गन्धर्वाः खुराग्नेषु च पन्नगाः ॥
 खुराणां पश्चिमे भागे राक्षसाः सम्प्रतिष्ठिताः‡ ।
 रुद्रा एकादशाः पृष्ठे वसवः सर्वसन्धिषु ॥
 श्रीपीतटस्याः पितरः कुल्वाकेषु च मानवः ।
 श्रीरपर्णागवान्निव्यं स्नाह्वालङ्कारमाश्रिताः॥ ॥
 उदरे पृथिवी सर्वा सशैलवनकानना ।
 चत्वारः सागराः पर्णा गवां ये तु पयोधराः ॥
 पर्जन्यः क्षीरधारासु भेषविन्दु व्यवस्थिताः ।
 उदरे गार्हपत्योन्निर्दन्त्रिणांनिर्दन्दि स्थितः ॥
 कण्ठे आह्ववनीयोन्निः सभ्योऽग्निः स्थाणुनि स्थितः ।
 अस्त्रि वाचः स्थिताः शैला मञ्जासु क्रतवस्थिताः ॥

* नासारन्ध्रेति पुण्ड्रकान्तरे पाठः ।

† वायव इति पुण्ड्रकान्तरे पाठः ।

‡ मन्वादापसुरर्धां स्थिता इति पुण्ड्रकान्तरे पाठः ।

॥ श्रीनीलाङ्गुलमाश्रित इति पुण्ड्रकान्तरे पाठः ।

ऋग्वे दोऽथर्ववेदश्च सामवेदो यजुस्तथा ।
 सितरत्नपीतकण्ठा गवां वर्णा व्यवस्थिताः ॥
 नासारूपमुपात्रित्य सुरभीणां युधिष्ठिर ।
 यत्त्रित्य तत्क्षणा ह्योरी आदित्यसदृशीतनुः ॥
 आत्मानं विदधे देवी धर्मराज शृणुष्व तत् ।
 घडुन्नतां पञ्चनिष्ठां मण्डूकाक्षीं सुवालधिं ॥
 ताम्बसूनीस्थितकठिं सुखरीं सुमुखींमितां ।
 सुग्रीलाञ्च वसुञ्जेहां सुसुचोरां पयोधरां ॥
 गोरूपिण्यौमुडां स्मृष्ट्वा स्वामिने चात्र वासकम् ।
 चर्यया प्रतरं हृष्टो महादेवस्य चेतसि ॥
 ग्रनैः ग्रनैः यथोपार्थविप्ररूपी महाश्रमः ।
 दत्त्वा कुलपतेः पार्श्वं शृगोःस्नाङ्गं निवेदयेत् ॥
 तपस्विनां महातेजा स्त्रेषु सर्वेषु पाण्डव ।
 न्यासरूपां ददौ धेनुं रत्नत्वेनां दिनद्वयं ॥
 यावत्स्रत्वाद्गतस्त्रीर्त्वाजां वृमार्गादिहास्मरहं ।
 रक्षिष्यामी प्रतिष्ठा या मुनिभिः सुरभी मिमां ॥
 अतश्चे शृगवद्देवः पुनर्व्याघ्रो बभूव ह ।
 वप्यचक्रनखो दर्वी ज्वलपिङ्गल लोचनः ॥
 जिह्वाकरालवदनो जिह्वा लांगूलदातुगः ।
 संपदाश्रमफादन्ती धेनुश्चैव सवत्सकां ॥
 चासयामास नादेन मुनीनां दिक्खवस्त्रिताः ।
 ऋषयोऽपि समाक्रान्ता दार्त्तनादं प्रचक्रिरे ॥
 हाहेत्युचैः केचिदूचुः इडुड्वारां स्तथापरे ।

तालस्मीटी ददुः केचि ह्यग्नं दृष्ट्वाति भैरवम् ॥
 स्वामिनं भीरवं चक्रे गौरुपूत्य सवत्सका ।
 तस्या व्याघ्रभयार्त्तायाः कपिलाया युधिष्ठिर ॥
 पलायास्याः शिलामध्ये क्षणं च ह्वरतुष्टये ।
 व्याघ्रवत्सकयोस्तत्र वन्दनं सुरकिन्नरैः ॥
 दृश्यतेऽतीव सुव्यक्तं न ददामि चतुष्यदम् ।
 सजलं शिवलिङ्गञ्च शम्भोस्तीर्थं तदुत्तमं ॥
 यस्य स्पृशति राजेन्द्र स गोवधाह्नपीडति ।
 तत्र स्नात्वा महातीर्थं जम्बूमार्गं गणाधिप ॥
 ब्रह्महत्यादिभिः पापैर्मुच्यते नात्र संशयः ।
 ततश्चे मुनयः क्रुधा ब्रह्मदत्ता महास्वना ॥
 जम्बुघण्टां सुरैर्दत्तां गिरिकन्दरपूरणीं ।
 शब्देन तेन व्याघ्रोऽपि मुक्त्वा गावं सवत्सकां ॥
 विप्रैस्तत्र कृतं नाम ढट्टुगौरितिविभ्रुतं ।
 अपिवन् परिपेयार्थं तेरुद्रा नात्र संशयः ॥
 अथ प्रत्यक्षतः श्रेष्ठ स्तेषां देवो महेश्वरः ।
 शूलपाणि खिपुरहा कामातो वृषभे स्थिरः ॥
 उमासहायो वरदः सस्वामी सविनायकः ।
 सनन्दो समहाकालः सभृङ्गी सवल्लो ह्वरः ॥
 वीरभद्रश्च चासुक्ताघण्टाकर्णादिभिर्वृतः ।
 मातृभिर्वृत सहातै र्यक्षराक्षसगुह्यकैः ॥
 देवदानवगन्धर्वमुनिविद्याधरोरगैः ।
 प्रणम्य देवदेवाय पद्मीभिः सहितैस्तथा ॥

गोरूपिणी सवत्सा च पूजिता ब्रह्मचारिभिः ।
 कार्तिके कृष्णपक्षे तु द्वादश्यां नन्दिनीव्रतैः ॥
 ततः प्रभृति राजेन्द्र भवतीर्षी महीतले ।
 उत्तानपादेन तथा व्रतं चौर्यमिदं शृणु ॥
 उत्तानपादनामासौत् चभियः पृथिवीपतिः ।
 तस्य भार्याहयं चासौदृषिञ्चुञ्जीति विभुतं ॥
 शुभ्रां जाती भ्रुवः पुत्रो बालपादधरोब्धयः ।
 दृष्ट्याः समर्पितः शुभ्रा भ्रुवोऽयं रक्षतां सखि ॥
 अहं करिष्ये शुभ्रां भर्तुं स्तावत्सदा स्वयं ।
 नृवीरं सवितुं नित्यं प्रतिष्ठा आयते महे ॥
 करोति भर्तुं शुभ्रां शुभ्री नित्यं पतिव्रता ।
 कदाचित् क्रोधमासाद्य सपत्न्या जनितं तया ॥
 स्वयञ्च व्याहृनिष्यामि शिशुः पृच्छस्विविः जतः ।
 ततोपि कायं तत्प्राण्यां एकःसिद्धः सुसंस्कृतः ॥
 अन्नभोजनवेलायां ददाति नृपतेः स्वयं ।
 भुञ्जीत* स्वपतिं† चोक्ता सामिधं भोजनं क्विच ॥
 अन्न भोजनवेलायां भ्रुवो जीवितमाप्तवान् ।
 तद्यैव च प्रसन्नात्मा मातुरुक्ताङ्गोऽभवत् ॥
 तं दृष्ट्वा महदाश्चर्यं शुभ्री पप्रच्छ विचिता ।
 किमेतद्ब्रूहि व्रतान्तं यस्येयं व्युष्टिःतत्तया ॥
 किं त्वया चरितं किञ्चिद्भूतं दत्तं भूतं तथा ।

● सुखीनचपितामति पुस्तकालये पाठः

† स्वपतिं दृष्ट्वा वाक्यकारं]

सत्त्वं सत्त्वं पुनः सत्त्वं येन जीवति ते सुतः ॥
 यथायां सुतवान् वासी निहृत्य सकली कृतः* ।
 पक्षः सत्त्वं कृतः स्यात्सा व्यञ्जनैः सह भोजनैः† ॥
 परिशिश्रण्यमानासुः पुनः कथं जीवितमाप्तवान् ।
 'किते सिद्धा महाविद्या मृतसञ्जीवनी शुभा ॥
 रत्नं मधि महारत्नं योगाजनमहोषधम् ।
 कथयस्व महाभागे सत्त्वं सत्त्वं भगिन्यसिद्धं ॥
 एवमुक्ते तु हृत्तेऽस्याः व्याचख्यो वक्षःकव्रतम् ।
 कात्तिके शुक्लद्वादश्यां यथा चानुष्ठितं पुरा ॥
 व्रतस्यास्य प्रभावेन पुनर्जीवति मे सुतः ।
 वक्षो मे वक्षवेलायां मनोर्षे मसते पुनः ॥
 समागमश्च भवति व्रतैः प्रवसितैरपि ।
 यद्यर्थं मेतद्वाख्यातं तव गोद्वादश्याव्रतं ॥
 कदापि चैतत् सर्व्वं तु भविष्यति शुभाशुभा ।
 एवमुक्तव्रतं श्रीर्षं वृथाः पुत्राः सुखान्विताः ॥
 सन्मृतजीवितान्ते च ध्रुवस्थाने निवेदिताः ।
 मन्त्राणां सृष्टिकारेण वचिर्भर्त्ता स होषिता ॥
 दशमक्षत्रसंयुक्तो ध्रुवः सोऽप्यापि दृश्यते ।
 ध्रुवर्षेण यदादृष्टे लोकः पापैः प्रसृष्यते ॥

* मया संसृज्यमानसि निहृत्य सकली कृत इति पाठान्तरं ।

† पात्राणां दानः पुनश्चैव जपत्येवाहितः सुत इति पाठान्तरं ।

‡ वेपथुर्षुर्दये मम इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

युधिष्ठिर उवाच ।

कीदृशं तद्विधानं च तन्मे ब्रूहि जनार्दन ।

यत् कृतं शुद्धीवचनाद्रुच्या यदुकुलीहृत् * ॥

कृष्ण उवाच ।

संप्राप्ते कात्तिके मासि शुक्लपक्षे† नृपोत्तम ।

द्वादश्यां कृतसकल्पः स्नात्वा शुद्धे जलाशये ॥

नरोवा यद्विवा नारी नक्तं संकल्प्य चेतसि ।

ततो मध्याह्नसमये कृत्वा देवार्चनादिकं ॥

प्रतीचेतागमं भक्त्या गवां गोध्यानतत्परः ।

सवक्त्रां तुल्यवर्णांश्च शीलिनीं गाम्भयस्त्रिनीं ॥

चन्दनादिभिरालिप्य पुष्पमालाभि रर्चयेत् ।

कुङ्कुमालक्तकैर्धूपैः धूपदीपैः‡ सुगन्धिभिः ॥

अथ ताम्ब्रमये पात्रे कृत्वा पुष्पाक्षतैस्त्रिलैः ।

चन्दनैः कुङ्कुमैर्गन्धैः पुष्पैः शालोद्भवैस्तथा ॥

पादमूले तु दातव्या मन्त्रेणानेन पाण्डव ।

पाता वद्रेण इत्येष मन्त्रः प्रोक्तो हि जन्मना ॥

स्त्रीशूद्राणां महावाहो मन्त्रोयं परिकीर्तितः ।

श्वीरोदार्षवसम्भूते सुरासुरनमस्कृते ॥

सर्वदेवमये मात र्गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते ।

* यत् कुलीहृत् इति पाठान्तरं ।

† शुक्लपक्षे इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ दीप नन्वैरिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

¶ नामा वद्राणामित्येष इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

दत्ताधरं तज्जलं पुण्यं सच्च तं मूर्ध्नि निक्षिपेत् ॥
 ततो मासादि संसिद्धान्वाटकांश्च निवेदयेत् ।
 पञ्चसप्तदशैकं वा यथा विभवमात्मनः ॥
 सुरभि त्वं जगन्मातर्नित्यं विष्णुपदे स्थिते ।
 सर्व्वदेवमये घासं नयाद्य त्वमिमं शुभं ॥
 दत्ताधर्योदत्तनैवेद्यः कृतपूजः सुसंयतः ।
 प्रार्थयेदाशिषं प्राज्ञो वध्वाग्ने करसंपुटं ॥
 सर्व्वदेवमये देवि सर्व्वं वैदैरलङ्घिता ।
 मात र्माभिलषितं सफलं कुरु नन्दिनि ॥
 एवमभ्यर्च्य विधिवद्भस्वा गवि गवाङ्गिकं ।
 पर्य्युष्य वारिणा भक्त्या प्रणम्याद्य पुनः पुनः ॥
 तद्दिने तायिकापक्कं स्थालीपाकं युधिष्ठिर ।
 गोक्षीरं गोघृतं दत्त्वादधिक्षीरं विसर्जयेत्* ॥
 माघाद्यं कामतोऽश्रीयाद्वात्रौ विगतमत्सरः ।
 भूम्यां स्वपन् ब्रह्मचारी शृणु यत् फलमाप्नुयात् ॥
 यावन्मित्रं गात्ररोमाणि गवां कौरवनन्दन ।
 तावद्दिनानि गोलोके पूजितो मोदतेऽमरैः ॥
 नारी वा कुरुते जातु ब्रह्मैतत् युधिष्ठिर ।
 भैरोः पूर्व्वार्ष्टकं रम्यमिन्द्राग्निधरक्षसां ॥
 वरुणानिलरुद्राणां रुद्रश्च च युधिष्ठिर ।
 तेषांसुपरि गोलोकस्तत्र याति स गोब्रतौ ॥

* विषर्जयेदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† यावत्तः कोटयो वीचानिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

जर्जामन्ते हि दग्धे हि च गां सवसां
 याः पूजयन्ति वटकैः कुसुमैश्च ह्वयेः ।
 ताः सर्वकामसुखभोगविभूतिभाजो
 मर्त्ये च सन्ति सुचिरं नृपते च वत्साः ॥
 इति भविष्योत्तरोक्तं गोवत्सदाद्ग्रीवतं ।

—000—

कथा उवाच ।

पुरा बभूव राजर्षिरजापालइति श्रुतः ।
 प्रापितः स प्रजाभिस्तु सर्वदुःखापनुत्तये ॥
 दुःखापनोदं कुब भो व्याधिर्नाना नरेभ्यः ।
 एवमुक्तश्चिरं ध्यात्वा कृत्वा व्याधीनजागृषान् ॥
 पालयामास हृष्टोऽसौ भजापालस्ततोऽभवत् ।
 तेनैषा निर्मिता शान्तिः माम्नानीराजना जने ॥
 तस्यान्तु पाण्डवश्चेष्ट लक्षणं वप्ति ते शृणु ।
 राजा पुरोहितैः सार्षपमनुष्ठाय विधानतः ॥
 तस्मिन् काले बभूवाद्य रावणो राक्षसेभ्यः ।
 लङ्कास्थितः सुरगणो नियुनक्ति स्वकर्मेभ्यु ॥
 अखण्डमखण्डं चन्द्रमातपचक्षकार ह ।
 इन्द्रं देवापतिं चक्रे बाहुं पाण्डुप्रमार्जकं ॥
 वरुणं बन्धकर्मण्यं धनं च नरचक्रं ।
 यमं संयमनेऽरीषां युयुजे मन्त्रये मनुं ॥
 मेधाकृन्दन्ति लिप्यन्ति द्रुमाः पुष्याणि चिच्चिपुः ।
 सप्तर्षयः शान्तिपरा ब्राह्मणाः संस्मिताः परे ॥

यमो यामककक्षायां गन्धर्वा गीततत्पराः ।
 प्रेक्षणीयेश्वरोऽष्टौ वा बाह्ये विद्याधराहताः ॥
 गङ्गाद्याः शरितः पाने गार्हपत्योद्भुताशने ।
 तिष्ठन्ति पार्थिवाः पूर्वां पुरसेवाविधायिनः ॥
 दीप्यन्ति भासुरै रत्नैः प्रशालातो विभूषणैः ।
 तं दृष्ट्वा नारदः प्राह प्रशस्तं प्रतिहारकं ॥
 परावर्त्तनं^१ मम स्थाने ब्रूहि कोऽत्र समागतः ।
 उवाच च प्रणम्याद्ये दण्डपाणिर्निशाचरः ॥
 एषां ककुस्थोमास्याता धुम्भमारो नल्लोर्जुनः ।
 ययातिर्न दुषो भीमो राघवोऽयं विदूरथः ॥
 एते चान्ये च बहवो राजान इति आसते ।
 सेवाकरा न च स्थानेनाजापाल इहागतः ॥
 रावणः कुपितः प्राह शीघ्रं दूतं विसर्जय ।
 इत्युक्ते प्रहितो दूतो धूम्राक्षो नाम राक्षसः ॥
 धूम्राक्ष गच्छ ब्रूहि त्वमजापालं ममाश्रया ।
 सेवां कुर्व समागच्छ कबन्धायस्य पार्थिव ॥
 अन्यथा चन्द्रहासेन त्वां करिष्ये विकम्बरं ।
 रावणेनैवमुक्तस्तु धूम्राक्षो गर्ह्यो यथा ॥
 संप्राप्य तां पुरीं रम्यां तच्च राजकुलं गतः ।
 ददर्श यतमेकं स अजापालमजाहृतं ॥
 मुक्तकेशं मुक्तकचं नैक भृशं क्रमहयं ।
 यद्विष्णुश्च^२ देवभृतं व्याधिभिः परिवारितं ॥

१. चर्त्तनं मम स्थाने इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

निहतामित्रशार्दूलं सर्वोपद्रवनाशनं ।
 मङ्गामालिख्य नामानि विनिघ्नन्ति द्विषां गर्थं ॥
 ज्ञानं भुक्तं शुभे स्थाने कृतकृत्यं मनुं यथा ।
 दृष्ट्वा हृष्टमनाः प्राह धूम्राक्षो रावणोदितं ॥
 साक्षेपमजपालीपि प्रत्युक्त्वा कारणान्तरं ।
 प्रेषयामास धूम्राक्षं ततः सत्यं समादधे ॥
 ज्वरमाकारयित्वा तु प्रोवाचेदं मह्योपतिः ।
 गच्छ लङ्काधिपस्त्वानमाचरस्व यद्योचितं ॥
 नियुक्तस्त्वजपालेन ज्वरराजो जगाम ह ।
 गत्वा च कम्पयामास सगणं राक्षसेश्वरं ॥
 रावणस्त्वविदित्वा तु ज्वरं परमदारुणं ।
 प्रोवाच तिष्ठतु नृप स्तन मे न प्रयोजनं ॥
 ततः स विज्वरो राजा बभूव धनदागुजः ।
 तेनैषा निर्मिता शान्तिरजपालेन धीमता ॥
 सर्वरोगप्रशमनी सर्वोपद्रवनाशनी ।
 कार्तिके शुक्लपक्षस्य द्वादश्यां रत्ननीमुखे ॥
 समुत्थिते विनिद्धे तु देवे दामोदरे तथा ।
 विद्यान्ते नरमालाभिरस्ये स्त्रीषां नुरन्तिके ॥
 जनयित्वा नवं विष्णुं हृत्वा मन्त्रैर्द्विजोत्तमैः ।
 वर्द्धमानतपुष्याभिर्दीपिकाभिर्हुंताशनं ॥
 कृत्वा महाजनाः सर्वे हरिं नीराजयेच्छनैः ।
 पुष्पैरभ्यर्चितं देवं समालभ्य च चन्दनैः ॥
 बदरैः कर्पूरैश्चैव त्रपुसैरिक्षुमिस्तथा ।

गन्धैः पुष्पै रत्नहारै रञ्जै रत्नैश्च पूजितैः ।
 तस्यैवानुमतां लक्ष्मो ब्राह्मणं चण्डिकां तथा ॥
 आदित्यं शङ्करं गौरीं यक्षं गणपतिं ब्रह्मान् ।
 मातरः पितरो गावः सर्वा नीराजयेत् क्रमात् ॥
 गवां नीराजनं कुर्यात् महिषादेश मण्डलं ।
 भ्रामयेन्नासयेच्छब्दै घण्टावादनच्छादनैः ॥
 ता गावः प्रसूता याश्च ताषां पीडा तथागदा* ।
 सिन्दूरकतमृङ्गाया हस्वारावाः सवत्सकाः ॥
 अनुयान्ति च गोपालाः कलयन्ती वनानि ते ।
 छेदानुस्मितरत्नाङ्गा[†] रत्नपीतसिताम्बराः ॥
 पञ्चकोलाहले वृत्ते गवां नीराजनोत्सवे ।
 सुरङ्गान् लक्षणेयुं ज्ञान[‡] द्विरदांश्च सुपूजितान् ॥
 राजचिह्नानि सर्वाणि उद्धृत्य खण्डहाङ्गणे ।
 राजा पुरोहितैः सार्धं मन्त्रिभृत्यपुरःसरः ॥
 सिंहासनोपविष्टश्च ब्रह्मभेर्यादिना निस्त्रनैः ।
 पूजयेद्बन्धकुसुमैर्वसुदौप[§] विलेपनैः ॥
 इयमश्वादिपूजा महानवम्युत्सवे द्रष्टव्या ।
 तत्र स्त्री लक्षणेयुं ज्ञा वेद्या वाथ कुलाङ्गना ।

* ताश्च प्रसूताधीति लापोऽस्यकां जदा इति पाठान्तरं ।

† सर्वाङ्गा इति पुलकान्ते पाठः ।

‡ सुरङ्गान् लक्षणेयुं ज्ञानिति क्वचित् पाठः ।

§ ब्रह्मभृत् इति पाठान्तरं ।

§ वस्त्रधूप विक्षेपभैरवि पाठान्तरं ।

शीर्षोपरि नरेन्द्रस्य त्रिवारं भ्रामयेत्* सा ॥
 ग्रान्ति रस्तु समिष्टिष्व द्विजैर्बद्धस्त्रमेव वा ।
 ततो नीरा जयेत् सैव्यं हृस्वश्चरथ सङ्कुलम् ॥
 एवमेषा महाग्रान्तिः ख्याता नीराजना जने ।
 येषां राष्ट्रे पुरे ग्रामे क्रियते पाण्डुमन्दन ॥
 तेषां रोगाः क्षयं ग्रान्ति सुभिच्छं वर्धते सदा ।
 ग्रान्तिनीराजनालोके सर्वरोगान् व्यपीडति ॥
 लोकानां वर्धयित्वायुरजपालचरी† यथा ।
 येषां रोगादिपीडासु जन्तूनां हितमिच्छता ॥
 वर्षे वर्षे प्रयोक्तव्याः॑ ग्रान्ति नीराजनाइति ।
 नीराजयन्ति नवमिषनिभं हरिं यो
 गोब्राह्मणार्थहितकारिणमश्वगोभिः ।
 ते सर्वरोगरहिताः सहिताश्च भृत्यैः
 दीर्घायुषो भुवि भवन्वजपालवाक्यात् ॥
 इति भविष्योत्तरे नीराजनदादश्रीव्रतम् ।

—000@000—

सूत उवाच ।

पुरा देवासुरे युद्धे इतैस्तु हरिणासुरैः ।
 पुत्रपौत्रेषु शोकान्तां गत्वा भूर्लोकमुत्तमं ॥

* भ्रामयेद्द्वारं चाधिकमिति पाठान्तरं ।

† राजपाल इव प्रथा इति पाठान्तरं ।

‡ प्रतिवर्षे प्रयोक्तव्या इति क्वचित् पाठः ।

समन्ते पञ्चमे तीर्थे सरस्वत्याः शुभे तटे ।
 भर्तुराराधनपरा तप उग्रशुक्रार ह ॥
 तदा दितिर्दुःखमाता* ऋषिरूपेण संख्यता ।
 फलाहारा तपस्ते पे कञ्चं चान्द्रायणान् बहून् ॥
 यावद्वर्षव्रतं साधं जराशोकसमाकुला ।
 ततः सा तपसा तप्ता वसिष्ठादीनपृच्छत ॥
 कथयन्तु भवन्तो मे पुत्रशोकविनाशनम् ।
 व्रतं सौभाग्यफलदमिह लोके परत्र च ॥
 जचुर्वशिष्ठप्रमुखा मदनहादशीव्रतम् ।
 यस्य प्रसादाद्भवत् सुतशोकविवर्जिता ॥

ऋषय जचुः ।

श्रीतुमिच्छाम्यहं त्वत्तो मदनहादशीव्रतम् ।
 सुतानेकीनपञ्चाशद्येन लेभे दितिः पुरा ॥

सूत उवाच ।

यद्वशिष्ठादिभिः पूर्वं दितेः कथितमुत्तमं ।
 विस्तरेण तदेवेदं मत्सकाशान्निवोधत ॥
 चैत्रे मासि सिते पक्षे† हादश्यां नियतव्रतः ।
 स्थापयेदन्नं कुम्भं सिततण्डुलपूरितं ॥
 नानाफलयुतं तद्वदिन्दुदण्डसमन्वितं ।
 सितवस्त्रयुगच्छत्रं सितचन्द्रनक्षत्रितम् ॥
 नानाभक्ष्यसमीपेत् सद्द्विरस्यं स्वशक्तितः ।

* देवमानेति पाठान्तरं ।

† शुभ पक्षे इति वा पाठः ।

ताम्रपात्रं गुह्यीपेतं तस्योपरि निवेशयेत् ॥
 तदभावे कथां कुर्यात् कामकेशवयो र्जरः ।
 कामनाम्ना हरेरर्घ्यां ज्ञापयेद्गुह्यवारिणा ॥
 शुक्लपुष्पाक्षतितिलै रर्घयेदिति केशवम्* ।
 कामाय पादौ संपूज्य जज्ञे सौभाग्यदायकं ॥
 जरु स्मरायेति पुनश्चेन्मथायेति वै कटिं ।
 स्तम्बोदयायेत्युदरं अनङ्गायेत्युरी हरेः ॥
 सुखं पद्मसुखायेति बाहू पञ्चशराय वै ।
 नमः सर्व्वीक्षने मौलिमर्षयेदिति केशवं ॥
 एवं प्रजागरं कृत्वा शुक्लमास्याम्बरो व्रती ।
 ततः प्रभाते तं कुम्भं ब्राह्मणाय निवेदयेत् ॥
 ब्राह्मणान् भोजयेच्छ्रद्धया स्नयं भुञ्जीत बन्धुभिः ॥
 भुञ्जा तु दक्षिणां दद्यादिमं मन्त्रमुदीरयेत् ।
 प्रीयतामत्र भगवान् कामरूपी जनार्दनः ॥
 हृदये सर्व्वभूतानां य आमेत्यभिधीयते ।
 अनेन विधिना सर्व्वं मासि मासि समाचरेत्
 उपवासी त्रयोदश्यामर्षयेद्दृष्टुमव्ययम् ।
 फलमेकञ्च सम्प्राश्य द्वादश्यां भूतले स्नपेत् ॥
 ततस्त्रयोदशे मासि दृष्टधेनुसमन्वितां ।
 शय्यां दद्याद्द्विजेन्द्राय सर्व्वोपस्कारसंयुतां ॥
 काञ्चनं कामदेवं च शुक्लां गाञ्च पयस्विनीं ।

* सर्व्वं यन्मनुष्यस्य भिन्नं पाठान्तरं ।

वासोभिर्हिजदाम्यत्वं पूज्य शक्त्या विभूषणैः ॥
 सर्व्वगन्धादिकं दद्यात् प्रीयतामित्युदीरयेत् ।
 होमं शुक्लतिलैः कुर्यात् कामनामानि कौर्त्तयेत् ॥
 गव्येन सर्पिषा तद्वत् पायसेन च धर्मवित् ।
 विप्रेभ्यो भोजनं दद्यात् विस्रशाठं विवर्जयेत् ।
 ब्रह्मदण्डानथो दद्यात्पुष्यमालाः स्वशक्तितः ॥
 यः कुर्याद्दिनानेन मदनद्वादशीमिमां ।
 सर्व्वपापविनिर्मुक्तः प्राप्नोति हरिसात्मरतां ॥
 ब्रह्म लोके वरान् पुत्रान् सौभाग्यसुखमश्नुते ।
 यः स्मरः संस्मृती विष्णुरानन्दात्मा महेश्वरः ॥
 सुखाधीं कामरूपेण यजेत्तं जगदीश्वरम् ।
 तत् श्रुत्वा च चचारासौ दितिः सर्व्वमशेषतः ॥
 काश्यपो व्रतमाहात्म्यादागत्य परया मुदा ।
 चकारात्कर्कशां भूयो रूपयौवनशालिनीं ॥
 वरैराच्छादयामास सा तु वने वरं सुतं ।
 ततः सा व्रतमाहात्म्याज्ञेभे गर्भमनुत्तमं ॥
 कदाचिन्नव्यसञ्चारं शत्रुत्वात्कठरं दितेः ।
 प्रविश्यैकोनपञ्चाशत् कृत्वा शक्नो जघान तां ॥
 तावन्तोवालका भूय बहदुनंश्रुतिं गताः ।
 ततो वै चिन्तयामास किमेतदिति ह्रस्वहा ॥
 धर्मैस्व पश्य माहात्म्यं पुनः सञ्जीवितास्त्वमी ।
 कदाचिदनया नूनं मदनद्वादशी कृता ॥

तत् प्रभावेन जीवन्ति तनया निहता अपि* ।
 नूनमेतत् परिणतमधुना तत्तु पूजनं ॥
 वक्ष्ये षाभिहृताः सन्तो न विनाशमवाप्नुयुः ।
 एकाप्यनेकतामाप यस्मात् गर्भी हृतोप्यसं ॥
 अहो माहात्म्यमितस्मिन् मदनहादश्रीव्रते ।
 जीवपुत्रा बहुसुता येन नारी प्रजायते ॥
 इति मत्स्यपुराणोक्तं मदनहादश्रीव्रतम् ।

—000—

भद्राक्ष उवाच ।

विज्ञानोत्पत्तिकामस्य क आराध्यो भवेद्विज ।
 कथमाराध्यते सोऽहि एतदाख्याहि मे विज ॥

अगस्त्य उवाच ।

विष्णुरेव महायज्ञः† सर्वदेवैरपि प्रभुः ।
 तस्योपायं प्रवक्ष्यामि येनासौ वरदो भवेत् ॥
 रहस्यं सर्वदेवानां मुनीनामुक्तमस्तथा ।
 नारायणः परोदेवः तं प्रथम्य न स्वीदति ॥
 श्रूयते च पुरा राजन् नारदेन महात्मना ।
 कथितं पुष्टिदं‡ विष्णोर्व्रतमप्सरसान्तथा ॥
 नारदस्तु पुराकल्पे गतवान् मानसं शरः ।
 जानार्थं तत्र सोऽपश्यत् सर्वमप्सरसान्ध्रवम् ॥

* अस्तीति पाठान्तरं ।

† विष्णुदेवः सदा पूज्य इति पाठान्तरं ।

‡ पुष्टिदमिति कश्चित् पुस्तके पाठः ।

तास्तं दृष्ट्वा विसासिन्यो जटामुकुटधारिणम् ।
 अस्थिचर्मावशेषान् कृत्वा कुण्डी-कपालिनम् ॥
 देवासुरमनुष्याणां दिदृक्षुं कलहं सदा ।
 ब्रह्मपुत्रं तपोयुक्तं पप्रच्छुस्ता वराननाः ॥
 अप्सरसञ्जुः ।

भगवन् ब्रह्मतनय भर्तृकामा वयं द्विज ।
 नारायणस्य भर्ता नो यथा स्यादापचक्षत तत् ॥
 नारद उवाच ।

प्रणामपूर्वकः प्रश्नः सर्व्वतो भवते* शुभः ।
 स च मे न कृतो गर्वाद्युष्माभिर्यौवनश्रयात् ॥
 तथा हि देवदेवस्य विश्वोर्ध्वामकौर्त्तितम् ।
 भवतीभिस्तथा भर्ता भवत्विति हरिः शुभः ॥
 तन्नामोच्चारणादेव कृतं सर्व्वं न संशयः ।
 इदानीं कथयामास व्रतं येन हरिः स्वयम् ॥
 वरदन्तमवाप्नोति भर्तृत्वं च निश्च्यवति ।
 वसन्ते शुक्लपक्षस्य द्वादशौ या भवेच्छुभा ॥
 तस्यासुपोष्य विधिवत् सन्नीकं हरिमर्चयेत् ।
 पर्यङ्कास्तरणं कृत्वा नानास्तरणसंयुतम् ॥
 तत्र सङ्ग्रामा युतं देवं रीष्यं कृत्वा निवेदयेत् ।
 तस्योपरि ततः पुष्पैर्मण्डपं कारयेद्बुधः ॥
 मृत्पत्रादित्रगीतैश्च जागरं तत्र कारयेत् ।

मनोभवायेति* शिरस्वनङ्गायेति वै कटिं ॥
 कामाय बाहुभूले तु कुशुमास्त्राय चीदरं ।
 मन्मथायेति पादौ तु हरयेति च सर्व्वतः ॥
 पुष्यैः संपूष्य देवेशं मत्तिकाजातिभिस्तथा ।
 पञ्चाक्षतुर आदाय रक्षुदण्डान् सुशोभनान् ॥
 चतुर्दिक्षु न्यवेत्तस्य देवस्य प्रणतो नृप ।
 एवं कृत्वा प्रभाते तु दापयेद्ब्राह्मणाय तम् ॥
 वेदवेदाङ्गयुक्ताय संपूर्णाङ्गाय धीमते ।
 ब्राह्मणांश्च तथा भोज्य व्रतमेतत्समाप्यते ॥
 व्रतस्थान्ते ततो विष्णुर्भर्ता वो भवति ध्रुवम् ।
 अकृत्वा मत्प्रणामन्तु पृष्टं गर्वेण शोभनाः ॥
 व्रतेनानेन देवेशं पतिं सन्धाभिमानतः ।
 अवसानेऽपहरणं गोपालैर्वी भविष्यति ॥
 पराहृतानां कन्यानां† देवो भर्ता भविष्यति ।
 एवमुक्त्वा स देवर्षिः प्रथमो नारदः क्षणात् ॥
 अतीप्येतद्ब्रतं चक्रुस्तृष्टस्तासां स्वयं हरिः ।
 इति भविष्यत्पुराणोक्तं भर्तृप्राप्तिव्रतम् ।

—०००@०००—

द्वादश्यां शुक्लपक्षे च मासि भाद्रपदे नरः ।
 नैवेद्यगन्धपुष्पाद्यै रर्षयेज्जलशायिनम् ॥

* मनो भवायेति वा पाठः ।

† पराहृत्याच कक्षपाकमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

न चालपेहिकर्म्मस्थान् पाषण्डान् पतिताम्ररान् ।
 स्नात्वा जपमन्त्रन्तेति शतमष्टोत्तरं बुधः ।
 व्रजंस्तिष्ठन् स्वपन् मुञ्चन् बुध्यन् प्रखलिते क्षुते ॥
 वेदनात्तः स्मरेन्नित्यमनन्तं मनसा गिरा ।
 व्रतमेतद्विधानेन कुर्यात् सख्यस्तरं नरः ॥
 ततोऽथ भोजयेद्विप्रान् शक्त्या दद्याच्च दक्षिणां ।
 पूर्णं संवत्सरे शक्त्या पूजयित्वा जनार्दनम् ॥
 वीणा-वेणु-स्रदङ्गाद्यैर्गीतनृत्यन्तु कारयेत् ।
 अर्चयित्वा हरिं भक्त्या कारयित्वा तु जागरम् ॥
 अनन्तफलमाप्नोति गीतवाद्यैश्चदाहृतम् ।
 अहिंसकः शुचिर्दान्तः सर्वभूतहिते रतः ॥
 व्रतमेतन्नरः कृत्वा विष्णुलोके महीयते ।
 इति विष्णुरक्षस्योक्तं अनन्तदादशीव्रतम् ।

— ००० —

शुधिष्ठिर उवाच ।

यत् कृत्वा सुच्यते जन्तु मंहतः पञ्चपातकात् ।
 पञ्चपातकिनः प्रेतान् पितॄंश्चारयते तथा ॥
 निशाकृदाप्यायनञ्च पूर्णिमादेवता इमाः ।
 जगन्नाथो महीधारी देवेन्द्रो देवकीसुतः ॥
 चतुर्भुजो गदापाणिः सुरभीदः सुलोचनः ।
 सर्वगतश्चक्रपाणिः शूरथाप्यसुरान्तकः ॥
 श्रीशच द्वादश-इमा देवताः परिकीर्त्तिताः ।

(१५१)

स्वाहाकारान्वितैरेतैश्चतुर्थ्यन्तैश्च नामभिः ॥
 श्रावणादौ देवतानां पूजां च कुरुते व्रती ।
 श्रावणादेव कुर्वीत हादश्यां परिकीर्त्तिताः ॥
 पूर्णिमायान्तु देवेभ्यः पायसञ्चुहुयात्ततः ।
 अमावास्यां देवतानां तिलसुन्नगुहोदनम् ॥
 पञ्चरत्नानि देयानि पञ्चपातकशान्तये ।
 पञ्चसूक्तिं स्वर्णमयीं पञ्चानृतसमन्विताम् ॥
 भोजयेद्ब्राह्मणान् राजान् पञ्चहादशसंख्यया ।
 एतस्त्रीणि वृत्रवधान्मुक्तवान् पाकशासनः ॥
 अहल्या सङ्गदोषाच्च सुरापानाद्दृश्यतिः ।
 गुरुस्त्रीगमनात्कौमः सुवर्णहरणाहलिः ॥
 अन्वीरपि महीपालैर्दिलीपसगरादिभिः ।
 महापातकजैर्दीर्घैर्विसुक्ताद्योपपातकैः ॥
 तस्मात्त्वमपि कौन्तेय कुरु व्रतमिदं शुभम् ।
 यदाञ्छति महाराज शाखतीं गतिमात्मनः ॥

इति भविष्यत्पुराणोक्तं पञ्चमहापापनाशनहादशौव्रतम् ।

—०००—

हादश हादशौर्यस्तु समाध्योपोषणैर्नरः ।
 गोवत्सं काञ्चनं विप्रानर्चयेद्भक्तितः पुनः ॥
 परं पद्मवाग्नेति विष्णुव्रतमिदं स्मृतम् ।
 इति पद्मपुराणोक्तं विष्णुव्रतम् ।

—०००—

वराह उवाच ।

द्वादश्यामुपवासन्तु ये वै कुर्वन्ति ते नराः ।
 मामिव प्रतिपद्यन्ते मम भक्तिपरायणाः ॥
 कृत्वा चैवोपवासन्तु गृहीत्वा च जलाञ्जलिं ।
 नमो नारायणायेति षादित्यं चावलोकयेत् ॥
 यावन्तो विन्दवः केचित् प तन्वञ्जलितो जलात् ।
 तावद्वर्षसहस्राणि स्वर्गलोके महोयते ॥
 तथैव ब्रह्मा द्वादश्यां कृत्वा कर्म यथाविधि ।
 पाण्डुरैश्वर्यं पुष्पैस्तु शृष्टैर्गन्धैश्च धूपनैः ॥
 य एवं कारयेद्भूमि तस्यापि शृणुयाद्भक्तिं ।
 दत्त्वा शिरसि पुष्पाणि इमं मन्त्रमुदीरयेत् ॥

ॐ इति कृत्वा मन्त्रः ।

सुरश्चेष्ट धराधार सुमनसः सुमना गृह्य प्रीयतां म
 भगवानम्बिकः । एतेन मन्त्रेण सुमनोदद्यात् ।

गन्ध मन्त्र उच्यते ।

ॐ नमस्तुभ्यं स्वस्ति विध्युक्तासुगन्धं गृह्णेमं मङ्गलवतेः
 विष्णवे । एतेन मन्त्रेण गन्धान् दद्यात् ।
 अश्रुत्वापि च शास्त्राणि यो मामेवञ्च कारयेत् ।
 मम लोकं स गच्छेच्च जायते च चतुर्भुजः ॥
 श्यामाकं षष्टिकक्षैव सङ्गोष्णानि गुणांस्तथा ।

गुणांश्च, व्यञ्जनानि ।

शालीन्-यवाश्च तथा नीवारभक्तकं तथा ॥

एतानि यस्तु भुञ्जीत मम कर्मपरायणः ।

स स्याच्च शङ्ख-चक्रांको साङ्ख्यो मुशली गदी ॥

उपवासः, सूर्यार्घ्यं, विष्णुपूजा, श्यामाकाशन्यतमं पारणं
चेति व्रतम् ।

इति भविष्यत्पुराणोक्तं * विष्णु प्राप्तिदादशौव्रतम् ।

— 000 —

कृष्ण उवाच ।

द्वादश्यां गुह्यकानर्च्यं पललाक्षतसंयुतैः ।

हेमं विप्राय वै दद्यादुपवासपरायणः ॥

एतद्दे गुह्यकं प्रोक्तं व्रतं पापहरं शुभम् ।

इति भविष्योत्तरोक्तं गुह्यकदादशौव्रतम् ।

— 000 —

द्वादश्यां देवदेवेशं पूजयित्वा जलाधिपं ।

पुण्डरीकमवाप्नोति वरुणं द्वादसाम्बतिं ॥

इति विष्णुधर्म्मोक्तं पुण्डरीकयज्ञप्राप्तिव्रतम् ।

— 000 —

सर्व्वं देवरथं शक्तं पूजयित्वा तथा नरं ।

सर्व्वान् कामानवाप्नोति स्वर्गलोकाश्च गच्छति ॥

इति विष्णु धर्म्मोत्तरोक्तं शक्रव्रतम् ।

— 000 —

उभोवाच ।

भगवन् श्रोतुमिच्छामि भाष्यं परमं विभी ।
 कथितं प्रसादेन यद्यस्ति मम सौहृदम् ॥
 देव येन विरूपत्वं यद्व्रतेन प्रचक्षति ।
 सौभाग्यं परमं चैव प्राप्यते कस्य सेवनात् ॥
 तन्मे कथय देवेश परमाभीष्टदायकम् ।

ईश्वर उवाच ।

श्रुयतां वै परं गुह्यं व्रतं पापहरं शुभम्* ।
 सुरुपा द्वादशी नाम महापातकनाशनी ॥
 रूपप्रदायिनी चैव तथा सौभाग्यवर्द्धनी ।
 कुलवृद्धिकरीचैव सर्वसौख्यप्रदायिनी ॥
 तां शृणुष्व प्रयत्नेन कथ्यमानां मयानघे ।
 पुरा वै ज्ञापयस्यान्ते वष्णुर्हेत्यनिसूदकः ॥
 उत्पत्नी मृत्युलोकेश वसुदेवकुले किल ।
 तेनोठा रुक्मिणी नाम भीष्मस्य च सुता पुनः ॥
 अत्यन्तरूपसुभगा पतिव्रतपरायणा ।
 नहि तस्या विना ज्ञान्दोषोऽकसुहृते सुखम् ॥
 शत्रून्शत्रुरथोः पादवन्दनं भर्तृ तत्परा ।
 केनापि कर्मदोषेषु कुपितां ज्ञान् मातरं ॥
 न प्रसादयति क्षिप्रं प्रतिमल्लिच्छती प्रियं ।
 ततो देव्याः समुत्पन्नः कोपः सर्वगुणापहः ॥

* पापप्रणाशनमिति पुस्तकान्तरेपाठः ।

छायां प्रोवाच कुपिता यदि ते जननी स्वयं ।
 तत स्तयापि वै बाह्या कुरूपा निर्गुणाधिका ॥
 महात्वं नान्यथा कर्तुं नार्हसि त्वं कुलोद्भव ।
 छाया उवाच ।

अपायां रुक्मिणीं त्यक्तमुत्सहेऽहं कथं शुभां ।
 यः परित्यजते भार्यामविलुप्तग्रहीरिणीं ॥
 स प्राप्नोति च मन्दात्मा दौर्भाग्यं साम्प्रतोरुचं ।
 विरूपत्वमवाप्नोति न सुखं विन्दते क्षत्रित् ॥
 व्याधि र्वा जायते लोके निन्दनीयश्च देहिनां ।
 इत्यहं नानुमानोऽपि कथं कुर्यात्सदा वचः ॥
 देवक्युवाच ।

सर्वेषामिव दानानां दानं तीर्थादिं यच्छति ।
 माता गुरुतरा वक्त कस्तस्या वचनं त्यजेत् ॥
 मम वाक्यस्य कारणात् कथं पापिष्ठता भवेत् ।
 जननी पूज्यते लोके न भार्या यदुजन्दन ।
 छाया उवाच ।

न च त्यजाम्यहं मातः प्रियां प्राचधनेश्वरीं ।
 इति तुष्णीं पराभूतां मातरं प्रेक्ष्य केयवः ॥
 चिन्तामवाप परमां कथं सौख्यं भवेदिति ।
 एतस्मिन्नेव काशे तु नारदीसुनिसत्तमः ॥
 अभ्याजगाम सहसा विष्णुं प्रेक्ष्य च विस्मितम् ।
 पूजितः परया भक्त्या अर्थं तस्मै निवेदितम् ॥

उपविष्टे यथान्याय पर्यपृच्छदनामयं ।

नारद उवाच ।

किं त्वं सखेदपरमः किमुद्देशस्य कारणम् ।

किञ्च सिध्यति तेऽभीष्टं त्वजोद्देशं यदुत्तमम् ॥

कृष्ण उवाच ।

माया नियुक्तो देवर्षे परिणेतुं हिजोत्तम ।

कन्यासुदृष्ट यस्यापि कुरूपं कस्यचित् प्रभो ॥

यथा मातुर्नियोगोत्रं जतो भवति सत्कृतिः ।

नारद उवाच ।

श्रूयतामभिधास्यामि पूर्ववृत्तान्तमाद्रात् ।

लक्ष्मीयुक्तः पुरा नाद्य क्रीडमानो हि नन्दने ॥

तत्रायथौ स भगवान्† दुर्व्यासा ऋषिसत्तमः ।

सत्कृतश्च यथान्यायं अभ्युत्थानक पूर्व्वकं ॥

प्रेक्ष्य वीभक्त्युत्तं तं देव्या हासः कृतस्तदा ।

स च कीपेन महता वैश्वानरसमप्रभः ॥

शशाप लक्ष्मीं दुष्टात्मा मुनिः क्रोधसमन्वितः ।

हसितोऽहं त्वया सुग्धे आत्मनो रूपमीक्षिता ॥

विरूपा भव दुर्बुधे किं न ज्ञातो ह्यहं त्वया ।

इत्युक्त्वा सा तथा देव्या यथावत् संप्रसादितः ॥

प्रसन्नो जगदे वाक्चं भि शशापो न वृथा भवेत् ।

* किञ्चोदेव इदं कथयति पाठान्तरम् ।

† तत्रायते सभगवान् इति पुस्तकान्तरपाठः ।

जन्मान्तरेण साफल्यं भविष्यति कुरुपता ॥
 सा एव चावतीर्णाहि गोपकस्य मूढे सुता* ।
 सत्यभामा विरूपाक्षी विरूप दर्शनं तथा ॥
 कर्णनासातिविक्रता† सञ्जातां तत्प्रभावतः ।
 पाणिपादौ कटिग्रीवा सर्वं वैरूप्यसङ्घणम् ॥
 तपादस्त्रो महापात्रः स ते कन्यां प्रदास्यति ।

कृष्ण उवाच ।

भगवन् विरूपं वदनं कथं द्रक्ष्यामि नित्यशः ।
 का निर्घृतिं गमिष्यामि तां विवाह्य कुरुपिकां ॥

नारद उवाच ।

तस्या एव प्रसादेन रुक्मिण्या यदुनन्दन ।
 उत्तमं प्राप्य सौरुपं सोभाग्यं परमं सुखं ॥
 माता हि तावन्मान्या वै धर्मकामार्थं मिच्छता ।
 एवं पुरा व्यतीत्येवं सम्बन्धो विहितः पुरा ॥
 त्वया वाक्यं तथा कार्यं गुरुणा वचनं महत् ।
 माता गुरुतरा भूमे इति वेदेषु गीयते ॥

ईश्वर उवाच ।

एवमुक्त्वा मह।देवीं नारद स्निदिवं गतः ।
 कृष्णश्च मातरं प्राह वैवाह्यं हि विधीयतां ॥
 विवाहितावसानेन वेदोक्तं विधिना ततः ।

* इत्थं नृवावतीर्णाहि गोपिकामां मूढे सुनारति पात्राकरम् ।

† कविशालात्कि विक्रता इति सुशकाकरेपाठः ।

आनीयतां तदा देवि दर्शयामास तां बधूं ॥
 पश्य त्वं वचनाद्ब्रूहि* परिचीता शुचिन्नता ।
 निर्द्वेषिपरमं गच्छ प्रसादपरमा भव ॥
 द्रव्यज्ञा वीक्ष्य तां कृष्णः प्रणिपत्य स्वमातरं ।
 जगाम देवकार्याणां करणाय महाबलः ॥
 तां दृष्ट्वा देवमाता च बभौ दुःखान्विता भृशं ।
 ईदृग्विरूपं विकृतिं कथं कर्त्तास्मि गोपनं ॥
 चिन्ता च मेति† महतीमतीवोद्विग्नमानसः ।
 कस्यापि नाचचक्षेऽपि विरूपं तच्छरीरजं ॥
 अथ किं विहितं काले ब्रह्मिणी तव चाग्रतः ।
 नमस्कृत्य ततः श्वश्रूँ सम्युद्धा चरणौ तदा ॥
 उवाच प्रस्तुतं वाक्यं भक्तियुक्तं सुखावहं ।
 प्रभावं‡ द्रष्टुमिच्छामि भवतीं¶ कृष्णबसुभां ॥
 दर्शयन्तु च मे शीघ्रं प्रसादं सुविधीयतां ।

देवक्युवाच ।

श्वश्रूँ हन्ते§ सुभगे ममापि वचनं कुरु ।
 दीयतां त्वरितं शुभ्रं सुरूपाद्वादशोन्नतं ॥

* सायणब्रह्मसंहितादिति पाठान्तरं ।

† चिन्तामयापेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ कृष्णाचमिति पाठान्तरं ।

¶ भ्रमणीमिति पाठान्तरं ।

§ सुभ्रं इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

संप्रयच्छति* * चेतस्त्रं दर्शनमे भविष्यति ॥

हस्तिच्छुवाच ।

कथं यद्दीयते धर्मं व्रतञ्चापि सुदुष्करम् ।

कथं तस्यां प्रयच्छामि फलं देवैः सुदुर्लभम् ॥

देव्युवाच ।

अर्घ्यं प्रदीयतामस्यै तदर्द्धमथवा पुनः ।

पञ्चमः सप्तमः षष्ठः षोडश्यांशोऽथवा पिबा ॥

देव्युवाच ।

सुरूपाद्वादशौ पुण्यतिलार्घ्यमपि नोत्सहे ।

किं पुनः षोडश्यांशिन सपत्न्या दुष्टचेतसः ॥

एवमुक्त्वा जगामाथ मन्दिरं सा शुभेक्षणा ।

पुनः पृच्छति ते सा तु प्रणिपातेन वै वषा ॥

देवि पृच्छामिः चोक्तोयं न करोति प्रभु र्मम ।

कथं पश्यामि तां तन्वीं नबोद्धां कृष्णवक्त्रभां ॥

कृष्ण उवाच ।

अस्वा द्रक्ष्यसि ते सुभ्रूं धिग्रूपां तां सुमध्यमां ।

कर्णनासा च विक्रता विरूपा विक्रतानना ॥

अहं तु नोत्सहे द्रष्टुमीदृश्रूपां शुचिस्मिते ।

कर्णं नृणां फलं ते च शुभाशुभमसंशयं ॥

* संप्रयच्छति चेतस्यौदर्शनान्मे इति ।

० संप्रयच्छति कोलस्यौदर्शनान्मे इति च पुस्तकान्तरे पाठः ।

† देव पृच्छामि वत्कीपानां करोति च प्रभुर्नम इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

एवं वहुगते काले देवैश्चैव प्रभावतः ।
 देव्यागारं सत्यभामा शिष्या दत्त्वा च वेशिता ॥
 प्रार्थये यततां तूर्णं सुरूपहादादशीव्रतं ।
 तिलादपि हि षड्भागं ह्योमादपि हि निःसृतं ॥
 सा गता तत्सकार्णं तु विवाहहारमार तु ।
 उवाच रुक्मिणीं सा च सत्यभामा शुचिन्नता ॥
 एकामप्याहुतिं देवि देहि मे भीष्मनन्दिनि ।
 अष्टौाहुतिं वा मे देहि सद्यस्ति मम सौष्टदं ॥

रुक्मिण्युवाच ।

कोऽयं मतिभ्रम स्ते वै सुरूपां हादशीं प्रति ।
 तिलाहुतिञ्च दास्यामि उवाटय कपाटकं ॥
 इत्युक्त्वा त्वरितं स्नात्वा दत्त्वा ह्येकां तिलाहुतिं ।
 तिलञ्चैव प्रदत्तैयं रूपेणैवाधिका भवत् ॥
 तां दृष्ट्वा विस्मयपरा पप्रच्छ दयितां हरेः ।
 कथ्यतां मम का हि त्वं किमर्थं मिह चागता ॥

सत्यभामोवाच ।

तवाहं भगिनी भद्रे कृष्णबीटा स्मि धर्मतः ।
 सत्यभामेति मे नाम नमामि चरणौ तव ॥
 इति श्रुत्वा तु वचनं विस्मयोत्फुल्ललोचना ।
 नोवाच किञ्चित्चार्वङ्गौ अत्यर्थं विस्मिताभवत् ॥
 एतस्मिन्नेव काले च वागुवाचाशरीरिणी ।
 तव दानप्रभावेन सत्यव्रतपरायणे ॥

सुरूपा द्वादशीपुण्यं देवानामपि दुर्लभं ।

देव्युवाच ।

कर्मणा केन कर्तव्यं किमाचारं वदस्व मे ।

नियमं ह्योमदानश्च प्रसादः सन्निधीयतां ॥

ईश्वर उवाच ।

पौषमासन्तु संप्राप्य पुण्यं तु शुशोधयेत् ।

तस्यां रात्रौ संयतात्मा ध्यात्वा विष्णुं सनातनं ॥

श्वेता गौरेकवर्णा च तस्यां घ्राह्यं च गोमयं ।

अन्तरिक्षात् प्रपतितं शुचि मूर्धनमवास्थितः ॥

तस्याः कृत्वा द्वादशीं कृत्वा मुपवास परायणैः ।

प्रतीच्छेत्त्वादशीं कृत्वा मुपवास परायणैः ॥

भाष्यं नियमसंयुक्तैर्विशेषात्संयतात्मभिः ।

ज्वात्वा नद्यां तङ्गागे वा विष्णुमेवाथ चिन्तयेत् ॥

सौवर्ण्यं च हरिं कृत्वा रूप्यं वासः स्वशक्तितः ।

तिलपात्रोपरिस्थे च न्यसेत् कुम्भे सद्रव्यके ॥

ततो विष्णु पूजा

इति संपूज्य विधिना पुण्यं धूपैः सचन्दनैः ।

नैवेद्यं तिलमिन्द्रश्च फलानि विविधानि च ॥

अर्घ्यमन्त्रीपयुक्तानि तदग्रे स्थावनं पठेत् ।

नमः परमशान्ताय विरूपाक्ष नमोऽस्तुते ॥

सर्वकलत्राय नाशाय गृहहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते ।

अर्घ्यं मन्त्रः ।

एवं संपूज्य देविं ह्योमवेदीमवाहुतीः ।

तिलानाहुतिसंयुक्तान् मन्त्रैः सहस्रशीर्षकैः ॥
 हृदि ध्यात्वा च देवेशं लक्ष्मीयुक्तं सनातनं ।
 ग्रह चक्र, गदा खेटं* ध्यात्वा देवं जनार्दनं ॥
 होमान्ते क्षारयेच्छाङ्गं वैष्णवं द्विजसप्तम ।
 दत्त्वा च भोजनं तेभ्यः कृत्वा चैव प्रदक्षिणं ॥
 धर्मश्रवणसंयुक्ता जायते तत्र तां निशां ।
 तं कुम्भं वैष्णवीं मूर्तिं विप्राय प्रतिपादयेत् ॥
 मन्त्रहीनं क्रियाहीनं† सर्वं तत्र समापयेत् ॥
 ईश्वर उवाच ।

एवं यः कुरुते देवि स्वरूपाद्वाद्दशी व्रतं ।
 नरो वा यदि वा नारी तच्च पुण्यं शृणुष्व मे ॥
 दीर्घायं नश्यते तस्य अपि जन्मान्तरार्जितं ।
 अपि भूमस्यसम्पर्को जायते कारणांतरात् ॥
 तस्यापि न भवेद्दुःखं वैरूप्यं तस्य जन्मनि ।
 बन्धुजन वियोगश्च नैष्टैः सह वियोगतः ॥
 जायते गोचरद्विष कौर्त्तिमान् जायते भुवि ।
 जातिश्वरणमाप्नोति पदं निर्वाणमाप्नुयात् ॥
 वाच्यमानमिदं भक्त्या यः शृणोति समाहितः ।
 पुण्यमाप्नोति सततं स्वर्गलोके महीयते ॥
 इति उमामहेश्वरसंवादे स्वरूपाद्वाद्दशी व्रतं ।

* तदीयतमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

† चिन्तितेदिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

‡ भक्तिहीनमिति पुस्तकान्तरे पाठः ।

॥ वाच्यं नैवियोगश्च इति पाठान्तरं ।

मान्वाता उवाच ।

एकादशी महाब्रह्मन् महापुण्यफलप्रदा ।
ऋचयोगैस्तु संयुक्ता कथयस्व मम प्रभो ॥

वसिष्ठ उवाच ।

जया च विजया चैव जयन्ती पापनाशनी ।
सर्वपापहरा चैषा कर्त्तव्या फलकाङ्क्षिभिः ॥
एकादश्यां शुक्लपक्षे यदा ऋचं पुनर्वसुः ।
सा नाम्ना च जया ख्याता तिथीनामुत्तमा तिथिः ॥
समुपोष्य व्रती पापात् मुच्यते नात्र संशयः ।
अग्निष्टीमस्य यज्ञस्य फलमाप्नोति मानवः ॥
यदा शुक्ले तु द्वादश्यां नक्षत्रं श्रवणं भवेत् ।
विजया सा तथा प्रीक्ता तिथीनामुत्तमा तिथिः ॥
तस्यां स्नातः सर्वंतीर्थं स्नाती भवति मानवः ।
दानं सहस्रगुणितं तथा चैव प्रयोजनं ॥
होमजपोपवासैश्च* सहस्राणां फलं लभेत् ।
यदा च शुक्लद्वादश्यां रोहिणी च प्रजायते ॥
जयन्ती नाम सा प्रीक्ता सर्वपापहरा तिथिः ।
सप्तजन्मकृतं पापं स्वल्पं वा यदिवा बहु ॥
तत्क्षालयति गोविन्दस्तस्यामभ्यर्च्य भक्तितः ।
यदा च शुक्लद्वादश्यां पुष्यं भवति कर्हिचित् ॥
तदा सातिमहापुण्या कथिता पापनाशनी ।

* होमजपोपवासैश्चेति पुस्तकान्तरे पाठः ।

यो ददाति च यत्पुष्पं नित्यं संवत्सरे नरः ।
 उपवासन्तु तस्यां च यः करोति महत्फलं ॥
 तस्यां जगत्पतिर्देवः सर्वलोकेश्वरो हरिः ।
 प्रत्यक्षतां प्रयात्याशु तदनन्तफलं स्मृतं ॥
 सगरेण ककुत्स्थेन धुम्भुमारेण गाधिना ।
 तस्मा माराधितो देवो दत्तवानखिलां भुवं ॥
 उपवासस्तु तस्याश्च देव आराधितः स च ।
 तस्मै स राज्यमखिलं समुष्टो भुवि दत्तवान् ॥
 वाचिकान् मानसांश्चैव कायिकांश्च विशेषतः ।
 सप्तजन्मकृतं पापं मुच्यते नाच संग्रयः ॥
 इमामिका मुपीथैव पुण्यं नक्षत्रसंयुतां ।
 एकादशीसहस्रेण फलं प्राप्नीत्यसंग्रयं ॥
 स्नानं दानं जपो होमः स्वाध्यायदेवतार्चनं ।
 यदस्यां क्रियते किञ्चित्तत्सर्वं चाक्षयं भवेत् ॥
 पुरुषैस्तु प्रव्रजेन कर्त्तव्या फलकाञ्चिभिः ।
 फाल्गुने च विशेषेण विशेषः कथितो नृप ॥
 आमर्हकीव्रतं पुण्यं विष्णुलोकफलप्रदं ।
 आमर्हकीमधी गत्वा जागरं तत्र कारयेत् ॥
 कृत्वा तु जागरं विष्णोर्गोसहस्रफलं लभेत् ॥

मान्याता उवाच ।

आमर्हकी कदा ह्येषा उत्पन्ना हिजसत्तम ।
 एतत्सर्वं समाचक्षुः परं कौतूहलं हि मे ॥

कक्षादियं पवित्रा च कक्षात्यापप्रणाशनौ ।
कक्षाज्जागरणं कृत्वा गीसहस्रफलं लभेत् ॥

वसिष्ठ उवाच ।

कथयामि महाभाग गच्छेयं भगवान् क्षितौ ।
आमर्द्दं कौ महावृक्षः सर्वपापप्रणाशनः ॥
एकार्षीवे पुरा जाते नष्टे स्वावरजङ्गमे ।
नष्टे देवासुरगणे प्रमथीरगराक्षसे ॥
तत्र देवाधिदेवेशः परमात्मा सनातनः ।
जजाप परमं ब्रह्म आत्मनः पद्मव्ययं ॥
ततोऽस्य जपतो ब्रह्म सुखाच्छशिसमप्रभः ।
छीवनाद्दिन्दुसम्पन्नः स भूमौ निपपात ह ॥
तस्माद्दिन्दोःसमुत्पन्नः स्वयं धात्रीनगो महान् ।
शाखाप्रशाखाबहुला फलभारावनामितः ॥
सर्वेषां चैव वृक्षाणां आदिरेष प्रकीर्तितः ।
एतस्मिन्नेव काले तु ससृजे बहुधाः प्रजाः ॥
ब्राह्मणानसृजत्तेन संसृष्टाश्च इमाः प्रजाः ।
देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ।
तांश्च दृष्ट्वा महाभाग परं विस्मयमागताः ।
नजानीय इमान् वृक्षान् चिन्तयानोपि सर्वतः ॥
एवं चिन्तयतस्तेषां वागुवाचाशरीरिणी ।
सञ्जाता वैष्णवी तत्र ऋषीणां प्रतिबोधनी ॥
असृजद्भगवान्देव ऋषयस्तु तद्यामराः ।
अजिताश्चाप यथास्ते धारा वै विष्णुसम्भवा ॥

आमर्हंकी नगो ह्येष प्रवरो लोकविश्रुतः ॥
 विष्णो निर्णीवनाज्जातः प्रवरो वैष्णवी नगः ।
 तस्मात्सर्व्वप्रयत्नेन सेव्या आमर्हंकी सदा ॥
 सर्व्वपापहृता प्रोक्ता वैष्णवी पापनाशनी ।
 अस्या मूले स्थितो विष्णु रूर्हचैव पितामहः ॥
 स्कन्धे च भगवान् रुद्रः संस्थितस्त्रिपुरान्तकः ।
 शाखासु सरितःसर्वाः प्रशाखासु च देवताः ॥
 पर्णेषु वसवो देवाः पुष्पेषु मरुतस्तथा ।
 प्रजानांपतपः सर्व्वे फलेचैव व्यवस्थिताः ॥
 सर्व्वदेवमयी ह्येषा धात्री च कथिता मया ।
 तस्मात् पूज्यतमा ह्येषा विष्णुभक्तिपरायणैः ॥

ऋषिरुवाच ।

को भवावह्नि जानामि अकस्माद्दद् हे शुभः* ।
 देवीवा यदि वा चान्यः कथयस्व यथातथं ॥

वागुवाच ।

यः कर्त्ता सर्व्वलोकानां भुवनानां चतुर्हंश ।
 अनङ्गाङ्गवपुःप्रेक्ष्य सोऽहं विष्णुः सनातनः ॥
 तच्छ्रुत्वा तस्य देवस्य भाषितं ब्राह्मणाः स्थिताः ।
 विषयोत्फुल्लनयनाः परं विस्मयमागताः ॥
 अनादिनिधनं देवंस्तीतुषैव प्रचक्रमुः ।
 श्रीं नमो भूतात्मने च भूताय परमात्मने ॥

* चास्मात्प्रकोदेख्य इति पाठान्तरं ।

अव्यक्ताय नमो नित्यं अनन्ताय नमोनमः ॥
 हामोदराय शुचये यज्ञेयाय नमोनमः ।
 नमो मायापटञ्चनजगद्वाचीमहात्मने ।
 अश्रुताय नमो नित्यं अनन्ताय नमोनमः ॥
 एवं स्तुतस्तदा तैश्च ततोष भगवान् हरिः ।
 प्रत्युवाच महर्षीं स्तान् अभीष्टं किं ददामि वः ॥

ऋषय ज्ञतुः ।

यदि तुष्टोहि भगवानन्नाकं हितकाम्यया ।
 व्रतं किञ्चित् समाख्याहि स्वर्गमोक्षप्रदं परं ॥
 धनधान्यप्रदं पुण्यं आत्मनस्तुष्टिदायकं ।
 अल्पायासं बहुफलं व्रतानामुत्तमं व्रतं ॥
 कृतेन येन देवेश विष्णुलोके महीयते ॥

विष्णुववाच ।

फाल्गुनामस्तपश्चेष्टु द्वादशी ऋषिसप्तमाः ।
 ब्राह्मणानां महापुण्या सर्वपातकनाशनी ॥
 विशेषस्तत्र कथितः शृणुष्व ऋषिसप्तमाः ।
 आमर्द्दकी न्तु संप्राप्य जागरं यस्तु कारयेत् ॥
 सर्वपापविनिर्मुक्तो गोसहस्रफलं लभेत् ।
 एतद्दः कथितं विप्रा व्रतानामुत्तमं व्रतं ॥

ऋषय ज्ञतुः ।

व्रतस्यास्य विधिं ब्रूहि परिपूर्णं कथं भवेत् ।
 के मन्त्राः के नमस्कारा देवताः काः प्रकीर्तिताः ॥
 कथं ज्ञानं कथं दानं कथं पूजाविधिः स्मृतः ।

अर्घ्यं प्रदानमन्त्रश्च कथयस्व यथातथं ॥

विष्णुस्वाच ।

श्रूयतां यो विधिः सम्यक् व्रतस्यास्य द्विजोत्तम ।
 न कस्यचिन्मयाख्यातो व्रतस्य विधिरुत्तमः ॥
 एकादश्याञ्च नियमं गृह्णीयाद्दन्तधावनं ।
 एकादश्यां निराहारं खित्वा चैवापरेऽह्नि ॥
 भोज्यामि पुण्डरीकाच्च शरणं मे भवाच्युत ।
 इति कृत्वा च नियमं दन्तधावनपूर्वकं ॥
 नालापेत् पतितांशोरान् तथा पाषण्डिनो नरान् ।
 दुर्विनीतान् भिक्षमर्थ्यादान् गुरुदारप्रकर्षकान् ॥
 अपराङ्मे तथा ज्ञानं विधिवत् कारयेद्बुधः ।
 नद्यां तद्गगे कूपे वा गृहे वा नियमाशनः* ॥
 अस्तिकासनश्चनं पूर्व्वं ततः ज्ञानं समाचरेत् ।
 अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे ॥
 अस्तिके हरि मे पापं यन्मया दुष्कृतं कृतं ॥

अस्तिकामन्त्रः ।

त्वमापो योनिः सर्व्वेषां देवदानवरक्षसां ।
 श्वेतयोनिं भुंजन्नास्त्रं रसानांपतये नमः ॥
 ज्ञातोऽहं सर्व्वतीर्थेषु ऋदे प्रश्रवणेषु च ।
 नदीषु देवस्त्रातेषु अप ज्ञानन्तु मे भव ॥

* नियन्ताज्ञपामिति पुस्तकालकरे पाठः ।

ज्ञानमन्त्रः ।

जामदग्निं ततश्च कारयित्वा हिरण्यं ।
 माघकेश सुवर्णस्य तद्वर्णनाथ वा पुनः ॥
 षड्विंशत्यै देवानां पूजाहोमस्तु कारयेत् ।
 ततश्चामर्दकीं गच्छेत् पीपयेच्च समन्ततः ॥
 तस्याधी जलकुम्भश्च स्वापयेन्मन्त्रसंयुतं ।
 पञ्चरत्नसमीपे तं दिव्यगन्धादिवासितं ॥
 छत्रीपानहवस्त्रैश्च सितचन्दनचर्चितं ।
 स्रग्मालालङ्कृतशीवं सर्व्वतो धूपधूपितं ॥
 द्वीपमालाकुलं कुर्व्यात् सर्व्वतस्तु मनोहरं ।
 तस्योपरि न्यसेत् पात्रं दिव्यदानैः प्रपूजितं ॥
 पात्रोपरि न्यसेद्देवं जामदग््न्यं महाभुजं ।
 विशोक्याय नमः पादौ जानुनी विश्वरूपिणे ॥
 उभाय च* नमः कण्ठे चास्यं यज्ञसुखाय वै ।
 ननाम शोकवियुतो वासुदेवाय च श्रुषी ॥
 ललाटे वामनायेति रामायेति पुनर्भुवौ ।
 नमः कूर्वात्मने तद्वत् शिरस्त्यभि पूजयेत् ॥
 पूजयित्वा ततो देवं अर्घ्यंचैव प्रदापयेत् ।
 फलेन चैव शुभ्रेण भक्तियुक्तेन चेतसा ॥
 नमस्ते देवदेवेयं जामदग्ने नमोऽस्तु ते ।
 इमं देवमिमं देवं त्रीलोक्याः सहितो हरिः ॥

* उभाय च तथा ऊरु कर्णं दामोदराय च इत्यादिपाठात्परं ।

अर्घ्यमन्त्रः ।

ततो जागरणं कुर्यात् भक्तिशुक्तेन चेतसा ।
 तृत्यैर्गीतेषु वादिनैर्धर्माख्यानकथानकैः ॥
 वैष्णवैश्च तथा ख्यातैः क्षपयेच्छर्व्वरीन्तु तां ।
 प्रदक्षिणं ततः कुर्यादादर्शना नमस्तदा ॥
 शतमष्टाधिकक्षैव अष्टात्रिंशतिमेव च ।
 ततः प्रभातसमये गीत्वा गौराजनं हरेः ॥
 ब्राह्मणं पूजयित्वा तु सर्व्वं तस्मै निवेदयेत् ।
 जामदग््न्यं घटच्छन्नं वस्त्रयुग्मसुपानहौ ॥
 जामदग््न स्वरूपी च प्रीयतां मम केशवः ।
 ततश्चामर्हकीं स्पृष्ट्वा कृत्वा चैव प्रदक्षिणं ॥
 स्नानं कृत्वा विधानेन ब्राह्मणान् भोजयेत्सदा ।
 ततश्च स्वयमन्वीयात् कुक्कुटेन समन्वितः ॥
 एवं कृते तु यत्पुष्पं तत्सर्व्वं कथयाम्यहं ।
 सर्व्वतीर्थेषु यत् पुष्पं सर्व्वदानेषु यत् फलं ॥
 सर्व्वयज्ञाधिकक्षैव लभते नात्र संग्रहः ।
 एतद्दत्तं सर्व्वमाख्यातं व्रतानामुत्तमं व्रतं ॥
 एतद्दत्तं गतमलं कथितं मया वै
 पापापहं शुचिमतिर्हरिवासरे ते ।
 योवै करिष्यति नरः शुचिशुद्धचित्तः
 स प्राप्स्यते हरिपदं परमं परम् ॥

* बुद्धमतीव वाशरः । करिष्यते चः शुचिशुचि तस्य उपासते विष्णुपदं परम्
 इति पुस्तकान्तरे पाठः ।

एतावदुक्ता देवेश स्तमैवान्तरधीयत ।
 तेचापि ऋषयः सर्वे चक्रुः सर्व्यं मशेषतः ॥
 तथा त्वमपि राजेन्द्र कर्तुं नर्हसि सत्तम ।
 व्रतमेतद्दुराधर्षं सर्व्यं पापप्रणाशनं ॥

इति मार्कण्डेय पुराणे आमदकी व्रतं ।

इति श्रीमहाराजाधिराज श्रीमहादेवस्य समस्त
 कारणाधीश्वर सकलविद्याविशारद
 श्री हेमाद्रि विरचिते चतुर्वर्गं
 चिन्तामणौ व्रतखण्डे
 द्वादशौ व्रतानि ।

ASIATIC SOCIETY. CALCUTTA.

